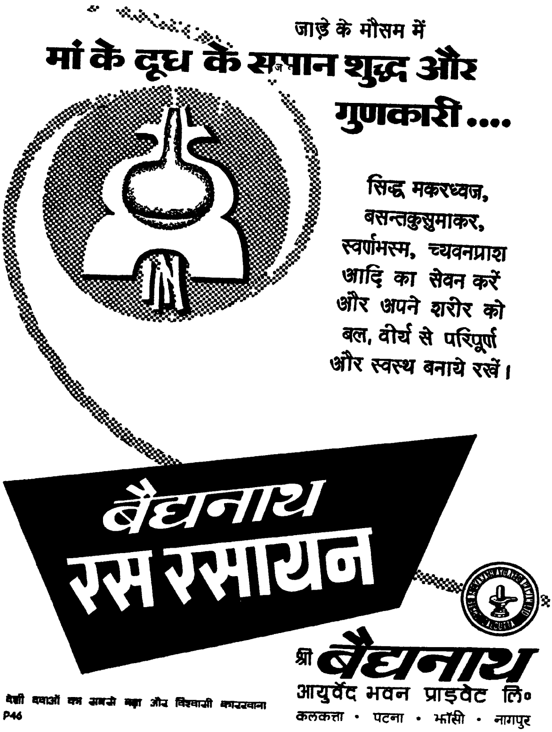

जाड़े के मौसम में
मां के दूध के समान शुद्ध और
गुणकारी....
सिद्ध मकरध्वज,
बसन्तकुसुमाकर,
स्वर्णभस्म, च्यवनप्राश
आदि का सेवन करें
और अपने शरीर को
बल, वीर्य से परिपूर्ण
और स्वस्थ बनाये रखें।
बैद्यनाथ
रस रसायन
श्री बैद्यनाथ
आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०
कलकत्ता • पटना • झाँसी • नागपुर
देशी दवाओं का सबसे बड़ा और विश्वासी कारखाना
P46

बैद्यनाथ डायरी

सन १९५८

डायरी आधुनिक
बडी सुविधा रहती है।
खोज करने लग जाते हैं
रख छोडते हैं।

र्थ-सम्पादन में इनसे
ही नई डायरी की
अपने पास सुरक्षित

बैद्यनाथ डायरी
इसमें मनुष्य के आरोग्य-
कई दवाओं की सूचनाएँ
रोगों से मुक्त रख कर उ

विशेषता रखती है।
पर काम आनेवाली
को और परिवार को
।

बैद्यनाथ डायरी
सोने के अक्षरों में सन् तथ
प्रत्येक पृष्ठ पर दो तारी
साइज आदि सभी चीजें
विधा नहीं होती। इ

जिल्द रहती है और
ल रग के हैं, जिनमें
गेट-अप, बँधाई और
वने मे कुछ भी असु-
है।

थोक खरीदारों को २५ % कमीशन। विशेष नियम नीचे लिखे अनुसार है —

(१) १४४ डायरी एक साथ मँगाने से पैकिंग और रेलभाडा फ्री।
(२) ७२ से अधिक मँगाने पर केवल पैकिंग फ्री।
(३) एक साथ १४४ डायरियों के लिए पूरी कीमत पेशगी भेजने पर ६ डायरी मुफ्त।
(४) आर्डर के साथ चौथाई पेशगी भेजना जरूरी है।

विशेष —बैद्यनाथ के स्थानीय बिक्री-केन्द्रों से फुटकर डायरी खरीदने पर डाक-खर्च और समय की बचत होगी। अत खुदरा खरीदार वहीं तलाश करें।

प्रकाशक
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०
१, गुप्ता लेन, कलकत्ता–६

बैद्यनाथ अवलेह-मोदक-पाक

आयुर्वेदिक चिकित्सा मे अवलेह स्निग्ध (तर) इलाज के लिए बहुत गुणदायक है। बच्चो से लेकर बूढो तक को इसके सेवन मे किसी प्रकार की असुविधा नही होती। इनकी मात्रा ६ माशा से १ तोला तक है। रोगानुसार अनुपान के साथ इसका सेवन कर अपने स्वास्थ्य की रक्षा करनी चाहिए।

च्यवनप्राश अवलेह (अष्टवर्गयुक्त)—जीर्ण-शीर्ण शरीर का कायाकल्प करने के लिए यह सर्वविदित है। वृद्ध च्यवन ऋषि इसी से दुबारा नौजवान बने थे। अष्ट-वर्ग मिलाने की गारंटी है। फेफड़े के विकार, पुराना श्वास, कास, शारीरिक क्षीणता, पुराना बुखारा, स्वरभग, खून की कमी, कैलशियम की कमी, कब्जियत, अम्लपित्त, मन्दाग्नि आदि रोगो को नष्ट करके यह शरीर को हृष्ट-पुष्ट और बलवान बनाता है और रस, रक्त आदि सप्त धातुओ को बढाता है। "बैद्यनाथ-च्यवनप्राश" गुणो मे श्रेष्ठ होता है, क्योकि यह पूर्ण शास्त्रीय विधि के अनुसार ताजे-हरे आँवलो और प्रामाणिक ओषधियो के योग से तैयार किया जाता है। इसमे स्वाभाविक रूप से विटामिन सी पर्याप्त मात्रा मे होता है। इसका सेवन बारहो मास करना चाहिए। कीमत—४० तोला ४), २० तोला २।), १० तोला १।-)

चित्रक हरीतकी—पुराने और बराबर होनेवाले सर्दी-जुकाम (नजला) की अनुभूत दवा है। कीमत—१० तोला १।।=) ५ तोला ।।।≡)

बादाम पाक—दिल और दिमाग को ताकत देता है। पित्त-विकार, नेत्र एव शिरोरोग मे लाभकारी है। शरीर को पुष्ट बनाता है और वजन बढाता है। सर्दियो मे सेवन करने योग्य उत्तम पुष्टई है। कीमत—२० तोला ६), १० तोला ३=)

वासावलेह—उत्तम अडूसे की जड की छाल से बनाया गया है। इसमे सभी तरह की खाँसी मे फायदा होता है। यह पुरानी खाँसी के साथ खून आने को बन्द करता है। कीमत—१० तोला १।=), ५ तोला ।।।=)

वासाहरीतक्यवलेह—रक्तपित्त, सभी प्रकार की खाँसी, विशेषकर पुराने बुखारयुक्त खाँसी और शारीरिक क्षीणता मे फायदा पहुँचाता है। कीमत—१० तोला १।), ५ तोला ।।।)

व्याघ्री हरीतकी—खाँसी, श्वास, दमा, आवाज बैठ जाना, मन्दाग्नि कब्जियत आदि को दूर करती है। कीमत १० तोला १-) ५ तोला ।।=)।।

ब्राह्म रसायन—शरीर की दुर्बलता और दिमाग की कमजोरी दूरकर बल कान्ति एव स्मरण-शक्ति को बढाता है। नियमित सेवन से खाँसी दमा, शारीरिक क्षीणता और कब्जियत दूर होती है। कीमत—१० तोला १।।=) ५ तोला ।।।=)

भार्गीगुड—खाँसी एव पुराने दमे की श्रेष्ठ औषधि है। कीमत—१० तोला १।=) ५ तोला ।।।-)

मूसली पाक—अत्यन्त पौष्टिक है। असयमजन्य रोगो को दूरकर शरीर को मोटा ताजा बनाने मे सर्वश्रेष्ठ है। जाडे मे इसे जरूर खाना चाहिए। कीमत—२० तोला ५), १० तोला २।।=)

सुपारी पाक—बच्चा होने के बाद महिलाओ को इसका सेवन करना चाहिए। इसके सेवन से दुर्बलता दूर होकर उनका शरीर पुष्ट और स्वास्थ्य उन्नत होता है। पूर्ण लाभ के लिए हर प्रसूता को २।। सेर तक खाना चाहिए। कीमत—२० तोला ३), १० तोला १।।=)

सौभाग्यसुठी पाक—यह प्रसूता के लिए बहुत अच्छी पुष्टई है। इसके सेवन से भूख तथा बल बढता है। साथ ही अग्निमान्द्य, अरुचि और पेट की वायु का नाश होता है। कीमत—२० तोला ३।।), १० तोला १।।।=)

श्री बैद्यनाथ
आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

"सचित्र आयुर्वेद" के ग्राहकों से निवेदन

पिछले १० वर्षों से 'सचित्र आयुर्वेद' भारतीय जनता और खासकर भारत की प्राचीन चिकित्सा-पद्धति—आयुर्वेद की सेवा पूर्ण सफलता, सुयोग्यता एवं सत्यता के साथ करता आ रहा है। आयुर्वेद के पुनरुद्धार तथा राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति के गौरवपूर्ण आसन पर इसको पुन प्रतिष्ठित करने की दिशा में हमारे अबतक के यथासाध्य प्रयासो की भारतीय जनता एवं विद्वान वैद्य समाज ने मुक्तकण्ठ से प्रशसा की है। अतएव वैद्य-समाज के लिए यह आवश्यक है कि वे 'सचित्र-आयुर्वेद' को पढ़ें और पढाएँ।

'सचित्र आयुर्वेद' के जिन ग्राहको का चन्दा जनवरी से दिसम्बर १९५७ तक के लिए जमा था, वह इस दिसम्बर' ५७ के अक के प्राप्त होने के साथ साथ समाप्त हो गया है। यद्यपि चन्दा पूरा हो जाने की सूचना ग्राहको को पृथक कार्ड द्वारा भी दी गयी है, फिर भी ग्राहको को इस अक में विज्ञप्ति द्वारा भी सूचना दी जा रही है और एक कार्ड भी दिया जा रहा है, जिसको भरकर ग्राहकगण हमारे पास भेज देने की कृपा करें। आशा है, ग्राहकगण अपने-अपने चन्दे के पाँच रुपये शीघ्रातिशीघ्र भेज देंगे।

जिन ग्राहको का चन्दा आगामी २० दिसम्बर १९५७ तक कार्यालय में नहीं पहुँचेगा, उनको ५ ६२ रुपये (पाँच रुपये ६२ नये पैसे) की वी० पी० द्वारा जनवरी १९५८ का अक भेजा जायगा। ग्राहको से अनुरोध है कि वी० पी० के ६२ नये पैसे व्यय खर्च से बचने के लिए ५) (पाँच रुपये) मनीआर्डर द्वारा भेज दें। जिन महानुभावो को किसी कारणवश ग्राहक नही रहना हो, वे कृपया एक कार्ड लिख कर हमें सूचित कर दें, ताकि उनके नाम वी० पी० भेजने के व्यर्थ खर्च से 'सचित्र आयुर्वेद' बच जाय।

ग्राहकों को नया कैलेण्डर मुफ्त

सचित्र आयुर्वेद के सभी नये और पुराने ग्राहको को नये वर्ष का सुन्दर बहुरगा कैलेण्डर मुफ्त दिया जायगा। हमें आशा है कि जनवरी मास के अन्तिम सप्ताह तक ग्राहको के पास कैलेण्डर अवश्य भेज दिया जा सकेगा।

वैद्य महानुभावों को सूचना

श्री धन्वन्तरि-जयन्ती महोत्सव के सम्बन्ध में हमारे पास सारे देश से सहस्रो की सख्या में सूचनाएँ एवं विवरण आदि प्रकाशनार्थ प्राप्त हुए है। स्थानाभाववश सभी सूचनाओ को इस अक में प्रकाशित नहीं किया जा सका। हम आशा करते है कि आगामी जनवरी १९५८ के अंक में शेष सभी सूचनाओ एव चित्रो को हम प्रकाशित कर सकेंगे।

—सम्पादक

सम्पादक—कामेश्वर शर्मा 'कमल'

विषय-सूची

वार्षिक मूल्य ५)   एक प्रति ॥) (५० नये पैसे)

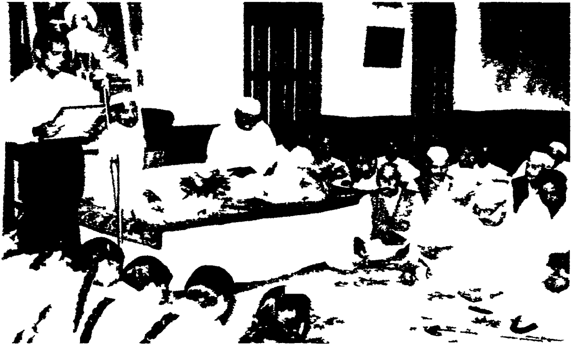




अलीगढ जिला वद्य सम्मलन द्वारा वद्य रामनारायण शर्मा के अभिनदन अवसर के दा दृश्य   द८ वद्य सम्मेलन के सभापति अभिनन्दन पत्र भट कर रह ह



दिल्ली म अनुष्ठित अ० भा० औषध निर्माता सम्मेलन के द्वितीय अधिवशन म समवत औषधि निर्माताओ का समूह चित्र ।



मेरठ आयुर्वेदिक कालिज की ओर से वैद्य प० रामनारायण शर्मा का अभिनन्दन पत्र प्रस्तुत किया जा रहा है।



मेरठ के वैद्य समुदाय द्वारा वैद्य श्री रामनारायण शर्मा के अभिनन्दन समारोह के दो दृश्य। बाएँ आचार्य लक्ष्मीनारायण जी स्वागत भाषण कर रहे हैं।

आयुर्वेद-जगत् में सर्वजन-समादृत और सर्वाधिक बिक्री होनेवाला आयुर्वेद विज्ञान का प्रमुख-मासिक पत्र

सचित्र आयुर्वेद

आयु कामयमानेन धर्मार्थसुखसाधनम् । आयुर्वेदोपदेशेषु विधेय परमादर: ॥

वर्ष १०	कलकत्ता, दिसम्बर, १९५७	अंक ६

आयुर्वेद-महासम्मेलन-सदस्यो से
नम्र निवेदन

बन्धुगण !

महासम्मेलन की स्थायी समिति एवं विद्यापीठ की केन्द्रीय प्रबन्धक-समिति का अधिवेशन दिल्ली में तारीख २७ २८ नवम्बर को हो रहा है। इस अवसर पर महासम्मेलन के माननीय सदस्यो से कुछ नम्र निवेदन करना मुझको वाञ्छनीय प्रतीत हुआ।

साधारणत आयुर्वेद जगत से और मुख्यत आपसे मेरी विनय है कि श्री शिवशर्मा और सचित्र आयुर्वेद के बीच जो विवाद चला और एक प्रकार का समुद्र मन्थन हुआ उसका फल अमृत प्राप्ति ही होना चाहिए। भागीरथ ने गंगावतरण का जो यत्न किया था वह लोक-कल्याणकारक हुआ था। इसी प्रकार मेरी कामना है कि आयुर्वेद जगत का यह विवाद भी वैद्य-समाज के लिए रचनात्मक कार्य के श्रीगणेश का हेतु बन जाय। इसके विपरीत इस विवाद को आरोप प्रत्यारोप के रूप मे आगे बढाकर यदि क्लेश द्वेष बढाया जाता है तो उससे वैद्यो मे अनैक्य उत्पन्न होगा और सद्शक्तियो का अपव्यय होगा। इस प्रसंग को वाद विवाद के रूप में बढाने वालों का प्रयत्न ठीक वैसा ही है जैसा कि अंग्रेजो ने करके भारत को पराधीन बनाया था और जैसा कि आज भी वे अमरिका से मिलकर भारत के अनिष्ट कर हानियां पहुंचाने के लिए कर रहे है। वे चाहते है कि भारत किसी न किसी गम्भीर समस्या में उलझा रहे और उसके विकास कार्य सम्पन्न न हो सकें क्योंकि भारत में बड़े बड़े कारखाने और उद्योग विकास-कार्य होने से उनके बहुमुखी स्वार्थ नष्ट होते है। इसी प्रकार वैद्य-समाज में महासम्मेलन के द्वारा वास्तविक विकास-कार्यों के होने से यदि किसी वर्ग विशेष के निहित स्वार्थों पर चोट पडती है और आयुर्वेद जगत का ध्यान परिवर्तित करने के लिए एसे वाद विवाद को भयकर रूप बना कर एक हलचल एवं क्षुब्ध वातावरण बनाने का दुष्प्रयत्न करता है तो वह निन्दनीय ही कहा जायगा।

आप जानते है कि वैद्यो की जीवन-वृत्ति दिन प्रतिदिन क्षीण होती जा रही है। एक ओर तो रोगियो का समूह वैद्यो को छोड़कर डाक्टरो के यहाँ बढ़ता जा रहा है। दूसरी

और नयी पीढ़ी के वैद्य अपने को वैद्य कहने में संकोच करने लगे हैं। चिकित्सा क्षेत्र में स्पष्टतः पाश्चात्य की नकल का प्रवाह बढ़ रहा है। क्या इस गति के रहते हुए यह कहा जा सकता है कि आयुर्वेद का भविष्य दुविधा ग्रस्त नहीं है? वैद्यों की स्थिति में सुधार के गम्भीर उपाय किये बिना थोथे गौरव प्रचार के आधार पर कैसे आयुर्वेद की उन्नति होगी? भाई शिवशर्मा के पास सुन्दर बंगला और दो मोटर होने अथवा बैद्यनाथ भवन वालों के पास चार कारखाने और बीस मोटर होने से वैद्यों को क्या लाभ होना है? अतः व्यक्तियों के महत्व को छोड़कर आयुर्वेद और वैद्यों की इस जीवन मरण की स्थिति में आपको सामूहिक हितों की रक्षा के लिए गम्भीरता के साथ सोचना चाहिए और शुद्ध एवं निर्लिप्त अन्तःकरण से यथार्थ प्रयत्न करना चाहिए।

हमारा यह सामाजिक दर्द नया नहीं है कि कोई भी अवसर एवं स्थिति की साधारण सी अनुकूलता पाकर लोगों का भ्रान्त कर देता है। सचित्र आयुर्वेद की विजय के प्रमाण में कुछ व्यक्तियों ने मुझे भी उत्तेजित करने का प्रयास किया परन्तु वस्तु स्थिति भिन्न थी सचित्र आयुर्वेद ने जो यह विवाद लड़ा अथवा महासम्मेलन की व्यवस्था के विरुद्ध में स्पष्टोक्ति युक्त लेखादि प्रकाशित किये उनका लक्ष्य किसी भी दशा में संगठन संस्था और समाज को हानि पहुंचाना नहीं रहा वह प्रयास महासम्मेलन में उसके कर्णधारों को कोचकर नवजीवन और सक्रियता लाने के लिए किया गया। वैद्य समाज के हितों के विकास का जो मार्ग अवरुद्ध हो गया था उसको एक ऐसे ही झंझावात की अपेक्षा थी। जिससे संस्था सजीव हो और वैद्य समाज जाग्रत प्रगति एवं मतक हो। अब उस विवाद को आगे कटुता की स्थिति में धकेलना नितान्त अकल्याणकर है।

वर्तमान में आयुर्वेद के लिये जितनी अनुकूल स्थिति है, इससे पहले कभी नहीं रही। राष्ट्रीय सरकार होते ही हमारे लिये अच्छा अवसर प्रस्तुत रहा है। आज देश के सर्वोच्च व्यक्ति—महामान्य राष्ट्रपति की चिकित्सा का आधार आयुर्वेद है। एक समय था कि दिल्ली के राज भवन की ओर दृष्टिपात की सुविधा हमें नहीं थी वहाँ आज मान्य चिकित्सक रूप में वैद्य स्थित हैं। राष्ट्रपति स्वयं आयुर्वेद की उन्नति के लिये बार-बार प्रेरणा देते हैं। संसद में आयुर्वेद के शुभ चिन्तकों की संख्या कम नहीं है।

गत १४ अगस्त को संसद सदस्यों की आयुर्वेदिक चिकित्सा के हेतु श्री बैद्यनाथ भवन द्वारा संस्थापित और सञ्चालित आयुर्वेदिक औषधालय के उद्घाटनावसर पर संसद के माननीय अध्यक्ष श्री आयंगर महोदय ने केन्द्रीय स्वास्थ्य मन्त्री माननीय श्री करमरकर महोदय को सम्बोधित करते हुए कहा था कि यह राजनीतिक गोष्ठी नहीं है आपको आयुर्वेद के लिये प्रतिज्ञात कार्य करने होंगे। स्वास्थ्य मन्त्री माननीय श्री करमरकर जी ने उद्घाटन किया था कि हम आयुर्वेद की सचमुच सहायता करना चाहते हैं वैद्यों को भी इसमें सक्रिय सहयोग देना चाहिये। अब तक सर्वत्र ही यह सुनने को मिलता है कि वैद्य लोग कहते बहुत हैं परन्तु करते कुछ नहीं। मैं आपसे नम्र निवेदन करना चाहता हूँ कि इस अपवाद को मिटाइये। स्थायी समिति और विद्यापीठ प्रबन्धक समिति के इन अधिवेशनों में निश्चय पूर्वक रचनात्मक और यथार्थ कार्य करने की दिशा में आगे कदम बढ़ाइये।

वैद्यों के आयुर्वेद विद्यालय की स्थापना नितान्त आवश्यक है। आपके थोड़े से सहयोग से यह महत्त्वपूर्ण कार्य निश्चित रूप से सम्भव है। दिल्ली में वैद्यों के महाविद्यालय के लिए बैद्यनाथ भवन से पांच सौ रुपया मासिक सहयोग की घोषणा की जा चुकी है। श्री बनवारीलाल आयुर्वेद विद्यालय वालों से भी वार्ता हुई प्रारम्भ में ३५०) मासिक की सहायता करने को उन्होंने कहा है। सुविख्यात विद्वान कविराज श्री उपेन्द्रनाथ दास जी निःशुल्क सेवा रूप से विद्यालय के प्रिंसिपल रूप में अपनी सेवाएं देने को सोत्साह प्रस्तुत हैं। उन्होंने अपने प्रयत्न से लोकसेवी श्री गौतम जी शर्मा से उनके भारती विद्या भवन में एक भव्य और विस्तृत हाल विद्यालय को निःशुल्क प्रदान करने हेतु आश्वासन मेरे सामने ले लिया था। ऐसे विद्यालय के लिए जो अपनी ओर से हो और जिसकी शिक्षा दीक्षा में राज्य का कोई हस्तक्षेप न हो—वैद्य समाज में मैंने सर्वत्र उत्साह पाया है। यद्यपि पिछले दिल्ली अधिवेशन के अवसर पर भी बड़ा उत्साह था ८५ हजार रुपया के वचन सभास्थल पर ही मिले थे। उनमें पाँच हजार भेंट करने का मैंने भी निवेदन किया था—परन्तु दुर्भाग्यवश —उत्तरदायी व्यक्तियों ने आगे उसकी चर्चा तक न बढ़ाई। इस बार के उत्साह का उपयोग पिछले अनुभव को ध्यान में रखकर करना चाहिए और दिल्ली में विद्यापीठ की ओर से महाविद्यालय स्थापन-

काय का आयोजन एक तदथ समिति को सौप दिया जाना चाहिए। आचायवर श्री मणिराम जी शर्मा न अपन एकाकी प्रयत्न से एक बहुत बडा आतुरालय बना लिया है श्री धन्वतरि मदिर के नाम से आचाय जी की साधना का वह प्रतीक विख्यात है। जयपुर म धन्वन्तरि औषधालय स्वामी लक्ष्माराम जी की कीर्त्ति विस्तारित कर रहा है। कलकत्ता म श्री श्यामादास ज वद्य विद्यापीठ एक उच्च प्रतिष्ठान है। एसे व्यक्तिगत प्रयत्न जब आदश रूप से सफल हुए ह तो क्या विद्यापीठ का ओर से एक आदश आयवद महाविद्यालय नही चलाया जा सकता ?

डाक्टरो और एलोपैथी को कोसन से हम कभी नही बढ सकते। अपनी योग्यता को और शास्त्रज्ञान को यथाथ रूप म बढाकर और डाक्टरी की कोटि के ही वद्य तयार करके हम अपन को निश्चय ही बढा सकते ह। यह विकास हमारे अपन व्यवस्थित महाविद्यालय के द्वारा हो सकता है। मेरा साग्रह निवदन है कि आप दिल्ली समितियो के अधिवशन म इस काय को केद्र बिदु बनाकर जाव।

विद्यापीठ का ओर से दिल्ली म आयवद महाविद्यालय की स्थापना की योजना अत्यत महत्वपूण है। और उसके निमित्त सवथा अनुकूल स्थिति विद्यमान है। हमारे विद्यापीठ मत्री श्री यत सीताराम जी मिश्र इस काय के लिय सचेष्ट ह एसा कहा जाता है। इस पर भी इस पुनीत काय म हमारे कुछ भाई दूषित और क्षुब्ध वातावरण पदा करके विघ्न उपस्थित करन का दुष्प्रयत्न कर रह ह यह दुर्भाग्यपूण है। म कह सकता हू कि विघ्नकारी कोई भी हो उन्ह आयवद के लिय अपराधी ही कहा जायगा।

आयवद म राष्टीय चिकित्सा होन की स्पष्ट क्षमता है। राष्ट्र के प्रधान कणधारो म आयवद के लिय प्रम है स्थितिया दूर तक दिखाई दती ह जिनम आयुवद का विकास सुनिश्चित है। जरूरत है हम काम करन की। आयवेंद के लिय यह स्वण अवसर है इसको यदि हमन हाथ से खो दिया तो आत्मघातक होगा। वत्मान म आयुर्वेद के जो अच्छ ज्ञाता वद्ध वद्य है जो शास्त्र ज्ञान का प्रकाश विस्तारित कर सकते ह यदि हमारे प्रमाद म समय निकल गया और व उठ गय—तथा राष्ट्रीय क्षत्र म सस्कृतनिष्ठ माननीयो की आयर्वेद के प्रति सहानभूति कुण्ठित हो गई तो आयवद का दु खद ह्रास सदिग्ध नही है। यही गति रही तो अगली पीढी तक आयुवद नही चल पायगा। आज श्रद्धय यादवजी त्रिकम जी आचाय जस ममज्ञ और मत्ताना जी एव श्री नन्दकिशोर जी जसे उत्साह होते तो यह काय जितनी उत्तमता से होता उतना होना आज दुष्कर साध्य है परन्तु असम्भव कदापि नही है। हा हमारी दृष्टि यदि यथाथ की ओर न जायगी और ऊपर ऊपर की साधारण बातो म हम उलझ रहग तो एक दशाब्दि के बाद हम कहा होग—कहा नही जा सकता।

सगठन एव वद्य समाज तथा आयवद हित के रचनात्मक कार्यो को कार्यान्वित करन म व्यक्तिवाद से ऊपर उठकर और परस्पर के सम्पूण विज्ञान क एक अग र रखकर कधे से कधा मिलाकर आग बढाना चाहिए विवा वग के भाई यदि अपन वनियो का मवरण नहा कर सकते त यथाथ काय करन म प्रतिस्पर्द्धा कर म उनक विनम्र चनौती दता हू कि दिल्ल म विद्यापीठ के महाविद्यालय की स्थापना म व स्वय या समाज से जितना धन साधन एकत्र करके द म उनसे अधिक जटान का आश्वासन देता हू। प्रभाव एव कर्मशक्ति की यह कसौटी निर्णायक भी होगी और आयवद के लिए कल्याणकर भी

मेरा विश्वास है कि मेरे नम्र निवदन पर आप कृपाकर ध्यान दगे। मरा पुन आग्रह है कि समितियो के अधिवशन म दिल्ली अवश्य ह पधार और अपन प्रयत्न से इस बात पर बल द कि विद्यापीठ क ओर स कविराज श्री उपेन्द्रनाथ दास जी की य जनानुसार दिल्ल म आयवद महाविद्यालय का स्थापना अविलम्ब की जाय यदि किसी कारणवश आप न जा सक त इन विषयो पर अपनी सम्मति स्थायी समिति क डाक द्वारा अवश्य भज और उसकी एक प्रति कृपया मेरे पास भजकर कृताथ कर।

योग्य सेवाओ के लिए सदव प्रस्तुत—

आपका

रामनारायण वद्य

श्री बद्यनाथ आयवद भवन प्रा० लि०

गसाइपुरा झाँसी

एहि भगवन् भारतं धन्वन्तरे ! पुनरेकवारम्

एहि, भगवन्! भारत धन्वन्तरे! पुनरेकवारम्,
दीननयनाह्लादि रूप दर्शयाशु तावत्पुवारम्,

दाम्भिका परिखण्डयन्ते वैद्यविद्याया स्वरूपम्
भारतीयस्वास्थ्यहृतये हा! खनति गभीरकूपम्।
प्रत्यह लुण्ठन्ति चौरा मानवाऽऽयुर्मणिमनूपम्
पीडिता आकारयामो रक्षणाय कमत्र भूपम्॥

बोधयेदिह को विना त्वाम्, आततायिवधप्रकारम्
एहि! भगवन् भारत धन्वन्तरे! पुनरेकवारम्॥१॥

उग्ररोगवशप्रपन्न तरुणमरणिमहीनगण्डम्
प्रदरपाण्डुगदप्रसार युवतियौवननाशचण्डम्।
यक्ष्मयक्षगदाप्रहार बालबाल्यविघातपण्डम्
वीक्षमाणस्यास्रवो मम सत्वर धावन्ति तुण्डम्।

वितर करुणाकर! सुधा कुरु भारती यजन ससारम्
एहि भगवन्! भारत धन्वन्तरे! पुनरेकवारम्॥२॥

शल्यशालाक्ये गते अत्यन्त दुरवस्था जगत्याम्
वैद्यनवरत्नैकता हा विद्यते न तथापि मत्याम्,
कर्तुमितरे आगरुकाश्चपलमायुर्वेदहत्याम्,
केऽपि बद्धव्रते न धूर्ता आप्तवाच परमसत्याम्

धारयेदिह को विना त्वा दानवाना कामचारम्
एहि भगवन्, भारत धन्वन्तरे! पुनरेकवारम्॥३॥

प्रतिगृह परिपीडिताना श्रूयमाणा आर्तनादा
यौवनेऽपि च युवजनाना जायमाना हृदवसादा।
बोधशून्यैरपि बलेन निबद्ध्यमाना विविधवादा
शास्त्रपरिशीलनपराणा वर्धमाना हा विषादा,

हे प्रभो व्यथयन्ति चेत कुरु कृपा हर भवनभारम्
एहि भगवन् भारत धन्वन्तरे! पुनरेकवारम्॥४॥

—कविराज सत्यनारायण प्रसाद शास्त्री



धन्वन्तरि जयन्ती अंक

यह सर्वविदित है कि गत कई वर्षों से श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० की प्रेरणा से धन्वन्तरि जयन्ती को सामूहिक रूप मे मनाने की परम्परा चल रही है। इससे पूव वैद्यगण व्यक्तिगत रूप से अपने घरा मे श्री धन्वन्तरि पूजन किया करते थे। श्री बैद्यनाथ भवन के सचालको ने अपने देशव्यापी बिक्री केन्द्रो एव एजेण्टो को प्रेरित करके सामूहिक आयोजन कराके वैद्य हकीमो में सौहाद और सगठन बढाने का प्रयास किया जो बहुत सफल रहा। अब तो अन्य स्थानो पर भी श्री धन्वन्तरि जयन्ती के सामूहिक आयोजन होने लगे है यह बडे हर्ष की बात है।

इस वर्ष वैद्य श्री रामनारायण शर्मा ने एक अपील प्रकाशित करके वैद्य जगत् एव जन-कार्यकर्ताओ से आग्रह किया था कि इस बार श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर स्वास्थ्य दिवस के आयोजन किये जाव जिनमे वैद्य हकीमो के अतिरिक्त सावजनिक जनता भी भाग लेवे। वैद्यजी की अपील सभी प्रमुख समाचार पत्रो म प्रकाशित हुई थी और यह बडे सन्तोष का विषय है कि इस वष देश भर मे सर्वत्र श्री धन्वन्तरि जयन्ती को स्वास्थ्य दिवस के रूप मे ही मनाया गया। कई स्थानो पर इस अवसर पर स्वास्थ्य-सप्ताह का भी आयोजन किया गया। इस वर्ष यह महत्त्वपूर्ण बात हुई कि इन आयोजनो मे स्थानीय सार्वजनिक कार्यकर्ताओ और जनता ने उत्साहपूर्वक भाग लिया, जिससे सार्वजनिक रूप से आयुर्वेद का पक्ष सबल हुआ। इस अवसर पर आयोजित सभाओ मे जनता द्वारा यह प्रस्ताव स्वीकृत किये गये कि आयुर्वेद-यूनानी का विकास किया जाय और सरकार इनको ही राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति स्वीकार करे, जन-स्वास्थ्य की ओर विशेष ध्यान दिया जाय और उस विषय मे आयर्वेद के व्यावहारिक स्वास्थ्य-सिद्धान्तो को जनता में अधिकाधिक प्रचारित किया जाय एव सरकार उन्ही सिद्धान्तो के आधार पर स्वास्थ्य-रक्षा का प्रयत्न करे। वैद्यो द्वारा प्रस्ताव स्वीकार करके आयुर्वेदीय आसव अरिष्टो को मद्य श्रेणी मे ले कर मद्य कर लगाने की निन्दा की गई एव सरकार से पुनर्विचार कर कानून की आयुर्वेद विषयक धाराओ को वापस लेने का अनुरोध किया गया। वैद्य-सभाओ मे सर्वसम्मति से प्रस्ताव स्वीकृत करके आयर्वेद महासम्मेलन एव विद्यापीठ की वर्तमान अवस्था पर खेद प्रकट करके उनके सुधार का आग्रह किया गया एव केन्द्र देहली मे महाविद्यालय की स्थापना करके विद्यापीठ को उसमे सहयोग करने का सुझाव दिया गया। सब स्थानो से स्वीकृत प्रस्तावो की प्रतियाँ महामान्य राष्ट्रपति केन्द्रीय तथा प्रादेशिक स्वास्थ्य-मत्रियो केन्द्रीय वित्तमत्री तथा महासम्मेलन विषयक प्रस्तावो की प्रतियाँ सभी वैद्यो के पास प्रषित की गयी।

जनता की ओर से सावजनिक स्वास्थ्य दिवस पर आयोजित सभाओ मे स्वीकृत प्रस्तावो द्वारा सरकार से जो माँग की गयी है उसमे जनता की भावना है और सरकारी अधिकारी वर्ग जो यदा कदा यह कहा करता है कि आयुर्वेद को जनता नही चाहती—उसको इन प्रस्तावो से परिस्थिति जान लेनी चाहिए। क्या हम आशा करें कि राष्ट्रीय सरकार के माननीय स्वास्थ्य-मत्रिगण एव सरकारी स्वास्थ्य विभाग जनता की इस उचित माँग की ओर सहानुभूतिपूर्वक विचार कर देशी चिकित्सा पद्धतियो के पक्ष मे न्यायपूर्ण कदम उठान को उद्यत होगे?

इसी प्रकार आयुर्वेद महासम्मेलन के अधिकारियो से भी यह अपेक्षा करना स्वाभाविक है। वैद्य सभाओ में स्वीकृत प्रस्तावो द्वारा महासम्मेलन की स्थिति पर चिन्ता प्रकट किया जाना कुछ अर्थ रखता है। हर प्रदेश के अगणित स्थाना के वैद्यो ने महासम्मेलन की स्थिति के सुधार की इच्छा व्यक्त की है। महासम्मेलन के अधिकारियो को बिना किसी बहाने के इस प्रसग में अविलम्ब कार्यवाही करनी चाहिए और महासम्मेलन की गतिविधि से उन वैद्यो को ठुकराना नही चाहिए जिन्होने उसके विषय मे प्रस्ताव स्वीकृत करके अपने स्पष्ट विचार व्यक्त किये है।

विद्यापीठ के महाविद्यालय के बिना विद्यापीठ का कोई उपयोग नही है, इस विषय मे दो मत नही हो सकते। प्रस्तावो द्वारा यह माँग कि केन्द्र मे महाविद्यालय की स्थापना की जानी चाहिए, सर्वथा उचित और सामयिक

है। विद्यापीठ का भी इससे अधिक अच्छा उपयोग दूसरा नही हो सकता। यह महासम्मेलन और विद्यापीठ के अधिकारियो की निष्ठा पर निभर है कि व आयुर्वेद जगत के जनमत का कितना आदर करते है या अपन पूर्वाचरण की तरह ही अपनी बद्धि का उपयोग अन्यथा करते है।

इस प्रकार की सभाए देश भर में सौ से अधिक स्थानो पर हुई है जिनका विस्तत विवरण प्रकाशनाथ हमें मिला है। सारे विवरण को किसी भी साधारण अक में देना साध्य नही था इसलिए हम श्री धन्वन्तरि जयन्ती समारोह के विवरण को अपन पाठको तक पहुचान के लिए यह विशष अक प्रकाशित कर रह है ताकि हमारा साधारण अक भी विलम्ब से न निकल और पाठको को समाचार भी उचित समय म प्राप्त हो जाव।

इस अक में प्रकाशित विवरण से आयर्वेद जगत के प्रमख जन यह अनुमान करग कि इस बार श्री धन्वन्तरि जयन्ती पर जैसा प्रयत्न हुआ है यदि इस परम्परा को और अधिक उत्साह के साथ आग बढाया जावगा तो आयुर्वेद के साथ नागरिक जनता का सम्पक अधिक बढगा और जनता यह अनभव कर सकेगी कि उसको भी आयर्वेद का अधिकार दिलान के लिए कुछ प्रयत्न करना चाहिए। इससे आयर्वेद का हित होगा। हमारी आकाक्षा है कि आयर्वेद जगत इस महत्व को अनुभव करे और इस प्रकार के जन सम्पक वाल समारोहो का आयोजन करान की दिशा म अधिक सक्रिय होव।

निम्न स्थानो पर प्रमखता के साथ श्री धन्वन्तरि जयन्ती पर स्वास्थ्य दिवस एव विराट सभाओ के आयोजन किए गए—

गोरखपुर भागलपुर बनारस गुदौलिया छपरा वस्ती आरा इलाहाबाद समस्तीपुर मुजफ्फरपुर (मोतीझील) लहरियासराय सासाराम टाटानगर सीता मढी सुलतानपुर जौनपुर देवरिया सीवान गया बलिया फारबिसगज सीतापुर बगूसराय मोतिहारी फैजाबाद पूर्णिया लखीमपुर-खीरी झरिया लखनऊ (अमीनाबाद) डालटनगज बक्सर आजमगढ बैरगनिया कटिहार विहारशरीफ बतिया राँची पडरौना गोण्डा खगडिया रक्सौल भभुआ जयनगर गिरीडीह बरली मऊनाथभजन सहर्सा मालदा हरदोई विक्रम रावटसगज मिर्जापुर बैद्यनाथधाम औरैया आगरा अलीगढ अमतसर अलवर इन्दौर इटावा कासगज उज्जैन कोटा कानपुर (बिरहाना रोड) कानपुर (गोपाल टाकी) कानपुर (मेस्टनरोड) कानपुर (ग्वालटोली) कौच कानपुर (दालमण्डी) कटनी खण्डवा खतौली गढमक्तेश्वर गुना गाजियाबाद चन्दौसी जालन्धर जयपुर जोधपुर डावरा देहली (चादनीचौक) देहली (चावडीबाजार) दहली (सब्जी मण्डी) झीझक देहरादून पानीपत पुखराया फतेहपुर फरूखाबाद बलन्द शहर बाराबकी बादा बदाय भोपाल भलसा भरतपुर मरठ मरादाबाद मजफ्फरनगर मोरेना मथरा मऊरानीपुर रोहतक रेवाडी रतलाम रीवा लश्कर (ग्वालियर) ललितपुर शाहजहापुर सतना सहारनपुर सागर हरिद्वार हाथरस हापुड हरदा छतरपुर टीकमगढ दतिया अबोहर मण्डी उन्नाव कोटपुतली खरेला गौहारी जालौन पावटा पलपल मोगा मोठ रूडकी शिवपुरी शिकोहाबाद पौडी (गढवाल) धौलपुर नीमकाथाना अकोला अमरावती यवतमाल गोन्दिया जबलपुर रायपुर बिलासपुर रायगढ राजनादगाव नागपुर (इतवारी) नागपुर (महालरोड) तुमसर मण्डला बर्धा खामगाव औरगाबाद हैदराबाद डोगरगढ बालाघाट सिवनी जलगाव सिहोरा कलकत्ता (महात्मा गाधी रोड) हवडा मदान सलकिया शिवपुर रिसडा मटियाबज बलियाघाटा काशीपुर बलस्ली स्टीट सियालदह चापदानी कमरहट्टी खिदिरपुर बारानगर भवानीपुर काकीनारा जगदल सम्बलपुर खडगपुर रानीगज आसनसोल वद्धमान कटक पुरी झारसुगुडा कुल्टी चाराली बरहमपुर कचरापाडा पुरूलिया गरूलिया दक्खिनडाडी कलिम्पोङ्ग आलम बाजार चामरची सोनादा सेपौन गौहाटी टीटागढ रायगगपुर सिलीगुडी वाउडिया स्ट्राण्डरोड गौरीपुर।

धन्वन्तरि और उनकी जयन्ती

आचार्य शिवदत्त शुक्ल एम० ए०, आयुर्वेदाचार्य

ग्रीक पौराणिक गाथाओ के अनुसार सर्प को ज्ञान का प्रतीक माना जाता है। Asculepius अपने हाथ मे एक दण्ड रखता है जिसके आसपास सर्प लिपटा रहता है। विश्व के इस परम विकसित युग मे वैज्ञानिकता के शिखर पर पहुँचे हुए चिकित्सक मण्डल ने चिकित्सा शास्त्र के लिये यह दण्डयुक्त सर्प प्रतीक माना है। सभी देशो के वैज्ञानिक इस ग्रीक पौराणिक परम्परा को अपने मस्तक पर मुकुटमणि की भांति धारण करते है। इसी के धरातल पर चिकित्सा की मर्यादा को प्रतिष्ठापित करते है।



लेखक

भारत मे पतञ्जलि को शेष का अवतार माना जाता था और वे योग, व्याकरण और वैद्यक तीनो शास्त्रो के निर्माता माने गये थे। पाश्चात्य चिकित्सक ग्रीक परम्पराओ का अनुकरण गौरव के साथ करता है। परन्तु भारतीय प्रतीको को किंचित मात्र भी अपने मस्तिष्क मे स्थान देने मे विडम्बना समझता है। यही कारण है कि आज हम अपने देश के परम विख्यात वैज्ञानिको और विद्वानो के सम्बन्ध मे कुछ भी नही जानते, या तो उनकी पूजा कुछ ऐसे व्यक्तियो द्वारा हो रही है जिन्हे अन्धश्रद्धा रखनेवाले कहा जाता है या वे पूर्णतया भूले जा चुके है। यही दुर्दशा शल्याग-चिकित्सा-शास्त्र के अन्यतम प्रवर्तक धन्वन्तरि की भी हुई है।

हजारो वर्षों से हमें ज्ञात है कि हमारे देश में शल्याग-प्रधान आयुर्वेद के उपदेष्टा काशिराज धन्वन्तरि हुए थे। देश मे उनकी जयन्ती भी कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को मनाई जाती है। उसी समय मे गतानुगतिक परम्परा के अनुसार स्वास्थ्य के महत्वपूर्ण अग घर की स्वच्छता आदि का आयोजन भी होता है परन्तु जिस पुरुष के नाम पर यह परम्परा प्रारम्भ हुई उसके सम्बन्ध मे अबतक हम निश्चयात्मक रूप से अधिक कहने मे समर्थ नही है।

काशिराज धन्वन्तरि अपने शास्त्र के *व्याख्याता* थे। उनके श्रोता सुश्रुत, औपधेनव, पौष्कलावत, औरभ्र, भोज, वैतरण आदि ऋषि थे। इन सभी शिष्यो ने शल्यतत्र के पृथक-पृथक ग्रथ लिखे। आज से १००० वर्ष पूर्व वे ग्रथ मिलते थे क्योकि अनेक ग्रथकारो ने उनके पाठो का उल्लेख किया है। इनमे से औपधेनव, औरभ्र, सौश्रुत तथा पौष्कलावत तत्र बहुत महत्व के माने जाते थे। भोज तत्र के पाठ भी अनेक स्थलो पर प्राप्त होते है, किन्तु इन सभी ग्रथो में से आज केवल सुश्रुतसहिता ही उपलब्ध होती है।

इन उपदेष्टा धन्वन्तरि के विषय मे आयुर्वेद के ग्रथो से अधिक विवरण पुराणो मे प्राप्त होता है। मुख्यतया हरिवश, महाभारत, भागवत, विष्णु वायु ब्रह्माण्ड और आग्नेय पुराण में धन्वन्तरि का वर्णन मिलता है। हरिवश में कहा गया है कि समुद्र-मथन के समय विष्णु का अशावतार हुआ। इसी को अब्जधन्वन्तरि कहा गया। इस अशावतार के विषय में स्वय विष्णु भगवान द्वारा कहा गया कि तुम दूसरे जन्म में ख्याति प्राप्त करोगे, गर्भस्थिति मे ही तुम्हे

अणिमादि सिद्धियाँ प्राप्त होगी, मनुष्य रूप में ही देवत्व प्राप्त होगा और द्विजातिगण तुम्हारी पूजा करेगे—

द्वितीयया हि सम्भूत्या लोके ख्यातिं गमिष्यसि,
अणिमादिश्च ते सिद्धि गर्भस्थस्य भविष्यति।
तेनैव त्व शरीरेण देवत्व प्राप्यसे प्रभो,
चरुमन्त्रैर्व्रतैर्जाप्यै र्यक्ष्यन्ते त्वा द्विजातय।"

यह समुद्र-मथन की कथा सतयुग की है। भागवत पुराण में समुद्र-मथन से धन्वन्तरि की उत्पत्ति का बड़ा सुन्दर वर्णन है—

अथोदधेर्मथ्यमानात् काश्यपैरमृतार्थिभि,
उदतिष्ठन्महाराज पुरुष परमादभुत।
दीर्घपीवर दोर्दण्ड कम्बुग्रीवोऽरुणेक्षण,
श्यामलस्तरुण स्रग्वी सर्वाभरणभूषित।
पीतवासा महोरस्क सुमृष्टमणि कुण्डल,
स्निग्ध कुंचित केशान्त सुभग सिंहविक्रम।
अमृतापूर्णकलश बिभ्रद् वलयभूषित,
स वै भगवत साक्षाद्विष्णोरंशांश सम्भव।
धन्वन्तरिरिति ख्यात आयुर्वेददृगिज्यभाक,
तमालोक्यासुरा सर्वे कलश चामृताभृतम्।

अर्थात्—अमृतेच्छुक कश्यप पुत्रो द्वारा समुद्र मथन से एक परम अद्भुत पुरुष उत्पन्न हुआ जिसकी लम्बी और पुष्ट बाहु थी, सुन्दर शखसदृश ग्रीवा थी, रक्त नेत्र थे, विशाल वक्ष था, मणिकुण्डलधारण किये था, स्निग्ध कुंचित केशान्त था, ऐश्वर्यवान तथा सिंह सदृश पराक्रमी था, जिसके वलय-भूषित हाथ मे अमृतपूर्ण कलश था, वह विष्णु के अंशांश से सम्भूत था, वही धन्वन्तरि के नाम से प्रसिद्ध हुआ और आयुर्वेद का व्याख्याता हुआ। इन्ही धन्वन्तरि के सम्बन्ध में अन्यत्र भागवतकार ने लिखा है—

धन्वन्तरिश्च भगवान् स्वयमेव कीर्ति—
र्नाम्ना नृणा पुरुरुजा रुज आशु हन्ति।
यज्ञे च भागममृतायुरवावरुन्ध—
आयुश्च वेदमनुशास्त्यवतीर्य लोके॥

हरिवंश पुराण मे आगे कहा गया है कि द्वापर में काशी के राजा धन्व ने पुत्र की कामना से अनेक प्रकार के तप किये तब उनके घर में धन्वन्तरि नामक पुत्र की उत्पत्ति हुई। वे चिकित्सक थे और नाना प्रकार के रोगो को नष्ट करने की उनमें शक्ति थी। उन्होने आयुर्वेद की शिक्षा भारद्वाज से प्राप्त की। फिर उसे ८ भागो में विभाजित कर अपने शिष्यो को पढाया—

द्वितीये द्वापरे प्राप्ते अग्निहोत्रि स काशीराट्।
पुत्र कामस्तपस्तेपे धन्वो दीर्घ महत्तदा॥
तस्य गेहे समुत्पन्न देवो धन्वन्तरिस्तदा,
काशिराजो महाराज, सर्वरोग प्रणाशन॥
आयुर्वेद भारद्वाजात सप्राप्य सभिषक् क्रियम्।
तमष्टधा पुनर्व्यस्य शिष्यभ्य प्रत्यपादयत॥

इन्ही धन्वन्तरि के विषय मे अन्यत्र भागवत मे भी कहा है कि—

"धन्वन्तर द्वादश त्रयोदशमेव च"

आश्वलायन गृह्यसूत्र मे इन्ही धन्वन्तरि के लिये बलि का विधान किया गया है—

"धन्वन्तरियज्ञे ब्रह्माणमग्नि चान्तरा पुरोहिताय बलि हरेत्"

दैनिक बलि-वैश्वदेव-विधि के प्रकरण मे भी—"ओ धन्वन्तरये स्वाहा" का विधान किया गया है। सुश्रुत-संहिता भी इसी प्रसग की पुष्टि करती है।

अह हि धन्वन्तरिरादिदेवो, जरारुजामृत्यु हरोऽमराणाम्।
शल्यागमगैरपैरुपेत प्राप्तोऽस्मि गा भूय इहोपदेष्टुम्॥

इस प्रकार उपर्युक्त सभी प्रमाणो तथा उद्धरणो के द्वारा यह सिद्ध होता है कि सुश्रुतोपदेष्टा भगवान धन्वन्तरि विष्णु के अंशावतार थे जो कि अपने द्वितीय जन्म मे प्रसिद्ध हुए। उन्होने भरद्वाज से आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त किया और उसे ८ अगो मे विभाजित किया। किन्तु सुश्रुत के अनुसार धन्वन्तरि को इन्द्र का ही शिष्य कहा जा सकता है। प्रचलित सुश्रुत मे लिखा है—

ब्रह्मा प्रोवाच तत प्रजापति अधिजगे, तस्मादश्विनौ, अश्विभ्यामिन्द्र इन्द्रादहम् मया त्विह प्रदेयमर्थिभ्य प्रजाहित हेतो॥

अर्थात्—आयुर्वेद ज्ञान को ब्रह्मा ने प्रजापति को कहा, प्रजापति ने अश्विनी कुमारो को, अश्विनी कुमारो ने इन्द्र को तथा इन्द्र ने धन्वन्तरि को कहा। इस प्रकार सुश्रुतानुसार धन्वन्तरि का स्वय इन्द्र से आयुर्वेद अध्ययन सिद्ध होता है। शास्त्रो ने इन्द्र के परमगुरुत्व को इस विप्रतिपत्ति का समाधान मान लिया है।

इन दो धन्वन्तरि के अतिरिक्त सुश्रुत में वर्णित निम्न वचन पर विचार करने से कुछ विचित्रता और प्रतीत होती है—

अथ खलु भगवन्तममरवरमृषिगणपरिवृतमाश्रमस्थ काशिराज दिवोदास धन्वन्तरिमौपधेनव वैतरणोरभ्रपौष्कलावत करवीर्यगोपुर रक्षित सुश्रुत प्रभृतय ऊचु

इस वाक्य मे धन्वन्तरि के साथ दिवोदास का नाम लिया गया है, हरवश पुराण मे वर्णित वशावली के अनुसार धन्वन्तरि काशराजा के वश मे धन्व नरेश के पुत्र थे और देवदास इनके बाद तीसरी पीढी मे हुए थे। वे भीमरथ के पुत्र थे तथा प्रतर्दन उनका पुत्र था। काश-दीर्घतपा धन्व धन्वन्तरि-केतुमान-भीमरथ (भीमसेन)—दिवोदास-प्रतर्दन-वत्स।

विष्णु पुराण की परम्परा के अनुसार काश के काशेय पुत्र हुए और काशेय से काशीराज और उनके राष्ट्र हुए। राष्ट्रसे दीर्घतपा तथा इनके पुत्र धन्वन्तरि हुए। भागवत पुराणमे भी इसी प्रकार की परम्परा मिलती है। आयुर्वेदीय इतिहास के सम्बन्ध मे गहन विचार प्रगट करनेवाल स्वनाम-धन्य स्वर्गीय पूज्य प० हेमराज शर्माने धन्वन्तरि के प्रपौत्र देवदास को ही आयुर्वेद का सुश्रुतोक्त उपदेष्टा माना है। देवदास के पूर्व पुरुष धन्वन्तरि को अब्जदेवता स्वीकार किया है।

इस सम्बन्ध में यह विचारणीय है कि हरिवश तथा महाभारत के अनुशासन पर्व मे देवदास के द्वारा ही वाराणसी के निर्माण का निर्देश है। प्रतर्दन के पौत्र अलर्क ने वाराणसी को पुन बसाया था। कौशातकी ब्राह्मणोपनिषद मे भी देवोदास (देवदास के पुत्र) प्रतर्दन का ब्रह्मविद्या की प्राप्ति के सम्बन्ध मे उल्लेख किया गया है। काठक सहिता के ब्राह्मण अश मे भी भीमसेन के पुत्र देवदास का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद के प्रथम मण्डल मे भी देवदास नामक एक राजा का उल्लेख मिलता है। इनकी शूरवीरता के बारे में कहा गया है परन्तु वैद्य नही कहा गया है। इन्ही आधारो पर डा० गणनाथ सेन ने देवदास तथा धन्वन्तरि की एकता पर अविश्वास प्रकट किया है। उनका कहना है कि देवदास नामक धन्वन्तरि के प्रपौत्र जो कि काश वश मे उत्पन्न हुए थे प्रथम ही थे क्योकि यदि धन्वन्तरि और देवदास को एक माना जाये तो उनके मुख से "अहहिधन्वन्तरिरादिदेवो" यह वाणी उचित नही प्रतीत होती न उन्हे अमरवर कहा जा सकता है। देवदास को वैदिक, ऐतिहासिक एव पौराणिक वाङ्मय में कही भी आयुर्वेदिक उपदेष्टा नही कहा गया है।

इसके अतिरिक्त एक चौथे धन्वन्तरि नाम के विद्वान का परिचय, चाहे वे वैद्य हो या कवि, विक्रमादित्य की सभा मे मिलता है। ये सभासद तथा विक्रमादित्य के नवरत्नो में एक थे। नवरत्न की कल्पना के आधार पर विभिन्न प्रकार के विद्वानो का सभासद होना युक्त ही कहा जा सकता है। इन नवरत्नो मे धन्वन्तरि वैद्यराज, क्षपणक बौद्धभिक्षु, अमरसिंह शब्दकोषकार, कालीदास कविराज, वराहमिहिर ज्योतिषाचार्य आदि थे। इनके सुश्रुतोपदेष्टा होने की शका किसी विद्वान को नही है किन्तु इनका भी काल २००० वर्ष के पूर्व का है जो कि इनके प्रचलित विक्रम सम्वत से समझा जा सकता है।

इसके अतिरिक्त एक धन्वन्तरि नामक अन्य ऋषि का वर्णन भी प्राप्त होता है। सारस्वत तथा अन्य प्रान्तो के कुछ ब्राह्मणो मे जो पजाब, सिन्ध, बगाल, महाराष्ट्र आदि अनेक प्रदेशो मे रहते है और जो अपने को वैद्य उपनाम से घोषित करते है इनमे से कुछ अपने को धन्वन्तरि के गोत्र का बतलाते है। यह अपने को धन्वन्तरि अप्सरा नैयध्रुव काश्यप प्रवर के बतलाते है। इस प्रकार धन्वन्तरि के सम्बन्ध मे कई प्रकार के बाद प्रचलित है किन्तु बहुसम्मति यही है कि द्वापर में होने वाले धन्वन्तरि ही सुश्रुत के उपदेष्टा है और उन्ही की इतनी ख्याति हुई कि अवतार माने गये और अबतक उनकी पूजा होती चली आई है।

धन्वन्तरि का काल

यदि वैदिक तथा ब्राह्मण ग्रथ में आये दिवोदास को हम सुश्रुत का उपदेष्टा न भी मानें तब भी धन्वन्तरि का काल महाभारत के पूर्व का है। महाभारत की रचना बुद्ध के पूर्व की है अतएव यह निश्चित सत्य है कि धन्वन्तरि का काल उपनिषद काल के लगभग हो सकता है। महाभारत का युद्ध द्वापर के अन्त तथा कलियुग के प्रारम्भ मे हुआ था इसके काल को कुछ विद्वान ५००० वर्ष पूर्व का मानते है किन्तु डा० अलतेकर तथा डा० जयसवाल ने इसे लगभग १४०० ई० पू० स्वीकार किया है। डा० राय चौधरी ने इसे ई० पू० ९ वी तथा पार्जिटर ने ई० पू० दसवी शताब्दी माना है। इस युद्ध के पूर्व धन्वन्तरि सम्प्रदाय का विकास निश्चित हो चुका था। इसके अतिरिक्त मिलिन्दपल्लव नामक पालीग्रथ (द्वि० शताब्दी पू०) तथा अयोधर जातक में धन्वन्तरि का उल्लेख मिलने से तथा महाभाष्य (पतञ्जलि-

कृत) में धन्वन्तरि का निर्देश होने एव धन्वन्तरि के प्रपौत्र देवदास द्वारा वाराणसी के निर्माण का वर्णन होने से इनकी प्राचीनता का ज्ञान स्पष्ट हो जाता है। आयुर्वेद के प्राचीनतम ग्रथ चरक मे (चि० स्था० अ० ५, शा० स्था० अ० ६) में धन्वन्तरि सम्प्रदाय का उल्लेख होने के कारण निश्चित रूप से धन्वन्तरि को आत्रेय से प्राचीन मानना पडता है। सुश्रुत सहिता का निर्माण भी बुद्धकाल (६वी शताब्दी ई० पू०) मे हो चुका था और उस समय से ही शल्य विद्या का ह्रास प्रारम्भ हो चुका था। ऐसी अवस्था मे धन्वन्तरि का काल ३००० वर्ष से पूर्व का निश्चित रूप से माना जाना चाहिये, यही प्राय सभी विचारको का समन्वित मत है।

भारतवर्ष भावना प्रधान देश रहा है। इसमे राम कृष्ण परशुराम, बुद्ध, धन्वन्तरि सभी अवतार माने जाते हैं। इनको देवता समझ कर पूजा जाता है। हमारे यहा का विश्वास है कि जब जब मानवता सकट मे पडती है तब-तब भगवान को ही मानव रूप धारण कर उसकी रक्षा का उद्योग करना पडता है। धन्वन्तरि का अवतार भी इसी प्रकार हुआ है। सर्व शक्तिमान भगवान भी पृथ्वी के दु खो को उतारने के हेतु मनुष्य रूप मे आकर ही लीला करते हैं। अपने कर्तव्यो के द्वारा आदर्श उपस्थित करते है। हम अपने महापुरुषो के चरित्रो को गम्भीरतापूर्वक देखे तो उनके कार्यों मे लोक-कल्याण की परिपक्व भावना प्रतीत होती है। प्राय सभी अवतारो की जयन्तियाँ मनाई जाती हैं। इनमे से कुछ का अधिक प्रचार है और कुछ का कम। हम रामनवमी तथा जन्माष्टमी को इसी दृष्टिकोण से मनाते हैं। धन्वन्तरि जयन्ती भी बहुत काल से हमारे देश में मनाई जाती है किन्तु इसके सार्वजनिक रूप मे कुछ परिवर्तन हो गया है। हम मे से अधिकाश लोग वर्तन आदि खरीद कर धन की पूजा कर धन्वन्तरि पूजा कर लेते है। वास्तव मे धन्वन्तरि जयन्ती भगवान के उस पवित्र कार्य के सस्मरण के हेतु मनायी जाती है जिसके हेतु धन्वन्तरि का अवतार हुआ था। अर्थात् जनता के रोगो के नष्ट करने के सभी उपायो का अवलम्बन।

हम लोग इन्ही दिनो में घर की सफाई करते है और लक्ष्मी पूजन करते है। इसका आशय यह है कि मानव जीवन में तीन प्रकार की एषणाये होती है। सब से पहली एषणा प्राण-एषणा कहलाती है। प्राणैषणा में दो विषयो का विचार किया जाता है स्वस्थ की स्वस्थ वृत्ति तथा आतुर के विकारो के प्रशमन् मे अनालस्य। स्वस्थ-वृत्ति का पालन व्यक्तिगत तथा सार्वजनिक रूप मे दोनो प्रकार से होता है। धन्वन्तरि जयन्ती का व्यावहारिक स्वरूप सावजनिक स्वच्छता के रूप मे अति प्राचीन काल से हमे दृष्टिगत होता चला आ रहा है। इस प्रकार इस त्याहार से हमे यह प्रेरणा प्राप्त होती रही है कि जीवन की रक्षा के लिये अपने तथा अपने पडोसिया के स्वास्थ्य का ध्यान रखना चाहिये और ऐसे नियमो से रहना चाहिये कि हम स्वय स्वस्थ रहे और हमारे आसपास के व्यक्ति भी। इसके बाद धनैषणा है। जब हमारा स्वास्थ्य अच्छा रहता है तो हम धन की एषणा करते है। धन का अथ चरक के अनुसार उपकरण होता है। जब स्वास्थ्य एव लक्ष्मो की प्राप्ति हो जाती है तब मानव शान्ति की आर आगे बढकर परलोकैषणा की तरफ प्रवृत्त होता है। यह है धन्वन्तरि त्रयोदशी तथा उसके बाद हाने वाले लक्ष्मी पूजन का रहस्य और उसक एक दिन बाद ही गोपूजन होता है। भारतवर्ष मे कृषि प्रधान होन के कारण गाय का महत्त्व सबसे अधिक माना गया है। एतदर्थ गो पूजा की जाती है जो हमे व्यावहारिक लक्ष्मी पूजन की ओर प्रवृत्त करती है। और उसी के दूसरे दिन भातृद्वितोया त्योहार हमे कर्त्तव्य कम की तरफ प्रेरित करता है। वह बतलाता है कि ससार के प्राणियो तथा स्वय एक मनुष्य का दूसरे मनुष्य के साथ कैसा कत्तव्य होना चाहिये। ससार मे किस प्रकार के व्यवहार करने से हम सफल हो सकते है। हमारी आवश्यकताएँ क्या है। हमे कब क्या करना चाहिये इसीका उपदेश देने के हेतु हमारे देश मे त्योहारो की कल्पना की गई थी। महापुरुषो की जयन्तिया मनाने की परम्परा चलाई गयी थी। वरसात के बाद इन त्योहारो के मनाने का यही महत्त्व है। इनके वास्तविक रहस्य को समझने मे हम आगे बढ़ सकते है और अपने जीवन को सफल बना सकते हैं अर्थात् पहले व्यक्तिगत तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य की रक्षा तत्पश्चात् अर्थ तथा उपकरणो का सचय तदनन्तर कर्त्तव्य कर्म का यथायोग्य पालन।

रोगपरीक्षा-पद्धति का प्रथम सूत्र

वैद्य रणजितराय

आयुर्वेद के विलोप का एक कारण उसकी प्रायोगिक परम्परा की प्राप्ति वर्तमान पीढी को न होना है। इसके विच्छेद के कारण ऐतिहासिक है और सुविदित है। आयुर्वेद के प्रत्यक्षात्मक भाग का अन्वेषण कर उसे प्रकाश मे लाना आयुर्वेद के पुनरुज्जीवन के लिए परमावश्यक है। आगे बढने के पूर्व अपने वक्तव्य को कुछ स्पष्ट कर दूं।

आयुर्वेदीय सहिताओ के बहुत-से वचन ऐसे है जिनका प्रत्यक्ष मे उपयोग पुराकाल मे कैसे किया जाता होगा यह आज समझ नही आता। कारण हम तक सहिताओ के शब्द तो पहुँचे है परन्तु उनके उपयोग का प्रत्यक्ष स्वरूप पहुँच नही पाया है। निश्चित ही उसे हमे ऐतिहासिक प्रदर्शन की वस्तु नही रहने देना है। किन्तु सर्वत्र अन्वेषण कर, मनन और मन्थन कर उसे पुन क्रिया मे लाना है। प्रसिद्ध पञ्चकर्म तथा अन्य कर्मो का ही उदाहरण लीजिए। पञ्चकर्म आयुर्वेद का प्रधान अङ्ग है। पञ्चकर्म की प्रधानता उसके सशोधनात्मक होने से है और सशोधन रोगो का मूलोच्छेदक होने से, परिणामतया रोगो को पुन उत्पन्न होने मे बाधक (अपुनर्भवकर) होने से चिकित्सा मे प्रधान है।

थोडा ठहर कर इन वचनो की भी व्याख्या कर ले।

व्याधितरूपीय अध्याय (विमान स्थान सप्तम अध्याय) मे क्रमियो की चिकित्सा कहकर उसका उपसहार करते चरकाचार्य ने **चिकित्सा के तीन प्राथमिक भेद** दर्शाए है। वे कहते है।—

अपकर्षणमेवादौ क्रमीणा भेषज स्मृतम।
ततो विघात प्रकृतेर्निदानस्य च वर्जनम्।।

तात्पर्य—क्रमियो की चिकित्सा तीन प्रकार से की जाती है। **अपकर्षण** अर्थात् उन्हे तत्तत् उपाय से बाहर निकाल देना। **प्रकृति-विघात—नाम** क्रमियो की उत्पत्ति और वृद्धि की कारणभूत जो भूमिका आमपक्वाशय आदि में विद्यमान है उसे विरुद्ध गुणवाले द्रव्यादि के सेवन से नष्ट करना, इसे ही अन्यत्र सशमन भी कहते है। **निदान-परिवर्जन—**क्रमि जिस अहिताहारविहार से उत्पन्न और पुष्ट हो उसका परित्याग। क्रमियो के प्रसग से कहे इस त्रिविध उपचार का उपदेश रोगमात्र की चिकित्सा के लिए करते तन्त्रकार आगे कहते है—

अयमेव विकाराणा सर्वेषामपि निग्रहे।
विधिर्दृष्टस्त्रिधा योऽय क्रमीनुद्दिश्य कीर्तित।।

आशय, क्रमियो को दृष्टि मे रखकर उपचार के जो तीन प्रभेद यहाँ बताए गए है, रोगमात्र के उपशमन के यही तीन प्रभेद समझने चाहिए।

प्रथम पद्य मे उपचार के तीन प्राथमिक भेदो के जो नाम दिए है वे वैसे प्रसिद्ध नही है। इस द्वितीय पद्य की आगे व्याख्या करते हुए इन भेदो के सरल और प्रसिद्ध नाम देते तन्त्रकार कहते है—

सशोधन सशमन निदानस्य च वर्जनम्।
एतावद् भिषजा कार्यं रोगे रोगे यथाविधि।।

च० वि० ७।३०

अर्थात्—प्रत्येक रोग मे वैद्य को विधिपूर्वक तीन कार्य करने चाहियें—सशोधन, सशमन तथा निदान-परिवर्जन (पथ्य का सेवन तथा अपथ्य का त्याग)।

चिकित्सा के इन तीन प्राथमिक भेदो के विषय में वैद्य मात्र को पर्याप्त परिचय होता ही है। अत उस विषय मे विशेष न कहकर एक प्रासगिक वस्तु का निर्देश करना उपयुक्त समझता हूँ।

अपने एक लेख मे मैंने कहा था कि किसी राज्य में उद्योग विशेष की उन्नति करना अभीष्ट होता है तो सरकार परदेश से होनेवाले उन द्रव्यो के आयात पर प्रतिबन्ध लगा देती है जिनका निर्माण उस उद्योग विशेष से होता है। परिणाम यह होता है कि झख मारकर लोग देश के उस उद्योग से निर्मित पदार्थों को अपनाते है। निर्माता जन भी उत्साहित होकर उस पदार्थ के स्वरूप को सुधारने का प्रयत्न करते हैं। आयुर्वेद के उत्कर्ष पर यह दृष्टान्त उत्तमतया लागू होता है।

आयुर्वेद को उन्नतिपथगामी करना हो तो सिद्धान्त और क्रिया दोनो पक्षो में हमे ऐलोपेथी के आयात (इंपोर्ट)

पर कार्यक्षम प्रतिबन्ध लगाना होगा। अपने भाषणो, लेखो तथा ग्रन्थो में हमारी परिपाटी प्राय यह रही है कि आयुर्वेद के एकाध वचन का उल्लेख कर उसका शाब्दिक अर्थ बता दिया जाता है और शेष स्थल तथा समय का उपयोग एलोपेथी के मत के प्रतिपादन के रूप में कर दिया जाता है। इससे हमारी आयुर्वेद के अवगाहन की वृत्ति पर ही ताला लग जाता है। इस स्थिति के विपरीत जो विद्वज्जन आयुर्वेद से ही आयुर्वेद को समझने का प्रयत्न करते हैं वे उसमें से अत्यन्त उज्ज्वल सिद्धान्त रत्नो को बाहर लाने में सफल होते है।

सिद्धान्त पक्ष की स्थापना के सदृश क्रिया पक्ष में भी एलोपेथी के आयात पर प्रतिबन्ध लगाए बिना हम प्रगति नही कर सकते। एलोपेथी के त्याग का अर्थ रोगी को मार देना ही लिया जाता है। आयुर्वेद की चिकित्सा से रोगी की मृत्यु ही एक परिणाम होता है सो तो बात है नही। साहस हो तो रोगी को हानि पहुँचाए बिना औषधोपचार का प्रयोग किया जा सकता है। एक बार इस मार्ग के अवलम्बन का विचार दृढ हो जाए तो प्रसगोचित दिशा स्वय सूझ जाती है। अत इस विषय का अधिक विस्तार यहाँ न करूँगा। प्रस्तुत के सम्बन्ध में ही एक बात का निर्देश करता हूँ।

चिकित्सा के तीन प्राथमिक भेद है, इस बात का उल्लेख चिकित्सा के प्रारम्भिक अध्यायो मे नही आया है। विमान स्थान मे कृमिरोग के प्रकरण मे यह बात कही गयी है। इस प्रकार एक विषय की बात दूर प्रसगान्तर मे कही जाने के शतश उदाहरण सहिताओ मे प्राप्त होते हैं। युगानुरूप नए सिरे से ग्रन्थादि की रचना करनी होगी तो एक-एक विषय से सम्बद्ध समग्र वचनो को प्रयत्न पूर्वक एक स्थान पर लाना होगा। अन्य शब्दो मे कहना हो तो हमे आयुवद और एलोपेथी के समन्वय पर प्रामुख्येन दृष्टि लगाने की अपेक्षया आयुर्वेद का आयुर्वेद से समन्वय करने पर अपना चित्त लगाना होगा। आयुर्वेद की पूर्त्ति के लिए यह कर्त्तव्य बडा उपयुक्त रहेगा। हम आज समझते हैं उस की अपेक्षया सहिताओ मे यत्र-तत्र विकीर्ण विषयो के दोहन और सदोहन का यह कर्म कही अधिक श्रमसाध्य तथा कालसाध्य है। परन्तु विषय की पूर्ति और विशदता इसके बिना होगी नही[1]।

चिकित्सा के इन तीन प्राथमिक भेदो में जिनका वैद्य के कर्तव्य के साथ विशेष सबध है वे दो है—(स) शोधन और (स) शमन। इन दो में भी मूलोच्छेदकरत्वात् अपुनर्भवकर होने से सशोधन का महत्त्व अधिक है। सशोधन की महत्ता के प्रतिपादक ये पद्य सद्वैद्यो के कण्ठाभरण है —

दोषा कदाचित् कुप्यन्ति जिता लङ्घनपाचनैः।
जिता सशोधनैर्ये तु न तेषा पुनरुद्भव ॥
च० सू० १६।२०

लङ्घन-पाचनादि शामक उपचारो से दोषो का उपाय किया गया हो तो प्रकोपक हेतु की उपलब्धि होने पर उनका कुपित होना सभव होता है। परन्तु जिनका उपाय सशोधन से किया गया हो उनके पुनरुत्पन्न होने की सभावना ही नही होती।

इसी बात को उपमा से विशद करते आचार्य आगे कहते हैं—

दोषाणा च द्रुमाणा च मूलेऽनुपहते सति।
रोगाणा प्रसवाना च गतानामागतिर्ध्रुवा ॥

दोषो और वृक्ष-वनस्पतियो का मूल अक्षत हो तो दोषो के मूल के विद्यमान होने से रोग तथा वृक्ष वनस्पतियो के मूल शेष रहने से पुष्प-फल एक बार नष्ट हो गए हो तो भी उनका पुनरावर्तन होना है।

महारोगाध्याय (सू० २०) में भी चरकाचार्य ने वस्ति, विरेचन और वमन के मूलोच्छेदकर होने के कारण उनकी ऐसी ही फल श्रुति और भी विशद पदो मे बताई है। (देखिए सूत्र १३, १६ तथा १९)। सुश्रुत ने भी सशोधन की इस मूलगामिता का निर्देश चिकित्सा स्थान मे किया है। (देखिए—चि० ३३।१३, २८, चि० ३५।२७ ३१)।

सशोधन अपुनर्भवकर होने से उसका चिकित्सा में विशेष महत्त्व है। वमनादि कर्मों को इतर कर्मों से पृथक् कर पञ्चकर्म नाम से पाँच के वर्ग मे स्थापित करने का भी एक कारण यह है कि दोषो का सशोधन करने की सविशेष शक्ति उनमे होती है। च० सू० २।१५ की टीका में चक्रपाणि इस विषय की स्पष्टता करते कहते हैं—

---

[1] १—एक अन्य छोटा-सा उदाहरण इस विषय में देता हूँ। सुश्रुत ने त्वचाओ में प्रथम अवभासिनी कही है, तथा उसे सिध्म का आश्रय बताया है। निदान के प्रकरण में यह विषय उद्धृत किया जा सकता है। साथ ही कहा जा सकता है कि कुष्ठ रस धातु या त्वचा मे हो तो सुखसाध्य होते है। उस पर भी वे प्रथम त्वचा मे हो तो और भी सुखसाध्य होते है। अत सिध्म प्राय सुखसाध्य होता है। इस उदाहरण को दृष्टि में रखें तो पाठक जान सकते हैं कि आयुर्वेद से आयुर्वेद के समन्वय की यह दिशा कितनी व्यापक और विषय की पूर्ति में सहायक होना सभव है।



कटक म अनुष्ठित धन्वन्तरि जयन्ती समारोह का सभा म समवेत वद्याण।



सम्बलपुर म अनुष्ठित धन्वन्तरि-जयन्ती समारोह की सभा का भव्य दृश्य



शिकोहाबाद मे अनुष्ठित धन्वन्तरि जयन्ती समारोह की सभा के दो भव्य दृश्य



जलगाव मे अनुष्ठित धन्वन्तरि-जयन्ती समारोह की सभा का एक दृश्य

वमनादिषु कर्मलक्षणं बह्वितिकर्तव्यतायोगिदोषनिर्हरणशक्तिव्याप्यत्वम् । वमनादि को ही पञ्चकर्म के प्रकरण में कर्म माना है उसका अर्थ यह है कि एक तो इनमे कार्य बहुत अधिक करना होता है। दूसरे **इन कर्मों में अन्य कर्मों की अपेक्षया दोषो के निर्हरण की शक्ति बहुत अधिक होती है।**

स्नेहन-स्वेदन पञ्चकर्म के अङ्ग होते हुए भी उन्हे इसी कारण सप्तकर्म नाम देकर कर्मों मे स्थान नही दिया गया है कि स्नेहन-स्वेदन से दोषो का शमन एव दोषो का शाखा (शरीरावयवो) से कोष्ठ मे आनयन (उपस्थान) होता है। देखिए चक्रपाणि जी आगे कहते हैं—तन्त्रान्तरे स्नेहस्वेदौ प्रक्षिप्य सप्त कर्माणीति यदुच्यते तन्न भवति। **न हि स्नेहस्वेदौ दोषबर्हिनिःसरण कुरुत**, दोषसशमन तु तौ कुरुत । पञ्चकर्माङ्गत्वेन व्याप्रियमाणौ तु स्नेह स्वदौ दोषोपस्थान एव पर व्याप्रियेते **न दोषनिर्हरणे वमनादिसपाद्ये ।**

आगे अनुवासन के विषय मे शङ्का उठाकर स्वय ही उत्तर देते है कि अनुवासन से यद्यपि वमनादि के सदृश बहु प्रमाण मे दोष का निर्हरण नही होता तथापि पुरीष एव पक्वाशयगत वात का उससे निहरण होता ही है अत कर्म का लक्षण उसपर भी घटित होता ही है।—अनुवासन तु यद्यपि वमनादिवन्न बहुदोष निर्हरण कारण भवति, तथापि **पुरीषस्य पक्वाशयगतवातस्य च बहिर्निर्हारकत्वात् कर्मलक्षणप्राप्तमेव ।**

थूक अधिक लाने के लिए उपाय करना (निष्ठीवन), नेत्राञ्जन आदि मे दोषो के निर्हरण की शक्ति है परन्तु वह इतनी अधिक नही। कि च उनमे स्नेह-स्वेदादि के सदृश इतिकर्तव्यता भी बहुत नही होती। अत उन्हे भी कर्म नाम नही दिया गया। निष्ठीवन नेत्राञ्जनादौ तु न स्नेहस्वेदादिवद् बह्वितिकर्तव्यतायोगो न च **बहुदोषनिर्हारकत्व** तेन न तत कर्मशब्दवाच्यम।

कि बहुना पञ्चकर्मों का प्राधान्य इसलिए है कि चिकित्सा का विशिष्ट अङ्ग सशोधन उनके द्वारा सपाद्य होता है। पञ्चकर्मों का यह प्रयोजन होने से कभी सशोधन और पञ्चकर्म शब्दो का व्यवहार पर्याप रूप से भी होता है। **वाग्भट ने अनुवासन को स्नेह का ही भेद मानकर उसे पञ्चकर्मों में स्थान नहीं दिया है। उसने रक्तज रोगो की प्रधान चिकित्सा होने से रक्तमोक्षण की गणना पञ्चकर्मों में की है। वह समीचीन भी प्रतीत होता है।** विधिशोणितीय अध्याय में चरक ने रक्तज रोगो की जो सूची दी है उससे विदित होगा कि ये रोग भी सख्या में कुछ कम नही है। रक्तमोक्षण इनका प्रमुख उपचार है। अत वाग्भट ने सशोधन या पञ्चकर्म में इसे जो स्थान दिया है वह सगत ही है। कुपित वायु शारीरदोषो और मलो का निर्हरण सम्यक करता नही अत उनके सचय वृद्धि और प्रकोप तथा उसके द्वारा रोगोत्पत्ति मे भी वायु ही कारण है और उसके शमनार्थ वस्ति सर्वोपरि चिकित्सा है। सप्राप्ति और चिकित्सा के इस क्रम को दष्टि मे रखते हुए चरक के निम्न वचन किंचित परिवर्तन कर वाग्भट ने उदधृत किए है—तस्माच्चिकित्सार्धं इति प्रतिष्ट कृत्स्ना चिकित्साऽपि च बस्तिरेकै (अ हृ सू १९।८७)।—कइयो के मत में सपूर्ण चिकित्स‌ा का आधा और अन्य कइयो के मत मे सपूर्ण ही चिकित्सा एक बस्ति मे समा गयी है। इस पक्ष के आगे सिरा द्वारा रक्तमोक्षण को भी अर्ध या सपूर्ण चिकित्साक्रम बनाते वाग्भटाचार्य कहते है —

तथा निजागन्तु विकारकारिरक्तौषधत्वेन सिराव्यधोऽपि ॥

अ हृ सू १९।८७।

दोनो टीकाकारो ने वचन को स्पष्ट करते कहा है—**न केवल बस्ति यावच्छिराव्यधोऽपि चिकित्सार्धं सर्वा वा चिकित्सेत्युपदिष्ट** (अरुणदत्त) **शिराव्यधोऽपि बस्तितुल्य इत्याह—तथेति** (हेमाद्रि)। रक्तज रोगो का कायचिकित्सको द्वारा वातादि दोषजनित नानात्मज रोगो के सदृश पृथक अध्याय मे परिगणन एव उसकी चिकित्साभूत रक्तमोक्षण की इस प्राणवान फलश्रुति से एक बात फलित होती है कि सुश्रुत ने दूष्य होत हुए भी रक्त को (**शोणित चतुर्थे**) इन पदो द्वारा दोषो के समान कक्षा मे ला दिया है। (स्मरण रहे रक्त स्वय चतुथ दोष है ऐसा तो उसने नही कहा है) तो कायचिकित्सको ने भी तज्जन्य रोगो तथा उनके उपचारो का पृथक निर्देश करके रक्त को दोषो के सदृश ही महत्व दिया है। अन्य शब्दो मे **रक्त की इतरदूष्यापेक्षया विशिष्टता शल्यचिकित्सको के समान कायचिकित्सको को भी अभिमत है, यह आयुर्वेदीय मार्ग है।**

पञ्चकर्म, सशोधन तथा रक्तमोक्षण की इतनी महत्ता है। नस्य आदि अल्प प्रसिद्ध कर्मो की फलश्रुति भी ऐसी है कि चिकित्साशास्त्र में उन्हे पुन समग्रतया स्थान दिया जाए

यही लालसा होती है। जो कहना है वह यह कि सहिताओ मे इन कर्मों का इतना महत्त्व प्रतिपादित होत हुए भी आज इन का स्थान हमार व्यवसाय म रहा नही है। य कम श्रयस्कर तथा आत्मसात करन योग्य है इस म सशय नही। परन्तु उन्ह श्रुतौ तस्करता स्थिता की अवस्था से मुक्त कर प्रत्यक्ष म लान का माग ढढना तथा आचरण म लाना चाहिए। य तथा अन्य कम औषध इत्यादि सहिताओ क सम्यक अनुशीलन द्वारा किसी भी सुचिकित्सक द्वारा स्वय अशत भी व्यवहार म लाए जा सकते है। आयुर्वेद के पुनरुज्जीवन की झाकी करानवाल इस युग म इसी पद्धति का अवलम्बन कर कई सुचिकित्सक शास्त्रस्थ कम औषध आदि को प्रत्यक्ष कर-करा भी रह है। विशषतया परम्परागत चिकित्सको म य कम औषधादि किसी रूप म प्रचलित भी होन सभव है। उनका सानिध्य प्राप्त कर इस दिशा म प्रगति की जा सकती है। जो स्वय वैद्य नही है एसे वयोवृद्धो से भी इस दिशा म पर्याप्त जानकारी मिल सकती है। पञ्चकर्मों की ही बात करनी हो तो केरल मद्रास तथा दक्षिणापथ के अन्य प्रान्तो म य कम अक्षरश आज भी चल रह है। उत्तरापथ के वैद्यो को इन कर्मों का प्रत्यक्ष करन के लिए केरल आदि स्थानो म जाना और जाकर कुछ काल रहना चाहिए। आयुर्वेद महाविद्यालय आयुर्वेदिक फकल्टी आयुर्वेदिक हास्पिटल आदि सस्थाओ तथा आयुर्वेद हितचिन्तक धनपतियो को छात्रवत्तिया देकर इन कर्मो के प्रत्यक्ष ज्ञान के लिए विद्यार्थियो को भजना चाहिए। **मैन सचित्र आयुर्वेद' के सचालक तथा श्रीबद्यनाथ आयुर्वेद भवन के मैनजिंग डायरेक्टर माननीय वैद्य रामनारायण जी शर्मा** से इस प्रकार शिष्यवत्तिया दन की प्राथना कुछ ही दिन पूव की थी। व इस दिशा म उत्साही भी दीखते है।

इस प्रसग म दक्षिणापथ की एक अन्य सस्था का भी उल्लख आवश्यक ही नही कतव्य है। **श्री पाथनारायण जी पडित** की प्रधान चिकित्सकता म एक विशुद्ध आयुर्वेदिक हास्पिटल बगलोर म वर्षो से चल रहा है। इसम दो सौ शय्याएँ है। प्रतिदिन एक सहस्र रोगी बाह्य विभाग में आते है। उपचार म प्राय एक एक द्रव्य वह भी बहुधा वनौषधि अन्य द्रव्यो से मिलाकर दिया जाता है। नगरके तथा बाहर के जानकार वैद्य डाक्टर जिस रोगी को अच्छा नही कर पाते उसे श्रद्धा और कौतूहल से प्ररित होकर यहा भजते है। परिणाम प्राय अच्छा ही आता है। पण्डित जी एसे ही रुग्णो को प्रविष्ट करन म विशेष उत्साह दिखाते हैं तथा सहायक वैद्यो के प्ररणामूर्ति सिद्ध होत है। इस सस्था के भी सानिध्य म दक्षिणापथ तथा उत्तरापथ के वैद्यो को आकर आयुर्वेद के पुनरुज्जीवन के महायज्ञ म अपनी आहुति देनी चाहिए। महाविद्यालय आदि सस्थाएँ तथा धनपति इस सस्था म भी आयुर्वेदाभिमुख विद्यार्थियो को छात्रवृत्ति देकर भज यह नम्र विनति है। **वद्य रामनारायण जी** से यह काय करन की भी प्राथना मैंन की थी। **आयुर्वेद की प्रगति के लिए होन वाल किसी भी काय के लिए सनद्ध रहन की अपनी स्वाभाविक वृत्ति के अनुसार इस काय के लिए भी छात्रवृत्ति देकर विद्यार्थियो को भजन की अभिलाषा आदरणीय वद्य रामनारायण जी न दर्शायी है।** उत्सुक विद्यार्थी उनके सपक म आकर अधिक जान सकते है।

कहन का तात्पय यह है कि जैसा कि लख के आरम्भ म कहा था आयुर्वेद की प्रत्यक्ष क्रियाओ की परपरा का बडा भाग तत्ततकारणवश हम तक पहुचा नही है। शास्त्र के अनुशीलन मनन स्वय आचरण उपलब्ध प्रत्यक्ष क्रिया का स्वय प्रत्यक्षीकरण इत्यादि साधनो से आयुर्वेद की लुप्त परपरा आदि को पुन प्रकाश म लाया जा सकता है।

इस विषय म दूसरा उदाहरण प्रकृत रोगपरीक्षा पद्धति का दिया जा सकता है। रोगपरीक्षा की जैसी व्यवस्थित पद्धति एलोपैथी म हम पाते है वैसी आयुर्वेदीय सहिताओ म उपलब्ध नही होती। परीक्षणीय विषयो का विशद निर्देश सहिताओ म किया गया है यह सत्य है परन्तु परीक्षा का विशिष्ट क्रम दिया नही गया है। परिणाम तया उन्नत महाविद्यालयो म भी विद्वान और विश्रुत अध्यापको के होत हुए भी प्रायश नव्य मत का अनुसरण करते हुए ही रोगपरीक्षा की जाती है। इसके कारण आयुर्वेदीय रोग परीक्षा म जिस जानकारी का प्राप्त करना आवश्यक माना गया है वह पुस्तको या व्याख्यानो म ही धरी रह जाती है। नव्य पद्धति का अनुसरण करन का एक अनभीष्ट परिणाम यह भी होता है कि हमारे ओष्ठ पर तो रोग के नाम आदि आयुर्वेदीय रहते है परन्तु कोष्ठ म साद्यन्त एलोपैथी रहती है। योजना म द्रव्य प्राय आयुर्वेदोक्त रहते है परन्तु उनके पीछ दृष्टि एलोपैथी की रहती है। यथा मुक्ता या गोदन्ती केल्शीयम होन से दिए जाते है गुडूची किराततिक्त आदि बिटर टानिक होने के कारण दिए जाते है और अब तो नवाविष्कृत औषधो को

भी आयुर्वेदिक जामा पहनाने की बात चल रही है, भले ही स्वय डॉक्टर भी इन द्रव्यो के उपयोग के विषय मे सशङ्क तथा उनके भविष्य के विषय मे चिन्तित हो। आयुर्वेद को उज्ज्वल रूप देना हो तो यह स्थिति एक क्षण भी रहने न देनी चाहिए।

किं बहुना, प्रत्यक्ष परम्परा का लोप हो जाने के कारण जो आयुर्वेदीय विषय प्रथमत पुनरुद्धरणीय है, उनमे आयुर्वेदीय रोग-परीक्षा-पद्धति भी एक है। सहिताओ का अनुशीलन कर एक निश्चित क्रम का निर्धारण करना चाहिए। इसकी उपयोगिता विशेषतया विद्यार्थियो को आयुर्वेद की दृष्टि से रोग-परीक्षा का प्रकार समझाने मे है।

रोग-परीक्षा मे नाडी, जिह्वा, मल, मूत्र आदि देखने का उपदेश तथा प्रचार है। ये परीक्षाएँ क्यो करनी चाहिए इस विषय का विचार प्रस्तुत लेख मे यथामति किया जाएगा। इसके आधार पर रोग-परीक्षा का प्रथम व्याख्यान और अध्याय बनाने मे अध्यापको और लेखको का मार्ग बनाना सुगम होगा, ऐसी आशा है। इस लेख मे सक्षिप्ताक्षर मे कहे विषय का विचार सुधीजन अनायास कर सकते है।

रोगो की उत्पत्ति दोषो के कोप या क्षय से होती है, यह आयुर्वेद का सिद्धान्त है। दोष विषम होकर धातुओ, उपधातुओ, उनसे बने अङ्ग-प्रत्यङ्गो, स्रोतो[1] तथा मलो मे तत्तत् विकृति उत्पन्न करते है, यह भी आयुर्वेद का सुविदित सिद्धान्त है। कुपित या क्षीण दोषो का कोप और क्षय होने मे जो वैषम्यकारक आहार-विहार निदानभूत होता है, उसके अनुरूप ही कुपित या क्षीण दोष के तत्तत् गुण का कोप या क्षय होता है, एव निदान का सेवन जितने प्रमाण मे होता है उतने ही प्रमाण मे कुपित या क्षीण गुण-विशेष का कोप या क्षय होता है। इन बातो का सम्यक् विचार करके ही आहारौषध-योजना वैद्य को करनी चाहिए। इत्यादि सिद्धान्त आयुर्वेदीय निदानाधिकार मे उपदिष्ट होने पर भी वस्तुस्थिति यह होती है कि, अन्तर्गूढ दोष, रस-रक्तादि धातु, उनके वाहक अन्तर्मुख (योगवह, अदृश्य) स्रोत तथा तद्घटित आभ्यन्तर अङ्ग-प्रत्यङ्ग परोक्ष होने से उनकी परीक्षा करना सभव नही होता। रोगजनक दोष का वैषम्य किस प्रकार का है—उसका क्षय हुआ है या कोप इत्यादि का ज्ञान केवल अनुमान का विषय होता है। केवल मल, जिनमे स्वय दोष भी अन्तर्भूत है एव उनको बहि प्रवृत्त करनेवाले मलायतन (मलद्वार) प्रत्यक्ष होते है। उनमे हुई विकृति को—उनमे देखे जाने वाले परिवर्तनो को लक्ष्य मे रखकर ही शरीर मे दोषो के वैषम्य और उसके विकल्प (अशाश) को जाना जा सकता है। और ये मल तथा त्वचा, जिह्वा आदि जिन द्वारो से इनकी प्रवृत्ति होती है वे प्रत्यक्ष स्थान ही आयुर्वेदीय रोग-परीक्षा के प्रसिद्ध विषय है।

त्वचा, जिह्वा, नख आदि की परीक्षा रोग-परीक्षा मे प्रमुख होने का एक कारण यह भी है कि, दोषो द्वारा रोगोत्पत्ति मे क्रम यह होता है कि, मुख्यतया अहिताहार-विहार से दोषो का वैषम्य होता है विषम हुए दोष धातु-उपधातु को दुष्ट करते है तथा वे दोनो मिलकर मलो मे दुष्टि उत्पन्न करते है। मलो की दुष्टि का प्रभाव मलायतनो पर पडता है। परिणामतया, मलो और मलद्वारो (बहिर्मुख स्रोतो) की परीक्षा कर जाना जा सकता है कि शरीर मे दोषो के तरतमभाव का स्वरूप क्या है। अधोलिखित पद्यो में आचार्यो ने इस विषय का विवेचन किया है—

दोषा दुष्टा रसैर्धातून् दूषयन्त्युभये मलान्।
अधो द्वे, सप्त शिरसि खानि स्वेदवहानि तु ।।
मला मलायनानि, स्युर्यथास्व तेष्वतो गदा ।।
अ० हृ० सू० ११।३५-३६[1]

१—मूल विषय को विशद करने के प्रसग मे धातुओ के साथ उपधातुओ को भी याद रखना चाहिए। साथ ही इन शब्दो से धातु-उपधातु से बने शरीरावयवो का ग्रहण होता है, यह भी समझाते जाना चाहिए। कारण, जैसा कि हम रचना-शारीर का शिक्षण देते हुए कहते है, शरीरावयव तथा स्रोत तत्तत् धातु-उपधातु से ही बने हुए होते है। पूर्वाचार्यो ने आज के विद्वानो के समान दोषो द्वारा होनेवाली विकृतियो का उपदेश करते हुए अवयवो में भी विकृति उत्पन्न होने की बात कही है और धातुओ -उपधातुओ मे भी दोषजनित दुष्टि का उल्लेख किया है। दोनो का फलितार्थ एक ही है। उसमे भी मूलभूत धातुओ, उपधातुओ और मलो की विकृति पर आचार्यों ने विशेष भार दिया है। कारण, एक धातु दुष्ट हो तो तद्घटित अवयव मात्र मे विकृति पाई जायगी। अत मूलभूत दूष्यो की विकृति का ही उल्लेख प्राचीनो ने किया है। जिस टेबल-कुर्सी का यह लेख लिखने मे किंवा जिस गिलास का पानी पीने मे मै उपयोग कर रहा हूँ, उन्हे अपने नाम से पुकारना ठीक है तो प्रकरण-भेद से उन्हे लकडी, काच या पीतल कहना भी उतना ही अन्वर्थक होता है।

१—विषय की स्पष्टता के लिए टीकाओ के उपयुक्ताश दिए जाते है—×× रसै मधुरादिभिर्मिथ्यायोगातियोग सेवितै। ×× उभये दोषा धातवश्च मलान्, दूष-

द्वे अध सप्त शिरसि खानि स्वेदमुखानि च।
मलायनानि बाध्यन्ते दुष्टैर्मात्राधिकैर्मलै ॥
मलवृद्धि गुरुतया लाघवान्मलसक्षयम्।
मलायनाना बुध्यत सङ्गोत्सर्गादतीव च॥[१]

च० सू० ७।४२-४३

रोगो की उत्पत्ति मे सप्राप्ति (क्रम) यह होता है कि प्रथम मधुरादि **रसो के** अयोग, मिथ्यायोग या अतियोग से वृद्धि या क्षय के रूप मे दोषो की दुष्टि (विषमता) होती है।

इस वचन मे रस शब्द आहार द्रव्यान्तगत गुण, वीर्य, विपाक का भी उपलक्षण (ग्राहक) है। दोषो की दुष्टि मे आहार के अतिरिक्त विहार (विविध चेष्टा), काल, देश और औषध ये कारण भी होते है। परन्तु आयुर्वेद का सिद्धान्त है कि दोषो के कोप और रोगो की उत्पत्ति का प्रमुख कारण आहार-विषयक वैषम्य ही है। इसके विपरीत प्रकृति, देश, काल, गुरु लघु आदि गुण इत्यादि का विचार कर किया गया आहार (हिताहार) ही आरोग्य की उत्पत्ति और स्थिरता का कारण होता है। देखिए **हिताहारोपयोग एक एव पुरुषवृद्धिकरो भवति, अहिताहारोपयोग पुनर्व्याधि निमित्त इति** (च० सू० २५।३१)[२]। इस वचन मे 'एक' और 'एव' शब्दो का सनिवश कर दोषो के प्रकोप और रोगोत्पत्ति की कारणता मे आहार ही प्रधान है यह सूचित किया है। (अहिताहार को व्याधि का निमित्त कहा है सो हिताहार आरोग्य का निमित्त है, उधर हिताहार को पुरुष की वृद्धि करने वाला कहा है अत अहिताहार पुरुष के धातु आदि को क्षीण कर शरीर को क्षीण और दुर्बल करने वाला है यह बात अर्थापत्ति से निष्पन्न होती है)।

आहार द्रव्यो के रस प्रधान होने से स्वस्थवृत्त के प्रकरणो मे भी तत्तत् ऋतु मे तत्तत् रस के सवन आदि के रूप मे रसो का ही प्राधान्य दर्शाया है।

औषध द्रव्यो के गुण-कर्म का निर्देश भी तत्तत् रसो के निर्देश के रूप मे ही किया जाता है। उसमे कारण यह होता है कि, रसो के जो सामान्य गुण-कर्म बताए जाते है, तदनुरूप ही उन उन रसो वाल द्रव्यो के गुण-वीर्य-विपाक तथा कर्म होते है। अत द्रव्य विशष के गुण-कर्म बताते हुए केवल उसका रस बतान से तत्तुल्य होन से रस, वीर्य, विपाक और प्रभाव (कर्म) का भी उपदेश और ग्रहण हो ही जाता है। अत पुनरुक्तिवत् होन से गुण आदि का उपदेश शास्त्रो मे नही किया जाता। केवल उन द्रव्यो के गुणादि का उपदेश किया जाता है जिनके गुण कर्मादि रस के विपरीत होते है। देखिए—

तेषा रसोपदेशेन निर्देश्यो गुण-सग्रह ।
वीर्यतोऽविपरीताना पाकतश्चोपदेक्ष्यते ॥

च० सू० २६-४६

इस पद्य के आगे जिन द्रव्यो के रस-गुण समान है उनका उदाहरण देकर आचार्य ने उन द्रव्यो का उल्लख किया है जिनके गुण, वीर्यादि रस से विपरीत होते है। अन्त मे प्रकरण का उपसहार करते आचार्य न कहा है—

तस्माद् रसोपदेशन न सर्व द्रव्यमादिशत्।
दृष्ट तुल्यरसेऽप्येव द्रव्ये द्रव्ये गुणान्तरम्॥

च० सू० २६-५२

इस प्रकार रोग मात्र की सप्राप्ति का प्रथम सूत्र यह है कि प्रधानतया आहार के वैषम्य से दोषो का वैषम्य होता है। दुष्ट हुए ये दोष धातुओ को क्षीण या वृद्ध करते है। जैसा कि ऊपर कहा है धातुओ की क्षीणता या वृद्धि या रूपान्तर का अर्थ है—धातुओ और उपधातुओ से बने शरीरावयवो एव स्रोतो की रचना और क्रिया में परिवर्तन होना। यथा, गुदवली में हुए अर्शो को अधिमास-विकार कहा है। उसका तात्पर्य यह होता है कि इस रोग मे मास धातु की दुष्टि (क्षय तथा तज्जनित दौर्बल्य) होता है। सुश्रुत-शारीर मे कहा है कि सिराओ में रक्तधरा-कला होती है। एव, यह रक्तधरा-कला 'मासस्याभ्यन्तरत' (मास के अन्तर्गत, मास से वेष्टित) होती है। नव्य प्रत्यक्ष भी यह है कि सिरा नाम रस और रक्त का वहन करने वाले स्रोतो मे अन्दर रक्तधरा-कला होती है तथा चारो ओर मासमय मडल

यन्ति। मला मलायनानि दूषयन्तीति सम्बन्ध। तथा च मुनि—**मलायनानि बाध्यन्ते दुष्टैर्मात्राधिकैर्मलै** (च० सू० ७।४२)। कानि मलायतनानि इत्याह-अधो द्वे इत्यादि। ×× तेषु मलायतनषु दुष्टेषु ××। (अरुणदत्त)। ×× रस ग्रहण वीर्यादीनामुपलक्षणम्। ××× मलायतनानि स्रोतासि। ×× (हेमाद्रि)।

२—××× **दुष्टैरिति** गोबलीवर्दन्यायेन **क्षीणै**। मात्राधिकैरिति **वृद्धै**, यनोत्तरत्र क्षयवृद्धयोरपि लक्षण वदति। मलवृद्धि गुरुनया मलायनाना गुरुतयेत्यर्थ। लाघवान्मलायनाना सक्षय मलस्य स्वमानादपि क्षयमित्यर्थ ××। (चक्रपाणि)।

३—हिताहारोपयोग एक एवेत्यवधारणेनास्य **प्राधान्य** दर्शयति, नान्यप्रतिषधम्। आचारस्य स्वप्नादेस्तथा शब्दादीनामपि कारणत्वनोक्तत्वात् ××× (चक्रपाणि)।

होता है। मास धातु की सार्वदैहिक क्षीणता हो तो सिराओ को वेष्टित कर रहनेवाले इस मासमय मण्डल मे भी क्षीणता और दुर्बलता आती है। परिणामतया, स्वल्पमात्र पीडन से वह पराजित हो जाता है और महास्रोत का दुर्बल भाग जैसे गुल्म के रूप मे फूल जाता है वैसे सिरा भी फूल जाती है। मूलभूत मास धातु के इस दौर्बल्य को लक्ष्य मे रख कर ही गुदाङ्कुरो को पूर्वाचार्यों ने मासाङ्कुर कहा है। उपचार मे भी अतएव मास धातु की वृद्धि करने की योजना की गयी है। इस प्रकार रोग मात्र मे धातु-उपधातु की दृष्टि का अर्थ समझने का प्रयत्न करना चाहिए। इस दृष्टि से शरीर मे आए उस प्रकरण को पुन-पुन देखना चाहिए जिसमे शरीरावयवो के घटक धातुओ का निर्देश किया गया है।

अब आगे सप्राप्ति का क्रम देखिए। विषम हुए दोष तथा उनके द्वारा वैषम्य को प्राप्त हुए धातु ये दोनो मिलकर मलो को दूषित करते है—उन्हे क्षीण या वृद्ध करते है, किंवा उनके स्वरूप मे परिवर्तन करते है[1]। विषम हुए य मल मलद्वारो को दूषित करते है। मलो और मल-द्वारो की दुष्टि का सामान्य लक्षण यह है।—जिस मल की वृद्धि हुई हो उसके द्वार मे गौरव की प्रतीति होती है, तथा जिसका क्षय हुआ हो उसके द्वार मे लघुता का भास होता है। मल-विशेष की प्रवृत्ति अत्यधिक हो तो उसकी वृद्धि हुई माननी चाहिए तथा उसका सग (अप्रवृत्ति) देखी जाए तो उसका क्षय हुआ समझना चाहिए। (और मल-विशेष के प्राकृत स्वरूप मे कुछ भेद—वर्ण, गन्ध आदि मे वैपरीत्य—देखा जाए तो रूपान्तर हुआ समझना चाहिए)।

इस प्रकार, जिनकी परीक्षा से शरीर को अपनी विकृति से पीडित करने वाले दोषो के वैषम्य और उसके तारतम्य का ज्ञान होता है वे मलद्वार अधोलिखित है—नीचे दो-गुद और लिङ्ग (स्त्रियो में अपत्यपथ तथा मूत्रपथ), शिर मे सात—दो श्रोत्र, दो नासापुट, दो अक्षि तथा एक मुख, एव सर्वशरीरगत असख्य रोमकूप किंवा स्वय त्वचा। रोग-परीक्षा में इन द्वारो की परीक्षा करनी चाहिए।

दोष स्वय मलरूप है। उनकी पुष्टि अधिक हो जाए तो अपने-अपने द्वार से उसकी प्रवृत्ति होती रहती है। यथा, गुदमार्ग से वायु तथा पित्त की एव मुख और नासिका से कफ की। इन द्वारो से उनकी प्रवृत्ति का प्रमाण तथा प्रवृत्त हुए दोषो का स्वरूप देखकर दोषो की अवस्था का कुछ प्रत्यक्ष ज्ञान होता है। अत इन द्वारो तथा उनसे प्रवृत्त हुए दोषो की परीक्षा की जाती है। इससे शरीर मे दोषो का प्रमाण कैसा है इसका अनुमान हो जाता है।

मुख मे अन्य अवयव—दन्त, दन्तवेष्टादि—है। तथापि विशाल और प्रत्यक्षीकरण मे सुलभ होन से जिह्वा की परीक्षा अधिक की जाती है। जिह्वा मल से व्याप्त हो तो कफ तथा आम का प्रकोप समझा जाता है, वह शुद्ध और रक्तवर्ण हो तो कफ के क्षय या पित्त के प्रकोप की कल्पना की जाती है। इस स्थिति मे कभी पाक भी पाया जा सकता है। शरीर मे वान का प्रकोप हो तो जिह्वा रूक्ष, खर तथा उसमे चीर पडे होते है। इत्येवमादि लक्षण दोषो की तत्तत् अवस्था मे जिह्वा मे परिलक्षित होते है जिन्हे देखकर दोषो के तरतमभाव का बोध चिकित्सक को हो सकता है। जिह्वा के समान ही प्रत्यक्ष मे सुलभ तथा हाथ लगाने की जिसमे आवश्यकता विशष नही एसा अवयव चक्षु है। अत रोग-परीक्षा मे परीक्ष्य पदार्थो मे उसकी गणना सविशष की गयी है।

परीक्ष्य विषयो में एक नाडी है। सक्षेप में इसकी उपयोगिता का विचार किया जाता है। सुश्रुत-सहिता में सिराओ का जो स्वरूप तथा कर्म बताया गया है उसस विदित होता है कि सिरा शब्द से आधुनिको के धमनी, धमनिका, केशिका, सिरिका, सिरा तथा रसायनियाँ सब वाहिनियाँ गृहीत है। अर्थात् **सिरा शब्द सामान्य वाचक भी है। यह सिरा शब्द विशेषार्थ में भी व्यवहृत हुआ है।** इस अर्थ मे इससे आधुनिको की 'वेन' गृहीत है। व्यध जिन सिराओ का कहा गया है वे यही होती है। सिराओ के सामान्य वर्णन मे उन्हे हृदय से निकलनवाली कहा है (देखिए—भेल)। हृदय से जो निकलें उन धमनी इस अपर पर्यायवाली सिराओ का व्यध हो ही नही सकता। हृदय को चक्र की उपमा दी गयी है। चक्र मे जैसे नाभि और अरे होते है वैसे हृदय मे भी नाभि और अरे होते है। नाभि जिसे 'हार्ट' कहते है वह है, तथा अरे उससे निकलने वाली तथा उसमे प्रविष्ट होने वाली प्रणालियाँ है। आयु-

---

१—दोषो की दुष्टता का प्रकार बताते अ० हृ० नि० १।८ की टीका में हेमाद्रि ने विषम दोषो के तीन प्रकार बताए है—**रूपहानिर्वा, रूपवृद्धिर्वा, रूपान्तरं चेति दुष्टत्व प्रकारः ॥**

वैद का हृदय इस प्रकार 'हार्ट विद वेसल्स' है। इसके किसी भी भाग मे हुए रोग हृद्रोग पदवाच्य हैं। यह सगति स्वीकृत हो तो सिरावर्णविभक्तिशारीर (सु० शा० ७) में जिस नाभि को सिराम्रो का मूल कहा है वह हृदय ही है। इस प्रकार इस प्रकरण की भी सुसगत व्याख्या हो जाती है।

ग्रस्तु। सिरावर्णविभक्ति ग्रध्याय मे सिराम्रो को प्राकृत तथा विकृत उभय ग्रवस्थाम्रो मे दोषो की वाहक होने से सर्ववहा कहा है। देखिए —

नहि वात सिरा काश्चिन्न पित्त केवल तथा।
श्लेष्माण वा वहन्त्येता ग्रत सर्ववहा स्मृता ॥
प्रदुष्टाना हि दोषाणा मूर्च्छितानां प्रधावताम्।
ध्रुवमुन्मार्गगमनमत सर्ववहा स्मृता ॥

सु० शा० ७।१६-१७

(यहाँ मूर्च्छित का ग्रर्थ है परस्पर मिश्रित)। इस प्रकरण के उद्धृत करने का तात्पर्य यह है कि दोष कुपित या क्षीण होकर सिराम्रो में पहुँचते हैं। ग्रत सिराम्रो की पूर्णता, शिथिलता ग्रादि ग्रवस्थाएँ देखकर उनके ग्रन्तर्गत दोषो की क्या स्थिति है यह जाना जा सकता है ग्रौर उनके द्वारा सर्व शरीर मे दोषो का तरतमभाव जाना जा सकता है। सिराएँ भेल के वचनानुसार हृदय से जाती है ग्रौर पुन हृदय में ग्राती है। हृदय से निकलने वाली सिराम्रो के ग्रमुक वैशिष्ट्य को लक्ष्य में रखकर इन्हे धमनी यह विशेष नाम दिया गया है। इस विषय का ग्रधिक विस्तार न करते हुए इस प्रसग मे यही कहना है कि जैसे किसी **वॉटर-वर्क्स के वेग का स्वरूप** उसके ग्रारम्भिक नलो मे ग्रधिकतम होता है, ग्रौर वह शनै-शनै न्यून होता जाता है वैसे दोषो के वेग का स्वरूप उनसे प्रभावित सिराम्रो द्वारा जानना हो तो उनकी यात्रा के ग्रारम्भिक स्थान हृदय से निकलने वाली सिराम्रो (धमनियो) से ही स्पष्टतम जाना जा सकता है। इस दृष्टि से जैसा कि सुविदित है प्रधानतया ग्रगुष्ठ-मूलगत धमनी हृदय के निकटतम एव सुलभ होने से उसकी परीक्षा द्वारा ही दोषो का वृद्धिक्षय जाना जाता है। इस विषय मे यह भी सुविदित है कि **सम्प्रदाय-भेद से नाडी-परीक्षा के दो प्रकार हैं।** एक सम्प्रदाय के मत से तीनो ग्रगुलियो के नीचे एक ही प्रधान दोष का निरीक्षण किया जाता है। हस, मण्डूक ग्रादि की गति के दृष्टान्त से नाडी का जो स्वरूप बताया गया है वह प्रथम सम्प्रदाय के ग्रनुसार है। द्वितीय सम्प्रदाय के ग्रनुसार प्रत्येक ग्रगुली के नीचे एक एक दोष का प्रमाण पृथक्-पृथक् विदित होता है। दोनो सम्प्रदाय सत्य है ग्रौर वैद्य जनो द्वारा ग्रनुसृत है।

सक्षेप मे, इस लेख मे कही सम्प्राप्ति को लक्ष्य मे रखकर निम्न सुप्रसिद्ध वचन मे परीक्ष्य पदार्थो की गणना की गयी है —

रोगाक्रान्त शरीरस्य स्थानान्यष्टौ परीक्षयेत्।
नाडी मूत्र मल जिह्वा शब्द स्पर्श दृगाकृती ॥

ग्राकृति से रोगी की प्रकृति तथा सार का सामान्यतया बोध होता है। इस दृष्टि से परीक्षा-पद्धति का ग्रधिक विस्तार किया जा सकता है। योग्य लगे तो इस पद्धति से विचार करने की नम्र प्रार्थना विद्वज्जनो की सेवा में करता हुग्रा यह लेख समाप्त करता हूँ।

वैद्यनाथ बसन्तकुसुमाकर

शरीर के लिए अति लाभदायक ग्रौर हृदय एवं मस्तिष्क को बल देनेवाला सर्वश्रेष्ठ रसायन।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०
कलकत्ता पटना झाँसी नागपुर

ओज—एक आयुर्वेदीय विवेचन

वद्य नागरदास मोहनलाल पाठक आयुवदाचाय

प्रारम्भ म ही यह स्पष्ट कर देना समीचीन होगा कि ओज विषयक शास्त्रीय विवचन को आयुवद के सुविज्ञ पाठको के समक्ष इस लख के द्वारा प्रस्तुत करन का प्रयास मन इस दष्टि से किया है कि शास्त्रीय विवचन और अनशीलन म आस्था रखनवाल आयवदज्ञो का ध्यान इस दिशा म अधिक-से अधिक आकृष्ट हो सके। इस सम्ब ध म विशिष्ट विद्वानो द्वारा प्रामाणिक आलोचना पर्यालोचना सभव हुई तो इससे बढकर प्रसन्नता का विषय एक आयवदज्ञ के लिय और क्या होगा। किन्तु इस बात का ध्यान रह कि आलोचना पर्यालोचना समपस्थित करते समय भापा भाव और विचार शली की दष्टि से हम पूणतया मर्यादित हो और मात्र स यान्वषण ही हमारा उद्दश्य हो।

ओज सम्ब धी वाद विवाद म मरा स्थान पूवपक्ष म है। अतएव जो **पूवपक्ष** की पुष्टि करते हुए अपना मत प्रदर्शित करग व मेरे सहायक होग और जो विद्वान **सिद्धान्त पक्ष** का समथन करग व सिद्धा त पक्ष के सहायक बनग। मुझ विश्वास है कि इससे शास्त्र विषयोपकारक एक स य की प्राप्ति होगी।

सिद्धान्त पक्ष

ओज दो प्रकार का होता है—पर और **अपर**। अपर ओज अर्द्धाञ्जलि परिमित और श्लष्मा मक है जबकि पर ओज का प्रमाण आठ बि दुमात्र है। वह हृदय म कायम रहता है इधर उधर नही जाता देह स्थिति निबधन है अर्थात जह ंतक यह पर ओज ठीक प्रमाण म टिकता है वहातक देह भी टिकती है और उसके नाश से देह का भी नाश हो जाता है। जहातक अपर ओज का प्रश्न है वह शरीर को उपचय और बल प्रदान करता है।

पूवपक्ष

आयवद म **पर** और **अपर** ओज की जो कल्पना मिलती है वह कदापि ऋषि प्रणीत नही कही जा सकती। टीकाकारो न विशष कर श्री चक्रमाणि न यह कल्पना प्रचलित की है जो अवास्तविक और शिथिल है—इसलिए इस कल्पना को हटा दना चाहिए। एक ही प्रकार का ओज मनान से ऋषि वचनो के अथ म सामञ्जस्य बना रहता है—कोई आपत्ति दिखायी नही देती। ओज का प्रकार मानन से जो कठिनाइया दष्टिगोचर होती ह वह एक ही ओज के मानन से नही रहती। अ यत सरलतया समझ म आता है कि ओज क्या वस्तु है और उसका काय क्या है। ओज विषयक जो वचन आष ग्र थो म मिलते ह उनसे भी एक ही प्रकार के ओज का समथन होता है। इनम पर अपर भद की क पना करन की जरूरत भी नही है।

परम्परा से ओज के लिए जो मत चला आया है उसका ही सिद्धा त पक्ष म प्रतिपादन किया गया है। किन्तु पूवपक्ष-कथन म जो विचार प्रदर्शित हुए ह व नवीन ह। चक्रपाणि न ओज के जो दो भद बताए ह उनका खडन है और एक ही ओज की स्थापना है।

यहा पर एक स्पष्टीकरण आवश्यक समझता हू वह यह कि आचाय चक्रपाणि तथा डल्हण सरीख विद्वद्वरो की योग्यता म शका करन की धृष्टता मझ जसा अल्पज्ञ कदापि नही कर सकता और न उन महानभावो का छिद्रान्वषण करना मेरा उद्दश्य हो सकता है। य दोनो ही महानभाव मेरे पूज्य ह। फिर भी आयवद जसे गभीर और विशाल शास्त्र सम्ब धी विषयो के निरूपण म चक्रपाणि सरीख विद्वानो का भी सशयावृत्त हो जाना अत्यन्त स्वाभाविक है। डल्हण जसे समथ वनस्पति विवचक भी ब्राह्मी और मण्डक पर्णी के परिचय देन म सशय दोलारूढ हो गय ह। उसी प्रकार ओज के पर—अपर नामक दो भद करन म चक्रपाणि भी भ्रम म पड गए ह। किस प्रकार वह भ्रम के शिकार हुए यह आग होनवाल विवचन से स्पष्ट होगा।

चरकसूत्र ३० ७ टीका म चक्रपाणिदत्त न इति त त्रा न्तरम् कहकर एक प्रमाण दिया है वह यह है— प्राणाश्रय स्यौजसोऽष्टौ बिन्दव हृदयाश्रया —जिसका अथ यह है कि प्राण का आधारभत ओज अष्टबि दु है और वह हृदय का आश्रय लकर रहता है। विचक्षण विवचक बहुश्रुत अनक शास्त्रज्ञ और अपार पाण्डि य विभूषित चक्रपाणि

ने तन्त्रान्तर के नाम से जिस प्रमाण का न्यास किया है, अवश्य कोई आर्ष प्रयोग ही होगा। स्पष्ट नाम-निर्देश के अभाव में ऐसी सभावना मात्र हो सकती है। अगर यह सभावना उचित मानी जाय तो चक्रपाणि की ओज द्वैविध्य की कल्पना को भी ठीक मानना पडेगा। मै इस सभावना को उचित समझता हूँ लेकिन अन्य आर्ष ग्रन्थो के साथ समन्वय करके उसका पाठ होना चाहिए—ऐसा मानना भी अनुचित नही। इसलिए तन्त्रान्तर का यह पाठ—"प्राणाश्रयस्यौज सोऽष्टौ तिन्दव हृदयाश्रिता"—ऐसा होना चाहिए—यह मेरा निश्चित मत है। लेखन-दोष से तकार के स्थान मे बकार आ गया है। तकार का निम्नभाग थोडा-सा खीचने से उर्ध्वरेखा के साथ मिलकर 'ब' बन जाता है। बहुत सभव है कि श्री चक्रपाणि के पास लेखन दोष-युक्त कोई ग्रन्थ पाठ रहा हो। अत ऐसा ज्ञात होता है कि 'तिन्दव' के स्थान पर 'बिन्दव' पद जोड कर फिर इनकी सिद्धि के लिए पर-अपर भेद बना लिया गया होगा।

मैने 'बिन्दव' के स्थान पर "तिन्दव" होना चाहिए—ऐसा कहकर जो पाठ दिया, उसके अर्थ मे ओज जीवन का आधार है और हृदय में रहता है—इतना अश तो दोनो में समान है। फिर रहा प्रमाण-परिचय। इनमें 'बिन्दव' वाले पाठक कहते है कि ओज का प्रमाण अष्टबिन्दु है और 'तिन्दव' वाले पाठ मे ओज का प्रमाण अष्टतोलक होता है। 'तिन्दु' शब्द कर्ष का पर्याय है, यह सभी विद्वान जानते है। अब यह विचारणीय है कि ओज का आठ कर्ष—"श्लेष्मलस्यौजसोऽर्धाञ्जलि" अर्धाञ्जलि मानो आठ कर्ष-दोनो आर्ष वचनो मे साम्यदर्शन कराते है या नही। फिर श्लष्मल ओज को छोडकर अन्य 'पर' नामक ओज की कल्पना अप्रयोजनवती बन जाती है। 'तिन्दु' में 'बिन्दु' दिखाई देने से चक्रपाणि स्वय सशय चक्रारूढ हो गये—ऐसा प्रतीत होता है।

मेरे उपर्युक्त कथन का कदापि यह आशय नही है कि 'बिन्दु' में 'तिन्दु' दिखानेवाला मै ही एकमात्र व्यक्ति हूँ। परमादरणीय श्री मस्तराम शास्त्री रावलपिण्डी वाले का "किमोज" शीर्षक एक लेख वर्षों पूर्व प्रकाशित हुआ था, जिसकी अच्छी प्रसिद्धि आयुर्वेदज्ञो के बीच हुई थी। उक्त लेख मे भी 'बिन्दु' के स्थान में 'तिन्दु' बनाने की बात युक्तिपूर्ण ढग से प्रस्तुत की गयी थी। श्री मस्तराम सरीखे भारत-विख्यात विद्वान के कथन से मेरे मत की पुष्टि होती है और इससे मेरा पक्ष प्रबल है।

पर-ओज और अपर-ओज जैसे दो प्रकार के विभाजन का उल्लेख चरक-सुश्रुत मे नही मिलता। फिर भी इस तन्त्रान्तर वचन को और उसमे दिखाई पडने वाले अष्ट बिन्दु परिमाण को सच्चा मानकर सशयदोलारुढ चक्रपाणि जी की बुद्धि चरक में से ये दो भेद निकालने के लिए लालायित हो उठी। यह प्रवृत्ति अत्यन्त स्वाभाविक भी है। आज भी ऐसी प्रवृत्ति देखने में आती है कि अच्छे विद्वान लोग अपने सशयास्पद मन्तव्य को भी ठीक बताने के लिए यथा-शक्ति अपनी बुद्धि का प्रदर्शन करते ही हैं। "बुद्धिमता-मूहापोहवितर्का" ऐसा शास्त्र भी कहता है। अष्ट बिन्दु शब्द का श्लेष्मल ओज के साथ समन्वय नही होने से चक्र-पाणि परेशान हो गए और 'पर' नामक ओज की कल्पना मे पड गए। इसीलिए मेरी दृष्टि मे यह कल्पना अवास्तविक है। क्योकि अज्ञात नाम तन्त्रान्तर के वाक्य को आधार मान कर चली है। इसलिए यह कल्पना मूलत शिथिल है। चक्रपाणि की रची हुई टीका में और इसके आधार पर रची हुई अन्य टीकाओ मे चक्रपाणि के इस पूर्वग्रह की स्पष्ट छाया सर्वत्र दिखायी पडती है। इस प्रकार आपने देखा कि चक्रपाणि जी ने चरक मे से पर-अपर भेद निकालने के लिए कैसी युक्ति लगाई और पाण्डित्य का प्रभाव दिखाने के लिए कैसा प्रयत्न किया।

"तत्परस्यौजस स्थानम्" च० सू० ३०-७। अर्थात् हृदय पर—श्रेष्ठ ओज का स्थान है—चरक के इस वाक्य में ओज के लिए आया हुआ विशेषण 'पर' शब्द की ओर चक्र-पाणि का ध्यान आकृष्ट हुआ और इसको विशेषण न मानकर उन्होने स्वतन्त्र भेदवाचक नाम माना और टीका मे बताया कि—

"सतिहि परे चापरे चौजसि परस्य इति विशेषण सार्थक भवति न त्वेक रूपे ॥ प्रमेहेऽर्धाञ्जलि परिमितमेवौज क्षीयते नाष्ट बिन्दुकम् अस्य हि किंचित्क्षयेऽपि मरण भवति ॥

तन्त्रान्तर के वचन को प्रमाणतया उपन्यस्त करके श्री चक्रपाणि ने पर-अपर भेद की घोषणा यहाँ पर की है। पुन आगे जाकर कई विद्वानो ने—"प्रधानस्यौजसश्चैव हृदय स्थानमुच्यते" (च० चि० २४-३५) कहकर मदात्यय के प्रकरण में आये हुए प्रधान विशेषण को भी अपने मत



ध वन्तरि जयन्ती पर राहतक म अनाष्ठत स्वास्थ्य समारोह



धन्वन्तरि जयन्ती पर खण्डवा म अनुष्ठित स्वास्थ्य समारोह की सभा का दृश्य



धन्वन्तरि जयन्ती पर खगौली म अनष्ठित स्वास्थ्य समारोह की सभा



धन्वन्तरि जयन्ती पर [illegible] म अनुष्ठित स्वास्थ्य समारोह की [illegible]



ध वन्तरि जयन्ती पर ग्रलीगढ म ग्रनष्ठित स्वास्थ्य समारोह की सभा का दश्य



ध वतरी जयन्ती पर बक्सर म ग्रनष्ठित स्वास्थ्य-समारोह



धन्वन्तरि जयन्ती पर विलासपुरम ग्रनुष्ठित स्वास्थ्य-समारोह की सभा म समवत वद्यगण

की पुष्टि के लिए सस्थापित कर दिया। जो युक्ति पर विशेषण के लिए चक्रदत्त ने लगाई वही युक्ति यहा पर भी लगी। प्रधान—अप्रधान एसा भेद निकाल कर पर अपर ओज का दूना और बढा दी गयी और अततो गत्वा पर अपर कल्पना सुन्द से सुन्दर हो गई। अब इस विषय को छोडकर पूर्व पक्ष के मत म ओज क्या चीज है—इसका स्पष्टीकरण करना उचित होगा। इससे पर अपर ओज का कल्पना क्यो निकम्मी है यह स्पष्ट हो जायगा।

पूर्वपक्ष के मत म ओज का अर्थ पोषक रस है। चक्रपाणि ने कहा है— पोष्य पोषक भेदेन रस द्विधा — रसधातु दो प्रकार की है—पोष्य और पोषक। शरीर म सप्तधातुओ म जो आद्य धातु है वह स्थायी है। उसका ही दूसरा नाम पोष्य रस है। अन्नपान से उत्पन्न हुआ रस रुधिर के साथ मिलकर हृदय म जाता है। फिर फफ्फुसो म जाकर विष्णुपदामृत (ओक्सिजन) युक्त हो जाता है तब उस रस म यथार्थ पोषक तत्त्व आता है और शरीर के प्रत्येक परमाणु को पोषण देने की शक्ति पैदा होती है। इस रस विशेष को आयुर्वेद म ओज कहा जाता है। फिर हृदय म आकर यह ओज हृदय के चतुर्थ अलिन्द के व्यान वायु से प्रेरित होकर महाधमनी मार्ग से शरीर के प्रत्येक घटक म पहुचता है। शरीर घटक के अणु इस रस म अपनी ऊष्मा की और स्रोतो का सहायता से अपना पोषण प्राप्त करते है—इस विधि को आयुर्वेद म **निष्ठापाक** कहा जाता है और इस रस को **पोषक रस** कहा जाता है। पोषक रस म सात धातुओ का जिससे निर्माण हो ऐसे पुरोगामी द्रव्य मौजूद रहते है—इससे पोषक रस सप्तधात्वात्मक भी कहा जाता है। इसलिए यह पोषक धातु नही है। स्वभाव और स्वरूप से पोषक रस का गणना आद्यधातु म अर्थात रसधातु म भी की जा सकती है। इससे अष्टम धातुवापत्ति की आशका उठ नही सकती। यह पोषक रस जितना ही विशुद्ध और उत्तम बनेगा शरीर की सब धातुए उतनी ही विशुद्ध बनेगी। आहार रस से ही शरीर को पोषण प्राप्त होता है—इसी कारण आहार रस को ओज का पोषण देने वाला कहा है— पुष्यति त्वाहार रसरुधिरमासमेद अस्थि मज्जा शुक्रौजासि च० सू० २८।४। आहार द्रव्य और आन्त्र म पैदा होनेवाला आहार रस यदि सुयोग्य नही है तो निष्ठापाक मे गया हुआ पोषक रस भी योग्य नही होगा। फलत शरीर का भी अच्छी तरह पोषण नही हो सकेगा। इस प्रकार स्पष्ट है कि विशुद्ध ओज पोषक रस पर ही शरीर का पोषण निर्भर करता है। परम्परा से विशुद्ध खानपान भी शरीर पोषण का हेतु है। आश्रयाश्रयिभाव सम्बन्ध से विष्णुपदामृत मिला हुआ रुधिर का भाग (Oxygenated blood) ओज कहा जाय तो कोई आपत्ति नही। आयुर्वेद म ही रक्त जीव इति स्थिति —व्याख्या की है। यह पोषक रस मिश्रित रक्त ही जीव रक्त है—जीवनाधार है—देहस्थिति निबन्धन है। ओज का कार्य— देहस्थिति निबन्धनम्॥ वा० सू० ११ देह सावयवस्तेन व्याप्तो भवति देहिनाम। सु० सू० १५ ११ प्राणायतनमन्तमम् सु० सू० १५ यत्रौजस्तावतत्र न प्राण सज्ज व च० सू० ३० ६ इत्यादि स्थलो म कहा गया है वे सारे कार्य विशुद्ध पोषक रस से ही होते है। अन्यत्र विशुद्ध पोषक रस ही ओज है—और ओज देही शरीरे ऽस्मिन ओजस्वी नाना रजन चरापि —वायरे ओजादाय गच्छन्ति (मत्स्यगद) आदि ओज शब्द युक्त जो जो आर्ष वचन है सब इस पोषक रसात्मक ओज के लिए ही प्रयुक्त हुए है। इस प्रकार हृदयमलस्थोजम् अष्टाञ्जलिपरिमाण सौम्य स्निग्धादि कफ गुण भूयिष्ठ होने से यह पोषक रस इलष्मल ओज कहा जाता है। इसके लिए ही रसात्मक वहन्त्य ज पद का प्रयोग किया गया है। *व्यापत विस्रंसन और क्षय*—ये तीनो प्रकार के ओज विकृतिया भी पोषणात्मक रस म ही सभवित हो सकती है। इसलिए हमारा यह नम्र विचार है कि ओज का पर अपर इस प्रकार भेद करने की कुछ आवश्यकता नहा है।

ओजस शब्द का साहित्य म और भी अर्थ होता है—जैसे शरीरोष्मा-सार प्रकृत कफ तेजस्वता (Lustre) इत्यादि। परन्तु इस वाद विवाद का स्थापना के अनुसार ओजस शब्द का अर्थ हृदयस्थ वहनशील पदार्थ है जिसमे हृदयस्थता मात्र धर्मवाला एक पदार्थ **पर ओज** और हृदयस्थता और वहन शीलता दो धर्मवाला दूसरा पदार्थ **अपर ओज** इस प्रकार का भेद श्री चक्रपाणि जी को विवक्षित है। पूर्वपक्ष वाले हमलोग हृदयस्थता और वहनशीलता गुणद्वय युक्त एक ही पदार्थ (पोषक रस) ओज है—ऐसा मानते है। हमारे विचार से पर ओज की कल्पना ठीक नही। प्रथम तो इस कल्पना से पर ओज क्या चीज है—यह समझ म नही आता और यह प्रश्न जटिल समस्या का रूप ले लेता है।

प्रौढिवाद से मान लिया जाय कि पर ओज है—इसका प्रमाण आठ बिन्दु है। यह हृदय म आश्रित है—अवहन शील है—स्वल्पतर मात्रा म भी इसके विनष्ट होन से म यु हो जाती है।

अब अष्ट बि दु म किस प्रकार वैमत्य है यह दिखान का प्रयत्न करूगा। वा० सू० ११-२७ की टीका म श्री अरुणदत्त लिखते है— सकलशरीरव्यापिनस्तस्य षड बिन्दुकस्य विशषण हृदय स्थानम।। श्री अरुणदत्त ६ बि दु को प्रमाण बताते ह और विशषण हृदयस्थ होन पर भी वह (पर ओज) सम्पूण शरीर म व्याप्त होनवाला है—एसा अभिप्राय उनका है। इस प्रमाण से केवल हृदयस्थता और अष्ट बि दुता परास्त हो जाती है। यक्ति से विचार करन से भी **पर ओज कल्पना** नही ठहरती। हृदय के चारो अलिन्दो म रक्त का सचालन सवदा बना रहता है। जिस प्रकार नदी का प्रवाह कभी नही रुकता उसी प्रकार रक्त-सचालन भी कभी नही रुकता। अब प्रश्न यह है कि हृदय के कौन-से अवकाश म पर ओज का आठ बि दु रहता है जा रक्त-सचालन से सवथा असम्पक्त होकर अपन मूल रूप म स्थित रह सके। मेरी समझ म हृदय म आया हुआ रक्त सपूणतया आग चल पडता है—ब द मात्र भी अवशिष्ट नही रहता। जल प्रवाह की तरह सतान-न्याय से हृदय म सवदा रक्त की यात्रा सदव चलती रहती है। जहाँ एक ब द का भी स्थय सभव नही वहा आठ बि दु की स्थिरता की बात करना मरी अल्पमति म यक्तिसगत प्रतीत नही होता। यदि कोई सिद्धा त पक्षवादी किसी युक्ति से अष्ट बि दु परिमित ओज हृदय म स्थिरता पाकर टिकता है —एसा प्रमाणित कर सका तो मझ बडी प्रसन्नता होगी और उनका आभार भी मानगा। अतएव म इस कथन से सहमत नही हो सकता।

अब एक दूसरे दृष्टिकोण से इस पर विचार कर। आयुर्वेद शास्त्र म भद का वणन तब किया जाता है जब इसमें चिकित्सा-काय म सौकय हो। एसा भद जिसस रोग सम्ब धी ज्ञान प्राप्त करन म कुछ भी सुविधा नही प्राप्त होती हो अथवा चिकि सा-कम के ज्ञान की वद्धि न होती हो—प्राचीनो न प्राय नही बताया। एसा भद बतान की शैली भी उन्हें नही पस द थी यह विद्वान वैद्यो को भलीभाति ज्ञात है। अब प्रकृत विषय पर विचार करन से प्रश्न यह उठता है कि अष्टबिन्दु परिमित पर-ओज मानन से आयुर्वेद का किस प्रकार और क्या लाभ होता है। जहाँतक मैं समझता हू पर ओज को स्वीकार कर लन से न तो चिकित्सा के क्षत्र म कुछ फल मिलता है न निदान के ज्ञान म ही कोई सफलता प्राप्त होती है। जो कुछ हम प्राप्त होता है वह अपर ओज से ही। हमारा मत विशषण रहित ओज से मिलता है। इसी कारण मरा निश्चित मत है कि परापर ओज की कल्पना युक्ति-सगत नही है। इससे कोई प्रयोजन भी सिद्ध नही होता। इसको स्वीकार करन से ग्रन्थ म सारल्य की जगह जटिलता आ जाती है। ग्र थ के पठन पाठन म दुष्परिहाय कठिनाइयाँ उत्पन्न हो जाती हैं। यदि यह विचारधारा ठीक है तो इस कल्पना को हटाकर ग्रथ सारल्य करना उचित ही होगा।

पर ओज का काय— देहस्थिति निब धनम् (वा० सू० ११ ३७) एसा वाग्भट न बताया है। अत म पूछना हू कि क्या हृदय म से महाधमनी द्वारा सारे शरीर म जाने वाला पोषक रस म देह स्थिति निब धना नही है? म मानता हू जरूर है। फिर पर भद क्यो माना जाय? स मा मक स्निग्ध मद कृत्स्न हृदयास्थ सवदेहव्यापा इ यादि सब वणन पोषक रसा मक ओज से मिलते जलते ह। फिर एसी लम्बी च डी अनपयक्त कल्पना कर ग्रथ की जटिलता बढाना मरी समझ म नही आता। म सकडो प्रमाण दे सकता हू कि सभी पोषक रसा मक ओज का ही वणन करते ह—दूसरा नही। पर जिन लोगो न पर ओज को माना है उनका कल्पना-स्थान छोडकर कहा भी वणन नही मिलता। इसलिए त परस्य ोजस स्थान और प्रधानस्य ोजस — स्थानो पर आए हुए पर और प्रधान दो शब्दो का अर्थ सवश्रष्ठ लना चाहिए। जिस वस्तु म शरीर के सभी धातुओ को बनान वाली प्रतिनिधि सामग्री म जूद है और जो सभी धातुओ को पोषण प्रदान करती है—साथ ही जिसके सहारे जीवन-यात्रा सुचारु रूप म चल पाती है उसको सव श्रष्ठ पर प्रधान इत्यादि विशषण दिए जायें तो इसम क्या अनौचि य है?

अष्टबि दु का परिहार अष्टौ बिन्दव करन से हो जाता है। श्लष्मल ओज का अर्द्धाञ्जलि परिमाण है एसा शास्त्र प्रमाण भी है। शरीर म रहन वाली चीजो के जो परिणाम शास्त्र म दिए गए हैं व सब-के-सब प्रायोवाद से बताए गए हैं। मनुष्य पशु पक्षी मग सिंहादिक में धातुओ का परिमाण अलग अलग होता है। मनुष्यो में

(शेषाश पृष्ठ ६७० पर)

कब्ज—कोष्ठबद्धता

वैद्य रवीन्द्र शास्त्री

आज के सभ्य संसार का सर्वाधिक प्रचलित रोग कब्ज या कोष्ठबद्धता है। सभ्यता और भोजन के सस्कारो के साथ इसकी निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। शहरो मे रहनवालो का तो यह सदा का साथी है ही, अब तो गाँवो मे भी इसके कदम पहुँचन लग है। वैसे यह साधारण-सी खराबी समझी जाती है लकिन सारे रोगो का मूल यही है। न केवल हिन्दुस्तान मे ही बल्कि ससार के सभी सभ्य देशो में कब्ज की जितनी दवा बिकती है उतनी और सारे रोगो की नही। अकेले अमेरिका मे ५० करोड रु० की कब्ज-नाशक दवा भिन्न-भिन्न नामो से बिकती है। हमारे अपने देश मे भी नाना नामो से कब्ज दूर करनवाली दवाओ का विज्ञापन होता रहता है। त्रिफला चूर्ण, ईसबगोल की भूसी आदि के रूप मे तरह-तरह की औषधि खानवालो की तो कोई गिनती ही नही है।

कब्ज क्यो होती है?

इस राजरोग का वास्तविक कारण है आहार-विहार का अनियमित और अप्राकृतिक होना। दूसरे शब्दो मे यों कहा जा सकता है कि स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमो की अवहेलना करने—या शरीर सम्बन्धी प्राकृतिक क्रियाओ एव आहार मे हस्तक्षेप करन से यह रोग होता है। आयुर्वेद के अनुसार मिथ्या आहार-विहार—रहन-सहने एव खाने-पीने की गलत दिनचर्या सब विकारो की जननी होती है। प्राकृतिक चिकित्सको का कथन भी यही है कि खान-पान का प्रकृति-विरुद्ध होना इसका कारण है। कहने का मतलब यही है कि सभी चिकित्सा-पद्धतियाँ इस रोग के कारण के सम्बन्ध मे एकमत है कि स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमो की अवहेलना ही इसका एकमात्र कारण है।

साराश मे यो कहा जा सकता है कि विलासिता और आरामपसदगी का जीवन कुछ इस तरह का सयमहीन और अप्राकृतिक बन गया है कि खान-पीने रहन-सहन मे निरन्तर ही न केवल कुदरती क्रियाओ मे हस्तक्षेप होना है—बल्कि भोजन सम्बन्धी नये-नये सस्कारो और रात्रि-जागरण आदि आधुनिक तौर-तरीकों से शरीर की प्राकृतिक क्रियाओं पर बराबर ही बेजा दबाव पडता रहता है। एक तरफ तो व्यायाम की उपेक्षा होती है—शरीर के अङ्ग-प्रत्यङ्गो के श्रम द्वारा स्नायुमडल को सशक्त बनान और नय रक्त के निर्माण द्वारा दिल और दिमाग को स्वस्थ और गतिशील बनाय रखन की आवश्यक क्रिया मे लापरवाही बरती जाती है, और दूसरी तरफ वक्त-बवक्त नयी-नयी किस्म के भोज्य पदार्थो द्वारा आतो को दबाया—सताया जाता है। खाने पीन का असमय तो इतना गलत हो गया है कि न पेट की माग का ख्याल रहता है, न भोजन की पौष्टिकता का, न समय का और न मात्रा का। परस्पर विरोधी चीजे ही नही खाई जाती, चटपटी मसालदार और गरिष्ठ चीजो के द्वारा बेचारे गरीब पट पर लगातार अत्याचार ही तो किया जाता रहता है। सड हुए फल भी हमारे पट मे पहुँच जाते है—मक्खियो के मल से भ्रष्ट सडी-बासी मिठाई भी हम खाते रहते है, सडी-बासी चीजो से कोई परहज नही, चाय, काफी, कोकाकोला, आइसक्रीम आदि दुनियाँ भर की बलाय-बलाय चीजो को पेट मे पहुँचान मे हम शान समझते है।

पेट को कभी आराम देन का तो हमे ख्याल ही नहीं होता, उपवास को हम उपहास की चीज मानते है। अधिक रात तक जागते रहना तो सोसायटी के लिहाज से जरूरी हो गया है सिनमा देखकर दिमाग को उत्तजित रखना तो शहरी जीवन का एक अग ही बन गया है और रात-दिन तोड-फोड, उखाड, पछाड एव लखपती बनन की भावना हर वक्त माथे मे घूमती रहती है। सादा जीवन और सादा भोजन का सिद्धान्त हम हँसी मे उडा देते है। पवित्रता, मन शुद्धि एव नैतिक जीवन का हमारे लिये कोई मूल्य ही नही।

वक्त पर शौच जाने की प्राकृतिक क्रिया में भी तो हस्तक्षेप होना रहता है। प्रथम तो शहरी जीवन मे शौचालयो की समस्या ही इतनी गम्भीर है कि वे जनसख्या के लिहाज से अपर्याप्त होने के साथ ही इतन गद है कि शौच-शुद्धि का होना असभव नही तो कठिन अवश्य है। ऐसे आदमियों की सख्या भी कम नही होती जो शौच जाने जैसे कुदरती

काम में भी बिलम्ब करते रहते हैं और ऐसे भी हजारों नर-नारी हैं जिन्हें हाजत होने पर भी नम्बर की इन्तजारी करनी पड़ती है। मल त्याग जैसे कुदरती वेग को रोकने का अपराध करनेवाले स्त्री-पुरुषों को कब्ज जैसे उदर विकारों का प्राकृतिक पुरस्कार मिलता तो फिर कोई अस्वाभाविक बात नहीं है।

इस तरह खान-पान की गलत चीजें रात का जगना, मानसिक अशांति मलविसर्जन में बिलम्ब, व्यायाम का अभाव आदि बहुत-सी ऐसी गलत चीजों के होते रहने का प्राकृतिक परिणाम यह होता है कि भोजन के परिपाक के बाद नियत समय पर नियमित रूप से होने वाली मलविसर्जन की शारीरिक क्रिया गड़बड़ाने लगती है जिसके फलस्वरूप कब्ज जैसे राजरोग की भूमिका तैयार होकर अनेक विकारों के आने की सूचना मिल जाती है।

कब्ज के लक्षण और उसकी प्रतिक्रिया

कब्ज—मलावरोध का सीधा-सा लक्षण है टट्टी की शकल में बने हुए आहारीय पदार्थ के अनावश्यकीय विकारी अंश का पेट में रहना। इसका सीधा-सा भाष्य यह हो सकता है कि कि शरीर-रक्षा के लिए खाये गये भोज्य पदार्थों का पाचन होकर जो विजातीय या विकारी यानी निरर्थकतत्त्व शरीर से बाहर निकल जाना चाहिए उसका आंतों में ही रुके रहना।

मलावरोध अर्थात् पेट में मल के रुके रहने पर होनेवाली प्रतिक्रियाओं का रूप क्या हो सकता है इसकी कल्पना कोई कठिन तो कतई नहीं है क्योंकि इतनी-सी बात को तो सहज बुद्धि से ही समझी जा सकती है कि बाहर निकले हुए जिस मल को देखकर ही हमारा नाक सिकुड़ने लगता है और जो शुद्ध हवा में रहकर भी थोड़ी देर बाद बदबू मारने लगता है, वही मल हमारे पेट में रहकर कड़ा हो जाता तथा उसके बारीक और मादकण आंतों में ही नहीं खून और शरीर की सारी मशीनरी में गतिरोध की अवस्था उत्पन्न कर देते हैं।

आयुर्वेद ने तो स्पष्ट लिखा है—"मलवृद्धया प्रवर्तन्ते विशेषरोगोदरादितु।' (चरक) अर्थात्—मल के रुकने से उदर सम्बन्धी रोग होते हैं। महात्मा गांधी तो कब्ज, बवासीर, दस्त और संग्रहणी को एक ही श्रेणी में मानते थे—और उनकी यह मान्यता थी भी सर्वथा शास्त्रसम्मत। इतना ही नहीं आयुर्वेद का तो यह भी कहना है कि मलावरोध से पेट की पाचकाग्नि अव्यवस्थित हो जाती है और जठराग्नि का दोष ही सारे रोगों की जड़ है।

अग्निदोषान्मनुष्याणा रोगसंघा पृथग्विधा। अर्थात्—अग्नि-दोष से ही शरीर में रोगों का संघ अपना अस्तित्व उत्पन्न करता है।

सुश्रुत में तो और भी स्पष्ट लिखा है—

आटोप शूलौ परिकर्तनं च
सङ्गः पुरीषस्य तथोर्ध्ववातः।
पुरीषमास्यादपि वा निरेति
पुरीष वेगेऽभिहते नरस्य॥

अर्थात् मलावरोध से पेट में अफारा-सा आ जाता, दर्द के साथ गुड़गुड़ाहट होने लगती, मलाशयद्वार में काटने जैसी पीड़ा होने लगती, मल का निकलना कठिन हो जाता, डकार आने लगती तथा मुंह के रास्ते भी पाखाना आने की स्थिति पैदा हो जाती है।

शरीर शास्त्रियों का कहना है कि आंतों में रुका हुआ मल उनकी स्वाभाविक स्थिति को इतना विकृत कर देता है कि पाचन-पोषण मलविसर्जन आदि शरीर की नैसर्गिक क्रियाओं का कार्य कलाप अस्तव्यस्त हो जाता है। इस अव्यवस्था का परिणाम यह होता है कि यकृत् फुफ्फुस, हृदय जैसे प्रधान अवयवों के काम में बाधा पड़ने लगती है, जिससे न पाचक रस ही उचित मात्रा में तैयार होती है, और न रक्त-शुद्धि एवं रक्तप्रवाह का कार्य नियमित रहता है।

बड़ी आंतों में रुके हुए मल का दूषित तत्त्व रक्त-दोष का उत्पादक होने के साथ ही हृदय सम्बन्धी विकारों का भी एक प्रधान कारण बन जाता है। अजीर्ण, अरुचि, पेचिश, संग्रहणी, शिर-दर्द, रक्ताल्पता, पीलिया, प्रमेह, ब्लडप्रेशर, जुखाम आदि रोगों के लिये उर्वरा भूमि तैयार करने का सारा श्रेय साधारण-सी दिखाई देने वाली कब्ज को ही तो है।

आलस्य, थकान, क्लान्ति, चिड़चिड़ापन, अनिद्रा, जैसे विकार तो फिर शरीर में अपना तम्बू ही गाड़ देते हैं। शरीर की जीवनी-शक्ति नष्ट होने लगती, कुदरत की तरफ से मिली हुई स्वाभाविक रोगक्षम-शक्ति क्षीण होने लगती, भरी जवानी में बुढ़ापा आ जाता और जिन्दगी का सारा सौन्दर्य फीका पड़ जाता है। कब्ज से पीड़ित लोगों की दशा इस बात की गवाह है कि भोजन उनके लिये विष बन

जाता है, नींद की हरदम कमी रहती है तथा जीवन का सारा आनन्द नष्ट हो जाता है।

कब्ज का उपचार

अपने ३० साल के आयुर्वेदीय चिकित्सा के लम्बे अनुभव के बाद आज मैं यह कहन की स्थिति में अवश्य हूँ कि कब्ज जैसे राजरोग का उपचार केवल औषधियों के द्वारा कठिन ही नहीं, असंभव है। रोग होते ही दवा की तलाश में वैद्य डाक्टरों की तलाश करने वाले कब्ज के रोगियों को सबसे पहली मेरी सलाह तो यह है कि इस रोग में दवा लेना या दवा के द्वारा मलावरोध को दूर करन का ख्याल करना निरा पागलपन है। किसी भी चिकित्सा-पद्धति में ऐसी कोई दवा नहीं है जो कब्ज को स्थायी रूप से दूर कर दे। यह सही है कि कब्ज को मिटाने वाली तरह-तरह की दवाओं के आकर्षक नाम और गुण लोगों को बताये जाते हैं —साल्ट, सीरप, चूर्ण बटी आसव मोदक आदि भिन्न भिन्न रूपों में कब्जहर दवाओं का विज्ञापन भी होता रहता है, लेकिन यह भी सर्वथा सत्य है कि इन औषधियों से पेट का थोडा-बहुत मल अवश्य निकल जाता है—किन्तु कब्ज दूर नहीं होती, बल्कि और भी गहरी जड जमाने लगती है। कब्ज के किसी भी रोगी से पूछ देखिए, उसका उत्तर यही होगा कि दवा लेने से २-४ दस्त होकर एक बार तो पेट हल्का जरूर हुआ—लेकिन दूसरे ही दिन फिर वही हालत हो गई।

दवा के द्वारा कब्ज से छुटकारा पाना वास्तव में है भी अवैज्ञानिक और अटपटा, क्योंकि पानी की प्यास तो पानी ही से बुझती है—और कब्ज भी तभी दूर होगी जब उसका कारण दूर होगा। रात के जागने से होने वाला सरदर्द 'सारीडन' या शंखभस्म से दूर नहीं होता—यह तो नींद पूरी कर लेने पर ही दूर होगा। इसी तरह यह मोटी-सी बात तो सहज में ही समझ में आ जानी चाहिये कि कब्ज करने वाले कारण को दूर किये बिना कब्ज दूर नहीं होगी, क्योंकि कारण के होते रहने पर उसका फल भी तो अवश्य होगा। क्रिया की प्रतिक्रिया होना जैसे एक साधारण नियम है वैसे ही कब्ज करने वाले किसी भी कारण के होते रहने पर उसका होना स्वाभाविक क्रिया है—अत कब्ज का सबसे पहिला उपाय है कारण को दूर करना और कारण को दूर करने का मतलब है खानपान, रहन-सहन, आहार-विहार को संतुलित एवं नियमित रख कर स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों का पालन करना।

साधारणत कब्ज को दो तरह का समझना चाहिए—(१) अस्थायी या कभी-कभी होने वाली और (२) स्थायी या बराबर रहने वाली। पहिली अस्थायी कब्ज भी कालान्तर में ही स्थायी बन जाती है, अत अस्थायी कब्ज तो उस समझिये जो कभी-कभी खान-पान मे गडबड होने या कारण-विशेष के होने पर जीवनचर्या मे अनियमितता होने पर हो जाती है। ऐसी कब्ज किसी दावत मे शामिल होने देर तक जगने, गडबड चीजे खा लेने आदि कारणों से होती है। इस दशा मे सबसे पहिला आवश्यक उपचार है एक दिन का उपवास और आँतो की सफाई। कब्ज का वास्तविक मतलब ही है पेट मे संचित विकारी पदार्थ की सूचना—और इसका वास्तविक उपचार भी यही है कि पेट को खाली रख कर संचित मल को निकाल देना।

पेट के खाली रखने का अर्थ है उपवास और साफ करने का मतलब है आँतो की धुलाई या एनीमा,—अत अस्थायी कब्ज मे खाना बन्द करके पेट की सफाई कर लेना ही उत्तम उपचार है। इस तरह पेट के पूरी तरह से साफ होने के बाद आहार-विहार को नियमित कर लेना भविष्य के खतरे से बचने का साधारण उपाय है।

स्थायी कब्ज के लिये थोडी साधना की जरूरत है और रोग को देखते हुए यह साधना कोई मँहगी या मुश्किल भी नहीं है। इस साधना या उपचार का क्रम इस रूप में रखिये—

उपवास और एनीमा

प्राकृतिक चिकित्सकों की चिकित्सा तो प्रधानत इन दो ही चीजों पर निर्भर करती है। आयुर्वेद का पुरातन सिद्धान्त भी यही है और अब तो समझदार लोगों को भी यह ज्ञान होने लगा है कि हिन्दू जीवन का उपवास बहुत कुछ सारगर्भित ही नहीं चिकित्सा का एक अचूक साधन भी है। कब्ज के रोगियों को चाहिये कि चिकित्सा प्रारम्भ करने के पहिले वे पूरी तरह से जीभ पर लगाम रखने का निश्चय कर ले और दृढ़ चित होकर उपचार का श्रीगणेश करे।

उपवास या लंघन को 'परमौषधम्' कहा गया है, और हिन्दू संस्कृति के साप्ताहिक या पाक्षिक व्रतो में औषध की पूरी पुट रखी गई है। कब्ज के रोगी को ज्यादा उपवासो की जरूरत नहीं है। शुरू मे २ दिन का उपवास पर्याप्त होता है, बाद में साप्ताहिक उपवास। प्रारंभिक

उपवास के समय संचित मल को निकालने का उद्देश्य होता है। अत यदि पेट की पूरी सफाई नही होती है तो तीसरे दिन भी उपवास रख लेना चाहिए। उपवास में पानी अवश्य पीना चाहिए और पूरी मात्रा में पानी पीना चाहिए। दिन-रात मे ४-५ गिलास पानी तो अवश्य ही पिया जाय। एक गिलास पानी मे नीबू का १ तोला रस अवश्य डाल लिया जाय।

उपवास के समय शरीर और मन को पूरी शान्ति एव विश्राम देना जरूरी है। उपवास का वैज्ञानिक रहस्य यह भी है कि आँतो के खाली रहने पर वे न केवल संचित विकार को बाहर निकालने का प्रयत्न करती है—बल्कि विश्राम के द्वारा खोई हुई शक्ति को भी प्राप्त करती है। अत उपवास के समय पूरी सावधानी के साथ शरीर एव मन की गतिविधि को शान्त रखा जाय।

एनीमा

एनीमा का प्रयोग बहुत आसान है। बाजार में किसी भी केमिष्ट की दुकान से यह लिया जा सकता है। शुरू मे इसकी विधि किसी वैद्य-डाक्टर या प्राकृतिक चिकित्सक के पास देख लेनी चाहिये। फिर आवश्यकता के समय निस्संकोच होकर इसके द्वारा आँतो की शुद्धि करते रहना चाहिये।

उपवास और एनीमा के द्वारा संचित मल के बाहर निकल जाने एव पाचन-क्रिया के ठीक से व्यवस्थित हो जाने पर अपनी दिनचर्या—खान-पान, रहन-सहन को पूरी तरह से नियमित तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमो के अनुकूल बनाये रखने पर कब्ज जैसे राज रोग से पूरी तरह मुक्त रहन की निश्चित सभावना है। अत अब कुछ आवश्यक सूचनाएँ यहाँ दी जा रही है जो जीवन को स्वस्थ—प्रसन्न रखने के स्वर्ण सूत्र है—और इनके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति अपने को कब्ज मुक्त रखने के साथ ही दीर्घजीवी भी बना सकता है।

उचित निद्रा

भूख की तरह नीद भी शरीर की स्वाभाविक माँग है। अत जीवन-रक्षा के साधनो मे नीद का महत्त्व पूर्ण स्थान है। आयुर्वेद का कहना है—

पुष्टिवर्णबलोत्साहमग्निदीप्तिमतद्रिताम्।
करोति धातुसाम्य च—निद्रा काले निषेविता।।
—सुश्रुत

अर्थात्—नींद से शरीर पुष्ट रहता, बल और उत्साह की वृद्धि होती, शरीर का रग निखरता, पाचन-शक्ति उद्दीप्त होती, तन्द्रा दूर भा जाती और धातुओ मे साम्य रहता है।

इसके विपरीत जब कभी नीद के वेग को रोकने का अपराध हो जाता है—किसी भी कारण से ठीक से नीद आने में बाधा पड जाती है, तो आयुर्वेद के कथनानुसार, जँभाई, शरीर मे भारीपन, सर दर्द, आँखो का भारीपन, आलस्य, अरुचि आदि खराबियाँ उत्पन्न होकर जिन्दगी की गाडी मे ब्रेक लग जाता है।

ठीक समय पर ठीक नीद लने से शरीर मे ताजगी बनी रहती और जीवन-यात्रा का चर्खा बडे मजे मे चलता रहता है। अत निश्चित समय पर निश्चित मात्रा में नीद का सेवन अवश्य करना चाहिए।

अवस्था और कार्य के भेद से नीद की मात्रा में अन्तर जरूर रहता है, होना भी चाहिये। बच्चो को ज्यादा नीद चाहिये—शरीरी श्रम करने वालो को भी ज्यादा चाहिये। साधारणत वयस्क व्यक्ति के लिये ६-७ घण्टे की गाढ निद्रा पर्याप्त होती है।

ब्राह्ममुहूर्त में शय्यात्याग

प्रात ४ बजे से ५ बजे तक का समय ब्राह्ममुहूर्त्त कहलाता है। इस समय प्रकृति की तरफ से अमृत की वर्षा होती है। भारतीय ऋषि-महर्षि ही नही, बीसवी सदी के महात्मा गाँधी भी इस समय के उठन की उपयोगिता को पूरी तरह समझते थे और गाधी जी के आश्रमवासियो के लिय इस समय उठना एक अनिवार्य नियम था। अत नियमित रूप से इस समय चारपाई छोड देन का अभ्यास डाल देना चाहिये।

उष पान और शौचक्रिया

शय्या से उठने पर एक ग्लास पानी पीने का अभ्यास अवश्य डालना चाहिये। इससे शौच में तो सुविधा होती ही है, पेट की एक जरूरी माँग की भी पूर्ति हो जाती है। शौच या मलविसर्जन की क्रिया मे मनुष्य को पशु-पक्षी से शिक्षा लेनी चाहिये—क्योंकि पशु-पक्षी हाजत होते ही तत्काल मल-त्याग कर देता है—अत शौच में तनिक भी विलब करना घोर अपराध है। जिन लोगों को गप्प शप्प मार कर या चाय पीकर या सिगरेट के कश उडाने के बाद धीरे-धीरे दस्त आने की आदत है, उन्हें अविलब अपनी इस कुटेव में सुधार कर लेना चाहिये।

शुरू में चाहे २४ दिन उन्हें मल ही असुविधा हो लेकिन थोड़े समय बाद अवश्य लाभ होता है।

शौच का स्थान साफ होना चाहिये—गन्दे पाखाने तो कब्ज के ही कारण बनते हैं। संभव हो तो आबादी से दूर खुले स्थान में शौच क्रिया की जाय। इस क्रिया में जल्दबाजी तो करनी ही नहीं चाहिये और न घण्टों लगाना चाहिये। शौच क्रिया में १५ से ३० मिनिट का समय उचित होता है। वे व्यक्ति तो भाग्यशाली ही समझे जाने चाहिये जो जाते ही अपना पेट साफ कर लेते हैं। चाहे रात हो या दिन चाहे भोजन का समय हो शौच के वेग को रोकने की भूलता हर्गिज कभी नहीं होनी चाहिये। शौच के सम्बन्ध में गांधी जी के इस उपदेश को ध्यान में रखना चाहिये कि मल विसर्जन के बाद उस पर थोड़ी मिट्टी डाल दी जाय ताकि वह अच्छे खाद के रूप में परिणत हो जाय और गन्दगी का कारण न बने।

व्यायाम कसरत

स्वास्थ्य को ठीक रखने और कब्ज को दूर करने में व्यायाम का शीर्ष स्थान माना गया है। व्यायाम के गुण धर्म के विषय में आयुर्वेद का यह कथन—

लाघवं कर्म सामर्थ्यं स्थैर्यं दुःख सहिष्णुता
दोषक्षयोऽग्निवृद्धिश्च व्यायामादुपजायते।

—सर्वथा सत्य है। इसका अर्थ है कि व्यायाम से शरीर में हल्कापन रहता, कार्यशक्ति बढ़ती, स्थिरता उत्पन्न होती और कष्टसहिष्णुता आती है। बढ़े हुए दोष क्षीण होते और पाचन-शक्ति बढ़ती है। इतना ही नहीं आयुर्वेद तो यह भी कहता है कि व्यायाम के द्वारा शरीर रोग प्रूफ बन जाता है—

व्यायाम दृढगात्रस्य व्याधिर्नास्ति कदाचन।

(भावप्रकाश)

कार्य शक्ति और शरीर की स्वाभाविक रोगक्षम शक्ति को बढ़ाने वाले व्यायाम के द्वारा जब खोया हुआ स्वास्थ्य पाया जा सकता है आयु बढ़ाई जा सकती है तब कब्ज का दूर होना तो साधारण-सी बात है। शरीर के अङ्ग प्रत्यङ्ग से आवश्यक हरकतें हो जाने से पसीने के द्वारा विकारी पदार्थों के निकलते रहने से भूख ठीक लगती और आंत साफ रहती है। अतः अपनी स्थिति के अनुसार आवश्यक व्यायाम को दिनचर्या का आवश्यक अंग बना लेना चाहिये।

व्यायाम के आजकल कई रूप हैं। दंड-कसरत फुटबाल हाकी टेनिस कबड्डी दौड़ आदि सभी ऐसी क्रियाएं हैं जिनमें आवश्यक व्यायाम हो जाता है। सूर्य-नमस्कार के द्वारा भी उचित व्यायाम हो जाता है।

वयस्क और बुद्धिजीवियों के लिये प्रातःकालीन भ्रमण और हल्की दौड़ भी बहुत उपयुक्त व्यायाम है। तैरने से भी अच्छा व्यायाम हो जाता है।

व्यायाम का नियमित होना अत्यन्त आवश्यक है। पसीना आकर श्वास प्रश्वास की गति का बढ़ जाना व्यायाम की उचित मात्रा बताई गई है। अतः मात्रा से अधिक व्यायाम भी नहीं करना चाहिए।

स्नान—बाहरी और भीतरी शुद्धि

शरीर की शुद्धि के लिये ही नहीं—दीर्घ जीवन एवं मानसिक शांति तथा कब्ज जैसे रोगों से मुक्त रहने के लिये भी स्नान की अत्यन्त आवश्यकता है। स्नान को केवल ५-७ लोटे जल डाल लेना कहना तो यथार्थता के विपरीत है—और जल-स्नान के साथ ही धूप-स्नान का भी उपयोग करना चाहिये। स्नान में केवल शरीर की त्वचा मात्र की सफाई का ध्यान रखना तो स्नान के महत्व को कम करना है। वस्तुतः बाहरी स्नान के साथ एनीमा के द्वारा आंतों को स्नान कराना भी स्नान का वास्तविक प्रयोग है। अतः साप्ताहिक या पाक्षिक रूप में गर्म जल के द्वारा पेट की भीतरी सफाई भी कर लेनी चाहिये ताकि कब्ज की जड़ का सफाया होने के साथ आन्तरिक स्नान भी हो जाय।

उचित आहार

बिना आहार को ठीक किये कब्ज दूर नहीं होती क्योंकि आहार ही तो रोगों का उत्पादक कारण बनता है। अतः न केवल कब्ज के लिये ही बल्कि जीवन और स्वास्थ्य के लिये भी आहार के सम्बन्ध में आवश्यक सावधानी रहनी चाहिये। आहार शुद्धि में सब शुद्धियां हैं और जैसा खावे अन्न वैसा होवे मन कहावतों में यथार्थ सत्य की पूरी मात्रा है। आहार का विषय बहुत ही गम्भीर एवं विशद है एक पूरे शास्त्र का विषय है। यहां भोजन सम्बन्धी आवश्यक सूचनाएं मात्र दी जाती हैं।

भोजन की मात्रा

अवस्था और कार्य के हिसाब से मनुष्य को मात्राशी होना चाहिए। आहार की मात्रा पाचक अग्नि और बल की

अपेक्षा रखती है। अत जितना आहार प्रकृति और स्वास्थ्य को हानि न पहुँचा कर उचित वक्त पर हजम हो जाय वही भोजन की ठीक मात्रा है। इसी तरह 'त्रिविध-कुक्षीय' अध्याय में चरक सहिता मे निर्देश हुआ है कि मनुष्य को अपने पेट मे तीन स्थान रखने चाहिए। एक भोज्य पदार्थ के लिए, दूसरा पेय के लिये तथा तीसरा वात-पित्त-कफ दोषो के लिए। इस तरह स्थानविभाग करके खाने में विकार की कल्पना ही नही हो सकती।

आहार की ठीक मात्रा के चिह्न ये है—भोजन के बाद कोख पर दबाव न पडे, श्वास प्रश्वास की गति मे कोई अन्तर न आवे, दर्द पैदा न हो, सब इन्द्रिया सतुष्ट हो, भूख-प्यास की शाति होकर उठने-बैठने, चलने-फिरने में सुखपूर्वक प्रवृत्ति हो, ठीक समय पर ठीक रूप मे पाचन हो जाय।

आहारीय पदार्थ

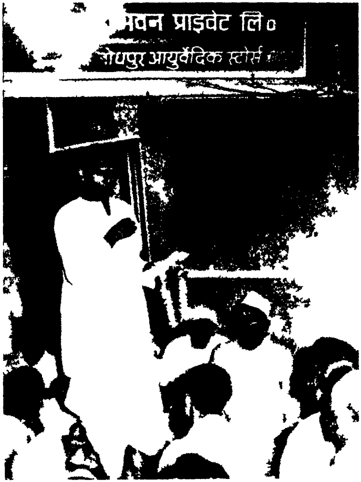
भोजन की चीजों के सम्बन्ध में देश-काल-अवस्था और कार्य के हिसाब से अन्तर जरूर होता है, होना भी चाहिए, किन्तु यह तो निर्विवाद तथ्य है कि आहारीय पदार्थों मे वे ही चीजें होनी चाहिए जिन से शरीर के घटको की पूर्ति होकर जीवन-निर्वाह के लिए उचित बल मिलता रहे। आहार-शास्त्र के दृष्टिकोण से खाद्यपदार्थो के गुणधर्म के सम्बन्ध में प्रकाश डालना तो यहा बहुत लबी चीज बन जायेगी—सक्षेप मे इतना ही बता देना पर्याप्त होगा कि हमारे भोजन मे प्रोटीन, कारबोहाइड्रेट, चिकनाई और खनिज नमक के आवश्यक तत्त्व जरूर होने चाहिए और ये सब तत्त्व दूध-दही, मठा, चावल, गेहूँ, दाल, शाक, केला, मौसमी, सतरा, खजूर और हरे शाको मे उचित रूप मे रहते है। अत अपने भोजन मे आवश्यक अन्न के साथ हरे शाक, दूध-दही और मौसमी फल रखना उचित है।

यह सूचना तो अत्यन्त आवश्यक ही समझनी चाहिए कि सादा और शुद्ध भोजन ही ठीक होता है। भोजन की विविधता और बहुलता न पेट के लिहाज से ठीक है न अर्थ-शास्त्र के दृष्टिकोण से। अत दाल-रोटी, शाक दूध, दही, सब्जी और फल ही हमारा आदर्श भोजन है। बाजार की चाट, मिठाई, ठडी-बासी रोटी, सडी-गली सब्जिया और फल भोजन का विकृत और हानिकर रूप है।

शेषाश] ओज—एक आयुर्वेदीय विवेचन [५६४ पृष्ठ का

भी ह्रस्वकाय, दीर्घकाय स्थूल, कृश आदि भेद से धातुओं के परिमाण मे भेद होता है। इस न्याय से अर्द्धाञ्जलि परिमाण को भी समझना चाहिए। अर्वाचीन एलोपैथी चिकित्सा-पद्धति के अन्तर्गत वैज्ञानिक औजारो की सहायता से प्रयोगशाला मे यह देखा गया है कि प्रत्येक धमक (Heart beating) के साथ हृदय मे से कितना रुधिर महाधमनी मे चला जाता है। प्राणियो के दैहिक वजन मे भिन्नता होने के फलस्वरूप रक्त की मात्रा मे भिन्नता का होना अत्यन्त स्वाभाविक है। सामान्यतया प्रत्येक धमक के साथ प्राय ७ तोला रुधिर महाधमनी मे जाता है। यह अन्वेषण श्वान-बिडालादि प्राणियो के शरीर की बात है। फिर मनुष्य का शरीर कुछ और मोटा होने पर आठ तोला-अर्द्धाञ्जलि कहना बिल्कुल उचित है इस विचारधारा के अनुसार मेरा निश्चित मत है कि 'प्राणाश्रयस्यौजसोऽष्टौ-तिन्दव" ऐसा पाठ होना चाहिए जिससे कि अन्य तन्त्रो के वचनो के साथ उसका भी समन्वय हो जाय। मैंने जिस एलोपैथिक परीक्षण का उल्लेख किया है उसका 'हलीबर्टन फिजियोलॉजी" मे निहित वर्णन मिल सकता है।

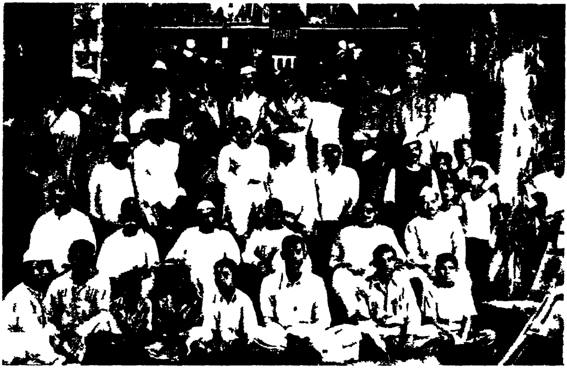
पूर्व पक्ष के समर्थन मे जो मुझे निवेदन करना था, वह सुविज्ञ आयुर्वेदज्ञो के समक्ष रखा जा चुका। अब इस पर सिद्धान्त पक्ष की प्रतिक्रिया जानने की मेरी इच्छा है। चक्रपाणि जी की कल्पना को गलत बताकर हटा देने सम्बन्धी मेरे सुझाव को सभव है कि अनधिकार चेष्टा कहा जाय, किन्तु मेरे इस प्रयत्न के पीछे यह जानने की इच्छा है कि मेरी विचारधारा में कहाँ दोष है। यदि कोई विद्वान यह सिद्ध कर सके कि परापर ओज सम्बन्धी कल्पना सुसगत है—ओज का पर-अपर भेद समझ मे भी आता है और इससे चिकित्सा-निदान आदि में अमुक लाभ होता है तो मै उनका बडा आभार मानूंगा—फिर इससे बढकर प्रसन्नता की बात मेरे लिए और क्या हो सकती है।



श्री धन्वन्तरि जयन्ती क अवसर पर जोधपुर म अनुष्ठित स्वास्थ्यदिवस



श्री धन्वन्तरि जयन्ती क अवसर पर जोधपुर म अनुष्ठित स्वास्थ्यदिवस



श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर जबलपुर में अनुष्ठित स्वास्थ्यदिवस की सभा का एक दृश्य।



धन्वन्तरि जयन्ती समारोह [illegible] में वैद्यों [illegible] एवं नागरिकों की [illegible] का एक दृश्य

मेरठ में वैद्य रामनारायण शर्मा का स्वागत

मेरठ के वैद्य समुदाय न दिनाक २८ अक्टूबर को सचित्र आयुर्वेद' के सचालक वैद्य श्री रामनारायण जी शर्मा के सम्मान म एक विशष समारोह का आयोजन किया। श्रीयुत वैद्य जी अखिल भारतीय दशी औषध निर्माता सम्मेलन की अध्यक्षता करन दिल्ली पधारे थ। इसी अवसर पर मेरठ और अलीगढ के वैद्य बन्धुओ न वैद्यजी को अपन नगरो म आमन्त्रित किया था।

मेरठ म इस समारोह का आयोजन श्री सनातनधम मण्डल के भव्य प्रागण म किया गया जो विशष रूप से सजाया गया था। समारोह म मेरठ के स्थानीय तथा समीपवर्ती स्थानो के वैद्यगण पधारे थ। मरठ आयुर्वेद विद्यालय के समस्त छात्र एव छात्राय उत्साहपूवक समारोह म सम्मिलित थ। वैद्य जी के सभास्थल पर पधारते ही तुमुल करतल ध्वनि के साथ उपस्थित जन-समदाय न उनका हषपूवक स्वागत किया। प्रमुख वैद्यजनो न पुष्पमालाए अर्पित की। मेरठ आयुर्वेद विद्यालय के प्रधान आचाय श्रीयत पण्डित लक्ष्मीनारायण मिश्र वद्य आयर्वेदाचाय न समारोह की सक्षिप्त प्रस्तावना प्रस्तुत करते हुए वैद्य जी के मेरठ पधारन पर हार्दिक हष व्यक्त किया और स्वागत-समारोह की अध्यक्षता के लिए मरठ क्षत्र के प्रमख एव प्रसिद्ध वैद्य वयोवद्ध पण्डित श्री गणशदत्त जी शास्त्री का नाम प्रस्तुत किया। सव सम्मति के आग्रह पर शास्त्री जी न सभापति का आसन ग्रहण किया। तदनन्तर पण्डित दयाशकर जी शक्ल न मधर ध्वनि से वेदमन्त्रोच्चार कर मगलाचरण किया। मेरठ आयुर्वेद विद्यालय के अध्यापक श्री शान्तिस्वरूप जी एम० एस-सी० न विद्यालय की ओर प्रस्तत अभिनन्दन पत्र पढा और वैद्य जी को समर्पित किया। इसके अनन्तर मेरठ के प्रमुख चिकित्सक श्री शशिधर जी तिवारी न अपन भाषण में वैद्य रामनारायण जी शर्मा के वास्तविक आयर्वेद हितैषी कार्यों का उल्लख करते हुए उनका विनम्र अभिनन्दन किया। उन्होन कहा कि हाल ही म आसवारिष्टो पर जो मद्य कानून लगा दिया गया है इसके विरोध के लिए वैद्य जी न सबसे पहले आयुर्वेद जगत को प्ररित किया है और कानून म सुधार कराने के लिए वैद्य जी विभिन्न प्रकार से गभीर प्रयास कर रहे हैं। आसवारिष्टो पर लगे प्रतिबन्धो का उल्लख करते हुए आपन कहा कि भारत की यह विशषता है कि जब कभी हमारी सस्कृति पर कोई आघात हुआ तो पशुओ तक न उसकी रक्षा म जीवन होम दिय। आयुर्वेद हमारी सस्कृति और हमार जीवन का अग है सरकार इस महत्त्व को भल ही न समझ किन्तु दश की कोटि-कोटि जनता से यदि पूछा जाय तो वह बता दगी कि वह आयुर्वेद को जानती है और आयुर्वेद को चाहती भी है। आयुर्वेद पर अनुचित कानूनो का आघात बर्दाश्त नही किया जा सकता। आपन वैद्य-समाज से अपील की कि इस प्रश्न पर एक होकर अपन विज्ञान की रक्षा के लिए सक्रिय प्रयत्न करे। आपन कहा कि समय की यह माग है कि दश के गाव-गाव म वैद्यो को जाग्रत करके दृढ सगठन बनाया जाय। आपन महासम्मेलन की स्थिति का उल्लख करते हुए कहा कि उसम कुछ स्वयभू कायकर्त्ताओ न धाधलीबाजी करके उसको पवित्र उद्दश्य से विचलित कर दिया है। वद्य जगत को सचेत होकर अपन इस प्राचीन सगठन को व्यवस्थित करना चाहिए ताकि उसकी व्यवस्था और आर्थिक स्थिति म जो गडबडिया और धाधली हुई है उनकी पुनरावत्ति न हो सके। सम्मेलन की ओर शीघ्र ध्यान दना चाहिए। सगठन की दशा बहुत गिरी हुई है। इधर कई वर्षो म महासम्मेलन म आवरण के पीछ क्या होता रहा इमका ज्ञान हम सचित्र आयुर्वेद द्वारा हो चुका है। इसका परिणाम यह होना चाहिए आयुर्वेद-जगत सक्रिय होकर महासम्मेलन को सम्हाल। आयुर्वेद की शैक्षणिक अवस्था का उल्लख करते हुए आपन कहा कि यह विचित्र बात है कि हमारे नय स्नातक अपन को वैद्य कहन म सकोच करते है। स्नातको को कदापि आधुनिकता की ओर नही झुकना चाहिए। उनको कदापि मन में हीन भावना नही रखनी चाहिए। व तो भविष्य के कणधार है यदि भावी पीढी म अभी से वैद्यकी को त्यागकर डाक्टरी-वत्ति पनप जायगी तो आग आयर्वेद कहा रह सकेगा। सगठन और वास्तविक काय करके वैद्य-समाज को आयुर्वेद शिक्षा के पक्ष को एसा बनाना चाहिए जिससे आग के स्नातक आयुर्वेद के प्रति ही रुचि रख सक। अन्त म आपन वैद्य जी के सगठनात्मक प्रयासो की प्रशसा की और उस दिशा म अपना सहयोग दन का भरपूर आश्वासन दिया।

अभिनन्दन-पत्र

परमादरणीय श्रद्धेय वैद्यराज श्रीमान् पं० रामनारायण जी शास्त्री की पुनीत सेवा में सादर समर्पित

श्रद्धेय महानुभाव !

आज मेरठ आयुर्वैदिक कालेज के शिक्षक एव विद्यार्थी वर्ग आपके मेरठ में शुभागमन पर अपने को गौरवान्वित समझते हुए परम प्रफुल्लित हो रहे है। आपका परिचय मेरठ निवासियो के लिये नवीन नही है। समाचार पत्रो, पत्रिकाओ मे आपके लेख, आपके फोटो तथा आपका परिचय निरन्तर प्राप्त होता रहता है। आयुर्वेद-जगत मे आपने जो ख्याति प्राप्त की है, वह अद्वितीय है। कहा जाता है कि सरस्वती और लक्ष्मी का परस्पर वैमनस्य होने से दोनो एक स्थान पर नही मिलती, किन्तु आप को दोनो ही का वरदान प्राप्त है, लक्ष्मी और सरस्वती दोनो आपके यहाँ निवास करती है। एक ओर जहाँ आपकी गणना भारत के अच्छे विद्वानो, वैद्यराजो और लेखको मे की जाती है, तो दूसरी ओर आप आयुर्वेद-जगत् के कुबेरपति समझे जाते है। समुन्नत मस्तिष्क के साथ-साथ आपको हृदय की उदारता, सौम्यता, सरसता भी प्राप्त है। आधुनिक काल मे आयुर्वेद की आप जो ठोस सेवाएँ कर रहे है, यह सर्वविदित है। आपके द्वारा सचालित वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की शाखाएँ, बिक्री-केन्द्र, एजेन्सियो तथा मासिक 'सचित्र आयुर्वेद' ने वास्तव मे भारतवर्ष मे आयुर्वेद का नाम तथा औषधिया घर-घर पहुँचा कर आयुर्वेद को पुन प्रतिष्ठा प्राप्त कराने मे महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। आपके व्यक्तित्व से आयुर्वेद-जगत को बहुत आशाएँ है।

मेरठ नगर राजनैतिक, सामाजिक गतिविधियो का केन्द्र ही नही रहा है वरन् यह चिरकाल से प्रसिद्ध वैद्यराजो की भी भूमि रहा है, जिन्होने यश और धन प्रचुरता से प्राप्त किया है। इस अवसर पर मेरठ आयुर्वैदिक कालेज का वर्णन करना भी अनुपयुक्त न होगा। यह सस्था ३ वर्ष पूर्व मेरठ के जनसमुदाय द्वारा स्थापित की गई थी, जिसमे बी० आई० एम० एस० डिग्री का पचवर्षीय पाठ्य-क्रम है। इसमे इस समय एक सौ के लगभग छात्र और छात्राये शिक्षा प्राप्त कर रहे है। इस सस्था को इण्डियन मेडिसिन बोर्ड, लखनऊ द्वारा मान्यता प्राप्त है। गत वर्ष सरकार ने भी १५००) रुपये की अल्पराशि प्रदान करके इस सस्था को मान्यता दी है, किन्तु यह धनाभाव से पीडित है जिस कारण इसकी मान्यता नष्ट होने की सम्भावना बनी हुई है। अभी तक इसके पास न पर्याप्त भवन है न अन्य सामग्रियाँ ही, जिसके लिये यह सस्था आयुर्वेदप्रेमी महानुभावो की कृपादृष्टि के लिये एकटक निहार रही है। यह सस्था मेरठ तथा समीपवर्ती मुजफ्फरनगर, बुलन्दशहर अलीगढ, मुरादाबाद इत्यादि जिलो मे एक ही है, जिस कारण इसका महत्त्व और भी बढ जाता है।

दानवीर यशस्वी महापुरुष !

हम अपने अतीव अल्प साधनो से आप का स्वागत करते हुए सकुचा-से रहे है, क्योकि हम अनुभव करते है कि आप के गौरव एव महानता के अनुरूप आपका स्वागत करने मे हम असमर्थ है।

अन्त मे हम पुन अपनी श्रद्धाञ्जलि एव पुष्पाञ्जलि आपकी सेवा मे श्रद्धापूर्वक समर्पित करते है।

हम है आपके कृपाकाक्षी
शिक्षक एव छात्रवर्ग
मेरठ आयर्वेदिक कालेज,
नौचन्दी, मेरठ।

सोमवार दिनाक २८ अक्टूबर १९५७ ई०

वैद्य श्री लक्ष्मीनारायण पचोली ने अपने भाषण में महासम्मेलन की स्थिति, 'सचित्र आयुर्वेद' की सेवाये, नेतृत्व की अकर्मण्यता, सुधार के प्रयत्न इत्यादि विषयो का उल्लेख करते हुए कहा कि छोटे-छोटे सगठनो के प्रयत्न से कुछ नही होगा। देश भर के वैद्यो का सच्चा प्रतिनिधित्व करने वाली सस्था का प्रभाव हो सकता है। उस सगठन को ही सक्रिय बनाना चाहिए। यदि वर्तमान पदासीन लोग कार्य नही करना चाहते तो उन्हे सम्मानपूर्वक हट जाना चाहिए अथवा उनको योग्य और उदासीन विद्वानो को प्रेरित करके अपने साथ लेना चाहिए और यथार्थ कार्य करने की ओर प्रवृत्त होना चाहिए।

श्री विष्णुदत्त जी वैद्य ने निम्न प्रस्ताव प्रस्तुत किया—"मेरठ नगर के वैद्य बन्धुओ की यह महती सभा आयुर्वेद महासम्मेलन तथा तत्सम्बन्धित आयुर्वेद विद्यापीठ के वर्तमान वातावरण से अपने को असन्तुष्ट अनुभव करती हुई, यह निश्चय करती है कि आयुर्वेद के वास्तविक अभ्युत्थान के लिए आगामी आयुर्वेद महासम्मेलन के वार्षिक अधिवेशन मे आयुर्वेद की ठोस सेवा करने के निमित्त बहुत सोच-विचार कर पग उठाती हुई, वर्तमान नेतृत्व का सगठित रूप से प्रतिरोध करके यथार्थ आयुर्वेद-सेवी भारतीय वैद्य जनता के शुभचिन्तक परमार्थी व्यक्तियो को सम्मेलन की बागडोर सौंपी जाय तथा इस सम्बन्ध में जो भी कठिनाइयाँ सम्मुख आवें उनका साहस के साथ सामना करने का पूर्ण निश्चय करके आयुर्वेद की वास्तविक सेवा का प्रण करती है।"

श्रीयुत पण्डित कृष्णदत्त जी वैद्य शास्त्री ने निम्न दूसरा प्रस्ताव प्रस्तुत किया—'मेरठ नगर के वैद्य जनो की यह सभा सरकार से अनुरोध करती है कि आयर्वेद चिकित्सा के प्राणगत आसवारिष्ट जो बिल्कुल ही मद्य की श्रेणी मे आने योग्य नही है, परन्तु उन्हें मद्य की श्रेणी मे रखकर उनके निर्माण तथा विक्रय पर जो प्रतिबन्ध लगाये गए है उन्हें शीघ्र ही बन्धनमुक्त कर अपनी आयुर्वेद-प्रियता का परिचय दे। पहले प्रस्ताव का समर्थन नगर वैद्य-सभा के प्रधान पण्डित श्री हरिदत्त जी शास्त्री ने किया। समर्थन के साथ शास्त्री ने अपनी सक्षिप्त किन्तु ओजस्वी वक्तृता मे सगठन की वास्तविकता पर महत्त्वपूर्ण प्रकाश डाला।

दूसरे प्रस्ताव का समर्थन श्री रामतीर्थ धर्मार्थ चिकित्सालय के प्रधान जी ने किया और उक्त दोनो प्रस्ताव सर्वसम्मति द्वारा स्वीकार किये गए।

इसके उपरान्त मेरठ आयुर्वेद विद्यालय के विद्वान प्रधानाचार्य वैद्य श्री लक्ष्मीनारायण जी मिश्र आयुर्वेदाचार्य का बहुत ही गम्भीर भाषण हुआ। वैद्य रामनारायण जी के सम्बन्ध मे बोलते हुए आपने कहा कि हम आज वैद्य जी का सम्मान करके अपने को ही गौरवान्वित कर रहे है। वैद्य जी उन विभूतियो मे है जिनके हृदय मे आज ही नही बहुत पूर्व से आयुर्वेद के उत्थान के लिए यथार्थ कार्य करने की लगन है। आपके द्वारा सस्थापित और सचालित श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन देखने मे एक व्यावसायिक सस्था है, परन्तु उसके द्वारा आयुर्वेदोन्नति मे विभिन्न स्रोतो से कितना कार्य होता है, यदि उसका अध्ययन कोई निकट से करे तो उसको मालूम होगा कि वह व्यावसायिक सस्थान से अधिक आयुर्वेद का एक व्यवस्थित विकास-केन्द्र है। इसी प्रकार वैद्य जी को जो कोई केवल व्यवसायी समझता है, वह इनके निकट सपर्क मे आकर देखे तो सहज ही उसको यह आभास हो जावे कि वैद्य जी के प्रति अन्यथा सोचकर उसने अपनी बुद्धि के साथ कदाचार किया। वस्तुत वैद्य जी जितने बड़े व्यापारी है, उससे बहुत बड़े मानव है, उनके मानव हृदय मे यथोचित सस्कार है। आयुर्वेद के शास्त्रीय पक्ष के वे ज्ञाता है। देखने-सुनने मे अत्यन्त साधारण लगने वाले श्री रामनारायण वैद्य अपने भीतर एक महान व्यक्तित्व छिपाये हुए है, जिसमे निर्दम्भ सात्विकता परिलक्षित होती है।

आपने आयुर्वेद और एलोपैथी की चर्चा करते हुए कहा कि भारत में एलोपैथी बहुत लोगो की सेवा नही करती। कुछ अश मे शिक्षित जनता के लोगो तक ही उसका कार्यक्षेत्र सीमित है, और यह नही कहा जा सकता कि शिक्षित जनता का वह थोडा-सा अश भी एलोपैथी की अपेक्षा आयुर्वेद को पसन्द नही करता। ऐसी दशा में आयुर्वेद की जनप्रियता को कोई चुनौती नही दे सकता। जो कोई कहता है कि आयुर्वेद को जनता पसन्द नही करती, वह बडी गैर जिम्मेवारी की बात कहता है, और अगर वह आदमी जिम्मेवार है तो कहना होगा कि वह जिम्मेवारी के महत्त्व को नही समझता। विदेशी शासन काल में अग्रेज हमारी हर चीज को हीन स्थिति का सोचता था। वही भावना उसने देश की जनता मे भरी। इस प्रयास मे अग्रेज बहुत हदतक सफल हुआ। आज भी बाजार में साधारण चीजो मे भी जब कोई रद्दी किस्म सामने आती है तो आसानी से कह दिया जाता है—'देशी है।'

खराब चीज का नाम ही देशी हुआ और देशी चीज का अर्थ ही खराब हो गया। हमारे नगरो के जन-जीवन मे यह भावना अग्रेजो की भरी हुई है। वह तो गये, परन्तु अग्रेजियत हमारे मस्तिष्क पर शनि की छाया की भाँति विद्यमान है। वही भावना आज आयुर्वेद जैसा सर्वथा सम्पन्न चिकित्सा विज्ञान को अग्रेजियत के साधनो से पढे लोगो को निरुपयोगी प्रतीत होता है, क्योकि यह देशी है। परन्तु यह देश की करोडो जनता के जीवन मे सस्कृति, सभ्यता, प्रकृति सबके साथ ऐसा घुला मिला है कि उसको विलग किया ही नही जा सकता। शासक वर्ग इस तथ्य को नही समझता, यह बात भी नही है। यह तो जनतन्त्र का समय है। इसमे सरकार का ध्यान वही ज्यादा जाता है, जहा ज्यादा शोर होता है। इसलिए आयुर्वेद के लिए पहले वैद्यो को सुसगठित होना चाहिए फिर जनता को साथ लेकर आयुर्वेद के उत्थान में सरकार को प्रवृत्त करने के हेतु ऊँचा स्वर उठाना चाहिए। निश्चय ही आज महासम्मेलन शिथिल है और उसमे बहुत खराबियाँ है। उसको सही मार्ग पर लाकर सक्रिय बनाना एक जिम्मेवारी का काम है। सारा वैद्य-समाज इस जिम्मेवारी को समझे। सगठन और कार्य-शक्ति दोनो पुष्ट हो तब आयुर्वेद की उन्नति होगी। सरकार को कोसने से कुछ नही होगा। सारे देश मे वैद्य फैले है। गाँव-गाँव, नगर-नगर मे उनकी सभाएँ हो—स्वर उठे तो सरकार का ध्यान अवश्य जायगा। हम एक होकर सरकार के सामने न्यायोचित मागे रखे, वे न मानी जावे तो अहिसात्मक सत्याग्रह की तैयारी की जाय। आज मामूली लोग भी सगठन के बल पर अपनी उन्नति कर रहे है। समय आयगा जब एलोपैथी वाले भी हिन्दी मे नुस्खे लिखेंगे और आयुर्वेदिक चिकित्सा करेगे। वह समय आपके त्याग और बलिदान से आयगा। उठिये और सगठन का शखनाद कीजिए।

इसके उपरान्त वैद्य श्री रामनारायण जी शर्मा ने उपस्थित समुदाय को सम्बोधित करते हुए कहा कि आपने—मेरा सम्मान किया यह आपकी कृपा और उदारता है। मै आयुर्वेद का साधारण सेवक हूँ। यदि आपलोगो को मेरी बात अच्छी लगती है तो वह भी आपकी गुणग्राहकता है। मै तो एक ही बात आपसे कहता हूँ कि जिसके द्वारा आप जीविका पाते है उस आयुर्वेद की उन्नति के लिए जी-जान से प्रयत्न कीजिए। उसमें ही आपकी उन्नति निश्चित है। सरकार की आयुर्वेद-नीति का उल्लेख करते हुए आपने कहा कि वर्तमान मे सरकार की नीति जो आयुर्वेद-विरोधी कही जाती है, उसका कारण हमारा स्वय का अकर्तव्य है। केवल इस कारण से कि आयुर्वेद मे कमियाँ हैं, उसको छोडा नही जा सकता। कमियाँ खादी मे भी थी, परन्तु उसको अपनाया गया। आयुर्वेद को भी उसी प्रकार निश्चित रूप से अपनाया जायगा। सरकार पचवर्षीय विकास योजनाओ के कारण आर्थिक सकट मे है। उस सकट मे सरकार को आयुर्वेद का सहारा लेना पडेगा। आप सरकार की नीति की चिन्ता छोड कर अपना सगठन और अपने विज्ञान के विकास का काम कीजिए। अपने को शीघ्र उस दिन के लिए तैयार कीजिए जब सरकार देश की स्वास्थ्य-समस्या के समाधान मे आपकी सहायता मागे। आत्मविश्वास रखिए और हीनता की भावना मन से निकाल दीजिए। अपने अधिकार को पाने के लिए आपको साहस के साथ आगे आना होगा। हमारी सगठन-शक्ति न होने का परिणाम है कि देशी दवाओ पर सरकार के अनभिज्ञ अधिकारी मनमाना कानून लगा देते है। आसवारिष्ट कानून ऐसा ही है। पजाब मे वैद्यो को दवाओ के लिए अहिफेन और भग नही दी जाती। यदि आपका सगठन दृढ हो और आपके स्वर मे बल हो तथा सरकार को वस्तुस्थिति समझायी जाय तो कदापि ऐसा नही हो सकता। आसव-अरिष्ट पर मद्य-कर कानून ऐसा है जिसके कारण प्रत्येक छोटे से छोटे वैद्य दिक्कत मे आयग। अ० भा० देशी औषधि निर्माता सघ उन सकट के निवारण के लिए प्रयत्न कर रहा है। आपके हितो की रक्षा एक सुदृढ और सुव्यवस्थित सस्था ही कर सकती है। उसके लिए आपलोग मिलकर अपने महासम्मेलन को सुधारिये।

आयुर्वेदिक शिक्षण प्रशिक्षण की स्थिति पर दुख प्रकट करते हुए वैद्य जी ने कहा कि हमारी हीन दशा का सबसे मुख्य कारण यही है कि हमारा ज्ञान-प्रसार का साधन ही पर्याप्त और उचित नही है। इस दिशा में सबसे पहले ध्यान देना चाहिए। एलोपैथी विद्यालय की केवल इमारत मे तीन लाख व्यय हो जाता है। उतने मे आयुर्वेद के कई विद्यालय खुल सकते है। विद्यार्थियो को सम्बोधित करते हुए वैद्य जी ने कहा कि आप डाक्टरो की नकल करने की बात मन में मत सोचिए। यथार्थवादी बनिये। वैद्यक बडा पवित्र

(शेषाश ५७८ पृष्ठ पर)

अलीगढ़ में वैद्य रामनारायणजी का अभिनन्दन

अलीगढ जिला वैद्य-सम्मेलन की ओर से गत २६ अक्तूबर को अपराह्न अलीगढ म एक भव्य समारोह का आयोजन किया गया। भा० भा० दशी औषध निर्माता-सघ म सहयोग के हतु परामश करन वद्य रामनारायण शर्मा श्री धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ के अध्यक्ष वैद्यराज श्री देवी शरण जी गग से मिलन पधारे थ। उक्त समारोह इसी अवसर पर वद्य जी के अभिनन्दन म सम्पन्न हुआ।

विशष रूप से सुसज्जित पण्डाल म अलीगढ जिला के लगभग तीन सौ वैद्य उपस्थित थ। वद्य जा के सभास्थन पर पहुँचते ही उपस्थित वद्यवग न करतलध्वनि के साथ उनका स्वागत किया। जनपद वद्य सभा के अध्यक्ष वैद्य प० ईश्वरचद्र जी प्राणाचाय जनपद सभा के मत्री वैद्य प० दीनदयालु जी उपमन्यु नगर वैद्य सभा के मत्री कविराज प० रमेशचद्र जी शर्मा तथा सगठन मत्री प० प्यारे लाल जा शर्मा वैद्य वाणीभूषण वद्यराज प० रामचद्र जी वैद्य श्री रवीद्रचद्र जी कुलश्रष्ठ तथा प्रचार मत्री डाक्टर श्री तेजपाल सिह जी बी० आई० एम० एस० इयादि प्रमुख व्यक्तियो न वद्य जी को मालापण किया।

नगर सभा के मत्री प० श्री दानदयाल जी वैद्य उपमन्य के प्रस्ताव तथा आयुर्वेदाचाय प० रामदयाल जी एव सगठन मत्री जी के समथन तथा सवसम्मति के आग्रह पर करतल-ध्वनि के बीच वाणीभूषण माय श्री वैद्यराज रामचन्द्र जी शास्त्री न सभापति का आसन ग्रहण किया। अभिनदन समारोह के स्वागताध्यक्ष एव अलीगढ जिला वैद्य सम्मेलन के अध्यक्ष वैद्यराज श्री ईश्वरचद्र जी प्राणाचाय न अपना प्रस्तावना भाषण देते हुए कहा कि बहुधा लक्ष्मी एव सरस्वती का विरोध देखा जाता है परन्तु इन दोनो का अन्यतम सौजन्य एक व्यक्ति म हम प्रत्यक्ष देख रह है यह आयुर्वेद जगत का सौभाग्य है और यह दखकर कि एमा महान व्यक्ति हम में से ही एक है हम गव से उल्लसित हो जाते है। आज हमारे अनक बार के निमन्त्रण के बाद वैद्य रामनारायण जी यहाँ पधारे और हम उनके अभिनन्दन का अवसर मिला यह हम सबके लिए सौभाग्य की बात है। वैद्य जी की आयुर्वेद-सवाओ का विस्तार से उल्लख करते हुए श्री प्राणाचार्य जी ने जिला वैद्य सम्मेलन की ओर से वैद्य जी को अभिनदन पत्र भट किया। जलाली (अलीगढ) से पधारे विद्वद्वर पडित श्री रघुवीरदत्त जी वैद्य न ललित सस्कृत पदो म एक सुदर कविता वैद्य जी के सम्मान म प्रस्तुत की। जलाली के ही एक अय नवयुवक वैद्य श्री ओ३मप्रकाश गुप्त न अपनी सक्षिप्त वक्तृता म वैद्य रामनारायण जी के सम्पक म रहन विषयक अपन कुछ महत्त्वपूण सस्मरण सुनाय। नशनल मडिकल एसोसियशन उत्तर प्रदेश के सदस्य आय वेंदाचाय श्री रवीद्रचद्र जी कुलश्रष्ठ न अपन भाषण म सचित्र आयर्वेद के उच्चस्तर की सराहना करते हुए कहा कि आयर्वेद जगत म एक मात्र यही पत्र है जिसको सर्वापरि कहा जा सकता है और जिसके द्वारा आयुर्वेद जगत म ज्ञान-प्रसार का बहुत ही महत्त्वपूण काय हो रहा है। आपन वद्य जी के प्रयासो म श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की स्थापना और उसके द्वारा अद्वितीय स्तर के आयुर्वेद-यूनानी साहित्य प्रकाशन की विस्तार से सराहना की। आपन कहा श्रीयुत वैद्य जी के अनुसधान इत्यादि के भावी कायक्रम निश्चय ही आयुर्वेद जगत के लिए आशा केद्र है। आपन आग्रह किया कि जनता म अधिक सख्या म आतुरालय खोल। आयुर्वेदोक्त पचकम विधान और रसायन-सेवन के प्रत्यक्षीकरण से आयुर्वेद का व्यापक प्रचार होगा। वास्तविक काय करन का अवसर आ गया है। अत म आपन वैद्यगणो को सगठित होकर स्वय कुछ कहन और वैद्य जी सदृश व्यक्तियो से काय करान का अनुरोध किया। कविराज डाक्टर श्री पन्नालाल जी न अपन भाषण म इस बात पर अधिक बल दिया कि हमारा सम्मिलित प्रयास इस दिशा म अधिक होना चाहिए और प्रत्यक्ष कार्यो द्वारा हम सिद्ध करना चाहिए कि आयुर्वेद केवल चिकिसा का शास्त्र नही है। वह तो जीवन का शास्त्र है इसी लक्ष्य से आयुर्वेद का प्रचार प्रसार किया जाना चाहिए। आयुर्वेदाचाय पण्डित रामदयालु जी वैद्य न अपन विस्तृत भाषण म आदश जीवन के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि जीवन की सच्ची परिभाषा का ज्ञान रखन वाल श्रष्ठ मनीषी होते है— इस दृष्टि से हमारे मुख्य अतिथि वैद्य रामनारायण जी आदश वैद्य और विद्वान है। आग आपन अतीत और वतमान का विश्लषण करते हुए कहा कि इस दश पर आपत्तियो की

आयुर्वेदोद्धारक पं० रामनारायण जी वैद्य शास्त्री

के करकमलों में सादर समर्पित

अभिनन्दन-पत्रम्

भिषक् शिरोमणि !

आज हम सब अलीगढ जिला वैद्य सम्मेलन के चिकित्सक-वैद्य एव हकीम श्रीमान् के सद्गुणो, आयुर्वेद के प्रति अगाध श्रद्धा एव उच्चादर्श से सम्प्रेरित होकर सगठन मे एकत्रित हुए, अवर्णनीय श्रद्धा के साथ आपका शुभाभिनन्दन करते हर्षित होते है।

हे सौजन्य धन्य मूर्ति !

आपने नियमित रूप से देववाणी एव आयुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की और एक सफल चिकित्सक के रूप में जीवन सग्राम प्रारम्भ किया। अतुलनीय अध्यवसाय, अगाध परिश्रम और गहरी कर्त्तव्यनिष्ठा के द्वारा श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन जैसे आयुर्वेदीय प्रतिष्ठान को जन्म दिया और उसके कार्यकलाप की आशातीत वृद्धि की इसे देखकर किस आयुर्वेद प्रेमी को प्रसन्नता नही होती है। आपके द्वारा सस्थापित यह प्रतिष्ठान रूपी वृक्ष अपने फलो के रूप में देश और विदेश मे विशुद्ध आयुर्वेदीय औषधियो की जिस प्रकार पूर्ति कर रहा है यह अनिर्वचनीय है। इस नवीनता के युग मे आयुर्वेदीय चिकित्सक उत्तम औषधियो के बिना कभी भी जनता की समुचित सेवा करने मे समर्थ नही हो सकते थे। ऐसी अवस्था मे आपके द्वारा गाँव-गाँव और घर-घर मे विशुद्ध औषधियो को पहुँचाने की चेष्टा व्यावसायिक दृष्टि से ही नही वरन जनसाधारण के कल्याण की दृष्टि से परम महत्त्व का स्थान रखती है। एतदर्थ भारत की जनता और सरकार आपकी आभारी रहेगी।

आयुर्वेदैकचिन्तन परायण !

आपके द्वारा अहर्निश आयुर्वेद की अभिवृद्धि के जो कार्य किये जा रहे है, उनकी सूची सम्भव नही है। प्रात-स्मरणीय पूज्यपाद स्वर्गीय आचार्य यादव जी के निर्देशन में उत्तमोत्तम आयुर्वेदीय एव यूनानी ग्रन्थो का प्रकाशन, यहाँ तक कि स्वयम महाराज के जीवन के अनुभवो का घर-घर प्रचार, शिक्षा सम्बन्धी तथा इसी प्रकार की विभिन्न आयुर्वेदीय सस्थाओ की प्रत्येक प्रकार की सेवा विभिन्न प्रकार की शास्त्रीय गुत्थियो को सुलझाने के हेतु परिषदो का आयोजन,आयुवदज्ञो एव विद्वानो को प्रोत्साहन देना, छात्रो की सहायता, चिकित्सालयो की स्थापना एव नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन की प्रशस्तता के लिये अकथ धनव्यय व परिश्रम आदि कितने ही कार्य है जिनसे आपकी कीर्ति की धवलिमा देश के कोने-कोने मे फैल रही है। तथापि आपने एक विपुल धन राशि से आयुर्वेद के अनसधान कार्य को प्रारम्भ करने का जो शुभ सकल्प किया है, उससे सभी आयुर्वेद-प्रेमी एव आयुर्वेदज्ञो को आपके सत्कार्यो मे जो आस्था है उसमें वर्णनातीत वृद्धि हुई है।

विज्ञवर !

आपने अपने जीवन मे जो धन और यश प्राप्त किया है वह दुर्लभ है। किन्तु इससे अधिक हमें आपके व्यक्तिगत गुणो पर श्रद्धा है। आप वैभव के मद मे मत्त न होकर मानवोचित गुणो के आगार है। अभिमान आपको स्पर्श करने मे भी समर्थ नही हो सका है। मित्रो के आप सदैव ही मित्र हैं। उनके प्रति आपका व्यवहार आधुनिक काल मे भी कभी-कभी सुदामा और श्रीकृष्ण का सस्मरण कराता है। सयमित जीवन सतुलित आहार, सुनियोजित आचरण, विनयसम्पन्न व्यवहार तथा अतुलनीय आस्तिकता आदि गुण आपके व्यक्तित्व की ओर बरबस प्रत्येक अपने-पराये को, जो सपर्क में आता है, आकर्षित कर ही लेते है।

महामाननीय !

यद्यपि आपकी सस्था के केन्द्र सारे देश में है किन्तु अब आपने अपना प्रधान केन्द्र जह्नुतनया भागीरथी, सूर्य-तनया यमुना और अन्त सलिला सरस्वती के पावन केन्द्रस्थल मे सस्थापित करने का निश्चय किया है। इस शुभ समाचार से हम उत्तर प्रदेश के चिकित्सको को परम सतोष है। हमे विश्वास है कि आपके द्वारा तीर्थराज प्रयाग मे भारद्वाज के आश्रम की वह कल्पना एक बार पुन साकार हो सकेगी और वहाँ से आयुर्वेदीय ज्ञान का प्रसार ससार को पुन प्राप्त हो सकेगा। अन्त में हम अपने बीच मे पधारने हेतु आपका आभार प्रदर्शित करते है।

अलीगढ़ जिला, वैद्य सम्मेलन

ऐसी घटाएँ आईं कि जिनमे सस्कृति, विज्ञान, विद्वत्ता और साथ ही आयुर्वेद का भी दु खद ह्रास हुआ। अब उसके उठने का अवसर आया है और आयुर्वेद को उठाने के लिए वर्तमान में गम्भीर प्रयास होने लगे हैं, उन कार्यों मे वैद्य रामनारायण जी अग्रगण्य है। आयुर्वेद की शुद्ध औषधो के निर्माण और प्रचार-प्रसार का जितना विशाल और विस्तृत उद्योग आपका है, उतना विदेशो मे भी ऊगलियो पर गिनने योग्य होगा। अनेक आयुर्वेदीय शिक्षण सस्थाओ और सैकडो छात्रो को प्रतिवर्ष आर्थिक सहायता देकर वैद्य जी ने आयुर्वेद के शिक्षण-क्षेत्र मे उत्कृष्ट सेवाये की है।

सम्मेलन के भूतपूर्व सभापति विद्वद्वर वैद्य पण्डित इन्द्रमणिजी शास्त्री ने अपने भाषण मे कहा कि निश्चय ही वैद्य जी के दर्शनो की मेरे मन मे उत्कठा थी। इधर समाचार पत्रो मे आपके कार्यो के विषय मे पढता रहा और उत्कण्ठा बढती गयी। वैद्य जी आज आयुर्वेद मे जागृति की ज्योति जगाने का जो कार्य कर रहे है वह सबसे बडी सामयिक और अत्यावश्यक सेवा है। वैद्य-समाज मे आज जागृति की ही कमी उसके ह्रास का प्रधान कारण है। वैद्य जी के कार्यों मे हम सबको कधा लगाना चाहिए। भूतपूर्व सभापति एव अलीगढ के विख्यात चिकित्सक पण्डित वैद्य रामचन्द्र जी आयुर्वेद-साहित्य शास्त्री ने श्रीयुत वैद्य जी से अपने क्षणिक परिचय का उल्लेख करते हुए कहा कि आज ही श्री धन्वन्तरि कार्यालय जाते आते वैद्य जी से मेरा सम्पर्क हुआ। इन कुछ घण्टो मे ही मैंने देखा कि इस आत्मा मे आयुर्वेदोत्थान के लिए वास्तविक और अप्रतिम लगन है। आसवारिष्टो पर लगे सरकारी कानून के प्रतिरोध के लिए वैद्य जी ने हालमे ही जो व्यापक प्रयास किये, शास्त्रीजी ने उनका विस्तृत उल्लेख करते हुए कहा कि किसी आयुर्वेद नेता को यह चिन्ता न हुई कि इस कानून के कारण आसवारिष्टो का अल्प साधन से जो प्रत्येक वैद्य निर्माण कर लेता है, वह सकट में आ जायगा और छोटे-छोटे निर्माता तो अपना निर्माण बन्द करने को ही बाध्य हो जावेगे, ऐसी दशा मे आयुर्वेद-पद्धति के इस महत्त्वपूर्ण अग का जो ह्रास होगा उसके लिये क्या करे। मैं कह सकता हूँ कि वैद्य जी का आयुर्वेद और वैद्य समाज के लिए बहुत विशाल दृष्टिकोण है, सामूहिक हित के लिए कार्य करते रहने की इनमे अद्वितीय लगन है। सगठन में दृढता लाने के लिए वैद्य जी के उद्बोधक प्रयत्न आयुर्वेद-जगत् के लिए कल्याणकर हैं। ऐसे महामनीषी के अभिनन्दन का आयोजन का अवसर हम अलीगढ वासी वैद्यो को मिल सका यह यथार्थ सौभाग्य की बात है। आपने कहा कि वैद्य जी के पधारने की अल्पसूचना के कारण यहाँ के वैद्य जैसा आयोजन करना चाहते थे, वैसा न हो सका और मै तो वैद्य जी से सादर साग्रह अनुरोध करता हूँ कि कभी फिर पधार कर हमलोगो को अपने हार्दिक भाव व्यक्त करने का अवसर देवे।

सुविख्यात वैद्यराज पण्डित मुकुन्दहरि जी शास्त्री ने अपने भाषण मे अलीगढ जिले की आयुर्वेदीय गतिविधियो का इतिहास विस्तार से प्रस्तुत किया। आपने विद्वत्सम्मेलन के कार्यों का भी उल्लेख किया। इसके अतिरिक्त आयुर्वेदाचार्य पण्डित चन्द्रभानु जी, वैद्य श्री प्रतिभारजन जी ए० एम० एस० आदि वैद्यो के श्री रामनारायण जी वैद्य के सम्मान मे महत्त्वपूर्ण भाषण हुए।

अलीगढ के परमोत्साही वैद्य और जिला वैद्य सम्मेलन के मन्त्री श्रीयुत पडित दीनदयालु जी उपमन्यु वैद्य ने श्री रामनारायण जी के अभिनन्दन मे अपना स्वरचित कवितावद्ध अभिनन्दन पत्र पढा और वैद्य जी को भेट किया।

समारोह के सभापति व्योवृद्ध वैद्यवर वाणीभूषण पण्डित श्री रामचन्द्र जी शास्त्री ने अपने अध्यक्षीय भाषण मे कहा कि इस प्रकार से समाज के उत्थान के लिए और विद्या के प्रचार के लिए महत्त्व पूण और ऐतिहासिक कार्य करने वाले सद् विद्वानो का अभिनन्दन करके अपनी विनम्र कृतज्ञता प्रकट करने की हमारे देश की सास्कृतिक परम्परा बहुत प्राचीन है। वैद्य रामनारायण जी का अभिनन्दन करके हमलोग अपने कर्त्तव्य का ही पालन कर रहे है। इनके जीवन के उत्कृष्ट आयुर्वेद-सेवा के कार्यो से समाज को उठाने की और स्व-हित के लिए कुछ करने की प्रेरणा मिलती है। मै इनकी चिरायु की कामना करते हुए इनके द्वारा आयुर्वेद और वैद्य-समाज के हित के बहुत से वास्तविक कार्य होने की आशा रखता हूँ।

अन्त मे अभिनन्दन का उत्तर देते हुए वैद्य जी ने कहा कि मै आपके यहाँ आकर जितना कृतकृत्य हुआ हूँ, उसको वाणी से व्यक्त नही कर सकता। आपके प्रेम मे मुझ को सच्ची आत्मीयता के दर्शन हो रहे है। यहाँ उपस्थित वैद्य बन्धुओ की इतनी बडी सख्या देखकर मुझको आत्मिक आनन्द हो रहा है। हमलोग इस प्रकार यदा-कदा एकत्र होकर अपने विज्ञान की उन्नति के लिए अपनी समस्याओ

के सुलझाने के लिए विचारो का आदान-प्रदान किया करे तो हममे सगठित होकर कुछ वास्तविक कार्य करने की प्रेरणा जागृत होगी। अलीगढ मे आपलोगो का इतना अच्छा सगठन है, यह हर्ष की बात है। आयुर्वेद की वर्तमान स्थिति का उल्लेख करते हुए वैद्य जी ने कहा कि निश्चय ही यह समय आयुर्वेद के लिए उत्थान पतन का निर्णायक है। मै इस बात मे रचमात्र सदेह नही करता कि आयुर्वेद का भविष्य तो निर्विवाद रूप से असदिग्ध है परन्तु वर्तमान के प्रति सजग न रहकर हम आगे वाली अपनी पीढियो के प्रति बहुत बडा अन्याय करेंगे। एक तथ्य है कि केवल भाषणबाजी और दूसरी पद्धतियो पर आरोप-प्रत्यारोप का समय अब नही है। चिन्ता यह करना है कि आयुर्वेद अपने निजके रूप मे जीवित रहे और फले फूले ! इसके लिए यथार्थ कार्य करने की आवश्यकता है। यथार्थता से भिन्न कार्य करते रहे तो कहा नही जा सकता कि आगामी पीढी मे कोई वैद्य होगा और सभी डाक्टर न होगे। आज तो दशा यह है कि वैद्य जो है वे भी डाक्टर बनते जा रहे है—यह गति कहाँ ले जायगी। वैद्य-समाज को यदि वैद्य बनने की और आयुर्वेद की रक्षा करनी है तो उसको सगठित होना चाहिए और यथार्थ तथा सक्रिय कार्य करना चाहिए। विज्ञान की उन्नति तो अनुसन्धान से होगी, इससे कोई इन्कार नही कर सकता, परन्तु समाज की उन्नति होगी ज्ञान के प्रसार से। जो जिस कार्य को कर सकता है उसे वह काय करना चाहिए। सभी अनुसन्धान के लिए आवाज उठाते रहे तो कुछ काम नही होगा और ज्ञान का स्तर गिरता चला जायगा तो वैद्य समाज जीवित नही रहेगा। इसलिए आज यह आवश्यकता है कि, आयुर्वेदोत्थान और वैद्य समाज के विकास के लिए दोहरे प्रयत्न होने चाहिए। अनुसधान का कार्य सरकार का है और साधनसम्पन्नो का है। उच्च-कोटि के विद्वानो के सहयोग से ही वह हो सकता है। दूसरी बात अनुसन्धान एक-दो दिन या एक-दो वर्ष का काम नही। युगो तक उसकी गति अबाध रहनी चाहिए। उसका कभी कोई अन्त नही है। जरूरत है उसको अबाध चलाते रहने के लिए ऐसे लोगो को बनाते रहने की जो समर्थता-पूर्वक उसको आगे चलाते रहे। लोगो का निर्माण ज्ञान-प्रसार से होगा, इसलिए मै तो वैद्य समाज से पहला निवेदन यही करता हूँ कि आप प्राथमिकता दीजिए अपने शिक्षा के साधनो को दृढ और व्यवस्थित करने वाले प्रयत्नो को। जो लोग अनुसन्धान कर सकते है वे उसमे लग जावे और हमारा समाज लग जावे अनुसन्धान करने वालो का निर्माण करने मे। आपका स्थान बहुत बडा है। इतनी बडी सख्या मे उत्साही वैद्य अन्यत्र सहज ही सुलभ नही। आप-लोगो मे लगन है। अपने यहा एक अच्छा आयुर्वेद विद्यालय स्थापित कीजिए। कार्य करना आरभ कर दीजिए, आपको सब ओर से योग मिलेगा। वैद्य जी ने अन्त मे अभिनन्दन के लिए समारोह-आयोजन करने के प्रति वैद्यगणो का हार्दिक आभार माना और विनम्र कृतज्ञता व्यक्त का।

अन्त मे उपस्थित जनो की सामूहिक स्वल्पाहार गोष्ठी का आयोजन हुआ।

शेषांश]

मेरठ में वैद्य रामनारायण शर्मा का स्वागत

[५७४ पृष्ठ का

पेशा है और उसका उच्च स्थान है। सदाचारी, परसेवी, उदार और विशाल हृदय बनिये। आप जो शिक्षा ले रहे है उसको केवल कमाने के लिए मत समझिये। सेवा की भावना रखेगे और अपनी परम्पराओ पर दृढ रहेगे तो निश्चित रूप से आप सुख-समृद्धि से सम्पन्न होगे। अन्त मे वैद्य जी ने पुन मेरठ के वैद्यजनो के प्रति आभार व्यक्त किया। अन्त में सभापतिपद से बोलते हुए वयोवृद्ध वैद्य प० श्री गणेशदत्त जी शास्त्री ने वैद्य जी के आयुर्वेद-हित कार्यों की विस्तार से चर्चा करते हुए उनकी हार्दिक प्रशसा की। आपने वैद्य समाज से अपील की कि वैद्य जी के प्रयासो के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चले। आयुर्वेद महासम्मेलन की चर्चा करते हुए शास्त्री जी ने कहा कि वह हमारी एक मात्र पुरानी सस्था है, उसमे जो दोष आ गये हैं उनके परिहार की आप मे शक्ति है, सगठित स्वर उठाइए और अधिकारियो को विवश कर दीजिए कि वे कार्य करे या करने दे। अन्त मे पुन वैद्य जी का उल्लेख करते हुए निम्न श्लोक के साथ शास्त्री जी ने अपना भाषण समाप्त किया।

भैषज्य निर्माणकला कलामणि,
सच्छास्त्र साहित्य सुधाकरोऽयम्।
श्री रामनारायण वैद्यवर्य,
चिर चिर जीवतु मेऽभिलाषा ॥

इस समारोह के अतिरिक्त वैद्य जी को मेरठ आयुर्वेदिक कालिज मे अध्यापको द्वारा स्वल्पाहार दिया गया।





ध वन्तरि जयन्ती पर इलाहाबाद म अनष्ठित स्वास्थ्य समारोह की सभा का दश्य

ध व तरि जय ती पर खिदिरपुर (कलकत्ता) म अनष्ठित स्वास्थ्य समारोह





ध वन्तरि जय नी पर काकीनद म अनष्ठित स्वास्थ्य समारोह की सभा के दो दश्य



धन्वन्तरि जयन्ती पर मजफ्फरपुर मे अनुष्ठित स्वास्थ्य-समारोह की सभा का एक दृश्य



धन्वन्तरि जयन्ती पर टीटागढ (२४ परगना) में अनुष्ठित स्वास्थ्य समारोह की सभा का दृश्य

आयुर्वेद-यूनानी को राष्ट्रीय चिकित्सा बनाया जाय

देश भर में स्वास्थ्य-दिवस पर विराट सभाएं

आसवारिष्टों पर मद्य-कर का तीव्र विरोध

महासम्मेलन-विद्यापीठ के सुधार की सर्वत्र मांग

सचित्र आयर्वेद के सचालको की देशव्यापी अपील पर इस वष सम्पूण देश म श्री धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष म समारोहपूवक स्वास्थ्य दिवस मनाया गया। कुछ स्थानो पर तो इस अवसर पर स्वास्थ्य-सप्ताह का आयोजन किया गया जिसम सप्ताह भर जनता म स्वास्थ्य रक्षण के नियमो का प्रचार किया गया और नि शुल्क चिकित्सा एव परामश के केन्द्र चलाय गय।

धन्वन्तरि जयन्ती के दिन श्री वद्यनाथ आयर्वेद भवन प्राइवट लि० के देशव्यापी केन्द्रो के सहयोग म प्राय तीन सौ से ऊपर प्रमख नगरो म सवसाधारण नागरिको एव वद्य हकीमो की वहत सभाओ का आयोजन किया गया जिनमे स्थान-स्थान पर प्रमख नागरिको एव आयर्वेद के प्रभावशाली विद्वानो न भाग लिया। इन सभाओ म जन-नताओ नागरिक प्रतिनिधियो एव विद्वान वद्य हकीमो के ओजस्वी एवं महत्त्वपूण भाषण हुए। भाषणो में आयुर्वेद-यूनानी की समन्वयात्मक विशषताओ जन-स्वास्थ्य की स्थिति और तदर्थ प्रयासो की अपूणता देशी चिकित्सा पद्धतियो के विकास की रूपरेखा आयुर्वेदिक आसव अरिष्टो पर मद्य-कर लगाय जान की अविचारिता एव अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन तथा विद्यापीठ की स्थिति इत्यादि विषयो पर अधिकारी वक्ताओ द्वारा गम्भीर एव सतक प्रकाश डाला गया। देश के हर प्रान्त के प्रमुख नगरो म हुइ इन सावजनिक तथा वैद्य-हकीम सभाओ म सवसम्मति से जन-स्वास्थ्य के रक्षण म आयुर्वेद-यूनानी का उपयोग करन देशी चिकित्सा-पद्धति के अनुसन्धान का वास्तविक काय करन आसवारिष्टो पर मद्यकर कानून का विरोध यूनानी समन्वित आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति स्वीकार करन तथा आयर्वेद महासम्मेलन एव विद्यापीठ का सुधार करके उसके सचित कोष से विद्यालय स्थापित करन विषयक प्रस्ताव स्वीकार किय गय। सभाओ म स्वीकृत प्रस्तावो की प्रतिया महामान्य राष्ट्रपति केन्द्रीय स्वास्थ्य-मत्री माननीय करमरकरजी केन्द्रीय वित्त-मत्री प्रादेशिक स्वास्थ्य-मत्रियो तथा महासम्मेलन कार्यालय को स्थान-स्थान से विषयानुसार प्रषित की गयी है।

हमारे पास प्रकाशनाथ हर स्थान से सभाओ का विस्तृत विवरण उपस्थिति के हस्ताक्षर वक्ताओ के भाषण एव प्रस्तावो की प्रतिया आयी हुई ह। परन्तु सभी सभाओ के विवरण और प्रस्तावो को यथारूप प्रकाशित करना स्थानाभाव के कारण सम्भव नही। इस कारण हम सभी स्थानो की सभाओ म स्वीकृत प्रस्तावो का मूलरूप यहाँ प्रकाशित कर रह है जिनम सभी स्थानो के प्रस्तावो के भाव सुरक्षित है।

श्री धन्वन्तरि-जयन्ती पर स्वास्थ्य-दिवस की सभाओं में स्वीकृत प्रस्ताव

प्रस्ताव सख्या १—यह सभा देश की जनता के शारीरिक स्वास्थ्य की गिरती हुई अवस्था को नितान्त चिन्तनीय समझती है और यह अनुभव करती है कि स्वाधीनता प्राप्ति के उपरान्त देश के अन्य निर्माण कार्यों के प्रति जितना अधिक मनोयोगपूवक ध्यान दिया गया है उतना जन-स्वास्थ्य के प्रति रचनात्मक काय नही किया गया। यह खेद की बात है कि जन-स्वास्थ्य जैसे गम्भीरतम विषय को अपेक्षित महत्त्व नही दिया जाता। परिणामत सावजनिक रूप से देश की जनता का स्वास्थ्य एव रोग रोधिनी शक्ति का दुखद रूप से ह्रास हो रहा है। अत यह यह सभा देश के जनप्रिय नताओ भारत के महामान्य राष्ट्रपति केन्द्रीय तथा प्रादेशिक सरकारो के स्वास्थ्य मन्त्रियो तथा समस्त सम्बन्धित व्यक्तियो से इस प्रस्ताव द्वारा साग्रह प्रार्थना करती है कि इस प्रसग पर देश के

समस्त राजनैतिक एव सामाजिक सगठनो के प्रतिनिधियो की एक परिषद गम्भीरतापूर्वक एव राष्ट्रीय स्तर पर विचार करे और जन-स्वास्थ्य के विषय मे भारतीय सिद्धान्त के आधार पर स्पष्ट राष्ट्रीय स्वास्थ्य-नीति का निर्धारण किया जाय।

यह सभा स्वास्थ्य-सरक्षण के प्रति साधारण जनता मे व्याप्त उदासीनता तथा रोगनिरोधक स्वाभाविक शक्ति सुरक्षित रखने के प्रयासो मे सरकार और जनता के बीच आवश्यक सहयोग के अभाव की स्थिति पर अत्यन्त चिन्ता प्रकट करती है और केन्द्रीय सरकार से प्रार्थना करती है कि स्वास्थ्य-सरक्षण के विषय मे पाश्चात्य देशो की नकल की नीति का परित्याग करके राष्ट्रीय भावना के साथ प्रयास किये जावे।

इस सभा की सम्मति मे सरकार की ओर से वर्तमान मे विदेशी शासको की परम्पराओ पर ही स्वास्थ्य विभाग के जो कार्य हो रहे है वे बहुत अधिक खर्चीले है और अधिक प्रभावकर नही है। अत यह सभा केन्द्रीय सरकार से आग्रह करती है कि देश भर मे स्वास्थ्य विभागो की कार्य-प्रणाली का पुनर्गठन किया जाय और रोगनिरोधक कार्यों मे आयुर्वेदीय स्वास्थ्य-सिद्धान्तो को अधिकाधिक महत्त्व दिया जाय जो कि भारतीय सस्कृति और जन-स्वास्थ्यमय जीवन में बीजरूप मे व्याप्त होने के कारण सहज ही ग्राह्य और व्यापक प्रभावकारी सिद्ध होगे।

इस सभा का आग्रह है कि प्रतिवर्ष सरकार और जनता के सहयोग से श्री धन्वन्तरि-जयन्ती के अवसर पर अखिल भारतीय स्वास्थ्य-सप्ताह का आयोजन किया जाया करे, और केन्द्रीय सरकार स्वाधीनता दिवस और गणतन्त्र दिवस की भाँति ही श्री धन्वन्तरि-जयन्ती को राष्ट्रीय स्वास्थ्य-दिवस का अवकाश स्वीकृत करे।

प्रस्ताव सख्या २—नागरिको की यह सार्वजनिक सभा इस बात पर खेद प्रकट करती है कि स्वाधीनता के बाद दस वर्षों के लम्बे समय में भी देश की राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति का निर्धारण नही किया जा सका। यह सभा देशी चिकित्सा-पद्धतियो को ही देश की जनता, वातावरण, जलवायु और देश की आर्थिक समृद्धि के लिये सर्वथा अनुकूल समझती है। अत यह सभा केन्द्रीय तथा प्रादेशिक सरकारो से साग्रह निवेदन करती है कि आयुर्वेद-यूनानी का समन्वय करके पाश्चात्य विज्ञान के आवश्यक अग ले कर यथाशीघ्र भारतीय राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति को स्वीकार किया जाय। इस सभा की सम्मति मे देश की जनता महँगी चिकित्सा पद्धति को अगीकृत करने की स्थिति में नही है। अत देशी चिकित्सा-पद्धतियो को ही प्रश्रय दिया जाय और उनका अधिकाधिक विकास किया जाय।

इस सार्वजनिक सभा की सम्मति मे आयुर्वेद-यूनानी चिकित्सा पद्धतियो के विकास के निमित्त सरकार की ओर से वास्तविक प्रयास किया जाना चाहिए। केन्द्रीय अनुसन्धानशाला के द्वारा आयुर्वेद के ढग पर ही अनुसन्धान-कार्य होना चाहिए। अनुसन्धान के नाम पर आयुर्वेदिक औषधियो को एलोपैथी मे मिलाने की नीति की यह सभा निन्दा करती है।

यह सभा देशी चिकित्सा-पद्धति के विकास के लिये यह आवश्यक समझती है कि देशी चिकित्सा पद्धति के शिक्षण के लिये यथाशीघ्र ठोस पाठ्यक्रम निर्धारित किया जाय और प्रत्येक जिले मे कम-से-कम एक आयुर्वेद विद्यालय तथा एक साधनसम्पन्न आयुर्वेदिक चिकित्सालय की स्थापना की जाय। प्रत्येक राज्य मे स्वतन्त्र आयुर्वेद विभाग स्थापित हो और उनका कार्य आयुर्वेद-ज्ञाता के अधीन हो। आयुर्वेद से सम्बन्धित सब कार्य स्वतन्त्र आयुर्वेदज्ञ द्वारा ही सचालित हो।

पचवर्षीय योजनाओ के अधीन समस्त विकास खण्डो मे वैद्य-हकीमो को नियुक्त किया जाय और वैद्य-हकीमो को डाक्टरो के समान ही स्थान दिया जाय।

यह सभा केन्द्रीय सरकार के स्वास्थ्य विभाग से पुन यह आग्रह करती है कि यूनानी मिश्रित आयुर्वेद को शीघ्र राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति स्वीकार किया जाय।

प्रस्ताव सख्या ३—श्री धन्वन्तरि-जयन्ती पर आयोजित वैद्य-हकीमो की यह सभा केन्द्रीय स्वास्थ्य-मन्त्री के रुप में माननीय डी० पी० करमरकर को पाकर हर्ष और सन्तोष व्यक्त करती है तथा केन्द्रीय एव प्रादेशिक सरकारो द्वारा आयुर्वेद-यूनानी के हित में किये गये अच्छे राजकीय कार्यों की प्रशसा करती है।

साथ ही यह सभा इस बात पर गम्भीर खेद प्रकट करती है कि देशी चिकित्सा-पद्धतियो के लिये कोई नियम बनाते समय सम्बन्धित वास्तविक वैज्ञानिको से सम्मति नही ली जाती। परिणामत कुछ ऐसे नियम बन गये है जिनसे देशी चिकित्सा-पद्धतियो का विकास अवरुद्ध हो

कर उनके अस्तित्व पर घातक प्रहार हो रहा है। आसव-अरिष्टो को मद्य की श्रेणी मे लेनेवाले कानून की यह सभा तीव्र निन्दा करती है और यह अनुभव करती है कि आसव-अरिष्टो को मद्य की श्रेणी मे लिया जाना कदापि योग्य नही है। ऐसे कानून के कारण देशी औषधि के चिकित्सा-क्षेत्र मे अवरोध उत्पन्न हुआ है। अत यह सभा सरकार से आग्रह करती है कि इस कानून पर पुन विचार कर आसव-अरिष्टो पर लगे मद्य-प्रतिबन्धो को अविलम्ब वापस लिया जाय।

प्रस्ताव संख्या ४—श्री धन्वन्तरि-जयन्ती पर आयोजित यह सभा अखिल भारतीय महासम्मेलन की वर्तमान शिथिल और निष्क्रिय अवस्था पर गम्भीर खेद प्रकट करती हुई समय की परिस्थितियो के अनुसार सुदृढ, सुव्यवस्थित और सक्रिय सगठन की आवश्यकता अनुभव करती है। अत यह सभा आयुर्वेद के प्रमुख एव प्रतिभाशाली विद्वानो से आग्रह करती है कि वे यथाशीघ्र सामूहिक रूप से महासम्मेलन की स्थिति पर विचार करके उसके सुधार का प्रयत्न करे। महासम्मेलन को योग्य, निस्वार्थी एव सच्चे आयुर्वेद हितैषी समाज-सेवियो के हाथ मे दे कर उसको आयुर्वेद-जगत की वास्तविक प्रतिनिधि-सस्था के रूप मे प्रस्तुत करे, ताकि आयुर्वेद के लिये सामूहिक प्रयत्न सम्भव हो।

यह सभा अखिल भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ की गति-विधि पर भी असन्तोष प्रकट करती है। विद्यापीठ की ऐसी परीक्षाओ को चलाने मे यह सभा कोई हित नही समझती जो राजमान्य नही है। वैद्य-समाज के विकास के लिये यह सभा इस बात की गम्भीर आवश्यकता अनुभव करती है कि आयुर्वेद के रचनात्मक शिक्षण के लिये एक सर्वसाधन सम्पन्न आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थापना का आयोजन वैद्यो की ओर से शीघ्र ही केन्द्र-स्थान मे किया जाना चाहिए। इस सभा की सम्मति मे अखिल भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ का समस्त सचित कोष इस विद्यालय की योजना मे ही लगना चाहिए, क्योकि मूलन महासम्मेलन और आयुर्वेद विद्यापीठ की स्थापना का उद्देश्य ही महाविद्यालय का आयोजन कर वैद्य-समाज एव आयुर्वेद का विकास करना रहा है।

प्रस्ताव संख्या ५—यह सभा प्रस्तावित करती है कि सरकार द्वारा तथा भारतीय चिकित्सा परिषद द्वारा सचालित आयुर्वेदिक विश्वविद्यालयो मे एम० ए० एस०, ए० एम० एस०, बी० आई० एम० एस० आई० एम० बी० एस० आदि-आदि उपाधिया न दी जा कर आयुर्वेदाचार्य, आयुर्वेद-रत्न, आयुर्वेद शिरोमणि आदि उपाधियाँ दी जावे जिससे आयुर्वेद का अध्ययन किये हुए छात्र अपने को डाक्टर श्रेणी मे घोषित न कर आयुर्वेदाचार्य लिखने मे गौरव अनुभव करे तथा आयुर्वेद का सम्मान बढ़े। छात्रो के लिये प्रवेश-परीक्षा मे सस्कृत अनिवार्य विषय होना चाहिए जिससे आयुर्वेदीय विश्वविद्यालयो मे आर्ष ग्रन्थो का अध्ययन और अनुशीलन आवश्यक विषय हो।

उत्तर प्रदेश की सभाओं का संक्षिप्त विवरण

आगरा में विराट सभा

स्वास्थ्य दिवस के उपलक्ष मे आगरा के 'अचल-भवन' में नागरिको एव वैद्य-हकीमो की विराट सभा सुविख्यात जन-सेवी श्रीयुत् अचलसिहजी सदस्य लोकसभा के सभापतित्व में सम्पन्न हुई। आरम्भ मे बमरौली निवासी श्री पन्नालालजी मीतल ने आयुर्वेद पर कविता पाठ किया। वैद्य शास्त्री श्री प्रभुदयालुजी उपाध्याय ने श्री धन्वन्तरि-जयन्ती की महत्ता पर प्रकाश डाला। जिला वैद्य सभा आगरा के मन्त्री श्रीयुत् वैद्य रणवीरजी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य द्वारा सस्कृत पद्यो मे श्री धन्वन्तरि-स्तवन किया गया। फिरोजाबाद के वयोवृद्ध वैद्यजी ने मसूरिका रोग पर अनुभूत आयुर्वेद औषध 'सूर्यमुखी' का प्रदर्शन किया और इसके स्वानुभूत चमत्कारिक प्रयोगो का विवरण उपस्थित समुदाय को बताया।

जिला वैद्य सभा के प्रधान मन्त्री श्री अविनाशचन्द्रजी बसल ने आयुर्वेद की वैज्ञानिकता पर विशद् प्रकाश डाला और कहा कि विज्ञान कभी पूर्ण नही होता। उसमे विकास का क्रम निरन्तर चलता रहता है। आयुर्वेद सम्पूर्ण पैथियो का जन्मदाता है और आज वह अनुसन्धान की प्रतीक्षा मे है। आज भी उसमे जनता के स्वास्थ्य की रक्षा की शक्ति है।

आयुर्वेदाचार्य श्री प्रभुचन्द्रजी एम० ए० ने श्री धन्वन्तरि-स्तवन में सुन्दर कविता का पाठ किया। आयुर्वेदाचार्य

"आज अपनी सरकार है और वह पचवर्षीय योजना में आपका सहयोग चाहती है। विद्वान् वैद्यो का एक प्रतिनिधि-मण्डल मेरे साथ केन्द्रीय स्वास्थ्य मन्त्री माननीय करमरकरजी से मिले, उनके सामने आयुर्वेद की वास्तविक स्थिति रखी जाय, तो मैं विश्वास दिलाता हूँ कि आपकी कठिनाइयाँ अवश्य दूर होगी।"

—श्रीयुत् अचलसिहजी, सदस्य, लोकसभा, दिल्ली

श्री सत्येन्द्रनाथजी ने श्री धन्वन्तरि-जयन्ती को स्वास्थ्य-दिवस के रूप में मनाने की परम्परा पर बल दिया और 'अतिभूत दयाप्रति' के उपदेश की महत्ता पर प्रकाश डाला। आपने जन-स्वास्थ्य की गिरती हुई अवस्था पर चिन्ता व्यक्त की और कहा कि सरकार को वेजिटेबल तेल पर रोक लगानी चाहिए तथा शुद्ध दूध-घृत और रसायन के प्रचार पर ध्यान देना चाहिए।

आयुर्वेदाचार्य श्रीयुत् ब्रह्मानन्द जी दीक्षित ने विस्तृत प्रस्तावना के साथ प्रथम प्रस्ताव प्रस्तुत किया। आपने कहा कि देश मे कुष्ठ, अस्थिक्षय, उन्माद एव केसर (अर्बुद) जैसे भयकर रोगो का प्रसार हो रहा है। इस दुखद प्रसार को आयुर्वेद की सहायता से रोका जा सकता है। आपने बताया कि अर्बुद का एक स्वरूप ऐसा भी है जो न बढता है और न पकता है। इस सम्बन्ध मे अनुसधान किया जाना चाहिए। प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए दीक्षित जी के यह सुझाव दिया कि जन-स्वास्थ्य की समस्या पर विचार करने के लिए आयुर्वेद के शीर्षस्थ प्रतिनिधियो के साथ एक राष्ट्रीय स्वास्थ्य-समिति का निर्माण किया जाना चाहिए। आयुर्वेदाचार्य पण्डित शीतल प्रसाद जी शर्मा ने सक्षिप्त किन्तु प्रभावपूर्ण वक्तृता के साथ श्री दीक्षित जी के प्रथम प्रस्ताव का प्रबल समर्थन किया। आपने कहा कि सरकार को चाहिए कि स्वास्थ्य-सरक्षण के तरीको मे आयुर्वेदसम्मत सिद्धान्तो का व्यापक प्रचार करना चाहिए। वैद्यवर श्रीयुत् शिरोमणि जी ने भी प्रस्ताव का समर्थन किया और इस बात पर बल दिया कि नागरिक जनता मे विश्वस्त औषधियो द्वारा आयुर्वेद के प्रति चिर विश्वास जागृत करने का वैद्यो को विशेष प्रयास करना चाहिए। आयुर्वेद के प्राचीन शल्यशास्त्र (सर्जरी) के विकास के प्रति आयुर्वेद जगत को सत्वर ध्यान देना चाहिए।

दूसरा प्रस्ताव उत्तर प्रदेशीय इण्डियन मेडिसिन बोर्ड लखनऊ के सदस्य और आगराक्षेत्र के प्रभावशाली वैद्य श्रीयुत् प्रयागदत्त जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य ने प्रस्तुत किया। आपने एलोपैथी मे आयुर्वेदीय औषधियो के रूपान्तर की तीव्र निन्दा की। सरकार द्वारा अनुसन्धान की आयोजना कर आयुर्वेद एव यूनानी पद्धतियो के सम्मिलित विकास किये जाने पर आपने बल दिया। आपने आसव-अरिष्टो को मद्यो की श्रेणी मे लेकर साधारण वैद्यो तक को कठिनाई में डाल देने की नीति की भी कड़ी निन्दा की और एक उद्‌बोधक कविता द्वारा वैद्य-समाज को सगठित रूप से उठकर अपने हितो के लिए सजग हो जाने का आह्वान किया। इस प्रस्ताव का अनुमोदन पण्डित अम्बिकादत्त जी दीक्षित शास्त्री आयुर्वेदाचार्य ने किया। आपने स्वाधीन भारत की राष्ट्रीय सरकार द्वारा देशी चिकित्सा-पद्धतियो के विकास पर पूर्ण ध्यान न दिये जाने पर दु ख प्रकट किया। श्री ओमप्रकाश जी शास्त्री ने प्रस्ताव का समर्थन करते हुए मार्मिक शब्दो मे सरकार से अपील की आयुर्वेद-यूनानी को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के रूप मे स्वीकार करे।

आसव-अरिष्टो पर मद्य-कर लगाने और अन्य कानूनो द्वारा देशी चिकित्सा-पद्धतियो के विकास मे अवरोध करने के बारे मे तीसरा प्रस्ताव श्री युत् जगन्नाथ प्रसाद जी विद्याश्रयी आयुर्वेदाचार्य ने प्रस्तुत किया। इस प्रस्ताव का अनुमोदन हकीम सैयद बकार अहमद कामरी ने किया और प्रभावपूर्ण शब्दो मे आसव-अरिष्टो पर मद्य-कर लगाने की निन्दा करते हुए सरकार से तुरन्त पुनर्विचार कर कानून को वापस लेने की अपील की। वैद्य सत्येन्द्रनाथ जी आयुर्वेदाचार्य ने भी इस प्रस्ताव का प्रबल शब्दो मे समर्थन किया। आपने कहा कि आयुर्वेद के अस्तित्व पर कुठाराघात करने वाले इस कानून को वापस कराने के लिए वैद्यो को जनता से सहयोग लेकर आन्दोलन करना चाहिए।

चौथा प्रस्ताव जिसमे आयुर्वेद महासम्मेलन की अवस्था को सुधारने के आग्रह के साथ विद्यापीठ के सचित कोष से

आयुर्वेद महामण्डल तथा विद्यापीठ ने विश्व-विद्यालय की स्थापना में उचित कार्य न करके विघ्न ही डाला। अब समय है कि केन्द्र मे आयुर्वेद का विद्यालय होना चाहिए और वह काम महासम्मेलन को करना चाहिए। विद्यापीठ को उसी विद्यालय मे विलीन हो जाना चाहिए। इसके लिए महासम्मेलन का योग्य व्यक्तियो के हाथो मे आना आवश्यक है।

—वैद्य रणवीर सिंह शास्त्री एम० ए०, आयुर्वेदाचार्य

केन्द्र मे आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थापना का आग्रह किया गया था—आगरा क्षेत्र के सुविख्यात आयुर्वेद-विद्वान वैद्य श्री सुखदेव जी शास्त्री एम० ए० आयुर्वेदाचार्य ने अपनी विश्लेषणात्मक वक्तृता के साथ प्रस्तुत किया। आपने कहा कि यह युग सगठन की महत्ता का है। जिस समाज का सगठन जर्जर है, वह समाज विकास क्योकर कर सकता है। वैद्य-समाज का सगठन आयुर्वेद महासम्मेलन है, परन्तु उसकी अवस्था जितनी शोचनीय है, वह कहा नही जा सकता। विद्यापीठ शिक्षण के लिए बहुत कार्य कर सकता था, परन्तु न हो सका। अब विद्वान वैद्यो को ध्यान देकर इस सस्था का शीघ्र सुधार करना चाहिए और उचित रूप से सचालन कर दृढ सगठन बनाना चाहिए। प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए वैद्यवर श्रीयुत् रणवीर जी शास्त्री एम० ए० आयुर्वेदाचार्य ने कहा कि यह कितने खेद की बात है कि लाखो की सख्या वाले इस वैद्य-समाज के पास अपना निज का एक व्यवस्थित विद्यालय नही है। आयुर्वेद महामण्डल और विद्यापीठ ने—जिसका कि स्थापन ही इसी उद्देश्य से किया गया था— अपने लक्ष्य की दिशा मे क्या कार्य किया है ? इतनी बडी सस्था कोई ठोस कार्य न कर सके, यह लज्जाजनक बात है। वर्तमान नेतृत्व मे महासम्मेलन और विद्यापीठ ने विश्वविद्यालय की स्थापना मे उचित कार्य न करके विघ्न ही डाले है। अब समय है कि केन्द्र मे आयुर्वेद का विद्यालय होना ही चाहिए और यह कार्य्य महासम्मेलन को करना चाहिए। विद्यापीठ को उसी विद्यालय मे विलीन हो जाना चाहिए। इसके लिए महासम्मेलन का योग्य व्यक्तियो के हाथो मे आना नितान्त आवश्यक है। आयुर्वेद के विद्वानो को इस दिशा मे अविलम्ब ध्यान देकर उचित कदम उठाना चाहिये। वैद्यराज श्री जगन्नाथ प्रसाद जी विद्याश्रयी आयुर्वेदाचार्य ने प्रस्ताव का समर्थन किया और वैद्य श्री प्रभुचन्द्र जी एम० ए० ने अनुमोदन करते हुए कहा कि आयुर्वेद विद्यालय के विषय में महासम्मेलन एव विद्यापीठ की अकर्मण्यता वैद्य-समाज के लिए चुनौती है, जिसके लिए आयुर्वेद-जगत को शीघ्र सक्रिय होना चाहिए।

आगरे की सभा में एक प्रस्ताव आयुर्वेद स्नातको की उपाधियो के सम्बन्ध मे भी स्वीकृत किया गया, जिसको श्रीयुत् पण्डित मनोहरलाल जी मिश्र साहित्यायुर्वेदरत्न ने प्रस्तुत किया। आचार्य श्री अम्बिका चरण जी दीक्षित शास्त्री ने प्रस्ताव का अनुमोदन किया एव वैद्यराज प० रघुवरदयालु जी उपाध्याय ने प्रस्ताव का समर्थन किया। सभा मे सभी प्रस्ताव सर्वसम्मति से करतलध्वनि के बीच स्वीकार किये गए।

अन्त मे सभापति-पद से अध्यक्षीय भाषण देते हुए उत्तर प्रदेश के जनप्रिय सार्वजनिक नेता श्रीयुत् सेठ अचल सिहजी, सदस्य लोक सभा ने कहा कि आज का युग सगठन का और काम करने का है। देशी चिकित्सा-पद्धतियो को जितना प्रोत्साहन मिलना चाहिए था, उतना नही मिला। इसका प्रधान कारण यही है कि इस क्षेत्र मे सगठित शक्ति से रचनात्मक काम नही किया गया। आपने वैद्य-हकीमो को सम्बोधित करते हुए आग्रह किया कि आपलोग अपने सगठन को सक्रिय और सुदृढ कीजिए। आपने सरकार की रुचि का उल्लेख करते हुए कहा कि आज अपनी सरकार है और वह पचवर्षीय योजना मे आपलोगो का बहुत सहयोग चाहती है। जन-स्वास्थ्य और चिकित्सा के विषय मे आप सरकार को बहुत बडा सहयोग दे सकते है। विद्वान वैद्यो का एक प्रतिनिधिमण्डल मेरे साथ केन्द्रीय स्वास्थ्य-मत्री माननीय करमरकर जी से मिले। उनके सामने आयुर्वेद की वास्तविक स्थिति रखी जाय तो मै विश्वास दिलाता हूँ कि आपकी कठिनाइयाँ अवश्य दूर होगी। उपस्थित जन समुदाय को सम्बोधित करते हुए श्री अचलसिह जी ने कहा कि स्वास्थ्य के विषय मे आप लोगो को सदा सचेष्ट रहा चाहिए। पराधीनता की अवस्था मे दूध-घृत का अभाव होगा। सरकार जानती है कि वेजिटेवल तेलो से हानि होती है। इनमे रग मिलाने के लिए कार्यवाही की जायगी। जनता को अपव्यय की भावना से दूर रहना चाहिए। पशुपालन की प्रवृत्ति बढनी चाहिए। आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थापना के प्रयत्न की आपने सराहना की और कहा कि यदि वैद्य वर्ग इस दिशा मे सगठित होकर कार्य करे तो मै भरसक सहयोग दूँगा।

धन्यवाद और प्रसाद वितरणोपरात सभा समाप्त हुई। सभा मे आगरा और आस-पास के सभी प्रमुख वैद्य-हकीम एव बडी सख्या मे नागरिक उपस्थित हुए।

शीशक (कानपुर) में सभा

शीशक तहसील के वयोवृद्ध वैद्यराज पण्डित बालदत्त जी त्रिपाठी आयुर्वेदशास्त्री के सभापतित्व मे स्वास्थ्य दिवस का समारोह मनाया गया। तहसील वैद्यसभा के

मन्त्री प० काशी प्रसाद जी मिश्र वैद्य ने वेद-मन्त्रो से पूजन किया। सभा मे श्रीयुत् प० रामभद्र जी दुबे, श्री मान-सिंह जी चौहान, प० रामभद्र जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य, प० काशी प्रसाद जी, डाक्टर वीरेन्द्रनाथ त्रिपाठी ए० एम० एस०, प० लक्ष्मीनारायण जी चतुर्वेदी ए० एम० एस०, आचार्य श्री शातिदास ब्रह्मचारी, इत्यादि विद्वानो के भाषण हुए। सभा मे उपस्थित प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत किये गए। श्री काशीप्रसाद जी दुबे ने महासम्मेलन सम्बन्धी प्रस्ताव पेश करते हुए कहा कि विद्यापीठ की स्थापना का उद्देश्य ही महाविद्यालय का आयोजन एव वैद्य-समाज का शैक्षणिक विकास करना था। टाउन एरिया के चेयरमैन श्री श्यामबिहारीलाल जी त्रिपाठी एव जिले के कर्मठ नेता श्रीयुत् नित्यानन्द जी पाण्डेय ने जन-स्वास्थ्य के लिए आयुर्वेद के प्रति सरकार का ध्यान आकर्षित करने तथा धन्वन्तरि महोत्सव को स्वास्थ्य-सप्ताह के रूप मे मनाने की योजना का महत्त्व बताया। सभा मे श्री शिवशर्मा-काण्ड में सचित्र आयुर्वेद की विजय की भी चर्चा हुई और तदर्थ वैद्य रामनारायण शर्मा को बधाई दी गई। सभा मे पर्याप्त सख्या मे जनता एव वैद्यगण उपस्थित हुए जिनमे निम्न के नाम विशेष उल्लेखनीय है —

प० बालादत्त त्रिपाठी वैद्यशास्त्री, प० काशीप्रसाद मिश्र वैद्य, प० रामनारायण अवस्थी वैद्य, प० कन्हैयालाल शुक्ल वैद्य, प० रामावतार तिवारी वैद्य, प० काशीराम द्विवेदी (मेहरा), प० रामगोपाल वैद्य (जलिहारपुर) प० जगन्नाथ त्रिपाठी वैद्य, प० शिवबालकराम मिश्र वैद्य प० रामदत्त दुबे वैद्य, श्री विश्राम सिह, श्री सीताराम, श्री रामसेवक अवस्थी, श्री गिरिजाशकर शुक्ल, श्री गोवर्द्धन प्रसाद शुक्ल, श्री मान सिह चौहान, श्री रामप्रसाद शास्त्री, प० केदार नाथ त्रिपाठी, प० सूरज प्रसाद अवस्थी (अकारू), श्री शान्तिदास ब्रह्मचारी, आचार्य श्री लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी एम० ए०, डा० वीरेन्द्रनाथ त्रिपाठी ए० एम० एस०, श्री नित्यानन्द पाण्डेय, श्री सूबेदार प्रसाद अवस्थी वैद्य (जलिहारपुर), श्री० जे० पी० सिंह, श्रीश्यामबिहारी लाल त्रिपाठी वैद्यशास्त्री, श्री छोटे लाल जी वैद्य (रसूलाबाद), प० मुरलीधर जी वैद्य, प० देशराज जी वैद्य शास्त्री (भुप-लियापुर) इत्यादि।

सुल्तानपुर (उ० प्र०) में सभा

कैलाश औषधालय के भवन मे श्रीधन्वन्तरि जयन्ती का उत्सव दिन भर विभिन्न कार्यक्रमो द्वारा मनाया गया। सध्या को विराट सभा का आयोजन हुआ, जिसमें बडी सख्या मे वैद्य-हकीमो के अतिरिक्त स्थानीय गण्यमान्य नागरिक उपस्थित हुए। श्री डाक्टर हरनाथ जी गर्ग के प्रस्ताव एव श्री उमाकान्त जी मालवीय के समर्थन पर जिले के सुविख्यात पुराने वैद्यवर पडित बलिराम जी त्रिपाठी वैद्य शास्त्री ने अध्यक्ष का आसन ग्रहण किया। श्री सुभाषचन्द्र जी मिश्र ने धन्वन्तरि-वन्दना की एव वैद्य श्री रामदेव मिश्र ने स्वागत-भाषण पढ़ा। मधुसूदन विद्यालय के प्रिंसिपल एव प्रकाण्ड विद्वान प० शकरनाथ जी शुक्ल का बडा ओजस्वी भाषण हुआ। आपने कहा ! - आयुर्वेद विज्ञान इतना ऊँचा है कि उसको उपेक्षित - किया जा सकता। वास्तव मे इसके विकास-उत्थान के लिए तीन पक्ष है—सरकार, जनता और वैद्य। यदि य[illegible] तीनो अपने कर्त्तव्य का थोडा भी ध्यान रखे तो आ[illegible] अपनी चरम सीमा पर पुन पहुँच सकता है। उपस्थित किये गये प्रस्तावो और उनके समथन मे अन्य कई वक्ताओ के महत्त्वपूर्ण भाषण हुए और प्रस्ता[illegible] सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए। सभापति जी ने अपने भाषण मे आयुर्वेद विद्यालय की स्थापना पर बल दिया और वैद्यो तथा जनता से आयुर्वेदोत्थान मे कन्धा मिलाकर प्रयत्न करने की अपील की।

गोरखपुर में सभा

उर्दू बाजार स्थित श्री महाबीर औषधालय द्वारा स्वास्थ्य दिवस की सभा करने का आयोजन हुआ। सभा कालीबाडी के विस्तृत प्रागण मे हुई जिस मे नगर वैद्य मण्डल के सभी सदस्य तथा जनता के प्रमुख जन उपस्थित हुए। इस अवसर पर श्री धन्वन्तरि पूजन एव हवन किया गया। सभा का सभापतित्व वैद्यराज पण्डित रामचन्द्र जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य ने किया। वैद्य प० श्रीपति जी शर्मा, प० रामनिवास जी दूबे, श्रीयुत लालजी, प० श्रीयुत् सत्यनारायण जी शर्मा आयुर्वेदालकार आदि विद्वानो के ओजस्वी भाषण हुए। सभा मे उपस्थित किये गये सभी प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार किये गये।

मैनपुरी में जनसभा

श्रीधन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष में आयोजित स्वास्थ्य दिवस के कार्यक्रम में २१ अक्टूबर को मैनपुरी मे ओ३म् भण्डार के तत्वावधान में एक विशाल जनसभा का आयोजन

हुआ। सभा मे मैनपुरी और आसपास के वैद्य-हकीमो ने बडी सख्या में उपस्थित होकर उत्साह प्रकट किया। जनता की उपस्थिति भी उल्लेखनीय थी। सभापतित्व मैनपुरी नगरपालिका के चेयरमैन महोदय ने किया। नगरपालिका के नव-निर्वाचित समस्त सदस्यो की उपस्थिति महत्वपूर्ण रही जिन्होंने अपने भाषणो मे मैनपुरी नगरपालिका क्षेत्र मे आयुर्वेद को भरपूर प्रोत्साहन देने का आश्वासन दिया। जन-स्वास्थ्य के विषय मे अनेक ओजस्वी भाषण हुए। आयुर्वेदीय विद्वानो ने अपने भाषणो मे अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन एव विद्यापीठ की वर्तमान अवस्था पर खेद - कमश एव उत्तर-प्रदेशीय वैद्य-सम्मेलन को गतिमान करने पर भी जोर दिया। यह इच्छा व्यक्त की कि प्रदेशीय सम्मेलन का अधिवेशन मैनपुरी मे किया जाय। सभा मे उपस्थित किये गये सभी प्रस्ताव सवसम्मति से पूर्वक स्वीकार किये गए।

कासगज में सभा

कासगज मे श्री लखपतराम गुप्त के प्रयत्नो से श्री धन्वन्तरि जयन्ती समारोह का भव्य आयोजन हुआ। वैद्यराज प० श्री रामगोपाल जी की अध्यक्षता मे सभा हुई सभी गण्यमान्य वैद्य उपस्थित हुए। वक्ताओ ने जनस्वास्थ्य, आयुर्वेद-यूनानी चिकित्सा, सरकार के कार्य और महासम्मेलन तथा वैद्यो के सगठन विषयो पर महत्वपूर्ण विचार व्यक्त किये। सभा मे प्रस्ताव उपस्थित किये गये जो सर्वसम्मति से स्वीकार किये गए।

दौलतपुर (बुलन्दशहर) में सभा

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के दौलतपुर बिक्रीकेन्द्र मे श्री धन्वन्तरि जयन्ती पर सार्वजनिक स्वास्थ्य-समारोह मनाया गया। श्रीयुत् वैद्य शम्भूदत्त जी शर्मा के सभापतित्व में कार्यवाही सम्पन्न हुई। सभी प्रमुख वैद्यो एव नागरिको ने सभा मे उपस्थित होकर उत्सव को सफल बनाया। कविराज श्री कन्हैयालाल जी 'बेचैन' की कविता एव भाषणो का उपस्थित समुदाय पर प्रभाव पडा। प्रस्ताव स्वीकृत किये गये।

खरेला (उ० प्र०) में सभा

खरेला जिला हमीरपुर मे वैद्य श्री रामसहाय द्वारा श्री धन्वन्तरि जयन्ती का विशेष समारोह स्वास्थ्य-दिवस के रूप में किया गया। सभास्थल की सजावट और बिजली की जगमगाहट मे श्रीधन्वन्तरि भगवान की झाँकी दर्शनीय थी। वैद्यसभा खरेला एव आस-पास के सभी वैद्यो ने समारोह मे उत्साहपूर्वक भाग लिया। सभा का कार्यक्रम प्रसिद्ध वैद्य श्रीयुत् रणधीर सिह जी शर्मा के सभापतित्व मे सम्पन्न हुआ। के० बी० विद्यालय खरेला के प्रिंसिपल श्रीयुत् दयाप्रकाश जी दीक्षित ग्रामसभा खरेला के प्रधान श्री सुदर्शन सिह जी वैद्य श्री० प० जगन्नाथ प्रसाद जी पालीवाल, श्रीयुत् वैद्य प्रताप सिह जी वैद्य भोला सिह जी और अन्य वैद्यो के प्रभावशाली भाषण हुए। सभा मे उपस्थित सभी प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार किये गये।

फर्रुखाबाद में भव्य आयोजन

फरुखाबाद (उ० प्र०) मे श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर स्वास्थ्य दिवस का महत्त्वपूर्ण आयोजन किया गया। श्री धन्वन्तरि पूजन के अनन्तर प्रस्ताव अनुमोदनोपरान्त करतलध्वनि के बीच जिले के प्रसिद्ध कार्यकर्त्ता लोकसभा के सदस्य श्रीयुत पण्डित मूलचन्द जी दूबे एडवोकेट ने सभापति का आसन ग्रहण किया। सभा मे बडी सख्या मे स्थानीय वैद्यगण डाक्टर, नगरपालिका के सदस्य, व्यापारी वर्ग और नागरिक उपस्थित थे। सर्वप्रथम स्वास्थ्य दिवस पर प्रसारित वैद्य रामनारायण शर्मा का भाषण पढा गया। वक्ताओ के ओजस्वी भाषणो के अनन्तर श्रीयुत श्रीयाशशरण जी वैद्य ने प्रस्ताव सख्या १ व २ प्रस्तुत करते हुए अपनी वक्तृता मे विद्वत्तापूर्वक प्रस्तावो मे वर्णित विषय पर गभीर प्रकाश डाला। आपने कहा कि जनसाधारण के स्वास्थ्य तथा आर्थिक दशा के सुधार मे भी आयुर्वेद-यूनानी चिकित्सा प्रणालियाँ हितकर हो सकती है। सरकार को विचारपूर्वक देशी चिकित्सा-पद्धतियो को राजमान्य करना चाहिए। इनका विकास तभी सच्चे रूप मे हो सकता है। अपने भाषण मे आपने वैद्यनाथ के गुणकारी औषध-निर्माण तथा प्रसार एव सच्चे अर्थों मे आयुर्वेदोत्थान के प्रयत्नो की प्रशसा भी की। दोनो प्रस्तावो का समर्थन श्रीयुत पण्डित प्रकाशचन्द्र जी वैद्य एव प० रामस्वरूप जी वैद्य द्वारा सारगर्भित भाषणो द्वारा किया गया। दोनो प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए। तीसरा प्रस्ताव श्रीयुत प्रकाशचन्द्र जी वैद्य ने प्रस्तुत करते हुए कहा कि आयुर्वेदीय आसव-अरिष्टो को मद्य की श्रेणी मे किसी भी प्रकार नही लिया जा सकता।

आपने जोरदार शब्दो मे सरकार से इस कानून में सुधार करने की अपील की। केन्द्र में सर्वसाधनसम्पन्न आयुर्वेद विद्यालय की स्थापना पर विशेष बल देते हुए प० हीरालाल जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य वैद्य ने चौथा प्रस्ताव प्रस्तुत किया। आपने वैद्य समाज से मार्मिक अनुरोध किया कि महासम्मेलन एव विद्यापीठ की अवस्था को शीघ्र सुधार कर सगठन स्थापित करे और आयुर्वेद की शिक्षण-व्यवस्था को विधिवत बनाये। इस प्रस्ताव का समर्थन श्री वृजविहारी लाल जी पाण्डेय तथा श्री कल्लूमल जी वैद्य ने किया सभी प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकार किये गये। तदुपरान्त उत्तर प्रदेश विधान सभा के सदस्य श्री रामकृष्ण जी सारस्वत ने अपने विस्तृत भाषण में आयुर्वेद की चिकित्सा का महत्त्व बताते हुए जनता से आग्रहपूर्वक देशी चिकित्सा अपनाने का निवेदन किया। आपने जनता से यह भी आग्रह किया कि राष्ट्रीयता के नाम पर वह आयुर्वेद के उत्थान और मान्यता के लिए राष्ट्रीय सरकार से प्रबल माग करे। इसके द्वारा जनता के स्वास्थ्य की पूर्ण रक्षा हो सकती है। सभापति पद से बोलते हुए श्री प० मूलचन्द जी दुबे ससद सदस्य ने कहा—विज्ञान का युग होने के कारण आयुर्वेद मे भी वैद्यगणो को अधिकाधिक आधुनिकता लानी चाहिए। आयुर्वेद के विकास के लिए यह अत्यावश्यक है। प्रत्येक वैद्य को आयुर्वेद औषधो का प्रत्यक्ष ज्ञान होना चाहिए। आयुर्वेद का प्रचार ऐसे ढग से किया जाना चाहिए जिससे डाक्टरजन भी उसको अपनाने के लिए उत्साहित हो सके। आपने सार्वजनिक स्वास्थ्य दिवस के आयोजन पर बहुत ही हर्ष व्यक्त किया और कहा कि इस प्रकार के आयोजन यदा-कदा होते रहना चाहिए जिससे जनता को स्वास्थ्य रक्षा की प्रेरणा मिलती रहे। सभापति जी ने यह भी रक्षा की प्रेरणा मिलती रहे। सभापति जी ने यह भी आश्वासन दिया कि लोक सभा म आयुर्वेद के लिए वे आवाज उठायेंगे और जितना सभव हो सकेगा सरकार को विवश करेगे कि वह आयुर्वेद की सहायता करे।

शिकोहाबाद में आयोजन

शिकोहाबाद से प्रेषित विस्तृत समाचारो से विदित होता है कि वहाँ स्वास्थ्य-दिवस का बहुत ही भव्य आयोजन किया। जिसमे समस्त वैद्य-हकीमो के अतिरिक्त स्थानीय अधिकारी वर्ग एव जनता ने बडी सख्या में भाग लिया। उपस्थित वैद्यवर्ग में निम्न की उपस्थिति उल्लेखनीय रही—वैद्य श्री कृष्णशकर शास्त्री, श्री चन्द्रशेखर शर्मा वैद्य, श्री श्रीनिवास चतुर्वेदी बी० आई० एम० एस०, श्री केदारनाथजी वैद्य, श्री श्रीकृष्णजी वैद्य, श्रीयुत् श्रीरामजी वैद्य, वैद्य श्री जयकुमार जैन, श्री गुरुदत्तजी शर्मा, श्री गोविन्दराम शास्त्री, श्री विद्याधरजी शर्मा वैद्य, श्री गौतमसिंहजी वैद्य, श्री नेकरामजी वैद्य, श्री जयसिंहजी वैद्य, श्री भद्रदत्तजी शर्मा, श्री लक्ष्मीदत्तजी शर्मा, श्री रामकुमारजी गुप्त, श्री श्रीकृष्ण मिश्र इत्यादि।

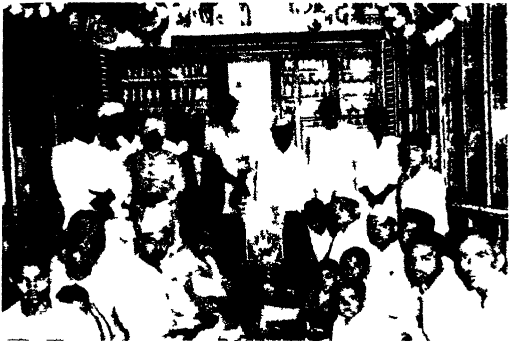
सभा मे अनेक वैद्यो एव प्रभावशाली व्यक्तियो के भाषण हुए। प्रस्ताव सख्या १ एव २ को श्रीयुत कृष्णशकरजी शास्त्री ने प्रस्तुत किया तथा श्री इन्द्रदत्त गर्ग वैद्य ने समर्थन किया। प्रस्ताव सख्या ३ श्रीयुत् प० रामजीललाजी शास्त्री द्वारा प्रस्तुत किया गया। प्रस्ताव सख्या ४ श्रीयुत् वैद्य कृष्णशकरजी शास्त्री द्वारा प्रस्तुत हुआ। सभी प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार किये गए। सभा का सभापतित्व श्री पण्डित रामजीलालजी शास्त्री वैद्य ने किया।

स्याना, जिला बुलन्दशहर में स्वास्थ्य सप्ताह

भारत मेडिकल स्टोर के प्रमोद भवन मे समारोह का आयोजन हुआ। वैद्यशास्त्री श्री प० द्विजराजजी शर्मा ने वेद मन्त्रो से भगवान धन्वन्तरि का पूजन किया। सर्वसम्मति के आग्रह पर आयुर्वेद वाचस्पति पण्डित त्रिलोकीनाथजी शास्त्री एम० एस० सी० ए० ने करतलध्वनि के मध्य सभापति का आसन ग्रहण किया। वैद्य शास्त्री श्री द्विजराज शर्मा ने वेदो मे आयुर्वेद की महत्ता तथा कीटाणुवाद पर बहुत ही विद्वत्तापूर्ण भाषण दिया। श्रीयुत् पुष्करदत्त बी० ए० द्वारा स्वागत-भाषण पढा गया। स्वागत भाषण का उपस्थित जन-समुदाय पर व्यापक प्रभाव पडा और तुरन्त ही सर्वसम्मति से निश्चय किया गया कि श्री धन्वन्तरि महोत्सव के उपलक्ष मे स्वास्थ्य-सप्ताह का ही आयोजन किया जाय। श्रीयुत् वैद्य त्रिलोकीनाथजी के नेतृत्व में स्वास्थ्य-सप्ताह का पूरा कार्यक्रम निश्चय किया गया, जिसमें ग्राम पचायतो के प्रधानो ने अपने-अपने यहाँ कार्यक्रम सचालित करने का भार वहन किया। दिनाक २२ से २८ अक्टूबर तक स्वास्थ्य-सप्ताह मनाने का सर्वसम्मति से निश्चय किया गया। निश्चय हुआ कि सप्ताह में प्रमुख वैद्यगण गाँव-गाँव जा कर जनता

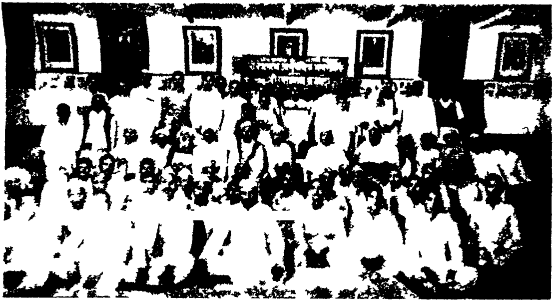


श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर लश्कर ग्वालियर में अनुष्ठित स्वास्थ्यदिवस की सभा का दृश्य ।





श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर अमीनाबाद लखनऊ म अनुष्ठित स्वास्थ्यदिवस की सभा का दृश्य ।



श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर आगरा में अनुष्ठित स्वास्थ्यदिवस की सभा का भव्य दृश्य ।

को स्वास्थ्य-रक्षा के भारतीय सिद्धान्त समझायें और आयुर्वेद के महत्व पर प्रकाश डाले।

मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटी कलकत्ता के भूतपूर्व चिकित्सक आयुर्वेदभूषण पण्डित गणपति शर्मा शास्त्री ने अपने दो घण्टे के लम्बे भाषण में आयुर्वेद शास्त्र के प्रधान उद्देश्य 'नत्वहृ कामये राज्य न स्वर्गं न पुनर्भवम्—कामये दु:ख तप्ताना प्राणिनामर्ति नाशनम्—का विद्वत्तापूर्ण विवेचन किया। आपने वैद्यवर्ग को सम्बोधित करके कहा कि आप लोग देश-सेवा तथा जनहित की भावना रख कर चिकित्सा-कार्य-सम्पादन करे। अपनी प्राचीन चिकित्सा-पद्धति की उन्नति का प्रयास करना प्रत्येक वैद्य एव प्रत्येक भारतीय का परम कर्त्तव्य है। आयुर्वेद राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति के पद पर आसीन हो कर रहेगा, इसमें कदापि सन्देह नही है। परन्तु वैद्यवर्ग को अपना सगठन सुदृढ और वास्तविक बनाना चाहिए। आपने दृढ शब्दो में सरकार से आयुर्वेद को राज्य-आश्रय देने का आग्रह किया।

अध्यक्ष पद से अपना भाषण देते हुए आयुर्वेद वाचस्पति प० त्रिलोकीनाथ जी शास्त्री एम० एस० सी० ए० ने कहा कि निकट भविष्य में राष्ट्रीय सरकार को यह मानना पडेगा कि आयुर्वेद ही केवल ऐसी पद्धति है जिसके द्वारा भारत की विशाल जनसख्या की स्वास्थ्य-समस्या का समाधान हो सकता है। आपने विस्तृत विवरण प्रस्तुत करते हुए वैद्य श्री रामनारायण शर्मा के वास्तविक आयुर्वेद-हित-कार्यो की प्रशसा की। दिल्ली में ससद-सदस्य औषधालय की चर्चा करते हुए आपने कहा कि यह अत्यन्त ही सामयिक कार्य है जिसके द्वारा आयुर्वेद का पक्ष राजकीय क्षेत्र मे बहुत प्रबल होगा। हमे वैद्यनाथ की सच्ची कार्यशैली पर गर्व करना चाहिये। आयुर्वेद-यूनानी के समन्वय को आपने बहुत ही उचित बताया। निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन की चिन्तनीय स्थिति का उल्लेख करते हुए आपने कहा कि यदि वैद्य-समाज इसी लीडरबाजी के दाव-पेंच में फँसा रहा तो आयुर्वेद-विरोधी-तत्त्व बढ सकते है, और पूर्वजो द्वारा लगाया गया पौधा विनाश गति को प्राप्त हो जायगा। आयुर्वेद-जगत् के विद्वान लोगो को विशेष ध्यान देकर कार्यक्षेत्र में आना चाहिए और अपनी सस्था को सक्रिय बनाना चाहिए। दिल्ली में देशी औषध-निर्माता सम्मेलन का भी आपने उल्लेख किया और कहा कि यह बड़ा सामयिक कदम है। छोटे-बडे औषध-निर्माता मिलकर अपने सामान्य हितो की रक्षा तो कर ही सकते हैं देशी चिकित्सा-पद्धतियो के विकास मे उनका सगठन बड़ा योग दे सकता है। इस सगठन के प्रति सम्पूर्ण आयुर्वेद-यूनानी समाज की सहानुभूति होनी चाहिए।

इस अवसर पर प्रसिद्ध नेत्र चिकित्सक प० विश्वनाथ जी एम० ए० ने प्रदर्शिनी-कक्ष मे समागत सज्जनो को गुण वर्णन सहित जड़ी-बूटियो का परिचय कराया। बाद के समाचार में स्वास्थ्य-सप्ताह के कार्यक्रम के विधिवत सम्पादित होने और ग्राम-ग्राम मे सफाई एव स्वास्थ्य चर्चा-कार्यो का विवरण प्राप्त हुआ है।

भारतगज (इलाहाबाद) में सभा

श्री रामकृष्ण जी केशरवानी के प्रयत्न से श्री धन्वन्तरि-जयन्ती समारोह बहुत ही धूम-धाम से मनाया गया। भारतगज के सभी वैद्य और आयुर्वेद प्रेमी सज्जन उत्सव मे सम्मिलित हुए। पण्डित श्री आद्याप्रसाद जी द्विवेदी ने विधिवत् धन्वन्तरि पूजन एव स्तवन किया। वक्ताओ ने आयुर्वेद के महत्त्व पर विद्वत्तापूर्ण भाषण दिये और उपस्थित प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत किये गए।

मुजफ्फरनगर (उ० प्र०) में समारोह

मुजफ्फरनगर मे नयीमण्डी स्थित आयुर्वेद भवन मे श्री धन्वन्तरि जयन्ती का उत्सव स्वास्थ्य दिवस के रूप में बडे उत्साहपूर्वक सम्पन्न किया गया। शहर के वैद्य-हकीम, अधिकारी, व्यापारी, प्रमुख नागरिक और सर्व साधारण जनता पर्याप्त सख्या में उपस्थित हुई। श्रीयुत वैद्य कवि-राज कुलानन्द जी, श्री देशराज जी वैद्य, श्री कालूराम जी शर्मा, वैद्य निरञ्जन लाल शर्मा, वैद्य जी जीवनराम जी, श्री डा० सुशील कुमार जी, वैद्य लीलापति जी तथा वैद्यराज श्री बोधराज इत्यादि विद्वानो के सारगर्भित भाषण हुए जिनका उपस्थित जनता पर बहुत प्रभाव पडा। भाषणो में स्वास्थ्य-रक्षा के लिए देशी चिकित्सा-पद्धति को अपनाने के लिए आग्रह किया गया। सभा मे प्रस्तुत प्रस्ताव विस्तृत विवेचना के उपरान्त स्वीकार किये गए।

बलिया (उ० प्र०) में सार्वजनिक सभा

बलिया के चौक में धन्वन्तरि जयन्ती पर विराट सभा हुई, जिसका सभापतित्व भूतपूर्व आनरेरी मैजिस्ट्रेट श्रीयुत प० लक्ष्मीनारायणाचार्य जी ने किया। सभा मे

वैद्य हकीमो के अतिरिक्त अधिक सख्या मे नागरिक उपस्थित हुए। नगर के पत्रकार एव जन-नेताओ की उपस्थिति उल्लेखनीय थी। सभापति के आसनग्रहण करते ही व्याकरणाचार्य पण्डित सरजू प्रसाद जी उपाध्याय ने मगलाचरण पाठ किया। वैद्यराज श्री सुरेन्द्रदत्त जी आयुर्वेदाचार्य वैद्य दिवाकर जी उपाध्याय, डाक्टर भगवती प्रसाद एव जनप्रिय नेता श्री हितनारायण सिंह जी वकील तथा अन्यान्य वैद्यो के जन-स्वास्थ्य, देशी चिकित्सा-पद्धति, वैद्य-हकीम एकता एव सस्था-सगठन विषय पर प्रभावपूर्ण भाषण हुए। सभा मे पाँच प्रस्ताव प्रस्तुत किये गए जिनके प्रस्तावक एव समर्थको ने प्रस्तावो के विषय की विवेचनापूर्ण व्याख्या की। प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार हुए। अन्त मे सभापति महोदय ने अपने भाषण मे जनता के गिरते हुए स्वास्थ्य पर चिन्ता-व्यक्त करते हुए उसके सुधार के लिए भारतीय स्वास्थ्य-सिद्धात एव देशी चिकित्सा-पद्धति को अगीकार करने पर जोर दिया। भगवान धन्वन्तरि को श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए आपने अपील की उनके उपदेशो से हमें प्रेरणा ग्रहण करनी चाहिए। अन्त मे उपस्थित जनसमुदाय को धन्यवाद देकर सभा विर्सजित हुई। समारोह के आयोजन मे श्री सूरजमल मदनलाल शर्मा एव श्री वासुदेव जी त्रिपाठी का परिश्रम प्रशसनीय रहा।

गौहारी (उ० प्र०) में सभा

गौहारी जिला हमीरपुर मे इस अवसर विशेष सभा का आयोजन किया गया। सभा का सभापतित्व उस क्षेत्र के प्रसिद्ध जन श्रीयुत प० रुद्रप्रताप जी शर्मा ने किया। पर्याप्त सख्या मे जनता के अतिरिक्त प्रमुख नागरिक, व्यापारी और साहित्यिक तथा वैद्य वर्ग उपस्थित थे, जिनमे निम्न व्यक्ति उल्लेखनीय है —

श्री बिहारीलाल जी प्रजापति, श्री योगेश्वर प्रसाद त्रिपाठी, श्री आर० सी० जौहरी, श्री गुलजारीलाल जी, श्री फूलचन्द जी सर्राफ, श्री शिवप्रसाद प्रधान तथा श्री किशोरीलाल त्रिपाठी (कबरई), प० गौरीशकर वैद्य, श्री बलदेव प्रसाद वैद्य, श्री छगूलाल तिवारी वैद्य, श्री भगवान दास वैद्य, श्री दुर्गाप्रसाद वैद्य, श्री गोरेलाल वैद्य, श्री रघुवर प्रसाद वैद्य, श्री भवानीदीन शास्त्री वैद्य, श्री बुखर सिह वैद्य, श्री प० बाबूलाल वैद्य श्री प० बद्रीप्रसाद शास्त्री, श्री जगन्नाथ सिह जी वैद्य तथा श्री गोरेलाल जी इत्यादि। सभा मे अनेक प्रभावशाली वक्ताओ के ओजस्वी भाषणो के अतिरिक्त चार प्रस्ताव प्रस्तुत किये गए जो सर्व-सम्मति से हर्षपूर्वक स्वीकृत हुए। प्रस्तावो मे आयुर्वेद-यूनानी को राज्यमान्य करने, जनस्वास्थ्य के लिए भारतीय स्वास्थ्य नियमो के आधार पर प्रयास करने, आसव-अरिष्टो पर मद्य-कर न लगाने तथा महासम्मेलन एव विद्यापीठ की दशा सुधार कर उत्तम आयुर्वेद महाविद्यालय स्थापित करने का आग्रह किया गया। प्रस्तावो की प्रतियाँ सम्बन्धित व्यक्तियो को भेजी गई। सभापति श्री रुद्रप्रताप जी शर्मा ने जनता को देशी-चिकित्सा अपनाने के लिए उत्साहित किया।

मेरठ में विराट सभा

श्री धन्वन्तरि जयन्ती पर आयोजित सार्वजनिक स्वास्थ्य समारोह के क्रम मे दिनाक २१ अक्टूबर को मेरठ के सुभाष बाजार स्थित शहीद स्मारक पर विराट सभा हुई। अपरान्ह ४ बजे वेद मत्रो से श्री धन्वन्तरि पूजन के कार्यक्रम के साथ स्वास्थ्य दिवस का समारोह आरम्भ हुआ। सभा मे सभापति का आसन उत्तर प्रदेश के प्रसिद्ध जननेता एव ससद-सदस्य श्री कृष्ण चन्द्र जी शर्मा एम० ए० एल० एल० बी० ने ग्रहण किया। वैद्यवर श्री लक्ष्मीनारायण जी पचोली मे विस्तृत स्वागत-भाषण पढा। फिर विद्वानो के महत्त्वपूर्ण एव सारगर्भित भाषण हुए। वैद्यवर श्री धर्मप्रकाश जी आयुर्वेदालकार ने आयुर्वेद विज्ञान की ह्रास-स्थिति के कारणो पर प्रकाश डालते हुए कहा कि हमारी सस्थाओ मे दलबदी हो गई और सगठन निर्बल हो गया। जो अग्रगण्य नेता है वे वास्तविक कार्य नही करते। इसी कारण हम राष्ट्रीय स्वाधीन युग मे भी आयुर्वेद की उन्नति नही हो रही है। पुराने लोगो मे अनुभूत और चमत्कारिक प्रयोगो को गोपनीय रखने की वृत्ति थी। उसका परिणाम यह हुआ कि क्रियात्मक ज्ञान जिसके पास था उसके साथ ही गया। आजकल के वैद्यो को इस वृत्ति से दूर रहना चाहिए क्यो कि आयुर्वेद के ह्रास का एक यह भी मुख्य कारण है। श्रीयुत शशिधर जी तिवारी ने अपने सक्षिप्त किन्तु सार-गर्भित भाषण मे सरकार की आयुर्वेद के प्रति उदासीनता की कारणो सहित भर्त्सना की और वैद्यो को विद्वानो की छाया मे अपना सगठन दृढ बनाने की सलाह दी। मेरठ आयुर्वेदिक कालेज के प्रधानाचार्य सुख्यात विद्वान् श्री प० लक्ष्मीनारायण जी मिश्र आचार्य का भाषण अत्यन्त

प्रभावशाली हुआ। उन्होंने कहा कि पाश्चात्य चिकित्सा न तो भारत की जलवायु के अनुकूल पड़ती है और न वह भारत जैसे अल्प साधन वाले गरीब देश के लिए उचित एवं उपयुक्त ही है। देश की आर्थिक स्थिति को बड़ा बल मिल सकता है यदि सरकार देश की चिकित्सा में देशी औषधि विज्ञान का अनुसरण कर ले। आपने मार्मिक शब्दों में भारत सरकार से इस दिशा में सक्रिय कदम उठाने का आग्रह किया और धन्वन्तरि जयन्ती पर इस प्रकार स्वास्थ्य समारोह मनाने की परम्परा की बड़ी सराहना की। इसके उपरान्त विवेचनात्मक भूमिकाओं के साथ सभा में चार प्रस्ताव उपस्थित किए गए जो सर्व सम्मति से स्वीकार किए गए।

सहारनपुर में सभा

सहारनपुर में श्री माहेश्वरी औषधि भण्डार के तत्त्वावधान में धन्वन्तरि जयन्ती समारोह पर भव्य सभा का आयोजन किया गया। श्रीयुत सोमदत्त जी वैद्य की प्रधानता में कार्यवाही सम्पन्न हुई। बड़ी संख्या में वैद्य हकीम कार्यकर्ता एवं जनता के जन एकत्र हुए। मुख्य वैद्यों एवं विद्वानों के जन-स्वास्थ्य आयुर्वेद-यूनानी देशी चिकित्सा विज्ञान की स्थिति पर सारगर्भित भाषण हुए। चार प्रस्ताव सभा में प्रस्तुत हुए जिनमें प्रस्ताव संख्या २ बहुमत से तथा प्रस्ताव संख्या १, ३ और ४ को सर्व सम्मति से स्वीकार कर लिया गया। प्रस्तावों की प्रतियां सम्बन्धित व्यक्तियों को उचित कार्यवाही के हेतु भेजने का निश्चय किया गया। प्रसाद एवं स्वास्थ्य-साहित्य वितरणोपरान्त सभा की कार्यवाही उत्साह पूर्ण वातावरण में समाप्त हुई।

मथुरा में सभा

प्रसिद्ध तीर्थ मथुरा नगरी में एक सभा मथुरा आयुर्वेदिक एजन्सी के तत्त्वावधान में छत्ता बाजार में हुई। सभा में लगभग ६० वैद्य हकीम एवं पर्याप्त संख्या में नागरिक उपस्थित हुए। सभा का सभापतित्व श्रीयुत तेजसिंह जी वैद्य ने किया। वैद्यों और नागरिक क्षेत्र के प्रमुख व्यक्तियों के महत्त्वपूर्ण विषयों पर भाषण हुए। वक्ताओं ने देशी चिकित्सा-पद्धतियों के विकास के लिए सरकार पर जोर डालने के हेतु जनता से सहयोग की अपील की गयी। संगठन में सुधार एवं दृढ़ता के हेतु वक्ताओं ने वैद्य समुदाय का आह्वान किया। सभा में चारों प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकार किए गए। प्रस्तावों की प्रतियाँ सर्वत्र सम्बन्धित व्यक्तियों को भेजने का निश्चय किया गया। प्रसाद वितरण के उपरान्त सभा समाप्त हुई। ताजा समाचार आया है कि मथुरा में कुछ वैद्यजनों ने इस अवसर पर स्वास्थ्य सप्ताह का भी आयोजन किया जिसमें निःशुल्क चिकित्सा एवं स्वास्थ्य परामर्श का कार्यक्रम सम्पादन किया गया।

मऊरानीपुर (उ० प्र०) में समारोह

श्रद्धेय पं० रामदयालु श्री श्रोत्रिय वैद्य विशारद की अध्यक्षता में सभा का आयोजन हुआ। श्री युत पं० हीरालाल जी सीरोठिया वैद्य विशारद डाक्टर प्यारेलाल जी मिश्र इत्यादि वैद्यों के ओजस्वी भाषण हुए। भगवान धन्वन्तरि का भव्य पूजन एवं स्तवन किया गया तथा उपस्थित जनता को स्वास्थ्य के भारतीय सिद्धान्तों को सरलता के साथ समझाया गया। डाक्टर श्री ओमप्रकाश जी लवानिया ने अपने भाषण में कहा कि आयुर्वेद की औषधियों को ही लेकर एलोपैथी के विज्ञान ने इतना विकास किया है। यदि सरकार आयुर्वेद को उसके असली रूप में स्वीकार करे और प्रोत्साहन देवे तो उसके द्वारा भारत की गरीब जनता की स्वास्थ्य समस्याएं हल हो जावें। सरकारी पक्ष वास्तव में आयुर्वेद को समझता नहीं। वहां जो लोग हैं वे ऐसे वातावरण में पले हैं जिसमें आरम्भ से एलोपैथी से पाला पड़ता है। वैद्यों को चाहिए कि आयुर्वेद का शिक्षित जनता में अधिक प्रचार करने के लिए कुछ त्याग करें। धन्यवादोपरान्त सभा विसर्जित हुई।

वाराणसी में वर्षों की सभा

बड़ा देव वाराणसी में श्री धन्वन्तरि जयन्ती राष्ट्रपति के प्रधान चिकित्सक कविराज पं० सत्यनारायण जी शास्त्री महाराज के सभापतित्व में समारोहपूर्वक मनायी गयी। श्री धन्वन्तरि भगवान का षोडशोपचार पूजन स्थानीय चिकित्सक श्री विश्वनाथ पाण्डेय ने किया। श्री सुधाकर पाण्डेय ने मंगलाचरण किया। सभा में अनेक महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव वैद्यों हकीमों-नागरिकों के समर्थन एवं अनुमोदन द्वारा स्वीकृत किए गये।

सभा में अनेकानेक विद्वानों वैद्यों हकीमों एवं नागरिकों ने भाग लिया था जिनमें महामहोपाध्याय पं० गिरधर शर्मा चतुर्वेदी पं० रामनाथ द्विवेदी पं० रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी पं० वेणीप्रसाद जी पुरोहित (व्यायाम प्रचारक) पं० काशीनाथ शास्त्री श्री त्रिवेणीप्रसाद वनवाल वैद्य ताराशंकर

मिश्र, प० रामशकर जी शास्त्री, रामबिहारी शुक्ल, हकीम जाहिद हुसेन, हकीम बन्दे हसन, हकीम रामसिंह जी प्रभृति उल्लेखनीय है।

महामहोपाध्याय जी ने कहा कि हम सभी नवयुवक वैद्यो को इस वैज्ञानिक युग मे आयुर्वेद का अनुसधान एव रिसर्च अवश्य करना चाहिये। और वैद्यों को इसी प्रकार बराबर आयोजन करके अपना ज्ञान बढाना चाहिये।

हकीम बन्देहसन साहब ने अपने भाषण मे कहा कि हमारी आयुर्वेदिक एव यूनानी औषधियो मे कोई रोगोत्पादक पदार्थ नही रहता और न तो प्रत्यक्ष देखने मे ही आता है कि किसी वैद्य या हकीम की दवा खाकर रोगी को राजयक्ष्मा हुआ हो। किन्तु यह प्रत्यक्ष दिन-रात के अनुभव में देखने को मिलता है कि एलोपैथिक औषधि के सेवन से यक्ष्मा का शिकार होकर रोगी वैद्यो और हकीमो के पास आता है और पथ्य-परहेज के साथ औषध सेवन करके स्वस्थ हो जाता है। अत सरकार को इस ओर आँख खोल कर देखना चाहिये और देशी चिकित्सा का प्रचार एव अनुसन्धान अवश्य करना चाहिये।

अन्त मे सभापति जी ने बताया कि जैसे राष्ट्र की सुरक्षा के लिये सेनाओ का पृथक्-पृथक् दल होते हुए भी उनका आपस में एक ही ध्येय रहता है—राष्ट्र की सुरक्षा, उसी प्रकार हम सभी चिकित्सको को, चाह काय-चिकित्सक हो या शल्यशालाक्य-चिकित्सक हो, सबको स्वास्थ्य-रक्षा कार्य मे दत्तचित्त होकर एक मन से देश के प्राणिमात्र की स्वास्थ्य कामना करनी चाहिये। आयुर्वेद विश्व की सर्वश्रेष्ठ चिकित्सा-प्रणाली है। यह ऐहलौकिक-पारलौकिक सुख का साधन है। इस वेद के साथ प्रमाद नही करना चाहिए। आयुर्वेद शास्त्र का गहन अध्ययन होना चाहिये। स्वार्थ के वशीभूत हो यह काम नही रहता चाहिए। सरकार का भी इस दिशा मे ध्यान देना परम कर्त्तव्य है, किन्तु वैद्य समाज का भी जागरूक होना उतना ही आवश्यक है। अत अब वह समय आ गया है जब कि आप लोगो को अपने आयुर्वेद का गौरव बढाने के लिये श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की तरह जगह-जगह पर सामूहिक आयोजन करना चाहिये। इस दिशा में इनका कार्य सराहनीय है।

अन्त में केन्द्र-व्यवस्थापक प० विश्वनाथ पाण्डेय वैद्य ने सभापति महोदय के प्रति आभार-प्रदर्शन किया और धन्यवाद दिया। पश्चात् आपने सचित्र आयुर्वेद की प्रति भेंट करते हुए कहा कि यह पत्रिका आप लोगों की सेवा के लिये ही प्रकाशित की जाती है। इसको सहयोग प्रदान करना वैद्यमात्र का परम कर्तव्य है। प्रसाद वितरण के साथ-साथ सभा विसर्जित हुई।

देवरिया में सभा

देवरिया में धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव अतीव उत्साहपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ। आचार्य प० वासुदेव जी के आचार्यत्व में वैदिक विधियो द्वारा पूजन एव स्तुतिपाठ और श्रद्धाजलि समर्पित की गयी। पश्चात् प० रामानुज त्रिपाठी वैद्य आयुर्वेदशास्त्राचार्य के सभापतित्व मे सभा हुई जिसमे विद्वान् वैद्यो ने जयन्ती के महत्त्व, आयुर्वेद की उपादेयता एव अन्य चिकित्सा पद्धतियो की अपेक्षा श्रेष्ठता, सर्वसुलभता आदि विषयो पर पूर्ण प्रकाश डाला। वैद्य विद्याधर शुक्ल बी० ए० ने आयुर्वेद की विशिष्ट मान्यताओ का दिग्दर्शन कराया। वक्ताओ में श्री ओझाजी वैद्य, ज्योतिषी शुक्ल जी और प० वासुदेव जी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। अन्त मे सभापति जी ने आयुर्वेद की स्वास्थ्य-सुखद-शीतल छाया में ही विश्वकल्याण निहित है ऐसी प्रेरणा प्रदान की। तदनन्तर विक्री-केन्द्र के अध्यक्ष श्री निवास शर्मा द्वारा धन्यवाद एव प्रसाद वितरण के पश्चात् सभा विसर्जित की गयी।

गोरखपुर (अलीनगर) में सभा

अलीनगर(गोरखपुर) मे धन्वन्तरि जयन्ती प० श्रीपति जीके सभापतित्व मे सोत्साह मनाई गई। वैद्य रूपनारायण शर्मा ने धन्वन्तरि भगवान की पूजा-प्रार्थना के उपरात समागत वैद्य महानुभावो के समक्ष मुद्रित स्वागत-भाषण पढा। सभापति महोदय ने पाँच प्रस्ताव उपस्थित किए जो एकमत से उपस्थित महानुभावो ने स्वीकार किए।

प० महावीर प्रसाद शर्मा ने समागत वैद्य महानुभावो के प्रति आभार प्रदर्शित किया तथा उपस्थित वैद्यो को एक-एक प्रति सचित्र आयुर्वेद तथा प्रसाद वितरण करने के बाद सभा विर्सजित हुई।

पडरौना

पडरौना (देवरिया) में धन्वन्तरि-जयन्ती बडे धूमधाम से मनायी गयी। भगवान धन्वन्तरि के पूजन के पश्चात् स्थानीय वैद्यो-हकीमो एव नागरिको की एक सभा हुई, जिसमें प० ब्रजमोहन शर्मा वैद्य ने सभापति का

आसन ग्रहण किया। अनेक वक्ताओ ने अपने भाषण में आयुर्वेद की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए अयुर्वेदोन्नति के के लिए श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के महत्वपूर्ण प्रयत्नो की भूरि-भूरि प्रशसा की। सभापति जी ने अपने भाषणो में बैद्यनाथ औषधियो की गुणवत्ता की सराहना करते हुए वैद्यो से सगठित होकर कार्य करने की अपील की। शुरू में श्री चन्द्रभानु गुप्त ने स्वागत-भाषण पढा। पाचो प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए। अन्त में प्रसाद-वितरण और धन्यवाद-ज्ञापन कर सभा समाप्त हुई।

फैजाबाद

जिला वैद्य सभा, फैजाबाद, की बैठक श्री भगवती सिह शास्त्री वैद्य की अध्यक्षता मे हुई, जिसमे समस्त वैद्योने अखिल व्याधि विनाशकारी भगवान धन्वन्तरि को सामूहिक श्रद्धाजलि-अर्पण किया। पश्चात् श्री मदन-गोपाल वैद्य एम० एल० ए० न अपन सक्षिप्त भाषण में भगवन धन्वन्तरि के परिचय एव महत्व पर प्रकाश डाला। अन्त मे अगल वर्ष के लिए निम्नाङ्कित व्यक्तियों को पदाधिकारी सर्वसम्मति से निर्वाचित किया गया—श्री मदन-गोपाल वैद्य एम० एल० ए० अध्यक्ष, श्री भगवती सिह शास्त्री श्री रामनाथ वैद्य एव उपाध्यक्ष, श्री विद्याधर शर्मा वैद्य कोषाध्यक्ष, श्री देवीप्रसाद मिश्र वैद्य आयुर्वेदाचार्य प्रधान मन्त्री, श्री रुद्रदेव वैद्य शास्त्री, श्री रामेश्वर प्रसाद कुमार उपमन्त्री दया श्री कन्हैयालाल जी वैद्य आय-व्यय निरीक्षक। इसके बाद श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के बिक्री-केन्द्र मे वैदिक विधि से भगवान धन्वन्तरि के सामूहिक पूजन के पश्चात् श्री मदन गोपाल वैद्य एम० एल० ए० की अध्यक्षता मे सार्वजनिक सभा हुई जिसमे अनेक वक्ताओ एव अध्यक्ष महोदय ने भाषण करत हुए, आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली की श्रेष्ठता बतलायी। श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की ओर से समस्त आगन्तुक वैद्यो को सचित्र आयुर्वेद, वैद्य समाज की उन्नति का साधन, मिष्ठान्न सहित भेंट देकर सभा विसर्जित हुई।

तुलसीपुर (गोण्डा)

श्री पाटेश्वरी आयुर्वेद भवन तुलसीपुर (गोण्डा) में श्री भगवती प्रसाद गुप्ता वैद्य की अध्यक्षतामें बडे समारोह के साथ धन्वन्तरि-जयन्ती मनायी गयी और धन्वन्तरि भगवान का पूजन, हवन, तथा आयुर्वेद-प्रचार आदि करने के पश्चात् प्रसाद-वितरण कर सभा समाप्त की गई।

हरदोई

हरदोई मे आयुर्वेद प्रवर्तक भगवान धन्वन्तरि का जन्म-दिवस अत्यन्त धूमधाम के साथ श्री जगन्नाथ प्रसाद जी वैद्य के सभापतित्व में मनाया गया। इस शुभ अवसर पर जिले के वैद्यो के अतिरिक्त जनता ने अपार उत्साह के साथ समारोह मे भाग लिया। सुसज्जित दूकान के मध्य ऊँचे आसनपर विराजमान भगवान धन्वन्तरि की वेद मन्त्रो के साथ सर्वप्रथम पूजा की गई। भदईचा सरकारी औषधालय के अध्यक्ष श्री रामदेव जी शर्मा वैद्य एव प० जगन्नाथ प्रसाद जी वैद्य ने स्वागत भाषण पढने में उत्साह से भाग लिया।

पश्चात अपने सक्षिप्त भाषण में प० जगन्नाथ मिश्र जी ने वर्तमान राष्ट्रीय सरकार द्वारा आयुर्वेद की उपेक्षा पर खद प्रकाश किया एव उपस्थित वैद्य बन्धुओ एव जनता से अपील की कि निकट भविष्य में होने वाले यू० पी० बोर्ड-आफ इण्डियन मेडिसन मे एसे सदस्य को चुनकर भेजा जावे जो आयुर्वेद का उन्नति पर तन-मन से प्रयत्न करें।

बिक्रीकेन्द्र व्यवस्थापक श्री महादेव प्रसाद अग्रवाल द्वारा स्वागत भाषण एव प्रसाद वितरण के पश्चात् सभा की कार्यवाही समाप्ति हुई।

आजमगढ़

श्री जीवन आयुर्वेदिक औषधालय, चौक आजमगढ मे वैद्य प० चन्द्रदत्त जी आयुर्वेद आचार्य के सभापतित्व मे श्री भगवान धन्वन्तरि का जयन्ती समारोहमनायागया। सर्व प्रथम मगलाचरण से सभा आरम्भ हुई। पश्चात् वैद्य प० जीवन राम शर्मा न स्वागत भाषण पढा पश्चात् आये हुए वैद्यो ने तथा नगर के प्रतिष्ठित वकील श्री भवानी प्रसाद जी ने आयुर्वेद-विज्ञान पर अच्छा प्रकाश डाला। इसके पश्चात् श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के पाच प्रस्तावो को वैद्यो ने सर्वसम्मति से पास कर दिल्ली तथा लखनऊ स्वास्थ्य विभाग के मन्त्रियो को भेजने का निश्चय किया। अन्त में धन्यवाद ज्ञापन और प्रसाद वितरण कर सभा समाप्त हुई।

जौनपुर

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के बिक्रीकेन्द्र औलनगज, जौनपुर में भगवान धन्वन्तरि का जन्मोत्सव

श्री गौरी शकर सिंह वैद्य साहित्यायर्वेदाचाय क सभापतित्व मे समारोह पूवक मनाया गया। सव प्रथम भगवान धन्वन्तरि का पूजन करन क पश्चात श्री लक्ष्मी प्रसाद जी वैद्य आयुर्वेद विशारद द्वारा स्वागत भाषण पढकर सुनाया गया। इसक बाद वैद्य शिवदत्तजी वैद्य दूधनाथ शास्त्री वैद्य सुदशन दुव वैद्य वद्री प्रसाद पाठक वैद्य कुज विहारी लाल वैद्य अोरज सिंह जी का आयुर्वेद क विषय पर सार गर्भित भाषण हुआ।

श्री वैद्य अमरज सिंह जी न अपन भाषण म श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की उत्कृष्ट औषधियो की काफी प्रशसा की। श्री सभापति जी द्वारा धन्यवाद ज्ञापन क पश्चात श्री प० हीरालालजी शर्मा अध्यक्ष बिक्री केन्द्र जौनपुर द्वारा प्रसाद वितरण कर सभा समाप्त की गयी।

हरिद्वार

श्री बद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० की हरद्वार शाखा की ओर से धन्वन्तरि-जयन्ती धूमधाम स मनायी गई जिसकी अध्यक्षता श्री शिवप्रसाद झा एम० ए० साहित्यरत्न सक्रट्री म्यु० बोड न की। बिक्रीकन्द्र क चिकित्सक श्री द्वारकानाथ कुमार आयुर्वेदाचाय न धन्वन्तरि-वदना क पश्चात स्वागत भाषण पढा। तदनतर सभा क मुख्य वक्ता कविराज श्री योगेन्द्रपाल जी शास्त्री आयुर्वेदाचाय धन्व न्तरि का भाषण हुआ जिसम आपन भारत की स्वास्थ्य समस्याओ पर विस्तार से प्रकाश डालते हुए बतलाया कि कितनी बिडम्बनापूण स्थिति है कि भारत की केन्द्रीय तथा प्रातीय सरकार नगरो के कार्पोरेशन म्युनिसिपल बोड टाऊन एरिया और डिस्ट्रिक्ट बोड अपना अनुदान उन चिकित्सा लयो की बढाते चल जात हैं जिनम रोगियो की सख्या अधिक होती है जब कि उन चिकित्सालयो क चिकित्सको का उत्तर दायित्व यह होना चाहिए कि उनक क्षत्र म रोगी कम हो। फलत औषधालयो की रोगी सख्या कम से कम होती चली जाए। जब तक स्वास्थ्य विभाग स्वस्थ रहन के सुलभ साधनो क प्रचार का दष्टिकोण नही अपनाएगा तब तक देश क गिरते स्वास्थ्य का स्तर ऊँचा नही उठ सकता। इसक अतिरिक्त जब तक करोडो रुपया विदशी औषधियो पर बाहर भजना बन्द होकर दशी औषधियो क महाभण्डार हिमालय मे अनुसन्धान कन्द्र नही खोल जात तब तक भारतीय मुद्रा का तो अपव्यय होता ही रहगा भारतीय स्वास्थ्य भी श्रष्ठतम नही बन सकगा। इसक बाद कई वक्ताओ क सामयिक भाषण हुए और प्रसाद वितरण एव धन्यवाद ज्ञापन कर सभा की कायवाही समाप्त की गयी।

अल्मोडा

जौहरी मुहल्ला अल्मोडा म बड धूमधाम के साथ धन्वन्तरि जयन्ती मनायी गयी। भगवान धन्वन्तरि के पूजन के पश्चात स्थानीय वैद्य-हकीमो एव नागरिको की एक महती सभा का आयोजन किया गया जिसम वैद्य पडित केदारनाथ पन्त न सभापति का आसन ग्रहण किया। अनक वक्ताओ न अपन भाषण म आयुर्वेद की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की महत्त्वपूण आयुर्वेद-सेवाओ तथा आयुर्वेदोन्नति के हतु भवन द्वारा किए जान वाल श्रष्ठ प्रयत्नो की सराहना की। सभापति जी न अपन भाषण मे वैद्यनाथ औषधियो की गुणकारिता की भूरि भूरि प्रशसा करते हुए वैद्यो से सगठित होकर आयुर्वेद के उत्थान के निमित्त श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा किय जान वाल कार्यों म सहयोग प्रदान करन की अपील की। आरम्भ म मगलाचरण के अनन्तर श्री प० गोवद्धन शर्मा न स्वागत भाषण पढा। पाचो प्रस्ताव सवसम्मति से स्वीकृत हुए। अन्त म प्रसाद वितरण और धन्यवाद ज्ञापन कर सभा समाप्त हुई।

रोहतक

रोहतक म आयुर्विज्ञान के प्रवत्तक भगवान धन्वन्तरि का जन्म दिवस अति उत्साह व धूमधाम के साथ मनाया गया। सव प्रथम राजस्थानी वद्यराज उमाशकर जी की अध्यक्षता म भगवान धन्वन्तरि जी का विधिवत पूजन अचन समस्त वद्य हकीम तथा प्रतिष्ठित नागरिको द्वारा किया गया। पश्चात रोहतक बिक्री-केन्द्र के व्यवस्थापक आयुर्वेद विशारद रामप्रसाद जी वैद्य न मुद्रित स्वागत भाषण पढकर वितरित किया।

इसके बाद चार प्रस्ताव सवसम्मति से पास हुए। अनन्तर कविराज हरनारायण जी शास्त्री के सयोजकत्व म गूढ व्याधि परीक्षण हुआ। उपस्थित वैद्य-हकीम एव नागरिको म प्रसाद व सचित्र आयुर्वेद के वितरण के साथ उत्सव की कायवाही आचाय उमाशकर जी न समस्त उप स्थित जनसमूह को धन्यवाद दकर समाप्त की।

लखनऊ (अमीनाबाद) में समारोह

धन्वन्तरि औषधालय अमीनाबाद लखनऊ मे धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव आयुर्वेदाचाय श्री दत्तात्रय अनन्त कुलकर्णी

उपसचालक चिकित्सा एव स्वास्थ्य उत्तर प्रदेश की अध्यक्षता म खब धूमधाम से मनाया गया। इस स्वास्थ्य दिवस के पुनीत अवसर पर वद्य महानभावो के अतिरिक्त प्रतिष्ठित नागरिक एव आयुवद प्रमी सज्जन भी उपस्थित थ। उल्लासमय वातावरण म सस्वर मत्र उच्चारण करते हुए भगवान धन्वन्तरि की प्रतिमा को पुष्पाजलिया समर्पित की गयी।

श्री ब्रह्मानन्द शर्मा वद्य (व्यवस्थापक) न मगलाचरणो परान्त अपन स्वागत भाषण म कहा कि देवताओ को असुरो पर विजय पान तथा मानवो को रोग मक्त करान के लिय भगवान धन्वन्तरि का अवतार हुआ। भगवान न देवताओ को अमृत तथा मानव को आयवद का ज्ञान प्रदान किया। प्राणीमात्र को स्वास्थ एव सुखी रखना ही भगवान धन्वन्तरि का उद्दश्य था। उसी समय से धन्वन्तरि महोत्सव स्वास्थ्य दिवस के रूप म यग यग से हमारे देश म मनाया जा रहा है। स्मृति दिवसो के समारोह आयोजन की परम्पराओ से भी यह स्पष्ट है कि धन्वन्तरि महोत्सव विशाल एव सुयवस्थित ढग से शारीरिक स्वास्थ्योत्सव के रूप म मनाया जा रहा है जो कालक्रम की कडियो म गुथी हुई परम्पराओ म धनतेरस के नाम से अटका चला आ रहा है। इस अवसर पर केवल भगवान धन्वन्तरि की पूजा करना ही यथष्ट नही है अपितु आयवदीय सिद्धान्तो का जनता म अधिकाधिक प्रचार प्रसार करना अयन्त आवश्यक है जिससे लोग उनपर नियमित आचरण करके अपना स्वास्थ्य सबल और सुरक्षित रख सक।

श्री चतुभज शर्मा न सक्षिप्त एव सारगभित भाषण म कहा कि बौद्ध काल तक आयर्वेद काय चिकित्सा म ही नही वरन शल्य चिकित्सा म भी काफी उन्नत था किन्तु कालक्रम में आयवदीय शल्य चिकित्सा लप्त-सी होती गई। आज का अधिकाश वद्य समाज केवल काय चिकित्सा पर ही निभर है। अन्य चिकित्सा पद्धतियो म शल्य चिकित्सा को बहुत महत्त्व दिया जाता है किन्तु आयवद इस क्षत्र म पिछडा हुआ है। आज के वज्ञानिक युग म आवश्यकता इस बात की है कि आयुर्वेद के पुनरुद्धार के लिय शल्य चिकित्सा को प्रोत्साहन देकर उसके इस अधरे अग को पूरा किया जाय। इसीसे आयुवद अपन प्राचीन गौरव को प्राप्त कर भारत के ही नही वरन् विश्व के कल्याण म समथ हो सकेगा।

नगर के अन्य प्रतिष्ठित वद्यो न भी आयुवद की वतमान विभिन्न समस्याओ पर प्रकाश डाला और उनके निराकरण के हतु कई प्रस्ताव पेश किय जो सव सम्मति से पास हुए। इन प्रस्तावो की प्रति विभिन्न सम्बन्धित मन्त्रियो को भजन का निश्चय किया गया।



श्री दत्तात्रय अनन्त कुलकर्णी

अपन अध्यक्षीय भाषण म श्री कुलकर्णी न धन्वन्तरि महोत्सव के महत्त्व पर सुन्दर प्रकाश डाला। आपन काय चिकित्सा एव शय चिकित्सा के सप्रदायो की विवचना करते हुए बताया कि भगवान धन्वन्तरि न कायचिकित्सा के अनक सिद्धान्तो को जो शय विज्ञान के अनकल थ सूत्रवद्ध करके जनता के सामन रखा। यह शास्त्र कई शताब्दियो से जनता की सवा करता आ रहा है। आपन वद्य समाज से अनरोध किया कि उह उन उपदेशो का अनकरण कर काय रूप म परिणत करनी चाहिए। आपन श्री बद्यनाथ आयवद भवन के इस देश-व्यापी विशाल आयोजन की प्रशसा की।

लखनऊ (चौक) में सभा

चौक (लखनऊ) म श्री दयाराम जी अवस्थी शास्त्री आयुवदाचाय के सभापतित्व म बड धूमधाम से धन्वन्तरि जयन्ती मनायी गयी। इस अवसर पर नगर के वद्य एव आयुर्वेद प्रमी सज्जन भी उपस्थित थ। आगत सज्जनो न एक स्वर से मन्त्र का उच्चारण करते हुए आयुर्वेद प्रवतक

भगवान धन्वन्तरि को पुष्पाजलियाँ समर्पित कीं। श्री जयराम शर्मा वैद्य (बिक्री-केन्द्राध्यक्ष) ने उपस्थित महानुभावो का आभार प्रकट करते हुए हार्दिक स्वागत किया।

श्री ब्रह्मानन्द शर्मा वैद्य ने बताया कि धन्वन्तरि-महोत्सव हम सदियों से मनाते चले आ रहे हैं। इस अवसर पर हमें उनके उपदेशो का जनता में प्रचार करना चाहिए। आपने वैद्य समाज को सगठित होकर आयुर्वेद के पुनरुद्धार के पथ पर अग्रसर होने की अपील की। श्री चतुर्भुज शर्मा ने कहा कि आयुर्वेदीय-चिकित्सा प्रणाली अपने देशवासियो के प्रवृत्ति के अनुकूल है। काय-चिकित्सा मे तो हमने काफी प्रगति की है किन्तु शल्य-चिकित्सा में काफी पिछड गए हैं। अत आवश्यकता इस बात की है कि इस अग को भी पूरा किया जाय जिससे आयुर्वेद सर्वश्रेष्ठ चिकित्सा-प्रणाली हो सके। इस सम्बन्ध में आधुनिक वैज्ञानिक आविष्कारो पर भी उदारतापूर्वक विचार करना चाहिए। आपने पाच प्रस्ताव प्रस्तुत किये जो सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए।

सभापति जी ने अपने भाषण में कहा कि भगवान धन्वन्तरि ने विश्व के कल्याणार्थ आयुर्वेदशास्त्र का प्रवर्तन किया। आपने इस पुनीत पर्व के वैज्ञानिक महत्व की सुन्दर विवेचना की। आपने कहा कि भगवान धन्वन्तरि ने शल्य-चिकित्सा का विशेष ज्ञान दिया था किन्तु आजकल अधिकाश वैद्य समाज केवल काय-चिकित्सा पर ही निर्भर है। आपने श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के सचालको से अनुरोध किया कि जिस प्रकार उन्होंने सचित्र आयुर्वेद एव अनेको आयुर्वेदिक ग्रथोका प्रकाशन और दातव्य औषधालयो की स्थापना कर तथा शास्त्रीय औषधियो का निर्माण कर कायचिकित्सा को आसान बना दिया है उसी प्रकार शल्य-चिकित्सा के भा विकास का प्रयत्न कर आयुर्वेद के इस अपूर्ण अग को पूरा करने मे सहयोग दें। आपने बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० द्वारा देश व्यापी धन्वन्तरि महोत्सव की भूरि-भूरि प्रशसा की। कई अन्य वैद्य-बन्धुओ के भाषणोपरान्त प्रसाद वितरण कर कार्यवाही समाप्त की गई।

मुरादाबाद

धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के मुरादाबाद बिक्री-केन्द्र में बड़े उत्साह के साथ मनाया गया। उत्सव में शहर के सभी प्रतिष्ठित वैद्य व सामाजिक कार्यकर्ता बडी सख्या मे उपस्थित थे। धन्वन्तरि पूजन श्री वैद्यराज बनवारी लाल जी दीक्षित द्वारा सपन्न हुआ। पूजन के पश्चात् नगर के प्रसिद्ध सगीतज्ञ श्री गोस्वामी सच्चिदानन्द जी और मनमोहन जी का सगीत हुआ। सगीत के सुन्दर कार्यक्रम के साथ प्रसिद्ध नृत्यकार श्री गोवर्धन जी ने अपने कत्यक नृत्य द्वारा समागत सज्जनो को आनन्द विभोर किया।

नगर के यशस्वी सुविख्यात वैद्यराज श्री टीकादत्त जी के सभापतित्व में सभा का कार्यारम्भ हुआ। प्रारम्भ मे बिक्री-केन्द्र के अध्यक्ष श्री प्रभुदयाल जोशी आयुर्वेदाचार्य का स्वागत भाषण हुआ। नगर के सुप्रसिद्ध समाज सेवी व मजिस्ट्रेट श्री रमेशकुमार जी ने अपन अनुभव बताते हुए आयुर्वेद की वैज्ञानिकता को एक प्रसिद्ध एलोपैथ द्वारा स्वीकार करन की रोचक घटना सुनाई और कहा कि कुछ वैद्यो द्वारा एलोपैथिक दवाओ का व्यवहार आम जनता में भ्रम फैलाता है। श्री धर्मवीर जी आयुर्वेदालकार न बैद्यनाथ द्वारा सचालित अनेक धर्मार्थ औषधालयो की चर्चा करते हुए कहा कि भवन को मुरादाबाद मे भी एक धर्मार्थ औषधालय खुलवाना चाहिये। श्री जगदीश प्रसाद जी वैद्य वाचस्पति ने आयुर्वेद-वर्णित स्वास्थ्य विषय की अधिक आवश्यकता बतलाते हुए उक्त विषय की सुदर मीमासा की और इस दिशा मे बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा किये जाने वाले सत्कर्मों की भूरि-भूरि प्रशसा की। आपने अपने वक्तव्य में वर्तमान पीढी के वैद्यो से भी यह निवेदन किया कि वह अपने आपको डाक्टर कहलाने का प्रयत्न न करें। यदि उक्त शब्द का अर्थ भी वैद्य ही होता है तो वह एलोपैथो, होमियोपैथो से भी आग्रह करें कि वह भी अपने आपको वैद्य कहलाएँ। इससे हमारी हिन्दी भाषा और राष्ट्रीय दृष्टिकोण को बल मिलेगा। अन्यथा आयुर्वेदज्ञो की योग्यता का लाभ भी एलोपैथी को मिलेगा। वैद्य श्री भोला दत्त जी पन्त ने वैद्यो से सुसगठित होने की अपील की। वैद्य श्री उमाशकर जी ने आयुर्वेद के महत्व पर प्रकाश डाला। श्री सभापति महोदय ने भवन के कार्यों की प्रशसा करते हुए आशा प्रकट की कि भविष्य में भी भवन द्वारा आयुर्वेद के उत्थान हेतु कार्य होते रहेंगे। अन्त में सभी समागतो का साधुवाद करते हुए मिष्ठान्न और भाषण-प्रतियाँ भेंट की गईं।



श्री धन्वन्तरि जयन्ती क अवसर पर महावीर औषधालय अलीनगर गोरखपुर म अनुष्ठित स्वास्थ्यदिवस की सभा का एक दृश्य।



श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर महावीर औषधालय उर्दूबाजार, गोरखपुर मे स्वास्थ्यदिवस समारोह।



श्री धन्वन्तरि जयन्ती क अवसर पर कटनी म अनुष्ठित स्वास्थ्यदिवस की सभा का दृश्य।



श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर नागपुर आयुर्वेद औषधालय, भंडारा रोड, इतवारी, नागपुर में अनुष्ठित स्वास्थ्यदिवस की सभा का सुन्दर दृश्य।

धन्दौसी (मुरादाबाद)

धन्दौसी (मुरादाबाद) में भगवान धन्वन्तरि जी का पूजन बडे समारोह के साथ किया गया। नगर के सभी प्रतिष्ठित वैद्य-हकीमो व नागरिको ने इसमे बडे उत्साह से भाग लिया। शुरू मे भगवान धन्वन्तरि जी का अर्चन किया गया। बाद मे वैद्य श्री लीलाधर जी उप्रेती ने भगवान की स्तुति की। तत्पश्चात् सभा की कार्यवाही शुरू हुई। सर्व सम्मति से वयोवृद्ध श्री मुन्शीलाल जी सिद्ध वैद्य सभापति चुने गए। श्री गजानन्द शर्मा ने स्वागत भाषण पढा। इसके पश्चात् वैद्य श्री लीलाधर जी ने भाषण दिया। आखिर में श्री सभापति जी का ओजस्वी भाषण हुआ एव प्रस्तुत चारो प्रस्ताव सवसम्मति से पास हुए। अन्त मे सभी वैद्यो न श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि० को धन्यवाद दिया और सभा समाप्त हुई।

बरेली

बरेली स्थित श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के बिक्री-केन्द्र श्री सत्यनारायण औषधालय टाउनहाल रोड बरेली में श्री प० दरबारीलाल जी शर्मा वैद्य के सभापतित्व में श्री धन्वन्तरि-जयन्ती-समारोह मनाया गया, जिसमे नगर के प्रतिष्ठित वैद्यो, पत्रकारो एव प्रतिष्ठित व्यक्तियो ने भाग लिया। सर्वप्रथम सभी वैद्यजनो ने वेदध्वनि के साथ श्री धन्वन्तरि भगवान की अर्चना की। तदुपरान्त स्वागत मत्री प० बजरगलाल शर्मा ने स्वागत भाषण पढा। देश की जनता के शारीरिक स्वास्थ्य की गिरती हुई अवस्था की ओर श्री चन्द्रेश्वर जी द्विवदी ने सभा का ध्यान आकर्षित करते हुए पाचो प्रस्तावो को उपस्थित किया, और सभी प्रस्तावो को सभा ने स्वीकार किया। तदुपरान्त सभापति महोदय ने अपने भाषण मे बताया कि उन्होने उत्तर प्रदेश के मुख्य मत्री श्री डॉ० सम्पूर्णानन्दजी से चर्चा की थी तथा उन्होने यह आश्वासन दिया था कि इस द्वितीय पचवर्षीय योजना मे उत्तरप्रदेश में एक आयुर्वेद-विद्यालय की स्थापना की जायगी। सभापति जी ने श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० की भूरि-भूरि प्रशसा की और कहा कि यह सस्था देश की जनता की सेवा के लिए हमेशा कदम उठाती रही है और इसके द्वारा आयुर्वेद की काफी उन्नति हुई है।

इसके पश्चात् अन्य वैद्यगणो के भाषण हुए, जिनमें सभी ने आयुर्वेद की उन्नति के लिए सरकार से अनुरोध किया कि वह आयुर्वेद की ओर शीघ्र से शीघ्र उचित कदम उठाकर आयुर्वेद को प्रोत्साहन दे।

तदुपरान्त केन्द्र के व्यवस्थापक प० मधुसूदन शर्मा ने प्रसाद वितरण किया तथा धन्यवाद देकर कार्यवाही समाप्त की गयी।

गढमुक्तेश्वर

गढमुक्तेश्वर में धूमधाम के साथ धन्वन्तरि जयन्ती मनायी गयी। भगवान धन्वन्तरि के पूजन के पश्चात् स्थानीय वैद्य-हकीमो एव नागरिको की एक महती सभा का आयोजन किया गया, जिसमें वैद्य रघुवीरदत्त जी आयुर्वेदाचार्य ने सभापति का आसन ग्रहण किया। अनक वक्ताओ ने अपने भाषण मे आयुर्वेद की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की महत्त्वपूर्ण आयुर्वेद-सेवाओ तथा आयुर्वेदोन्नति के हेतु 'भवन' द्वारा किए जान वाले श्रेष्ठ प्रयत्नो की सराहना की। सभापति जी ने अपने भाषण में बैद्यनाथ औषधियो की गुणकारिता की भूरि-भूरि प्रशसा करते हुए वैद्यो से सगठित होकर आयुर्वेद के उत्थान के निमित्त बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा किए जाने वाले कार्यों मे सहयोग प्रदान करने की अपील की। आरम्भ में मगलाचरण के अनन्तर श्री प० रामानुज शास्त्री ने स्वागत भाषण पढा। पाचो प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए। अन्त मे प्रसाद वितरण और धन्यवाद ज्ञापन कर सभा समाप्त हुई।

पुखरायाँ (कानपुर)

धन्वन्तरि जयन्ती समारोह बडे धूमधाम के साथ श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के पुखराया (कानपुर) स्थित बिक्री-केन्द्र पर मनाया गया। तहसील वैद्य परिषद पुखराया के वैद्य गण एव एजेण्ट गण तथा प्रमुख नागरिक एकत्र हुए थे। सर्वप्रथम भगवान धन्वन्तरि जी की पूजा की गई। पूजा के उपरान्त कीर्तन अच्छे गायको द्वारा हुआ। श्री गयाप्रसाद जी शास्त्री, सभापति तहसील वैद्य परिषद के सभापतित्व में सभा-कार्य सम्पन्न हुआ। स्वागत भाषण प० बैद्यनाथ द्वि॰दी द्वारा पढा गया। अन्त में चारो प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास हुए। मि॰ान्न वितरण कर सभा समाप्त हुई।

कोडा जहानाबाद (फतेहपुर)

कोडा जहानाबाद (फतेहपुर) में बडे धूमधाम के साथ धन्वन्तरि-जयन्ती मनायी गयी। भगवान धन्वन्तरि

के पूजन के पश्चात् स्थानीय वैद्य-हकीमो एव नागरिको की एक महती सभा का आयोजन किया गया, जिसमे श्री रामगोपाल गुप्त, आयुर्वेदाचार्य ने सभापति का आसन ग्रहण किया। अनेक वक्ताओ ने अपने भाषण में आयुर्वेद की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की महत्त्वपूर्ण आयुर्वेद सेवाओ तथा आयुर्वेदोन्नति के हेतु 'भवन' द्वारा किए जाने वाले श्रेष्ठ प्रयत्नो की सराहना की। सभापति जी ने अपने भाषण मे बैद्यनाथ औषधियो की गुणकारिता की भूरि-भूरि प्रशसा करते हुए वैद्यो से सगठित होकर आयुर्वेद के उत्थान के निमित्त बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा किए जाने वाले कार्यों मे सहयोग प्रदान करने की अपील की। आरम्भ मे मगलाचरण के अनन्तर बिक्री-केन्द्र व्यवस्थापक ने स्वागत भाषण पढा। पाचो प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए। अन्त मे प्रसाद वितरण और धन्यवाद ज्ञापन कर सभा समाप्त हुई।

औरैया (इटावा)

औरैया (इटावा) मे धन्वन्तरि-जयन्ती बडे धूमधाम से मनायी गयी। भगवान धन्वन्तरि के पूजन के पश्चात् स्थानीय वैद्यो-हकीमो एव नागरिको की एक सभा हुई, जिसमे प० कृष्णगोपाल शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य ने सभापति का आसन ग्रहण किया। अनेक वक्ताओ ने अपने भाषण मे आयुर्वेद की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए आयुर्वेदोन्नति के लिए श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के महत्त्वपूर्ण प्रयत्नो की भूरि-भूरि प्रशसा की। सभापति जी न अपने भाषण में बैद्यनाथ औषधियो की गुणवत्ता की सराहना करते हुए वैद्यो से सगठित होकर कार्य करन की अपील की। शुरू में श्री रामचन्द्र बसल न स्वागत भाषण पढा। पाचो प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए। अन्त मे प्रसाद वितरण और धन्यवाद ज्ञापन कर सभा समाप्त हुई।

खतौली

प० हरद्वारी लाल जी आयुर्वेदाचार्य के सभापतित्व में भगवान धन्वन्तरि का जयन्ती समारोह बडे उत्साहपूर्वक श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के खतौली स्थित बिक्री-केन्द्र मे मनाया गया। उत्सव का प्रारम्भ श्री महेश प्रसाद एम० ए०, शास्त्री के स्वागत भाषण द्वारा हुआ। श्री ओमप्रकाश जी शास्त्री ने आयुर्वेद की महत्ता पर प्रकाश डाला। डॉ० शिवकुमार शर्मा बी० आई० एम० एस० का भाषण बहुत महत्त्वपूर्ण और प्रभावशाली रहा। उन्होने आयुर्वेदीय चिकित्सा-पद्धति की सराहना की तथा एलोपैथी से उसकी तुलना की। सर्वसम्मति से प्रस्ताव पास किये गये और सभापति द्वारा धन्यवाद ज्ञापन दिया गया। तत्पश्चात् प्रसाद आदि का वितरण हुआ।

बुलन्दशहर

बुलन्दशहर मे वैद्य प० सुधानिधि जी आयुर्वेदाचार्य के सभापतित्व मे धन्वन्तरि-जयन्ती समारोहपूर्वक मनायी गयी। सर्वप्रथम श्री धन्वन्तरि-पूजन बडे उत्साहपूर्वक किया गया और हवन भी सभी आगत सज्जनो मिल कर किया। तत्पश्चात् स्वागत भाषण केन्द्राध्यक्ष द्वारा पढा गया। सभापति जी ने आयुर्वेदोन्नति कार्य प्रत्येक वैद्य का ध्येय बताते हुए आयुर्वेदीय चिकित्सा पर मुख्य प्रकाश डाला और भेषज निर्माण कार्य के लिये श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लिमिटेड के महान कार्य की भूरि-भूरि प्रशसा की। पश्चात् सभी आगत वैद्य महानुभावो को तथा अन्य उपस्थित महोदय को प्रसाद वितरण किया गया। अन्त मे सभी उपस्थित वर्ग को गुप्ता आयुर्वेदिक स्टोर के अध्यक्ष ने धन्यवाद दिया और जयन्ती महोत्सव समाप्त किया गया।

सीतापुर

गल्ला-पडाव सीतापुर मे वैद्य श्री बृजकुमारजी शर्मा के सभापतित्व मे यथासमय सविधि भगवान धन्वन्तरि जी का पूजन हुआ, जिसमे विद्वान वैद्य महानुभावो के अतिरिक्त साधारण जनता भी अधिक उपस्थित थी। सर्वप्रथम श्री प्रभुदयालजी वैद्य ने धन्वन्तरि-बन्दना की। इसके बाद स्वागत-भाषण हुआ। वैद्य भागवत सहायजी ने कहा कि आयुर्वेदिक चिकित्सा-प्रणाली प्राचीन है, मुसलमानो तथा अग्रेजो ने भी अपने शासन काल मे अनेक बार कुठाराघात किये, फिर भी यह चालू है। अत सभी को आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त कर उसका प्रचार करना चाहिए। श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की दवाइया एसी हैं जो मनुष्यो को जीवन दे सकती है। इसके बाद वैद्य कमलापति जी ने बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन क इतिहास को बताते हुए और प० शिवशर्मा के मानहानि के मुकदमे मे सचि त्रआयुर्वेद क विजयी होने के बारे में बताया तथा बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की प्रशसा करते हुए कहा कि श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० ने आयुर्वेद

की प्रतिष्ठा बढाने में आशातीत उन्नति की है। श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि० के अध्यक्ष आयुर्वेद-शास्त्र के विद्वान वैद्य प० रामनारायणजी शर्मा है। श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० का प्रधान उद्देश्य आयुर्वेद की प्रतिष्ठा बढाना है। श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० की प्रत्येक दवा आज देश के कोने-कोने मे मिलती है। वैद्यनाथ दवाओ के स्टैन्डर्ड को कायम रखने मे पूरा ध्यान रखा जाता है। पूर्ण सत्यता के कारण श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० ने उन्नति की दौड मे पुराने औषध-निर्माताओ को बहुत पीछे छोड दिया है। अन्त मे प्रस्ताव स्वीकृत हुए और धन्यवाद ज्ञापन तथा प्रसाद वितरण कर सभा समाप्त हुई।

मिर्जापुर

राबर्ट्सगज मिर्जापुर मे धन्वन्तरि-जयन्ती का उत्सव बडे ही समारोह के साथ मनाया गया। समारोह मे स्थानीय कस्बे के अनेक प्रमुख व्यक्ति उपस्थित थे। इनके अतिरिक्त ग्रामीण क्षत्रो के अनक वैद्यो एव डाक्टरो ने उपस्थित होकर उत्सव को सफल बनाया। उन लोगो ने आयुर्वेद की उपयोगिता, आयुर्वेदिक प्रणाली की उत्तमता एव उसकी स्थिरता आदि के विषय मे अतीव सुन्दर प्रकाश डाला। श्री प० सीतारामजी वैद्य, श्री प० राममनोहर दीक्षित, कविराज श्री रामरेखा पाण्डेय तथा श्री प० यदुनाथ पाण्डेय आयुर्वेदाचार्य ने श्री भगवान् धन्वन्तरि जी क प्रादुर्भावकाल, उनका महत्व तथा उनके द्वारा रचित ग्रन्थो की विशद विवेचना की। उत्सव के आरम्भ मे ही पूजन का कार्य सपन्न हुआ। फिर स्थानीय बिक्रय-भवन के व्यवस्थापक श्री महादेव प्रसाद जी ने स्वागत-भाषण पढ कर सुनाया। उत्सव के अन्त मे सभी अभ्यागतो को धन्यवाद के साथ प्रसाद-वितरण किया गया।

लखीमपुर (खीरी)

लखीमपुर (खीरी) मे बडे धूमधाम के साथ भगवान धन्वन्तरि का जयन्ती समारोह मनाया गया। सर्व प्रथम भगवान धन्वन्तरि का पूजन नगर के वैद्य-हकीमो और प्रमुख नागरिको की उपस्थिति मे सविधि सम्पन्न हुआ। तत्पश्चात् सभा की कार्यवाही डा० शिवसहाय जी शर्मा के सभापतित्व मे आरम्भ हुई। श्री भगवती प्रसाद पाण्डेय ने स्वागत भाषण पढा। अनेक वक्ताओ के भाषणोपरात सभापतिजी ने अपने भाषण मे बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के आयुर्वेदोन्नति के कार्यों की सराहना की। प्रस्तावो के स्वीकृत होने के बाद प्रसाद-वितरण और धन्यवाद ज्ञापन कर सभा की कार्यवाही समाप्त की गयी।

कानपुर में समारोह

धन्वन्तरि-जयन्ती महोत्सव के अवसर पर अनुष्ठित स्वास्थ्य-दिवस को मनाने के लिए इस वर्ष मारवाडी औषधालय काहू कोठी, कानपुर मे निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महासम्मेलन के उपाध्यक्ष आचार्यप्रवर तीर्थत्रय पडित बदरी विशाल जी त्रिपाठी के सभापतित्व मे एक विराट् जन सभा का आयोजन किया गया। सभा मे नगर के विशिष्ट व्यक्तियो के अतिरिक्त अनेक गण्यमान्य वैद्य और आयुर्वेदज्ञ सम्मिलित हुए। सर्वप्रथम उत्तर प्रदेशीय स्वास्थ्य विभाग के उपमत्री डाक्टर जवाहरलाल जी रोहतगी ने झण्डोत्तोलन किया। तदुपरान्त आयुर्वेद के गौरव, श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के सचालक, वैद्यराज श्री रामनारायण जी शर्मा ने सभा का शुभारम्भ करते हुए कहा कि आज देश पूर्ण स्वतन्त्र है। केन्द्र और राज्यो मे जनता द्वारा चुनी गयी सरकारे सत्तारूढ है। सरकार भी यथाशक्ति कुछ कर ही रही है। फिर भी इस व्यवस्था मे कही-न-कही त्रुटि अवश्य है, जिससे कि दिन-पर दिन आयुर्वेद शास्त्र की मर्यादा व्यावहारिक रूप मे घटती जा रही है। आपने कानपुर जैसे उद्योगप्रधान बडे नगर मे एक श्रेष्ठ आयुर्वेदिक कालेज की स्थापना पर जोर देते हुए नगर के धनीमानी सज्जनो से जोरदार शब्दो मे अपील की कि वे लोग इस दिशा मे कदम उठावे। आपने कहा कि जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है मै भी इस सत्कार्य मे पीछे न रहूँगा।

वैद्य श्री रामनारायण जी के विचारो का समर्थन करते हुए उत्तर प्रदेश सरकार के उप-स्वास्थ्य-मत्री ने प्रशासकीय तथा व्यक्तिगत तौर पर सहायता देने का आश्वासन दिया। इसके पश्चात् झाँसी के विख्यात वैद्य श्री रघुबरदयाल जी भट्ट तथा अन्य विद्वानो के भाषण हुए।

अन्त मे मनोनीत अध्यक्ष ने अपने विद्वत्तापूर्ण भाषण मे एक सुदृढ वैद्य-सगठन की आवश्यकता पर जोर देते हुए बताया कि आयुर्वेद इस देश की प्राचीनतम विद्या है और इस कारण हमारी सास्कृतिक निधि है—अतएव इस निधि की न केवल रक्षा ही, प्रत्युत इसका विस्तार भी आवश्यक है।

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० द्वारा प्रेषित प्रस्तावो को सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया। प्रस्ताव मे सरकार से इस आशय की माँग की गयी कि वह जन-स्वास्थ्य-सरक्षण मे आयुर्वेद को पूर्ण प्रोत्साहन दे और द्वितीय पचवर्षीय योजना मे आयुर्वेद का अधिकाधिक जन-स्वास्थ्य के लिए उपयोग करे।

देशी चिकित्सा-पद्धति के विकास के लिए अनुसधान पर जोर देते हुए दूसरे प्रस्ताव मे बताया गया कि इस देश की प्राचीनतम चिकित्सा प्रणाली आयुर्वेद ही है। आयुर्वेद की श्रेष्ठता और उपयोगिता स्वयसिद्ध है—अत सरकार को चाहिए कि अपने देश के प्राचीन विज्ञान को पुनस्सस्थापित करने के लिए प्रत्येक राज्य मे अतिशीघ्र अनुसधान-कार्य प्रारम्भ करे। तीसरे प्रस्ताव द्वारा आसव-अरिष्टो को मद्य की श्रेणी मे रखे जाने का विरोध किया गया और सरकार से अनुरोध करते हुए आसव-अरिष्टो पर से यथाशीघ्र प्रतिबन्ध हटाने देने की माँग की गयी। चौथे प्रस्ताव मे यथाशीघ्र एक केन्द्रीय आयुर्वेद महाविद्यालय या आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना की माँग की गयी। धन्यवाद ज्ञापन के बाद सभा विसर्जित हुई।

बाँदा में स्वास्थ्य-दिवस

धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव के अवसर पर अनुष्ठित स्वास्थ्य दिवस को मनाने के लिए बाँदा मे एक जनसभा हुई। नगर तथा पाश्ववर्त्ती गाँवो के प्राय सभी प्रमुख वैद्य हकीम तथा सम्भ्रान्त व्यक्ति इस आयोजन मे शामिल थे। भारी सख्या मे सभा में लोगो की उपस्थिति यह स्पष्ट बता रही थी कि आयुर्वेद के लिए कितना प्रगाढ प्रेम उनके हृदय मे है। इस अवसर अपने विचार प्रकट करते हुए श्री भवानीदत्त जी व्यास ने कहा कि आहार स्वप्न और ब्रह्मचर्य रूपी त्रिस्तम्भ का प्रभाव ही भारत मे स्वास्थ्य की अवनति होने का कारण है।

स्वास्थ्योन्नति के लिए ब्रह्मचर्य की रक्षा पर बल देते हुए श्री रघुवश मणि वैद्य ने कहा कि ब्रह्मचर्य की रक्षा के फलस्वरूप हमारे पूर्व-पुरुष दीर्घजीवी होते थे और व्याधियाँ उन्हें नही सता पाती थी किन्तु आज की स्थिति ही सर्वथा विपरीत हो गयी है।

आयुर्वेदोत्थान के क्षेत्र में श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० द्वारा किए गए अभिनन्दनीय प्रयासो का उल्लेख करते हुए आपने बताया कि बैद्यनाथ प्रतिष्ठान द्वारा पूर्ण शास्त्रोक्त पद्धति से औषधियाँ तैयार की जाती है—इसी कारण वे अत्यन्त गुणकारी होती है।

बैद्यनाथ भवन द्वारा प्रेषित प्रस्तावो का पाठ हुआ और सर्व-सम्मति से सभी प्रस्ताव स्वीकृत हुए। प्रस्ताव मे सरकार से इस आशय की माँग की गयी कि वह जन-स्वास्थ्य-सरक्षण मे आयुर्वेद को पूर्ण प्रोत्साहन दे और द्वितीय पचवर्षीय योजना मे आयुर्वेद का अधिकाधिक जन-स्वास्थ्य के लिए उपयोग करे।

देशी चिकित्सा पद्धति के विकास के लिए अनुसधान पर जोर देते हुए दूसरे प्रस्ताव मे बताया गया कि इस देश की प्राचीनतम चिकित्सा प्रणाली आयुर्वेद ही है। आयुर्वेद की श्रेष्ठता और उपयोगिता स्वयसिद्ध है—अत सरकार को चाहिए कि अपने देश के प्राचीन विज्ञान को पुनस्सस्थापित करने के लिए प्रत्येक राज्य मे अतिशीघ्र अनुसधान कार्य प्रारम्भ करे। तीसरे प्रस्ताव द्वारा आसव अरिष्टो को मद्य की श्रेणी मे रखे जाने का विरोध किया गया और सरकार से अनुरोध किया गया कि आसव अरिष्ट पर से यथाशीघ्र प्रतिबन्ध हटा ले। चौथे प्रस्ताव मे शीघ्रातिशीघ्र एक केन्द्रीय आयुर्वेद महाविद्यालय या आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना की माँग की गयी। धन्यवाद ज्ञापन के पश्चात् कार्यवाही समाप्त हुई।

भगवन्तनगर (उन्नाव) में सभा

गत कार्त्तिक कृष्ण त्रयोदशी को स्वास्थ्य दिवस समारोह के सिलसिले मे भगवतनगर (उन्नाव) मे एक सार्वजनिक सभा का आयोजन बडे उल्लासपूर्ण वातावरण मे किया गया। सभा मे इस क्षेत्र के प्रतिष्ठित वैद्यो, आयुर्वेदज्ञो, हकीमो के अतिरिक्त विशिष्ट नागरिक भी उपस्थित थे। मगलाचरण के साथ कार्यवाही प्रारभ हुई। तत्पश्चात प० कृष्णकुमार जी ने आयुर्वेदोन्नति के बारे में अपने विचार व्यक्त किये। इस अवसर पर आयुर्वेद की उन्नति, वैद्यो के कर्त्तव्य और उनकी एकता, समुद्र-मथन से उत्पन्न विष और अमृत के बारे में विद्वानो द्वारा सम्यक् विवेचन हुआ। भाषणकर्त्ताओ में सर्वश्री शुकदेव प्रसाद जी, लल्लू प्रसाद जी पुजारी, महाबली प्रसाद शर्मा वैद्य, गया प्रसाद जी त्रिपाठी आदि प्रमुख थे। वक्ताओ ने एक स्वर से आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा-प्रद्धति के रूप में मान्यता प्रदान करने की अपील सरकार से की।

सभा में सर्वसम्मति से चार प्रस्ताव स्वीकृत किये गए। उन प्रस्तावो मे सरकार से इस आशय की माँग की गयी कि जनस्वास्थ्य-सरक्षण को दृष्टिगत करते हुए राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय स्वास्थ्य-नीति निर्धारित करे। साथ ही प्रति-वर्ष सरकार और जनता के सहयोग से श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर अखिल भारतीय स्वास्थ्य-सप्ताह का आयोजन किया जाय और केन्द्रीय सरकार स्वाधीनता दिवस और गणतत्र दिवस की भाति ही श्री धन्वन्तरि जयन्ती को राष्ट्रीय स्वास्थ्य-दिवस का अवकाश स्वीकृत करे। दूसरे प्रस्ताव द्वारा देशी चिकित्सा पद्धति के शिक्षण के लिए प्रत्येक जिले मे एक आयुर्वेद विद्यालय तथा साधनसम्पन्न एक आयुर्वेदिक अस्पताल स्थापित करने की माँग की गयी। तीसरे प्रस्ताव द्वारा आसव अरिष्टो के मद्य की श्रेणी मे रखे जाने का तीव्र विरोध किया गया और सरकार से यह माँग की गयी कि वह अविलम्ब इस प्रतिबन्ध को हटा ले। चौथे प्रस्ताव द्वारा अखिल भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ की गतिविधि पर असन्तोष प्रकट करते हुए एक सम्पन्न आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थापना का आयोजन वैद्यो द्वारा किए जाने की माँग की गयी। अत मे सभा सधन्यवाद विर्सजित की गयी।

पानीपत में स्वास्थ्य-दिवस

धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव के उपलक्ष मे स्वास्थ्य दिवस स्थानीय जैन धर्मशाला मे श्रीयुत वैद्य ऋषिकुमार शास्त्री की अध्यक्षता मे मनाया गया। इस अवसर विविध विद्वानो के भाषण, सगीतज्ञो के सुललित गायन और कवियो के सुमधुर कविता पाठ का भी सुन्दर आयोजन किया गया था। आयुर्वेद और स्वास्थ्य के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए सर्व श्री वैद्य रामकृष्ण जी शास्त्री, वैद्य रामधन जी शास्त्री, रामजीदास वैद्य कविराज एव मदनलाल शास्त्री के भाषण हुए। तदुपरात वैद्य नारायण दत्त जी आयुर्वेदालकार ने चार प्रस्ताव उपस्थित किये जो सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए। अध्यक्षीय भाषण, स्वल्पाहार और धन्यवाद-ज्ञापन के बाद कार्यवाही विर्सजित हुई।

पलपल में स्वास्थ्य-दिवस

श्री धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष में आयोजित सार्वजनिक स्वास्थ्य दिवस श्री लक्ष्मी जेनरल स्टोर पलपल में श्री सोहनलाल शर्मा वैद्य की अध्यक्षता मे समारोहपूर्वक मनाया गया। आयुर्वेद विषयक सारगर्भित भाषण विद्वानो द्वारा इस अवसर पर दिए गए। वक्ताओ के भाषणोपरान्त चार प्रस्ताव बारी-बारी से सभा मे प्रस्तुत किए गए, जो सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुए।

प्रस्तावो मे राष्ट्रीय स्तर पर स्वास्थ्य-नीति निर्धारण की माँग केन्द्रीय सरकार से की गयी। प्रस्ताव मे कहा गया कि आयुर्वेदिक चिकित्सा-प्रणाली को ही राष्ट्रीय चिकित्सा प्रणाली के रूप मे मान्यता दी जाए। साथ ही धन्वन्तरि जयन्ती के दिन सार्वजनिक अवकाश की घोषणा प्रशासकीय आधार पर की जाय। इस के अतिरिक्तआसव-अरिष्टो पर से अविलम्ब प्रतिबन्ध हटाने एव केन्द्रीय आयुर्वेदिक महाविद्यालय की स्थापना करने की माँग की गयी। अन्त में धन्यवाद-ज्ञापन के बाद कार्यवाही समाप्त हुई।

गोपीगज (बनारस) में सभा

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के गोपीगज (बनारस) बिक्री केन्द्र मे धूमधाम से धन्वन्तरि जयन्ती मनायी गयी। सभापति का आसन श्री प० रामनरेश जी वैद्य ने ग्रहण किया। भगवान धन्वन्तरि की पूजा के बाद सभा का कार्यक्रम आरम्भ हुआ। सर्वप्रथम श्री रमेशचन्द्र जी ने स्वागत भाषण पढा। तत्पश्चात् अनेक वैद्यो के सामयिक भाषण हुए। सभी वक्ताओ ने बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की महान आयुर्वेद-सेवाओ की भूरि भूरि प्रशसा की और वैद्यो से सगठित होकर आयुर्वेत्थान के कार्यो में सहयोग देने पर जोर दिया। सभापति जी ने अपने भाषण मे आयुर्वेद की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए आयुर्वेदोन्नति के लिए प्रयत्नशील बैद्यनाथ प्रतिष्ठान के सचालको की सराहना की। अन्त मे मे धन्यवाद ज्ञापन और प्रसाद वितरण कर सभा की कार्यवाही समाप्त की गयी।

ढयावोला (शिमला हिल्स) में समारोह

ढयावोला (शिमला हिल्स) मे श्री धन्वन्तरि जयन्ती बडे धूमधाम से सम्पन्न हुई। उत्सव मे स्थानीय सज्जनो ने अभूतपूर्व उल्लास तथा आह्लाद का प्रदर्शन किया। यह जयन्ती श्री तुलसीराम कौशल की अध्यक्षता मे हुई। सर्वप्रथम श्री धन्वन्तरि भगवान का पूजन हुआ। श्री काहानचन्द परीहार ने आयुर्वेदीय औषधियो के गुणो पर प्रकाश डालते हुए श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के सचालको की प्रगाढ प्रशसा की। अन्त मे अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए श्री तुलसीराम कौशल ने कहा कि आज भगवान

जो निर्लेप है उनसे आगे श्री धन्वन्तरि जी बढ चुके है। उन्होने ससार को अदभूत तथा बहुमूल्य औषधियाँ भेट की, जिनसे प्रत्येक प्राणी को दीर्घ आयु का वरदान प्राप्य है। सब कुछ केवल श्री धन्वन्तरि भगवान के दिव्य परीक्षण का नवीन तथा नवजीवनदायक सफल तथा स्थिर चिह्न है। प्रसाद वितरण कर सभा समाप्त हुई।

दिल्ली में भव्य समारोह

श्री देहली आयुर्वेदिक स्टोर्स चादी चौक देहली मे धन्वन्तरि जयन्ती समारोह बड उत्साह क साथ मनाया गया। देहली की सब स पुरानी वैद्य सस्था 'इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा" ने भी धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० क बिक्री-केन्द्र चादनी चौक मे ही मनाया। सब से पहले भगवान् धन्वन्तरि जी का पूजन किया गया। तत्पश्चात् भारत क प्रसिद्ध वैद्य-कविराज उपेन्द्रनाथ दास जी की अध्यक्षता मे सभा हुई, जिस मे देहली के सभी प्रमुख वैद्यो ने भाग लिया और आयुर्वेद की स्थिति पर तथा भगवान धन्वन्तरि जी के जीवन चरित्र पर प्रकाश डाला गया। श्री बैद्यनाथ सरकार ने अपन विचार प्रकट करते हुए भारत सरकार से अनुरोध किया कि आयुर्वेद चिकित्सा को राष्ट्रीय चिकित्सा स्वीकार करे। वैद्य घनानन्द जी पन्त ने अपने भाषण मे कहा कि वैद्यबन्धु जो चिकित्सा करते है वे जनता की नि स्वार्थभाव से सेवा समझ कर यह करे। केवल आय के लिये नही करे। वैद्य समाज को उन्नत करने का केवल एक यही साधन है। वैद्य मोहनलाल शास्त्री जी ने अपने भाषण मे बताया कि हम किस प्रकार वैद्य समाज को ऊँचा उठा सकत है और भगवान् धन्वन्तरि जी के जीवन तथा उनके उपदशो से शिक्षा ग्रहण कर सकते है। उन्होने कहा भगवान धन्वन्तरि जी का यही आदेश है कि वैद्य केवल लोक सेवा के लिए ही बना है। वैद्य जगदीश चन्द्रजी आयुर्वेदाचार्य ने कहा कि एक वैद्य का कर्तव्य केवल धन इकट्ठा करना ही नही है, उसका कर्तव्य गरीब जनता की सेवा चिकित्सा तथा धन द्वारा करना है। जब तक हम केवल धन कमाने की इच्छा को नही त्याग देगे तब तक हम उन्नति नही करेगे। श्री जागेराम गुप्ता वैद्य ने अपने भाषण में कहा कि सरकार आयुर्वेद को अच्छा इसलिये नही समझती कि एक डाक्टर बनने मे जितना धन खर्च होता है, उतना एक वैद्य बनने मे नही होता। अत सरकार को आयुर्वेदिक कालिज आदि खोलने चाहिये तथा वहा वैद्यो को दोनो ही पद्धति का ज्ञान कराना चाहिए। जो कुछ सरकार एलोपैथिक के लिए कर रही है वही आयुर्वेद के लिए भी करे तो नि सन्देह आयुर्वेद बहुत आगे बढ सकता है। सब के बाद मे सभापति जी ने अपना भाषण दिया और कहा कि आयुर्वेद सब से पुरानी पद्धति है और जिस समय महाभारत का युद्ध हो रहा था उस समय जो योद्धा युद्ध मे जख्मी हो जाते थे उनके जख्मो पर आयुर्वेदिक दवा ही लगाई जाती थी और वह दवा ऐसी होती थी कि रात्रि को लगाने पर प्रात वही योद्धा फिर युद्ध मे जाकर लडत थे। श्री सभापति जी ने सरकार स यह भी माग की कि राजधानी मे एक आयुर्वेदिक विश्वविद्यालय भी सरकार को खोलना चाहिए जिस मे अच्छ-अच्छे विद्वान व्यक्ति हो जहा पर विद्यार्थी उच्च शिक्षा ग्रहण कर सके यह काम सरकार ही कर सकती है। जैसे कि सरकार ने मैडिकल कालज खोल रख है, उसी प्रकार आयुर्वेद विश्वविद्यालय भी सरकार को खोलना चाहिये और सरकार को आयुर्वेदिक चिकित्सा को राष्ट्रीय चिकित्सा स्वीकार करना चाहिए।

इसके पश्चात् श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० की ओर से भगवान धन्वन्तरि जी का प्रसाद वितरण किया गया और आगन्तुको का धन्यवाद करते हुए सभा विसर्जित की गई।

बिहार के विभिन्न स्थानों में समारोह

बेगूसराय में समारोह

बेगूसराय मे धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव उत्साहपूर्ण ढग से मनाया गया, जिसमे इस क्षेत्र के सभी वैद्य-हकीमो एव स्थानीय नागरिको ने विशाल सख्या में भाग लिया।

सर्व प्रथम श्री धन्वन्तरि भगवान श्री विधिवत् पूजा की गयी। पश्चात् आचार्य ब्रह्मदत्त शर्मा के सभापतित्व में सभा की कार्वाही शुरू हुई। प० बिहारीलाल शास्त्री ने स्वागत भाषण पढा। कई वक्ताओ के सामयिक भाषणोपरान्त चार प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए। सभापति जी ने भगवान धन्वन्तरि जी के इतिहास पर प्रकाश डालने हुए आयुर्वेद में शल्य शास्त्र के विषय में विवेचन किया। उन्होने सरकार से अनुरोध किया कि

आयुर्वेद के विद्वानो को उचित सहायता दी जाय एव आयुर्वेद की सस्थाओ की उपेक्षा नही की जाय। पश्चात बिक्री केन्द्र के व्यवस्थापक प० बिहारी लाल शास्त्री न समागत वैद्यो एव हकीमो तथा नागरिको के प्रति आभार प्रकट करते हुए धन्यवाद दिया और सभा की कार्यवाही समाप्त की गयी।

जयनगर में सभा

श्री हरिहर आयुर्वेदिक स्टोर जयनगर (दरभगा) में श्री धन्वन्तरि जयन्ती सोल्लास मनायी गयी। प्रथम ४।। बज साय भगवान धन्वन्तरि का पूजन किया गया। तत्पश्चात ५।। बज शाम से सावजनिक सभा हुई। सवसम्मति से यहा के प्रमुख साहित्यकार श्री अयोध्या नाथ जी सभापति चुन गय। स्वागत भाषण प० हरिप्रसाद शर्मा द्वारा सुनाय जान के पश्चात श्री किशोर शर्मा प० बिहितलाल जी झा एव डा० शिवनाथ सिह के भाषण हुए। वक्ताओ न श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवट लि० के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करते हुए आयुर्वेद की समद्धि की आशा की। अन्त म सभापति जी न अपन भाषण म बताया कि आयुर्वेद म अनुसन्धान की विशष आवश्यकता है। इसक बिना इसकी प्रगति म बाधा होगी। उन्होन श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के प्रयत्नो की वैद्यो क सगठन के निमित्त प्रशसा की। अन्त म आभार प्रदशन एव प्रसाद वितरण के बाद सभा विसर्जित हुई।

पूर्णिया में सफल आयोजन

पूर्णिया म बड धूम धाम के साथ श्री धन्वन्तरि जयन्ती मनाई गई। सध्या को ५ बज श्री धन्वन्तरि भगवान की विधिवत पूजा की गई। तदुपरान्त ६ बज से सभा की कारवाई आरम्भ हुई। सवप्रथम श्री दरोगा प्रसाद चौधरी अध्यक्ष जिला काग्रस कमेटी पूर्णियाँ सव सम्मति से सभा के अध्यक्ष चुन गय। इसके बाद सचित्र आयुर्वेद पचाग इत्यादि का वितरण किया गया। बाद मे श्री रामरिछपाल जोशी जी न स्वागत भाषण पढा और प्रस्ताव सवसम्मति से पास किया गया। अनक वैद्यो के भाषणोपरान्त सभापति जी का भाषण हुआ और प्रसाद वितरण तथा धन्यवाद ज्ञापन कर सभा की कायवाही समाप्त की गयी।

समस्तीपुर में सभा

समस्तीपुर स्थित जोशी फार्मेसी में भगवान धन्वन्तरि की जयन्ती प० रामकरण जी मिश्र वैद्य की अध्यक्षता म समारोह पूवक मनाई गई। प० मुक्तीनाथ झा वैद्य और कविराज सतीशचन्द्र त्रिपाठी न आयुर्वेद की महत्ता और भगवान धन्वन्तरि के जीवन और कार्यो पर प्रकाश डाला। अध्यक्ष पद से बोलते हुए मिश्र जी न सरकार से माग की कि आयुर्वेद विज्ञान को सरकार हर तरह की मदद करे जिसस कि भारत की जनता की वह अधिक से अधिक सेवा कर सके। पाच प्रस्ताव भी स्वीकृत हुए। उपस्थित लोगो म प्रसाद वितरण कर आयोजन समाप्त किया गया।

छपरा में अनुष्ठान

छपरा स्थित स्वदशी दवाखाना म श्री भगवान धन्वन्तरि का पूजन छपरा के सुप्रसिद्ध विद्वान ज्योतिषाचाय प० रामच द्र ओझा के आचायत्व म सविधि सम्पन्न हुआ। सन्ध्या ६।। बज से श्री भगवान ध वन्तरि को श्रद्धाजलि अर्पित करन के लिय श्री ब्रज द्र बहादुर एम० एल० सी० अध्यक्ष छपरा नगरपालिका के सभापतित्व म नगर के प्रमुख नागरिको तथा जिल के वैद्यो की एक सभा हुई। सवप्रथम स्वदेशी दवाखाना के अध्यक्ष श्री हरदेव प्रसाद सिह न स्वागत भाषण पढा। तत्पश्चात श्री मान प० कमलाकात मिश्र श्री प० धुरेक्षण शास्त्री श्री रामादश सिह आयुर्वेदाचाय श्री प० पशुपति नाथ त्रिपाठी ए० एम० एस० श्री रामाप्रसाद यादव प्रधान मत्री सारणजिला वैद्य सभा श्री प० गोपाल दत्त जी आयुर्वेद शास्त्री प्रधान मत्री छपरा नगर वैद्य सभा तथा प० गोविन्दमणि त्रिपाठी प्रभृति तथा सभापति जी के सारगर्भित भाषण हुए। प्राय सभी वक्ताओ न श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवट लिमिटड की ओर से आयुर्वेद उत्थान के लिए होन वाल कार्यो की भूरि भूरि प्रशसा की। सभापति जी न अपनी ओर से श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवट लिमिटड तथा उसके सचालक श्री प० रामनारायण शर्मा के प्रति कृतज्ञता प्रगट करते हुए एक धन्यबाद का प्रस्ताव पेश किया जो सवसमिति से स्वीकृत हुआ। श्री हरदेव प्रसाद सिह न पाच प्रस्ताव पेश किए जो सव सम्मति से स्वीकृत किय गय। अत मे सभापति तथा आगत सज्जनों को धन्यवाद देन के बाद सभा

विसर्जित हुई। सभी लोगो को जलपान कराया गया तथा उपहार वितरण किया गया।

सीवान में समारोह

सीवान में श्री धन्वन्तरि जयन्ती धूमधाम से मनायी गयी। पूजन समाप्ति के बाद प्रसाद वितरण किया गया। फिर सभा की कार्यवाही प० भूमित्र शर्मा वैद्य के सभापतित्व में शुरु हुई। मगलाचरण के पश्चात् चाय पार्टी बिक्रीकेन्द्र की ओर से दी गयी। चाय पार्टी मे वैद्य और आगत सज्जन सम्मिलित हुए। इसके बाद स्वागत भाषण पढा गया। प्रधान वक्ता मे डा० सरयू प्रसाद गुप्त, श्री शिवनाथ प्रसाद शर्मा, शुकदेव पति वैद्य रहे। वक्ताओ ने वैद्य-हकीमो से निवेदन किया कि धन्वन्तरि जयन्ती की इस पुण्य तिथि में अपने को सगठित करने का व्रत ले। सगठन और आपसी मेल-मिलाप से ही आयुर्वेद को आम जनता मे प्रचलित कर सकते हैं। पाँचो प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास किये गये। अन्त मे धन्यवाद ज्ञापन कर कार्यवाही समाप्त हुई।

बैरगनिया (मुजफ्फरपुर) में समारोह

बैरगनिया मे श्री देवकरण प्रसाद अग्रवाल के सभापतित्व मे श्री धन्वन्तरि जयन्ती बडे समारोह के साथ मनायी गयी। इस अवसर पर स्थानीय तथा देहात के सम्मान्य वैद्य-डा० तथा अधिकारी वर्ग ने सम्मिलित होकर श्रद्धाजलि अर्पित की। भगवान धन्वन्तरि की पूजा के बाद श्री जनार्दन शर्मा (व्यवस्थापक) बिक्रीकेन्द्र ने स्वागत भाषण पढा।

तत् पश्चात् सभापति श्री वासुदेव शास्त्री ने अपने भाषण में कहा कि श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० द्वारा निर्मित सभी दवाइया आशुगुणकारी और प्रभावोत्पादक होती है। आपने यह भी कहा कि मुझे आयुर्वेदीय चिकित्सा पद्धति में केवल श्रद्धा ही नही बल्कि पूर्ण विश्वास भी है। आपने श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० की शुभ कामना करते हुए कहा कि आयुर्वेद की उन्नति के लिए इस युग मे ऐसी ही सस्थाएँ आवश्यक है क्योकि वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन विज्ञान को दृष्टि में रखत हुए दवाओ का निर्माण करता है। अन्त में प्रसाद वितरण किया गया।

मोतिहारी में सभा

मोतिहारी में धन्वन्तरि जयन्ती बडे धूमधाम से मनायी गयी। नगर के अनेक गण्यमान्य चिकित्सक एव सम्भ्रान्त नागरिक इस अवसर पर उपस्थित थे। कई वक्ताओ ने अपने भाषण मे वैद्यनाथ औषधियो की गुणवत्ता की प्रशसा करते हुए भगवान धन्वन्तरि के प्रति श्रद्धाजलि अर्पित की। अन्त मे प्रसाद वितरण और धन्यवाद ज्ञापन कर सभा की कार्यवाही समाप्त हुई।

बेतिया में आयोजन

बेतिया मे धन्वन्तरि जयन्ती बडे धूमधाम से मनायी गयी। भगवान धन्वन्तरि के पूजन के पश्चात स्थानीय वैद्यो हकीमो एव नागरिको की एक सभा हुई, जिसमे प० वैद्यनाथ मिश्र वैद्य न सभापति का आसन ग्रहण किया। अनेक वक्ताओ ने अपने भाषण मे आयुर्वेद की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए आयुर्वेदोन्नति के लिए श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के महत्त्वपूर्ण प्रयत्नो की भूरि-भूरि प्रशसा की। सभापति जी ने अपने भाषण में वैद्यनाथ औषधियो की गुणवत्ता की सराहना करते हुए वैद्यो से सगठित होकर कार्य करने की अपील की। शुरू मे बिक्रीकेन्द्र व्यवस्थापक ने स्वागत भाषण पढा। पाचो प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए। अन्त मे प्रसाद वितरण और धन्यबाद ज्ञापन कर सभा समाप्त हुई।

सरैया (शाहाबाद) में समारोह

सरैया (शाहाबाद) मे धन्वन्तरि जयन्ती बडे धूमधाम से मनायी गयी। भगवान धन्वन्तरि के पूजन के पश्चात स्थानीय वैद्यो हकीमो एव नागरिको की एक सभा हुई। अनेक वक्ताओ ने अपने भाषण में आयुर्वेद की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए आयुर्वेदोन्नति के लिए श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के महत्त्वपूर्ण प्रयत्नो की भूरि-भूरि प्रशसा की। सभापतिजी ने अपने भाषण में वैद्यनाथ औषधियो की गुणवत्ता की सराहना करते हुए वैद्यो से सगठित होकर कार्य करने की अपील की। शुरू में श्री कृष्णचन्द्र जमुना प्रसाद ने स्वागत भाषण पढा। पाचो प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए। अन्त में प्रसाद वितरण और धन्यवाद-ज्ञापन कर सभा समाप्त हुई।

मेराल (पलामू) में आयोजन

मेराल (पलामू) स्थित नरसिंह आयुर्वेदिक औषधालय में धन्वन्तरि जयन्ती बडे धूमधाम से मनायी गयी। भगवान धन्वन्तरि के पूजन के पश्चात् स्थानीय वैद्यों-हकीमों एवं नागरिकों की एक सभा हुई, जिसमें प० रमापति तिवारी



सहारनपुर म श्रनुष्ठित धन्वन्तरि जयन्ती ममारोह की मभा का दश्य



फरुखाबाद मे धन्वन्तरि जयन्ती समारोह



कोचम श्रनष्ठित धन्वन्तरि जयन्ती ममाराह की सभा



मटियाबुर्ज (कलकत्ता) म धन्वन्तरि जयन्ती समाराह की सभा का दृश्य



पुरी म अनुष्ठित धन्वन्तरि जयन्ती समारोह की सभा का एक दृश्य



अलवर म अनगि्ठत धन्वन्तरि जयन्ती समारोह का दृश्य



कोटा म धन्वन्तरि जयन्ती समारोह की सभा



गुना म अनुष्ठित धन्वन्तरि जयन्ती समारोह की सभा का एक दृश्य

जी ने सभापति का आसन ग्रहण किया। अनेक वक्ताओ न अपने भाषण मे आयुर्वेदोन्नति के लिए श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के महत्वपूर्ण प्रयत्नो की भूरि-भूरि प्रशसा की। सभापति जी ने अपने भाषण मे वैद्यनाथ औषधियो की गुणवत्ता की सराहना करते हुए वैद्यो स सगठित होकर कार्य करने की अपील की। शुरू मे बिक्रीकेन्द्र-सचालक ने स्वागत भाषण पढा। पाचो प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए। अन्त मे प्रसाद वितरण और धन्यवाद ज्ञापन कर सभा समाप्त हुई।

रांची में समारोह

राची में 'जयश्री' की ओर से प० श्री देवनारायण मिश्र जी क सभापतित्व मे राची क नागरिको एव वैद्यो की उपस्थिति में भगवान धन्वन्तरि की जयन्ती मनायी गयी और भवन से आय हुए पाच प्रस्तावो को उपस्थित वैद्यो एव नागरिको को पढ कर सुनाया गया, तथा सरकार का आयुर्वेद के प्रति वर्तमान विचार का भी स्पष्टीकरण किया गया। सरकार स जो आयुर्वेद क लिय अनुदान मिला है, वह नगण्य है। अत सरकार अबिलम्ब आयुर्वेद को प्रश्रय दकर अधिक उन्नति क पथ पर अग्रसर कर एव सुयोग्य वैद्य विद्वानो का सम्मान डाक्टरो क अनुरूप किया जाय। अपन गणतन्त्र राज्य मे सभी को समानाधिकार प्राप्त है। इसमे आयुर्वेद को भी उतना ही अधिकार प्राप्त हो जितना अन्य पैथियो को प्राप्त हो रहा है। कई विद्वानो के भाषण हुए और आयुर्वेद के गम्भीर विषयो पर समुचित प्रकाश डाला गया। पश्चात सामुहिक रूप से भगवान धन्वन्तरि को श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए सभा विसर्जित की गयी।

रक्सौल (चम्पारण) में सफल आयोजन

प० शिवप्रसाद सोमदत्त शर्मा, रक्सौल (चम्पारण) द्वारा धन्वन्तरि जयन्ती बडे धूमधाम से मनायी गयी। सर्वप्रथम प० शिवप्रसाद शर्मा ने भगवान धन्वन्तरि की सविधि पूजा की। तत्पश्चात् राजवैद्य प० रामचन्द्र जी मिश्र क सभापतित्व में वैद्य सभा हुई, जिसमे नगर के अनेक प्रमुख अधिकारी एव सम्भ्रान्त नागरिक शामिल हुए। सर्वप्रथम स्वागत भाषण पढा गया। इसके बाद अनेक वक्ताओ के भाषण हुए। उन्होने वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० की भूरि-भूरि प्रशसा की। प० रामवचन मिश्र, प० भुवनेश्वर पाण्डेय एव प० विजयमास्टर ने भी सामयिक भाषण किए। अन्त मे सभापति जी ने अपने भाषण में आयुर्वेद की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के महत्वपूर्ण कार्यों की आन्तरिक सराहना की। प्रसाद-वितरण और धन्यवाद-ज्ञापन कर सभा समाप्त हुई।

गोपालगज (सारन) में सभा

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की एजेन्सी प्रताप फैन्सी स्टोर, गोपालगज मे श्री धन्वन्तरि भगवान की पुण्य जयन्ती ससमारोह श्री प० सरयू प्रसाद शास्त्री आयुर्वेदाचार्य की अध्यक्षता मे मनायी गई। इस अवसर पर स्थानीय 'वैद्य सघ" और हकीमवर्ग का सहयोग सराहनीय था। आचार्य विन्ध्याचल पाण्डेय न अपन उद्घाटन भाषण में आयुर्वेद तथा भगवान धन्वन्तरि की जयन्ती पर प्रकाश डालत हुए अष्टाङ्ग आयुर्वेद की उपादयता की ओर उपस्थित सज्जनो का ध्यान आकर्षित किया। तत्पश्चात् श्री ब्रह्मानन्द मिश्र साहित्याचार्य ने कविता पढी। तत्पश्चात् वैद्यो न अपने भाषण मे अनक प्रकार से आयुर्वेद की उपादेयता तथा महत्ता बतात हुए भगवान् धन्वन्तरि के प्रति अपनी श्रद्धाजलिया अर्पित की। धन्यवाद-ज्ञापन तथा प्रसाद वितरण कर कार्यवाही समाप्त की गयी।

भागलपुर में स्वास्थ्य-दिवस

स्वास्थ्य दिवस के उपलक्ष मे सूजागज, भागलपुर में अनुष्ठित जनसभा की कार्यवाही कविराज प० श्रीनारायण जी शर्मा, आयुर्वेदाचार्य की अध्यक्षता में सोत्साह और सोल्लास सम्पन्न हुई। सभा मे वैद्य, आयुर्वेदीय विद्वान और विशिष्ट नागरिक पर्याप्त सख्या में सम्मिलित हुए थे। सर्व प्रथम श्री विभूति भूषण भट्टाचार्य ने आयुर्वेद की महत्ता बतायी और उपस्थित वैद्यो से अपील की कि वे लोग आयुर्वेद की प्राचीन गरिमा से ही सन्तुष्ट होकर बैठे नही रहें बल्कि प्राचीन गौरव के अनुकूल उसका वर्तमान भी बनावे।

अध्यक्ष पद से कविराज श्रीनारायण शर्मा ने बताया कि मनुष्य को आयुर्वेद रूपी अमृत का पानकर सदाचार पालन द्वारा तथा ऋतुचर्या, दिनचर्या एव रसायन के सेवन से दीर्घ जीवन प्राप्त करना चाहिए। शारीरिक एव मानसिक दोषो से उत्पन्न विष को मन एव शारीरिक शुद्धि द्वारा दूरकर नियम का पालन करते रहने से ही दीर्घ- जीवन की प्राप्ति सभव है।

श्री धन्वन्तरि द्वारा शल्य-क्रिया (चीरफाड) का प्रचार एव व्यवहार किया गया था। इसलिए, वैद्यो को भी शल्य-क्रिया में दक्षता प्राप्त करनी चाहिए। क्योकि, शल्य-क्रिया में पिछडे रहने से वैद्य वर्ग सम्पूर्ण चिकित्सा का अधिकारी नही हो सकता। आपसी तनाव अथवा मतभेदो को भुलाकर सहयोग एव अध्ययन के बल पर आयुर्वेद की अभिवृद्धि करने की मार्मिक अपील आपने वैद्य-बन्धुओ से की।

अध्यक्ष द्वारा कतिपय प्रस्ताव पेश किये गये जो सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुए। प्रस्तावो मे सरकार से इस आशय की माँग की गयी कि वह जन-स्वास्थ्य-सरक्षण मे आयुर्वेद को पूर्ण प्रोत्साहन दे और द्वितीय पचवर्षीय योजना मे जन-स्वास्थ्य के लिए आयुर्वेद का अधिकाधिक उपयोग करे। साथ ही इस देश के प्राचीनतम विज्ञान आयुर्वेद को पुन सस्थापित करने के लिए प्रत्येक राज्य मे अतिशीघ्र अनुसधान कार्य प्रारम्भ करे। आसव-अरिष्टो पर लगे प्रतिबन्ध हटाने एव एक केन्द्रीय आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थापना किए जाने की माँग भी की गयी। अन्त में सभा सधन्यवाद विसर्जित हुई।

टाटानगर में स्वास्थ्य दिवस

धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष मे आयोजित सार्वजनिक स्वास्थ्य दिवस टाटानगर में समारोह पूर्वक प्रोफेसर भगवान सिंह की अध्यक्षता मे मनाया गया। तोरण, बन्दनवार तथा बत्तियो से सभा-स्थल को अच्छी तरह सजाया गया था। मगलाचरण के साथ कार्यवाही का श्रीगणेश हुआ। कतिपय वक्ताओ के भाषण हुए। अध्यक्ष पद से प्रोफेसर भगवान सिह ने स्वास्थ्य और ब्रह्मचर्य के अन्योन्याश्रय सम्बन्धो पर प्रकाश डालते हुए कहा कि आयुर्वेदिक औषधियो का प्रचार सामान्य जनता में बहुत अधिक है। आयुर्वेदिक औषधियो की गुणकारिता का उल्लेख करते हुए आपने बताया कि आयुर्वेदिक औषधिया एलोपैथी की औषधियो से अपेक्षाकृत बहुत सस्ते भाव मे मिलती हैं और गुणकारी भी होती हैं। जिन अन्य व्यक्तियो ने अपने विचार व्यक्त किए उनमें सर्व श्री अयोध्या प्रसाद जी वैद्य, केदारनाथ शास्त्री, तुलसीराम जी वैद्य, ब्रह्मचारी धर्मानन्द जी शास्त्री एव हकीम मुहम्मद यासीन प्रमुख है। तत्पश्चात् प्रस्ताव एक-एक करके सर्व सम्मति से पारित हुए। उन प्रस्तावो में जन-स्वास्थ्य-सरक्षण के लिए आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति के रूप में मान्यता देने, द्वितीय पचवर्षीय योजना में अधिकाधिक आयुर्वेद के उपयोग किए जाने, आसव-अरिष्टो पर से तत्काल प्रतिबन्ध हटाने एव शीघ्रातिशीघ्र एक केन्द्रीय आयुर्वेद महाविद्यालय या आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना करने की माँग की गयी। धन्यवाद-ज्ञापन के बाद सभा विसर्जित हुई।

इमामगज (छपरा) में स्वास्थ्य दिवस

श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव के उपलक्ष में आयोजित स्वास्थ्य दिवस श्री ब्रजेन्द्र बहादुर एम० एस-सी०, अध्यक्ष छपरा नगरपालिका की अध्यक्षता मे समारोह-पूर्वक मनाया गया। सभा मे वैद्यो, हकीमो और स्थानीय जनता की उपस्थिति सतोषजनक थी। मगलाचरण के साथ कार्यवाही का श्रीगणेश हुआ। कतिपय विद्वान वैद्यो के भाषण हुए, जिनमे सर्व श्री कमलाकान्त मिश्र, धुरेक्ष्ण शास्त्री, रामादर्श सिंह आयुर्वेदाचार्य, पशुपति नाथ त्रिपाठी ए० एम० एस० एव गोपालदत्त जी आयुर्वेद शास्त्री, प्रमुख थे। सभी वक्ताओ ने श्री बैद्यनाथ आयर्वेद भवन प्राइवेट लि० की ओर से आयुर्वेदोत्थान के प्रयत्नो के लिए किये जाने वाले कार्यों की भूरि-भूरि प्रशसा की। अध्यक्ष महोदय ने बैद्यनाथ प्रतिष्ठान के सचालक वैद्य रामनारायण शर्मा के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए सामयिक भाषण दिया। तदनन्तर ४ प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित हुए। धन्यवाद ज्ञापन के बाद कार्यवाही समाप्त हुई।

गया में स्वास्थ्य दिवस

गत २१ अक्तुबर को गया माहुरी ट्रेडिंग कम्पनी के तत्वावधान में अनुष्ठित धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव के उपलक्ष मे स्वास्थ्य दिवस श्री ब्रजेश्वर प्रसाद जी एम० पी० की अध्यक्षता मे बडे उत्साहपूर्ण वातावरण मे मनाया गया। इस दिवस को मनाने के लिए नगर के प्राय सभी प्रमुख वैद्य, कविराज एव आयुर्वेदप्रेमी जनता जुट कर आयी थी। सभापति के गवेषणापूर्ण आयुर्वेद विषयक भाषण के के अतिरिक्त कतिपय वैद्यो और विद्वानो के समयोपयोगी भाषण हुए। तदनन्तर आयुर्वेदोत्थान विषयक पाँच प्रस्ताव विभिन्न विद्वानो द्वारा प्रस्तावित, समर्थित और अनुमोदित होकर सर्व सम्मति से पारित हुए। अन्त में धन्यवाद ज्ञापन के पश्चात् कार्यवाही समाप्त हुई।

फारबिसगंज में स्वास्थ्य दिवस

श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव के उपलक्ष में सार्वजनिक स्वास्थ्य दिवस मनाने के लिए श्री बिहारी मिश्र, प्रिंसिपल सस्कृत महाविद्यालय फारबिसगज की अध्यक्षता में एक जन सभा का आयोजन किया गया। इस समारोह में वैद्य समुदाय के साथ-साथ स्थानीय प्रमुख नागरिको ने भी पूर्ण सहयोग प्रदान किया। धन्वन्तरि और आयुर्वेद विषयक कविता पाठ तथा भाषण होने के उपरान्त ४ प्रस्ताव सभा के समक्ष पेश किये गये जो सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुए। प्रस्तावो मे इस आशय की माग की गयी कि जन-स्वास्थ्य सरक्षण मे आयुर्वेद को पूर्ण प्रोत्साहन मिले द्वितीय पचवर्षीय योजना मे अधिकाधिक आयुर्वेद का उपयोग हो, आसव अरिष्टो पर से तत्काल प्रतिबध हटे एव शीघ्राति-शीघ्र एक केन्द्रीय आयुर्वेद महाविद्यालय या आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना की जाय। अध्यक्षीय भाषण तथा धन्यवाद-ज्ञापन के बाद सभा की कार्यवाही समाप्त की गयी।

आरा में भव्य समारोह

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के आरा स्थित बिक्री-केन्द्र मे धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर प्रसिद्ध विद्वान प० गोपालदत्त जी शास्त्री के सभापतित्व मे स्वास्थ्य दिवस मनाया गया। सभा मे नगर के सभी प्रतिष्ठित वैद्य विद्वान एव पत्रकार आदि उपस्थित थे। सर्वप्रथम केन्द्राध्यक्ष प० कमलकान्त शर्मा ने आगत सज्जनो का स्वागत किया एव मुद्रित स्वागत भाषण पढा। स्वागत भाषण में धन्वन्तरि जयन्ती को व्यापक और सार्वजनिक रूप से मनाने का अनुरोध किया गया और साथ-साथ सरकार से भी अनुरोध किया गया प्रत्येक प्रान्तीय सरकार आयुर्वेद को पूर्ण प्रोत्साहन दें।

इसके बाद डा० रघुबर दयाल जी, प० बनमाली जी त्रिपाठी वैद्य आदि अनेक विद्वानो मे भगवान धन्वन्तरि को श्रद्धाञ्जलि अर्पित की तथा आयुर्वेद की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए बताया कि जहाँ आयुर्वेद से ८० प्रतिशत जनता की सेवा होती है वहाँ आयुर्वेद पर दस प्रतिशत भी खर्च नही किया जाता।

अन्त में सभापति महोदय ने श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के सचालको के इस महान् कार्य की प्रशसा की कि केवल इनका अर्थोपार्जन एव व्यापारिक दृष्टिकोण नही है अपितु आयुर्वेद के उत्थान और जनता के स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में तन-मन-धन से सारे भारतवर्ष मे जुटे हुए है। इनके द्वारा निर्मित औषधियाँ आज एलोपैथी औषधियो का पूरा मुकाबला कर रही है।

अन्त मे प्रसाद वितरण किया गया तथा पाँच प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए।

सासाराम में स्वास्थ्य-दिवस

श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव के उपलक्ष मे सार्वजनिक स्वास्थ्य दिवस श्री चन्द्रशेखर मिश्र की अध्यक्षता में ससमारोह मनाया गया। इस आयोजन मे वैद्यो, हकीमो और विशिष्ट नागरिको ने पर्याप्त सख्या मे भाग लिया। मगलाचरण के बाद कार्यवाही प्रारम्भ हुई। इसके बाद कतिपय आयुर्वेदज्ञो तथा आयुर्वेदप्रेमियो के भाषण हुए। वक्ताओ ने मुक्त कण्ठ से आयुर्वेद की उपयोगिता और गुणकारिता की प्रशसा की और आयुर्वेदीय चिकित्सा पद्धति को अन्य पद्धतियो से उत्तम ठहराया। अध्यक्ष के सारगर्भित भाषण के बाद ४ प्रस्ताव एक-एक कर पेश किये गये और सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुए।

प्रस्तावो मे जन-स्वास्थ्य सरक्षण के लिए आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के रूप में मान्यता प्रदान करने, धन्वन्तरि जयन्ती को राष्ट्रीय स्वास्थ्य दिवस के रूप मे मनाने तथा उस दिन सार्वजनिक अवकाश रखने, आसव-अरिष्टो पर से प्रतिबन्ध हटाने और एक केन्द्रीय आयुर्वेदिक महाविद्यालय की स्थापना करने की माग की गयी। अन्त मे धन्यवाद ज्ञापन के बाद कार्यवाही समाप्त हुई।

कटिहार में स्वास्थ्य-दिवस

श्री धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष मे आयोजित सार्वजनिक स्वास्थ्य दिवस श्री स्नेहीलाल जी की अध्यक्षता मे ससमारोह स्थानीय मगलबाजार मे मनाया गया। मगलाचरण के साथ कार्यवाही प्रारम्भ हुई। तदुपरान्त वक्ताओ के भाषण हुए। श्री सूर्यमणि तिवारी का भाषण अत्यन्त प्रशसित हुआ। आपने आयुर्वेदीय औषधियो की विशेषता का उल्लेख करते हुए कहा कि देश अब स्वतन्त्र हो चुका है—इसलिए देशवासी आयुर्वेदिक औषधियो का ही सेवन कर इस प्राचीन विद्या को प्रोत्साहित करें। वैद्यनाथ निर्मित औषधियो की गुणवत्ता का उल्लेख करते

हुए आपने वैद्यनाथ औषधियो को अपनाने की अपील की। वैद्यनाथ प्रतिष्ठान द्वारा प्रेषित ४ प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए। श्री रघुबर दयाल द्वारा धन्यवाद-ज्ञापन के पश्चात् कार्यवाही समाप्त हुई।

गिरिडीह में स्वास्थ्य-दिवस

गत कार्त्तिक कृष्ण त्रयोदशी को श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव के उपलक्ष मे स्वास्थ्य दिवस का आयोजन गिरिडीह मे श्री बलदेवदत्त जी शास्त्री की अध्यक्षता मे किया गया। अध्यक्ष के अतिरिक्त सर्व श्री अनन्तलाल पाठक, कविराज वैद्यनाथ झा, चन्द्रशेखर मिश्र आयुर्वेदाचार्य, कविराज नकुल कृष्ण गुप्ता एव मौलवी आलम ने आयुर्वेद चिकित्सा-पद्धति की अच्छाइयो पर प्रकाश डाला और एक स्वर से यह माँग की कि आयुर्वेद को इस देश की राष्ट्रीय चिकित्सा घोषित किया जाय। तदुपरान्त ४ प्रस्ताव पढकर सुनाये गए, जो सर्व-सम्मति से पारित हुए। प्रस्तावो मे जन-स्वास्थ्य सरक्षण लिए आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के रूप मे मान्यता देने, आसव-अरिष्टो पर से प्रतिबध हटाने, धन्वन्तरि जयन्ती को स्वास्थ्य दिवस के रूप मे मनाने एव उस सार्वजनिक छुट्टी रखने तथा एक केन्द्रीय आयुर्वेदिक महाविद्यालय की स्थापना करने की माग की गयी। अन्त मे स्वल्पाहार के बाद सभा विर्सजित हुई।

बेतिया में स्वास्थ्य सप्ताह

श्री धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष मे आयोजित सार्वजनिक स्वास्थ्य सप्ताह बेतिया में श्री वैद्यनाथ मिश्र आयुर्वेदाचार्य की अध्यक्षता मे ससमारोह मनाया गया। सभा में वैद्यो, हकीमो के अतिरिक्त नगर के विशिष्ट जन भी उपस्थित थे। आगत सज्जनो और अध्यक्ष के भाषणो के बाद सर्वसम्मति से चार प्रस्ताव स्वीकृत हुए। प्रस्तावो मे जन-स्वास्थ्य-सरक्षण के लिए आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के रूप में मान्यता देने, आसव-अरिष्टो पर से प्रतिबध हटाने तथा एक केन्द्रीय आयुर्वेदिक महाविद्यालय की स्थापना करने की माँग की गयी। अन्त मे स्वल्पाहार और धन्यवाद-ज्ञापन के उपरान्त कार्यवाही समाप्त की गयी।

लालगंज (मुजफ्फरपुर) में स्वास्थ्य-दिवस

गत कार्त्तिक कृष्ण त्रयोदशी को स्वास्थ्य दिवस के उपलक्ष में पण्डित सुदामा मिश्र शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य, की अध्यक्षता में लालगज (मुजफ्फरपुर) मे एक सार्वजनिक सभा आयोजित हुई। अनेक आयुर्वेदीय विद्वानो के भाषण हुए। वक्ताओ ने आयुर्वेद की उपादेयता और गुणवत्ता का उल्लेख करते हुए इस बात पर बडा बल दिया कि आयुर्वेद को यथाशीघ्र राष्ट्रीय चिकित्सा के रूप मे मान्यता मिलनी चाहिए। अध्यक्ष ने अपने भाषण मे वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की आयुर्वेद सेवाओ का उल्लेख करते हुए आयुर्वेद को अपनाने की अपील उपस्थित जनसमुदाय से की। वैद्यनाथ भवन द्वारा प्रेषित प्रस्ताव भी सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए और धन्यवाद ज्ञापन के बाद सभा विर्सजित हुई।

देवघर में जन सभा

धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष में आयोजित सार्वजनिक स्वास्थ्य दिवस वैद्यनाथधाम (देवघर) मे नगर के वयोवृद्ध डाक्टर श्री हरिपद राय एम० बी० एस० की अध्यक्षता मे सोत्साह मनाया गया। आयोजन मे प्राय नगर के सभी प्रमुख वैद्य उपस्थित थे। सर्व प्रथम एक बालिका ने मगलाचरण किया। तदनन्तर श्री नागरदत्त शर्मा ने भारतीय और वैदेशिक चिकित्सा-पद्धति का तुलनात्मक विवेचन करते हुए जनता से आयुर्वेद को अधिक-से-अधिक अपनाने की अपील की। वैद्य सदानन्द पाठक ने आयुर्वेद मे वर्णित स्वास्थ्य सूत्रो का विवेचन कर जनता को समझाया कि आयुर्वेद जिस भित्ति पर स्थित है, वह अत्यन्त सुदृढ है—इसीसे जनता का कल्याण हो सकता है। कविराज बृन्दावनशरण मिश्र ने कहा कि हमारे ही द्रव्यो को दूसरे नाम रख कर विदेशियो ने अपनी चीज बनाकर हमारे सामने रखा और हम भूल गए कि वह वस्तु हमारी ही है—केवल रूप नाम परिवर्तित कर दिया गया है। जैसे हमारे यहाँ जो पारा है, उसको पाश्चात्य लोग मर्करी कहते है तथा हमारे यहाँ की सर्पगन्धा को वे लोग सर्पेन्टाइना कहकर बेचते है। इन बातो से सिद्ध है कि आयुर्वेद ही मूलस्रोत है। तत्पश्चात् कविराज पार्वती नारायण शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य ने कहा कि सरकार को आयुर्वेद का एक मापदण्ड निर्धारित करना चाहिए। सभी जगह एक डिग्री तथा प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए तभी आयुर्वेद का उत्थान होगा। प्रोफेसर पचानन मिश्र अध्यापक हिन्दी विद्यापीठ देवघर का इस अवसर पर अत्यन्त सारगर्भित भाषण हुआ। आपने कहा कि वैद्य भारतीय शास्त्र के सरक्षक और प्रतिनिधि है। अत वैद्य वर्ग से राष्ट्र की स्वास्थ्योन्नति की आशा की

जाती है। उपर्युक्त महानुभावो के अतिरिक्त सर्वश्री कलबल झा डोमन साहू (समीर), शम्भूनाथ बलियासे 'मुकुल', विश्वम्भर दयाल मिश्र, लखनलाल शास्त्री आदि प्रमुख वक्ता थे। अध्यक्षीय भाषण के बाद चार प्रस्ताव एक-एक कर सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए।

प्रस्तावो मे जन-स्वास्थ्य सरक्षण के लिए आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के रूप मे मान्यता देने, द्वितीय पचवर्षीय योजना मे अधिकाधिक आयुर्वेद का उपयोग किये जाने, आसव-अरिष्टो पर से तत्काल प्रतिबन्ध हटाने एव शीघ्रताशीघ्र एक केन्द्रीय आयुर्वेद महाविद्यालय या आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना की माँग की गयी। धन्यवाद-ज्ञापन के बाद कार्यवाही समाप्त हुई।

बक्सर में स्वास्थ्य-दिवस

श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव के उपलक्ष मे आयोजित सार्वजनिक स्वास्थ्य दिवस गत कार्त्तिक कृष्ण त्रयोदशी को श्री विष्णुदत्त पाण्डेय की अध्यक्षता मे समारोहपूर्वक मनाया गया। सभा मे वैद्यो हकीमो के साथ-साथ बक्सर के गण्यमान्य व्यक्ति भी सम्मिलित हुए थे। मगलाचरण के पश्चात् कतिपय आयुर्वेदीय विद्वानो के भाषण भी हुए। अपने भाषणो मे विद्वान वैद्यो ने आयुर्वेद की प्राचीनता तथा उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए इस बात पर बडा जोर डाला कि आयुर्वेद का राष्ट्रीय आधार पर एक ही पाठ्यक्रमानुसार शिक्षण-प्रशिक्षण हो। भाषणोपरान्त अध्यक्ष द्वारा चार प्रस्ताव पेश किए गए जो सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुए।

प्रस्तावो मे जन-स्वास्थ्य सरक्षण के लिए आयुर्वेद को पूर्ण प्रोत्साहन देने, पचवर्षीय योजना मे अधिकाधिक रूप से आयुर्वेद का उपयोग करने, आसव-अरिष्टो पर से प्रतिबन्ध हटाने तथा एक केन्द्रीय आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थापना करने की माँग की गयी। अन्त मे सधन्यवाद सभा भग हुई।

झरिया में स्वास्थ्य-दिवस

श्री धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष मे सार्वजनिक स्वास्थ्य दिवस का आयोजन कविराज योगेन्द्रनाथ काव्य-व्याकरण-साख्यतीर्थ, आयुर्वेदाचार्य की अध्यक्षता मे किया गया। सभा मे वैद्यो, हकीमो और आयुर्वेदप्रेमी जनता की उपस्थिति सतोषजनक थी। विद्वान वैद्यो ने इस अवसर पर अपने विचार व्यक्त करते हुए इस बात की आवश्यकता बतायी कि आयुर्वेद का पठन-पाठन एक ही पाठ्यक्रमानुसार होना चाहिए, क्योकि इससे एकरूपता आ सकेगी। तदुपरान्त श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा प्रेषित ४ प्रस्ताव सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुए। प्रस्तावो मे जन-स्वास्थ्य सरक्षण के लिए आयुर्वेद को पूर्ण प्रोत्साहन देने, पचवर्षीय योजना मे अधिकाधिक आयुर्वेद का उपयोग करने, आसव-अरिष्टो पर से प्रतिबन्ध हटाने तथा एक केन्द्रीय महाविद्यालय की स्थापना करने की माँग की गयी। अन्त मे धन्यवाद-ज्ञापन के बाद सभा विसर्जित हुई।

डालटेनगज में स्वास्थ्य-दिवस

गत कार्त्तिक कृष्ण त्रयोदशी को धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष मे आयोजित स्वास्थ्य दिवस श्री गोपी प्रसाद गोयल की अध्यक्षता मे मनाया गया। इस आयोजन मे शहर के अनेक प्रतिष्ठित वैद्य और नागरिक सम्मिलित हुए। सभा की कार्यवाही मगलाचरण के साथ प्रारम्भ हुई। तदनन्तर पण्डित चिरजीलाल शास्त्री और प० जयदेव शर्मा ने आयुर्वेद की महत्ता तथा वैद्य-सगठन पर अत्यन्त मार्मिक भाषण दिया। तदुपरात श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० द्वारा प्रेषित चार प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए। प्रस्तावो मे जन-स्वास्थ्य सरक्षण के लिए आयुर्वेद को पूर्ण प्रोत्साहन देने, पचवर्षीय योजना में अधिकाधिक आयुर्वेद का उपयोग करने, आसव-अरिष्टो पर से प्रतिबन्ध हटाने तथा एक केन्द्रीय महाविद्यालय की स्थापना करने की माँग की गयी। अन्त मे धन्यवाद ज्ञापन के बाद सभा विसर्जित हुई।

लहेरियासराय में स्वास्थ्य-दिवस

श्री धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष मे आयोजित स्वास्थ्य दिवस लहेरियासराय मे उत्साहपूर्वक सुप्रसिद्ध विद्वान और लेखक प्रो० जगन्नाथ प्रसाद मिश्र एम० एल० सी० की अध्यक्षता मे मनाया गया। सभा मे वैद्यो, हकीमो, डाक्टरो के अतिरिक्त सर्व साधारण जनता की उपस्थिति सन्तोजनक थी। सर्व प्रथम केन्द्र-व्यवस्थापक कविराज रामकुमार शर्मा, आयुर्वेदाचार्य ने समागत महानुभावो का स्वागत करते हुए स्वास्थ्य दिवस का महत्त्व बताया। तदनन्तर कतिपय विद्वानो के भाषण हुए। वक्ताओ ने अपने भाषणो मे वैद्य-हकीम एकता, आयुर्वेद की उपयोगिता

और महत्ता तथा श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के आयुर्वेदोत्थान सम्बन्धी कार्यों का उल्लेख करते हुए आयुर्वेद के अधिकाधिक प्रचार-प्रसार की अपील की।

अध्यक्ष ने अपने सारगर्भित भाषण में कहा कि स्वतन्त्र भारत में इस बात की बडी आवश्यकता है कि शिक्षित जन अपने देश की प्राचीन सस्कृति और पूर्वजो की ज्ञान-विज्ञान-साधना की सही-सही जानकारी प्राप्त करे और उसके लिए गौरव-बोध करे। अपने देश की गौरवपूर्ण परम्परा की उपेक्षा करके यदि हम भविष्य का निर्माण करेगे तो उसका आधार कदापि सुदृढ न होगा और हमारा जातीय जीवन दुर्बल और क्षीण हो जायगा।

आपने आगे कहा कि प्राचीन काल में भारतीयो ने ज्ञान-विज्ञान एव शिल्प-कला के विभिन्न क्षेत्रो मे जैसी उन्नति की थी, वैसी किसी अन्य जाति ने नही की। इसका एक बडा-बडा प्रमाण हमारा आयुर्वेदिक चिकित्सा-विज्ञान है। आपने जोर देते हुए कहा कि भारतीय चिकित्सा-पद्धति पूर्णतया वैज्ञानिक है। यह एक तथ्य है और इस तथ्य को अनेक पाश्चात्य विद्वानो ने भी स्वीकार किया है। भारतीय चिकित्सा-प्रणाली की वैज्ञानिकता में अणुमात्र भी सन्देह नही किया जा सकता। आयुर्वेदिक चिकित्सा-प्रणाली की प्राचीनता बताते हुए आपने कहा कि ईसा के जन्म के बहुत पूर्व से ही हमारे देश मे चिकित्सा-विज्ञान प्रचलित था और क्रमश विकासोन्मुख हो रहा था। ससार के प्राचीनतम ग्रथ वेदो में स्पष्ट रूप से चिकित्सा-विज्ञान का उल्लेख किया गया है। आयुर्वेद को अथर्ववेद का एक उपवेद माना जाना उसके महत्त्व का द्योतक है।

आयुर्वेद की ऐतिहासिकता बताते हुए आपने कहा कि बौद्ध युग मे आयुर्वेदिक चिकित्सा-प्रणाली अपनी चरम उन्नति पर थी। उस समय जीवक नामक एक बौद्ध वैद्य शल्य-चिकित्सा का बडा विद्वान था जिसका विस्तृत वर्णन विनय पिटक मे मिलता है। आपने कहा कि डा० प्रफुल्ल चन्द्र राय ने अपने विख्यात ग्रथ "प्राचीन हिन्दू रसायन विज्ञान" में भारत के कितने ही रासायनिको का उल्लेख किया है, जिससे यह सिद्ध होता है कि रसौषध का प्रयोग सबसे पहले भारत मे ही हुआ था।

आपने खेद प्रकट करते हुए कहा कि अग्रेजो के शासन-काल में भारतीय चिकित्सा-प्रणाली की पूर्ण उपेक्षा की गयी। फिर भी यह जीवित रही और आज भी अधिकाश लोग इस चिकित्सा-पद्धति से लाभान्वित हो रहे हैं। आपने कहा कि अपने देश की गणतान्त्रिक सरकार से हमारी यह माँग होनी चाहिए कि विदेशी चिकित्सा-प्रणाली को जो सुविधाएँ प्राप्त हुई, वे सुविधाएँ देशी चिकित्सा-प्रणाली को भी मिले। आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली अपने विकास के लिए समान सुयोग चाहती है। आपने श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के सचालको की सराहना करते हुए कहा कि उनके द्वारा निसदेह भारतीय चिकित्सा प्रणाली का अपार हित-साधन हो रहा है। सर्व सम्मति से चार प्रस्ताव स्वीकृत हुए। अन्त मे स्वल्पाहार तथा धन्यवाद-ज्ञापन के बाद सभा विसर्जित हुई।

बिहारशरीफ में स्वास्थ्य-दिवस

श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव के उपलक्ष मे सार्वजनिक स्वास्थ्य-दिवस श्री हरिहर प्रसाद तिवारी की अध्यक्षता में स्थानीय शर्मा आयुर्वेदिक स्टोर मे बडे उत्साह और उल्लासपूर्ण वातावरण में मनाया गया। इस आयोजन में वैद्यो, हकीमो के अतिरिक्त नगर के विशिष्ट जन भी सम्मिलित हुए थे। मगलाचरण के साथ कार्यारभ हुआ। तदनन्तर कतिपय आयुर्वेदिक विद्वानो के भाषण हुए। भाषणकर्त्ताओ में कविराज ओमप्रकाश उपाध्याय, पण्डित हरिताभ उपाध्याय, प० चन्द्रशेखर द्विवेदी वैद्य प्रभृति प्रमुख थे। वक्ताओ ने एक स्वर से आयुर्वेद की महानता प्रदर्शित की। अध्यक्ष के समयोपयोगी भाषण के उपरान्त श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० द्वारा प्रेषित चार प्रस्ताव एक-एक कर पेश किए गए और सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए। प्रस्तावो मे जन-स्वास्थ्य सरक्षण के लिए आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति के रूप मे मान्यता प्रदान करने, धन्वन्तरि जयन्ती को राष्ट्रीय स्वास्थ्य-दिवस के रूप मे मनाने तथा उस दिन सार्वजनिक अवकाश रखने, आसव-अरिष्टो पर से प्रतिबध हटाने और एक केन्द्रीय आयुर्वेदिक महाविद्यालय की स्थापना करने की माँग की गयी। धन्यवाद के बाद सभा विसर्जित हुई।

खगड़िया

वैद्यराज श्री शिवनन्दन जी आयुर्वेदाचार्य के सभापतित्व में समारोह सम्पन्न हुआ जिसमें स्थानीय सभी वैद्य एव नगर के प्रतिष्ठित सज्जन बडी सख्या मे उपस्थित थे। श्री अवधनारायण, श्री भौंरेलाल शर्मा, श्री मोतीलालजी के भाषण हुए और सर्व सम्मति से पाच प्रस्ताव स्वीकार हुए।

मध्य प्रदेश में सर्वत्र सभाएं

उज्जैन में भव्य आयोजन

उज्जैन मे श्री धन्वन्तरि जयन्ती पर इस वष विशष उत्साह और समारोहपूवक सभा इत्यादि का आयोजन किया गया। आरम्भ म विद्वान पण्डितो न वदमन्त्रो से भगवान धन्वन्तरि का पूजन-स्तवन किया। नगर क सुप्रसिद्ध समाजसवी एव चिकित्सक मध्यभारत दशी औषध परिषद क माननीय सदस्य श्रीयुत पडित अनन्तराज जी शर्मा आयुर्वेदाचाय न्यायतीथ साख्यशास्त्री की अध्यक्षता म सभा की कायवाही सम्पन्न हुई। डाक्टर श्री कृष्णचन्द्र जी पिण्डावाला ए० एम० एस० द्वारा श्री धन्वन्तरि स्तुति एव वदना की गयी। वैद्य श्री गुलाबचन्द जी शर्मा न स्वागत भाषण पढकर सुनाया। इस अवसर पर श्री अवन्तिका दशी चिकित्सक मण्डल उज्जैन क अध्यक्ष डा० श्री रामदत्त जी तिवारी ए० एम० एस० डाक्टर कमल सिंह जी विद्वद्वर श्री प० सत्यद्रकुमार जी सठी इत्यादि विद्वानो क भगवान धन्वन्तरि आयुर्वेद विज्ञान स्वास्थ्य और अन्य सामयिक विषयो पर प्रभावोत्पादक भाषण हुए। वक्ताओ न वैद्य जगत् से अनुरोध किया कि वह सवसाधारण जनता क अधिक स अधिक सम्पक म आव। केवल शासन स ही आयर्वेदोत्थान की अपक्षा करन क स्थान पर वैद्य समाज को स्वय सगठित होकर रचनात्मक रूप से काय करना चाहिए। सभा म चार प्रस्ताव प्रस्तुत किय गय। प्रथम प्रस्ताव श्री दाक्षित जी द्वारा प्रस्तावित एव डाक्टर कमल सिंह जी द्वारा समर्थित हुआ। द्वितीय प्रस्ताव श्रीयुत प० रामदत्त जी तिवारी वद्य ए० एम० एस० द्वारा प्रस्तावित किया गया। ततीय प्रस्ताव डाक्टर श्री कमल सिंह जी न प्रस्तुत किया और और श्री आर० डी० तिवारी न समथन किया। चौथ प्रस्ताव को वैद्यराज श्री आनन्दीलाल जी व्यास न प्रस्तुत किया। चारो प्रस्ताव सव सम्मति स स्वीकार किय अए। प्रस्तावक और समथको न अपन विषय पर बड तकपूण भाषण दिय।

अन्त म सभापति महोदय श्री अनन्तराज जी वैद्य का विद्वत्तापूण एव ओजस्वी भाषण हुआ जिसमें आपन आयुर्वेद विज्ञान की महत्ता पर प्रकाश डाला। आपन आयुर्वेद की उन्नति क माग म आन वाल अवरोधो तथा उनक निराकरण क उपायो पर विवचनात्मक रूप से विचार प्रकट करत हुए आयुर्वेद क राष्ट्रीय चिकित्सा क रूप पर तकसगत विचार प्रस्तुत किय। श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा किय जा रह आयुर्वेद हितकारी कार्यो की चर्चा करत हुए आपन उसक सचालक पण्डित रामनारायण वैद्य द्वारा निरन्तर किय जा रह दशव्यापी सगठनात्मक दौरो की प्रशसा की। प० रामनारायण वैद्य द्वारा अत्यन्त लगन उत्साह एव गभीर चिन्तन क साथ किय जा रह कार्यों क प्रति अपना सहयोग दन का आश्वासन दत हुए सभापति जी न कहा कि सम्पूण वैद्य समाज को आयुर्वेद हित क लिए प० रामनारायण वैद्य क कार्यों म सच्चा सहयोग करना चाहिए।

सभा म बडी सख्या म वैद्यो क अतिरिक्त प्रतिष्ठित नागरिक भी बहु सख्या म उपस्थित थ।

रायपुर में सभा

मालवीय रोड स्थित शर्मा औषधालय म रायपुर नगरपालिका क अध्यक्ष श्रीयुत् बुलाकी रामजी पुजारी एडवोकट की अध्यक्षता म स्वास्थ्य दिवस समारोह पूवक मनाया गया। विधिपूवक श्रीधन्वन्तरि भगवान क पूजन क अनन्तर वैद्य श्री भूरलाल शर्मा शास्त्री न उपस्थित जन समुदाय क स्वागत म भाषण पढा। इसक अनन्तर वैद्य प० लक्ष्मीकान्त जी शर्मा डाक्टर श्री दिनकर भाष्कर राजिमवाल श्री वैद्य छक्कीलाल जी आयुर्वेदाचाय वैद्य श्री नन्दकिशोर जी शास्त्री प० शारदा प्रसाद जा द्विवदी और बाबूराम जी शर्मा आदि विद्वानो क महत्वपूण भाषण हुए। वक्ताओ न अपन तकसगत भाषणो में आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति स्वीकार करन एव वद्यसमाज के सगठन क सुधार पर बहुत बल दिया। इसक उपरान्त सभा म पाच प्रस्ताव प्रस्तुत किय गए जो सव सम्मति स स्वीकृत हुए। एक विशष प्रस्ताव पण्डित श्री बाबूराम जी शर्मा द्वारा प्रस्तुत किया गया जिसम श्री शिवशर्मा द्वारा चलाय गय मानहानि क मामल में सचित्र आयुर्वेद क सम्पादको की एतिहासिक विजय पर प० रामनारायण शर्मा वैद्य को हार्दिक बधाई दी गयी। प्रस्ताव म कहा गया कि यह सत्य की विजय हुई है और यह विजय आयुर्वेद जगत की विजय है। यह प्रस्ताव भी सव सम्मति स हषध्वनि क बीच स्वीकृत हुआ। सभापति महोदय न अपन

भाषण में श्री बैद्यनाथ भवन के आयुर्वेद हितकारक कार्यों पर बधाई दी।

हरपालपुर (म० प्र०)

श्री धन्वन्तरि स्वास्थ्य महोत्सव का समारोह आयुर्वेदाचार्य डाक्टर देवेन्द्रचन्द्र जोशी ए० एम० एस० की अध्यक्षता मे सानन्द सम्पन्न हुआ। सभा मे चार प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए। प्रस्तावो के सम्बन्ध मे सभापति महोदय के अतिरिक्त श्री राजाराम जी आयुर्वेदाचार्य, प० मदनमोहन दीक्षित आयुर्वेदाचार्य, प० कुजबिहारी शर्मा अयुर्वेदाचार्य, प० मथुरा प्रसाद शर्मा वैद्य के विवेचनात्मक भाषण हुए। सभा मे स्थानीय वैद्यो के अतिरिक्त अधिकारीवर्ग एव प्रतिष्ठित नागरिक उपस्थित थे।

उज्जैन विद्यालय में सभा

स्वास्थ्य दिवस के उपलक्ष मे अवन्तिका आयुर्वेद विद्यालय उज्जैन मे कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी तदनुसार २१ अक्तूबर को श्री कन्हैयालाल जी वैद्य की अध्यक्षता मे एक जन-सभा का आयोजन किया गया। इस अवसर पर उज्जयिनी के प्राय सभी विशिष्ट वैद्य, चिकित्सक तथा आयुर्वेदज्ञ उपस्थित थे। सर्वप्रथम आचार्य वासुदेव जी शास्त्री ने आयुर्वेद का महत्त्व समझाते हुए भाषण किया। तदनन्तर प्रज्ञाचक्षु श्री दयाशकर जी बाजपेयी साहित्याचार्य का आयुर्वेद की महत्ता पर सस्कृत मे महत्त्वपूर्ण व्याख्यान हुआ। अध्यक्षीय भाषण मे अध्यक्ष ने आयुर्वेद की वैज्ञानिकता पर विचार प्रकट करते हुए आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति के अधिकाधिक प्रचार-प्रसार पर जोर डाला। बैद्यनाथ प्रतिष्ठान द्वारा प्रेषित प्रस्ताव सभा मे पढकर सुनाये गये, जो सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुए। प्रस्तावो में सरकार से जन-स्वास्थ्य के के सम्बन्ध मे दृढ नीति अपनाने, धन्वन्तरि जयन्ती को राष्ट्रीय स्वास्थ्य दिवस के रूप मे मनाए जाने, उस दिन सार्वजनिक छुट्टी घोषित करने एव आसव-अरिष्टो पर से अविलम्ब प्रतिबध हटाने की एक स्वर से माँग की गयी।

श्री महाबीर आयुर्वेदिक फार्मेसी व चिकित्सालय उज्जैन के वैद्य अनन्तराज ने इस अवसर पर प्रेषित अपने एक सदेश में कहा कि आयुर्वेद महान् है, कारण कि इस विज्ञान के सिद्धान्त शाश्वत है। यह ऐतिहासिक तथ्य है कि भारत ने विश्व को ज्ञान दिया और चिकित्सा शास्त्र की दृष्टि से इस देश ने आयुर्वेद सदश महान् विज्ञान को जन्म दिया और विश्व ने इसे ग्रहण किया। वह ज्ञान ही अनेक रूपो में आज दृष्टिगोचर हो रहा है।

राज्य की प्रतिकूलता से इन शताब्दियो में यह विज्ञान अपनी उन्नति नही कर सका और इसका पूर्वार्जित ज्ञान-भण्डार तिरोहित भी हुआ। किन्तु अब स्वतन्त्रता के बाद देश की समृद्धि के साथ ही आयुर्वेद की समृद्धि भी होगी यह निश्चित है।

मै इस अवसर पर वैद्य महानुभावो से यह प्रार्थना करता हूँ कि आगे निराशा का कोई कारण नही है। हमें पूर्ण श्रम व शक्ति से सेवा भावनाओ का अवलम्बन करके आगे बढना है और देश के करोडो पये की निधि जो विदेश औषधियो के मूल्य के रूप मे बाहर जाती है उसे रोककर देश की सुख-समृद्धि व आरोग्य को वृद्धिगत करना है। श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन ने निश्चित रूप से इस दिशा में सक्रिय व प्रभाव शाली कार्य करके हमे मार्ग प्रदर्शन किया है। मै आयुर्वेद भवन व उसके सस्थापक श्रीमान् माननीय श्रद्धेय वैद्यराज श्री रामनारायण जी शास्त्री का अभिनन्दन करता हूँ। वास्तव मे इस सस्था द्वारा जो आयुर्वेद की सेवाएँ की जा रही है वह स्तुत्य है।

अन्त मे धन्यवाद-ज्ञापन के बाद सभा विसर्जित हुई।

दतिया (म० प्र०)

दतिया मे श्री धन्वन्तरि स्वास्थ्य दिवस का आयोजन किया गया। सभा का कार्यक्रम दतिया के प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित नागरिक श्रीयुत् प० राधलाल जी पाण्डय क सभापतित्व मे सम्पन्न हुआ। सभा मे दतिया नगर-पालिका के चेयरमैन श्री रामरत्न जी तिवारी, श्री श्यामसुन्दर दास जी 'श्याम' एम० एल० ए०, आयुर्वेदाचार्य प० रामकृष्ण जी वैद्य, श्रीयुत् पचमलाल जी पाण्डे, डाक्टर श्री शिवचन्द्र जी जैन इत्यादि प्रमुख जनो के उद्बोधक भाषण हुए। आयुर्वेदाचार्य श्री रामकृष्ण जी वैद्य द्वारा प्रस्तुत तीन प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकार किये गये। भगवान धन्वन्तरि स्तवन एव प्रसाद वितरण हुआ।

डबरा में सभा

श्री धन्वन्तरि महोत्सव के अवसर पर अनुष्ठित स्वास्थ्य दिवस को मनाने के लिए वैद्यो, हकीमो तथा विशिष्ट व्यक्तियो की एक सभा डबरा मे आयुर्वेदिक औषधालय



बुलटी म अनष्ठित धन्वन्तरि जयन्ता ममारोह की सभा म उपस्थित समुदाय



मनपुरा म अनष्ठित धन्वन्तरि जयन्ती समारोह का सभा का भव्य चित्र





रायपुर मे अनुष्ठित धन्वन्तरि जयन्ती समारोह की सभा का एक भव्य दृश्य



सागर मे अनुष्ठित धन्वन्तरि जयन्ती समारोह की सभा में समवेत वैद्य समुदाय ।

में वैद्य बिहारीलाल जी शास्त्री की अध्यक्षता में हुई। सभा की कार्यवाही मगलाचरण के साथ प्रारभ हुई। कतिपय विद्वानो के समयोपयोगी भाषण हुए। तदुपरान्त अध्यक्ष का भाषण हुआ। अध्यक्ष ने बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० द्वारा की गयी आयुर्वेदिक सेवाओ का उल्लेख करते हुए कहा कि बैद्यनाथ प्रतिष्ठान ने आयुर्वेदीय औषधियो के निर्माण में एक प्रतिमान स्थापित कर वैद्य-समाज का बडा हित किया है। अन्त में डा० मिश्र ने ४ प्रस्ताव सभा के समक्ष उपस्थित किये जो सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए। प्रस्ताव में जन-स्वास्थ्य सरक्षण के लिए आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति के रूप में मान्यता देने, द्वितीय पचवर्षीय योजना में अधिकाधिक आयुर्वेद के उपयोग किये जाने, आसव-अरिष्टो पर से प्रतिबध हटाने एव शीघ्रातिशीघ्र एक केन्द्रीय आयुर्वेद महाविद्यालय या आयुर्वेद विश्व-विद्यालय की स्थापना करने की माँग की गयी। धन्यवाद-ज्ञापन के बाद सभा विसर्जित हुई।

रायगढ़ में सभा

रायगढ में स्वास्थ्य दिवस के उपलक्ष में एक सार्वजनिक सभा वैद्य हरविलास राय जी शर्मा की अध्यक्षता में ससमारोह हुई। समारोह के मनोनीत अध्यक्ष के अतिरिक्त प्रगतिशील आयुर्वेद सम्मेलन के सदस्यगण भी उपस्थित थे।

सभा मे ४ प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत किये गए। प्रस्ताव न० १ और २ की प्रतिलिपियाँ राष्ट्रपति, केन्द्रीय स्वास्थ्य मत्री तथा प्रादेशिक स्वास्थ्य मत्री को और प्रस्ताव न० न० ३ की प्रतिलिपि केन्द्रीय स्वास्थ्य मत्री तथा केन्द्रीय राजस्व मत्री को भेजी गयी। प्रस्ताव न० ४ की प्रतिलिपि अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन, दिल्ली को भेजी गयी। स्वीकृत प्रस्तावो मे सरकार से जन-स्वास्थ्य के सम्बन्ध मे दृढ नीति अपनाने, आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा घोषित करने, धन्वन्तरि जयन्ती को राष्ट्रीय स्वास्थ्य-दिवस के रूप में मनाए जाने उस दिन सार्वजनिक छुट्टी घोषित करने एव आसव-अरिष्टो पर से प्रतिबन्ध हटाने की जोरदार शब्दो में सरकार से माँग की गयी। तदुपरात अध्यक्षीय भाषण एव धन्यवाद-ज्ञापन के बाद सभा समाप्त हुई।

मंडला फोर्ट में सभा

राष्ट्रीय स्वास्थ्य दिवस के उपलक्ष में वयोवृद्ध वैद्य श्री गया प्रसाद जी पाठक की अध्यक्षता में एक सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया। समारोह में इस क्षेत्र क्षेत्र के प्राय सभी प्रमुख वैद्य, हकीम और प्रतिष्ठित व्यक्ति सम्मिलित हुए। सभा-स्थल तोरण-बन्दनबार से भली-भाँति सजाया गया था। चार प्रस्ताव सर्व-सम्मति से स्वीकृत किये गये। प्रस्तावो में सरकार से जन-स्वास्थ्य की दृढ नीति अपनाने, आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा घोषित करते, धन्वन्तरि जयन्ती को राष्ट्रीय स्वास्थ्य दिवस के रूप में मनाए जाने, उस दिन देशव्यापी सार्वजनिक छुट्टी घोषित करने, साथ ही आसव-अरिष्टो पर से प्रतिबन्ध हटाने सबधी चार प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत किए गए।

प्रस्तावो के स्वीकृत किए जाने के बाद आयुर्वेद की प्राचीनता, जन-स्वास्थ्य, आयुर्वेद के प्रति शासन की उपेक्षा-पूर्ण नीति, वैद्य समाज मे सगठन का अभाव, धन्वन्तरि पूजन का महत्व, समाज को आयुर्वेद की देन, आयर्वेद एव वैद्य समाज का उत्थान आदि विषयो पर आगत विद्वानो के समयोपयोगी भाषण हुए। अध्यक्षीय भाषण के उपरान्त धन्यवाद ज्ञापन के साथ समारोह समाप्त हुआ।

डोंगरगढ़ में स्वास्थ्य दिवस

डोंगरगढ (म० प्र०) में श्री शकरलाल झा वकील की अध्यक्षता मे राष्ट्रीय स्वास्थ्य दिवस का भव्य आयोजन एक जन-सभा के रूप मे किया गया। आगत सज्जनो के भाषण हुए जिनमें श्री काली लाल जैन वैद्य, श्री गणेशमल भडारी तथा श्री लक्ष्मण भाई माणजी चावडा प्रमुख थे। वक्ताओ ने एक स्वर से आयुर्वेदीय औषधियो की उपयोगिता बतायी और जडी-बूटियो के चमत्कारिक गुणो पर शास्त्रीय विधि से प्रकाश डाला। तदनन्तर बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० द्वारा प्रेषित चार प्रस्ताव सर्व सम्मति से पारित हुए। प्रस्ताव मे आसव अरिष्टो पर से प्रतिबध हटाने और आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा घोषित करने की माग सरकार से की गयी। साथ ही निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद सम्मेलन की निष्क्रियता दूर करने तथा धन्वन्तरि जयन्ती के दिन सार्वजनिक छुट्टी करने सम्बन्धी प्रस्ताव भी पारित हुए। अन्त में स्वल्पाहार के बाद समारोह सम्पन्न हुआ।

राजनांदगाँव (मध्यप्रदेश) में सभा

राजनादगाँव (म० प्र०) में कार्त्तिक कृष्ण त्रयोदशी को धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव के शुभ अवसर पर डाक्टर अजीज अहमद साहब एम० बी० बी० एस० के सभापतित्व

में स्वास्थ्य दिवस समारोहपूर्वक मनाया गया। सर्वप्रथम वैद्य मुरली मनोहर ने आयुर्वेद की महत्ता पर भाषण दिया। आपके अलावा सर्वश्री शिवकुमार शास्त्री, राधेश्याम जी द्विवेदी, नन्दूलाल जी चोटिया प्रभृति के भी आयुर्वेद के सम्बन्ध में सामयिक भाषण हुए। सभी वक्ताओ ने एक स्वर से आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति के रूप मे अपनाने की आवश्यकता पर बल देते हुए सरकार से माँग की कि वह आयुर्वेदिक चिकित्सा-पद्धति को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के रूप में मान्यता दे। इसके बाद डा० पचार्या द्वारा चार प्रस्ताव पेश किये गये, जो सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए। प्रस्तावो में सरकार से यह अपील की गयी कि वह जन-स्वास्थ्य के बारे मे दृढ और ठोस नीति अपनावे। साथ ही आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा घोषित करने, धन्वन्तरि जयन्ती को राष्ट्रीय स्वास्थ्य दिवस के रूप में मनाए जाने, उस दिन सार्वजनिक छुट्टी रखने तथा आसव-अरिष्टो पर से अविलम्ब प्रतिबन्ध हटाने के सम्बन्ध मे सरकार से माँग की गयी। अध्यक्ष ने अपने अध्यक्षीय भाषण मे आयुर्वेद की विशेषताओ पर प्रकाश डालते हुए कहा कि आयुर्वेद का सर्वागीन विकास कर उसे विश्व की सर्वोत्कृष्ट चिकित्सा पद्धति बनाने का दायित्व निश्चय ही आयुर्वेदज्ञो पर है—यदि आयुर्वेदज्ञो को यह कर्त्तव्य-बोध हुआ तो निश्चय ही आयुर्वेद को अपना लुप्त गौरव पुन प्राप्त हो सकेगा। धन्यवाद ज्ञापन के बाद राष्ट्रीय स्वास्थ्य दिवस समारोह समाप्त हुआ।

सागर में सभा

सागर मे इस वर्ष बड पैमाने पर श्री धन्वन्तरि जयन्ती के समारोह का आयोजन स्वास्थ्य दिवस क रूप मे किया गया। इस अवसर पर विधिवत् भगवान धन्वन्तरि के भव्य पूजन क अनन्तर सभा की गई जिसकी प्रधानता सागर जनपद सभा के प्रेसीडण्ट श्री डा० बी० व्ही० राय, एम० एल० ए० ने ग्रहण की। पण्डित जगदीश प्रसाद शर्मा ने स्वागत भाषण पढा। इसके अनन्तर प० देवीसहाय दीक्षित आयुर्वेदाचार्य, श्री समगौरिया जी वैद्य, श्री शिवकाली त्रिपाठी, श्री भगवानदास जी वैद्य ने पृथक् पृथक् चार प्रस्ताव प्रस्तुत किये जो विस्तृत समर्थनोपरान्त पास हुए। श्री देवी सहाय जी दीक्षित, श्री सीताराम जी वैद्य एव श्री ब्रह्मचारी जी आदि के आयुर्वेद, भगवान धन्वन्तरि के सन्देश, वैद्य समाज का सगठन इत्यादि विषयो पर गभीर एव प्रभाव पूर्ण भाषण हुए। अन्त में सभापति महोदय ने सामयिक विषयो पर अत्यन्त प्रभावोत्पादक और तर्कपूर्ण शब्दो मे भाषण दिया, जिससे उपस्थित समुदाय पर व्यापक प्रभाव पडा।

कटनी में सभा

कटनी के वैद्य-समुदाय के सहयोग से इस वर्ष श्रीधन्वन्तरि जयन्ती का समारोह स्वास्थ्य दिवस क रूप मे धूमधाम से मनाया गया। जयन्ती क दिन सन्ध्या को ७ बज एक सभा हुई, जिसका सभापतित्व मध्यप्रदश क विख्यात एव माननीय वैद्य प्राणाचार्य प० सुन्दरलाल जी शुक्ल जबलपुर निवासी ने किया। पूजनोपरान्त श्री धन्वन्तरि लहरी का मधुर गायन किया गया। तदनन्तर चार प्रस्ताव प्रस्तुत किये गये जो सर्व सम्मति से स्वीकार किये गये। प्रस्तावो एव सामयिक विषयो पर वैद्य श्री केशरीमल जी आयुर्वेदाचार्य, श्री वैद्य हरजीरामजी शर्मा, श्री वैद्य रामप्रसाद जी, श्री वैद्य खेमचन्द्र जी श्री वैद्य रामदत्त जी पयासी, श्री वैद्य व्रजभूषण प्रसाद जी, श्री प० जगमोहनलाल जी शास्त्री, श्री वैद्य ठाकुर प्रसाद जी बी० आइ० एम० एस० आयुर्वेदाचार्य इत्यादि विद्वानो के महत्वपूर्ण एव व्याख्यात्मक भाषण हुए। प्रसाद वितरण किया गया और समागत सज्जनो को धन्यवाद देकर सभा समाप्त हुई।

रतलाम (म० प्र०)

रतलाम मे वैद्यराज श्री मक्खनलाल जी दीक्षित आयुर्वेदाचार्य के धानमण्डी स्थित केन्द्र पर सध्या समय चार बजे श्री धन्वन्तरि जयन्ती मनाई गयी। रतलाम के सुख्यात वैद्यराज आयुर्वेदाचार्य पडित रामप्रसाद जी प्रजावैद्य, की अध्यक्षता मे विस्तृत सभा हुई जिसमे इस क्षेत्र के सभी वैद्यगणो न उत्साहपूर्वक भाग लिया। सभा मे स्थानीय प्रमुख नागरिक भी उपस्थित थे। भगवान धन्वन्तरि पूजन-स्तवन के अनन्तर सभापति जी ने आसन ग्रहण किया। विद्वानो के सामयिक विषयो पर प्रभावपूर्ण भाषण हुए। सभा मे चार प्रस्ताव प्रस्तुत किये गए जो सर्व सम्मति से स्वीकार हुए। वैद्यराज श्री मोतीलाल जी जोशी, वैद्यराज श्री कृष्णानन्द जी इन्स्पेक्टर आयुर्वेद विभाग रतलाम, श्री माधव प्रसाद जी आचार्य, डाक्टर श्री गुप्ता जी, श्री लल्लु सिंह जी आदि के भाषणो का जनता पर प्रभाव पडा। सभापति महोदय ने अपने भाषण में जनता से आयुर्वेद को अपनाने की अपील की।

शिवपुरी (म० प्र०)

मध्यप्रदेश की सुन्दर प्राकृतिक नगरी शिवपुरी में वैद्य सभा मण्डल शिवपुरी क सहयोग से श्री धन्वन्तरि जयन्ती का भव्य आयोजन किया गया। इस वर्ष समारोह सार्वजनिक रूप से मनाया गया जिसमे बडी सख्या मे जनता एव प्रमुख जन एकत्र हुए। सभा का सभापतित्व मण्डल क प्रसिद्ध वैद्य श्री प० रामप्रसाद जी व्याकरणाचार्य आयुर्वेद विशारद ने किया। सभा मे विद्वानो के भाषणो के अतिरिक्त चारो प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत किय गए। उपस्थित जनता पर श्री प्रह्लाद दास जी वैद्य, मध्यभारत दर्शी औषध के सदस्य वैद्य शास्त्री कविराज श्री जानकी प्रसाद जी मिश्र, श्री प्रभुदयालु जी वैद्य एव ज्योतिषाचार्य प० नारायण राव जी क भाषणो मे व्यक्त सामयिक स्वास्थ्य विषयक विचारो का बहुत प्रभाव पडा। अन्त मे श्री धन्वन्तरि कीर्तन सामूहिक रूप से किया गया और प्रसाद वितरणोपरान्त समारोह सम्पूर्ण हुआ।

खण्डवा में विशाल सभा

खण्डवा मे इस वर्ष श्री धवन्तरि जयन्ती का समारोह बहुत ही उत्साह क साथ और बड पैमान पर मनाया गया। आयुर्वेदीय भैषज्य भण्डार के सयोजकत्व मे बम्बई बाजार मे एक विशाल सार्वजनिक सभा विशषरूप से बनाये गय पण्डाल मे सम्पन्न हुई। सर्व प्रथम स्वामी बालचन्द्रजी महाराज के नेतृत्व मे श्री मदनलाल जी भामा द्वारा भ ावान धन्वन्तरि का वदोक्त पूजन-अर्चन किया गया। तदनन्तर आयुर्वेदालकार प० काशीनाथ शर्मा शास्त्री के प्रस्ताव तथा वैद्यराज श्री बाबूलाल जी शर्मा क समर्थन पर एव सर्वसम्मति क आग्रह पर खण्डवा क सिविल सर्जन श्री वी० पु० सन्त ने सभापतित्व किया। श्री सत साहब ने श्री धन्वन्तरि को पुष्पमाला अर्पित की। वैद्य बाबूलाल जी ने मुद्रित भाषण पढ कर सुनाया जो उपस्थित जन समुदाय मे वितरित किया गया। तदनन्तर आयुर्वेदालकार प० काशीनाथ जी शर्मा न आयुर्वेद क वैज्ञानिक पक्ष पर विद्वत्तापूर्ण भाषण दिया। सभा मे चार प्रस्ताव पश हुए जो सर्व-सम्मति से स्वीकृत किये गए। सभापति पद स बोलते हुए श्री सन्त महोदय ने आयुर्वेद के हित में किये जा रहे प्रयत्नो की सराहना की और कहा कि आयुर्वेद की उन्नति के लिए भारतीय राष्ट्र का नागरिक होने के नाते डाक्टरो को भी हृदय से समर्थन करना चाहिए, क्योंकि आयुर्वेद के द्वारा देश की समृद्धि की रक्षा की जा सकती है। आपने सभा में प्रस्तुत प्रस्तावो का दृढ शब्दो में प्रबल समर्थन किया। सभा में उपस्थित वैद्यो एव प्रमुख व प्रतिष्ठित नागरिकों में निम्न की उपस्थिति बहुत उल्लेखनीय है—श्री गणपति नारायण राव वैद्य, श्री वैद्य दयानन्द जी, श्री वैद्य केशवराव सावदेकर, प्रधानाचार्य श्री नारायण प्रसाद दुबे, श्री व्रजमोहन मिश्र, श्री लालजी प्रसाद मालवीय, श्री प० बालचद स्वामी श्री बी० डी० जौहरी, श्री श्रीकृष्ण जी, श्रीयुत् प० काशीनाथ जी शास्त्री, श्री बाबूलाल जी स्वामीवैद्य, श्री राधाबल्लभ शाह, श्री सुदर्शनाचार्य, श्री वि० पु० सन्त, कविराज श्री दुर्गाप्रसाद वैद्य बुरहानपुर, श्री आर० के० गुप्ता, श्री सदाशिव जी वदपाठक, श्री शिवाजी वासुदेव पासे, श्री जयनारायण सोनी, श्री भीकमचन्द्र वर्मा, श्री इन्द्रमणिमिश्र, श्री दामोदर जी वैद्य, श्री हकीम कुरबान हुसैन साहब, श्री रामचन्द्र राव वैद्य, श्री० क० बी० वैद्य, श्री काशीनाथ शर्मा शास्त्री।

खण्डवा मे इस प्रकार का विशद आयोजन पहली ही बार हुआ था, जिसकी प्ररणा दन क हतु श्री वैद्य रामनारायण जी को लोगो न धन्यवाद दिया। समारोह क समाचार इस प्रदश लगभग २० समाचार पत्रो मे प्रकाशित हुए। समारोह मे पारित सभी प्रस्ताव सम्बन्धित सज्जनो को भजे गए।

सतना (रीवाँ)

प्राचीन विन्ध्यप्रदेश के महत्वपूर्ण केन्द्र सतना में श्री भोलाप्रसाद जी अग्रवाल क सयोजन मे विस्तृत रूप स श्री धन्वन्तरि जयन्ती मनाई गई। धन्वन्तरि भगवान के भव्य पूजन मे बडी सख्या में जनता के लोग सम्मिलित हुए। स्थानीय और आस-पास के वैद्यजन पर्याप्त उपस्थित थ ही। सभा का सभापतित्व राजवैद्य श्री प्रयागदत्त जी प्राणाचार्य ने किया। उपस्थित वैद्यो में अनक ने विद्वत्तापूर्ण भाषण दिए। चार प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकार कियेगए।

छतरपुर (म० प्र०)

बुन्देलखण्ड की प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगरी छतरपुर में श्री धन्वन्तरि जयन्ती पर स्वास्थ्य समारोह की सभा का आयोजन उत्साहपूर्वक किया गया। वैद्यजनो ने आयुर्वेद एव जन-स्वास्थ्य तथा सगठन विषय पर गभीर भाषण दिये। श्री

कुंज विहारी शर्मा, पं० मथुराप्रसाद शर्मा, प० मदनमोहन जी दीक्षित तथा श्री वैद्य गुलजारीलाल जीने चार प्रस्ताव प्रस्तुत किये और उनका समर्थन क्रमश प० मथुरा प्रसादजी, प० मदनमोहनजी, वैद्यराज श्री राजाराम जी आयुर्वेदाचार्य, और कुजीलालजी न किया। चारो प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकार किय गए। कीर्तन और प्रसाद वितरण क उपरान्त सभा समाप्त हुई।

टीकमगढ़ (म० प्र०)

पूव ओरछा राज्य की राजधानी टीकमगढ में श्री धन्वन्तरि जयन्ती का समारोह मनाया गया। सभा की अध्यक्षता श्रीयुत् विष्णुदव जी अधिकारी न की। श्री वैद्य बाबूलाल जी जैन द्वारा प्रस्तुत चार प्रस्ताव सवसम्मति स स्वीकार किए गय।

जबलपुर

जबलपुर में इस वर्ष भगवान धन्वन्तरि जयन्ती उत्सव नगर के वैद्यो एव प्रतिष्ठित सज्जनो की उपस्थिति में समारोह पूर्वक मनाया गया। समारोह का सभापतित्व सेठ बाबू जगमोहन दास जी उपमत्री मध्यप्रदेश शासन ने किया। स्वागत भाषण के पश्चात् सत्रश्री बी० भी० डिग्वकर आयुर्वेदाचार्य श्री महेशदत्त जी शास्त्री, श्री महादेव प्रसाद मनीषी एव दामडे जी के भाषण हुए। वैद्यराज श्री बी० भी० डिग्वेकरजी ने अपन विद्वत्तापूण भाषण में कहा कि श्रीबैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवट लि० द्वारा आयुर्वेद की महान सेवाएँ की गई है। शास्त्रचर्चा परिषदे इसके उदाहरण स्वरूप उपस्थित की जा सकती है। आयुर्वेद के समुचित विकाश के लिये उचित शिक्षण की आवश्यकता है। इस ओर हमे प्रयत्न करना है व शासन को भी इस ओर ध्यान देना चाहिए। सेठ जगमोहन दास जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में भगवान धन्वन्तरि व आयुर्वेद के विषय में विवेचन करने के उपरान्त कहा कि आयुर्वेद महाविद्यालय तथा आयुर्वेद का अनुसन्धान विषयक कार्य केन्द्रीय शासन के अन्तर्गत आता है। फिर भी राज्य शासन से इसके सम्बन्ध मे पर्याप्त प्रयत्न द्वारा किया जा रहा है। मध्य प्रदेश शासन के भूतपूर्व मुख्य मत्री स्व० प० रविशकर जी शुक्लका आयुर्वेद के प्रति महान अनुराग था और उसी के प्रतीक स्वरूप आज रायपुर मे आयुर्वेद महाविद्यालय वर्तमान है। इस विषय पर जैसे-जैसे आवश्यकताएँ बढ़ती जायगी, पर्याप्त विस्तार किया जा सकेगा। यहाँ के वैद्यों को वहाँ जाकर वहाँ की संचालन-पद्धति व लेबोट्री आदि देखना चाहिये व इस सम्बन्ध में शासन को निर्देश करना चाहिए।

इसके उपरान्त श्री धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष में आयोजित सार्वजनिक स्वास्थ्य दिवस के अवसर पर स्वीकृत प्रस्तावो पर हस्ताक्षर कराये गये तथा प्रसाद वितरण के साथ सभा की कार्यवाही समाप्त हुई।

गुना में समारोह

गुना में प० मूलचन्द मोहरीलाल शर्मा द्वारा श्री दामोदर दास जी एडवोकेट के सभापतित्व मे श्री धन्वन्तरि जी महाराज का उत्सव समारोहपूर्वक किया गया। सर्व प्रथम श्री धन्वन्तरि जी महाराज का पूजन किया गया। तत्पश्चात् जगदीश चन्द शर्मा ने स्वागत भाषण पढा। तदुपरान्त श्री नारायण प्रसाद जी वैद्य ने बतलाया कि श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के चार कारखानों में आयुर्वेद की ओषधियाँ बडे-बडे आयुर्वेद के विद्वानो की देख रेख मे बनती है व श्री प० रामनारायण जी शर्मा वैद्य-शास्त्री अपनी देख रेख मे आयुर्वेदिक ओषधियाँ जडी-बूटियों द्वारा तैयार करवाकर आयुर्वेद की सेवा कर रहे है। श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के मैनेजिग डाइरेक्टर आयुर्वेद के अच्छे ज्ञाता है। भगवान से यह कामना है कि ये लोग आयुर्वेदिक ओषधियाँ भविष्य मे भी निर्माण करते हुए आयुर्वेद के मस्तक को ऊचा करने में पूर्ण प्रयत्नशील होगे। इसके उपरान्त श्री दामोदर दास जी एडवोकेट ने आयुर्वेद की ओषधियो को अपनाने के लिए जोर डाला तथा यह बताया कि श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० द्वारा आयुर्वेदिक ओषधियाँ अच्छे ढग पर तैयार की जाती है। इसके उपरान्त श्री रामलाल जी वैद्य व श्री हकीम बफा साहिब ने भी आयुर्वेदिक ओषधियो पर प्रकाश डाला। अन्त मे श्री धन्वन्तरि महाराज का प्रसाद वितरण कर सभा विसर्जित हुई।

इन्दौर में समारोह

इन्दौर में वैद्यराज प० दामोदर शास्त्री की अध्यक्षता में भगवान धन्वन्तरि की जयन्ती बडे धूमधाम व उत्साह के साथ मनाई गई। सर्वप्रथम वैद्य प० लक्ष्मीदत्त शास्त्री ने वैदिक रीति से भगवान धन्वन्तरि जी का पूजन अर्चन करवाया। फिर वैद्य प० श्रीनिवास शास्त्री का अभिभाषण

हुआ। इसके पश्चात् वैद्य पं० सूर्यनारायणजी जोशी ने वैद्यों से संगठित होकर चलने के लिये अनुरोध किया और वैद्यो की उन्नति हेतु किये गये श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के प्रयत्नों पर प्रकाश डाला। इसके बाद चारो प्रस्ताव उपस्थित किये गये जिनका समर्थन वैद्य प० शिवनारायण जी तिवारी ने किया। तत्पश्चात् श्री शास्त्रीजी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० द्वारा किये जा रहे अनुसधान कार्यों की प्रशसा की तथा ५ लाख की अभी की गई घोषणा पर हर्ष व्यक्त किया। श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० द्वारा आयुर्वेद का जो सर्वतोमुखी विकास हो रहा है उनकी आपने बारम्बार प्रशसा की। वैद्य हरिकृष्ण जी जोशी ने श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० की ओर से आगन्तुक महोदय का आभार माना। बिक्री-केन्द्र सचालक वैद्य जयनारायण शर्मा ने उपस्थित महानुभावो को प्रसाद वितरण किया तथा कार्यक्रम समाप्त हुआ।

कोच (जालौन)

कोच (जालौन) में धन्वन्तरि भगवान का पूजन हुआ। पत्पश्चात् सभा की कार्यवाही डॉ० अवधबिहारी गुप्ता आयुर्वेदाचार्य के सभापतित्व मे शुरू हुई। श्री राधेश्याम दातरे ने स्वागत भाषण पढा। इसके बाद आयुर्वेदाचार्य श्री बलराम बुधौलिया ने आयुर्वेद की महत्ता एव धन्वन्तरि जयन्ती के तात्पर्य पर वृहत भाषण दिया। इसके बाद वृन्दावन अग्रवाल ने चार प्रस्तावो को पढकर सुनाया और वे चारो प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास किये गये। तदुपरान्त अध्यक्ष महोदय ने सबको धन्यवाद दिया तथा बैद्यनाथ दवाओ की प्रशसा की। इसके बाद प्रसाद वितरण कर सभा विर्सजित हुई।

भिलसा

भिलसा स्थित श्री काशीनाथ आयुर्वेद भवन में धन्वन्तरि जयन्ती समारोह धूमधाम से मनाया गया। सर्वप्रथम बिक्री-केन्द्राध्यक्ष वैद्य काशीनाथ ने नगर के वैद्य समुदाय सहित भगवान धन्वन्तरि जी का सामूहिक पूजन किया तथा वैद्य बन्धुओ को प्रसाद वितरण कर आभार प्रदर्शित किया। इसके उपरान्त रात्रि को विराट् सभा श्री रामकृष्ण जी सिलाकारी की अध्यक्षता में हुई जिसमे नगर के अनक धनी-मानी भी सम्मिलित हुए। सर्वप्रथम श्री बालकृष्ण जी वैद्य गुप्ताने भगवान धन्वन्तरि की वदना की। श्री अभयचद जी आयुर्वेदाचार्य ने वर्तमान आयुर्वेद-शिक्षा को विशुद्ध आयुर्वेदीय स्तर पर चलाने की सरकार से अपील की तथा आयुर्वेद की बैद्यनाथ द्वारा सेवाओ की प्रशसा की और सस्थान की उन्नति के लिये शुभकामना प्रगट की। इनसे पूर्व श्री विश्वबन्धु जी शास्त्री ने स्वागत भाषण पढा।

श्री बलराम जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य और डाक्टर जमुना प्रसाद जी मुखरैया आयुर्वेदाचार्य के भाषणोपरान्त सभापति जी ने आयुर्वेद की महत्ता बताते हुए अनेक ऐसे प्रयोग जनसाधारण के हितार्थ प्रगट किये जो बिना मूल्य ही उनके प्रयोग से असाध्य रोग भी नष्ट होते है। इसके उपरान्त सभी प्रस्ताव स्वीकार किये गये। इसके बाद केन्द्राध्यक्ष ने सबको धन्यवाद देते हुए आभार प्रकट करके सभा विसर्जित की।

रीवा में समारोह

फोर्ट रोड, रीवा मे धूमधाम के साथ धन्वन्तरि जयन्ती मनायी गयी। भगवान धन्वन्तरि के सविधि पूजनोपरान्त श्री प० नन्दनन्दन प्रसाद जी की अध्यक्षता मे सभा हुई, जिसमें वैद्य-हकीम एव विशिष्ट नागरिक सम्मिलित हुए। सर्वप्रथम श्री वैद्य चन्द्रकुमार जी ने स्वागत भाषण पढा। तत्पश्चात् अनेक वक्ताओ ने अपने भाषण मे वैद्यनाथ औषधियो की विशिष्ट गुणकारिता पर प्रकाश डाला। सभापति जी ने अपने भाषण मे आयुर्वेद की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए आयुर्वेदोन्नति के लिए प्रयत्नशील श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के सचालको की भूरि भूरि प्रशसा की। सर्वसम्मति से पाचो प्रस्ताव स्वीकृत हुए एव धन्यवाद-ज्ञापन तथा प्रसाद वितरण कर सभा समाप्त हुई।

पावटा

पावटा में श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव सोत्साह मनाया गया। सर्वप्रथम भगवान धन्वन्तरि का पूजन प० रामेश्वर शास्त्री द्वारा सम्पन्न हुआ। तत्पश्चात् वैद्य श्रीनिवास जी शर्मा के सभापतित्व मे सभा की कार्यवाही आरम्भ हुई। स्वागत भाषण वैद्य पीताम्बर जी ने पढ़कर सुनाया। वैद्य रामेश्वरप्रसाद शास्त्री ने बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की आयुर्वेद सेवा एव त्याग की सराहना करते हुए वैद्य समुदाय से प्रार्थना की कि उनके आयुर्वेदोत्थान के कार्यों में अपना सहयोग प्रदान करें।

अन्त में सभापति महोदय ने श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के सुकृत्यो पर प्रकाश डालते हुए यह आशा प्रगट की कि इसी प्रकार यदि जनता एव केन्द्रीय सरकार का सहयोग प्राप्त होता रहेगा तो आयुर्वेद पुन अपना पुराना गौरवमय स्थान प्राप्त कर सकता है। अन्त में धन्यवाद देकर एव प्रसाद वितरण कर सभा की कार्यवाही समाप्त की गयी।

लश्कर (ग्वालियर) में सभा

लश्कर-ग्वालियर में श्री कैलाश फार्मेसी मे धन्वन्तरि समारोह की सभा प्रान्त के सुप्रसिद्ध आयुर्वेद विद्वान एव राष्ट्रपति के मान्य चिकित्सक श्रीयुत् पण्डित रामेश्वर जी शास्त्री के सभापतित्व मे सम्पन्न हुई। सभा मे प्रमुख वैद्यो के अतिरिक्त नगर कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष श्रीयुत रामनिवास जी बागड तथा मन्त्री श्रीयुत बालाप्रसाद जी दुबे, श्री डोगर सिह जी, श्री शिवराज बहादुर जी, इत्यादि के सारगर्भित भाषण हुए जिनसे उपस्थित जनता एव वैद्यो ने प्रेरणा ग्रहण की। चार प्रस्ताव पेश किये गये जो सर्व सम्मति से स्वीकार हुए। प्रस्तावक तथा समर्थको ने बडे तर्कपूर्ण शब्दो मे विषय की विवेचना की। उपस्थित समुदाय को धन्यवाद के उपरान्त सभा विसर्जित हुई।

पेण्ड्रा रोड (बिलासपुर)

पेण्ड्रा रोड में श्री धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष में विशेष समारोह पूर्वक स्वास्थ्य दिवस मनाया गया। समारोह का उद्घाटन मध्यप्रदेश के उप स्वास्थ्य मत्री माननीय पडित मथुराप्रसाद जी दुबे के करकमलो से सम्पन्न हुआ। श्रीयुत दुबे जी ने स्वय श्री धन्वन्तरि पूजन करके अपने उद्घाटन भाषण मे कहा कि आयुर्वेद स्वय ही अजर-अमर विज्ञान है और उसको उन्नत होने से कोई रोक नही सकता। इतना अवश्य है कि यदि कोई ठोस प्रयास न किया गया तो वह उन्नत न होगा और जहाँ है वहाँ बना रहेगा। कोई कुछ करे न करे, परन्तु आयुर्वेद से जीविका पाने वाले वैद्य जनो को तो गभीर प्रयास करना ही चाहिए। यह तभी सभव है जब कि वैद्य समाज का सगठन दृढ और क्रियाशील हो। सगठन तेजस्वी होगा तो फिर कौन आयुर्वेद को विकसित होने से रोक सकता है? आपने वैद्यो का पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति की ओर गलत झुकाव होने का उल्लेख करते हुए कहा कि वैद्यो के लिए इन्जेक्शन का आश्रय लेना या अन्य प्रकारों से डाक्टरों की नकल करना शोभाजनक नही है। उन्हें आयुर्वेद की पद्धति और उसकी ही औषधियो में चमत्कार लाना चाहिए तथा अपनी प्राचीन चिकित्सा द्वारा जनता की सेवा करनी चाहिए।

समारोह की अध्यक्षता इस क्षेत्र के विख्यात जनप्रिय कार्यकर्त्ता और जनपद सभा के सदस्य वयोवृद्ध श्री पं० बैजनाथ प्रसाद जी गौटिया तिवारी ने की। श्री बृजमोहन लाल अग्रवाल ने स्वागत भाषण पढा। जनपद सभा विलासपुर की जनस्वास्थ्य समिति के चेयरमैन श्रीयुत लक्ष्मीचन्द्र जी जैन ने अपनी विस्तृत प्रस्तावना के साथ सभा में प्रस्ताव प्रस्तुत किये। प्रस्तावो के समर्थन में जनपद सभा बिलासपुर की शिक्षा समिति के चेयरमैन श्रीयुत प० मोहनलाल जी शुक्ल ने एक ओजस्वी भाषण दिया और प्रस्तावो मे वर्णित विषयो की विशद् व्याख्या करते हुए उनकी सामयिक आवश्यकता का विश्लेषण किया। चारो प्रस्ताव सभा में सर्व सम्मति से स्वीकार किये गए। तत्पश्चात सभा मे उपस्थित अनेक विद्वान वैद्यो के आयुर्वेद विषय पर सारगर्भित भाषण हुए। उपस्थित जनो को स्वास्थ्य रक्षा के भारतीय नियमो की व्यावहारिकता को सरलतापूर्वक समझाया गया और निश्चय हुआ कि आगे श्री धन्वन्तरि जयन्ती पर स्वास्थ्य समारोह का अधिक व्यापक आयोजन किया जाय। वक्ताओ ने श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की वास्तविक आयुर्वेद सेवा के कार्यों की प्रशसा की और जनता तथा वैद्यो से अपील की कि वे सामूहिक प्रयासो के द्वारा अपने प्राचीन राष्ट्रीय विज्ञान के विकास के लिए सम्मिलित प्रयास करे और सरकार से सहायता एव राष्ट्रीय चिकित्सा स्वीकार करने के लिए सामूहिक माग की जाय। प्रसाद वितरण उपरात सभा समाप्त हुई।

गोंदिया में सभा

गोदिया में श्री धन्वन्तरि जयन्ती पर एक सभा का आयोजन किया गया, जिसमे स्थानीय समस्त वैद्यो ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। वेद मन्त्रो के साथ भगवान धन्वन्तरि का पूजन किया गया और समस्त उपस्थित वैद्य समुदाय ने भगवान धन्वन्तरि को पुष्पार्पण किया। सभा में नगर के अन्य प्रमुख जन भी पर्याप्त सख्या मे उपस्थित हुए। विद्वान वैद्यो के आयुर्वेद, भगवान धन्वन्तरि के सन्देश, स्वास्थ्य रक्षा, सगठन, महासम्मेलन आदि विषयों

पर विवेचनात्मक और सारगर्भित भाषण हुए। सभा का सभापतित्व गोंदिया क्षेत्र के विख्यात आयुर्वेदीय चिकित्सक एव माननीय वैद्य श्री पडित रामगोपाल जी मिश्र राजवैद्य, आयुर्वेदाचार्य द्वारा किया गया। सभा में चार प्रस्ताव उपस्थित किये गये जो वाद विवाद के उपरान्त सर्व सम्मति से स्वीकार किये गये। अन्त में सभापति जी ने अपने उद्बोधक भाषण में वैद्य समाज की वर्तमान दशा का मार्मिक चित्र खीचा एव उपस्थित वैद्यो से नम्र अनुरोध किया कि वे लगन के साथ अपने क्षेत्र मे सगठन कार्य मे लग जावे और सामूहिक रूप से अपनी अखिल भारतीय सस्था पर प्रभाव डाल कि वह आयुर्वेद के विकास एव वैद्य समाज की उन्नति के लिए वास्तविक कार्य करे। आपने वैद्य समाज मे दलबदी की तीव्र निन्दा की और कहा इस गभीर समय में आयुर्वेद जगत के प्रमुख नेतावर्ग को पारस्परिक मतभेदो पर महत्त्व नही देना चाहिए प्रत्युत सामाजिक कार्यो मे मिलकर कार्य करना चाहिए। प्रसाद वितरणोपरान्त सभा समाप्त हुई।

बिलासपुर में भव्य सभा

बिलासपुर में स्वास्थ्य दिवस के उपलक्ष में श्री धन्वन्तरि जयन्ती के लिए वैद्यराज श्री रा० कृ० मिश्र की अध्यक्षता में सभा हुई जिसमें सभी प्रमुख वैद्य वर्ग ने भाग लिया। सभा में प्रथम प्रस्ताव वैद्यराज श्री बा० जै० देवरस जी ने उपस्थित किया जिसका समर्थन वैद्यवर श्री उपाध्याय जी ने जोरदार शब्दो में किया। दूसरा प्रस्ताव श्रीयुत राजेन्द्रकुमार जी द्वारा प्रस्तुत किया गया जिसका समर्थन श्रीयुत दत्तनारायण जी त्रिपाठी ने किया। तीसरा प्रस्ताव श्रीयुत रामाधार जी पाण्डेय द्वारा प्रस्तुत किया गया और श्रीयुत दीनबन्धु जी द्वारा समर्थित हुआ। चौथा प्रस्ताव श्रीयुत गरीब राय जी द्वारा प्रस्तावित एव श्री देवरस जी द्वारा समर्थित हुआ। प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए। प्रस्तावक और समर्थक वक्ताओ ने विषयो पर विवेचनापूर्ण प्रकाश डाला। अन्य वैद्यो के आयुर्वेद पर भाषण हुए जिनमे आयुर्वेद द्वारा स्वास्थ्य साधन की व्यावहारिकता पर गम्भीर प्रकाश डाला गया।

बम्बई प्रदेश के प्रमुख नगरों में सभाएँ

जलगाँव

यहाँ भूतपूर्व महाराष्ट्र प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन के अध्यक्ष स्वनामधन्य श्री दत्तात्रय शास्त्रीय जलूकर की अध्यक्षता मे श्री धन्वन्तरि समारोह का आयोजन किया गया। सभा मे जनता तथा जिले के प्राय सभी प्रमुख वैद्य एव हकीम बधु पधारे। देशी विदेशी औषधि बिक्रेता प्रतिष्ठित व्यापारी, जननेता एव नागरिकगण पर्याप्त सख्या मे उपस्थित थे। वेद मन्त्रोच्चार द्वारा श्री भगवान धन्वन्तरि के पूजनोपरान्त श्री राजेन्द्र स्टोस जलगाव के व्यवस्थापक श्रीयुत राठी जी ने स्वागत भाषण पढकर सुनाया। उपस्थित वैद्यो में अनेक विद्वानो के सामयिक विषयो पर विवेचनात्मक भाषण हुए। वक्ताओ ने आयुर्वेद के विकास के लिए आयुर्वेद के शैक्षणिक पहलू पर विशेष बल दिया। तदनन्तर चार प्रस्ताव विचारार्थ प्रस्तुत किये गए, जिनपर प्रस्तावक एव समर्थको के व्याख्यात्मक भाषणो के अतिरिक्त अन्य उपस्थित सज्जनो ने अपने ओजस्वी विचार व्यक्त किये। प्रस्ताव सख्या ४ का पूर्वार्द्ध हटाकर उत्तरार्द्ध स्वीकार किया गया। शेष तीनो प्रस्ताव सर्व सम्मति से निर्विरोध स्वीकार कर लिये गये।

नागपुर (भण्डारा रोड)

नागपुर मे भण्डारा रोड स्थित नागपुर आयुर्वेद औषधालय में भगवान धन्वन्तरि की जयन्ती का समारोह धूमधाम के साथ मनाया गया। इस अवसर पर सभा का आयोजन भी किया गया जिसकी प्रधानता राजस्थान सेवा सघ के अध्यक्ष विख्यात वैद्य श्री रामेश्वर प्रसाद जी आयुर्वेदाचार्य ने ग्रहण की। वेद मत्रो द्वारा भगवान धन्वन्तरि के भव्य पूजन के अनन्तर वैद्य श्री भोलाराम जी एव वैद्य श्री पन्नालाल जी ने विधिवत श्री धन्वन्तरि स्तवन किया। वैद्य श्री देवी प्रसाद जी ने मगलाचरणोपरात समागत सज्जनो के स्वागत मे भावपूर्ण भाषण पढा जिसमे आयुर्वेद और जनस्वास्थ्य की वर्तमान स्थिति पर विवेचनापूर्ण प्रकाश डाला गया था। अन्य प्रमुख वक्ताओ के भाषणो के अनन्तर सभापति महोदय ने विद्वत्तापूर्ण भाषण देकर आयुर्वेद की वैज्ञानिकता पर प्रकाश डाला। सगठन की आवश्यकता पर बल देते हुए आपने कहा कि भारत में एक मात्र वैद्यनाथ प्रतिष्ठान ही ऐसा है जो प्रतिवर्ष अपनी शाखा-प्रशाखाओ द्वारा सुसगठित एव सुव्यवस्थित रूप से भगवान धन्वन्तरि की जयन्ती का समारोह मनाने की व्य-

वस्था करता है, जिससे वैद्यो में परस्पर सगठन के प्रति रुचि जाग्रत होनी है। अन्त में श्री वैद्य देवीप्रसाद ने समागत सज्जनो के प्रति आभार प्रदर्शन किया।

यवतमाल में सभा

यवतमाल में स्वास्थ्य दिवस पर विशेष कार्यक्रम आयोजित किया गया। सध्या समय वैद्य बजरगलाल शर्मा के प्रयत्न से साहूकारपेठ में सभा का आयोजन हुआ। सर्व सम्मति के आग्रह से सभा का सभापतित्व वैद्यराज श्री सत्यप्रिय शकर लचके आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरि ने स्वीकार किया। सभा में पर्याप्त सख्या में नगर और आस-पास के वैद्य बन्धु उपस्थित हुए। विभिन्न वक्ताओ ने अपने तर्क पूर्ण भाषणो द्वारा आयुर्वेद की वैज्ञानिकता एव देशी चिकित्सा पद्धति की सफलता पर प्रकाश डाला एव विनम्र शब्दो मे सरकार से देशी चिकित्सा के विकास के हेतु वास्तविक प्रयासो को प्रोत्साहन देने की अपील की। वक्ताओ ने इस बात पर बल दिया कि विज्ञान के क्षेत्र में राजनीतिक दलबन्दी का प्रवेश नही होना चाहिए और वास्तविक कार्य करने वाले प्रतिनिधि विद्वानो को ही समाज की बागडोर सम्हालनी चाहिए। सभा मे चार प्रस्ताव प्रस्तुत किये गए जो सर्व सम्मति से स्वीकार हुए। प्रसाद वितरण एव धन्यवादोपरान्त सभा समाप्त हुई।

नागपुर (न्यू इतवारी)

२१ अक्टूबर को प्रात ९ बजे श्री धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष मे भव्य सभा का आयोजन किया गया। पूर्व से ही स्वास्थ्य दिवस का व्यापक प्रचार किया गया था, इसलिये सभा मे पर्याप्त सख्या मे वैद्यगण एव प्रमुख नागरिक उपस्थित हुए। सभापति का आसन सुख्यात वैद्यवर प्राणाचार्य डाक्टर इन्दुभूषण जी भिगारे एल० ए० एम० एस० भिषग्रत्न ने ग्रहण किया। आयुर्वेद के प्रवर्तक भगवान धन्वन्तरि के पूजनोपरान्त पण्डित जगन्नाथ प्रसाद जी शर्मा ने सभापति को पुष्पार्पण किया एव वैद्य श्री मेलाराम शर्मा शास्त्री आयुर्वेदाचार्य ने स्वागत भाषण पढ़कर सुनाया जिसकी मुद्रित प्रतियाँ उपस्थित जनो में वितरित की गयी। आयुर्वेदाचार्य वैद्य देवीप्रसाद जी के मगलाचरण के उपरान्त स्थानीय गीता मन्दिर के अध्यक्ष श्री स्वामी जी, वैद्य श्री ज्वालाप्रसाद जी भिषगाचार्य तथा वैद्यवर श्री पडित दीनदयालु जी तिवारी के सारगर्भित भाषण हुए। श्री तिवारी जी ने कहा कि श्री धन्वन्तरि जयन्ती को स्वास्थ्य दिवस के रूप में मनाने का सुझाव बहुत ही उत्तम है, परन्तु इसको केवल सभा और भाषण का रूप नही देना चाहिए, बल्कि जैसी वैद्य श्री रामनारायण जी शर्मा ने अपील की है तदनुसार इसको क्रियात्मक रूप देकर स्थान स्थान पर सफाई इत्यादि का कार्यक्रम रखकर स्वास्थ्य सप्ताह के रूप में ही मनाना चाहिए। इस अवसर आयुर्वेद के स्वास्थ्य सिद्धातो का घर-घर प्रचार किया जाना चाहिए। अन्त में सभापति महोदय ने अपने विशद् और ओजस्वी भाषण में धन्वन्तरि जयन्ती के परम्परागत महत्त्व पर प्रकाश डाला और इसको स्वास्थ्य सप्ताह के रूप मे क्रियात्मक ढग से आयोजित करने का आग्रह किया। आपने सरकार से आयुर्वेद के प्रति राष्ट्रीय दृष्टिकोण से विचार करने की अपील की।

खामगांव (बम्बई)

बम्बई प्रदेश के खामगाव में डाक्टर श्री रा० भा० सरेदेशाई एल० सी० पी० एस० के सयोजन से श्रीधन्वन्तरि जयन्ती पर स्वास्थ्य दिवस का आदर्श समारोह मनाया गया, जिसमें वैद्यवर्ग के अतिरिक्त सार्वजनिक जनता ने भी रुचिपूर्वक भाग लिया। आयुर्वेद विशारद प० भूदेव जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य की प्रधानता मे एक सुन्दर सभा हुई, जिसमे विद्वान् वैद्यो ने ओजस्वी भाषण दिये। सभा चार प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकार किये गये। श्रीधन्वन्तरि पूजन सामूहिक रूप से किया गया।

अकोला में विराट सभा

दिनाङ्क २१ अक्टूबर को सध्या समय ७ बजे श्री धन्वन्तरि स्वास्थ्य महोत्सव के उपलक्ष मे गान्धी रोड अकोला मे समारोह का आयोजन किया गया। समारोह मे स्थानीय समस्त वैद्य-हकीम, अधिकारी वर्ग एव प्रमुख सार्वजनिक व्यक्तियो ने उत्साह से भाग लिया। आयुर्वेद प्रवर्तक भगवान धन्वन्तरि का पूजन-अर्चन सामूहिक रूप से वेदध्वनि के साथ किया गया। तदनन्तर स्वास्थ्य दिवसोपलक्ष में आयोजित सभा के निमित्त उपस्थित समुदाय के आग्रह पर स्थानीय वयोवृद्ध वैद्य चिकित्सक चूडामणि, वैद्य शिरोमणि, प० शिवगुलाम जी पाण्डेय ने सभापति का आसन ग्रहण किया। व्यवस्थापक श्री वैद्य गगाधर शास्त्री ने स्वागत भाषण पढ़ा। इसके अनन्तर वैद्य प० हनुमान प्रसाद जी



हरिद्वार में अनुष्ठित धन्वन्तरि जयन्ती समारोह की सभा का एक दृश्य



गोंदिया में अनुष्ठित धन्वन्तरि जयन्ती समारोह की सभा का सुन्दर दृश्य



सीवान म अनुष्ठित धन्वन्तरि जयन्ती समारोह की सभा का भव्य दृश्य



सुलतान बाजार (हैदराबाद) म अनुष्ठित धन्वन्तरि जयन्ती समारोह की सभा का एक दृश्य

शास्त्री, श्री प० बनवाली शास्त्री, डा० एल० टी० शाह, डाक्टर तिवारी जी , वैद्य नारायण प्रसाद शर्मा, वैद्य श्री कृष्णराव जी कुरकुरे, वैद्य भगवानदत्त जी शर्मा, वैद्य गान्धी जी आदि विद्वानोके आयुर्वेद विज्ञान सगठन, इत्यादि विषयो पर गभीर और प्रभावोत्पादक भाषण हुए। श्री धन्वन्तरि जयन्ती को स्वास्थ्य सप्ताह के रूप मे मनाने, सरकार से अवकाश स्वीकार करन आदि विषयो के प्रस्ताव स्वीकार हुए। सभापति महोदय ने अपने विद्वत्तापूर्ण एव उद्बोधक भाषण मे वैद्य समाज को सगठित हो कर यह दिशा देन को कहा कि आज भी आयुर्वेद बिना राज्याश्रय के भी अग्रसर है। प्रसाद वितरण कर सभा को विसर्जित किया गया।

नागपुर (महल)

महल, नागपुर स्थित श्री महल आयर्वेदिक स्टोर्स में आयुर्वेदाचार्य प० शिवकरण जी छागाणी शास्त्री की अध्यक्षता मे धन्वन्तरि जयन्ती मनाई गई। सर्वप्रथम दूकान के व्यवस्थापक वैद्य कस्तूरचद शास्त्री ने सस्कृत में स्वागत भाषण दिया। तदनन्तर अध्यक्ष प० शिवकरण जी छागाणी ने कहा कि भगवान धन्वन्तरि जी का यह उत्सव हम वैद्य बन्धुओ तक ही सीमित नही रहना चाहिये, अपितु जन साधारण तक इसका व्यापक प्रचार होना चाहिये, क्योकि भगवान् धन्वन्तरि जी ने इस मृत्युलोक में अमृतरूपी आयुर्वेद शास्त्र प्रदान कर सभी को उपकृत किया है। इस दिशा मे श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० सम्पूर्ण भारत मे बहुत समय से प्रयत्न कर रहा है और दिनोदिन इस विषय में अधिक से अधिक आर्थिक तथा शारीरिक योगदान कर एक आदर्श प्रकट कर दिया है। हमे प्रतिज्ञा करनी चाहिये कि धन्वन्तरि जी के सदुपदेशो का पालन करे और उसके द्वारा प्रदत्त निधि की उत्तरोत्तर वृद्धि करें। इसके अनन्तर वैद्य कस्तूरचद शास्त्री ने आभार प्रदर्शन और भगवान धन्वन्तरि जी का प्रसाद वितरण कर कार्यवाही समाप्त की।

आंध्र प्रदेश में सभाएँ

औरङ्गाबाद (दक्षिण)

औरगाबाद (हैदराबाद) में सुपारी हनुमान रोड स्थित दक्कन स्टोर मे श्री धन्वन्तरि जयन्ती का भव्य आयोजन किया गया। इस अवसर पर वैद्य वर्ग और जनता की सम्मिलित सभा का भी आयोजन हुआ जिसमे आयुर्वेद के स्वास्थ्यरक्षा विषयक सिद्धान्तो को जनता को समझाया गया और जनता स अपील की गयी कि जनता इन्ही सिद्धान्तो पर चल कर अपन को निरोग रखन का उपक्रम करे। पाश्चात्य तरीको से स्वास्थ्य की स्थायी रक्षा नही होती। सभा मे चार प्रस्ताव पश किये गये जो सर्व सम्मति से स्वीकार हुए और सम्बन्धित सज्जनो को डाक द्वारा भेजने का निश्चय हुआ। सभा का सभापतित्व प्रसिद्ध देशी चिकित्सक श्री बाजीराव जी वैद्यराज ने किया। श्री धन्वन्तरि भगवान का पूजन स्तवन किया गया एव सयोजक की ओर से प्रसाद वितरण हुआ।

हैदराबाद में सभा

हैदराबाद के सुल्तान बाजार में श्री धन्वन्तरि समारोह उत्साह एव धूमधाम के साथ मनाया गया। श्रीधन्वन्तरि पूजन के अनन्तर महन्त श्री बाबा पूरणदास जी के सभापतित्व में सभा हुई जिसमें हैदराबाद नगर के प्राय ७५ प्रसिद्ध वैद्यो ने भाग लिया। इसके अतिरिक्त नगर के अन्य प्रतिष्ठित नागरिक भी पर्याप्त सख्या में उपस्थित हुए। पडित श्री भूदेव जी शास्त्री ने स्वागत भाषण पढा। तदनन्तर श्री ओमप्रकाश जी आयुर्वेदालकार, श्री विद्याधर जी विद्यालकार, श्री सी० के० दिवाकरण जी, आदि उच्च विद्वान वैद्यो के आयुर्वेद के विषय मे प्रभावशाली भाषण हुए स्थान की कमी के कारण जनता क बहुत लोगो न खड-खड ही भाषण सुने। सभा मे तीन प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकार हुए। सभापति ने आयुर्वेद चिकित्सा का महत्व समझाया। प्रसाद वितरणोपरान्त सभा समाप्त की गई।

काकीनद (आन्ध्र प्रदेश)

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के काकीनद (आन्ध्र) स्थित बिक्री-केन्द्र मे बड धूमधाम के साथ धन्वन्तरि जयन्ती मनायी गयी। भगवान धन्वन्तरि के पूजन के पश्चात् स्थानीय वैद्य हकीमो एव नागरिको की एक महती सभा का आयोजन किया गया। अनक वक्ताओ न अपने भाषण मे आयुर्वेद की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० की महत्त्वपूर्ण आयुर्वेद-सेवाओ तथा आयुर्वेदोन्नति के हेतु 'भवन' द्वारा किए जाने वाले श्रेष्ठ प्रयत्नो की सराहना की। सभापति जी ने अपने भाषण में बैद्यनाथ औषधियो की गुणकारिता की भूरि-भूरि प्रशसा करते हुए वैद्यो से सगठित होकर आयुर्वेद के उत्थान के निमित्त बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा किए जाने वाले कार्यों में सहयोग प्रदान करने की अपील की। आरम्भ में मगलाचरण के अनन्तर श्री एम० एस० पी० मूर्त्ति ने स्वागत भाषण पढा। पाचो प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए। अन्त में प्रसाद वितरण और धन्यवाद ज्ञापन कर सभा समाप्त हुई।

राजस्थान के नगरों में समारोह

कोटा

कोटा में श्री धन्वन्तरि जयन्ती समारोह जननायक श्री शम्भूदयाल जी सक्सेना एम० ए० भूतपूर्व चेयरमैन म्यु० बोर्ड की अध्यक्षता मे सानन्द मनाया गया। सर्व प्रथम भगवान् धन्वन्तरि का पूजन उपस्थित वैद्य बन्धुओ व प्रतिष्ठित महानुभावो की उपस्थिति मे किया गया। तत्पश्चात् सभा का कार्यक्रम प्रारभ किया गया। सर्वप्रथम बिक्रीकेन्द्र के व्यवस्थापक जी ने स्वागत भाषण पढा। उपस्थित वैद्यो के भाषणोपरान्त अध्यक्ष महोदय ने बडे रोचक शब्दो मे आयुर्वेदीय चिकित्सा-पद्धति भारतीय जनता क लिए सबसे अधिक उपयोगी है एसा सिद्ध करत हुए बैद्यनाथ औषधियो क विषय मे अपन भाव व्यक्त किय। पुन प्रस्ताव पास किये गये। समस्त आगत सज्जनो का पुष्पमाला, पान, सुपारी से स्वागत करके प्रसाद वितरण किया गया।

रेवाड़ी में आयोजन

रेवाडी मे धन्वन्तरि जयन्ती वैद्य रामचन्द्र दडोली वाले की अध्यक्षता मे बडे धूमधाम से मनाई गई। उपस्थित वैद्यो ने आयुर्वेद के विषय मे अपने विचार व्यक्त किये तथा अध्यक्ष महोदय ने अन्त मे आयुर्वेदिक दवाओ के विषय मे भाषण देते हुए उनकी उत्तमत्ता पर जोर दिया। आयुर्वेद मण्डल के सभी वैद्य जो बाहर से आये हुए थे काफी उत्साहपूर्वक सम्मिलित हुए। सभा मे जो प्रस्ताव पास हुए वे उच्च अधिकारियो के पास भेजे गये। पश्चात आगन्तुक वैद्यो तथा प्रतिष्ठित नागरिको को प्रसाद वितरण किया गया।

धौलपुर में समारोह

धौलपुर मे धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव श्री प० भोलाराम जी वैद्य शास्त्री के समापतित्व में धूमधाम से मनाया गया। उत्सव मे नगर के वैद्य- हकीम एव प्रतिष्ठित व्यक्ति उपस्थित थे। सर्वप्रथम भगवान धन्वन्तरि जी का पूजन किया गया। अनन्तर श्री वासुदेव आयुर्वेदालकार ने स्वागत भाषण पढा। पश्चात् श्री चौतरीलाल इन्दु का आयुर्वेद की महान् शिक्षा पर भाषण हुआ जिसमे बताया गया कि अन्य चिकित्सा औषधियाँ रोगी को निरोग बनाने का प्रयत्न करती है पर आयुर्वेद उन तरीको को बताता है जिसको प्रयोग में लाने से मानव रोगी न हो। अन्त में सभापति जी का सारगर्भित भाषण हुआ। सभापति जी के भाषण के पश्चात् समागत सज्जनो में मिष्ठान्न, पचाग तथा प्रचारात्मक साहित्य एव सचित्र आयुर्वेद की प्रतियाँ वितरित की गयी। इस प्रकार यह समारोह सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

नीमकाथाना

नीमकाथाना (राजस्थान) मे धूमधाम के साथ धन्वन्तरि जयन्ती मनायी गयी। भगवान धन्वन्तरि के सविधि पूजनोपरान्त श्री वैद्यराज गजानन जी शास्त्री की अध्यक्षता में सभा हुई जिसमे वैद्य हकीम एव विशिष्ट नागरिक सम्मिलित हुए। सर्वप्रथम बिक्री केन्द्र व्यवस्थापक न स्वागत भाषण पढा। तत्पश्चात अनेक वक्ताओ ने अपने भाषण मे बैद्यनाथ औषधियो की विशिष्ट गुणकारिता पर प्रकाश डाला। सभापति जी ने अपने भाषण मे आयुर्वेद की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए आयुर्वेदोन्नति के लिए प्रयत्नशील श्री बैद्यनाथ आयर्वेद भवन के सचालको की भूरि-भूरि प्रशसा की। सर्व सम्मति से पाचो प्रस्ताव स्वीकृत हुए एव धन्यवाद ज्ञापन तथा प्रसाद वितरण कर सभा समाप्त हुई।

जयपुर में सभा

श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर जयपुर स्थित कासली आयुर्वेदिक स्टोर पर वैद्यो एव आयुर्वेद प्रेमियोकीएक सभा हुई जिसमे आयुर्वेद के विकास से सम्बन्वित महत्वपूर्ण प्रस्ताव स्वीकार किए गये। अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए श्री वैद्य जयरामदास स्वामी ने कहा कि आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति मे सभी प्रकार के रोगो का समाधान सम्भव है। आपने भारतीय विज्ञान व विद्याओ के विकास की आवश्यकता पर बल दिया। आपने बताया कि भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद आयुर्वेद का निरन्तर ह्रास होता जा रहा है। यह हमारे लिए दुर्भाग्य की बात है कि सरकार द्वारा बराबर आश्वासन दिये जाने के बावजूद भारतीय चिकित्सा-पद्धति के विकास की ओर उचित ध्यान नही दिया जा रहा है। आपने सरकार से अपील की कि वह इस प्राचीन चिकित्सा-प्रणाली को विकास का पूरा

अवसर प्रदान करें। इस अवसर पर स्वागत भाषण में आयुर्वेद की उपेक्षा पर दुख प्रकट किया गया और कहा गया कि स्वास्थ्यके मामले मे सरकार व जनता मे स्पष्ट असहयोग है। भाषण मे आगे कहा गया कि आयुर्वेदीय स्वास्थ्य-सिद्धान्तो के अनुसरण से स्वास्थ्य समस्या का समाधान हो सकता है। सभा मे उपस्थित चार महत्वपूर्ण प्रस्ताव सर्व-सम्मति से स्वीकार किये गए। एक प्रस्ताव मे जन स्वास्थ्य के विषय मे भारतीय सिद्धान्तो के आधार पर राष्ट्रीय नीति निर्धारित किए जाने की माग की गई। दूसरे प्रस्ताव में आयुर्वेद व यूनानी का समन्वय करके पाश्चात्य के आवश्यक अशो को लेकर भारतीय चिकित्सा पद्धति को स्वीकार करने पर जोर दिया गया। एक अन्य प्रस्ताव मे आसव-अरिष्टो पर लगे मद्य-प्रतिबन्धो को अविलम्ब वापस लेने की माँग की गई। अन्तिम प्रस्ताव मे अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन को सुदृढ एव सुव्यवस्थित किये जाने को आवश्यक बताया गया। श्री हजारीलाल शर्मा ने अपने भाषण मे समारोह मे भाग लेने वाले वैद्यो एव आयुर्वेद प्रेमियो को श्री बैद्यनाथ भवन प्रा० लि० की ओर से धन्यवाद दिया।

अलवर में सभा

अलवर मे श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव धूमधाम से मनाया गया। शहर के सभी प्रतिष्ठित वैद्य एव व्यापारी उपस्थित थे। सबसे पहले भगवान धन्वन्तरि जी का पूजन किया गया। श्री चन्द्रशेखर जी इन्सपेक्टर गवर्नमेट आयुर्वेदिक औषधालय सर्वसम्मति से सभापति चुने गये। इसके बाद स्वागत भाषण श्री सनतकुमार जी वैद्य द्वारा पढकर सुनाया गया। इसके बाद श्रीमन्नारायण जी शास्त्री प्रोफेसर सस्कृत कालेज अलवर ने आयुर्वेद पर महत्त्व-पूर्ण भाषण दिया। इसके बाद वैद्यरत्न श्री इन्द्रलाल जी गर्ग वैद्यराज श्री राधेदत्त जी, वैद्यराज पातजलि जी भट्ट, वैद्यराज श्री बद्रीनारायण जी के भी ओजस्वी भाषण हुए। बाद में सभापतिजी का भाषण हुआ। आपने कहा कि भारत वर्ष में आयुर्वेद की तरक्की के लिये कम से कम हर जिले में एक आयुर्वेद विद्यालय अवश्य ही होना चाहियें और प्रतिष्ठित वैद्यो की डाक्टरो के समान ही इज्जत भी होनी चाहिये। श्री राजनारायण गुप्त द्वारा उपस्थित चारो प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए और धन्यवाद ज्ञापन तथा प्रसाद वितरण कर कार्यवाही समाप्त की गयी।

पंजाब में भव्य आयोजन

जालन्धर

जालन्धर में भगवान धन्वन्तरि के सविधि पूजनोपरान्त आचार्य श्री दीनानाथ जी शास्त्री की अध्यक्षता मे सभा हुई, जिसमे वैद्य-हकीम एव विशिष्ट नागरिक सम्मिलित हुए। सर्वप्रथम बिक्री-केन्द्र-व्यवस्थापक ने स्वागत भाषण पढा। तत्पश्चात अनेक वक्ताओ ने अपने भाषण मे बैद्यनाथ औषधियो की विशिष्ट गुणकारिता पर प्रकाश डाला। सभापति जी ने अपने भाषण मे आयुर्वेद की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए आयुर्वेदोन्नति के लिए प्रयत्नशील श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के सचालको की भूरि-भूरि प्रशसा की। सर्वसम्मति से पाचो प्रस्ताव स्वीकृत हुए एव धन्यवाद ज्ञापन तथा प्रसाद वितरण कर सभा समाप्त हुई।

अमृतसर में स्वास्थ्य दिवस

श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव के उपलक्ष में अमृतसर में स्वास्थ्य दिवस बड़े उल्लासपूर्ण वातावरण में सेठ राधाकृष्ण स्थानीय म्युनिसपल कमिश्नर की अध्यक्षता मे मनाया गया। इस अवसर पर वैद्यो, हकीमो के अतिरिक्त सर्व-साधारण जनता भी पर्याप्त सख्या मे आयोजन मे सम्मिलित हुई थी। कतिपय आयुर्वेदीय विद्वानो के आयुर्वेद विषयक गवेषणापूर्ण भाषण हुए। तदुपरान्त चार प्रस्ताव पारित हुए। प्रस्ताव न० १ मे राष्ट्रीयस्तर पर राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति निर्धारण की माँग केन्द्रीय सरकार से की गयी। प्रस्ताव मे कहा गया कि आयुर्वेदिक चिकित्सा-प्रणाली को ही राष्ट्रीय चिकित्सा प्रणाली के रूप मे मान्यता दी जाए। साथ ही धन्वन्तरि जयन्ती के दिन सार्वजनिक अवकाश की घोषणा की जाय। प्रस्ताव न० २ मे देशी चिकित्सा के विकास के लिए यथाशीघ्र ठोस पाठ्यक्रम निर्धारण और कम-से-कम प्रत्येक जिल मे एक आयुर्वेद विद्यालय तथा साधन सम्पन्न आयुर्वेदिक चिकित्सालय की स्थापना करने की माँग की गयी। प्रस्ताव न० ३ द्वारा आसव-अरिष्टों

को मद्य की श्रेणी में रखे जाने का घोर विरोध किया गया और सरकार से यह अपील की गयी कि वह इस पर पुन विचार करे और आसव-अरिष्टो पर लगे प्रतिबन्ध को अविलम्ब वापस ले ले।

चौथे प्रस्ताव मे आयुर्वेद महासम्मेलन की वर्त्तमान शिथिल और निष्क्रिय अवस्था पर खेद प्रकट करते हुए आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थापना किसी केन्द्रीय स्थान में करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया।

उपर्युक्त सभी प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए। भाषण और धन्यवाद ज्ञापन के बाद सभा विसर्जित हुई।

पश्चिम बंगाल के नगरों में समारोह

खिदिरपुर (कलकत्ता) में समारोह

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के खिदिरपुर (कलकत्ता) बिक्री-केन्द्र में धूमधाम से धन्वन्तरि जयन्ती मनायी गयी। भगवान धन्वन्तरि की पूजा के बाद सभा का कार्यक्रम आरम्भ हुआ। सर्वप्रथम श्री बिहारी सिह जी केन्द्र-व्यवस्थापक ने स्वागत भाषण पढा। तत्पश्चात् अनेक वैद्यो के सामयिक भाषण हुए। सभी वक्ताओ ने बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की महान आयुर्वेद-सेवाओ की भूरि-भूरि प्रशसा की और वैद्यो से सगठित होकर आयुर्वेदोत्थान के कार्यों मे सहयोग देने पर जोर दिया। इसके साथ ही आयुर्वेद की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए आयुर्वेदोन्नति के लिए सतत प्रयत्नशील बैद्यनाथ-प्रतिष्ठान के सचालको की सराहना की गयी। अन्त मे धन्यवाद ज्ञापन और प्रसाद वितरण कर सभा की कार्यवाही समाप्त की गयी।

मटियाबुर्ज (कलकत्ता) में स्वास्थ्य दिवस

श्री धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष मे आयोजित सार्वजनिक स्वास्थ्य दिवस मटियाबुर्ज में श्री भरतलाल त्रिपाठी, आयुर्वेदाचार्य की अध्यक्षता मे मनाया गया। इस अवसर पर आयुर्वेदज्ञो के अतिरिक्त स्थानीय गण्यमान्य व्यक्ति भी पधारे थे। आयुर्वेद विषयक महत्त्वपूर्ण भाषण कतिपय विद्वान वैद्यो द्वारा दिये गये। अध्यक्ष ने बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की सराहना करते हुए आयुर्वेद अनुसधान की आवश्यकता पर जोर दिया। तदुपरात चार प्रस्ताव सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुए। प्रस्तावो में जन-स्वास्थ्य सरक्षण मे आयुर्वेद को पूर्ण प्रोत्साहन देने, द्वितीय पचवर्षीय योजना मे अधिकाधिक आयुर्वेद का उपयोग करने, आयुर्वेद में अनुसधान कराने तथा शीघ्रातिशीघ्र एक केन्द्रीय आयुर्वेद महाविद्यालय या आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना करने की माग की गयी। अध्यक्षीय भाषण तथा धन्यवाद ज्ञापन के बाद कार्यवाही समाप्त की गयी।

आलमबाजार (कलकत्ता) में सभा

गत कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को स्वास्थ्य दिवस के उपलक्ष में डाक्टर मणिलाल जी चक्रवर्ती की अध्यक्षता में एक जनसभा का आयोजन किया गया। सभा मे पर्याप्त सख्या मे आयुर्वेद प्रेमी सम्मिलित हुए थे। वैद्य भोलानाथ जी तथा वैद्य विजयरतन सेन ने आयुर्वेद की महत्ता और उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए सरकार से यह माँग की कि वह आयुर्वेद को अधिकाधिक प्रोत्साहन दे, जिससे कि भारत की यह प्राचीनतम विद्या पुन इस देश मे ही नही प्रत्युत देश के बाहर भी प्रतिष्ठित हो सके। तदुपरात श्रीनाथ शर्मा ने श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा प्रेषित चार प्रस्तावो का मूलरूप उपस्थित जनता के समक्ष पढकर सुनाया और लोगो की सम्मति माँगी। सभी प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत किये गये। इसके बाद 'जय आयुर्वेद' 'आसव-अरिष्टो पर से प्रतिबन्ध हटे' आदि नारे लगे। सभा सधन्यवाद विसर्जित हुई।

हवड़ा (मैदान) में जनसभा

स्वास्थ्य दिवस के उपलक्ष में वैद्यो, हकीमो, डाक्टरों तथा विशिष्ट नागरिको की एक सभा हवडा 'मैदान' मे गत कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को पण्डित श्री दुर्गा नाथ झा आयुर्वेदाचार्य की अध्यक्षता में आयोजित हुई। वैद्य छाजूराम जी तथा डाक्टर अमला नायडू ने इस अवसर पर भाषण करते हुए कहा कि आयुर्वेद की जितनी उपेक्षा अबतक हुई, उतनी भविष्य मे न हो सकेगी। भारत का जाग्रत जनमत अब इस उपेक्षा को नही सहन कर सकेगा। इस अवसर पर श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० की आयुर्वेदीय सेवाओ की भूरि-भूरि प्रशसा की गयी और प्रेषित प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत किये गये। प्रस्तावो में आयुर्वेद को स्वास्थ्य-सरक्षण के लिए प्रोत्साहन देने, अनुसधान कार्य प्रारम्भ करने और आसव-अरिष्टो पर से यथाशीघ्र प्रतिबध

हटाने की माँग सरकार से की गयी। अन्त में धन्यवाद-ज्ञापन के बाद सभा विसर्जित हुई।

बाँधाघाट (हवड़ा) में सभा

स्वास्थ्य दिवस के उपलक्ष में वैद्यो, हकीमो, डाक्टरो तथा नागरिको की एक वृहत् सभा कविराज श्री सुशील कुमार गुप्ता एल० ए० एम० एस० की अध्यक्षता में बाँधा-घाट मे हुई। आयुर्वेद की महत्ता पर कतिपय विद्वानो के भाषण हुए जिनमें सर्व श्री समर मुखर्जी एम० एल० ए०, हरेन्द्रनाथ काव्यतीर्थ, आयुर्वेद शास्त्री तथा डा० एस० के० दत्त प्रमुख थे। वक्ताओ ने एक स्वर से आयुर्वेद की गुणवत्ता और उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए यह माँग की कि आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के रूप मे मान्य किया जाय। आयुर्वेद की महत्ता का सुन्दर विवेचन करते हुए स्थानीय कविराज श्री दुर्गानाथ झा, आयुर्वेदाचार्य का भी इस अवसर पर सुन्दर भाषण हुआ।

वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा प्रेषित चार प्रस्ताव भी सर्व सम्मति से स्वीकृत किये गए। प्रस्ताव में आयुर्वेद को स्वास्थ्य सरक्षण के लिए प्रोत्साहन देने, अनुसधान-कार्य प्रारम्भ करने, आसव-अरिष्टो पर से यथाशीघ्र प्रतिबन्ध हटाने की माँग सरकार से की गयी। अन्त मे धन्यवाद-ज्ञापन के बाद सभा विसर्जित हुई।

चाँपदानी (हुगली) में स्वास्थ्य दिवस)

गत कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को स्वास्थ्य दिवस के उपलक्ष मे चाँपदानी मे एक वृहत् सभा का आयोजन पण्डित विशुद्धानन्द जी मिश्र के सभापतित्व में किया गया। आस-पास के प्राय सभी आयुर्वेदज्ञ तथा गण्यमान्य व्यक्ति समा-रोह मे सम्मिलित हुए थे। आगत सज्जनो ने अपने भाषणो में आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति को भारत के लिए सर्वथा अनुकूल बताते हुए इसके अधिकाधिक प्रचार पर जोर दिया।

अध्यक्ष ने अपने भाषण मे कहा कि आयुर्वेद को पुन उसके गौरवपूर्ण पद पर प्रतिष्ठित करने के लिए श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० जैसी सस्थाओ को अधिक-से-अधिक सहयोग प्रदान करना चाहिए।

अन्त मे अध्यक्ष जी की ओर से चार प्रस्ताव पेश किये गये जो सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुए। प्रस्ताव में सरकार से इस आशय की माँग की गयी कि वह जन स्वास्थ्य सरक्षण में आयुर्वेद को पूर्ण प्रोत्साहन दे—इस देश के प्राचीनतम विज्ञान आयुर्वेद को पुनस्सस्थापित करने के लिए प्रत्येक राज्य में अति शीघ्र अनुसधान कार्य प्रारम्भ करे—आसव-अरिष्टो पर से यथाशीघ्र प्रतिबन्ध हटा दे और एक केन्द्रीय आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थापना करे। अन्त में धन्य-वाद-ज्ञापन के बाद सभा विसर्जित हुई।

टीटागढ़ (२४ परगना) में सभा

धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव के अवसर पर अनुष्ठित स्वास्थ्य दिवस मनाने के लिए भारतीय औषधालय टीटागढ के उद्योग से एक जन-सभा का आयोजन श्री कृष्णकुमार शुक्ल एम० एल० ए० की अध्यक्षता मे किया गया। सभा को सर्वांग सुन्दर बनाने का प्रयत्न किया गया था। विभिन्न वक्ताओ के भाषण हुए। वक्ताओ ने आयुर्वेद को जन-जीवन मे पुन प्रतिष्ठित करने की आवश्यकता पर जोर देते हुए वैद्य समाज की एकता और सगठन की अपील की। तदुपरान्त वैद्यनाथ प्रतिष्ठान द्वारा प्रेषित चार प्रस्ताव सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुए। उन प्रस्तावो मे सरकार से इस आशय की माग की गयी कि जन-स्वास्थ्य सरक्षण को दृष्टिगत करते हुए राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति का निर्धारित करे। साथ ही प्रतिवर्ष सरकार और जनता के सहयोग से धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर अखिल भारतीय स्वास्थ्य सप्ताह का आयोजन किया जाय और केन्द्रीय सरकार स्वाधीनता दिवस और राष्ट्रीय गणतन्त्र दिवस की भाँति ही जयन्ती को स्वास्थ्य दिवस का अवकाश स्वीकृत करे। दूसरे प्रस्ताव द्वारा देशी चिकित्सा पद्धति के शिक्षण के लिए प्रत्येक जिले मे एक आयुर्वेद विद्यालय तथा साधन सम्पन्न एक आयुर्वेदिक अस्पताल स्थापित करने की माग की गयी। तीसरे प्रस्ताव द्वारा आसव-अरिष्टो को मद्य की श्रेणी मे रखे जाने का तीव्र विरोध किया गया और सरकार से यह माग की गयी कि वह अविलम्ब इस प्रतिबध को हटा दे। चौथे प्रस्ताव द्वारा अखिल भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ की गतिविधि पर असतोष प्रकट करते हुए एक सर्व सम्पन्न आयुर्वेद महाविद्या-लय की स्थापना का आयोजन वैद्यो द्वारा किए जाने की माँग की गयी। अन्त मे सभा सधन्यवाद समाप्त हुई।

बर्दवान में स्वास्थ्य दिवस

गत कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी तदनुसार २१ अक्तूबर को बर्दवान में धन्वन्तरि जयन्ती के शुभ अवसर पर आयोजित

स्वास्थ्य दिवस को मनाने के लिए स्थानीय वैद्यो, कविराजो, हकीमो तथा विशिष्ट नागरिको की सभा प० श्रीकान्त शास्त्री की अध्यक्षता मे हुई। आयुर्वेदोत्थान सम्बन्धी भाषण हुए, जिनमे आयुर्वेद को राष्ट्रव्यापी चिकित्सा-पद्धति बनाए जाने की अपील की गयी। तदुपरान्त वैद्यनाथ प्रतिष्ठान द्वारा प्रेषित प्रस्ताव सभा मे उपस्थित किये गए जो सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए।

प्रस्ताव में आयुर्वेद को जन स्वास्थ्य सरक्षण के लिए इस देश की राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के रूप में मान्यता देने, द्वितीय पचवर्षीय योजना मे अधिकाधिक आयुर्वेद के उपयोग किये जाने, आसव-अरिष्टो पर से प्रतिबन्ध हटाने एव शीघ्रातिशीघ्र एक केन्द्रीय आयुर्वेद महाविद्यालय या आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना करने की माग की गयी। अन्त मे सभा की कार्यवाही सधन्यवाद समाप्त हुई।

आसनसोल में सभा

राष्ट्रीय स्वास्थ्य दिवस के उपलक्ष में स्थानीय मुशी बाजार आसनसोल मे एक सभा का आयोजन उत्साहपूर्ण वातावरण मे किया गया। सर्वप्रथम वैद्य जी काशीनाथ पाण्डेय, आयुर्वेदाचार्य ने आयुर्वेद की उत्तरोत्तर उन्नति एव प्रसार पर प्रकाश डालते हुए कहा कि आयुर्वेद की उन्नति के लिए वैद्य हकीमो में परस्पर सहयोग और सदभावना का होना आवश्यक है। तदुपरान्त वैद्यनाथ प्रतिष्ठान द्वारा प्रेषित चार प्रस्ताव—जिनमे आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा घोषित करने, धन्वन्तरि जयन्ती को राष्ट्रीय स्वास्थ्य दिवस के रूप मे मनाए जाने, उस दिन देशव्यापी सार्वजनिक छुट्टी घोषित करने एव आसव अरिष्टो पर से अविलम्ब प्रतिबध हटाने की माग सरकार से की गयी थी—सर्व सम्मति से स्वीकृत किये गये। सभीने जोरदार शब्दो मे आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा घोषित करने तथा आसव-अरिष्टो पर लगे प्रतिबध को हटाने की माग की।

स्थानीय कवियो की उपस्थिति ने उत्सव मे चार चाँद लगा दिए और इस अवसर पर एक कविसम्मेलन भी हुआ, जिसमें 'हम-सफर' 'राही' आदि कवियो ने भाग लिया। अध्यक्षीय भाषण और धन्यवाद-ज्ञापन के बाद उत्सव समाप्त हुआ।

रानीगंज में सभा

गत दिनाक २१ अक्तूबर को धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर अनुष्ठित स्वास्थ्य दिवस, रानीगज में श्री युत् आर० डी० राय बी० एस० सी० के सभापतित्व मे ससमारोह मनाया गया। सर्व प्रथम श्रीमुत् विष्णुदत्त शर्मा द्वारा स्वस्तिवाचन और कुमारी विजयलक्ष्मी द्वारा वन्देमातरम् का गायन हुआ। उत्सव के प्रधान अतिथि श्रीयुत सीताराम साहा, सर्किल आफिसर रानीगज ने आयुर्वेद की महत्ता पर सुन्दर प्रकाश डाला। आपके अतिरिक्त सर्व श्री शान्ति स्वरूप वर्मा, रामानन्द जी तथा विष्णुदत्त जी शर्मा के सारगर्भित भाषण हुए। अध्यक्षीय भाषण में इस बात पर जोर दिया गया कि आयुर्वेद इस देश की प्राचीन विद्या है। इस नाते आयुर्वेद को ही राष्ट्रीय चिकित्सा के रूप मे मान्यता मिलनी चाहिए। आपने कहा कि मनुष्य अपने शरीर की रक्षा आयुर्वेद द्वारा बताए गए माग पर चलकर ही कर सकता है।

वैद्यनाथ भवन द्वारा प्रेषित चार प्रस्ताव सभा मे उपस्थित किये गए जो सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए। उन प्रस्तावो मे जन-स्वास्थ्य सरक्षण के लिए आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के रूप मे मान्यता देने, द्वितीय पचवर्षीय योजना मे अधिकाधिक आयुर्वेद के उपयोग किए जाने, आसव-अरिष्टो पर से तत्काल प्रतिबध हटाने एव शीघ्रातिशीघ्र एक केन्द्रीय आयुर्वेद महाविद्यालय या आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना की माँग की गयी। धन्यवाद-ज्ञापन के पश्चात सभा विसर्जित हुई।

पुरुलिया में स्वास्थ्य-दिवस

श्री धन्वन्तरि महोत्सव के उपलक्ष्य मे सार्वजनिक स्वास्थ्य दिवस का आयोजन बडे उत्साह पूर्ण वातावरण में किया गया। वैद्य, हकीम और नगर की आयुर्वेद प्रेमी जनता भारी सख्या मे उपस्थित थी। मगलाचरण के साथ दिवस की कार्यवाही प्रारभ हुई। विद्वान वैद्यो के आयुर्वेद तथा जनोपयोगी भाषण हुए। वक्ताओ ने एक स्वर से आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के रूप में मान्यता देने की माँग सरकार से की। तदुपरान्त वैद्यनाथ प्रतिष्ठान द्वारा प्रेषित ४ प्रस्ताव पेश हुए और सर्वसम्मति से स्वीकृत किये गये।

प्रस्तावो में जन-स्वास्थ्य सरक्षण के लिए आयुर्वेद को पूर्ण प्रोत्साहन देने पचवर्षीय योजना में अधिकाधिक आयुर्वेद का उपयोग करने, आसव-अरिष्टो पर से प्रतिबध हटाने तथा एक केन्द्रीय महाविद्यालय की स्थापना करने की माँग की गयी। अन्त मे धन्यवाद ज्ञापन के बाद सभा विसर्जित हुई। —

उड़ीसा में स्वास्थ्य-दिवस-समारोह

कटक में स्वास्थ्य दिवस

धन्वन्तरि स्वास्थ्य दिवस के उपलक्ष में बक्सी बाजार, कटक मे एक जन सभा का समारोह आयोजन किया गया। इस दिवस के आयोजन में भाग लेने के लिए पास पड़ोस के लोग जुटकर आए थे। सर्वप्रथम उत्कल वैद्य सम्मेलन के प्रधान मंत्री कविराज श्री बनमालीदास जी ने उस अवसर पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि स्वतंत्रता प्राप्ति के १० वर्ष बाद भी केन्द्रीय तथा राज्य सरकारो ने आयुर्वेद के लिए उल्लेखनीय कार्य नही किया। आयुर्वेद मे गवेषणा की चर्चा करते हुए कविराज दास ने कहा कि आयुर्वेद की सर्वथा अलग भित्ति है और इसीके आधार पर आयुर्वेद मे गवेषणा होनी चाहिए। तदुपरान्त श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० द्वारा प्रेषित आयुर्वेद हितार्थ चार प्रस्ताव सर्व सम्मति से पारित हुए। प्रस्तावो मे शासन से इस आशय की अपील की गयी कि देश के राजनीतिक और सामाजिक संगठनो के प्रतिनिधियो की एक परिषद बुलाकर वह जन स्वास्थ्य के सम्बन्ध मे अपनी राष्ट्रीय नीति निर्धारित करे—साथ ही व्याधियो के निराकरण और चिकित्सा मे आयुर्वेद के व्यापक और प्रभावकारी सिद्धान्तो के अनुसरण करने की व्यवस्था करे। एक प्रस्ताव मे सरकार से यह अपील की गयी कि राष्ट्रीय स्वास्थ्य दिवस के रूप में धन्वन्तरि जयन्ती मनाने के लिए उस दिन सार्वजनिक छुट्टी की घोषणा की जाय। आसव अरिष्टो पर से प्रतिबंध हटाने आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा घोषित करने एवं अखिल भारतीय आयुर्वेद सम्मेलन की निष्क्रियता दूर करने के सम्बन्ध मे भी प्रस्ताव पारित हुए। इस अवसर पर समागत वैद्यो तथा आयुर्वेदीय विद्वानो मे सर्व श्री कविराज अनन्त त्रिपाठी कविराज विश्वनाथ दास, कविराज चक्रधर भट्ट शास्त्री, कविराज लक्ष्मणकुमार पट्टनायक और श्रीमती सरस्वती देवी प्रभृति प्रमुख थे। स्वल्पाहार के पश्चात् आयोजन समाप्त हुआ।

पुरी में स्वास्थ्य दिवस

स्वास्थ्य दिवस के उपलक्ष मे गत कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को आयुर्वेद प्रेमियो विद्वानो एवं चिकित्सको की एक विराट्-सभा का आयोजन कविराज पं० दामोदर शास्त्री की अध्यक्षता में दोलामण्डप साही, पुरी मे किया गया। सभा में आयुर्वेदज्ञो चिकित्सको के अतिरिक्त सर्व साधारण जनता भी बड़ी संख्या मे जुट कर आयी थी। सर्व प्रथम कविराज श्री आनन्द महापात्र, कविराज रामचन्द्र मिश्र आदि वक्ताओ ने आयुर्वेद की महत्ता पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि शल्य चिकित्सा अष्टाङ्ग आयुर्वेद का एक प्रमुख अंग है और प्राचीन काल मे यह चिकित्सा अपने उत्कर्ष पर थी—हाँ, मध्यकाल मे आकर यह चिकित्सा आयुर्वेदज्ञो के हाथ से जाती रही। इस वैज्ञानिक युग मे हम यदि अन्य चिकित्सा पद्धतियो के साथ कदम मिलाकर बढ़ना चाहते है तो यह परम जरूरी है कि शल्य चिकित्सा मे भी आयुर्वेदज्ञो को पूर्ण निष्णात होना चाहिए।

अध्यक्ष महोदय ने अपने भाषण मे कहा कि आयुर्वेद को केवल चिकित्सा शास्त्र कहना उसका अपमान करना है—चिकित्सा केवल रोग निवृत्ति मात्र मे सीमित है। आयुर्वेद जीवन को पूर्ण स्वस्थ बनाने पर जोर देता है—इसलिए उसको जीवन का विज्ञान बताया गया है। आपने कहा कि आयुर्वेद का दार्शनिक आधार बड़ा ही सबल है—और दर्शनहीन विज्ञान विज्ञान नही हो सकता। आपने वैद्यो और चिकित्सको को सम्बोधित करते हुए कहा कि जन-स्वास्थ्य सम्बन्धी आयुर्वेद का महामंत्र नगर जनपद और ग्रामीण अंचलो तक पहुँचा कर जन-जीवन को स्वास्थ्य और सौन्दर्य पूरित बनाने का शुभ संकल्प हमे लेना चाहिए।

भारत सरकार की आयुर्वेद विषयक उपेक्षा नीति की चर्चा करते हुए आपने कहा कि सरकार विदेशी औषधियो के क्रय मे ५५ करोड रुपये प्रतिवर्ष व्यय करती है जबकि आयुर्वेद को पूर्ण प्रोत्साहन और प्रश्रय देकर सरकार इन रुपयो की बचत कर सकती है।

अध्यक्षीय भाषण के उपरान्त श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा प्रेषित चार प्रस्ताव पेश किये गये, जो सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए। स्वीकृत प्रस्तावो मे सरकार से जन-स्वास्थ्य के सम्बन्ध मे दृढ़ नीति अपनाने, आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा घोषित करने, धन्वन्तरि जयन्ती को राष्ट्रीय स्वास्थ्य दिवस के रूप में मनाए जाने और सार्वजनिक छुट्टी घोषित करने एवं आसव-अरिष्टो पर से प्रतिबंध हटाने की जोरदार शब्दो मे माँग की गयी। धन्यवाद ज्ञापन के बाद सभा विसर्जित हुई।

सम्बलपुर में स्वास्थ्य दिवस

राष्ट्रीय स्वास्थ्य दिवस के उपलक्ष में सम्बलपुर में इस वर्ष श्री पूर्णचन्द्र शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य के सभापतित्व में एक जनसभा का समारोह पूर्वक आयोजन किया गया। सर्वप्रथम स्थानीय प्रमुख किकित्सक श्री नरेन्द्रनाथ सेन गुप्त वैद्य शास्त्री ने भाषण दिया। अपने भाषण मे आपने वैद्य वर्ग के कर्त्तव्यो पर जोर देते हुए कहा कि यदि वैद्य वर्ग स्वार्थ रहित होकर सेवा की भावना से अनुप्राणित चिकित्सा-पद्धति को अपनावें तो आयुर्वेद का सिक्का आयुर्वेद से विरक्त लोगो पर जमते देर नही लगे। तदुपरान्त कविराज श्री गोविन्द चन्द्र रथ ने आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थापना करन सम्बन्धी एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया, जिसका समर्थन स्थानीय बिक्री-केन्द्र के व्यवस्थापक वैद्य वैद्यनाथ त्रिवदी ने किया। तदनन्तर वैद्य जी श्री शिव प्रसाद जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य का धन्वन्तरि के काल-निर्णय सम्बन्धी प्रश्न पर एक गवेषणापूर्ण भाषण हुआ, जिसकी श्रोताओ ने मुक्त कण्ठ प्रशसा की। अन्त मे मनोनीत अध्यक्ष का सारगर्भित भाषण हुआ। आपने आयुर्वेद के दार्शनिक आधार की विवेचना करते हुए अपने इस विश्वास की घोषणा जोरदार शब्दो में की कि आधुनिक व्याधियो के उपचार में त्रिदोषात्मक पद्धति जितनी सफल सिद्ध हो सकती है, उतनी अन्य चिकित्सा पद्धतिया सफल न होगी।

वैद्यनाथ औषधियो की गुणवत्ता पर प्रकाश डालते हुए आपने कहा कि वैद्यनाथ प्रतिष्ठान की औषधियो का व्यवहार मैने स्वय कई बार किया है और मुझे आशातीत लाभ हुआ है। दृष्टान्त के तौर पर पाण्डु रोग से पीडित एक रोगी की चिकित्सा करते समय मैने वैद्यनाथ की औषध का प्रयोग करके देखा कि पाण्डु रोग से हताश रोगी को इसके सेवन से स्वस्थ होते देर नही लगी। आपने वैद्यनाथ प्रतिष्ठान की उन्नति की कामना करते हुए भाषण समाप्त किया।

आगत महानुभावो के प्रति धन्यवाद ज्ञापन और प्रसाद वितरण के बाद सभा समाप्त हुई। प्रस्ताव की प्रतियाँ अधिकारियो और समाचार पत्रो को भेज दी गयी।

भारत के विभिन्न स्थानों पर धन्वन्तरि-जयन्ती-समारोह

रामघाट-काशी

श्री वल्लभराम शालिग्राम साङ्गवेद विद्यालय एव चिकित्सालय रामघाट-काशी मे वैद्यराज प० रामशङ्कर जी शास्त्री की अध्यक्षता मे धन्वन्तरि जयन्ती मनाई गई। श्री गोपालराम जी जानी ने धन्वन्तरि भगवान का षोडशोपचार पूजन किया। श्री रघुवीर पाठक वैद्य, कैलाशनाथ जेतली वैद्य ताराशकर वैद्य, पुरुषोत्तम पाध्याय, बाबूराम शास्त्री गोमती मिश्र, श्री हरिराम शुक्ल, विश्वनाथ शास्त्री-दातार एव आगिरस शर्मा प्रभृत्ति विद्वानो के भाषण हुए। अर्जुन आयुर्वेद विद्यालय के प्रधानाचार्य श्री ताराशङ्कर वैद्य ने कहा कि वाराणसी मे साङ्गवेद विद्यालय ने ही भारतीय साहित्य और सस्कृति की सर्वाधिक रक्षा की है। यहाँ पर आयुर्वेदिक औषधालय देखकर प्रसन्नता होती है। लेकिन उसके लघुरूप के सामने पाश्चात्य विज्ञान एलोपैथी के विकसित रूप को देखकर चिन्ता होती है कि यहाँ के मालिको में आयुर्वेद के प्रति अनुराग होते हुए भी ऐसा क्यो हो रहा है यह समझ में नही आता। लेकिन यह बात उनकी कीर्ति में चिन्तनीय है। जबतक यहाँ पर आयुर्वेद का सुव्यवस्थित और सुविकसित वृहत् आतुरालय नही हो जाता, तब तक प्रगति की दिशा मे कदम बढाना सम्भव नही। यहाँ के मालिको से अनुरोध है कि अविलम्ब आयुर्वेदिक आतुरालय और अनुसन्धान शाला की स्थापना करके अपनी वेद-शास्त्र-सरक्षकता को निवाहे।

तत्पश्चात् रसायन विशारद प० दुर्गादत्त जी शास्त्री ने कहा कि हम आयुर्वेदानुरागियो एव वैद्यो तथा सस्थाओ से जोरदार अपील करते है कि अति शीघ्र इसी काशी नगरी मे भगवान धन्वन्तरि मन्दिर का निर्माण हो जहाँ पर स्वय उनका अवतार हुआ है। गीता मे "काशी राजश्च वीर्यवान्" ऐसा उनके लिये सकेत किया है। धन्वन्तरि कूप के नाम से यहाँ पर एक कूप अद्यावधि विद्यमान है जहा पर स्नान मात्र से चर्म रोग निर्मूल होता है।

अन्त मे सभापति महोदय का भाषण हुआ। आपने धन्वन्तरि त्रयोदशी की तिथि की प्रामाणिकता बतलाते हुए कहा कि "धन्वन्तरि पटल" नामक ग्रन्थ में



धन्वन्तरि जयन्ती पर आसनसोल मे अनुष्ठित स्वास्थ्य समारोह की सभा का दृश्य ।



धन्वन्तरि जयन्ती पर यवतमाल में अनुष्ठित स्वास्थ्य-समारोह की सभा का भव्य दृश्य



धन्वन्तरि जयन्ती पर अमृतसर में अनुष्ठित स्वास्थ्य समारोह की सभा का दृश्य



धन्वन्तरि जयन्ती पर उज्जैन में अनुष्ठित स्वास्थ्य-समारोह की सभा का दृश्य

इसका पूर्ण वर्णन है। उसीके आधार पर तथा परम्परा प्राप्त प्रमाण पर यह आधारित है। किन्तु इस समय धन्वन्तरि सम्प्रदाय का प्राय लोप हो गया है। इसके लिये शल्य-शालाक्य जिज्ञासु चिकित्सकों का परम कर्त्तव्य है कि वे सच्चरित्र तद्‌विज्ञो द्वारा इसका कर्माभ्यास करे और समन्वय करके उसे वृद्धिगत करें तथा आपस में एकता का भाव बढाये एव शास्त्रीय ज्ञान-प्राप्ति के लिये कठिन के कठिन तपस्या करें, गुरु सेवा करे। केवल स्वार्थ बुद्धि से कार्य करने से आयुर्वेद की उन्नति नही होगी। इसके लिये बलिदान की आवश्यकता है। अपने अतीत गौरव को पुन प्राप्त करने के लिए सतत चेष्टा करनी होगी। तत्पश्चात् स्थानीय चिकित्सक विश्वनाथ पाण्डेय ने सबको हार्दिक धन्यवाद दिया। माल्यप्रदान एव प्रसाद वितरण के साथ सभा की कार्यवाही समाप्त हुई।

नेवरना, जिला उन्नाव

राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय नेवरना जिला उन्नाव में आयुर्वेद के आदि प्रवर्तक भगवान धन्वन्तरि का जयन्ती समारोह बडे उत्साह के साथ मनाया गया। प्रात काल चिकित्सालय तथा मोहल्ले की सार्वजनिक सफाई करने के उपरान्त मण्डल के प्रमुख वैद्यो ने एक साथ बैठकर बहुसंख्यक रोगियो की रोग परीक्षा करके उन्हें उचित चिकित्सा विषयक परामर्श दिया। सायकाल भगवान धन्वन्तरि के षोडशोपचार पूजन तथा हवन के पश्चात् नेवरना के वयोवृद्ध आचार्य श्री शिवदुलारे पाण्डेय की अध्यक्षता में सार्वजनिक सभा हुई जिसमे मण्डल के वैद्य तथा बहुसंख्यक जनता ने भाग लिया। वैद्यो तथा जनता द्वारा भगवान धन्वन्तरि के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करने के पश्चात् राजकीय चिकित्सालय के चिकित्सक श्री निवास शुक्ल ने देश में होने वाली बहुसंख्यक बाल-मृत्यु के कारणो पर प्रकाश डालते हुए आयुर्वेद विज्ञान द्वारा उसके प्रतिकार का सुविस्तृत वर्णन किया। सभापति महोदय द्वारा भगवान धन्वन्तरि के अवतार की कथा का विस्तारपूर्वक वर्णन करने के बाद प्रसाद वितरण के साथ सभा की कार्यवाही पूर्ण हुई।

खरौझा (चकिया) वाराणसी

राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय खरौझा (वाराणसी) म आयुर्वेद प्रवर्त्तक भगवान् धन्वन्तरि का जन्मोत्सव पर्व बड़े धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर ग्रामीण जनता तथा प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने समारोह को सफलता पूर्वक सम्पन्न कराने मे सहयोग प्रदान किया। सर्व प्रथम मगल गान और मन्त्रोच्चार द्वारा कार्यक्रम शुरू हुआ। तदनन्तर औषधालय के वितरक प० नामवर शर्मा ने बाहुजनन्दन भगवान धन्वन्तरि तथा उनके कृत्यो पर प्रकाश डालते हुए नागरिको से अपील की कि वे खरौझा चिकित्सालय से पूर्णतया लाभ उठाकर हमे सेवा करने का अवसर दे। प्रसाद वितरण के पश्चात् कार्यक्रम समाप्त हुआ।

चितबडागाँव (बलिया)

राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय चित्तबडागाँव में पण्डित जगन्नाथ तिवारी बी० ए० एल० एस० बी० की अध्यक्षता में धन्वन्तरि जयन्ती मनायी गई। प्रथम धन्वन्तरि पूजन के बाद कुमारी मनोरमा सिह द्वारा धन्वन्तरि-वन्दना हुई। तत्पश्चात श्री रामजन्म सिंह ने आयुर्वेद पर सारगर्भित भाषण किया। चिकित्सालय के इन्चार्ज श्री शिवपूजन सिह ने आयुर्वेद की रचना, उपादेयता एव स्वस्थ-वृत्त पर प्रकाश डाला।

अध्यक्ष महोदय ने जडी बूटियो द्वारा सुन्दर चिकित्सा पर प्रकाश डाला और विभिन्न तर्को द्वारा आयुर्वेदिक पद्धति को सर्वोत्तम चिकित्सा प्रणाली सिद्ध किया। अन्त में प्रसाद वितरण के पश्चात् जयन्ती-समारोह की समाप्ति हुई।

गोसाईंगज (लखनऊ)

धन्वन्तरि जयन्ती का उत्सव राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय गोसाईंगज जि० लखनऊ मे बडी धूमधाम से मनाया गया। सर्व प्रथम निमन्त्रित जनसमूह के समक्ष प्रात काल ७ बजे चिकित्सालय भवन मे पूजन व हवन हुआ और समस्त ग्राम मे प्रभातफेरी के साथ स्वच्छता का कार्यक्रम सपन्न हुआ। शाम को एक आयुर्वेद "कवि गोष्ठी" व "आयुर्वेद विकास प्रदर्शिनी" का उद्घाटन श्री ख्याली राम जी एम० एल० ए० द्वारा सपन्न हुआ। तत्पश्चात् श्री ख्यालीराम जी के सभापतित्व मे आयुर्वेद कवि-गोष्ठी हुई जिसमें क्षेत्र के कवियो ने अपनी कविताओ द्वारा आयुर्वेद का बखान किया। "कवि गोष्ठी" मे श्रेष्ठतम कवियो को १५) की पुस्तकें पुरस्कार स्वरूप भेंट की गई। तत्पश्चात् स्वास्थ्य प्रवचन हुए जिसमे वक्ताओ ने आयुर्वेद के महत्त्व पर बल दिया।

सरायममरेज (इलाहाबाद)

राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय सरायममरेज (इलाहाबाद) में श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव बड़े समारोह एवं भव्य रूप से मनाया गया। इस अवसर पर चिकित्सालयाध्यक्ष वैद्य शिव सहाय शास्त्री ने एक विशाल आयुर्वेदिक प्रदर्शिनी का भी आयोजन किया था, जिसमें शिक्षाप्रद चार्ट और माडल्स द्वारा जनता को स्वास्थ्य विषयक आदर्शों से अवगत कराया गया। प्रदर्शिनी का उद्घाटन एवं सभापतित्व क्षेत्रीय विकास अधिकारी श्री राम सनेही कटियार ने किया। श्री मनोजकुमार द्वारा संस्कृत पद्यमय धन्वन्तरि वन्दना के पश्चात् स्थानीय ग्राम सभापति ने झण्डोतोलन किया। श्री प० राजनारायण शास्त्री एवं ठा० राजेश्वरी प्रताप सिंह ने धन्वन्तरि के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए चिकित्सालय की लोकप्रियता की सराहना की। श्री वन्देहसन कविराज एवं श्री सत्यनारायण जी का वाद्यसहित जय धन्वन्तरि कविता-पाठ अतीव मनोरम रहा। अध्यक्ष पदेन भाषण करते हुए श्री कटियार साहब ने आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति को वैज्ञानिक बताते हुए इस पद्धति पर श्रद्धा एवं विश्वास रखने की जनता को सलाह दी। चिकित्साधिकारी वैद्य शिवसहाय शास्त्री ने आगत जन समूह को धन्यवाद देते हुए धन्वन्तरि जयन्ती की महत्ता एवं वैद्यो को सुसंगठित होकर आयुर्वेद को समुन्नत करने का प्रयास जारी रखने का अनुरोध किया। अन्त मे समागत सभी जनो को जलपान कराकर धन्वन्तरि जय-घोष के साथ सभा की कार्यवाही समाप्त की गई।

सूपा (हमीरपुर)

राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय सूपा जिला हमीरपुर में धन्वन्तरि जयन्ती समारोह बड़ी धूमधाम से मनाया गया। नगर के समस्त प्रतिष्ठित नागरिकों एवं वैद्यो ने भगवान धन्वन्तरि को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। विधिवत हवन पूजन कीर्तन एवं प्रसाद वितरण के पश्चात कई विद्वतापूर्ण सारगर्भित भाषण हुए। स्वास्थ्य सप्ताह मनाकर नगर की सफाई कराई गई एवं ग्रामीणो को स्वस्थ रहने के नियम बतलाये गये। जड़ी बूटी की एक प्रदर्शनी की गई। ग्राम सभा की ओर से स्वस्थ बच्चो को पारितोषिक बाँटा गया।

राजामऊ

राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय, राजामऊ जिला रायबरेली में धन्वन्तरि जयन्ती उत्सव अत्यन्त उत्साहपूर्वक मनाया गया। कीर्तन, हवन, पूजन हुआ तथा भू० पू० रियासत राजामऊ के कोशाध्यक्ष तथा ब्रांच पोस्टमास्टर राजामऊ श्री शीतलासहाय जी की अध्यक्षता में सभा हुई, जिसमें प० चन्द्रकिशोर शुक्ल, प० भवरेश्वर प्रसाद मिश्र अध्यापक तथा प० शिवशंकर शुक्ल कम्पाउन्डर आदि के भाषण हुए। अध्यक्ष महोदय ने अगले वर्ष अधिक विशाल रूप में समारोह मनाने में सहयोग देने का वचन दिया।

अन्त में श्री बलराम किशोर श्रीवास्तव ने धन्यवाद और प्रसाद वितरण करके कार्यक्रम समाप्त किया।

महाराजगंज (आजमगढ़)

राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय महाराजगंज, आजमगढ मे बड़े समारोह के साथ धन्वन्तरि जयन्ती का उत्सव मनाया गया। प्रातःकाल प्रभातफरी के पश्चात पार्श्ववर्ती ग्राम मिसिरपुर के ग्रामवासियो तथा प्रांतीय रक्षा दल के कर्मचारियो के सहयोग से सफाई का कार्य किया गया। तत्पश्चात् वितरक प० राजेश्वर बाजपेयी के पौरोहित्य में धन्वन्तरि भगवान का विधिपूर्वक पूजन एवं हवनादि कार्यों के साथ प्रसाद वितरण अनुष्ठान सम्पन्न हुआ। सायंकाल आयुर्वेद प्रेमी सज्जनो के साथ एक भव्य सभा का आयोजन हुआ।

नन्दप्रयाग (गढ़वाल)

राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय नन्दप्रयाग (गढ़वाल) मे श्री गोविन्द प्रसाद नौटियाल की अध्यक्षता में धन्वन्तरि जयन्ती मनाई गई। चिकित्सालय के कर्मचारियो ने चिकित्सालय को खूब सजाया था। सर्वप्रथम भगवान धन्वन्तरि की पूजा वेद की ऋचाओ द्वारा की गई। श्री बालादत्त ज्योतिषी ने मंगलाचरण गान किया। श्री प० राधाकृष्ण वैष्णव श्री प० रामप्रसाद बहुगुना, श्री प० सुरेन्द्रदत्त पैनोली आयुर्वेदाचार्य ने आयुर्वेद शास्त्र की गुण-गरिमा की सामयिक व्याख्या की। अन्त में सभापति महोदय ने आयुर्वेद पर सुन्दर भाषण दिया। उपरान्त भगवान का प्रसाद वितरण किया गया।

मिरजापुर (मुजफ्फरनगर)

राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय मिरजापुर, जि० मुजफ्फरनगर में धन्वन्तरि-समारोह बड़े उत्साहपूर्वक मनाया गया। स्वास्थ्योपदेश के साथ-साथ चिकित्सालय के अध्यक्ष श्री राजपाल सिंह ने वहाँ जङ्गल में मिलने वाली

कई बूटियों के गुणों से ग्रामीण जनता को परिचित कराया। महाशय हरफूल सिंह का सुन्दर भजनोपदेश हुआ और मिष्ठान वितरण के साथ सभा समाप्त हुई।

हृषीकेश, (देहरादून)

वैद्य सभा हृषीकेश का वार्षिकोत्सव धन्वन्तरि त्रयोदशी के दिन श्री स्वामी दयानिधि जी आयुर्वेदाचार्य के सभापतित्व में भगवान धन्वन्तरि के पूजन के साथ बडे समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। वैद्य मुक्तेश्वर जी तथा वैद्य हरिदत्त जी पन्त की कविताएँ तथा अनेक महानुभावो के भाषण धन्वन्तरि भगवान के प्रादुर्भाव एवं आयुर्वेद की महत्ता के विषय मे हुए। छात्रगण एवं साधु समाज तथा अनेक गण्यमान व्यक्तियो ने उत्सव में सम्मिलित होकर लाभ उठाया।

पचेवरा (मिर्जापुर)

पचेवरा राजकीय चिकित्सालय (मिर्जापुर) के तत्वावधान में धनत्रयोदशी के शुभ अवसर पर श्री प० उमाशंकर उपाध्याय जी के सभापतित्व में श्री धन्वन्तरि जयन्ती समारोह सम्पन्न हुआ। इस शुभ अवसर पर निकट क्षेत्र के प्राय सभी प्रमुख व्यक्ति उपस्थित थे। प्रमुख वक्ताओ ने आयुर्वेदिक चिकित्सा की प्रधानता को स्पष्ट करते हुए सर्वशक्ति सम्पन्न श्री धन्वन्तरि जी के महत्व पर प्रकाश डाला। जनता के मनोरंजनार्थ श्री भास्करानन्द जी व्यास ने अपने मानस प्रवचन द्वारा उपस्थित सज्जनो के मानस में औदार्य भावना के प्रतिष्ठापन पर जोर दिया। तदनन्तर सहयोगी सज्जनो को चिकित्साधिकारी (पचेवरा) ने हार्दिक धन्यवाद प्रदान करते हुए प्रसाद वितरण का कार्य सम्पन्न किया।

पोखरीखेत (गढ़वाल)

राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय पोखरीखेत में धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव ग्राम सभा के प्रधान श्री गुमान सिंह जी के सभापतित्व मे बडे धूमधाम के साथ मनाया गया। सर्वप्रथम बेसिक प्रायमरी पाठशाला के छात्रो द्वारा धन्वन्तरि गायन आरम्भ हुआ। इसके बाद खेल कूद, ग्राम की सफाई एवं आयुर्वेद का प्रचार कार्य हुआ। धन्वन्तरि जयन्ती के विषय में चिकित्सक महोदय ने भाषण दिया तथा राजकीय कर्मचारियो ने इस में अपना पूर्ण सहयोग दिया।

योगेन्द्रनगर (हिमाचल प्रदेश)

राजकीय औषधि निर्माण शाला, योगेन्द्रनगर (हिमाचल प्रदेश) में धन्वन्तरि जयन्ती समारोह व्यवस्थापक निर्माणशाला की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। धन्वन्तरि भगवान के पूजन से कार्यवाही आरम्भ हुई। आयुर्वेदाचार्य डा० रामकृष्ण मिश्र ने धन्वन्तरि भगवान के प्रादुर्भाव व कालनिर्णय पर प्रकाश डाला। तदनन्तर आयुर्वेदाचार्य श्री उमाकान्त रैना ने आयुर्वेद शास्त्र की महत्ता तथा धन्वन्तरि भगवान के विषय मे उपस्थित जनो को ज्ञान कराया। तदनन्तर मिष्ठान्न वितरण हुआ। व्यवस्थापक निर्माणशाला श्री प० धनदेव वैद्य वाचस्पति जी ने आयुर्वेद शास्त्र की महत्ता पर व्याख्यान दिया तथा इस अभूतपूर्व समारोह पर प्रसन्नता प्रकट की।

हरचन्दपुर (रायबरेली)

हरचन्दपुर (रायबरेली) के राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय के तत्वावधान मे धन्वन्तरि जयन्ती स्वास्थ्य सप्ताह के रूप में विभिन्न रचनात्मक कार्यों के उल्लासमय वातावरण में विशेष धूमधाम और आकर्षक ढग से मनाई गई। इस सप्ताह में स्वच्छता आन्दोलन, शिशु प्रदर्शनी, स्वास्थ्य प्रदर्शनी, सार्वजनिक सभा एव कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया। विभिन्न कार्यक्रमो में हजारो ग्रामीण बन्धुओ, प्रतिष्ठित नागरिको, जिले के प्रमुख नेताओ एव अधिकारियो ने भाग लिया। सार्वजनिक सभा की कार्यवाही श्री श्रीधर जी शुक्ल के मगलाचरण एव श्री कालिका प्रसाद जी मैठाणी की मडली के सुमधुर गान से प्रारम्भ हुई। सर्व प्रथम वैद्य इन्चार्ज परमेश्वर चिल्डियाल ने अभ्यागत अतिथियो का स्वागत करते हुए कहा कि सच्चे अर्थो मे धन्वन्तरि भगवान की पूजा हम सेवा भाव से जनता-जनार्दन की सेवा कर ही कर सकते है। अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए आयुर्वेद के प्रकाण्ड विद्वान तथा विभागीय उपसचालक श्री द० अ० कुलकर्णी जी ने कहा कि आयुर्वेद जीवन का विज्ञान है न कि रोग का। स्वदेशी शासन में राष्ट्रभाषा एव स्वदेशी वेशभूषा की तरह स्वदेशी चिकित्सा विज्ञान भी शीघ्र ही अपना स्थान लेकर रहेगा। आगत वैद्यो एव हकीमो को सम्बोधित करते हुए उपसचालक महोदय ने कहा कि आप लोगो पर राष्ट्रीय स्वास्थ्य का गुरुतर भार है। आप लोगो को इसी प्रकार के आयोजनो एव निःस्वार्थ वृत्ति से जनता की चिकित्सा कर आयुर्वेद के प्रचार एवं प्रसार में योगदान

देना चाहिए। जनता को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा कि सयमित आहार-विहार के कारण ही हमारे पूर्वज दीर्घजीवी होते थे। अत आवश्यकता इस बात की है कि हम भी शास्त्र विहित दिनचर्या, रात्रिचर्या एव ऋतुचर्या का भलीभांति पालन कर दीर्घजीवी बनें।

राष्ट्रीय विकास क्षेत्रस्थ आयुर्वेदिक चिकित्सालयो की स्थिति का सरकार की ओर से स्पष्टीकरण करते हुए उप-सचालक महोदय ने कहा कि इनकी लोकप्रियता को देखते हुए राज्य सरकार ने अब इन चिकित्सालय को स्थानान्तरित न करने का निश्चय किया है। इस सभा में जिन वक्ताओ के भाषण हुए उनमे सर्व श्री राजवैद्य मधुसूदन जी दीक्षित सीतापुर, वैद्यप्रवर प्रतापनारायण जी मिश्र लखनऊ, वैद्य जगन्नाथ प्रसाद जी लखनऊ के अतिरिक्त, जिला बार्ड के अध्यक्ष श्री रामशकर जी त्रिपाठी एव विधान सभा के सदस्य श्री रामेश्वर प्रसाद जी के नाम विशेश उल्लेखनीय हैं। अन्त में केन्द्रस्थ आयुर्वेदाधिकारी श्री नर्मदेश्वर जी पाण्डेय का धन्यवादात्मक भाषण हुआ और सभा की कार्यवाही समाप्त हुई। तदनन्तर अभ्यागत अतिथियो को जलपान कराया गया।

इस अवसर पर आयोजित स्वास्थ्य प्रदर्शनी का जिलाधीश श्री कमीरुद्दीन साहब ने उदघाटन किया। आगत अतिथियो को वैद्य इन्चार्ज परमेश्वर भिल्डियाल ने प्रदर्शित चार्ट्स एव मृतिकामयी भव्य मूर्तियो के भावो से अवगत् कराया। इस आयोजन तथा चिकित्सालय की सेवाओ पर जिलाधीश महोदय ने सतोष व्यक्त किया। सूचना विभाग रायबरेली की ओर से तीन दिन रात्रि मे मनोरजनात्मक फिल्मे दिखाई गई। शिशु प्रदर्शनी एव मातृपथ प्रदर्शन के कार्यक्रम में एक बडी सख्या मे माताये अपने बच्चो को लेकर सम्मिलित हुई। ग्राम सेविकाओ के द्वारा एक सामाजिक अभिनय हुआ। अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए आयुर्वेदाचार्य श्रीमती शान्तादेवी वैद्या (लखनऊ) ने माताओ तथा बहिनो से कहा कि आप आयुर्वेदिक स्वास्थ्य सम्बन्धी दृष्टिकोण अपना कर ही भीम और अर्जुन जैसे महारथियो बुद्ध एव महात्मा गांधी जैसे महामानवो को जन्म देने मे समर्थ हो सकता है और हमारे बच्चे भी स्वस्थ हो राष्ट्र के होनहार नागरिक हो सकते है।

रूकी (बिजनौर)

राजकीय चिकित्सालय बरूकी (बिजनौर) में धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव श्री देवी सहाय शुक्ला की अध्यक्षता में धूमधाम से मनाया गया। जन सहयोग द्वारा जन स्वास्थ्य के लाभार्थ धन्वन्तरि जयन्ती सप्ताह मे विविध कार्यक्रम यथा सामूहिक सफाई, मार्ग सफाई गृह सफाई, व्यायाम, खेल आदि सम्पन्न हुए। हवन, धन्वन्तरि पूजन, जडी बूटी प्रदर्शन के पश्चात् सभा की कार्यवाही प्रारम्भ हुई। प्रारभ में अध्यक्ष ने सक्षिप्त सारगर्भित भाषण मे आज के दिवस की महत्ता बतलाई। श्री सागर दत्त शर्मा बी० आई० एम० एस० ने ब्रह्मचर्य महिमा पर आयुर्वेद के उद्धरण देकर सुन्दर भाषण दिया। श्री बालकृष्ण शर्मा वैद्य ने स्वास्थ्य वृत्त के नियम बताए। कम्पाउण्डर मुशी सिह जी ने तुलसी के विविध गुण बतला कर उसके विविध रूप प्रदर्शित किए। श्री रामेश्वर दयालु शर्मा ने भगवान धन्वन्तरि के अवतरण एव आहार बिहार के नियमो को अपने आचरण में लाकर जयन्ती के उद्देश्य को सफल बनाने पर बल दिया। अन्त मे प्रसाद वितरण कर सभा समाप्त हुई।

जसपुरा (बांदा)

राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय जसपुरा जिला बादा मे चिकित्सक प० श्री सुरेन्द्रनाथ द्विवेदी के नेतृत्व में भगवान धन्वन्तरि जयन्ती सप्ताह बडे सजधज के साथ मनाया गया। सर्वप्रथम भगवान धन्वन्तरि का पूजन बडे समारोह के साथ हुआ। श्री प० रामपाल अवस्थी वैद्य जी की अध्यक्षता में यह कार्य सम्पादन हुआ। अन्य ग्राम वासी व स्थानीय जनता ने इस उत्सव के कार्य मे पूर्ण सहयोग दिया एव प्रसिद्ध सगीतज्ञ श्री रामलखन जी ने अपनी सुमधुर रागिनी द्वारा जनता को आह्लादित कर दिया। इस समारोह मे स्थानीय वैद्यो ने भी सम्मिलित होकर आयुर्वेद के प्रचार व प्रसार के लिये महत्त्व पूर्ण भाषण दिये। इसके उपरान्त जनता द्वारा गायन कीर्तन बडी सुमधुर ध्वनि से हुआ। उपस्थित जनता ने आयुर्वेदिक चिकित्सा को अपने स्वास्थ्य लाभ का श्रेयस्कर मार्ग समझ कर आयुर्वेदिक चिकित्सा से आजीवन लाभ ग्रहण करने की शपथ की। जनता ने इस समारोह मे आकर जैसा परिचय दिया इससे विदित होता है कि आयुर्वेद के सच्चे भक्त हैं। इस तरह सभा की कार्यवाही रात्रि को प्रसाद वितरणोपरान्त समाप्त की गई।

कालिकानगर (वाराणसी)

राजकीय आयुर्वेदिक औषधालय कोइरौना (कालिकानगर) जिला वाराणसी, उत्तर प्रदेश में वैद्य श्री ब्रजनन्दन

प्रसाद की प्रेरणा से श्री धन्वन्तरि जयन्ती उत्सव कालिकानगर उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के प्रधानाचार्य श्री मुरलीधर पाण्डेय की अध्यक्षता में बडी धूमधाम से मनाया गया। आसपास के ग्रामो की जनता, क्षेत्र के सामाजिक कार्यकर्त्ता, पचायत विभाग के कर्मचारी तथा प्रतिष्ठित नागरिक बडी सख्या में उपस्थित थे। कार्यक्रम कीर्त्तन से प्रारम्भ हुआ। वैदिक मत्रो से विधिवत पूजन, हवन के पश्चात् सर्वप्रथम वैद्य जी ने समारोह की महत्ता पर प्रकाश डाला। अन्त मे अध्यक्ष जी ने भगवान धन्वन्तरि जी की देन पर विस्तृत प्रकाश डाला। उपस्थित जन समूह ने भगवान धन्वन्तरि एव आयुर्वेद के जयनिनाद के साथ आयुर्वेद निर्दिष्ट स्वस्थ वृत एव सद्वृत के पालन करने की प्रतिज्ञा की। अन्त मे प्रसाद वितरण के पश्चात् वैद्य जी ने सभी को धन्यवाद दिया और आयुर्वेद के प्रति अधिक निष्ठा रखने की अपील की।

देवरिया

धुरन्धर फार्मेसी के कार्यालय मे श्री भगवान धन्वन्तरि की जयन्ती अतीव प्रोत्साहित ढग से मनायी गयी। श्री सत्यनारायण शास्त्री एम० ए० की अध्यक्षता में पूजन हवन एव श्रद्धाञ्जलि समर्पण वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। धन्वन्तरि जयन्ती को राष्ट्रीय पर्व के रूप में मनाया जाना चाहिए और एतदर्थ राष्ट्र व्यापी चेतना जाग्रत करने के लिए फार्मेसी के अध्यक्ष विद्याधर शुक्ल बी० ए० ने समागत जनता को सम्बोधित किया। प्रसाद वितरण के पश्चात् आयोजन समाप्त किया गया।

मडावरा

राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय मडावरा में धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव बडे ही धूमधाम के साथ मनाया गया। वैद्य श्री भोलाराम मिश्र के द्वारा भगवान धन्वन्तरि के जन्म एव आयुर्वेद के सम्बन्ध में नेताओ के सदेश सुनाये गये। श्री लक्ष्मण प्रसाद जी ने आयुर्वेद के बारे मे व्याख्यान दिया। श्री भगवान दास जी ने सदाचार के बारे मे व्याख्यान दिया। अन्त मे भगवान का कीर्तन किया गया। पूजा करने के बाद प्रसाद वितरण कर महोत्सव को समाप्त किया गया।

खरेला (हमीरपुर)

श्री धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष में ग्राम खरेला में एक सप्ताह पहिले से स्वास्थ्य सप्ताह मनाया गया। राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय खरेला (हमीरपुर) में भगवान धन्वन्तरि का विधिवत् पूजन अर्चन हुआ। फिर ग्राम के सम्मानित व्यक्तियो एव वैद्यो की एक विशाल सभा हुई, जिसका सभापतित्व वैद्य श्री सुदर्शन सिह जी से किया। इस सभा मे उपस्थित विद्वानो ने ग्रामीण स्वास्थ्य, विश्व-मानव कल्याण, स्वास्थ्य सप्ताह एव वैद्यो के सगठन जैसे महत्त्वपूर्ण विषयो पर सारगर्भित भाषण दिए। श्री ठा० रणवीर सिह जी द्वारा भगवान धन्वन्तरि के जीवन पर एक सुन्दर कविता पढी गई। उन्होने धन्वन्तरि जी को महान मानव बतलाते हुए मानवता के सरक्षण पर जोर दिया। स्थानीय हाई स्कूल के प्रिंसिपल महोदय ने वैद्यो मे प्रविष्ट दुर्गुणो पर प्रकाश डाला। चिकित्सालय के वैद्य जी ने बर्बरता की ओर उन्मुख मानव भावनाओ को सेवा और कल्याण की ओर मोड सकने मे चिकित्सा विज्ञान को उपयोगी बतलाया और वैद्यो एव चिकित्सक समाज के पारस्परिक सम्बन्धो को दृढतर बनाने के लिए आयुर्वेद मे पचशील के सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया। अन्य भी कई विद्वानो द्वारा उपयोगी एव सारगर्भित भाषण हुए जिनका प्रभाव उपस्थित जन समुदाय पर अवश्य ही गहरा पडा। वैद्य जी द्वारा आभार प्रदर्शन एव प्रसाद वितरण के पश्चात् सभा विसर्जित हुई।

मधुबन (आजमगढ़)

श्री शकर आरोग्य निकेतन, पाँती मधुबन आजमगढ़ मे धन्वन्तरि जयन्ती श्री प० धरणीधरजी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। कवि सम्मेलन मे श्री प० हरिशकर उपाध्याय भट्ट, श्री श्याम जी देवरिया श्री रामप्रसाद जी बलिया, श्री शतानन्द जी विरही' मऊ श्री श्रीकान्त पाण्डेय प्रधानाचार्य प्रभृति कवियो ने अपनी अपनी कविताएँ सुनायीं। आयोजन सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। अन्त मे आगत सज्जनो को प्रीतिभोज दिया गया। श्री धन्वन्तरि जी की झाँकी अत्यन्त सुन्दर ढग से सजाई गई थी। सभा में श्री धन्वन्तरि जी के महत्त्व एव आयुर्वेद की महत्ता पर भी विद्वानो के सारगर्भित प्रवचन हुए।

वाराणसी

श्री अर्जुन आयुर्वेद विद्यालय वाराणसी में धन्वन्तरि जयन्ती उत्सव राष्ट्रपति चिकित्सक श्री श्रीधर शर्मा वैद्य की अध्यक्षता मे सम्पन्न हुआ। श्री अमरनाथ जी जेतली कर्मकाण्डी एवं श्री शम्भूनाथ बुचके द्वारा पूजन मगलाचरण

के पश्चात् प्रधानाचार्य श्री ताराशंकर वैद्य ने स्वागत भाषण किया। श्री कैलाशनाथ जेतली, श्री दामोदर प्रसाद पाण्डेय, श्री विश्वनाथ पाण्डेय, श्री त्रिवेणी प्रसाद बरनवाल, श्री शिवविनायक मिश्र एव श्री ब्रजमोहन दीक्षित ने श्री धन्वन्तरि जयन्ती के रहस्य, भगवान धन्वन्तरि के आदर्शों एव उनके साहित्य पर भरपूर प्रकाश डाला। सभापति पद से बोलते हुए श्री श्रीधर शर्मा ने कहा कि धन्वन्तरि जयन्ती मनाने का उद्देश्य तबतक पूर्ण नही होगा जबतक कि वैद्यवृन्द भगवान धन्वन्तरि द्वारा प्रवर्तित शल्य-प्रणाली (सर्जरी) को पूर्णतया अपनाकर उसके द्वारा जनता की सेवा नही करता। यह प्रणाली सर्जरी के उन्नतिशील युग मे आज भी सर्वश्रेष्ठ आसन पर विराजमान है। इसे बडे-बडे विदेशी सर्जन भी मुक्तकण्ठ से स्वीकार कर रहे है। प्लास्टिक सर्जरी, मोतियाबिंद का आपरेशन, पथरी का का आपरेशन आदि इसी प्रणाली की देन है। अन्त में श्री ब्रजजीवन दास ने सबको धन्यवाद दिया।

दिल्ली एम० पी० क्लब

बद्यनाथ प्रतिष्ठान द्वारा सचालित एम० पी० क्लब आयुर्वेदीय औषधालय, नार्थ एवेन्यू, न्यू दिल्ली के विशाल हाल मे केन्द्रीय सरकार के उपरक्षा मन्त्री श्री के० रघुरामय्या की अध्यक्षता में धन्वन्तरि-जयन्ती उत्सव मनाया गया। इस में ससद सदस्य क्षेत्र के एम० पी० सज्जनो के अतिरिक्त राष्ट्रपति भवन स्टेट के कर्मचारी भी अधिक सख्या में उपस्थित थे। उपरक्षा मन्त्रीजी का स्वागत श्री बी० के० मुखर्जी एम० पी० तथा उक्त औषधालय के प्रधान वैद्य श्री राजवैद्य सुधन्वा ने किया। श्री बी० के० मुखर्जी ने अध्यक्ष का परिचय कराते हुए कहा कि श्री के० रघुरामय्या आयुर्वेद तथा भारतीय सस्कृति भक्त हैं। आप ससद के पुराने सदस्य भी रहे है और सदा आयुर्वेद विज्ञान की हितकामना चाहते है।

सरदार गुरुबचन सिंहजी की सगीत पार्टी के मधुर सगीत से उत्सव का श्रीगणेश हुआ। राजवैद्य सुधन्वाजी ने उपस्थित जनता को धन्वन्तरि-जयन्ती के महत्व से अवगत कराते हुए बताया कि भगवान धन्वन्तरि वैद्यक-विज्ञान के आदि प्रवर्तक थे। इन्होने इन्द्रदेव से ससार के रोग-पीडित चराचर जीवित प्राणियों के कल्याण-हेतु आयुर्वेद-शास्त्र को सर्वप्रथम सीखा और भारद्वाज, आत्रेय, भेल, पराशर, जतूकर्ण, चरक, सुश्रुत आदि ऋषियो को इस विज्ञान का शिक्षण कराया। कालान्तर में भारतीय ऋषियो द्वारा आयुर्वेद विज्ञान के शल्य, शालाक्य, प्रसूति-तन्त्र, कौमार भृत्य, कायचिकित्सा, विषतन्त्र, भूत विद्या, रसायन एव बाजीकरण आदि भिन्न-भिन्न अगो पर प्रामाणिक ग्रन्थ लिखे गए। सुदूरभूत मे भारत देश मे आयुर्वेद विज्ञान की सर्वांगीन उन्नति थी। इस देश से अरब, बरमा, लका तथा चीन आदि देशो ने चिकित्सा विज्ञान सीखा। भारतीय वैद्य अरब के खलीफो तथा सुलतानो के दरबारो के शाही हकीम (राजवैद्य) हुआ करते थे। अरब देश से यूनान और वहाँ से पश्चिम के देशो ने चिकित्सा शास्त्र को सीखा। यह विज्ञान कालान्तर में पुन एलो-पैथिक विज्ञान के नाम से भारत मे लौटा। पुराणों मे एक आलकारिक वर्णन द्वारा भगवान धन्वन्तरि का समुद्र-मथन से अमृत-कलश, शख, हरड और वैद्यक-शास्त्र हाथ में ले कर अवतरित होने का प्रसग आया है। शख और हरड ससार में अनेक रोगो को दूर करते है। शख जहाँ केलशियम का प्रतीक है वहाँ हरड औषधिवर्ग का प्रतिनिधि है। यह दोनो जीवनोपयोगी द्रव्य है। भारतीय घरो मे शख और कौडियो का व्यवहार त्योहारो और गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करनेवाले वर-वधू के लिए जीवनोपयोगी मागलिक पदार्थ के रूप मे किया जाता है। पीली कौडी की भस्म का गेहूँ के आटे मे मिला कर दैनिक सेवन करने से स्वास्थ्यलाभ होता है। जच्चा और बच्चा के लिए यह प्रयोग अस्थियो को बल और पुष्टि देता है। शरीर में आयोडीन और कैलशियम को सतुलित रखता है। वैद्यजी ने इस उत्सव की अन्य उपयोगिताओ का दिग्दर्शन कराते हुए उपस्थित जनता का स्वागत किया। आपके भाषण के बाद प्रोफेसर श्री जमुनादास महेन्द्रा तथा तिब्बिया कालेज दिल्ली के यशस्वी उपाध्याय श्री वैद्य महावीर प्रसाद पाण्डे जी के सारगर्भित लिखित व्याख्यान आयुर्वेद की उपयोगिता दर्शक हुए। जनता ने इन्हें बहुत पसद किया।

इसके बाद श्री के० रघुरामय्या उपरक्षा मन्त्री ने अपने भाषण में इस उत्सव के आयोजको को धन्यवाद देते हुए बताया कि धन्वन्तरिजी आयुर्वेद शास्त्र के आदि प्रवर्तक थे—आज के दिन भूलोक पर इनका अवतार हुआ। भारत में भिन्न-भिन्न प्रान्तों में प्रचलित चिकित्सा-पद्धतियाँ आयुर्वेद-शास्त्र के ही भिन्न-भिन्न रूप हैं। देश के सभी

वैद्य श्री धन्वन्तरि को आदिगुरु मानते और पूजते हैं। आयुर्वेद चिकित्सा-पद्धति, जो मालाबार प्रान्त में कल्प-चिकित्सा के रूप में प्रचलित है, अतीव उपयोगी एवं स्थिर लाभप्रद है। वक्ता ने अपने वैयक्तिक अनुभव से बताया कि उन्हे इसके द्वारा विशेष लाभ मिला है। आयुर्वेद-विज्ञान एक राष्ट्रीय चिकित्सा-विज्ञान है। इसके द्वारा देश की गरीब जनता को चिरकाल से स्थाई स्थिर और सफल लाभ मिला है। यह एक वैज्ञानिक चिकित्सा-पद्धति रही है। रोगो की प्रकृति, देश-काल जनित प्रभाव, स्थानीय वातावरण और आहार-विहार जनित प्रत्यक्ष लक्षणो को जान कर इनका समन्वय करते हुए औषधि दे कर रोग दूर करने की आयुर्वेद शास्त्र की क्षमता अपनी एक विशेषता रखती है। यह क्षमता ससार की दूसरी पद्धतियो मे सुलभ नही है। हमारे गरीब देश की प्रजा के लिए महगा एव इन्जक्शन प्रधान एलोपैथिक इलाज कभी भी स्वीकार्य नही हो सकता। देश के लिए देशी इलाज ही अनुकूल एव ग्राह्य है। आपने आगे घोषित किया कि उन्हे इस बात का पूर्ण अभिमान तथा गौरव है कि आयुर्वेद इलाज देश के लिए राज्यमान्यता का पूर्ण अधिकारी है। आसन तथा प्राणायाम का प्रतिदिन का अभ्यास भी आयुर्वेद-शास्त्र प्रत्यक स्त्री-पुरुष के लिए बताता है। यह भी उपयोगी मार्ग है। इससे अभ्यासी को शक्ति, बल एव दीर्घायु सुलभ होती है। देश की दिव्य औषधियाँ अनेक विदेशो मे जा रही है। सर्पगन्धा (रोलफिया सरपेनटाईना) हमारे देश की दिव्य वनस्पति है जो चिरकाल से वैद्यो द्वारा व्यवहार मे सफलतापूर्वक बरती जाती रही है। आज अमेरिका और यूरोप के चिकित्सक रक्तचाप को दूर करके इस औषधि से पूरा-पूरा लाभ उठा रहे हैं। अन्तरराष्ट्रीय फारमेकोपिया मे इस औषधि का समावेश है। भारत सरकार को देशहिताय और बहुजन-सुखाय आयुर्वेद-विज्ञान को पूरी-पूरी राजमान्यता दे कर आगे प्रगतिशील बनाना चाहिए। वक्ता ने श्री बैद्यनाथ भवन के प्रबन्धको को स्वास्थ्य-रक्षा केन्द्र तथा आयुर्वेदीय औषधालय खोलने तथा उसे सचालित रखने के लिए अतीव धन्यवाद देते हुए अपने भाषण को समाप्त किया

श्री चौधरी कन्हैयालाल बाल्मीकि एम० पी० द्वारा रचित श्री धन्वन्तरि-जयन्ती सम्बन्धी हिन्दी कविता सुनाई गई। तदनन्तर प्रसिद्ध योगी श्री स्वामी देवमूर्ति द्वारा स्वास्थ्य रक्षा के यौगिक आसनो, नेति, धौति एव न्योलि क्रियाओ का प्रदर्शन किया गया। श्री बैद्यनाथ भवन द्वारा प्रस्तुत साहित्य का वितरण एव प्रसाद के साथ यह कार्यक्रम समाप्त किया गया। इस अवसर पर एक मनोरजक स्वास्थ्य-फिल्म का प्रदर्शन भी किया रखा गया। सभा की समाप्ति के बाद श्री कविराज प्रताप सिंहजी द्वारा क्लब में चालित वाचनालय के लिए आयुर्वेदीय ग्रन्थो का दान घोषित किया गया जो एम० पी० क्लब की ओर से श्री बी० के० मुखर्जी एम० पी० ने धन्यवादपूर्वक ग्रहण किया और कविराज जी के प्रति कृतज्ञता प्रकट की।

दिल्ली—सब्जीमण्डी

देहली म्युनिसिपल आयुर्वेदिक तथा यूनानी औषधालयो के अध्यक्षो के एकमात्र सगठन देहली म्युनिसिपल हकीम-वैद्य समिति के तत्वावधान मे श्री धन्वन्तरि-जयन्ती महोत्सव ता० २१ अक्टूबर को अपराह्न २॥ बजे से समाज सुधार केन्द्र क्वीन्स रोड मे बडे समारोह-पूर्वक मनाया गया। महोत्सव की अध्यक्षता देहली नगरपालिका के प्रधान श्री रामनिवासजी अग्रवाल ने की। सर्वप्रथम धन्वन्तरि-जयन्ती के महत्व को प्रकाश मे लाते हुए समिति के कार्यक्रम पर सक्षिप्त भाषण हुआ। तदनन्तर अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए श्री रामनिवासजी अग्रवाल ने उपस्थित वैद्य तथा हकीमो से आग्रह किया कि भविष्य मे इस महोत्सव को सक्षिप्त रूप मे न मना कर धन्वन्तरि सप्ताह के रूप में मनावे। सारे देहली नगर के वैद्यो तथा हकीमो को आमन्त्रित करके इस पुनीत अवसर पर विभिन्न रोगो पर निबन्ध पढे जावे। अध्यक्ष महोदय ने आश्वासन दिया कि देहली नगरपालिका एसे उत्सवो का सरक्षण करने के लिए प्रस्तुत है और वह एसे सावजनिक जीवन के लिए महत्वपूर्ण कार्यों को सरक्षण दे भी रही है।

जोधपुर

श्री मारवाड आयुर्वेद प्रचारिणी सभा द्वारा इस वर्ष जोधपुर नगर मे धन्वन्तरि महोत्सव का आयोजन बडे पैमाने पर मनाया गया। जिलाधीश श्रीमान् आर० डी० माथुर साहब की अध्यक्षता मे महोत्सव मनाया गया। सर्वप्रथम आयुर्वेदध्वज फहराया गया। इसके पश्चात् माननीय उदयचन्द्रजी भट्टारकोपाध्याय चाणोद गुरासा के हाथो धन्वन्तरि अर्चना की गई। इसके पश्चात्

जोधपुर के प्रसिद्ध गायक इमामुद्दीन ने तथा प्रज्ञाचक्षु मोहनलालजी ने सामयिक वन्दना गीत गाये। सर्वप्रथम कविराज माधवप्रसादजी शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य सभापति राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलन ने अपने भाषण में इस उत्सव का विशेष महत्व बताया। आपने बताया कि इस दिन का लेखा-जोखा सभी वैद्यों को करना चाहिए। इसके पश्चात् कविराज माधवप्रसादजी ने अपने ओजस्वी भाषण में आयुर्वेद की विकट परिस्थिति को बताते हुए उसके लिए रचनात्मक प्रवृत्तियों की ओर अधिक बल देने का आग्रह किया। जिला वैद्य सभा बाडमेर के सभापति श्री ऋषिदेवजी सोलंकी भिषगाचार्य ने धन्वन्तरि-जयन्ती पर सभी वैद्यों को शल्य विद्या में पारंगतता प्राप्त करने को प्रतिज्ञाबद्ध हो जाने का आग्रह किया। आपने सवालक आयुर्वेद विभाग द्वारा केन्द्रीय आयुर्वेद चिकित्सालय जोधपुर के प्रगतिशील कार्यों पर विशेष रूप से प्रकाश डाला। अन्त में प्रचारिणी सभा के सभापति श्री परमानन्द शर्मा साहित्या-युर्वेदाचार्य साहित्यरत्न, भिषग्वर ने बताया कि आज जिन महापुरुष की जयन्ती मना रहे हैं उसके विषय में ऐतिहासिक चर्चा आज अत्यन्त आवश्यक रहेगी। आपने भारद्वाज के समकालीन धन्वन्तरि को एतिहासिक प्रमाणों से सिद्ध कर बताया कि यह सर्जरी विद्या के महान् आचार्य थे तथा इन्हीं की सिद्धहस्तता से सभी शल्य चिकित्सक धन्वन्तरि कहलाते थे।

जिलाधीश महोदय ने रूसी चाद की ओर इंगित करते हुए वैद्यों से आग्रह किया कि अनुसन्धान की दौड़ मे पीछे रहना उचित नहीं। चिकित्सा विज्ञान मे प्रेक्टिकल कार्य का महत्व अधिक है। अत द्वितीय पच वर्षीय योजना के अन्तर्गत रिसर्च योजना को आयुर्वेदवालों को पूरा करना उचित है। आपने बताया कि प्रदेश वैद्य सम्मेलन ने एक पत्र द्वारा मांग की है कि विकास खण्डो मे आयुर्वेद के भी नुमायन्दे हो। मैं भी इस बात से सहमत हू तथा शीघ्र ही अपने अन्तर्गत विकास खण्डो में इस कमी की पूर्ति करूंगा।

अन्त में वयोवृद्ध गुरासा ने जिलाधीश का हार्दिक स्वागत करते हुए नवयुवक वैद्यों के लिये मंगल-कामना व्यक्त की। प्रधान मन्त्री राजवैद्य सत्यदेव ने समागत सभी सज्जनों को धन्यवाद देने के पश्चात् सभा की कार्यवाही समाप्त की।

इसके पश्चात् स्थानीय केन्द्रीय चिकित्सालय में श्रीमान् ऋषिदेवजी सोलंकी भिषगाचार्य निरीक्षक आयुर्वेद विभाग द्वारा तथा बैजनाथ शाखा सराफा बाजार मे एवं ऊंझा फार्मेसी के सोल एजेण्ट विनोद मेडिकल स्टोर में विशेष रूप से अत्यन्त सुन्दर आयोजन हुए, जिसमें विद्वान् वैद्यों के भाषण, कलात्मक नृत्य, रचनात्मक कार्यक्रमो के प्रस्तावादि पास हुए।

बीकानेर

आयुर्वेद प्रवर्तक श्री धन्वन्तरि भगवान को श्रद्धांजलि समर्पण करने के लिये श्री धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष में श्री सनातन धर्म आयुर्वेद महाविद्यालय, बीकानेर के श्री धन्वन्तरि मन्दिर में स्थानीय वैद्यो एवं प्रमुख नागरिको की एक सभा राजवैद्य जीवनरामजी व्यास के सभापतित्व मे सम्पन्न हुई।

विद्यालय के प्रिन्सिपल वैद्य विद्याधर शर्मा ने समागत महानुभावों का स्वागत करते हुए कहा कि आयुर्वेद में रचनात्मक कार्यो से ही वैशिष्ट्य उत्पन्न होगा। रचनात्मक कार्यक्रम प्रस्तुत करते हुए आपने कहा कि विद्यालय ने २५ शय्याओं की एक आरोग्यशाला स्थापित की है। इस अवसर पर सस्था के सस्थापक और सचालक वैद्य प० दीनानाथजी व्यास के कार्यो की समीक्षा करते हुए आपने वैद्य महानुभावो से विशेष प्रार्थना की कि आप इस विद्यालय एवं नूतन आरोग्यशाला को सक्रिय सहयोग प्रदान करते हुए उनके हाथो को सुदृढ बनाने की कृपा करें।

आयुर्वेद विभाग के निरीक्षक वैद्य श्री गयाप्रसादजी शर्मा ने अपने भाषण में कहा कि विगत पीलिया तथा इन्फ्लुएंजा रोगो ने आयुर्वेद के महत्व को बढाया है। हमें आयुर्वेद चिकित्सा व्यवस्था मे परिवर्तन करना चाहिये। आधुनिक चिकित्सा की तरह हमे भी आयुर्वेद मे विशेषज्ञ उत्पन्न करने होंगे। वैद्यो को अपनी चिकित्सा में सेवा भावना को यथापूर्व बनाये रखने पर आपने बल दिया। आयुर्वेद में नवीन विषयो का समावेश किया जाना भी अत्यन्त आवश्यक है।

बीकानेर के प्रमुख वकील आचार्य श्री रामनारायणजी ने कहा कि भगवान धन्वन्तरि को शल्य शास्त्र के आचार्य के रूप में नहीं अपितु आयुर्वेद प्रवर्तक के रूप मे मानना चाहिये। आधुनिक चिकित्सा-पद्धति चाहे कितनी ही



श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर रायगढ में अनुष्ठित स्वास्थ्यदिवस की सभा का दृश्य ।



श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर खड़गपुर में अनुष्ठित स्वास्थ्यदिवस की सभा का भव्य दृश्य ।



श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर मेरठ में अनुष्ठित स्वास्थ्यदिवस की सभा का भव्य दृश्य।



श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर श्रीमहल आयुर्वेदिक स्टोर्स,



श्री धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर बेगूसराय में अनुष्ठित स्वास्थ्यदिवस की सभा का दृश्य।

आकर्षक क्यो न हो वह आध्यात्मिक ज्ञान पर आश्रित आयुर्वेद का कभी मुकाबला नही कर सकती।

सभापतिजी न जयन्तियो की व्याख्या करते हुए कहा कि मानव अपनी महत्वाकाक्षाओ को जयन्ती के रूप म प्रकट करता है। हम आयुर्वेद के अन्य आचार्यो की जयन्तियाँ भी मनानी चाहिय। बातो की अपेक्षा काम की तरफ विशष ध्यान दिया जाना चाहिय। आपन विद्यालय की नूतन आरोग्य शाला को हर प्रकार का सक्रिय सहयोग दिय जान पर बल दिया।

अन्त में सभापतिजी एव समागत महानुभावो को धन्यवाद दिया और सबन सामूहिक पूजन म भाग ल कर भगवान के प्रसाद स्वरूप आयोजित अल्पाहार म योगदान दिया।

पिलानी

पिलानी स्थित बिरला आयुर्वेद विभाग की ओर से श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव बड उत्साह से सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर आयुर्वेद प्रदशनी का भी आयोजन किया गया था। प्रदशनी के सामन ही एक ओर धन्वन्तरि-द्वार बनाया गया था तथा दूसरी ओर भगवान धन्वन्तरि का झाकी और नाटक के लिय रगमच बनाया गया था। कुल प्रदशनी कई भागो म बँटी हुई थी। बिरला आयुर्वेद ऋषिप्रवचन द्वारा प्रस्तुत कद मल खड ग लोगो न बडी दिलचस्पी ली। इसम हिमालय पवत माला के अनक ताजा कन्द मूल थ। प्रो० के० एम० टण्डन के नतृत्व म एक दल लोहागल पवत से जडी-बूटिया लाया था। इनम एक कन्द वह भी था जो कि श्री टण्डन न एक साधु से पहचानना सीखा था। हरिद्वार ऋषिकेश और देहरादून वनस्पति-यात्रा करनवाल दूसरे दल न अनक जहरील और पौष्टिक ताजा कन्द मूल प्रदशनी म रख थ। भगवान धन्वन्तरि को श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए आचाय श्री नित्या नन्द न कहा कि आयुर्वेद हजारो वर्षों से मानव जाति की अमूल्य सेवा करता आ रहा है। स्वास्थ्य के इस आदि देव न जिन विचारो का प्रतिपादन किया था व आज भी अपन सुदृढ आधार के कारण नवीन है। भारतीय वैद्यक शास्त्र अपन गुणो के कारण अमर रहगा। आयुर्वेद म रोग निवारण ही नही है किन्तु स्वस्थ आदमी को अधिक स्वस्थ बनाय रखन के तरीको का भी वणन है। इनका आधुनिक ढग से प्रचार वाछनीय है। आज तो दवाओ की बाढ-सी आ गई है और टीको आदि के द्वारा कृत्रिम रोग से बच कर दूसरे अनक रोगो के शिकार बनते जा रह है। स्वस्थो की स्वास्थ्य रक्षा पर किसी का ध्यान नही है। इसी नीति के कारण राष्ट्र का स्वास्थ्य जजर होता जा रहा है। प्रदशनी का उदघाटन श्री बनारसीलालजी रूगटा न किया तथा मनोरजक कायक्रम की अध्यक्षता वैद्यराज श्री बिरचीलालजी शर्मा आयुर्वेदावाचस्पति न की।

चूरू

श्री धन्वतरि जयन्ती के अवसर पर चूरू जिला वैद्य सभा द्वारा आयोजित स्वास्थ्य सप्ताह अत्यन्त समारोह के साथ मनाया गया। जिल के प्रसिद्ध नगरो सरदार शहर सुजानगढ रतनगढ चरू आदि म यह आयोजन शानदार रहा। इस समारोह म वैद्यो की सेवा व त्याग की भावना सवतोपावन दृष्टिगोचर हो रही थी। चिकित्सा के अभावग्रस्त क्षत्रो देहातो म वद्य लोग विभिन्न टोलियो के रूप म नि स्वाथ भाव से गरीब व असहाय रोगियो की निदान व चिकित्सा की व्यवस्था नि शुल्क बड प्रम से कर रह थ और उन्ह उनकी भाषा म स्वस्थ रहन के नियम बतला रह थ। इसी प्रकार जिल के प्रमुख नगरो म भी सावजनिक सभाओ का आयोजन कर आयुर्वेदीय स्वस्थवृत्त एव सदवत्त का सु दर प्रचार किया जा रहा था। सामूहिक रूप से एकत्रित हो कर जटिल एव दु साध्य रोगियो की नि शुल्क निदान व चिकित्सा की व्यवस्था की जा रही थी। विभिन्न शिक्षण सस्थाओ म जा कर नौनिहाल बच्चो के स्वास्थ्य का परीक्षण कर उनके अभिभावको तथा अध्यापको को पूरी रिपोट दी जा रही थी। शिक्षण सस्थाओ म बिक्रय होन वाली चाय-बरफ आदि की बिक्री पर प्रतिबन्ध लगान की सम्मति दी जा रही थी। श्री धन्वन्तरि त्रयोदशी का दिन सप्ताह का अन्तिम दिवस था। इस दिन सभी वैद्य एकत्रित हो कर भगवान धन्वन्तरि का पूजन व वन्दन कर, प्रसाद पा रह थ। परस्पर प्रम प्रदशन हो रहा था। सौभाग्य से इसी सप्ताह म राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलन के अध्यक्ष कविराज माधवप्रसादजी तथा प्रधान मन्त्री परमा नन्दजी चूरू जिला का दौरा करन पधारे थ। आपका स्थान-स्थान पर सुन्दर स्वागत किया गया। पुष्पमालाएँ पहनाई गइ। वद्यो की ओर से विचार गोष्ठिया तथा पार्टिया हुइ। सुजानगढ वैद्य सभा की ओर से १०१) रु० की थैली भेंट की गई। आपके सम्मान में सवत्र साव

जनिक सभाओ का आयोजन हुआ, जिनमें आयुर्वेदीय स्वास्थ्यवृत्त पर प्रकाश डाला गया। आप दोनो के शुभागमन से न केवल वैद्यो मे ही उत्साह और आनन्द हुआ अपितु, जनसाधारण मे भी आयुर्वेद के प्रति अधिक अनुराग उत्पन्न हुआ।

जयपुर

श्री धन्वन्तरि-जयन्ती मनाने के लिए सद्वैद्य सभा, जयपुर की ओर से परतानियो के मन्दिर मे एक सभा का आयोजन किया गया। सभा की अध्यक्षता गृहमन्त्री श्री रामकिशोर व्यास न की। श्री व्यास ने अपने भाषण मे आयुर्वेद चिकित्सा-पद्धति के महत्व पर प्रकाश डाला। आपने बताया कि आयुर्वेद ऊँचे सिद्धान्तो पर आधारित एक विज्ञान है। परन्तु आज उसके समक्ष सघर्ष का समय आया हुआ है। आपने वैद्यो से अपील की कि वे इसकी प्रगति के लिए त्याग व तपस्या करे। सभा मे सर्वश्री वैद्य जयरामदास स्वामी, वैद्य मङ्गलदास स्वामी, वैद्य कल्याण प्रसाद और वैद्य रामप्रकाशजी न भी भाषण दिये। सभी वक्ताओ न भारत मे आयुर्वेद चिकित्सा-पद्धति को स्वास्थ्य रक्षा का सर्वोत्तम माध्यम बताया तथा सरकार से उसकी प्रगति मे सहयोग देन की अपील की।

सीकर

सीकर नगर मे तहसील वैद्य सभा व प० रा० आयुर्वेद कालज के तत्वावधान मे धन्वन्तरि-जयन्ती का त्रिदिवसीय आयोजन किया गया जो कि सार्वजनिक रूप से सुभाष चौक, श्री राजस्थान आरोग्य सदन, व श्री प० रा० आयुर्वेद कालज के प्रागण मे तीन दिनो तक सानन्द सम्पन्न हुआ। प्रथम दिन की अध्यक्षता माननीय जिला स्वास्थ्य अधिकारी डा० श्री आनन्द विहारी लालजी शर्मा न की। उद्घाटन भाषण समारम्भ करते हुए धर्मोपदेशक वदान्त शिरोमणि श्री अनिरुद्धाचार्यजी ने अपने धर्मोपदेश मे आयुर्वेद के विविध तत्वो पर प्रकाश डाला। गण्यमान्य वैद्य महानुभावो के अभिभाषणो के अनन्तर अध्यक्ष महोदय के आयुर्वेद व एलोपैथी का समन्वयात्मक भाषण अति प्रभावोत्पादक रहा। द्वितीय दिन राजस्थान आरोग्य सदन व तृतीय दिन श्री प० रा० आयुर्वेद कालज मे नगर के गण्यमान्य व प्रतिष्ठित विद्वानो के स्वास्थ्य विषयक अति ओजस्वी भाषण हुए। जिनमे माननीय वैद्य आनन्दीलालजी, प्रह्लादरायजी, वैद्य हनुमत्सहाय शर्मा तथा प्रिंसिपल श्री प० रा० आयुर्वेद कालेज, डाक्टर श्री के० डी० शर्मा, वैद्य श्री पूर्णमलजी मिश्र के नाम उल्लेखनीय है।

हैदराबाद

श्री धन्वन्तरि त्रयोदशी के दिन श्री माहेश्वरी भवन बेगम बाजार हैदराबाद (दक्षिण) मे श्री धन्वन्तरि भगवान का पूजन महोत्सव वैद्य प० श्री राधेश्यामजी व्यास आयुर्वेदाचार्य, साहित्य-शास्त्री, साहित्यरत्न प्रधान चिकित्सक श्री माहेश्वरी औषधालय की प्रेरणा से रात्रि के ७।। (साढे सात) बजे स्थानीय वैद्यवर्य श्री ईश्वरीप्रसादजी शास्त्री, श्री गोवर्धनजी शर्मा तथा श्री वेदप्रकाशजी शास्त्री आदि प्रमुख वैद्यो एव स्थानीय श्री सनातन धर्म सभा के सस्थापक एव व्यवस्थापक परम श्रद्धेय श्री लक्ष्मीनारायणजी शर्मा एव माहश्वरी समाज के आयुर्वेदानुरागी उत्साही श्रेष्ठियो की उपस्थिति मे सम्पन्न हुआ। पूजन के बाद भाषण परम्परा मे आयुर्वेदोन्नति एव आयुर्वेद मे वैज्ञानिक खोज-हतु प्रभावशाली एव गतिमान भाषण हुए।

सिरसा (पजाब)

श्री धन्वन्तरि-जयन्ती महोत्सव का जलसा श्री रामदयालुजी वैद्य सदस्य विधान सभा पजाब की अध्यक्षता मे आयुर्वेद मण्डल सिरसा (हिसार) ने बडे धूमधाम के साथ मनाया। निम्नलिखित प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास हुए। आयुर्वेद मण्डल की यह साधारण सभा पजाब सरकार की सेवा मे निवेदन करती है कि शास्त्रोक्त विधि से बनाय हुए आसवारिष्ट केवल औषध के रूप मे ही प्रयुक्त होते है। मद्य व्यसन के लिए कभी प्रयोग मे नही लाये जाते। अत यह सभा सरकार से माग करती है कि आसवारिष्टो के बनाने पर किसी प्रकार का भी प्रतिबन्ध न लगाया जाय। क्योकि प्रतिबन्ध लगाने से वैद्यो के व्यवसाय पर इसका बुरा प्रभाव पडेगा। यह सभा सरकार से अनुरोध करती है कि बोर्ड आफ आयुर्वेदिक एण्ड यूनानी सिस्टमज आफ मैडीसन के सब सदस्य निर्वाचन द्वारा ही लिय जाये।

यह सभा सरकार से अनुरोध करती है कि वह औषधोपयोगी अहिफेन का लाइसैन्स वैद्यो को भी देवे, क्योकि वे केवल इस को अपने योगो में ही प्रयोग करते हैं।

सरकारी आयुर्वेदिक तथा यनानी डिस्पनसरियो म काम करन वाल वद्यो हकीमो तया कम्पौडरो का वतन भी एलोपथिक सरकारी डिस्पनसरियो के गजिटड इन्जार्जो तथा कम्पौंडरो के समान कर।

यह सभा सानरोध प्राथना करती है कि देहातो म देशी (आयुवदीय) औषधालय अधिक-से अधिक सख्या म खुलवाय।

परासी (गया)

आयुवदिक औषधालय परासी पो० सकरी थाना अरबल (गया) म कविराज श्री प्रयागदत्त पाण्डयजी ए० एम० एस० न धन्वन्तरि जयन्ती मनाई। आयवद की कसे प्रगति होगी आयवदिक चिकित्सा सम्बन्धी वतमान समस्या शुद्ध औषध और रासायनिक द्रव्य की प्राप्ति के लिए प्रतिष्ठान की आवश्यकता आयवद के निघटगत अनकाथक शब्दो के एक ही द्रव्य म रूढ करन की आवश्यकता बिहार म शीघ्र डायरेकटरेट की स्थापना की माग स्नातको को एक वष के लिए हाउस सजन बनान की आवश्यकता पटना आयवद महाविद्यालय म सुश्रुतोक्त रीति (कार्उचिग मेथड) से आख बनान की शिक्षा स्वीकृत हो आदि विषयो पर श्री प्रयागदत्त पाण्डय प० श्री श्रीमोहन शरण मिश्र आदि विद्वान चिकित्सको के सारगभित ओजस्वी भाषण हुए। धन्यवाद ज्ञापन के अनन्तर प्रसाद विवरण के बाद सभा विर्सजित हुई।

सिमडगा (राची)

सिमडगा (राची) म भगवान धन्वन्तरि का पञ्चोपचार से पूजन किया गया। सायकाल स्थानीय धमशाला म भूदान कायकर्त्ता डा० मोहम्मद अली खा के सभापतित्व म सभा हुई। सवप्रथम श्री रघनाथ मन्दिर के पुजारी प० सुधाकर त्रिवदीजी न भगवान धन्वन्तरि की पूजा की।

आपन अपन भाषण म कहा कि भगवान धन्वन्तरि की पूजा केवल वद्यवग को ही नही करनी चाहिए प्रत्यत सवविध व्यवसायी तथा कलाकारो को भी करनी चाहिए। यदि आप लोग अस्वस्थ हो जायग तो आपका करोडो रुपय का व्यापार ठप्प हो जायगा। आप लोग स्वस्थ रह कर ही धम अथ कम ज्ञान और भक्ति की प्राप्ति कर सकते है। अत सभी आरोग्याकाक्षी को धन्वन्तरिजी की जयन्ती मनानी चाहिए। अन्त म सभापतिजी न अपन सारगभित भाषण म तुलसी के उपयोग पर पूण प्रकाश डाला। सभापतिजी एव आगत सज्जनो को धन्यवाद दे कर सभा विर्सजित की गई।

भीलवाडा

जिला वद्य सभा भीलवाडा की ओर से श्री धन्वन्तरि त्रयोदशी का उत्सव उपाध्यक्ष श्री लाभशकर जी वद्य सागानर के निवासस्थान पर महोदय श्री वद्य रामचन्द्र जी ब्रह्मचारी की अध्यक्षता म मनाया गया। सभी महान भावो न एक साथ श्री धन्वन्तरि भगवान का सवप्रथम पूजन किया तत्पश्चात हवन किया और पुष्पाञ्जलि समर्पित की गई।

इसके बाद आदिदव श्री धन्वन्तरि भगवान की जयन्ती के विषय पर कुछ प्रवचन हुआ तथा अध्यक्ष महोदय न उपस्थित सब वद्य बन्धुओ से यह अपील की कि हम सब को एक सूत्र म बधकर स्नह पूवक अपनी विद्या की अभिवद्धि एवम विकास के हतु सतत प्रयत्नशील रहना चाहिए और कहा कि हमलोगो के पिछडन म हमारी फट ही मुख्य कारण है। अत इसको मिटाकर कन्धे से कन्धा मिला कर आयवद की सवा के लिए तयार हो जाना चाहिए।

पश्चात अगन्तुक वद्य महानभावो न वही पर सामहिक भोजन किया।

शाहपरा

क्षत्रीय वद्य सभा शाहपुरा म श्री धन्वन्तरि जयन्ती समारोह मनाया गया नगर के प्रतिष्ठित महानभाव तथा दरबार सा० के पितृव्य श्री मदन सिह जी साहब व अनक वद्य बन्धु उपस्थित हुए। सवप्रथम श्री धन्वन्तरि भगवान का पूजन हुआ और स्वास्थ्य रक्षाथ आयवद पद्धति ही अपनान पर बल दिया गया। रात्रि को सावजनिक वाचनालय म श्री धन्वन्तरि भगवान की प्राथना भजन तथा व्याख्यान हुए।

कोलट्ट (चिडावा)

गत कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को आयवद सेवा मडल कार्यालय म वद्य विरची लाल जी की अध्यक्षता म धन्वन्तरि जयन्ती समारोह मनाया गया। श्री धन्वन्तरि पूजन अचन के बाद कतिपय विद्वानो के भाषण हुए। वक्ताओ ने जयन्ती महोत्सव के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए चिकित्सा सम्बन्धी अपने कई अनुभव बताए, जो बड उपयोगी थ।

अध्यक्षजी ने अपने भाषण मे वैद्य-समाज के सगठन पर जोर दिया और जनता से आयुर्वेद को अधिकाधिक अपनाने की अपील की। धन्यवाद-ज्ञापन के पश्चात् सभा विसर्जित हुई।

बामन्वी

श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव के उपलक्ष मे इस ग्राम मे प्रथम बार यह आयोजन किया गया। महोत्सव सफल रहा। लगभग दो ढाई सौ व्यक्तियो ने सम्मिलित होकर पहले भजन-कीर्त्तन आदि किया, बाद मे श्री जगन्नाथ जी खडायते 'आयुर्वेदाचार्य' ने धन्वन्तरि जयन्ती सम्बन्धी आयोजन का उद्देश्य तथा महत्त्व बतलाया। अन्त मे आभार प्रदर्शन तथा प्रसाद वितरण किया गया और समारोह सधन्यवाद समाप्त हुआ।

रतनगढ

कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को धन्वन्तरि मन्दिर के प्राङ्गण मे श्री हनुमानप्रसाद जी पोद्दार के सभापतित्व मे भगवान धन्वन्तरि का जयन्ती-समारोह मनाया गया। मगलाचरण के बाद अध्यक्ष महोदय ने पदासीन होने से पूर्व धन्वन्तरि जी का तथा स्तवन विशाल जन समूह के साथ बडी श्रद्धा से किया। श्री नारायण शर्मा ने स्तुतिरूप मे एक सुन्दर गीत गया। वैद्य धनाधीश गोस्वामी आयुर्वेदाचार्य ने अपने भाषण मे बताया कि पचमहाभूत समस्त ससार एव प्राणि मात्र की मूलभित्ति है। इनके ही सक्षिप्तरूप तैजस, सोम और वायु तत्त्व है। ये ही तत्त्व जीव मात्र के शरीर मे वात, पित्त और कफ रूप से अवस्थित है। इनकी समानावस्था ही प्रकृति तथा विकृतावस्था का नाम ही रोग है। बाबू श्यामसुन्दर लाल जी एडवोकेट तथा प० सूर्यप्रकाश जी शास्त्री द्वारा आयुर्वेद मे निरतर खोज करने तथा त्याग की भावना से जनता की सेवा करने पर बल दिया गया। अध्यक्षीय भाषण में पोद्दार जी ने पाश्चात्य मान्यताओ, विचारो को छोडकर देशी चिकित्सा पद्धति के अपनाने पर अधिक जोर दिया। वैद्यराज प० मणिराम जी महाराज ने भारतीयो के लिए आयुर्वेदिक चिकित्सा को ही हितकर बताया और कहा कि यही एक ऐसी पद्धति है जो गरीब तथा अमीर सबके लिए सुलभ तथा पूर्णतया आरोग्यप्रद है। ऐसा विचार कर ही धन्वन्तरि मन्दिर की स्थापना की गई है। इसके निर्माण तथा लक्ष्य-सिद्धि के मार्ग में जनता को तन, मन, धन से सहयोग देना चाहिए। धन्यवाद देकर सभा विसर्जित की गई।

जालौन

गत कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को धन्वन्तरि-समारोह प० हरिहर दीक्षित वैद्यशास्त्री की अध्यक्षतामे मनाया गया। आगत सज्जनो द्वारा आयुर्वेदविषयक भाषण दिए जाने के उपरान्त कार्यालय की ओर से जो प्रस्ताव आये हुये थे, उन पर विचार हुआ और उन प्रस्तावो को उपस्थित वैद्यो ने सर्व-सम्मति से स्वीकार किया। इसके उपरान्त सभापति का भाषण हुआ। उन्होने कहा कि जालौन मे एक आयुर्वेदिक अस्पताल का होना निहायत जरूरी है क्योकि सरकारी अस्पताल मे औषधियो की कमी बनी रहती है। सभापति के भाषण के बाद प्रसाद-वितरण तथा धन्यबाद प्रदान के साथ सभा विसर्जित की गई।

मलवासा

गत कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को महर्षि कार्तिकेय महाविद्यालय मलवासा मे श्रीमती कलावतीबाई नागर, उपसचालिका इन्दौर की अध्यक्षता मे धन्वन्तरि-जयन्ती समारोह बडे उल्लासपूर्ण वातावरण मे मनाया गया। उत्सवमे भाग लेने के लिए आस पास के विशिष्ट व्यक्ति तथा आयुर्वेदज्ञ पर्याप्त सख्या मे आये थे। धन्वन्तरि पूजन-अर्चन के पश्चात् सभा की कार्यवाही प्रारभ हुई। तदुपरान्त आगत विद्वानो के भाषण हुए। वक्ताओ ने एक स्वर से आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति के रूप मे मान्य करने की माँग सरकार से की। समारोह की मनोनीत अध्यक्षाने आयुर्वेद की एक पूर्ण चिकित्सा विज्ञान के रूप मे प्रशसा करते हुए कहा कि चिकित्सा क्षेत्र मे महिलाओ को अधिक सख्या मे आना चाहिए। आपने कहा कि महिलाओ में पुरुषो की अपेक्षा अधिक सेवा-भावना होती है। पुरस्कार-वितरण तथा धन्यवाद-ज्ञापन के बाद समारोह समाप्त हुआ।

बासाटॉड

कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी तदनुसार २१-१०-५७ को ग्राम बासाटॉड (गया) मे कमलेश-कुटीर के श्री नागार्जुन औषधालय मे श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव मनाया गया। हवन पूजन के उपरात बासाटॉड, केयाल, देवकुंड, बाधवाँ आदि ग्रामो की जनता की सभा हुई। सभा मे कतिपय विद्वानो के भाषण हुए। धन्वन्तरि जयन्ती को सरकारी तौर

पर स्वास्थ्य सप्ताह के रूप में मनाय जान की आवश्यकता आयुर्वेद के इतिहास अग्रजी राज्य म आयुर्वेद के ह्रास हिन्दुओ के शल्य कृत्य के सम्बन्ध में अग्रजो के उत्कृष्ट वणन आयुर्वेद सम्बन्धी वर्तमान कठिनसमस्या वैद्यो की आलस्यवश एलोपैथी की ओर प्रवृत्ति आयुर्वेदिक पशुचिकित्सा ज्योतिष और पुराणो मे वृक्षायुर्वेद आसव अरिष्टो पर मद्यकर लगान की निंदा आदि पर सयत भावपूण और प्रभावशाली भाषण हुए। धन्यवाद ज्ञापन के बाद सभा विसर्जित हुई।

सकरीखुर्द

धन्वन्तरि त्रयोदशी को श्री कमलश औषधालय सकरी खुद मे श्री धन्वन्तरि जयन्ती मनाई गई। स्थानीय ग्राम पचायत द्वारा इस अवसर पर सफाई का सुदर कायक्रम सपादित हुआ। पूजन अचन के पश्चात श्री श्रीमोहन शरण मिश्र साहित्यव्याकरणायुर्वेदाचाय श्री प्रयागदत्त पाडय जी ए० एम० एस० आदि वैद्यो न धनतेरस के महत्त्व और उपयोगिता ऋतुओ के आहार विहार आयुर्वेद से भारतीय सभ्यता सस्कृति और धम की रक्षा के सम्बन्ध मे भाषण दिए। आसव अरिष्टो को मद्य की श्रणी म लान वाल कानून की निंदा और आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के रूप मे मान्य करन क सम्बन्धी प्रस्ताव सव सम्मति से स्वीकृत हुए। धन्यवाद ज्ञापन के बाद सभा विसर्जित की गयी।

महासमुद (रायपुर)

धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष मे गत कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को स्थानीय आयुर्वेदिक कालज के आचाय श्री शुकदेव प्रसाद शर्मा की अध्यक्षता म एक सभा का आयोजन किया गया। पूजन अचन के बाद आयुर्वेद की महत्ता तथा उपयोगिता के बारे मे विविध विद्वानो के भाषण हुए जिनमे श्री बाबूराम शर्मा शुकदेव शर्मा शुकदेव प्रसाद आदि प्रमुख है। भाषणोपरात सव सम्मति से कई प्रस्ताव स्वीकृत किए गए जिनमे आयुर्वेदिक पद्धति को राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति के रूप मे मान्यता प्रदान करन की माँग सरकार से की गयी। अध्यक्षीय भाषण एव धन्यवाद ज्ञापन के बाद सभा की कार्यवाही समाप्त हुई।

बिलासपुर

धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष मे गत कार्तिक कृष्ण १३ रविवार को साय ४ बज श्री छितानी प्रसाद मितानी दुव दातव्य औषधालय की ओर से औषधालय के सचालक प० द्वारिका प्रसाद जी दुव तथा नगर की आयुर्वेद प्रमी जनता की उपस्थिति म श्री धन्वन्तरि भगवान का पूजन हुआ। इस अवसर पर नगर के प्रतिष्ठित वैद्य भी आयोजन मे सम्मलित हुए थ। श्री धन्वन्तरि के जन्म महोत्सव आयुर्वेदिक की उन्नति तथा वैद्य समुदाय के सगठन पर वक्ताओ के भाषण हुए। धन्यवाद ज्ञापन के बाद समारोह समाप्त हुआ।

जुरहरा (भरतपुर)

जुरहरा (भरतपुर) के श्री रामकृष्ण राजपूताना औषधालय म हर साल की भाति इस साल भी अपूर्व उत्साह के साथ श्री धन्वन्तरि जयन्ती वयोवृद्ध विद्वान वैद्य राधलाल जी की अध्यक्षता म मनायी गयी। पूजन मत्रोच्चारण के साथ सभा का कार्यारभ हुआ। इस अवसर पर विद्वान वैद्यो के भाषण के पश्चात औषधालय के सचालक श्री वैद्य आनन्दीलाल का ओजस्वी भाषण हुआ जिसमे कई सौ वर्षो के इतिहास पर प्रकाश डालते हुए आपन आज के वैद्य एव सरकार दोनो से ही आयुर्वेद के उत्थान मे परस्पर सहयोग स्थापित करन का सुझाव रखा।

अन्त मे धन्यवाद ज्ञापन तथा प्रसाद वितरण के बाद कार्यवाही समाप्त हुई।

मनोहरपुर

राजकीय आयुर्वेदिक औषधालय मनोहरपुर में आयुर्वेद के आदि प्रवतक भगवान श्री धन्वन्तरि जी की जयन्ती उत्साह पूवक मनाई गई।

प्रात काल भगवान श्री धन्वन्तरि जी का पूजन किया गया तथा सायकाल औषधालय के प्रागण म कस्ब के वयोवृद्ध वैद्य श्री सेडूरामजी मिश्र के सभापतित्व मे सभा की गई। सभा म जनता की उपस्थिति सराहनीय थी। उपस्थित महानुभावो मे वैद्य श्री हरिनारायण शर्मा आयुर्वेदाचाय इन्चाय राजकीय औषधालय मनोहरपुर न अपन सारगर्भित एव विद्वत्तापूण भाषण मे भगवान धन्वन्तरि के विषय मे प्रकाश डाला तथा उपस्थित वैद्य महानुभावो से निवेदन किया कि सच्चे अर्थ में हम धन्वन्तरि जयन्ती मनान के हकदार तभी हो सकते है जब कि हम धन्वन्तरि की शल्य-शालाक्य चिकित्सा को ग्रहण कर उसमें निपुण हो सकेंग। सभापति के भाषण के बाद प्रसाद वितरण किया

गया और धन्वन्तरि के जयघोष के बाद सभा विसर्जित की गई।

सुजानगढ़

धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष मे स्थानीय गाधी चौक में वैद्यराज सुखदेव जी पारीक की अध्यक्षता मे सभा की गई। मगलाचरण के बाद प० भालचन्द्र जी, गणेशदास जी स्वामी हरिश्चन्द्र पारीक, सत्यनारायण जी जोशी और छगनलाल मिश्र आदि वैद्यो ने आयुर्वेद की महता पर ओजस्वी भाषण दिये।

कविराज माधव प्रसाद जी शास्त्री (सभापति राज० प्रा० वैद्य सम्मेलन) ने कहा कि "भगवान धन्वन्तरि' आयुर्वेद चिकित्सा के जन्मदाता है और आयुर्वेद एक प्रकार से स्वास्थ्य विज्ञान भी है। आज तक आयुर्वेद की घोर उपेक्षा होने के बाद भी आयुर्वेद रोगो के आमूल निवारण मे विशेष क्षमता रखता है। आपने कहा कि आयुर्वेद जीवन प्रदान करने वाली चिकित्सा है। तदनन्तर प्रधान मन्त्री श्री परमानन्द जी शर्मा (रा० प्रा० वैद्य सम्मेलन) ने कहा कि अगर राज्य सरकारे ऐलोपैथी के समान आयुर्वेद को मेडीकल अस्पताल मे स्थान दे तो आयुर्वेद हर चिकित्सा मे आग ही रहेगा। जहा एलोपैथी के साथ आयुर्वेद पद्धति से चिकित्सा होती है वहा पर रोग-निवारण मे आयुर्वेद अधिक सफल रहा है।

जावरा (म० भा०)

जावरा नगर आयुर्वेद परिषद की ओर से धन्वन्तरि जयन्ती का आयोजन किया गया जिसमे नगर के गण्यमान्य विद्वान् एव कार्यकर्ता भी उपस्थित थ। इस अवसर पर धन्वन्तरि पूजन के बाद आयुर्वेद के सम्बन्ध मे विद्वान् वक्ताओ ने सारगर्भित भाषण हुए। तदनन्तर परिषद के मत्री की ओर से दो प्रस्ताव भी उपस्थित किये गये जो उपस्थित जन समुदाय द्वारा सर्व सम्मति से स्वीकृत किये गए। अध्यक्षीय भाषण तथा धन्यवाद ज्ञापन के बाद आयोजन समाप्त हुआ।

हिंगणघाट

धन्वन्तरि जयन्ती के उपलक्ष में एक सार्वजनिक सभा बुलायी गयी। धन्वन्तरि पूजन स्थानीय मोहोना औषधालय मे बडे उत्साह से किया गया। भगवान धन्वन्तरि पूजन के अनन्तर स्वामी रामेश्वर नन्द जी तथा अध्यक्ष शोभालाल जी ने सारगर्भित भाषण आयुर्वेद की विशिष्टता पर दिए। प्रसाद तथा धन्यवाद वितरणानन्तर कार्य समाप्त हुआ।

सतना

धन्वतरि जयन्ती के उपलक्ष मे कार्त्तिक कृष्ण १३ रविवार को सायकाल ६ बजे श्री धन्वन्तरि भगवान का पूजन, वयोवृद्ध प्राणाचार्य प्रयागदत्त जी राजवैद्य के औषधालय मे प० रामसजीवन जी पोष्टाचार्य की अध्यक्षता मे हुआ। सभा मे विद्वदजनो के सारगर्भित भाषण हुए। वक्ताओ न अपन भाषण मे एक स्वर से आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा बनाने की अपील सरकार से की। राज वैद्य प्रयागदत्त जी का इन्फ्लुएंजा पर रोचक एव विस्तारपूर्वक भाषण हुआ। डाक्टर शुभवन्त किशोर जी का आयुर्वेदिक औषधियो के प्रयोग पर गौरवपूर्ण भाषण हुआ। अत मे सभापति महोदय के व्याख्यान के बाद प्रसाद वितरण कर कार्य समाप्त किया गया।

देवगढ़ (उदयपुर)

गत २१ अक्टूबर १९५७ को भगवान धन्वन्तरि की जयन्ती स्थानीय वैद्य-हकीम बन्धुओ और प्रतिष्ठित नागरिको द्वारा मनाई गई। यह आयोजन उप जिला वैद्य परिषद के मत्री श्री उदयलाल महात्मा द्वारा श्री महावीर आयुर्वेदिक चिकित्सालय मे किया गया था। धन्वन्तरि पूजन-वन्दन के बाद धन्वन्तरि जयन्ती मनाने का महत्त्व समझाया गया। विविध विद्वानो के भाषण हुए। धन्यवाद ज्ञापन और स्वल्पाहार के बाद कार्यवाही समाप्त की गई।

वजीरगज

अन्य वर्षों की भाँति इस वर्ष भी श्री धन्वन्तरि भगवान की जयन्ती बडे धूमधाम के साथ श्री सूर्य आयुर्वेदिक औषधालय मे दिनाङ्क २० अक्टूबर '५७ के दोपहर (१२ बजे दिन) मे स्थानीय खण्ड विकास पदाधिकारी की अध्यक्षता मे मनायी गयी।

आयुर्वेदीय व्याधि-विज्ञान

(पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध)

किसी रोग की चिकित्सा के पूर्व रोग का निदान परमावश्यक है। रोग के सम्यक् निर्णय के बिना कदापि रोगी की सफल चिकित्सा नही हो सकती। इसलिये व्याधि-विज्ञान (रोग-निदान) आयुर्वेद का एक प्रधान विषय है। इस 'आयुर्वेदीय व्याधि विज्ञान' की रचना आयुर्वेद-मार्तण्ड वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य ने की है और व्याधि विज्ञान के साधनो और व्याधियो के सम्बन्ध मे सभी ज्ञातव्य बातो का बडे सुन्दर और सरल ढग से विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थ का पूर्वार्द्ध तो कई वर्ष पहले ही छप चुका था और सर्वत्र उसका यथेष्ट समादर हुआ था, किन्तु इस ग्रन्थ के उत्तरार्द्ध के लिये वैद्य-समाज की ओर से जबर्दस्त माग की जा रही थी।

अब 'आयुर्वेदीय व्याधि-विज्ञान' का उत्तरार्द्ध खण्ड भी प्रकाशित हो गया है और इस प्रकार वैद्य-समाज की एक जबर्दस्त माग की पूर्ति हो गयी है। इसके प्रत्येक अध्याय मे विविध रोगो, यथा—ज्वर, महास्रोत रोग, उरोगत रोग, रक्तपित्त, पाण्डु, शोथ, व्रण, विसर्प, वृद्धि, भग्न-निदान, गलगण्ड, गण्डमाला, कुष्ठ आदि के लक्षण, निदान, चिकित्सा आदि पर सरल भाषा मे पाण्डित्यपूर्ण विवेचन किया गया है। आयुर्वेदीय अध्यापको और विद्यार्थियो के साथ-साथ वैद्यो के लिये भी यह ग्रन्थ अत्यन्त आवश्यक है।

मूल्य :—पूर्वार्द्ध का २॥) और उत्तरार्द्ध का ६), डाक-खर्च पृथक्

अपनी प्रति आज ही सुरक्षित करा लें

प्रकाशक

श्री बैद्यनाथ

आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

इतिहास साक्षी है—

जिस आचार्य ने साख्य सिद्धान्त का सर्व-प्रथम उपदेश किया

उसी ने

चरक-सहिता का भी निर्माण किया

इसका सीधा-सा अर्थ है—

दार्शनिक आचार्य को आयुर्वेद के सिद्धान्त समझने और समझाने मे दर्शन का जितना अश आवश्यक प्रतीत हुआ, आयुर्वेद की सहिता मे उतना ही अश उसने सकलित किया।

इस स्थिति में हमारा कर्तव्य स्पष्ट है—

आयुर्वेद के आधारभूत दार्शनिक सिद्धान्तों को समझने के लिए हम आयुर्वेद के ही वचनो को अपने स्वाध्याय-प्रवचन में (अध्ययनाध्यापन में) स्थान दें। अन्य दर्शन-ग्रन्थो का उपयोग स्नातकोत्तर परीक्षाओ मे ही किया जाए। इसी पद्धति का अनुसरण कर—

आयुर्वेद के नवोदित लेखको मे जिनका विशिष्ट स्थान है

उन **सचित्र-आयुर्वेद** परिवार के सुविदित—

वैद्य रणजितरायजी देसाई आयुर्वेदालकार, आयुर्वेदाचार्य,

उपाचार्य, श्री ओच्छवलाल नाझर आयुर्वेद महाविद्यालय, सूरत ने—

आयुर्वेदीय-पदार्थ-विज्ञान

की

रचना की है।

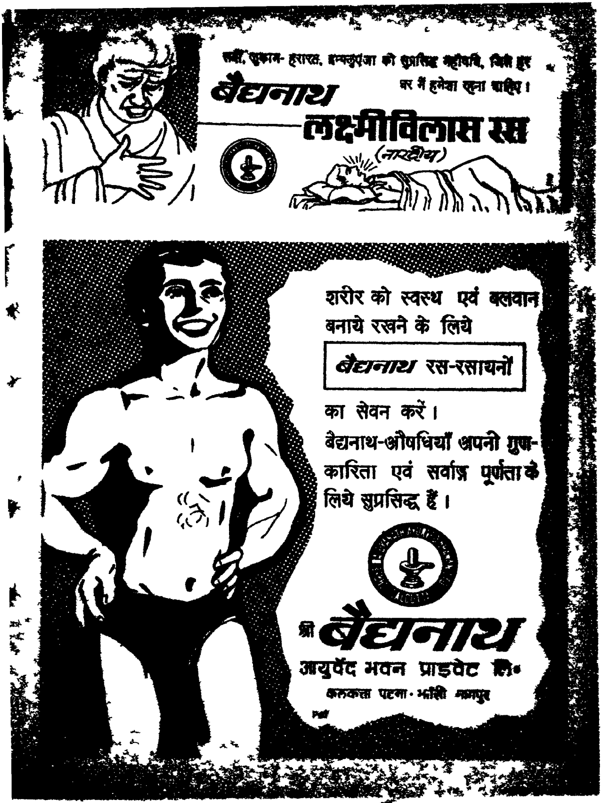
आयुर्वेद के विभिन्न अङ्गो के समझने में उपयुक्त आयुर्वेद के मूलभूत दार्शनिक सिद्धान्तो की आयुर्वेद-मत से तो इसमे व्याख्या की ही गयी है—
साथ ही उनका नव्य-मत से चित्ताकर्षक समन्वय भी किया गया है, जो वैद्यजी की अपनी विशेषता है।

शीघ्र ही अपनी प्रति के लिए आर्डर भेजिए। थोड़ी ही प्रतियाँ शेष है।

प्रकाशक

श्री **बैद्यनाथ** आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

कलकत्ता पटना झाँसी नागपुर



बैद्यनाथ
लक्ष्मीविलास रस
शरीर को स्वस्थ एवं बलवान
बनाये रखने के लिये
बैद्यनाथ रस-रसायनों
का सेवन करें।
वैद्यनाथ-औषधियाँ अपनी गुण-
कारिता एवं सर्वाङ्ग पूर्णता के
लिये सुप्रसिद्ध हैं।
श्री बैद्यनाथ
आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

ओज-बलदायक



आयुर्वेदीय
ओषधियाँ

बैद्यनाथ
अभ्रक भस्म सहस्रपुटी

बैद्यनाथ
लौह भस्म सहस्रपुटी

बैद्यनाथ
मुक्ता (मोती) भस्म

बैद्यनाथ
स्वर्ण भस्म

बैद्यनाथ
वैक्रान्त भस्म

बैद्यनाथ
प्रवाल भस्म

REGISTERED TRADE MARK

सचित्र

वर्ष ११] कलकत्ता, सितम्बर, १९५८ [अंक ३

वैद्यों द्वारा निरंतर अन्वेषण आवश्यक

'आयुर्वेद पूर्णतया वैज्ञानिक है, किन्तु यह गतिहीन विज्ञान नहीं है। एक समय था, जब वैद्य काष्ठौषधियों पर ही बहुत कुछ निर्भर करते थे। बाद में नागार्जुन ने रसौषधियों को चलाया। इनके प्रयोग को यदि रसायनशास्त्र का आयुर्वेद से एकीकरण कहें तो ठीक न होगा। केवल यही कह सकते हैं कि वैद्य ने रासायनिक क्रिया का उपयोग किया। इसलिए मेरी धारणा यह है कि आयुर्वेद में सैकड़ों ऐसी औषधियों का प्रयोग होने पर भी पूर्वकाल में जिनसे वैद्य अनभिज्ञ थे, आयुर्वेद अपना स्वत्व नहीं खो सकता। आयुर्वेद के प्रतिपादकों ने भी तो यही कहा है कि वैद्य को निरन्तर नयी औषधियों का अन्वेषण करना चाहिए। किसी औषधि को आयुर्वेदीय औषधि तभी कहा जा सकता है और वैद्य उन्हें बिना संकोच के तभी प्रयोग कर सकता है, जब वे औषधियां त्रिदोष सिद्धान्त की कसौटी पर खरी सिद्ध हो जायें।'

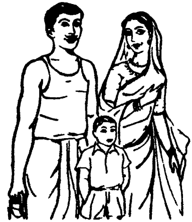
—डा० सम्पूर्णानन्द
मुख्य मंत्री, उत्तर प्रदेश

प्रकाशक

आयुर्वेद-शास्त्र में ऐसी अनेक विधियाँ और औषधियाँ हैं, जिनसे रोग दूर होते हैं और शरीर के स्नायुमण्डल को परिपुष्टि एवं शक्ति मिलती है। आयुर्वेद की ऐसी चमत्कारपूर्ण औषधियों से वैद्य, जनता और यहां तक कि डाक्टर भी परिचित हैं। स्नायुमंडल को तत्काल ताकत पहुँचानेवाली ऐसी ही औषधियों मे अति प्रमुख औषधि है—

बैद्यनाथ मकरध्वज

जो केवल अनुपान के अदल-बदल से कठिन से कठिन रोगों को निर्मूल करता है और कमजोर से कमजोर शरीर को सबल-सुदृढ़ बनाता है। आज भी इस देश के अनेक बुद्धिमान स्त्री-पुरुष इस रसायन का सेवन कर अपनी जरा जीर्णता को दूर करने में सफल होते हैं। आप भी इसका सेवन करे और अपने क्षीण-हीन शरीर को परिपुष्ट बनायें।



मरा आदमी जिन्दा नहीं हो सकता ; किन्तु:-



दुर्बल-अस्वस्थ शरीर सबल-स्वस्थ हो सकता है।

श्री बैद्यनाथ

आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

'सचित्र आयुर्वेद' के पाठको से

आयुर्वेद के पुनरुत्थान और प्रतिसस्कार के साथ-साथ राष्ट्रीय चिकित्सा के गौरवपूर्ण आसन पर आयुर्वेद को पुन आसीन कराने के लिए अपने जन्मकाल से प्रयत्नशील 'सचित्र आयुर्वेद' अपने जीवन के १० वर्ष व्यतीत कर ११ वाँ वर्ष में प्रविष्ट हुआ है। नये वर्ष के प्रथम एव द्वितीय अको का सयुक्त विशेषाक 'आयुर्वेद यूनानी समन्वयाक' हम अपने ग्राहको के पास भेज ही चुके है, यह तृतीय अक भी अब आपके हाथो में है।

अपना ग्राहक नम्बर नोट कर ले

"सचित्र आयुर्वेद" का नवीन वर्ष जुलाई से प्रारभ होकर जून में पूरा हो जाता है और ग्राहकों के पुराने नम्बर भी नए नम्बरो में परिवर्तित हो जाते है। अतएव, ग्राहको से निवेदन है कि "सचित्र आयुर्वेद" के रैपर पर जो ग्राहक नम्बर लिखा गया है—उसे अवश्य नोट कर लें और भविष्य में पत्र-व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर लिखना कदापि न भूलें।

आयुर्वेद यूनानी-समन्वयांक

यो तो 'सचित्र आयुर्वेद' का प्रत्येक अक काफी जाच-पडताल कर लेने के बाद ही कार्यालय से ग्राहकों के पास भेजा जाता है। किन्तु इस बार "आयुर्वेद-यूनानी समन्वयाङ्क" को भेजते समय और भी सतर्कता रखी गयी है ताकि पाठको को सुरक्षित अवस्था में विशेषाङ्क मिल जाय। इतनी सतर्कता के बावजूद कुछ ग्राहको के इस आशय के पत्र आ रहे है कि उन्हें विशेषाङ्क नहीं मिले है। ऐसे ग्राहको से निवेदन है कि वे सर्वप्रथम अपने डाकघर में इस सम्बन्ध में छानबीन कर लें। यदि विशेषाङ्क न मिले तो अपने यहाँ के पोस्ट मास्टर से विशेषाङ्क प्राप्त न होने का प्रमाण पत्र लेकर कार्यालय को भेजें, जिससे कि उसके आधार पर उचित कार्रवाई की जा सके।

इनदिनो कागज की महार्घता एव दुष्प्राप्यता के फलस्वरूप मुद्रण-व्यवसाय के सामने जो घोर सकट की स्थिति उत्पन्न हो गयी है, और जिसके चलते, 'सचित्र आयुर्वेद' के सचालको का व्ययभार पूर्वापेक्षा दूना हो गया है—उसकी ओर भी मैं अपने सहृदय पाठको का ध्यान आकृष्ट कराना चाहता हूँ। साथ ही उनसे प्रार्थना है कि प्रत्येक ग्राहक मात्र २-२ नवीन ग्राहक बना कर यदि हमें साहाय्य प्रदान करें तो निश्चय ही 'सचित्र-आयुर्वेद' के सचालको का व्यय-भार सहज ही में हलका हो सकता है।

अखिल भारतीय आयुर्वेद शास्त्र-चर्चा परिषद्

"सचित्र आयुर्वेद" के वाचको को ज्ञान ही है कि "अखिल भारतीय आयुर्वेद-शास्त्र चर्चा परिषद्" की विषय निर्धारिणी समिति की दस दिवसीय बैठक गत जून मास में—आयुर्वेद-यूनानी तिब्बिया कालेज, देहली के पुस्तकालय में श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के सयोजकत्व में हुई थी। इस परिषद में एक हजार आयुर्वेदीय शारीर शब्दो का विनिश्चय भारतके विभिन्न प्रान्तो से आए हुए ख्याति प्राप्त आयुर्वेदीय विद्वानो ने किया था। विषय निर्धारिणी समिति की रिपोर्ट "सचित्र आयुर्वेद" के गताङ्क में प्रकाशित हो चुकी है। समिति में विनिश्चित एक हजार आयुर्वेदीय शारीर शब्दो की सूची आगामी अक में प्रकाशित की जायगी—कृपया विज्ञजन नोट कर लें।

— व्यवस्थापक

सचित्र आयुर्वेद

'सचित्र आयुर्वेद' के आयुर्वेद-यूनानी समन्वयांक पर कतिपय शुभ-सम्मतियाँ

लोकसभा के अध्यक्ष माननीय श्री अनन्तशयनम् आयगर ने 'सचित्र आयुर्वेद' के आयुर्वेद-यूनानी समन्वयांक पर निम्नलिखित सम्मति प्रेषित की है—

'सचित्र आयुर्वेद' का विशेषाक मिला। सभी लेखो को पूरी तरह पढने के लिए यद्यपि मै अब तक समय नही निकाल पाया हू, फिर भी जो लेख मैने पढे है, उनको काफी दिलचस्प और उत्तम कोटि का पाया है। यह विशषाक एक अत्यन्त महत्वपूर्ण आवश्यकता की पूर्ति करता है— अन्य चिकित्सा-पद्धतियो के ज्ञान और उनके निदान एव चिकित्सा-पद्धतियो म अब तक जो विकास हुए है, उनको आयुर्वेद मे समन्वित करने का इसमे प्रयास किया गया है। मेरी कामना है कि 'सचित्र आयुर्वेद' की उपयोगिता और लोकप्रियता बढती रहेगी।

—एम० अनन्तशयनम् आयगर

बम्बई के राज्यपाल माननीय श्री श्रीप्रकाशजी लिखते है—

'सचित्र आयुर्वेद' पत्रिका मिली। इसे आपने मेरे पास भेजा, यह आपकी विशेष कृपा है। मै इस भेट के लिए अनुगृहीत हूँ।

—श्रीप्रकाश

भारत सरकार के स्वास्थ्य मत्रालय में देशी चिकित्सा विषयक परामर्शदाता कविराज प्रताप सिह लिखते है—

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के अधिकारीवर्ग आयुर्वेद-शास्त्र को उन्नत बनाने मे सर्वदा सतर्क और सचेष्ट रहे है।

अनेक ग्रन्थरत्नो का प्रकाशन किया है और कर रहे है। आयुर्वेद विद्यापीठ का विद्यालय बनाने मे भी सलग्न है कहाँ तक लिखे सर्वप्रकार से तन-मन-धन लगा कर आयुर्वेद की वे सेवा कर रहे है। आयुर्वेद और यूनानी का समन्वयाङ्क प्रकाशित कर यह दिखाने की चेष्टा की गई है कि आयुर्वेद और यूनानी का मूलस्रोत एक ही है और पृथकत्व की भावना भूल से भरी है।

वैद्य और हकीम मिलकर प्रयत्न कर तो देशी चिकित्सा-पद्धति शीघ्र ही सहज मे उन्नत हो सकती है। लेख सुपाठ्य और मनन करने योग्य है। इसके लिये प्रकाशको को अनेक-अनेक धन्यवाद है।

—कविराज प्रताप सिंह

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के उपाध्याय-शारीर, अध्यक्ष-एक्सरे विभाग, डा० अनन्तानन्द आयुर्वेदालंकार लिखते है—

'सचित्र आयुर्वेद' का आयुर्वेद-यूनानी समन्वयाक प्राप्त हुआ। सभी लेख अति उत्तम है— विशेषकर श्री दलजीत सिह द्वारा लिखित "समन्वय के विषय-आधारभूत सिद्धान्त" बहुत पसन्द आया। ऐसे सुन्दर अङ्क के लिए आप बधाई के पात्र है।

—अनन्तानन्द

श्री मोहनलाल नागर आयुर्वेद महाविद्यालय के प्रिन्सिपल आचार्य श्री बापालाल जी वैद्य लिखते हैं—

आयुर्वेद की प्रमुख मासिक पत्रिका सचित्र आयुर्वेद के आयुर्वेद-यूनानी समन्वयाक मे वस्तुत अत्यन्त उच्चकोटि की पाठ्य सामग्री है। यूनानी वस्तुत आयुर्वेद का ही एक अग है और ग्रीक अरबी-पद्धति से जो कुछ यूनानी म लिया गया है उसको आयुर्वेद म जरूर मिला लेना चाहिए। एसी अनक आयुर्वेदीय औषधिया है जिनको आज वैद्यगण जानते तक नही किन्तु हकीम उनका खूब उपयोग करते ह। अतएव वैद्यो को यूनानी के बारे म अधिक से अधिक ज्ञान लाभ करना चाहिए। स्वर्गीय आचाय यादवजी अनक यूनानी औषधियो को प्रयोग म लाते थ। यह सही रास्ता है। आयुर्वेदज्ञो को चाहिए कि व जहाँ भी कोई अच्छी चीज मिल अपनी पद्धति म मिला ल। यूनानी को भी चाहिए कि वह आयुर्वेद म समन्वित हो जाय। इससे दोनो का लाभ होगा। इतना सुन्दर विशषाक निकालन के लिए सचित्र आयुर्वेद प्रशसनीय है।

—बापालालजी वैद्य

सूरत आयुर्वेद महाविद्यालय के उपाचाय श्री रणजित राय देशाई आयुर्वेदलकार लिखते हैं—

सचित्र आयुर्वेद का समन्वयाक प्राप्त हुआ। अक देखन से पूव तक यही धारणा थी कि यह विषय कैसा चुना है? इसपर एकाध लख भी क्या लिखा जा सकता है? यह धारणा यह धारणा निमूल हुई। निमूल न हुई होती तो उन विद्वच्छिरोमणियो के प्रति मानस पाप का भागी होता जिनके नाना दृष्टि से लिख लखो से यह समन्वयाक परिमण्डित हुआ है। मुद्रण तथा भूषा भी वैसी ही चित्ताकषक है। विशष सम्पादक हकीम दलजीत सिहजी भाग्यवान हैं कि उन्ह एसा उत्तम अक प्रकाशित करन का यश और सिद्धि प्राप्त हुई।

—वैद्य रणजितराय

अ० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ के अध्यक्ष तथा दिल्ली आयुर्वेद-यूनानी तिब्बिया कालेज के उपाचाय कविराज उपेन्द्रनाथ दास लिखते हैं—

सचित्र आयुर्वेद का आयुर्वेद-यूनानी समन्वयाक देखा। मुझ अत्यन्त हष के साथ कहना पडता है कि आपका यह विशषाक वास्तव म सचित्र आयुर्वेद की प्रतिष्ठा के अनुरूप ही हुआ है। आयुर्वेद और यूनानी के सिद्धान्त म विशष अन्तर नही है। आयुर्वेद से यूनानीवालो न बहुत-कुछ लिया है। आयुर्वेद के लखको को भी चाहिय कि यूनानी से आवश्यक विषयो का ग्रहण कर। परस्पर विचार विमश से क्रमश दोनो विज्ञानो का भद बहुत कम हो सकता है।

—कविराज श्री उपेन्द्रनाथ दास

सुविख्यात वैद्यराज प० घनानन्द पत लिखते हैं—

आयुर्वेद-यूनानी समन्वयाङ्क समयोपयोगी है। मै इसके लखो को बराबर अवलोकन करता करता रहता हूँ। भविष्य में समय एसा आ रहा है कि जो-जो उपयोगी चिकित्सा है उनका समन्वय समय करेगा। इस दृष्टि से यह समन्वयाङ्क विशष उपयोगी है। लेख भी उत्तम तथा अध्ययन योग्य हैं। वनौषधियो के चित्र विशष उपयोगी है।

—वैद्य घनानन्द पंत

सम्पादक—कामेश्वर शर्मा 'कमल'

विषय-सूची

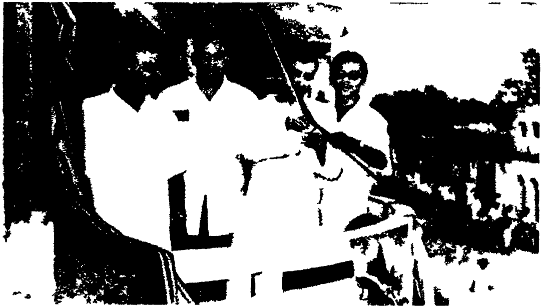
वार्षिक मूल्य ५)　　विशेषांक २) रुपये　　एक प्रति ५० नये पैसे



श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के झांसी निर्माण-केन्द्र मे वैद्य मोहनलाल शर्मा आयुर्वेदाचार्य के अभिनन्दन-समारोह का एक भव्य दृश्य।



वैद्य मोहनलाल शर्मा के अभिनन्दन-समारोह में समवेत श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० झांसी के विशिष्ट कर्मचारियों का एक समूह चित्र।



श्री बद्यनाथ आयर्वेद भवन प्रा० लि० के डायरेक्टर तथा राष्ट्रीय रेलव उपभोक्ता परामशदात समिति के सदस्य वद्य प० दुर्गाप्रसाद शर्मा आयुर्वेदाचाय गोरखपुर म टरिष्ट टाफिक सेमिनर का उदघाटन करते दिखायी दे रह ह ।



गोरखपुर जनपद के वद्यो की ओर से आयोजित प० दुर्गाप्रसाद शर्मा के स्वागत-समारोह का एक दृश्य

आयुर्वेद-जगत् में सर्वजन-समादृत और सर्वाधिक बिकी होनेवाला आयुर्वेद-विज्ञान का प्रमुख-मासिक पत्र

सचित्र आयुर्वेद

आयुःकामयमानेन धर्मार्थसुखसाधनम् । आयुर्वेदोपदेशेषु विधेयः परमादरः ॥

वर्ष ११	कलकत्ता, सितम्बर १९५८	अंक ३

सम्पादकीय

जामनगर का अनुसंधान केन्द्र

केन्द्रीय सरकार के प्रबन्ध मे गत कई वर्षों से जामनगर की केन्द्रीय अनुसन्धानशाला मे आयुर्वेदानुसन्धान-कार्य चल रहा है। सरकार तो उससे उल्लेखनीय फल की आकांक्षा रखती ही है, वैद्य जगत् और आयुर्वेद-हितैषी-समाज भी यह उत्कट अपेक्षा रखता है कि जामनगर की केन्द्रीय अनुसन्धानशाला से कुछ ऐसा फल निकले जिससे शताधिक वर्षों से पिछड़े हुए आयुर्वेद का यथार्थ चमत्कार प्रकट हो सके , और वह अपना गौरवपूर्ण पद पुन प्राप्त करके न केवल अपने देश के, प्रत्युत् ससार के मानवो के लिए कल्याणकारक सिद्ध हो सके।

एक बार, नुवम्बर सन् '५५ मे, प्रधान मन्त्री पण्डित नेहरू जब जामनगर गये थे, तब वहाँ की केन्द्रीय अनुसन्धान-शाला का कार्य देखकर उन्होने बडा हर्ष व्यक्त किया था और वे आयुर्वेदहित में बहुत प्रभावित हुए थे। वहाँ के कार्य के विषय में उन्होंने कहा था "आयुर्वेद के सम्बन्ध मे वहाँ जो सुन्दर अनुसन्धान हो रहा है, वह अत्यन्त दिलचस्प है और इसका परिणाम अत्यन्त सुफलदायक हो सकता है। आयुर्वेद और आधुनिक चिकित्सा प्रणालियो के बीच जो तथाकथित विवाद है उसका अध्ययन कर निपटारा करना होगा।' जामनगर का कार्य देखने के बाद उसी मास नई दिल्ली मे मेडिकल एसोशियेशन के एक सम्मेलन में पण्डित नेहरू ने कहा था 'आयुर्वेदिक चिकित्सा-पद्धति को घृणा की दृष्टि से देखना और उसको अवैज्ञानिक कहना मूर्खता की बात है।'

जामनगर म आयुर्वेदानुसन्धान का जो प्रयास हमारे प्रधान मन्त्री को प्रभावित कर सकता है, वह निश्चय ही बहुत महत्वपूर्ण है और उसकी सर्वतोभद्र सफलता के लिए सब ओर से सक्रिय प्रयास किया जाना चाहिए। विशेषकर वैद्य-जगत् को आयुर्वेदानुसन्धान के इस कार्य में जो उत्कट सुरुचि प्रदर्शित करना चाहिए, उसका अभाव प्रतीत होता है। यह चिन्तनीय है।

जहाँ तक सरकार के करने का प्रश्न है, वह जामनगर के अनुसन्धान केन्द्र पर लाखो रुपया व्यय कर चुकी है, कर रही है, और एक सीमा तक आगे भी करती रहेगी, परन्तु

लाखों रुपया व्यय करके भी उससे जिस फल की अपेक्षा की जा रही है, उसके लक्षण अब तक प्रतीत नहीं हो रहे—यह अत्यन्त ही चिन्तनीय बात है। यदि यही स्थिति रहती है तो एक बड़ी आशंका है कि एक सीमा तक पर्याप्त समय और धन व्यय करने के अनन्तर सरकार यह कह दे कि आयुर्वेद के अनुसन्धान पर, इतना रुपया व्यय किया गया और अमुक-अमुक प्रयत्न किये गए, परन्तु उसमें कोई तत्व नहीं निकला। सरकार के लिए हम नहीं कहना चाहते, परन्तु एक वर्ग ऐसा अवश्य है जो चाहता है कि सरकार को अन्ततः उपर्युक्त आशंकावाली बात कहने का अवसर प्राप्त हो जाय। उस वर्ग का सरकार पर गहरा प्रभाव है, यह सभी जानते हैं। ऐसी दशा में यदि केन्द्रीय अनुसन्धानशाला से कोई मूल्यवान फल आयुर्वेदहित में न निकले तो सरकार को सहज ही आयुर्वेदानुसन्धान कार्य को निष्प्रयोजन कहने का अवसर मिल सकता है, जो आयुर्वेद के वर्तमान और भविष्य दोनों को भारी धक्का पहुँचायेगा। आयुर्वेदप्रेमी समाज को इस तथ्य की ओर गम्भीरता के साथ ध्यान देना चाहिए। आयुर्वेदानुसन्धान की बड़ी-बड़ी योजनाएँ सरकार द्वारा परिचालित की जा रही हैं, केवल यह सुनकर और सोचकर सुख-स्वप्न देखना वैद्यों के लिए बहुत भ्रान्तिपूर्ण सिद्ध होगा।

वैद्यगण सहयोग दें

यह अत्यन्त वाञ्छनीय है कि आयुर्वेद के अनुसन्धान के सम्बन्ध में जहाँ भी कुछ प्रयास हो, उनमें वैद्य-जगत् भरपूर सुरुचि तथा उत्कण्ठापूर्वक सहयोग करे। तभी अनुसन्धान के प्रयास सर्वथा सफल हो सकेंगे। वैद्यगण अपने अनुभव और सुझाव प्रेषित करके तो सहयोग कर ही सकते हैं, सरकार जो कुछ कर रही है, उसमें वैद्य-जगत् का सहयोग यदि मिल जायगा तो कार्य की शक्ति और क्षेत्र स्वतः ही बढ़ जायगा। जहाँ तक हमें पता चला है सद्वैद्यों ने अपने सुझाव और अनुभूत प्रयोग परीक्षण एवं अनुसन्धान के निमित्त उचित मात्रा में जामनगर नहीं भेजे हैं, जिनके अभाव में वहाँ अनुसन्धान कार्य कुछ शास्त्रीय योगों तक ही सीमित है। इतने ही से लक्ष्य की पूर्ति सम्भव नहीं हो सकती। वैद्यगण अपने अनुभव में आये योग यदि वहाँ भेजें और उन पर विधिवत् प्रयोग-परीक्षण एवं अनुसन्धान किया जाय तो कुछ वास्तविक कार्य सामने आ सके।

हम नित्य ही समाचार-पत्रों में देखते हैं कि विज्ञापनों अथवा विवरणों में आयुर्वेद की 'रामबाण', 'आशुफलप्रद', 'चमत्कारिक', 'शतानुभूत' आदि विशेषणयुक्त प्रभावपूर्ण औषधों की चर्चा होती है। अनेक औषध-निर्माता अपनी औषधों के विषय में भाँति-भाँति की बातें प्रकाशित करते हैं। यदि यह प्रकाशन केवल प्रचार-विज्ञापन के लिए नहीं है, और उसमें तीन चौथाई भी तथ्य है तो ऐसी औषधों का पूरा विवरण अनुसन्धान केन्द्र पर पहुँचना चाहिए और उनका परीक्षण होना चाहिए।

बहुत से व्यक्तिगत चिकित्सक यथार्थ ही कुछ सद्यः फलकारी योग जानते हैं, परन्तु वे योग यदि कुछ व्यक्तियों के मन में अथवा डायरियों में पड़े रहेंगे, तो उनसे जन-कल्याण नहीं होगा और वे जहाँ के तहाँ समाप्त हो जायेंगे। आयुर्वेद का इतिहास इस बात का साक्षी है, कि अपने योग पुत्र तक को न बताने और अति गुप्त रखने की परम्परा ने हमारा कितना अधिक ह्रास किया है। आज भी बहुत से आयुर्वेद चिकित्सक रोग विशेष की अचूक चिकित्सा का दावा करते हैं। कई ऐसे रोगों की चिकित्सा की गारण्टी देते हैं जिन पर संसार के वैज्ञानिक अब तक विचार कर रहे हैं। हमारे यहाँ कोई कैंसर के विशेषज्ञ कहे जाते हैं तो कोई यक्ष्मा के। कोई श्वास-दमा को निश्चित रूप से दूर करनेवाले बताये जाते हैं तो कोई कुष्ठ की अमोघ औषधि जानने में प्रसिद्ध हैं। ऐसे कुछ सद्वैद्यों को पर्याप्त ख्याति भी मिली है। समय की माँग है कि वे विद्वान् सद्वैद्य अपने योगों को अनुसन्धान के लिए प्रदान कर दें। इससे उनकी और भी अधिक ख्याति होगी और आयुर्वेदोद्धार एवं जन-कल्याण का पुण्य उनको मिलेगा।

अनुसन्धान के निमित्त योग केवल आयुर्वेदीय या यूनानी ही भेजे जावें, जो सर्वथा मौलिक हों या शास्त्रीय हों। जिन योगों अथवा औषध विशेषों पर अब तक विचार एवं परीक्षण हो चुका है, अथवा जिनको पहले से ही किसी रोग विशेष पर अधिकारी मान लिया गया है—उन औषधों अथवा उनके योगों को भेजना निरर्थक पुनरावृत्ति ही होगी। ऐसी वनस्पति या योग, जो अब तक प्रकाश में न आये हों और किसी रोग पर अधिकाधिक प्रभावकर हों, उन्हें उनके जानकार वैद्य कृपया जामनगर की केन्द्रीय अनुसन्धानशाला के संचालक महोदय को पूरे विवरण के साथ लिख भेजें। इस प्रसंग में सत्प्रतिशत लाभकारी औषध-योग भेजकर जो

उचित है ही, ऐसे योग भी जिनको सत्तर प्रतिशत रोगियो पर लगाकर अनुभव किया गया हो, अनुसन्धान के निमित्त भेजना हितकर होगा।

यहाँ अपनी ओर से एक बात स्पष्ट कह देना हम आवश्यक समझते हैं कि अनुसन्धान के लिए योग भेजने मे लोग अत्युत्साह से काम न लें। यो तो पत्र-पत्रिकाओ मे प्राय ही अनुभूत प्रयोग छपा करते है। हमारी समझ में अनुभूत योगो की यह सस्ती परम्परा अच्छी नही है। 'सचित्र आयुर्वेद'ने सस्ती कीर्ति पाने के लिए कभी इस परम्पराको नहीं अपनाया और प्रयोग या प्रश्नोत्तर प्रकाशन नही किया। प्राय देखा जाता है कि लोग दस-बीस रोगियो पर कोई योग चलाकर ही उसे शतानुभूत समझ बैठते है और वाहवाही लूटने का प्रयास करने लगते है। ऐसे कीर्तिलिप्सावालों की कमी नही जो केवल नाम कमाने के लिए ही मनमाने योग भेजना आरम्भ कर दे। ऐसे सज्जनो से हमारी प्रार्थना है कि वे कृपाकर अनुसन्धान-हेतु अल्पज्ञता-भरे योग न भेजें। ऐसा करने से आयुर्वेद वृथा ही बदनाम होगा। हमारा आग्रह उन ही सद्वैद्यो से है जिनकी जानकारी और अनुभव में यथार्थ लाभकारी प्रयोग हैं। जैसे सीकर के प० प्रह्लादराय वैद्य हजारो रोगियो पर एक श्वासनाशक औषध का प्रयोग कर चुके हैं। और भी बहुत वैद्य ऐसे है—वे कृपया अपने योग जामनगर अवश्य भेजें।

सद्वैद्यो की ओर से सविवरण योग भेजने मात्र का सहयोग अनुसन्धान के इस विशाल प्रयास को बहुत अशो में सफल बनाने मे समर्थ हो सकेगा, ऐसा हमारा विश्वास है। क्योंकि केवल शास्त्रीय योगो पर परीक्षण चलते रहने की अपेक्षा अनुभव मे आये हुए नवीन प्रयोगो पर किया गया अनुसन्धान समय कम लेगा और कार्य अधिक दिखायेगा। इन पंक्तियो के द्वारा हम वैद्य-समाज से आग्रहपूर्ण निवेदन करते है कि आयुर्वेद अनुसन्धान के इस राजकीय प्रयास के प्रति वैद्यगण भरपूर सुरुचि से काम लेवे और अपना यथासम्भव सहयोग इस कार्य मे प्रदान करे।

आयुर्वेदानुसन्धान के कार्यों के प्रति स्वय वैद्य-जगत् की तरफ भी उपेक्षा अथवा पूर्ण सुरुचि का अभाव—इस कार्य की सफलता में बाधक हो जायगा और उससे आयुर्वेद के भविष्य पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। वैद्यो को इस चेतावनी की ओर ध्यान देना चाहिए।

राज्याधिकारियों का कर्त्तव्य

इस प्रसग में यहाँ राज्याधिकारियो से भी कुछ निवेदन करना हमें वाञ्छनीय प्रतीत होता है। विशेषकर जो लोग राज्य की ओर से इस कार्य में लगे है और जो इसके अधिकारी है, उन्हें चाहिए कि वे प्रयत्नपूर्वक वैद्य-समाज से अपना सपर्क बढावें। इतने वर्षों से जामनगर मे अनुसन्धान का विस्तृत कार्य हो रहा है, परन्तु उसके विषय में विशिष्ट जानकारी का विवरण कदाचित् कभी भी, कम-से-कम, वैद्य-जगत् को नही दिया गया। वैद्यो को जब तक इस योजना के विषय में भरपूर जानकारी नही होगी, तब तक उनका आकर्षण इस ओर होना स्वभावत ही सहज नहीं है। हम देखते है कि पाश्चात्य विज्ञान के क्षेत्र मे जब कभी कोई अनुसन्धान-कार्य होता है, चाहे वह व्यक्तिगत हो, चाहे राजकीय—उसका पद-पद का विवरण जनता और उससे सम्बन्धित लोगो की जानकारी के लिए निरन्तर प्रकाशित किया जाता है। विज्ञान से सम्बन्धित अखबारों में उस कार्य की चर्चाए होती रहती हैं जिससे सम्बन्धित जनों की उत्कण्ठा जाग्रत होती रहती है। परन्तु हमारे जामनगर के अनुसन्धानकेन्द्र ने इस नीति को क्यों नही अपनाया, यह बात हमारी समझ में नही आती। न तो राज्य की ओर से स्वय का ऐसा कोई प्रबन्ध है कि जामनगर की अनुसन्धानशाला मे हो रहे कार्य का विवरण वैद्यो के लिए प्रकाशित किया जाय और न ही आयुर्वेदीय समाचार-पत्रों को वहाँ के कार्य का विवरण प्रकाशनार्थ दिया जाता है। देश मे आयुर्वेदीय-पत्रो की सख्या कम नही है। प्राय प्रत्येक प्रादेशिक भाषा में आयुर्वेद विषयक मासिक-पत्र प्रकाशित होते है। यदि इन पत्रो में ही जामनगर के कार्यों का विवरण प्रकाशित कराया जाता रहे तो देशभर मे फैले हुए वैद्यो को कार्य की जानकारी मिलती रहे और उनका उत्साह बढता रहे। हमारी केन्द्रीय सरकार अपने विभिन्न विकास कार्यों के प्रचार के लिए लाखो रुपया व्यय करती है, भाँति-भाँति की प्रदर्शनियाँ लगती हैं, प्रचार-साहित्य प्रचुर मात्रा में जनता में वितरित किया जाता है, सिनेमा में फिल्में दिखाई जाती हैं—ऐसे ही अन्य अनेक प्रकारों से सरकार यह प्रयत्न करती है कि देश में हो रहे विभिन्न निर्माण एव विकास कार्यों का अधिकाधिक विवरण जन-साधारण तक पहुँचता रहे। परन्तु आयुर्वेद के विकास के लिए हो रहे राजकीय प्रयत्नो का विवरण वैद्य-जगत् को

भी न देना कहाँ तक उचित है, यह हमारी समझ में नहीं आता। हमारा सरकार से आग्रह है कि वह कम-से-कम जामनगर की अनुसन्धानशाला के कार्यों के विषय में अधिक-से-अधिक जानकारी आयुर्वेद-जगत् के समक्ष प्रस्तुत करने का शीघ्र प्रबन्ध करे। ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि अनुसन्धान-शाला के सचालक के कार्यालय से मासिक विवरण आयुर्वेद-पत्रों को प्रकाशनार्थ भेजा जाता रहे। ऐसा करने से वैद्यगण सरकार के साथ सहयोग करने के लिए स्वय ही उत्कण्ठापूर्वक प्रवृत्त होंगे और उनमे यह विश्वास जाग्रत होगा कि हमारी सरकार उनके भविष्य के लिए और उनके विज्ञान के लिए कुछ यथार्थ एव रचनात्मक प्रयत्न कर रही है।

भ्रमपूर्ण वातावरण

कहना न होगा कि राजकीय प्रयत्नों की जानकारी के अभाव में और विशेषकर जामनगर की अनुसन्धानशाला के कार्यों के विषय में किंचित् भी विवरण न मिलने के कारण ही आयुर्वेद-जगत् का जनसामान्य सरकार के आयुर्वेद-कार्यों के प्रति पूर्ण विश्वस्त नही हो पा रहा है। आयुर्वेद के लिए किये जानेवाले राजकीय कार्यों के सम्बन्ध मे वैद्य-जगत् में एक भ्रमपूर्ण वातावरण है, जिससे वैद्यो मे इन महत्वपूर्ण कार्यों के प्रति भी कोई रुचि नही है और उनका सक्रिय सहयोग सरकार को मिल नही रहा है। वैद्यो का सहयोग लेने के लिए सरकार को यह तो बताना ही चाहिए कि वह आयुर्वेद के लिए अमुक कार्य अमुक पद्धति और पैमाने पर कर रही है।

जहाँ तक आयुर्वेद के अनुसन्धान विषयक राजकीय प्रयासो का प्रश्न है, हम यह स्पष्ट कर देना चाहते है कि वैद्य-जगत् मे यह धारणा है कि राज्य की ओर से आयुर्वेदा-नुसन्धान के कार्य सही दिशा और दृष्टिकोण से नही किये जा रहे। ऐसी धारणा के कुछ प्रबल कारण भी है और उनमे सबसे मुख्य तो यही है कि वैद्यो को अनुसन्धान कार्यों का कुछ भी विवरण नही दिया गया। सत्य विवरण के अभाव में भ्रान्त धारणा का उत्पन्न होना स्वाभाविक ही नहीं अनिवार्य भी है। इसके अतिरिक्त यदा-कदा ऐसी चर्चाएं सुनने में आती है जिनसे उक्त भ्रान्त धारणा और भी बलवती हो जाती है। हमे स्मरण है कि गत १५, १६ अप्रैल सन् १९५५ को लखनऊ में राज्य चिकित्सा-परिषद् के द्वितीय अधिवेशन का उद्घाटन करते हुए उत्तर प्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल माननीय श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी ने कहा था—"केन्द्रीय सरकार की ओर से आयुर्वेद में अनुसन्धान को प्रोत्साहन देने का जो दावा किया जाता है, वह सिर्फ आयुर्वेदिक जडी-बूटियो का इस दृष्टि से परीक्षण है कि उन्हे अन्तत. एलोपैथी की दवा बना लिया जाय। यह वस्तुत आयुर्वेदिक अनुसन्धान नही, एलोपैथिक अनुसन्धान है। देश मे आयुर्वेदिक अनुसन्धान के लिए आयुर्वेद के विशिष्ट विद्वानो की एक केन्द्रीय परिषद् स्थापित की जानी चाहिए। —यह बात एक ऐसे महत्वपूर्ण सम्मेलन के अवसर पर कही गयी थी, जिसके प्रथम अधिवेशन का उद्घाटन भारत के राष्ट्रपति ने किया था। कहनेवाले व्यक्ति, अवसर और समागम—तीनो ही विशिष्ट है—फिर उस बात पर ध्यान क्यो न जाये? और यदि वैद्य-जगत् इस तथ्य को सही माने तो कैसे उसकी भावना सरकार के अनुसन्धान कार्यों मे सहयोग देने की हो सकती है?

गत वर्ष भी एक बार ऐसी चर्चा सुनने में आई थी कि केन्द्रीय स्वास्थ्य मन्त्री से जब कुछ व्यक्ति मिलने गए तो चर्चा के प्रसग म उन्होने कहा कि, 'अनुसन्धान करने पर जो देशी औषधे बहुत गुणकारी प्रतीत होगी, उन्हे एलोपैथी में मिला लिया जायगा।'

ऐसे प्रचार से स्वाभाविक ही वैद्य-जगत् मे सरकार के कार्यों पर अविश्वास उत्पन्न होता है। सम्बन्धित अधिकारियो को चाहिए कि वे इन बातो का स्पष्टीकरण कर द और जामनगर मे हुए कार्य का स्पष्ट एव विस्तृत विवरण वैद्य-समाज के समक्ष रखकर यह बता दे कि उनकी ओर से जो अनुसन्धान हो रहा है वह वास्तव मे आयुर्वेद का अनुसन्धान है, और आयुर्वेद पद्धति पर आयुर्वेद के लिए ही किया जा रहा है। पूरा और यथातथ्य विवरण पाकर वैद्यगण सरकार को वह सहयोग स्वत ही देंगे, जिसके बिना सरकार के अनुसन्धान-प्रयत्न निष्फल नही तो अधूरे अवश्य रह जायेंगे।

जहाँ तक हमारी जानकारी है जामनगर की अनुसन्धान-शाला में ख्याति प्राप्त विद्वान् वैद्यराजो का एक दल निश्चित् कार्य कर रहा है और वैद्यो की सम्मति के आधार पर ही वहाँ आयुर्वेदीय औषधो का आयुर्वेद सिद्धान्तानुसार रोगियो पर प्रत्यक्ष प्रयोग द्वारा अनुसन्धान किया जा रहा है। इसी आधार पर हम वैद्य-जगत् को इस कार्य में सहयोग करने के लिए प्रेरित कर रहे हैं।

टिप्पणियाँ

उत्तर प्रदेश के आयुर्वेद छात्र

विगत प्राय आठ महीनो से उत्तर प्रदेश में आयुर्वेद की स्थिति गम्भीर चर्चा का विषय रही बनी है। बात यहाँ तक बढ़ी कि प्रदेशव्यापी जोश उमड आया और प्रदेश के मुख्य राजनीतिज्ञो का ध्यान उसने आकर्षित किया। आयुर्वेदिक छात्रो ने हडताल और आमरण अनशन किए। छात्रो के प्रदर्शनो पर लाठी-गोली वर्षा के प्रसग मे एक निरपराध का बलिदान हुआ और ३० से ऊपर व्यक्ति घायल हो गए। राज्य विधान सभा के विरोधी नेताओ के प्रयत्न से कुछ समझौता कराया गया, तब कही वातावरण मे ठडक आई। कदाचित् यह पहला ही अवसर है जब कि देश के किसी भाग मे आयुर्वेद का नाम लेकर इतना गुल-गपाडा हुआ हो।

समझौता या आन्दोलन-समाप्ति के नाम पर जो प्रयास किया गया है उसको प्राथमिक सहायता की साधारण मरहम-पट्टी ही कहा जा सकता है क्योकि उससे न तो समस्या का हल हुआ है और न यह विश्वास किया जा सकता है कि आगे फिर कोई वितण्डावाद खडा नही होगा। हडताली छात्रो ने इस आश्वासन पर आन्दोलन स्थगित किया है कि उनको मेडिकल कालिज में ले लिया जायगा। उधर सरकार ने अपने आश्वासन के साथ शर्त रखी है कि यदि सब छात्र एकमत होगें तो वह उनके नाम मेडिकल कालिज में भर्ती के लिए भिजवा देगी। केवल नाम भिजवा देगी, कोई सिफारिश अपनी ओर से नही करेगी।

पहली बात तो यह कि मेडिकल कालिज मे भर्ती होने की शर्त पर सब छात्र एकमत नही है। दूसरी बात सरकार ने केवल नाम भेजने का आश्वासन दिया है, न कि मेडिकल कालिज मे भर्ती करा देने का। विश्वविद्यालय यदि चाहेगा तो इन छात्रो को मेडिकल कालिज में ले लेगा, न चाहेगा तो नही लेगा। इनमे सभी छात्र इन्टर साइस नही हैं जो कि मेडिकल कालिज की अनिवार्य प्रवेश योग्यता है। उधर मेडिकल कालिज के छात्रो ने आयुर्वेदीय छात्रो को उनके यहाँ भर्ती किये जाने के प्रश्न पर उसी दिन हडताल कर दी। लखनऊ के एलोपैथ डाक्टरो, मेडिकल कालिज के प्रोफेसरो, मेडिकल एसोशियेशन के सदस्यो तथा लखनऊ विश्वविद्यालय की मेडिकल फैकल्टी के डीन ने इन आयुर्वेदीय छात्रों को मेडिकल कालिज में भर्ती किये जाने की चर्चा का विरोध किया है। यह विरोध केवल चर्चा पर हुआ है, वास्तव में भर्ती करने का अवसर जब आयेगा तो विरोध का तीव्रतर हो जाना क्या असम्भव है? इस प्रकार फरवरी '५८ से चलनेवाले आयुर्वेद छात्रो के इस ऐतिहासिक विद्रोह का अन्त कुछ ऐसा हुआ है कि एक आन्दोलन को दबाकर दूसरे आन्दोलन के बीज बो दिए गए है। दूसरी ओर यो समझिए कि आठ महीने तक हडताल और जोश-खरोश के प्रपच मे पडे हुए आयुर्वेदीय छात्र, कुए में से निकल कर खाईं मे आ पडे है। लखनऊ के आयुर्वेद-आन्दोलन के अन्त का इतना ही साराश हमारी समझ मे आता है।

गोलीकाण्ड के बाद, विरोधी नेताओ ने बीच-बचाव करके, और सरकार ने अनिश्चित आश्वासन देकर, स्थिति का तात्कालिक समाधान कर लिया तथा दु:खद सम्भावनाओ का निवारण कर लिया, यहाँ तक सन्तोष की बात है। परन्तु जो कुछ हुआ है, उसको प्रस्तुत समस्या का हल समझना भूल ही होगी। इस सम्पूर्ण प्रसग मे छात्रो का हठ और सरकार की अनुदारता—दोनो ही खेदजनक हैं। विगत जून मास के अग्रलेख मे हमने छात्रो से आग्रह किया था कि वे हडताल वापस ले ले और अपनी यथार्थ उचित माँगो के लिए अन्य प्रकार से सघर्ष करे। साथ ही सरकार को हमने सुझाव दिया था कि अध्ययन-सुविधा एव अधिकार विषयक छात्रो की उचित माँगो को अविलम्ब स्वीकार किया जाय। हमे खेद है कि दोनो पक्षो ने विवेक से काम नही लिया।

और, जो हल निकाला गया है वह मूल समस्या से अधिक उलझनपूर्ण है। पहले भी एक बार इसी आयुर्वेदिक कालिज के लगभग १६८ छात्रो को एम० बी० बी० एस० कक्षाओ में प्रविष्ट कराया गया था जिनमें से केवल एक उत्तीर्ण हो सका और उसको भी मेडिकल काउन्सिल की मान्यता प्राप्त नही हो सकी। फिर इन हडताली आयुर्वेद छात्रो को मेडिकल कालिज मे भर्ती कराने का हल कहाँ तक बुद्धिमत्तापूर्ण कहा जा सकता है? दूसरी ओर स्थिति स्पष्ट है कि इन छात्रो का मेडिकल कालिज मे लिया जाना ही सुनिश्चित नही और लेना निश्चित भी हो जाय तो एलोपैथी छात्रो का नया आन्दोलन फिर एक समस्या खडी कर देगा। ऐसी दशा में उत्तर प्रदेश के आयुर्वेद छात्र-आन्दोलन का जो समाधान खोजा गया है, वह समस्या का वास्तविक हल नहीं है। ऐसा होना न आयुर्वेद छात्रों के लिए हितकर है और न ही सरकार के लिए।

हम समझते है, अब ऐसा वातावरण प्रस्तुत है जब कि दोनों ही पक्ष शान्तिपूर्वक एवं गम्भीरता के साथ विचार करके इस समस्या का ऐसा समाधान खोज लें जो सरकार के लिए सर-दर्द न हो और जिससे आयुर्वेद छात्रो का बिगडता हुआ भविष्य नष्ट होने से बच जावे। ऐसा हितकारी हल खोज लेना और उसका अनुसरण करना असम्भव नही है, बशर्ते कि दोनो ही पक्ष पूर्वाग्रह को त्याग दें। राज-हठ, और बालहठ—दोनो के बीच सामजस्य स्थापित करने की नीयत से सोचा जाय और धुरन्धर लोग राजनैतिक उद्देश्यो की पूर्ति की लालसा को थोडा तिलाजलि दे दें तो समुचित हल निकल सकता है।

निश्चय ही छात्रो की स्थिति दयनीय एव त्रिशकुवत् हो गई है। आखिर वे कहाँ जायें और कहाँ खपे! डाक्टर वर्ग उनको लेना नही चाहता। वैद्य वर्ग उन्हे अछूत समझता है! और कोई राजमान्य पद्धति ऐसी है नहीं जिसमें वे अपने को मिला ले! राज्य सरकार को छात्रों की इस विषम स्थिति पर सहानुभूति पूर्वक विचार करना चाहिए। इन छात्रो ने उस पाठ्य-क्रम के आधार पर शिक्षा पाई है, जिसे स्वय राज्य सरकार ने प्रचलित किया था। वह पाठ्य-क्रम यदि दूषित था, तो इसमे बेचारे छात्रो का क्या अपराध है? आज उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री उस पाठ्य-क्रम के आधार पर शिक्षित स्नातको को 'अभागा' 'नीम हकीम' 'क्वैक्स' इत्यादि विभूषणो से स्मरण करते हैं—वे साथ ही यह घोषणा करते हैं कि उस प्रकार के पाठ्य-क्रम से शिक्षित स्नातक को चिकित्सा का कोई ज्ञान नही होता—फिर विचार करने की बात है कि मुख्य मन्त्री द्वारा निन्दित पाठ्य-क्रम से पढे छात्रो की समाज में क्या स्थिति होगी? चार-पाँच वर्ष राज्य के महाविद्यालय में गँवाकर—उदर पोषण के लिए वे क्या करें? इस प्रश्न का उत्तर देने की जिम्मेवारी सरकार पर है! क्योकि पाठ्य-क्रम विद्यार्थियो ने नहीं बनाया था—सरकार ने निर्धारित किया था। जो मुख्य मन्त्री पाँच वर्ष तक उनकी ही सरकार के पाठ्य-क्रम के आधार पर पढे स्नातको को 'अभागा' और 'नीम हकीम' कहना उचित समझते है, उन्हें यह जिम्मेवारी उठानी चाहिए कि वे इन अपने ही बनाये 'अभागों' को ठिकाने लगाने का मार्ग निकालें। जिन छात्रो का भविष्य सरकार की भूल से बिगडा है, उसको सुधारना भी सरकार का नैतिक उत्तर-दायित्व है। मेडिकल कालिज में भर्ती करने के लिए नाम भेजने मात्र से उस नैतिक उत्तरदायित्व का निर्वाह नहीं हो जाता।

विशेषकर उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री एव स्वास्थ्य मन्त्री और साधारणत सरकार से हम यह अपेक्षा रखते हैं कि वह इन छात्रो के प्रश्न पर जिम्मेवारी के साथ विचार करे और इनकी ऐसी माँगो को स्वीकार करे, जो यथार्थ ही स्वीकार करने योग्य है। जहाँ तक हमें पता है, छात्रो की माँगो में विकल्प था। हमारी समझ मे नही आता कि सरकार ने यही विकल्प क्यो स्वीकार किया कि छात्रो को मेडिकल कालिज में भर्ती करने की नामावली देकर उन्हें उनके भाग्य पर छोड दिया जाय? हमारा सरकार से आग्रह है कि इन छात्रो को आयुर्वेद छात्र ही रखा जाय और अध्ययन-सुविधा तथा पदाधिकार के सम्बन्ध में इनकी जो उचित माँगे है, सरकार उनको स्वीकार करे।

आयुर्वेद छात्र आन्दोलन का जो हल प्रस्तुत किया गया है, उसको हम छात्रो के लिए नितान्त अहितकर समझते हैं और आयुर्वेद के लिए अपमानजनक! इसलिए उस निश्चय का हम विरोध करते है। छात्रो का एक वर्ग यदि मेडिकल कालिज मे भर्ती होने के प्रस्ताव का समर्थक है तो भी यह प्रस्ताव हमारी समझ मे अव्यवहार्य और त्याज्य है।

आयुर्वेद छात्रो को हम पहले भी यह परामर्श दे चुके है कि उन्हे अपनी स्थिति पर, क्षणिक आवेशवश नही प्रत्युत शान्तिपूर्वक विचार करना चाहिए। डाक्टर कहलाने का मोह उनके भविष्य को निश्चित रूप से अन्धकार-मय बनायेगा। छात्रो को चाहिए कि वे अपने को आयुर्वेद का ही छात्र एव वैद्य ही समझे और अपने अन्दर आयुर्वेद के प्रति सद्भावना, प्रेम एव निष्ठा के भाव जाग्रत करके वैद्य समुदाय की सहानुभूति प्राप्त करें। उनकी ऐसी माँगो का, जिनमें आयुर्वेद के प्रति निष्ठा का भाव होगा और जिनसे वैद्य का सम्मान बढेगा—सदा और सर्वथा समर्थन किया जायगा। परन्तु वे अपने को जबरन डाक्टर बनाना चाहें और आयुर्वेद पाठ्य-क्रम अथवा आयुर्वेद विद्यालय को समाप्त करने की इच्छा रखें—तो न तो किसी ओर से उन्हें समर्थन मिल सकता है और न ही उनकी स्थिति में कोई सुधार हो सकता है। हमारा आग्रह है कि छात्र सद्बुद्धि से काम लें।

वाराणसी की हड़ताल

लखनऊ के राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय की ही भाँति वाराणसी हिन्दू-विश्वविद्यालय के आयुर्वेद छात्रो ने हड़ताल और अनशन जारी कर रखा है। वाराणसी का यह आन्दोलन विगत ४ अगस्त से तीव्रता के साथ चल रहा है। यो तो काशी विश्वविद्यालय के लिए मुदालियर आयोग की सिफारिशो के आधार पर राष्ट्रपति द्वारा जारी किये गए अध्यादेश—(जो कि इन पंक्तियो के लिखते समय तक लोकसभा मे विधेयक रूप मे विचारार्थ प्रस्तुत है) को ले कर विश्वविद्यालय के छात्रो में असन्तोष है और वे विविध प्रकार से अपने रोष को प्रकट कर रहे है। उपकुलपति के घर पर धरना, विधेयक के विरोध मे छात्रो का हस्ताक्षर आन्दोलन, कुछ छात्रो का आमरण अनशन, रजिस्ट्रार और अन्य प्रमुख अधिकारियो के निवास-स्थान पर पिकेटिंग आदि—इस आन्दोलन ने कई रूप अपनाये हैं।

विश्वविद्यालय स्थित आयर्वेद कालिज के छात्रो ने कुछ अन्य माँगो के साथ एक स्थायी प्रिंसिपल की नियुक्ति की माँग को ले कर हड़ताल की है। प्राय इन्ही माँगो को ले कर वहाँ ऐसा ही आन्दोलन पिछले अनेक वर्षो से चल रहा है। २० अप्रैल सन् '५७ से तो आयुर्वेद छात्रो की हड़ताल का ताँता-सा लगा चला आ रहा है। पिछली बार अगस्त '५७ के प्रथम सप्ताह मे रजिस्ट्रार द्वारा माँगे पूरी करने के लिखित आश्वासन पर हड़ताल समाप्त हुई थी। परन्तु स्थायी प्रिंसिपल की नियुक्ति न होने से १४ दिसम्बर '५७ को छात्रो ने फिर हड़ताल आरम्भ कर दी जो १४ फरवरी '५८ को समाप्त हुई थी। फिर भी छात्रो की माँगो की पूर्ति के विषय में कोई ठोस कदम नही उठाया गया—इसके परिणाम में पुन हड़ताल हो गई जो अब तक चल रही है।

आयुर्वेद के शिक्षण क्षेत्र मे यह कैसी विचित्र और दु खद स्थिति है, जिसका मनन करने से हृदय परितप्त हो जाता है। वाराणसी के आयुर्वेद छात्रो की अन्य माँगों को एक ओर छोड़ दिया जाय—परन्तु स्थायी प्रिंसिपल की नियुक्ति की माँग को तो प्रत्येक समझदार सर्वथा उचित ही कहेगा। यह खेदजनक बात है कि पिछले प्राय बारह वर्षों से विश्वविद्यालय के आयुर्वेद विद्यालय मे किसी स्थायी प्रिंसिपल की नियुक्ति नही की गई। इस प्रश्न पर छात्रो मे यदि असन्तोष होता है तो वह कदापि अनुचित नही है।

कहा जाता है कि स्थायी प्रिंसिपल की नियुक्ति इस कारण नहीं की जा सकी कि उस पद के भार को सम्भालने योग्य कोई अनुभवी एव सुयोग्य व्यक्ति विश्वविद्यालय को नही मिला। यह तर्क बड़ा हास्यास्पद प्रतीत होता है। कारण जो कुछ भी रहा हो, हमारी दृष्टि मे छात्रो की माँगें उचित है। उनकी यथासम्भव पूर्ति के साथ स्थायी प्रिंसिपल की नियुक्ति तो अविलम्ब ही की जानी चाहिए।

कुछ काल पूर्व स्थायी प्रिंसिपल के पद पर श्रीयुत डाक्टर उडुप्पाजी की सेवाए प्राप्त करने की चर्चा चली थी। हम इस प्रस्ताव का स्वागत करते है। डाक्टर उडुप्पाजी प्रभावशाली व्यक्तित्ववाले, बहुत कार्यकुशल, परिश्रमी, सुयोग्य और अनुभवी विद्वान् है। यह उल्लेखनीय है कि श्री उडुप्पाजी इसी कालिज के ए० एम० एस० है। आयुर्वेद और आधुनिक विज्ञान पर उनका समानाधिकार है। विदेश जा कर उन्होने शल्य का उच्च अध्ययन किया है। उनकी योग्यता का सबसे ताज़ा प्रमाण यह है कि हाल ही में भारत सरकार ने उनके ही नेतृत्व मे एक समिति नियुक्त की है जो देशभर में हो रहे आयुर्वेदोत्थान कार्यों का अध्ययन करेगी और अपने सुझाव प्रस्तुत करेगी। हम चाहते हैं कि केन्द्रीय सरकार डाक्टर उडुप्पाजी की सेवाए विश्वविद्यालय के आयुर्वेद कालिज को प्रदान करे ताकि वहाँ के छात्रो के असन्तोष का स्थायी रूप से समाधान हो सके। विशेषकर हम उदार राष्ट्रपति महोदय (जो कि काशी विश्वविद्यालय के विज़िटर भी है,) से प्रार्थना करेंगे कि वे इस विषय में हस्तक्षेप करके विश्वविद्यालय के आयुर्वेद छात्रो की बारह वर्ष पुरानी माँग की पूर्ति कराने की कृपा करे, ताकि आयुर्वेद शिक्षण क्षेत्र की अशान्ति का एक अध्याय समाप्त हो और काशी विश्वविद्यालय की प्रतिष्ठा सुरक्षित रह सके।

स्वास्थ्य और सुख की प्राप्ति का श्रेष्ठ साधन

आरोग्य-प्रकाश

—प्रत्येक परिवार में रहना अत्यन्त आवश्यक है !

भारत-प्रसिद्ध श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लिमिटेड के मैनेजिग डायरेक्टर वैद्यराज पण्डित रामनारायण शर्मा ने अनेक वर्षों के परिश्रम से इस महान ग्रन्थ—आरोग्य-प्रकाश—को स्वय लिखा है। इस ग्रन्थ का एक-एक वाक्य हजारो रुपयो का काम देता है। इसके पूर्वार्द्ध के व्यायाम, ब्रह्मचर्य, भोजन, दिन-रात्रि-ऋतुचर्या, सदाचार, उत्तम विचार आदि विषयो को पढकर और तदनुकूल आचरण कर सदा बीमार रहनेवाला व्यक्ति भी बिना दवा के ही नीरोग और तन्दुरुस्त हो जाता है।

इस ग्रन्थ के उत्तरार्द्ध मे शरीर मे पैदा होनेवाले सभी रोगो के कारण, निदान, रोग-लक्षण, चिकित्सा, पथ्यापथ्य आदि पर बडी ही सरल भाषा मे सुन्दर ढग से विवेचन किया गया है, जिनको पढकर विद्वान से लेकर साधारण पढे-लिखे व्यक्ति तक समान भाव से लाभ उठा सकते है। इसमे दवाओ के जो नुस्खे लिखे है, वे बहुत वर्षों के परीक्षित, कभी विफल नही होनेवाले और शास्त्रानुमोदित है। शहर हो या देहात, सब जगह इस पुस्तक के घर मे रहने से रोगी को तत्काल लाभ पहुँचाया जा सकता है। औषध तैयार करने का विधान तो इस पुस्तक मे बहुत ही श्रेष्ठ है, क्योकि लेखक इस विषय के निर्णयात्मक ज्ञाता है। इसके ११ सस्करणो मे १,०८,००० प्रतियाँ छपकर बिक चुकी है और बारहवें सस्करण मे २० हजार प्रतियाँ फिर छापी गयी है। इसी से इस ग्रन्थ की लोकप्रियता और उपयोगिता का स्पष्ट प्रमाण मिलता है। हिन्दी मे ऐसी पुस्तक दूसरी नही है, यदि यह कहा जाय तो अनुचित न होगा। प्रचार की दृष्टि से इस पुस्तक का मूल्य भी बहुत कम रखा गया है। ४६० पृष्ठो की विशाल पुस्तक का मूल्य मात्र रु० २·२५, डाक खर्च ०·८८।

नोट :—हमारे ४ निर्माण-केन्द्रो, २५० बिक्री-केन्द्रो तथा २५ हजार एजेन्सियों मे से कही भी यह पुस्तक खरीदी जा सकती है। इससे डाक खर्च की बचत होगी।

प्रकाशक

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

१, गुप्ता लेन, कलकत्ता–६

किलास या श्वित्र :: एक विवेचन

वैद्य रणजितराय

आजकल जो रोग उत्तरोत्तर बढते हुए मानव-समाज के लिए विभीषिका उत्पन्न कर रहे हैं उनमे श्वित्र भी एक है। यह सत्य है कि इसमे कोई शारीर कष्टप्रद लक्षण नही होता तथा इस से मृत्यु भी नही होती, परिणामतया राजयक्ष्मा, कैन्सर, महाकुष्ठ, मधुमेह, हृद्रोग आदि के समान इस रोग ने सरकारो तथा राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य-सस्थाओ का ध्यान आकृष्ट नही किया है। परन्तु इसका जितना प्रसार होता जा रहा है उसे देखते नि सशय अल्पकाल मे ही इसपर भी जनस्वास्थ्य के जवाबदारो को ध्यान देना ही पडेगा।

सभावित कारण

सभव है, श्वित्र के वर्तमान प्रसार का कारण तिक्त रस का अयोग किंवा हीन योग और इस विरोधी रस का योग न होने से एव साक्षात् भी चाय आदि के रूप मे अतियोग के कारण हुआ मधुर रस का अतियोग हो। कैन्सर, मधुमेह, हृदय एव धमनियो के रोग, अक्षत राजयक्ष्मा—ये सब आयुर्वेदमत से तिक्तरस के अयोग और/अथवा मधुर रस के अतियोग के ही कारण होनेवाले रोग है। तथापि, इसका प्रसार ठेठ वैदिक काल मे भी अन्यून ही रहा होगा। कारण, अथर्ववेद मे इस रोग मे उपयुक्त वनौषधियो का उपयोग दर्शानेवाले दो सूक्त (२३-२४) हैं। इन सूक्तो मे श्वित्र के लिए किलास शब्द का प्रयोग हुआ है। आयुर्वेदीय सहिताओ में भी यह सज्ञा इतनी ही प्रसिद्ध है। किलास की चिकित्सा ही पलित की भी चिकित्सा है, यह बात भी इन मन्त्रो मे सूचित है। अन्वेषको के लिए इन सूक्तो का विचार अति उपयोगी होने से इन्हे अर्थ-सहित उद्धृत करता हूँ।

वेदकाल में भी प्रसार

इन सूक्तो में किलास और पलित को चिकित्सा की दृष्टि से एक ही कोटि मे रखा है। इसका अर्थ यह है कि वैदिक ऋषि के मत से दोनों रोगो की सप्राप्ति भी समान ही होगी। वेदमन्त्र मे तो सप्राप्ति दी नही है। आयुर्वेदमत से पलित की सप्राप्ति आरम्भ में देता हूँ। आगे किलास की सप्राप्ति दी जाएगी। दोनो की तुलना रसप्रद हो सकती है।

पलित की सप्राप्ति सुश्रुत ने यह दी है

क्रोधशोकश्रमकृत शरीरोष्मा शिरोगत ।
पित्त च केशान् पचति, पलित तेन जायते ॥

सु नि १३।३७

तात्पर्य-पलित (बाल श्वेत होना) दो प्रकार का है—१ क्रोध, शोक या श्रम के कारण शरीरोष्मा की वृद्धि होती है। यह शिर में जाकर केशो के पका देती है। २ पुरुष पित्तप्रकृति हो तो उसके केश इतर प्रकृति के पुरुष की अपेक्षया शीघ्र पकते और श्वेत होते हे। प्रथम पलित वैकृत तथा द्वितीय वैकृत कहा जाता है। पित्तप्रकृति पुरुष के लक्षणो मे पलित एक लक्षण है। शार्ङ्गधर ने इसका जो एक पद्यात्मक लक्षण दिया है उसमें प्रथम ही लक्षण 'अकाले पलितै व्याप्त' है।

पलित की चिकित्सा में सुश्रुत ने दो तैल दिए हैं। (देखिए सु चि २५।२८-३७) इन मे प्रथम नीली तैल का उपयोग अभ्यङ्गार्थ होता है। दूसरे सैरेयकादि तैल का उपयोग नस्य और अभ्यङ्ग दो रूपो मे विहित है।

नीली तैल—नीलके पत्ते, भृङ्गराज, अर्जुनत्वक्, पिण्डीतक (मदनफल सदृश एक वृक्ष), बीजक तथा सहचर के पुष्प, (या श्यामा ?—पुष्प), हरीतकी, बिभीतक, आमलक, कमलिनी का कीचड (यह सर्व सम भाग है) ये द्रव्य तथा निर्माण के लिए लोहपात्र ले भृङ्गराज तथा त्रिफला के रस या क्वाथ मे तैल विधान से तैल बनाएँ। सिद्ध तैल को एक मास लोहपात्र मे रखें।

सैरेयकादि तैल—सहचर, जम्बू, अर्जुन तथा काश्मीरी (गम्भारी) के पुष्प, तिल, भृङ्गराज के बीज, आम्रास्थि (आम की गुठली), दोनो पुनर्नवा, कमलिनी का कीचड, कष्टकारी, कासीस, पिण्डीतक, विजयसार, त्रिफला, लोहचूर्ण, अञ्जन, यष्टी, नीलोत्पल इन में प्रत्येक का एक-एक तोला चूर्ण ले मोदयन्ती (मल्लिका—बकुन, मेहदी ?)

अथवा विजयसार के रस या क्वाथ मे कल्क बनाएँ। सात प्रस्थ विजयसार के क्वाथ एव एक आढक बिभीतक के तैल में लौहपात्र में तैलसाधन करें। रखे भी लोहपात्र मे ही।

अधिक विस्तार मूलग्रन्थ मे ही देखें। यहाँ द्रव्यो का निर्देश इसलिए किया है कि कदाचित् आथर्वणी श्रुति मे जिन द्रव्यो का उल्लेख हुआ है, उनमे कोई इन पाठो मे निर्दिष्ट हो।

इन तैलो मे प्रथम तैल तो निश्चित ही आजकल व्यवहार मे आनेवाले केशरञ्जक कल्पो के समान है। इससे केश मूल से काले उगते हो यह प्रतीत नही होता। कारण, इसका निर्माण सम्यक् हुआ या नही इसकी परीक्षा तन्त्रकार ने यह लिखी है

> आसन्नपाके च परीक्षणार्थं
> पत्र बलाकामवमाक्षिपेच्च।
> भवेद्यदा तद् भ्रमराङ्गनील
> तदा विपक्व विनिधाय पात्रे।

(पत्र का अर्थ टीकाकार ने पक्ष—पख दिया है)। तात्पर्य—तैल का पाक पूर्ण होने को आया हो तो उसकी परीक्षा के लिए इसमे बगुले का पख डाले। वह यदि भ्रमर के शरीर के समान नीलवर्ण हो जाए तो इसे सम्यक् पक्व जान कर लोहपात्र मे रखे।

अथर्ववेदीय सूक्त

पलित-सबन्धी इस विवेचन के प्रकाश मे अथर्ववेदोक्त कुष्ठ-पलित चिकित्सा सबन्धी सूक्त देखे। चार चार मन्त्रो के दो सूक्तो मे प्रथम का विषय बताया गया है—श्वेतलक्ष्म विनाशाय ओषधिस्तुति—किलास या पलित के रूप में शरीर पर हुए श्वेत मण्डलो के विनाश के लिए उपयुक्त औषधो की स्तुति (यथार्थ स्वरूप वर्णन)।

> नक्त जातास्योषधे रामे कृष्णे असिक्नि च।
> इद रजनि रजय किलास पलित च यत्॥

हे नक्त नामक ओषधे, हे रामा, कृष्णा, असिक्नी और रजनी नामक ओषधियो! किलास तथा पलित का तुम रञ्जन कर दो—इन के मण्डलो के स्थान पर प्राकृत वर्ण ला दो।

> किलास च पलित च निरितो नाशया पृषत्।
> आ त्वा स्वो विशता वर्ण परा शुक्लानि पातय॥

हे ओषधे, तू किलास, पलित और पृषत् रोगो को इस शरीर से पृथक् कर दे। हे रोगी, तेरा अपना प्राकृत वर्ण तुझे पुन प्राप्त हो, शुक्ल वर्ण के कुष्ठ, पलित तथा पृषत् को दूर कर दे।

पृषत् शब्द लौकिक सस्कृत में बिन्दुओ के लिए प्रसिद्ध है। सो, श्वेत वर्ण के बिन्दुओ को यहाँ पृषत् कहा है। शेष एक प्रदेश पर मण्डल रूप में स्थित या सर्वाङ्ग स्थित श्वित्र को किलास कहा है। चिकित्सा में केवल रग बदलने की बात नही है, रोगी का प्राकृत वर्ण इस चिकित्सा से लौट आता है, इतनी प्रभावी चिकित्सा यह है।

> असित ते प्रलयनमास्थानमसित तव।
> असिक्न्यस्योषधे निरितो नाशया पृषत्॥

हे ओषधि, तेरा शरीर मे लीन होना (प्रलयन) श्वेत वर्ण का नाशक है। तेरा शरीर पर रहना (आस्थान) श्वेत वर्ण का नाशक है। हे ओषधि, तू असिक्नी नामवाली है। पृषत् रोग को इस शरीर से दूर कर दे।

आभ्यन्तर उपयोग द्वारा शरीर के रस रक्त मे लीन हो कर रोग का निर्मूल करना प्रलयन शब्द से सूचित है। आस्थान शब्द तो स्पष्ट ही बाह्य उपयोग का वाचक है। इस प्रकार यह वनौषधि जो भी हो उसका बाह्य और आभ्यन्तर उभयथा उपयोग पृषत्, किलास तथा पलित को हरने वाला है।

> अस्थिजस्य किलासस्य तनूजस्य च यत् त्वचि।
> दूष्या कृतस्य ब्रह्मणा लक्ष्म श्वेतमनीनशम्॥

वैद्य कहता है किलास अस्थिधातुगत हो, तनु स्थित हो या त्वचा पर हो, दूषी (विष) द्वारा उत्पादित श्वेत चिह्न (मण्डल) को ब्रह्म नामक वनौषधि द्वारा मै नष्ट करता हूँ।

चतुर्वेद भाष्यकार जयदेव विद्यालंकार जी ने 'तनूज' का अर्थ किया है त्वचा और अस्थि के मध्य मास मे उत्पन्न। आयुर्वेद की दृष्टि से यह ठीक ही है। अन्त में त्वचा या रस (रस-रक्त) गत किलास का उल्लेख है, सब से पूर्व अस्थि का तो मध्य मे मासधातु का ग्रहण सगत ही है। किंवा तनूज का अक्लिष्ट अर्थ सर्वाङ्ग की त्वचा पर व्याप्त यह भी ले सकते हैं।

अब चौबीसवाँ सूक्त देखिए। इस सूक्त की देवता (प्रतिपाद्य विषय) आसुरी नामक वनस्पति है।

> सुपर्णो जात प्रथमस्तस्य त्वं पित्तमासिथ।
> तदासुरी युधा जिता रूप चक्रे वनस्पतीन्॥

सुपर्ण प्रथम (श्रेष्ठ) औषध है। हे साचित औषध-कल्प, तू उसका (सुपर्ण का) पित्त है। वह (सुपर्ण का पित्त) और आसुरी नामक ओषधि कूटकर सेवनोपयुक्त बनाई जाती है। (उसके साथ अन्य वनस्पतियो का मिश्रण किया जाता है)। इस प्रकार यह आसुरी उन वनस्पतियो को भी औषधोपयुक्त रूप दे देती है।

सुपर्ण गरुड पक्षी का नाम है। उसके पित्त का उपयोग कदाचित् यहाँ विहित है। गत सूक्त मे जो नक्त ओषधि दी है, उसके अर्थों मे एक अर्थ जयदेव शर्माजी ने निघण्टु के आधार पर उलूक या प्रसह वर्ग के पक्षी दिया है। प्रसह वर्ग मे गृध्र उलूक काक श्येन आदि पक्षी पठित है। गरुड सहिताओ म तो निर्दिष्ट नही परन्तु उसे भी इस वर्ग म लिया जा सकता है। गरुड किस पक्षी को कहा जाए यह निर्णय करना चाहिए। सुपर्ण शब्द यदि किसी वनौषधि का वाचक लिया जाए तो पित्त शब्द से उसके पित्त सदृश स्राव या रस का ग्रहण करना चाहिए। यह भी एक कल्पना की जा सकती है कि अग्रेजी 'पिथ शब्द वृक्ष या वनस्पति की त्वचा के अन्दर के भाग के लिए व्यवहृत होता है। मन्त्रगत पित्त शब्द कदाचित् उसका मूल हो। तात्पर्य—पित्त शब्द से सुपर्ण-नामक वनौषधि का अन्तर्गत काष्ठ कदाचित ग्राह्य हो। सुपर्ण शब्द सूर्य का भी वाचक है। औषध लगाकर रुग्ण को सूर्यताप मे बैठाने का प्रचार है। कृत्रिम किरणो का भी उपयोग सोलेरियम में किया जाता है। किं बहुना अब अगला मन्त्र देखे।

आसुरी चक्रे प्रथमेद किलासभेषजमिद किलास-नाशनम्।
अनीनशत् किलास सरूपामकरत् त्वचम् ॥

ऊपर कहा है कि आसुरी-नामक वनौषधि प्रधानतया ले कर अन्य वनस्पतियो को उससे सयुक्त किया जाता है। प्रस्तुत मन्त्र मे यह बात अधिक विशद रूप मे कही है।—आसुरी किलास के लिए प्रथम (एक ही) औषध है। उससे यह किलासभेषज या किलासनाशन कल्प तय्यार किया जाता है। इसके उपयोग से किलास नष्ट होता है तथा रुग्ण त्वचा स्वस्थ त्वचा के समान रूप (वर्ण) वाली—सरूपा—होती है।

किलासभेषज तथा किलासनाशन ये दो पृथक् शब्द कदाचित् बाह्य और आभ्यन्तर भेद से द्विविध औषध प्रयोग के निर्देशार्थ प्रयुक्त हुए हैं।

सरूपा नाम ते माता सरूपा नाम ते पिता।
सरूपकृत् त्वमोषधे सा सरूपमिद कृधि ॥

त्वचा को सरूप करनेवाली होने से जिस का नाम ही सरूपा है उस अन्य वनौषधि को किंवा उल्लिखित आसुरी आदि मे से किसी को सरूपा विशेषण देकर ऋषि उसकी स्तुति करते है—हे ओषधे, तेरी माता सरूपा है, तेरा पिता सरूपा है। तू रुग्ण अवयव को सरूप करने वाली है। इस मण्डल को सरूप कर।

पिता शब्द मूल का वाचक है। वैदिक तथा लौकिक सस्कृत के रहस्यो को समझनेवाले इस अर्थ को अच्छे प्रकार से समझ सकेंगे। पान अर्थ की 'पा' धातु है। उसके पिबति आदि रूप हैं। वृक्ष वाचक 'पादप' शब्द में यह धातु है। पाद या मूल से भूमिगत जल का पान या ग्रहण वृक्ष करता है, अत उसे पादप कहा जाता है। रक्षण अर्थ की पा धातु भी है जिससे पिता शब्द बनता है। पानार्थक पा धातु से वैदिक वाङ्मय मे पिता शब्द व्युत्पन्न देखा जाता है, जिसका अर्थ—पिबति अनेन इति पिता—इस व्युत्पत्ति से मूल (जड) किया जाता है। अथर्ववेद में ही दो सूक्त 'शर' के मूत्रल गुण की महत्ता दर्शानेवाले विद्यमान हैं। उनमे 'शर का पिता यह मूल शब्द है। उसका अर्थ शरमूल लेना ही यथार्थ है। वही इसका विशेषण 'पर्जन्य' आया है। पर्जन्य मेघ का नाम है, मेघ शब्द 'मिह्' धातु से बना है, जिससे मेढ्र, मेहन, प्रमेह, आदि शब्द बनते है। इस शब्दसाम्य से मूत्र प्रवर्तन करानेवाला यह अर्थ मेघ का लिया जानो सगत है। आगे 'शतवृष्ण्य' विशेषण दिया है, जिसका अर्थ प्रभूत मूत्र विसर्जन करानेवाला, यही लेना सगत होता है। किं बहुना, 'सरूपा वनस्पति का पिता' इन शब्दो का अर्थ होगा कि उसका एक उपयोगी अग मूल है।

पिता शब्द के इस अर्थ के आधार पर ही माता का अर्थ भी लेना होगा। मान (मापना) अर्थ की मा धातु से यह बनता है। निर्माण अर्थ भी इसका है, पर वह 'निर्' उपसर्ग के योग से व्यक्ततर होता है। जननी-वाचक माता शब्द के मूल मे यही अर्थ है। प्रस्तुत मन्त्र मे मापन अर्थ में मा धातु का ग्रहण हुआ है। वृक्ष-वनस्पति की शाखाएँ अवकाश को जानो मापती हुई फैलती है, अत उन्हें 'माता' कहा जाता है। किं बहुना, सरूपा वनस्पति के उपयुक्त अङ्ग मूल तथा शाखा दोनों है। अब अन्तिम मन्त्र देखें।

श्यामा सरूपकरणी पृथिव्या अध्युद्भृता ।
इदमूषु प्रसाधय पुना रूपाणि कल्पय ।।

रूप शब्द संस्कृत मे श्वेत, कृष्ण आदि वर्णों के लिए प्रसिद्ध है[1]। श्यामा ओषधी सरूप करनेवाली है। पृथिवी से ऊपर यह ऊँचाई मे फैलनेवाली होती है। हे श्यामा ओषधि, तू पृषत्, किलास या पलित से पीडित इस रुग्ण के शरीर की चिकित्सा कर। इसके प्राकृत रूप को पुन उत्पन्न कर।

इन दोनो सूक्तो में पृथक्-पृथक् अनेक वनौषधियाँ निर्दिष्ट हुई है, यही प्रतीत होता है। जयदेव शर्माजी ने निघण्टुओ के आधार पर यहाँ कहे एक-एक नाम से आयुर्वेद की कौन-कौन-सी औषधि ग्राह्य है, उसका उल्लेख किया है। इनमे कोई भी वनस्पति श्वित्र आदि पर प्रसिद्ध नही है। हाँ, आसुरी का अर्थ उन्होने राई या लाल सरसों दिया है। वह कथचित् चिन्तनीय हो सकता है। कारण, बाह्य उपयोगार्थ जितने भी कल्प अर्वाचीन शास्त्र मे निर्दिष्ट है वे सभी अग्रेजी मे जिन्हे 'काउटर इरिटेंट'[2] कहते है उस वर्ग के है। त्वचा पर रक्तिमा उत्पन्न करने से आरम्भ कर स्फोट (छाले) उत्पन्न करने तक की विभिन्न अवस्थाएँ इनके लेप से होती है। राई या लाल सरसो की भी यही क्रिया होती है।

शर्माजी-निर्दिष्ट वनौषधियो में बाकुची नही है। चरकादि काकोदुम्बरिका का बाह्याभ्यन्तर उपयोग अति प्रशस्त बताया है। इस विषय का निर्देश हम आगे करेंगे। पर इस द्रव्य का भी नाम शर्माजी की सूची में नही है। सत्य यह है कि, निघण्टुओ मे उन्हे ये द्रव्य मिले नही।

'असिक्नी' शब्द के विषय मे चतुर्वेद भाष्यकार जी ने लिखा है कि इस नाम की कोई औषध प्रसिद्ध नही है।

१—आयुर्वेदीय क्रियाशारीर के चिन्तको के लिए यह वस्तु बहुत उपयोगी हो सकती है। वर्तमान विज्ञान मे कहा जाता है कि हम आँखो से पदार्थ को देखते है। परन्तु वास्तव में तो नव्यमत से भी उस पर पड़कर प्रतिक्षिप्त होती नील, पीत, श्वेत आदि किरणे (संस्कृत मे रूप) ही हम देखते हैं। नवीन विज्ञान के शब्दो में विरोधाभास है। प्राचीन वाङ्मय मे सत्यार्थ सूचक रूप शब्द का व्यवहार ही हुआ है। बाह्य और आभ्यन्तर प्रकाश मिलकर रूप प्रतीति कराते हैं, यह भी आयुर्वेदशास्त्रसिद्ध है।

२—इसका विशद अर्थ जानने के लिए देखिए। आयुर्वेदीय पदार्थ विज्ञान (वैद्यनाथ प्रकाशन)।

तथापि यह असि-क्नी असिक्लिम्बी (?) प्रतीत होती है, जो व्रण-दोष नाशक है।

इस विषय मे थोडा विचार किया जा सकता है। सूक्त मे रात्रिवाचक नक्त तथा रजनी शब्द आए है। आयुर्वेद मे रात्रिवाचक सभी नाम हरिद्रा, दारुहरिद्रा के वाचक है। वैदिक निघण्टु में 'असिक्नी' शब्द भी रात्रि का पर्याय है। सो सभव है नक्त, रजनी, असिक्नी किसी एक ही वनस्पति के नाम हो।

संस्कृत वाङ्मय की रसप्रद शैली

ऊपर 'पिता' शब्द के अर्थ की स्पष्टता करते संस्कृत भाषा की जो शैली दर्शाई है वह रजनी शब्द में भी स्पष्ट देखी जा सकती है। मन का अनेक प्रकार से रञ्जन करने वाली होने से रात्रि को रजनी कहा जाता है। परन्तु 'रञ्ज' धातु या उससे बने एव धातु पाठ मे इस धातु का अर्थ द्योतित करने के लिए प्रयुक्त 'राग' शब्द का अर्थ रगना भी होता है। हरिद्रा रग के कार्य में प्रयुक्त होती होने से उसे भी रजनी कहा जाता है। रात्रि वाचक अन्य शब्दो के अर्थों म हरिद्रा के साथ ऐसा साम्य न होने पर भी उन सब का समान रूप से हरिद्रा के लिए उपयोग होता है। श्वेत होने के कारण मध्यम पाण्डव और अर्जुन वृक्ष दोनो को अर्जुन (अर्थ श्वेत) कहा जाता है। परन्तु मध्यम पाण्डव के पार्थ आदि पर्याय भी इसी प्रकार अर्जुन वृक्ष के वाचक है।

रञ्जक पित्त और रक्ताग्नि

'रञ्जन' शब्द के प्रसग से आयुर्वेद का एक सत्य समझ लें। रञ्जन का अर्थ प्रसन्न करना—प्रसादन—है। प्रसादन शब्द का अन्य भी प्रसिद्ध अर्थ है—निर्मल करना (प्रसीदति' आदि शब्दो में इसका यह अर्थ प्रसिद्ध है)। प्रसादन का यह द्वितीय अर्थ होने से रञ्जन का भी यह दूसरा अर्थ सिद्ध है। इस प्रकार इस रञ्जन शब्द का अर्थ निर्मलीकरण भी होता है। शरीरगत पाँच पित्तो मे एक रञ्जक पित्त मे रञ्जन का प्रसादन अर्थ ही है। यह रञ्जक पित्त यकृत्प्लीहा में रहता है। रस-रक्त में वायु के कोप से जो श्यावारुण वर्ण, पित्त के प्रकोप से हरित-हारिद्र आदि वर्ण तथा कफ के कोप से शुक्लत्व आदि वर्ण आ जाते है वे रञ्जक पित्त की क्रिया से दूर होते है। उसका कारण यह है कि यह पित्त रस-रक्तगत दूषित

कुछ वातवर्गीय, पित्तवर्गीय तथा कफवर्गीय द्रव्यों का मथन (विघटन) कर उन्हें मल रूप मे बाहर निकाल देता है। इस प्रसाधन के कारण रस-रक्त मे उनका प्राकृत वर्ण पुन अभिव्यक्त होता है। इस क्रिया को रञ्जन (रचना—रस-रक्त को प्राकृत वर्ण मे लाना) कहते है। इस प्रकार रञ्जन शब्द के निर्मलीकरण तथा प्राकृत वर्णापादन ये दोनो अर्थ होते है। इनका करनेवाला होने से रञ्जक पित्त रञ्जक पित्त कहाता है। इसका कार्य रक्त की उत्पत्ति नही, शुद्धि है। यकृत्प्लीहा मे स्थित रक्ताग्नि का कर्म रक्त का उत्पादन है। आयुर्वेदीय क्रिया शारीर के मत से रञ्जक पित्त तथा रक्ताग्नि के ये पृथक् कर्म स्पष्ट समझ लेने चाहिए। रञ्जक का कुछ साम्य नवीनो के निर्विषीकरण (डीटॉक्सिकेशन) से देखा जा सकता है।

आधुनिको ने रक्त की शुद्धि फुफ्फुसो में होती बताई है। आयुर्वेद-मत से रक्त की शुद्धि यकृत्प्लीहा मे होती है। कल्पना की जा सकती है कि यकृत्प्लीहा रक्त मे ऐसा परिवर्तन कर देते है कि स्थावता की जनक कार्बन डाइऑक्साइड वायु फुफ्फुस मे आकर सरलता से विच्युत हो जाती है।

शर्मा जी द्वारा निघण्टु के आधार पर दिए श्यामा शब्द के अनेक अर्थों में एक नीलिनी (नील) है। हम ऊपर देख आए है कि सुश्रुत ने इसका पलित मे उपयोग लिखा है। शर्माजी ने एक रसप्रद बात लिखी है सायण ने कौशिक सूत्र के अनुसार भृङ्गराज, हरिद्रा, इन्द्रवारुणी और नीलिका इन को पीस कर श्वेत कुष्ठ पर लगाने का सकेत किया है।

श्वित्र का निदान

सुश्रुत ने श्वित्र या किलास को कुष्ठ का प्रकार ही कहा है—किलासमपि कुष्ठविकल्प एव—सु नि ५।१७। हृदयकार ने भी कुष्ठैक सभव श्वित्रम्—अ हृ नि १४।३७[1] उसका समर्थन किया है। सुश्रुत के वचन में आए 'अपि' शब्द से डल्हन ने कई टीकाकारो का यह मन्तव्य दर्शाया है कि सभी श्वित्र कुष्ठ के भेद विशेष नही भी होते। कोई कुष्ठ-भिन्न भी होने सभव है।

हृदयकार का पद्य माधव ने भी उद्धृत किया है। उस की मधुकोष टीका में कुष्ठैक सभव शब्द से चिकित्सा के साम्य का भी ग्रहण किया है। कारण, कुष्ठोक्तं कुष्ठोक्त किलासम् यह आचार्य वचन है।

कुष्ठ का प्रकार होते हुए भी इसके पथ्य निदान और चिकित्सा में कुष्ठ से कुछ भिन्नता है। अतएव चरक ने कुष्ठ का निदान देने के अनन्तर श्वित्र का पृथक् निदान (हेतु) दिया है। वह कहता है—

> वचास्यतथ्यानि कृतघ्नभावो
> निन्दा सुराणा गुरुधर्षण च।
> पापक्रिया पूर्वकृत च कर्म
> हेतु किलासस्य विरोधि चान्नम्॥
>
> च चि ७।१७७

इसी अध्याय मे कुष्ठ के जो निदान कहे है उनमें पापकर्म की गणना तो है, पर पूर्वजन्मकृत पापकर्म की गणना नही है। विरुद्ध अन्नपान का यहाँ विशेषतया उल्लेख हुआ है। 'विरुद्ध' शब्द का विस्तृत अर्थ तथा उसके सभी प्रकार यहाँ ग्राह्य है। ये अध्ययन–अध्यापन में बहुत प्रख्यात नही है। व्यवसाय में तो उन पर ध्यान दिया ही नही जाता। इस प्रसग मे च सू २६।८०-१०६ मे आए इस विरुद्धाहार के प्रकरण का अनुशीलन किए विना श्वित्र का विचार पूर्ण नही होता, यह समझ लेना चाहिए। प्रसगान्तर के भय से उस लम्बे प्रकरण को यहाँ उद्धृत नही करता।

पूर्वजन्मकृत कर्म की कारणता

पूर्वजन्मकृत पापकर्म के विषय मे कुछ वक्तव्य अपेक्षित है। रोगो के वर्गीकरण मे दोषज, कर्मज तथा उभयज यह वर्ग भी निर्दिष्ट है। रोगारम्भक कारण अल्प हो और उसकी तुलना में रोग के लक्षण तथा पीडा अधिक हों तो इसमे पूर्वकृत कर्म को कारण माना जाता है। जीवित शरीर को ही आयुर्वेद मे रोग और चिकित्सा का अधिष्ठान मानते हुए भी आत्मा का पृथक् स्वीकार विशेषत इसी बात को समझाने के लिए किया गया है कि कर्मज रोग सूक्ष्म शरीरयुक्त आत्मा के साथ ही पूर्व शरीर से इस शरीर में सक्रान्त होते है।

पूर्व कर्म कैसे इस शरीर में रोगोत्पत्ति करते हैं इसकी कुछ स्पष्टता आवश्यक है। श्वित्र का ही उदाहरण स्पष्टता के लिए उपयोगी हो सकता है। इस रोग से पीडित व्यक्ति आज जनता में प्रत्यक्ष या परोक्ष तिरस्कार का भाजन होता है। कदाचित् उससे विवाह करने को कोई

१—कुष्ठानामेक समान सभवो यस्य तत्—अरुणदत्त। इस पद्य की टीका में तोडर ने श्वित्र का श्वेतकुष्ठ पर्याय दिया है। पूर्व ग्रन्थो में यह नाम नहीं आया है।

उन्माद नहीं होता। एवं, वह स्वय लज्जित होकर घर से बाहर निकलता नहीं। इससे अमुक मानसक्लेश रूप को होता है। सभव है, रोगी ने गत जन्म में किसी व्यक्ति को ऐहिसुख करने से रोका हो, अथवा किसी रूप में तिरस्कार आदि वही कष्ट दिए हो जिन्हे वह श्वित्र के कारण इस जन्म मे भोग रहा है। औरो को दिए इन कष्टो के फल रूप मे सृष्टि-कर्ता ने उसे यह रोग दिया, जिसके कारण वह स्वय इन कष्टो को भोगने के लिए बाध्य हुआ।

हृदयकार ने श्वित्र की चिकित्सा त्वरित करने का उपदेश करते हुए इसकी बीभत्सता को प्रथम स्थान दिया है। देखिए

कुष्ठादपि बीभत्स यच्छीघ्रतर च यात्यसाध्यत्वम्।
श्वित्रमतस्तच्छान्त्यै यतेत दीप्ते यथा भवने॥

अ हृ चि २०।१

—श्वित्र कुष्ठ की अपेक्षया भी अधिक बीभत्स होता है, एव उसकी तुलना में बहुत शीघ्र असाध्य कोटि मे पहुँच जाता है, अत उसकी शान्ति के लिए उसी प्रकार तत्क्षण प्रयास करना चाहिए जैसे जलते हुए गृह के लिए किया जाता है।

श्वित्र की असाध्यता उसके उत्तर धातुओ मे अनुप्रवेश के कारण होती है। उसके कारण उसके स्वरूप में भी कुछ विशिष्टता आ जाती है। उपचार आरम्भ करते हुए यह देखने का प्रचार कदाचित् नही है कि श्वित्र का प्रवेश किस धातु तक हुआ है। सप्रति, आयुर्वेद का गम्भीर स्वाध्याय तथा प्रवचन आरम्भ हुआ है, और उसके सिद्धान्तो को क्रिया में लाने की प्रवृत्ति भी बढ रही है, ऐसे समय श्वित्र का विचार करते हुए भी उसके भेदो का विचार करना चाहिए।

किलास, दारुण, अरुण और श्वित्र ये श्वित्र के पर्याय हैं। निर्णय-सागरी चरक मे दिए पाठान्तर मे दारण और अरण नाम आए है। मधुकोष में उद्धृत भालुकि-वचन में वारुण सज्ञा आई है। तथापि इसके प्रसिद्ध नाम श्वित्र और किलास ही हैं। तोडर के समय से अथवा उससे कुछ पूर्व से अद्यावधि प्रचलित नाम श्वेतकुष्ठ है।

किलास और श्वित्र रोग की दो अवस्थाएँ

कुष्ठ और किलास का अन्तर बताते हुए सुश्रुत जी ने कहा है कुष्ठकिलासयोरन्तर—त्वग्गतमेव किलासमपरि-स्रावि च. —सु नि. ५।१७। अर्थात् यह त्वग्गत (रसगत) ही होता है। एव इसमें किसी प्रकार का स्राव नहीं होता। कुष्ठ उत्तरोत्तर धातुओ में अनुप्रविष्ट होता जाता है। उस मे अनन्तर काल में स्राव भी होता हैं। डल्हन और गयदास की टीका में भोज का निम्न वचन उद्धृत किया गया है, जो इस वस्तु को विशद करता है।—

त्वग्गतं तु यदस्रावि किलास तत्प्रकीर्तितम्।
यदि त्वचमतिक्रम्य धात्वानन्यानाहते॥
हित्वा किलाससज्ञान् कुष्ठ सज्ञा लभेत तत्॥

अर्थात् श्वित्रारम्भक दोष यदि त्वचा या रसधातु को छोड इतर धातुओ में प्रविष्ट हो जाएँ तो रोग को श्वित्र या किलास न कह कर कुष्ठ ही कहा जाता है। डल्हन ने एकीयमत दर्शाया है कि, दोष केवल त्वग्गत हो तो इसे किलास कहते है, अन्य धातुगत होने पर इसे श्वित्र कहा जाता है। गयदास ने भी चरक के आगे कहे जानेवाले वचन को उद्धृत कर उसका यही अर्थ बताया है कि चरक भी रसगत या त्वग्गत दुष्टि को किलास कहते हैं, तथा दुष्टि उत्तर धातुओ में प्रविष्ट होने पर उसके धातुभेद से अन्य नाम होते है। इसी आशय का समर्थक भालुकि-वचन भी उसने उद्धृत किया है। अन्त मे गयदास ने कहा है चिकित्सा-भेदोऽपि श्वित्रकिलासयोर्भेदम् कथयत्येव। श्वित्रस्य महती लघ्वी किलासस्य—अर्थात् श्वित्र की अधिक चिकित्सा करनी पडती है, किलास की अल्प। इस चिकित्सा भेद को देखते हुए भी दोनो दुष्टियो का पार्थक्य सिद्ध ही है। इस विवेचन को स्वीकार करे तो 'रस से उत्तर धातुओ मे प्रविष्ट होने पर विकार का नाम कुष्ठ हो जाता है' इस भोज-वचन का अर्थ यह किया जा सकता है कि उसे श्वेत कुष्ठ या श्वित्र नाम दिया जाता है।

मधुकोषकार तथा चक्रपाणि ने चरक-सुश्रुत के वचनो का समन्वय यो किया है कि, यह रोग यो तो त्वग्गत (रसगत) ही होता है, कारण, सुश्रुत ने ऐसा कण्ठरव से विधान किया है। तथापि चरक ने जो रक्तादि धातुओ मे दोष का आश्रय होने पर तत्-तत् स्वरूप-भेद होता है यह कहा है उसका तात्पर्य यह है कि, रोग इन धातुओं तक नही पहुँचता, केवल इस रोग में दुष्टि रक्तादि की भी हो जाती है, जिससे त्वचा के वर्ण में भेद आ जाता है। मेरी नम्र समति में यह क्लिष्ट कल्पना है। पूर्वोक्त विवेचन के अनुसार रसगत रोग का नाम किलास तथा उत्तर धातुओ में प्रविष्ट विकार का नाम श्वित्र प्राप्त होता है, यही मत स्वीकरणीय

प्रतीत होता है। इस मत की पुष्टि इस लेख के प्रारम्भ में दी प्राथर्वणी श्रुति से होती है, जिसमे किलास को अस्थि धातु तक स्थित कहा है। उपलब्ध प्रायुर्वेदीय सहिताम्रो में तो इसे केवल मेद तक पहुँचाया है।

इस विवेचन के प्रकाश में अब श्वित्र या किलास के दोष-भेद तथा धातुभेद से भेद देखे। यह रोग प्राय तीनो दोषो से होता है। (देखिए च चि ७।१७३), प्र हृ नि १४।३७)। चरक के वचनो म प्राए 'प्राय' शब्द का अर्थ चक्रदत्त ने यह दिया है कि, यह क्वचित् एक-दोषज, द्विदोषज भी होता है।

किलास या श्वित्र के भेद

किलास या श्वित्र त्रिदोषज होता है इसके दो अर्थ सभव हैं प्रत्येक रोगी म देखे जानेवाले रोग मे तीनो दोषों का कोप होता है किवा किसी रोगी को वातप्रधान किलास होता है, किसी को श्लेष्मप्रधान और किसी को पित्तप्रधान। इस विषय की स्पष्टता तन्त्रकारो ने की नही है कि किलास त्रिदोषज है इस का दो अर्थों म कौन अर्थ लिया जाय? सहिताम्रो ने प्रत्येक दोषज किलास के जो लक्षण दिए हे उनका उल्लेख किया जाता है[1]।

वातप्रधान किलास के मण्डल तनु (पतली त्वचा वाले) परुष (खर) तथा रूक्ष, वर्ण मे अरुण या रक्त या कृष्णारुण या ताम्र एव स्वभाव से परिध्वसी होते हैं—घिसने से उनसे रज जैसा पडता है। **पित्तप्रधान किलास** के मण्डल रक्त कमल वर्ण के सदृश रक्तवर्ण या ताम्रवर्ण, दाहयुक्त तथा रोमविध्वसि (जिसके अन्तर्गत रोम झड जाएँ ऐसे) होते हैं। दाहयुक्त का अर्थ यह है कि दाह की प्रतीति घर्षण के पश्चात् होती है।—**सत्यक्षविव दाहवत्** (भालुकि)। **कफप्रधान किलास** के मण्डल स्निग्ध, बहल (घन, स्थूल त्वचावाले) कण्डूयुक्त, गुरु (भारीपन की जिसमे रोगी को प्रतीत हो ऐसे) एव पाण्डुता लिए श्वेतवर्ण होते हैं। यहाँ जो अरुण, रक्त या ताम्रवर्ण बताए हैं उनका अर्थ यह है कि, श्वेतता मे इन वर्णों की झलक होती है। शेष कफज श्वित्र पूर्णतया श्वेत होता है।

क्रमाद् रक्त मासमेद सु चादिशेत (प्र हृ नि १४।३९)। ऊपर दोषभेद से जो लक्षण बताए हैं उनके विषय मे इतनी विशेषता और जाननी चाहिए कि वातप्रधान श्वित्र रक्ताश्रित होता है, पित्तप्रधान मासाश्रित तथा कफ-प्रधान मेद-आश्रित। **गुरु तच्चोत्तरोत्तरम** (च चि ७।१७४)—इन तीनो भेदो मे उत्तरोत्तर श्वित्र या किलास गुरु होता हैं। चक्रपाणि ने गुरु का अर्थ अनुपक्रम (प्रत्याख्येय) दिया है।

जैसा कि ऊपर कह आए है, रक्तादि धातुम्रो मे दुष्टि का जो यहाँ निर्देश किया है उसके सबन्ध मे आचार्यों में मतभेद है। एक मत यह है कि किलास त्वचा या रस धातु म ही होता है। तथापि यहाँ जो इतर धातुम्रो का नाम ग्रहण किया है उसका तात्पर्य इतना ही है कि इस रोग मे अन्य धातुम्रो की भी दुष्टि होती है, पर रोग वहाँ तक नही गया होता। द्वितीय और अधिक माननीय मत यह है कि दोष और रोग दोनो अन्य धातुम्रो तक पहुँचते है और तब इन के लिए कुष्ठ (श्वेत कुष्ठ, श्वित्र) यह अभिधान प्रयुक्त होता है।

सुश्रुत की गयदास की टीका तथा माधव निदान की मधुकोष टीका में भालुकि का जो मत उद्धृत किया है, उसमें धातुभेद से नामान्तर होने का स्पष्ट उल्लेख इन शब्दो में किया है **दारुण तत्तु विज्ञेय मांसधातु समाश्रयम्। मेद श्रित भवेच्छ्वित्र दारुण रक्तसश्रयम्॥**—नाम, रोग रक्तगत होता है तो इसे दारुण कहते है, मासगत होता है तो वारुण तथा मेदोगत होता है तो श्वित्र। पारिशेष्यात् रोग रसगत (त्वग्गत) होता है तो इसे किलास कहा जाता है। चरक वचन को भी मधुकोषकार ने इसी अर्थ मे घटाया है। किं बहुना, किं बहुना, यह विचार यही छोडकर अब रोग के अन्य भेदो पर दृष्टिपात करते है।

प्रकारान्तर से श्वित्र के भेद

गयदास तथा मधुकोषकार ने भोज का वचन उद्धृत कर श्वित्र के अन्य भेद भी नीचे दिए बताए हैं।

श्वित्र तु द्विविध प्रोक्त दोषज व्रणज तथा।
तत्र मिथ्योपचाराद्धि व्रणस्य व्रणज स्मृतम्॥

श्वित्र के दो भेद है **व्रणज तथा दोषज**। व्रण का मिथ्या उपचार करने से जो श्वित्र होता है उसे व्रणज कहते है। शारीर दोषो के कोप से होनेवाले को दोषज कहा जाता है।

१—**स्थल** च चि ७।१७३-१७४, प्र हृ नि १४।३७३९ (अरुणदत्त टीका सहित), सु नि ५।१७ (इस पर गयदास की टीका में धृत भोजवचन सहित), मधुकोष।

दोषज च द्विधा प्रोक्तमात्मजं परजं तथा ।
परजान्तजनस्पर्शादिक् तत् परजमुच्यते ।।
तयात्मज विजानीयाद् यद्देहेऽवनिलादिजम् ।।

दोषज श्वित्र या किलास के दो भेद है—परज तथा आत्मज। वातादि शारीर दोषो के वैषम्य से जो श्वित्र होता है उसे आत्मज कहते है तथा रुग्ण पुरुष के शरीर, स्नान, आसन आदि के स्पर्श से जो श्वित्र होता है उसे परज कहते है। आधुनिक विज्ञान श्वित्र को स्पर्शगम्य नही मानता। आयुर्वेद की मूल संहिताओ में भी इसे ऐसा नही माना है। तथापि भोज भी कम आप्त नही है। इस विषय का विचार होना चाहिए। हृदयकार ने श्वित्र के इस प्रकार संचार का कण्ठरव से निर्देश नही किया है। तथापि, कुष्ठ के निदान के अनन्तर श्वित्र की विचारणा करके ही उसने संचारी रोगो का निर्देश करता पद्य दिया है—

स्पर्शैकाहारशय्यादि सेवनात् प्रायशो गदा ।
सर्वे संचारिणो नेत्रत्वग्विकारा विशेषत ।।

इससे अनुमान होता है कि, श्वित्र को भी हृदयकार संचारी (संक्रमक) मानते हैं। माधव ने भी संक्रमक रोग विषयक सुश्रुत के दो पद्य श्वित्र के प्रकरण के अनन्तर ही दिए है। विज्ञ वाचक विचार करें।

श्वित्र की साध्यासाध्यता

श्वित्र के मण्डलो में रोम अभी श्वेत या रक्त न हुए हो, मण्डल अभी पाण्डुवर्ण (श्वेतपीत) हो वे बहल (घन; मोटी त्वचावाले) न हो—तनु (पतले) हो, अनेक मण्डल मिलकर एक मण्डल के रूप में परिणत न हो गए हो—वे छिन्न हो, रोग नया हो (उसे उत्पन्न हुए बहुत समय न हुआ हो) मण्डल अग्नि-दग्ध के कारण हुए व्रण से उत्पन्न न हुए हो एव मण्डलो के मध्य में शोथ हो तो वे साध्य होते है।

यहाँ तथा पहले आए बहल शब्द का अर्थ प्रथम दृष्टि में 'व्यापक' प्रतीत होता है, पर डल्हन ने स्थूल अर्थ किया है, हृदय की अरुण टीका में अबहल का अर्थ अघन दिया है, तोडर ने उसका तनु पर्याय भी दिया है, उससे बहल का अर्थ मोटी त्वचावाला लिया है। बहलता श्लेष्मप्रधान किलास का लक्षण है। दुष्टि मेदोधातुगत होने से बहलता होती है। और मेदोधातु तक रोग का प्रवेश उसके असाध्य होने का सूचक है। मण्डल पतला हो तो साध्य होता है। रोग नया साध्य बताया है, उसका अर्थ अरुण वचनानुसार एक वर्ष के अन्दर का लेना चाहिए (नवम् अवर्षातिक्रान्तम्)। नया और पुराना विशेषणो का प्राय ऐसा ही अर्थ लिया जाता है, जैसे धान्यो के प्रकरण में।

ऊपर दिए लक्षणो से विपरीत लक्षणो वाला श्वित्र असाध्य होता है। तथाहि, अनेक मण्डल मिलकर एक-एक मण्डल बना हो ऐसे मण्डल अन्त पर (शरीर के किनारो पर) अर्थात् पाणितल, पादतल और गुह्यभाग पर (लिङ्ग-पर) हुए मण्डल, बहु नाम संख्या या विस्तार म अथवा दोनो जो अधिक हो ऐसे मण्डल, जिन में स्थित रोम रक्तवर्ण के किंवा लम्बे (दीर्घ) हो गए हो ऐसे मण्डल एव जिन्हे उत्पन्न हुए अनेक वर्ष हो गए हो ऐसे मण्डल, मण्डल मध्य म रक्त-कमलसदृश वर्ण के और किनारी पर रक्त वर्ण हो, एव जो अग्नि दग्धज हो वे असाध्य (प्रत्याख्येय) होते है। गुह्यप्रदेश, हस्ततल तथा पाणितल पर हुआ श्वित्र नया हो तो भी असाध्य होता है। माधव ने असाध्य श्वित्र के लक्षण में केवल यही लक्षण देकर अपनी ओर से यह पंक्ति जोड दी है कि—वर्जनीय विशेषेण किलास सिद्धिमिच्छता—वैद्य यदि सफलता और अर्थ, यश आदि की सिद्धि चाहता हो तो उसे इन स्थानो पर हुए किलास का विशेषतया प्रत्याख्यान करना चाहिए।

—(सावशेष)

उपाचार्य, ओ० ना० आयुर्वेद कालेज,
सूरत ।

ओज—एक आयुर्वेदीय चर्चा

वैद्य नागरदास मोहनलाल पाठक, आयुर्वेदाचार्य

सचित्र आयुर्वेद के गत दिसम्बर १९५७ के अक में इस विषय पर एक चर्चात्मक सप्रमाण लेख मैने लिखा था और कुछ सिद्धातो पर विद्वज्जनो से विवेचन करने के लिये विनति भी की थी। तदनुसार कुछ विद्वानो ने स्वाभिप्राय लिखने के लिए कष्ट उठाया, उन सब का मै आभारी हूँ।

वैद्य वासुदेव लाटा, स्वामी हरिशरणानन्द, वैद्य डाह्याभाई के० पाठक, वैद्य पुष्करदत्त शर्मा एव वैद्य भगवतीप्रसाद ने 'सचित्र आयुर्वेद के गत फरवरी अप्रैल और मई '५८ के अको म इस विषय पर विवचन किया था। मैने चर्चास्पद जो लख लिखा था उसम मेरा पूर्वपक्ष का क्या मतव्य है यह बात प्रथम मे बतला दूँ। फिर इन मतव्यो पर उपर्युक्त विद्वानो ने क्या परामर्श दिया, वह लिखकर उन पर प्रमाणपूर्वक समालोचना करूँगा। फिर सक्षेप म समारोप होगा। इस त्रिभगी रचना से लेख की समाप्ति होगी। विद्वज्जन इस पर कृपा कटाक्ष करे, यह विनति है।

मेरी विचारधाराएँ

(१) ओज एक ही चीज है। इसका पर और अपर भेद काल्पनिक और अवास्तविक है।

(२) एक ही प्रकार का ओज मानन से निदान-ज्ञान मे और चिकित्सा ज्ञान म जो लाभ मिलता है इससे अधिक लाभ ओज के दो भेद मानन से नही मिलता। अत भेदद्वय की कल्पना अयथार्थक है।

(३) पर और अपर नामक भेदद्वय को समझना-समझाना बडा जटिल प्रश्न बन जाता है।

(४) परापर-भेद की कल्पना श्री चक्रपाणिदत्तजी ने चलाई और पश्चाद्भव विद्वानो ने उनका अनुसरण मात्र ही किया।

(५) चरक और सुश्रुत के मूल वचनो मे "पर और अपर नाम से ओज के दो भेद है' ऐसा प्रमाण दृष्टिगोचर नही होता। हाँ, ओज के विशेषणो मे पर, उत्तम, प्रधान ऐसे शब्द आर्ष-ग्रथो में हैं। ये विशेषण व्यावर्तक नही, किन्तु सादृगुण्य-प्रदर्शक है।

(६) मेरे नम्र अभिप्राय से **ओज का अर्थ पोषकरस है,** जिसमे समस्त रस-रक्तादि धातुओ का पोषण करने वाला पुरोगामी द्रव्य (ओज) मौजूद है। वही शुद्ध रुधिर में मिला हुआ द्रव्य सारे शरीर म व्याप्त होकर समस्त धातुओ का पोषण करता है।

(७) मैने जिस ओज के लिये चर्चा का आरभ किया है, उस ओज का वर्णन शास्त्रो मे निम्न प्रकार लिखा है—

गुरुशीतमृदुश्लक्ष्णबहलमधुरस्थिरम्
प्रसन्नपिच्छिलस्निग्धमोजोदशगुणस्मृतम् ।।
—च० चि० २४-३१

ओज सोमात्मक स्निग्ध शुक्ल शीत स्थिर सरम् ।
विविक्त मृदु मृत्स्न च प्राणायतनमुत्तमम् ।।
देह सावयवस्तेन व्याप्तो भवति देहिनाम् ।
तदभावाच्च शीर्यन्ते शरीराणि शरीरिणाम् ।।
—सु० सू० १५-२२

येनौजसा वर्तयन्ति प्रीणिता सर्वदेहिन ।
यदृते सर्वभूताना जीवित नावतिष्ठते ।।
यत्सारमादौ गर्भस्य यत्तत् गर्भरसाद्रस ।
सवर्तमान हृदय समाविशति यत्पुरा ।।
—च० सू० ३०-१०

हृदि तिष्ठति यत् शुद्ध रक्तमीषत्सपीतकम् ।
ओज शरीरे सख्यात तन्नाशान्नाविनश्यति ।।
प्रथम जायते ह्योज शरीरेऽस्मिन् शरीरिणाम् ।
सर्पिर्वर्णं मधुरस लाजगन्धि प्रजायते ।।
—च० सू० १७-७५

उपर्युक्त श्लोको मे वर्णित ओज की ही हम चर्चा कर रहे है। इसलिये विवेचको को यह बात याद रखनी चाहिए कि जिस चीज को वे ओज सज्ञा देते है उस चीज का स्वभाव और गुणकर्मादि उपर्युक्त श्लोको के साथ मिलता है या नही? इस बात पर पूरा विचार कर प्रमाण और युक्ति के साथ नवीन विचार-सरणी वे लिखेगे तब इस चर्चा से जो लाभ हम उठाना चाहते हैं वह मिलना सभव है। अन्यथा वाग्विनोद मात्र चर्चा होगी।

"प्राणाश्रयस्यौजसोऽष्टौ बिन्दव हृदयाश्रया"— यह जो तन्त्रान्तरीय प्रमाण है, उसमे लेखन-दोष से तिन्दव की जगह बिन्दव लिखा गया है। अत यह पाठ अशुद्ध है। बिन्दव की जगह तिन्दव कर लेना चाहिए, जिससे ओज का "पर" और "अपर" नामक दो भेद करने का झगडा समाप्त हो जाय, क्योकि इसी वाक्य ने यह सब झझट पैदा किया है। लेखन-प्रमाद से त की अग्र लकीर को जरा खीच दें तो व बन जाता है। "बवयोरैक्यम्" इस न्याय से दूसरा लेखक शुद्ध वकार बना ले यह सभाव्य है। मेरे ख्याल से इस प्रकार की लेखन-भूल से "विन्दव" आया है, पर शुद्ध पाठ "तिन्दव" है। इसका विशेष विवेचन मेरे मूल लेख में वाचक देख सकेगे।

अब मै विज्ञ वाचको के समक्ष प्रत्येक विवेचक ने क्या विवेचन किया और उस विवेचना पर मेरी (पूर्वपक्ष की) क्या राय है, यह सप्रमाण लिखने की कोशिश करूँगा।

वैद्य श्री वासुदेव लाटा

यह विद्वान् विवेचक लिखते है कि "ओज दो प्रकार का है, यह कल्पना आचार्य चक्रपाणि की है। 'रक्तमीषत्सपीतकम्' इसमे ईषत् पद का ओज से सयोग ही इस कल्पना का जन्मदाता या प्राण है।

श्वेत, स्निग्ध, तरल, पिच्छिल एव घृत के समान तत्त्व ही शरीर मे ओज सज्ञा को प्राप्त होता है, जो धमनी वाह्य है और प्रत्येक धातु मे मिश्रित होकर आता है। ओज कफवर्ग की वस्तु है।"

श्री वासुदेव जी के इस विचार से पूर्वपक्ष को समर्थन मिलता है। किन्तु पूर्वपक्ष मे ओज का अर्थ पोषक रस कहा गया है। उससे व मतभेद बनाते है।

आप कहते है—"रसादि सप्त धातुओ से ओज पृथक् तत्त्व है, अत ओज शब्द का अर्थ रस नही किया जा सकता।" विद्वान् विवेचक के अभिप्राय से सभी धातु परमाणुओ मे रहने वाला श्वेत-स्निग्धादि गुणयुक्त एक विशिष्ट द्रव्य ओज है। उसकी उपस्थिति से ही फुफ्फुसद्वय प्राणवायु (Oxygen) का ग्रहण कर सकते है। हृत्पिड की पेशियो मे भी ओज रहता है और उसके अष्टबिन्दु परिमित होने की सभावना है। तन्त्रातर वचन इस ओज का निर्देशक है। और अन्नपान से रसादि धातुओ का जैसे पोषण होता है वैसे ही ओज का भी पोषण होता है। इस रीति से रस से सर्वथा स्वतन्त्र तत्त्व ओज है।"

विद्वान् विवेचक की विचारधारा आदरणीय है। किन्तु एक प्रश्न उठता है कि हृदयपोषिका (Coronary) धमनी से हृत्पेशीनिष्ठ ओज का पोषण होता है, ऐसा यदि उनका विधान मान लिया जाय तो पोष्य ओज और पोषक ओज इस प्रकार जो द्वैविध्य बन जाता है, जिसका निर्देश शास्त्र मे नही मिलता है और "आयुरारोग्य वीर्यौजो" (वा० शा० ३-५१) की टीका मे "ओज आहारस्य पर प्रसादज सर्वधात्वाप्यायक यद् वस्तुजात तदुच्यते"— इसमे आहार के परम प्रसाद से उत्पन्न होने वाला और सर्व धातुओ का आप्यायन—पोषण करनेवाला जो द्रव्य है वह ओज है ऐसा जो लिखा है उमकी सगति नही होती। श्री वासुदेव जी के मतानुसार अन्न मे से उत्पन्न हुआ ओज धातुगत ओज का ही पोषण करता है, धातुओ का नही, अत "सर्वधात्वाप्यायक" पद निष्प्रयोजन हो जाता है जो योग्य नही। पोषकरस को ओज कहने से यह आपत्ति नही आती और "रसश्चौज सख्यात' "कल्पते किंचिदोजसे' इत्यादि स्थलो पर टीकाकारो का प्रज्ञापराध बताने की कोशिश करने की जरूरत भी नही रहेगी। ओज के विवेचन मे अष्टमधातुत्वापत्ति का निरसन करने के लिये प्राचीन टीकाकारो ने जो प्रयत्न किया है उनके सामने यदि "पोष्य ओज" माना जाय तो अष्टमधातुत्वापत्ति नये ढग से खडी होगी और वह दुर्निवार होगी।

यदि मान लिया जाय कि प्रत्येक परमाणु मे "पोष्य ओज" स्थायी रूप से रहते है और परमाणु का पोषण अन्न-प्रसादरूप रस से होता है (वैसे ओज का पोषण भी रस से ही होता है), तो फिर आज के विद्यार्थीगण को समझाने के लिए प्राचीन या अर्वाचीन-पद्धति से ओज का नामकरण करना चाहिए, जो विद्वान् विवेचक ने किया नही है।

मैने जो ओज का अर्थ पोषकरस किया है उसमे वैद्य श्री वासुदेव जी ने सज्ञासाकर्य दोष बतलाए है। इसके प्रत्युत्तर मे वैद्य जी से मेरा नम्र निवेदन है कि मैने रस धातु को पोष्यरस कहा है, ओज नही कहा। मै पोषकरस को ओज कहता हूँ। पोष्यरस और पोषकरस दोनो पृथक् वस्तु है, इसलिये आपने जो कुछ लिखा है वह योग्य नही। पोषकरस विष्णुपदामृतयुक्त अन्नरस है, वह धातु नही है। शास्त्र मे भी गौण रूप से इसको धातु कहा जाता है, मुख्य रूप से नही। "धातवो हि धात्वाहारा"—च० सू० २७।३ में आया हुआ यह वाक्य इस

वस्तुस्थिति का परिचायक है। रस धातु को ओज सज्ञा दी जाय तो सज्ञासाकर्य दोष आता है यह उनका कथन उचित है। किन्तु, मै रस धातु को ओज सज्ञा नही देता हूँ। पोषक रस का अतर्भाव रस शब्द मे माने या कफ वर्ग मे मानें, मुझे मान्य है। ओक्सीजनेटेड ब्लड को आश्रयाश्रयि भाव से मै ओज सज्ञा देता हूँ और स्निग्धश्वेतमधुरादि गुणो की अपेक्षा रस मे अतर्भाव बताता हूँ—मुख्य रूप से नही। यह बात मेरा मूल लेख पढने से आपको स्पष्ट हो जायगी।

वैद्य श्री वासुदेव जी के मतानुसार ओज मान लिया जाय तो चरक सू० १७ ७३ मे श्री चक्रपाणिदत्त लिखते है कि "एतच्चौज सर्वधातु समुदायरूपम्' क्या हृत्पेशी-निष्ठ ओज सर्वधातु समुदाय रूप है? नही, पोषक रस अवश्य है। अरुणदत्त का"सर्वधात्वाप्यायक' विशेषण भी आपके ओज मे सुसगत नही। पोषक रस मे अवश्य सुसगति है, और—

"हृदि श्लेष्मानुपसृष्ट आश्याव रक्तपीतक
तदोज ।'—काश्यप सहिता सू० २७-१६
"तैरावृतगतिर्वायुरोज आदाय गच्छति ।।"
—च० सू० १७-८०
"ओजोवहा विधम्यन्ते ।।"—च० सू० ३०-७

—इत्यादि अनेक आर्षवचनो का आपके ओज मे सरलता से सगति नही होती। पोषक रस को ओज मानने से ही यह सगति होती है।

माननीय विवेचक कहते है कि "प्राणाश्रयस्यौजसोऽष्टौ विन्दव हृदयाश्रया ।" तत्रातर का यह वचन हृत्पेशी-निष्ठ ओज का प्रमाण बताता है—ऐसा मेरा मत है। यदि ऐसा मान लिया जाय तो यह भी मानना होगा कि हृत्पेशी-निष्ठ ओज के बिन्दु मात्र क्षय से भी मृत्यु होगी। क्या इसमें कोई प्रमाण वा युक्ति है? नही है, अत ऐसी कल्पना करना सुसगत नही और विद्यार्थी भी प्रश्न करेगे कि केवल हृत्पेशी-निष्ठ ओज का प्रमाण बताया—और किसी का नही बताया। क्योकि पेशियाँ तो शरीर मे बहुत है तो हृत्पेशीनिष्ठ ओज का ही केवल प्रमाण बताने में आचार्य की क्या विवक्षा है? मेरे ख्याल से यह प्रश्न भी निरुत्तर ही रहेगा। इसलिये विद्वान् विवेचक का समाधान बुद्धि-ग्राह्य नही हो सकता। "ता सर्वं सर्वतो वपु रसात्मक वहत्योज" ऐसा स्पष्ट वचन देखकर भी पोषक रस को ओज नही मानना मेरी अल्पमति से प्रज्ञापराध है। शब्दस्तोमकोश में भी "ओजस्—वैद्योक्ते धातुरसे पोषके ।।" ऐसा स्पष्ट लिखा है। इससे ओजस् शब्द का अर्थ पोषकरस करने मे ही औचित्य है।

श्री स्वामी हरिशरणानन्द

स्वामीजी यौनग्रथियो के अत स्राव (Hormons) को ओज कहते है। अनेक विवेचको ने भी पृथक्-पृथक् ग्रथियो के अत स्राव को ओज कहने की कोशिश की है। किन्तु ओज का जो वर्णन सहिता-ग्रथो मे दिया है उसके साथ किसी का समन्वय हो नही सकता। जिस वस्तु मे हृदयस्थता—प्रवहणशीलता—सर्वदेहव्यापकता—जीवना-धारता और स्निग्धश्वेतादिगुणवत्ता न हो वह वस्तु आयुर्वेद-मतानुसार ओज नही है, इसलिये स्वामीजी का अभिप्राय मान्य नही हो सकता।

"सवर्तमान हृदय" और "धारि यद् हृदयाश्रितम्" इसका अर्थ आप लिखते हैं कि "गर्भोत्पादन से पूर्व वह (ओज) हृदय में वर्तमान रहता है और वह स्थिर रहकर जीवन को धारण करता है अर्थात् उसकी उत्पत्ति किसी धातु से नही मानते।"

स्वामीजी लिखते हैं कि "कुछ व्यक्तियो का विचार है कि 'बिन्दु के स्थान पर 'तिन्दु' शब्द है जिसका अर्थ है एक तोला अर्थात् हृदय मे ७ तोला ओज उसके साथ रहता है। क्या हृदय मे कोई ऐसी जगह है जहाँ ७ तोला ओज रह सकता है? फिर जिस व्यक्ति का डील-डौल अच्छा हो, हृदय का आकार बडा हो, उसी के हृदयकोष्ठ मे ७-८ तोला रक्त की समाई हो सकती है। स्वामीजी ने यहाँ विरुद्धोपन्यास किया है। आश्रयाश्रयिभाव से विशुद्ध रक्त को भी ओज सज्ञा दी जाय तो कुछ औचित्य भग नही होता, ऐसा मैंने आदि लेख मे बतलाया है और विशुद्ध रक्त ७-८ तोला हृदय में समाता है ऐसा भी मैने हेलीबर्टन फीजीयोलोजी का प्रमाण देकर प्रतिपादन किया है। मै जो बात कह रहा हूँ वह डीलडौलवाले स्वस्थ शरीर के लिए न कि कृश-दुर्बल-व्याधि-ग्रस्त शरीर के लिये है। "ओजोवहा विधम्यन्ते" चरक के इस वचन से विशुद्ध रक्त और अन्नरस मिलकर जो पदार्थ बनते है उनकी ओज सज्ञा सिद्ध होती है।

श्री डाह्याभाई के० पाठक

आप लिखते हैं कि "लेकिन यदि रस को ओज मानते हैं तो फिर तीनो आचार्यों ने 'ओज' शब्द क्यो लिखा?"

इस वाक्य से रस और ओज पृथक् द्रव्य है ऐसी पाठकजी की विवक्षा है। मैं कहाँ कहता हूँ कि "रस" और "ओज" पृथक् द्रव्य नहीं है। हम रसधातु को "पोष्यरस" कहते है और ओज को "पोषकरस"—अन्नरस का परम प्रसाद रस—कहते है। पोष्यरस और पोषकरस सर्वथा भिन्न वस्तु है। पोषण करने की शक्ति होने से पोषकरस में रस संज्ञा और धातु सज्ञा गौण रूप से शास्त्र म व्यवहृत है यथा—"व्यानेन रसधातुर्हि विक्षेपोचितकर्मणा ।।" (वा० शा० ३-६८)। जीवशोणित की ओज सज्ञा इसी न्याय से प्रचलित है। यथा—"ओजोवहा विषम्यन्ते" (च० सू० ३०-८)।

आपने "यत्सारमादौ गर्भस्य" इत्यादि वाक्य का प्रमाण तो दिया है, किन्तु इस श्लोक मे आये हुए गर्भरसात्, रस, सवर्तमान और हृदयम् इन चार पदो का विवेचन आपने नहीं किया। यह श्लोक मूल-वचन है या क्षेपक, इस बात का परामर्श भी आपने नही दिया। यदि आपकी ओर से इस श्लोक की पदच्छेदपूर्वक की गई व्याख्या आवेगी तब मैं कुछ लिखूंगा।

"तिन्दव बिन्दव सिर्फ टीका की बात है" इन शब्दो की क्या विवक्षा है? तिन्दु बिन्दु शब्दो पर मेरे किए हुए विचार का क्या यह उत्तर है?

आप Pericardial liquid को पर ओज कहते है और Pericardial liquid को ओज कहकर ओज की व्याप्ति और बढाते हैं तथा अडकोष मे रहनेवाले Liquid को भी आप ओज कहते हैं और इस मतव्य की पुष्टि में "यत्सारमादौ गर्भस्य" पद का प्रमाण देते हैं। क्या आपके इस प्रमाण से आपके मतव्य की पुष्टि होती है? हृदयस्थता, सर्वधात्वाप्यायनता, प्रवहणशीलता और श्वेतस्निग्धईषत्पीता-विगुणवत्ता जिस वस्तु में हो उसी को ओज मानने पर विवेचन में सुविधा होगी।

यदि आपके मतानुसार Pericardial liquid को "पर ओज" माना जाय तो Pericardial liquid के किंचित्क्षय से भी मृत्यु होनी चाहिये। "पर ओज" के किंचित्क्षय से भी मृत्यु होती है ऐसा विधान पर ओजवादियो ने किया है। Pericardial liquid के समान शरीर मे बहुत स्थलो पर liquid है। सब की रचना प्राय एक-सी ही है और सब मे कारणवशात् क्षयवृद्धि होती है। Pericardial liquid मे कोई खास विशिष्टता नही है जिससे उनमें क्षयवृद्धि होना असभव हो। Pericardial liquid के किंचित्क्षय से भी मृत्यु होती है, ऐसा कोई प्रमाण मॉडर्न फिजियोलोजी मे मिलना कठिन है। इसलिये Pericardial liquid को "पर ओज" कहना युक्तियुक्त नही है और Pericardial liquid का समन्वय ओज का वर्णन करनेवाला शास्त्र वचनो के साथ होना अतीव दुरूह है। अत शास्त्र और युक्ति से आपका मतव्य खडित हो जाता है।

आप लिखते है कि "सिद्धान्त पक्ष का पर और अपर स्थापित करने के लिये सैकडो-हजारो प्रमाणो की कोई जरूरत नही, सिर्फ शास्त्रो की रचना काफी है।" 'शास्त्रो की रचना' शब्दो से आपकी क्या विवक्षा है? आप कहते है—"अन्न का रस और रक्त ओज है यह बात बिल्कुल गलत है।"

धातूना तेजसि रसे तथा जीवितशोणिते।
श्लेष्मणि प्राकृते वैद्यैरोज शब्द समीरित ।।
—वा० सू० ११–३८ हेमाद्रि टीकायाम्

क्या हेमाद्रि का यह वचन भी गलत है? उपचार से इसम और रक्त म ओज सज्ञा देने का व्यवहार शास्त्रो म भी है। शब्दस्तोमकोश मे भी ओजस् का अर्थ पोषक रस किया है। विशुद्ध रक्त म आश्रयाश्रयी भाव से ओज सज्ञा का व्यवहार शास्त्रकारो ने किया है। तदनुसार ही मै भी करता हूँ। क्या ये सभी प्रमाण गलत हो जायेगे?

वैद्य श्री डाह्याभाई ने एक ही प्रकार का ओज मानने की पहले कोशिश की। फिर जब ओज के वर्णन म स्थिर और सर शब्द देखा तो वह चक्रपाणि के (भेदवादियो के) मत में चले गये, ऐसा व लिखते है। क्या स्थिर-सर शब्द देख कर ही आप विपक्ष मे चले गये?

ओज वहनशील द्रव्य है, इसलिये ओज के गुण-वर्णन में आया हुआ 'सरम्' पद युक्तियुक्त है। फिर रहा 'स्थिरम्' जिसका अर्थ है स्थिरत्वापादक। शारीरधातुओ मे ओज का सबध पाकर स्थैर्य आता है इसलिये ओज के गुण मे "स्थिरम्" पद आया है। इसमे सन्देह करने की कोई गुजाइश नही दिखाई पडती है।

आप अपर ओज को Serum albumin कहते है और उसका प्रमाण "नवाजलय" लिखते हैं। चरक शा० ७–१५ में "नवाजलय पूर्वस्याहारपरिणामधातो य रस इत्याचक्षते'—यहाँ अन्नरस का प्रमाण नवाजलि लिखा है। अत आपके और चरक के मत में विभिन्नता है।

वैद्य श्री पुष्करदत्त शर्मा

साकुरेण हि बीजेन यथोत्पन्नो वनस्पति । आपका यह कथन ठीक नही है, क्योंकि बीज साकुर नही होता परतु अकुरोत्पादक शक्तियुक्त होता है—जिसकी अकुरोत्पादन-शक्ति नष्ट हो गयी है ऐसे बीज से अकुरोत्पत्ति नही होती । इस शक्ति के स्थान मे ओज की स्थापना करने की विवेचक की विवक्षा है। रसरक्तादि धातु ओज से भरी हुई है और अग्र-अग्र धातु का निर्माण करती है। ओजयुक्त रस से रक्त-ओजयुक्त रक्त से मास—"एवमोज प्रवर्तकम्" ऐसी मान्यता विवेचक की है। सभी शारीरिक प्रक्रिया का प्रवर्तक ओज है। प्रत्येक धातु मे ओज का एक बिन्दु रहता है। इस प्रकार रसादि सप्तधातुओ मे जोडकर ७ बिन्दु और १ बिन्दु हृदय मे सब मिलकर ८ बिन्दु ओज का है। बिन्दु परिमित ओज धातु-केन्द्रो मे और अर्धांजलि परिमित ओज हृदय म है ऐसा भी आपका एक मतव्य है।

श्री शर्माजी का वक्तव्य का सार ऊपर दिया है। आपने शास्त्र प्रमाण से अपना मतव्य स्थापित नही किया और न कोई युक्ति ही दी है। परापर भेद के लिये कुछ न लिखा है। इससे मेरे किसी प्रश्न का समाधान नही होता। अत शर्माजी के उत्तर का प्रत्युत्तर लिखने की आवश्यकता भी नही है।

वैद्य श्री भगवतीप्रसाद

विद्वान् विवेचक का वाचन विशाल, विषय-निरूपण-शैली प्रशस्त और प्रमाणसचय भरपूर है। यदि समासत कहा जाय तो वैद्यजी के मत मे ओज का अर्थ Cerebro-spinal fluid है। उनका स्राव Choroid plexus से होता है। वैद्यजी कहते हैं कि प्राचीन आचार्यों ने सुषुम्नाशीर्ष (Medula oblongata) प्राणगुहा (fourth ventricle) और सुषुम्नाकाड (medula spinalis) इन तीनो को मिलाकर हृदय सज्ञा दी है। उपनिषद् के अर्थ समझाने में विवेचक ने सिरा और धमनी शब्द का अर्थ सज्ञावह नाडियाँ Nerves बतलाया है। हृदय शब्द का अर्थ Medula oblongata करने के लिये जो प्रमाण दिया है उसमें एक वाक्य तैत्तरीय उपनिषद् का है यथा "य एषोन्त हृदय आकाश" इत्यादि। इसमें आया हुआ हृदय और आकाश शब्द का विवरण जो शाकरभाष्य में है, मेरे अभिप्राय से वह वक्षोगुहागत हृदय का परिचायक है। विज्ञ वैद्यराज और वाचकवर्ग उन पर विचार करें यह अभ्यर्थना है। शाकर-भाष्य में लिखा है कि—"पुडरीकाकारो मासपिंड प्राणा-यतनोऽनेकनाडीसुषिर उर्ध्वनालोऽधोमुखो विशस्यमाने पशौ प्रसिद्ध उपलभ्यते ।। तस्यान्तर्य एष आकाश- प्रसिद्ध एव करकाकाशवत् ।।" करक शब्द का अर्थ है कमडलु। कमडलु के भीतर जैसा आकाश—अवकाश है वैसा ही आकाश हृत्पिड के भीतर है ऐसा अर्थ है। मेरे अभिप्राय से शिरो-गुहागत हृदय (Medula oblongata) अत सुषिर और कमलाकार नही है जैसा वक्षोगुहागत हृदय है। इसलिये इस ऋचा मे आया हुआ हृदय शब्द से वक्षोगुहागत हृदय लेना उचित है।

"साधो जगति भूताना हृदय द्विविध स्मृतम् ।"

—योगवासिष्ठ के इस वचनानुसार दो प्रकार का हृदय मै भी मानता हूँ। किन्तु चरक के अर्थेदशमहामूलीय अध्याय मे जो हृदय शब्द आता है, वह वक्षोगुहागत हृदय के लिये है, शिरोगुहागत हृदय के लिये नही, ऐसा मेरा नम्र अभिप्राय है।

अपने मतव्य को सिद्ध करने के लिये हृदय शब्द की व्याप्ति आप Spinal cord तक ले जाते है वह वास्तव में मान्य होना असभव है।

आपने Cerebro-spinal fluid का शास्त्रीय नाम "ब्रह्मवारि" दिया है। यह आयुर्वेदीय शब्द नही, किसी अन्य तत्र का शब्द ज्ञात होता है। कृपया उस तत्र का नाम बतावे जिसमे उक्त "ब्रह्मवारि" शब्द आया है। Cerebro spinal fluid को ओज मानने से निम्नलिखित वचनो की सगति यथावत् नही होती।

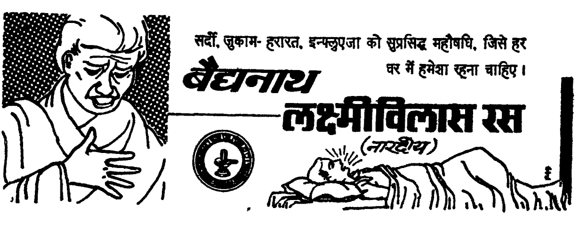
१ मलीभवति तत्प्राय कल्पते किंचिदोजसे ।।
२ वायुरोज आदाय गच्छति (मधुमेहे) ।।
३ देह सावयवस्तेन व्याप्तो भवति देहिनाम् ।।
४ रसात्मक बहल्योज ।।
५ प्रथम जायते ह्योज शरीरे ।।
६ ओज सक्षीयते ह्येभ्यो धातुग्रहण निसृतम् ।।

टीकाकार ने छठवे पदोक्त "धातुग्रहण" शब्द का अर्थ हृदय भी लिखा है—प्रकृति प्रत्यय के बल से वक्षोगुहागत हृदय ही लेना चाहिए। चरक सू० ३० में आया हुआ हृदय शब्द का अर्थ वक्षोगुहागत हृदय ही सर्ववादिसम्मत है। अतएव, इस अर्थ को लेकर ओज की उपपत्ति लगाना उचित है।

समारोप

आयुर्वेदीय शारीर सज्ञाओ में ओजस् शब्द आया है। ओजस् शब्द से कौन-सा शारीर द्रव्य लेना चाहिए, इस बात का निर्णय करने के लिये यह चर्चा आरम्भ हुई है। मैं ओज का अर्थ पोषक रस मानता हूँ। मेरा अर्थ अकाट्य सिद्धान्त रूप है—ऐसा मेरा भाव नही है। मै इतना अवश्य कहता हूँ कि ओजस शब्द का अर्थ पोषक रस मान लेना अत्यधिक सुबोध है। इस अर्थ से शास्त्र मे जहाँ-तहाँ आये हुए वचनो के साथ इस अर्थ का बहुश समन्वय भी हो जाता है। मॉडर्न एनाटॅमी, फिजियालोजी जगत् के समक्ष है। आज हमारा कर्तव्य है कि आयुर्वेदीय शब्दो का वाच्यार्थ हम निर्णीत कर ले। जैसे—रस-रक्त-मास-मेद का वाच्यार्थ सरलता से हम समझ लेते है, वैसे ही ओजस् का अर्थ नही समझते। इसीलिये ओज के अर्थ-निर्णय का यह प्रस्ताव चर्चा-स्वरूप में मैंने विद्वानो के सामने रखा है। चर्चा आरम्भ करने से पूर्व मेरी धारणा थी कि पोषक रस को मेरे द्वारा ओज के पर्यायवाची मानने पर विद्वानो को आपत्ति होगी, क्योकि "यत्सारमादौ गर्भस्य ।। प्रथम जायते ह्योज ।। आजोधनोऽन्तक ।। शुक्रमोजोजनकत्वात् धात्वतर्गतम् ओजो धातूना क्रमशो मला ।।" इत्यादि वाक्यों की अर्थ सगति आप किस रीति से करेगे। परतु किसी विवेचक ने ऐसा प्रश्न नही उठाया। ओज का भेदद्वय मानने या न मानने से क्या हानि-लाभ होगा यह परामर्श भी किसी ने नही दिया। सब बन्धुओ ने स्वतत्रतया अपने विचार बतलाए। मेरी विचारधाराएँ कहाँ किस रीति से युक्त या अयुक्त है सो बतलाने की कृपा करे। यह चर्चा सचित्र आयुर्वेद मे प्रेमभाव से चलती रहे, ऐसी मेरी प्रार्थना है। जिन वैद्यराजो के अब तक सचित्र आयुर्वेद मे लेख प्रकाशित हुए है, उनमे श्री वासुदेव लाटा के मत मेरे मतव्य के साथ बहुत अश मे मिलते-जुलते है। चरक सू० २८ का विविधमशित परिच्छेद मे आया हुआ "धातुपाक-अनवस्थित शब्दो का विचार और चरक शा० ६-१६ 'परिणामतस्त्वाहारस्य गुणा' इस वचन की सूक्ष्म समालोचना करने की मै श्री वासुदेवजी से विज्ञप्ति करता हूँ और आशा रखता हूँ कि 'कि नामौज ?" इस विषय मे हमारे बीच मे जो वैमत्य है उनका समाधान वैद्यजी को हो जायगा।

सीनियर रिसर्च
मेडिकल कालेज, बडौदा



आयुर्वेदीय पाठ्यक्रम

वैद्य आ० वि० गोखले, आयुर्वेदविद्यापारगत

आयुर्वेद का पाठ्यक्रम कैसा हो, इस विषय मे बहुत चर्चा हो चुकी है, परन्तु यह विवाद का विषय मुख्यत पाठ्यक्रम शुद्ध हो अथवा मिश्र हो इसी पर केन्द्रित रहता है। अत इसके आगे इस विषय मे कोई उन्नति नही हो सकी है। शुद्ध पाठ्यक्रम के आयुर्वेदीय विषय तथा उनके अध्यापन की पद्धति मे मिश्र प्रणाली से वस्तुत कोई अन्तर नही है। मिश्र प्रणाली मे अन्तर्भूत सभी आयुर्वेदीय विषयो के अध्ययन की पृथक व्यवस्था रखकर इसे ही "शुद्धायुर्वेद" की सज्ञा दी गई है। मिश्र प्रणाली के बारे मे जब कोई विचार किया जाता है तो अर्वाचीन वैद्यक तथा आयुर्वेद मे पाठन के हेतु दोनो वैद्यक के लिये अलग-अलग विषयो के व्याख्यान और प्रश्नपत्रो की सख्या कितनी हो, इसी विषय पर अधिकत निरर्थक वाद-विवाद होता चला आ रहा है। शुद्ध हो अथवा मिश्र, दोनो प्रकार के विद्यालयो से निकलने वाले स्नातको का आयुर्वेदीय ज्ञान प्राय समान ही होता है। मिश्र प्रणाली के स्नातक को अर्वाचीन वैद्यक का भी ज्ञान होता है, अतएव वह इस वैद्यक का उपयोग समझदारीसे करता है। यही दोनोमे अन्तर है।

वैद्यो को किन-किन औषधियो का प्रयोग करना चाहिय इस विषय मे—शुद्धायुर्वेदीयो को केवल आयुर्वेदीय औषधियो का ही उपयोग करना चाहिये और अन्य औषधियो के प्रयोग की उनके लिये आवश्यकता नही है, ऐसा ठोस प्रतिपादन कोई नही करता है। किं बहुना, यह अव्यवहार्य मालूम होगा, औषधियाँ आयुर्वेदीय कौन-सी तथा अनायुर्वेदीय कौन-सी, इसका निश्चय करना अत्यत कठिन है। "नास्ति मूलमनौषधम्।" "जगत्येवमनौषधम्।" "तदेवयुक्त-भैषज्य यदारोग्याय कल्पते" इत्यादि सूत्रो का आधार लेकर इस विषय के उत्तरदायित्व को टाला जाता है। यह किसी व्यक्ति विशेष अथवा दल विशेष का दोष न होकर काल-महिमा का ही परिणाम है, ऐसी मेरी मान्यता है। आयुर्वेद को जो दशा प्राप्त हो गई है तथा वर्तमान मे वह जिस परिस्थिति मे है उसमें से अगर युक्तिपूर्वक मार्ग निकाला जाय तो इस दुर्बलता का अवश्य नाश हो सकेगा। परन्तु इसके लिये आयुर्वेदीय पाठ्यक्रम के विषय मे अत्यत सूक्ष्मता से, व्यावहारिक दृष्टि से तथा अनुभव के आधार पर अत्यत गम्भीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है, ऐसा मै सोचता हूँ। शुद्ध या मिश्र दोनो प्रकार की सस्था के लिये आयुर्वेदीय पाठ्यक्रम का प्रश्न एक समान ही है। आयुर्वेद पर श्रद्धा रखने वाला स्नातक ही आयुर्वेदीय व्यवसाय करेगा। और आयुर्वेदीय शास्त्र तथा व्यवहार को जाननेवाला स्नातक कैसा निर्माण किया जाय, इस विषय की चिन्ता प्राय सभी को है। इस दृष्टिकोण से मैने खूब मनन किया है, अत स्वानुभव के आधार पर कुछ सुझाव उपस्थित कर रहा हूँ। स्वानुभव का उल्लेख मैने यहाँ पर इसलिये किया है कि अपने वैयक्तिक जीवन मे एक बडी सस्था मे किये गये तीन प्रयोगो को मैने नजदीक से देखा है। चौथा प्रयोग अभी चल रहा है। वर्तमान मे जो कुछ वहाँ हो रहा है उस पर भी मै गौर से देख रहा हूँ। बम्बई राज्य तथा इतर अन्य राज्यो मे इस विषय की जो प्रतिक्रिया हो रही है उनको दृष्टिगत रखकर ही मै लिख रहा हूँ। स्वतत्रता प्राप्ति के पूर्व पूना के आयुर्वेद महाविद्यालय मे 'आयुर्विद्याविशारद"—डी० ए० एस० एफ०" का पाठ्यक्रम था। तदनन्तर "जी० एफ० ए० एम०" और अब "बी० ए० एम० एस०" के पाठ्यक्रम के अध्यापन तथा सचालन के अनुभव का सुयोग मुझे अनायास मिला। उसमे से जो कुछ भी फल निष्पन्न हुआ है वह मेरी दृष्टि के सम्मुख है। एक निजी विद्यापीठ से सरकार-मान्य फेकल्टी मे और तदनन्तर सरकारमान्य विश्व-विद्यालय मे इस सस्था के प्रवेश को देखने का सुअवसर मुझे मिला है। प्रारम्भिक अवस्था से अब एक कार्यक्षम तथा नित्य उन्नतिशील सस्था के रूप मे हो रहे उसके उत्कर्ष को मै देख रहा हूँ। जिसके ६ शय्या वाले आयुर्वेदीय रुग्णालय से प्रारम्भ होकर आज आयुर्वेदीय चिकित्सालय के काय विभाग में ५२, शल्य विभाग मे ८, तथा स्त्री विभाग मे २६ शय्या आयुर्वेदीय उपचारार्थ तथा बाह्यो-पचार विभाग व प्रसूति विभागमें पूर्णतया आयुर्वेदीय उपचार,

साथ ही बाह्योपचार भी प्राय आयुर्वेदीय—इस तरह के विस्तृत वृक्ष का दृश्य मैं आज देख रहा हूँ। परन्तु इस विषय में अभी तक कहाँ पर त्रुटि हो रही है इसका अहर्निश विचार कार्यकर्ता लोग वहा पर करते देखे जाते है। मै भी इस विषय मे सचिन्त हूँ तथा देश के प्रत्येक शास्त्रीय-विचार प्रणाली का अनुसरण करने वाले वैद्य महानुभावो का भी सचिन्त होना आवश्यक है। यह समय की पुकार है। अपने सतत मनन के फलस्वरूप कर्तव्यबुद्धि से प्रेरित होकर मैं कुछ विचार प्रस्तुत कर रहा हूँ।

वैद्यक शास्त्र प्रत्यक्ष पर आधारित शास्त्र है और आयुर्वेद तो स्वभावत ही अधिक प्रत्यक्ष प्रधान है। सृष्टि में विघ्नोत्पन्न करनेवाली व्याधियो का प्रादुर्भाव हुआ और उनके अध्ययन से ही आयुर्वेद का जन्म हुआ है। वैद्यक-शास्त्र का निर्माण जिस तरह हुआ है उसी दृष्टिकोण से अगर उसका अध्ययन और अनुशीलन करने का प्रयत्न किया जाय तभी उसका ज्ञान सुलभ होगा। आयुर्वेद का शास्त्रशुद्ध अध्ययन करनेवाले विद्वानो का यही मत होगा कि आयुर्वेद की सफलता उसके अनुभव पर ही है। मुझे स्नातक उपाधि प्राप्त करने के पश्चात् अपनी निष्ठा तथा आत्म-विश्वास का स्मरण जब होता है तब आधुनिक आयुर्वेदीय स्नातको की अपेक्षा इन सब विषयो मे मेरी अधिक पात्रता थी, ऐसा दावा मै नही कर सकता। "गतानुगतिकोलोक न लोक पारमार्थिक" इस उक्ति के अनुसार विशेष अवसर नही मिलता तो मै भी अन्य व्यवसायिको के समान निश्चय ही प्रवाहपतित हुआ होता। लेकिन आयुर्वेद के क्षेत्र मे कार्य करने का अवसर स्नातक को किस तरह प्राप्त हो सकता है? इसलिये ४।।–५ वर्ष के पाठ्य-क्रम के अन्तर्गत ही मूलत ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये कि तदनुसार उपर्युक्त अनुभव तथा निष्ठा प्राप्त हो सके।

इस तरह की व्यवस्था करने के लिये प्रवेश के बाद प्रथम वर्ष से लेकर अन्तिम वर्ष तक आयुर्वेद के विषयो का अध्ययन प्रत्यक्ष पर होना चाहिये। इस प्रत्यक्ष ज्ञान की प्राप्ति के लिये शिक्षण-सस्था के पास पर्याप्त साधन होना आवश्यक है। ये साधन कौन से हो, यह प्रश्न अत्यन्त महत्व का है। अर्वाचीन वैद्यक मे प्रत्येक विषय के लिये प्रात्यक्षिक, तथा उनके लिये साधन होते है। उदाहरणार्थ अनाटोमी के लिये शवच्छेद-गृह, फिजिओलोजी के लिये लेबोरेटरी, मटेरियामेडिका के लिये फार्मेसी, सर्जरी के लिये शस्त्र-कर्म आदि विषय के लिये विस्तृत रूप से प्रात्यक्षिक और तद्विषयक साधन-सामग्री उपलब्ध है और विषय के शास्त्रीय निरूपण की अपेक्षा प्रात्यक्षिक क्षेत्र मे विद्यार्थी का अधिक समय व्यतीत होता है। क्ष-किरण, पेथोलोजी-कल लेबोरेटरी, आपरेशन थिएटर, बायोकेमेस्ट्री-फिजिओ-लोजीकल लेबोरेटरी, डिसेक्शन हाल इत्यादि की व्यवस्था के अभाव मे अर्वाचीन वैद्यक का अध्ययन असम्भव समझा जाता है। परन्तु आयुर्वेद के पदार्थ-विज्ञान, दोष-धातु-मल-विज्ञान, द्रव्यगुण-सिद्धान्त इत्यादि विषयो के प्रत्यक्ष ज्ञान के लिये किस तरह की व्यवस्था और विधि हो, इस प्रश्न का हल सदैव टाला जाता है। इस विषय का ज्ञान विद्यार्थी को खूब कराया जाता है, परन्तु प्रत्यक्ष ज्ञान के अभाव में यह केवल पुस्तकीय ज्ञान है और केवल परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिये होना आवश्यक है और बाद मे उसका व्यवहार मे कोई उपयोग नही है ऐसी विद्यार्थी की धारणा हो जाती है। निदान तथा चिकित्सा विषयक ज्ञान भी विधिवत् नही कराया जाता है। अर्वाचीन वैद्यक के 'मेडीसिन' विषय का अध्यापन कराते समय प्रत्येक रोगी के मल-मूत्र-रक्त आदि की परीक्षा तथा रोगी-परीक्षा-पत्रक आदि को यथाविधि भर लिया जाता है। परन्तु आयुर्वेद के अध्यापक को आयुर्वेदानुसार रोगी-परीक्षा-पत्रक बनवाकर उसे विद्यार्थी द्वारा पूरा करा लेना चाहिये और मल-मूत्रादि परीक्षा भी आयुर्वेदीय हो सकती है—ऐसी कल्पना भी उसे नही होती। अत पाश्चात्य निदान-पद्धति का हिन्दी अथवा सस्कृत मे अनुवाद करना मात्र ही आयुर्वेद है—ऐसी अधिकाश विद्यार्थियो की धारणा हो जाती है। पाश्चात्य रक्त-परीक्षा-विधि से 'एनीमिया' निश्चित हुआ तो उसको पाण्डु तथा एसायटिस को उदर रोग, हृदयोदर, वृक्कोदर आदि पारिभाषिक शब्दो का प्रयोग किया जाता है। जीवाणु विज्ञान से डरकर शल्य- शास्त्र सम्बन्धी आयुर्वेदीय प्रभावी उपचारो की प्रगति अवरुद्ध हो चुकी है। यही स्थिति प्रसूति-तन्त्र की भी है। तद्विषयक आत्मविश्वास तथा अधिकार के अभाव मे प्राय सर्जेरी एव मिडवाइफरी को तो अग्रेजी वैद्यक की ही बपौती समझा जाता है।

अत इस विषम स्थिति से हमें कुछ मार्ग निकालना होगा। आयुर्वेद में प्रत्यक्ष ज्ञान के लिये कौन-कौन से साधन तथा पद्धति होनी चाहिये इसका विचार प्रथम होगा।

उपर्युक्त 'विघ्नभूता यदा रोगा प्रादुर्भूता—शरीरिणाम्' इस परिस्थिति में आयुर्वेद का जन्म हुआ होने से सर्वप्रथम आयुर्वेद के ज्ञानार्थ चिकित्सालय का होना परमावश्यक है। इसका उपयोग किस तरह होगा—यह देखेंगे।

विविध प्रकार के रोगियो के लिये चिकित्सालय होता है। अनेक प्रकार की व्याधियो का अध्ययन करते हुए ही आयुर्वेद के सिद्धान्तो का जन्म हुआ है, इस विषय पर ध्यान देना आवश्यक होगा। रक्त का निर्माण यकृत मे, अन्न का शोषण ग्रहणी द्वारा तथा फुफ्फुसो से प्राणवायु का ग्रहण इत्यादि विषयो का ज्ञान प्राचीनो को कैसे हुआ, इस विषय मे आश्चर्य व्यक्त किया जाता है। प्राचीन आचार्य अतीन्द्रिय दृष्टि थे—ऐसा निष्कर्ष निकाल कर आज वैद्य लोग चुप बैठते है। इन सब प्रश्नो का हल उपर्युक्त विचारो मे निहित है—ऐसा स्पष्ट मालूम होगा। विकृति का ज्ञान होने पर प्रकृति का आकलन होता ही है। अतएव इस विषय पर सर्वप्रथम ध्यान देना चाहिये।

आयुर्वेदीय पञ्चमहाभूत सिद्धान्त, रस-वीर्य-विपाक सिद्धान्त तथा दोष धातु-मल सिद्धान्त ये तीनो सिद्धान्त सजीव शरीर पर सापेक्ष होने के विषय मे कोई विवाद नही है। प्रयोगशाला की काच की नलिका मे इनका दर्शन होना असम्भव है। अत आयुर्वेद के अध्ययन के तीन चौथाई भाग का साक्षात् सम्बन्ध चिकित्सालय से ही होता है। शारीर सम्बन्धी प्रत्यक्ष ज्ञान भी सजीव शरीर की अपेक्षा रखता है। "शोधयित्वा मृत सम्यक् ज्ञातव्योऽङ्ग विनिश्चय" इस सूत्र में शव विच्छेदन की मर्यादा केवल अङ्ग विनिश्चय तक ही सीमित है। मर्म, सिरावर्ण विभक्ति तथा सिराव्यध विधि, गर्भ व्याकरणादि के अध्ययन के लिये सर्वप्रथम चिकित्सालय की आवश्यकता तो सर्वसम्मत मालूम होती है। परन्तु इस विषय में कोई क्रियात्मक कदम नही उठाया जाता है।

जब आयुर्वेदीय अध्यापक को त्रिदोष, रसवीर्यविपाक, मर्मादि के सामान्य-विशेष छात्रो को स्पष्ट कराने का प्रसङ्ग आता है तो वह बेचारा भ्रान्ति में पड जाता है। वह इधर-उधर देखता है तथा सदृश विषयो के बारे में अर्वाचीन वैद्यक में क्या व्यवस्था है, इसको ढूंढता है। आयुर्वेदीय अध्यापक के लिये यह स्पष्ट होना चाहिए कि प्रत्यक्ष ज्ञान का क्षेत्र उसके लिये काच की परीक्षा-नलिका न होकर जीवित शरीर मात्र है, तथा विकृति के अध्ययन से ही प्रकृति का ज्ञान शीघ्र होता है। अत प्रत्यक्ष ज्ञान का क्षेत्र चिकित्सालय ही होगा।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होगा कि केवल रोग-निदान, चिकित्सा तथा शल्य, प्रसूति के अतिरिक्त अन्य आयुर्वेदीय विषयो के लिये भी चिकित्सालय का होना आवश्यक है। इस दृष्टिकोण को स्वीकार करना चाहिए। अत शारीर, दोषधातुमलविज्ञान तथा द्रव्यगुण आदि के अध्यापक का प्रारम्भ से ही चिकित्सालय से सम्बन्ध होना चाहिए। अध्यापन के अवसर पर कक्षा में वातप्रकृति, पित्तप्रकृति सम्बन्धी विवेचन तो होता है परन्तु प्रत्यक्ष ज्ञान रुग्णो पर नही कराया जाता है। वनस्पति के विषय में उसके एकाकी वनस्पति का रसभरा वर्णन तो किया जाता है, परन्तु रुग्णो पर उसका प्रत्यक्ष कराकर नही दिखाया जाता। इन त्रुटियो के कारण आयुर्वेदीय विज्ञान के बारे में विद्यार्थी के मन में दृढ विश्वास उत्पन्न नही हो पाता।

तदनुसार आयुर्वेदीय शिक्षण के लिये एक विशाल साधनसम्पन्न चिकित्सालय का होना नितान्त आवश्यक है, जिसमें कम से कम ७५-१०० आयुर्वेदीय रुग्णशय्याओ की व्यवस्था हो। अन्यथा आयुर्वेद विद्यालयो को मान्यता नही मिलनी चाहिए, ऐसी मेरी धारणा है। साधारणतया जिस विद्यालय में ६० विद्यार्थी प्रतिवर्ष प्रवेश पाते हो उसमें कम से कम शारीर के लिये ६-१०, दोष-धातु-मल विज्ञान के लिए ६-१०, द्रव्यगुण विज्ञान के लिये ६-१०; शल्यशालाक्य के लिये ८-१०, सौतिक, स्त्री तथा बाल-रोगो के लिये १६-२४ तथा कायचिकित्सा के लिए ४०-५० रुग्णशय्याओ की व्यवस्था हो। चिकित्सालय का एक बाह्य विभाग होना चाहिए, जिसमें कम से कम २०० तक रुग्णो की उपस्थिति प्रतिदिन हो। बाह्य शल्यकर्म विभाग में भी पूर्वकर्म तथा पश्चातकर्म के लिये पूर्णतः आयुर्वेदीय उपचार की व्यवस्था तथा काय विभाग भी पूर्णत आयुर्वेदीय होना आवश्यक है।

आयुर्वेदीय तथा अर्वाचीन शय्या एकत्र अथवा पृथक्-पृथक् विभागो में हो—इस विषय में मैं अभी निश्चित मत नही बना पाया हूं। परन्तु नूतन रूप से प्रारम्भ की जाने वाली संस्था में आयुर्वेदीय काय-शल्य-सौतिकादि विभाग एक साथ होने पर व्यवस्था, शिक्षण, परस्पर विचार-विनिमय आदि अनेक दृष्टि से लाभ होना सम्भव है।

आयुर्वेदीय विभागो में काम करने वाले वैद्यो को अपने-अपने विभागो के लिए निदान चिकित्सा विषयक समान नीति का अवलम्बन करना चाहिए।

प्रत्येक विभाग के लिये अध्यापन के अनुसार साधन-सामग्री तथा विशेष पत्रको की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

इन सभी की सुविधा के लिए पञ्चकर्म का एक विभाग रखा जावे। चिकित्सालय तथा तदन्तर्गत सम्पन्न एव सुसज्जित आयुर्वेदीय विभाग—यही एकमात्र आयुर्वेदीय पाठयक्रम का आधार होगा। इन विभागो की कार्य-क्षमता पर ही आयुर्वेद की सफलता निर्भर है। इन विभागो का उपयोग किस तरह कर लेना चाहिए, इसके लिये भी एक तंत्र का निर्माण किया जाय। प्रत्येक विभाग मे छात्रो को काम करने के लिये अवसर दिया जाय। अध्यापक को भी स्वत रुग्णपरीक्षापत्रक को भरना होगा तथा छात्रो द्वारा भरे हुए पत्रको के निरीक्षण आदि की तपश्चर्या करनी होगी।

आयुर्वेदीय पाठयक्रम पञ्चवार्षिक रहना आवश्यक है तथा उपर्युक्त मतानुसार प्रथम वर्ष से ही अन्तिम वर्ष तक छात्रों का सम्बन्ध चिकित्सालय से होना चाहिए। परन्तु पाठयक्रम की व्यवस्था इस कुशलता की हो कि उपर्युक्त व्यवस्था के परिपाकस्वरूप छात्र जब स्नातक बनकर विद्यालय से बाहर निकले तो वे आयुर्वेद का व्यवहार करने वाले बने। विद्यालय से बाहर निकलने वाले स्नातक को आयुर्वेद का ही अनुसरण करना चाहिए इसका अर्थ क्या? आयुर्वेदीय औषधियो का ही प्रयोग जो करता है वह आयुर्वेद को लेकर बाहर पडा है ऐसा माना जाता है जो एक दृष्टि से ठीक भी है। आयुर्वेदीय तथा अनायुर्वेदीय औषधियाँ कौन-सी है, यह एक प्रश्न है। इस प्रश्न का एक उत्तर मेरे पास है कि रसवीर्यविपाकत परीक्षित और मूलद्रव्यो से युक्त तथा आयुर्वेदीय भैषज्यकल्पनाओ के अनुसार बनी हुई कोई भी औषधि आयुर्वेदीय हगी। इस विचारधारा के अनुसार अगर मैं क्वीनीन को अनायुर्वेदीय कहूँ तो मेरे मित्र मुझे क्षमा करेंगे। क्वीनीन आयुर्वेदीय औषधि नही है क्योकि यह आयुर्वेदीय भैषज्यकल्पना के अनुसार तैयार नही की जाती। यह औषधि है परन्तु आयुर्वेदीय औषधि नहीं है। इसी दृष्टिकोण से पेनीसिलीन तथा स्ट्रेप्टोमाइसीन इत्यादि औषधियाँ भी आयुर्वेदीय नही हो सकती। भिन्न-भिन्न वनस्पतियो के टिन्क्चर्स तथा एक्सट्रेक्ट्स का भी आयुर्वेदीय औषधियो में समावेश नही किया जा सकता है। सल्फाड्रग्ज तथा इन्जेक्शन्स के विषय में भी यही विचार रहेगा। आयुर्वेद और एलोपेथी इन दो पद्धतियो में अन्तर न माननेवाले तथा इन दोनो के मधुर सम्मिलन की कल्पना करने वालो की दृष्टि मे इस प्रकार की औषधियो मे कोई भेद प्रतीत नही होता है। परन्तु मेरे विचार से इन दोनो प्रणालियो का आधार मूलत भिन्न है तथा दोनो का अध्ययन भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण से हुआ है। कला के क्षेत्र मे दोनो मे बहुत साम्य मिलेगा परन्तु तत्वत दोनो में मौलिक भेद है। अतएव जब महाविद्यालयो से आयुर्वेदीय स्नातक बनकर बाहर निकले तब उन्हे इस भिन्न दृष्टिकोण का सम्यक् ज्ञान होना आवश्यक है। इस प्रकार की निष्ठा का निर्माण तो केवल अनुभव प्राप्त करने पर ही होगा, जिसका उल्लेख मैने ऊपर किया है। अतएव प्रचलित पाठयक्रम मे प्रथमत शास्त्र तथा तदनन्तर प्रत्यक्ष ज्ञान की व्यवस्था, इस क्रम को बदलकर एकदम विपरीत मार्ग का अनुसरण किया जाय तो अच्छा है। प्रथम निदान-पञ्चक के सिद्धान्त, तदनन्तर रोगनिदान व अन्तिम वर्ष मे औषधि आदि योजना अब जारी है। मेने प्रथम ही प्रतिपादन किया है कि आयुर्वेद की उत्पत्ति तो मुख्यत प्रत्यक्ष से ही हुई है। अतएव प्रथम उपचार और तदनन्तर निदान विषयक सिद्धान्त, ऐसा क्रातिकारी परिवर्तन पाठ्यक्रम मे होना मै आवश्यक मानता हूँ।

पाठको को सम्भवत यह विचार आश्चर्यकारक लगेगा, परन्तु थोडा विचार करने पर विदित होगा कि ऐसे क्रातिकारी परिवर्तन के सिवाय अन्य कोई मार्ग नही है। इस योजना को क्रियान्वित करने पर स्नातक के लिये शीघ्र औषधोपचार लिखना सरल होगा तथा औषधियो के गुणो का सम्यक् ज्ञान होने से उसकी सफलता होगी, और वह सदैव आयुर्वेद का ही अवलम्बन करेगा। यह योजना अत्यन्त सरल तथा परिणामकारी सिद्ध होगी। पाठयक्रम के प्रथम डेढ से दो वर्षों मे दोष-धातु-मलो की विकृति का परिचय, प्रकृति विनिश्चय का ज्ञान होने के पश्चात् निदान-चिकित्सा आदि अन्य विषयो में प्रवेश सरलता से होगा—कारण कि वह उस अवस्था में बिल्कुल अपरिचित नहीं रहेगा। विकृति परीक्षण की उसे कल्पना होगी। ऐसे छात्रो के लिए नित्यप्राप्त आशुकारी व्याधियो के रुग्णो की व्यवस्था

रुग्णालय में सदैव हो जहाँ पर रोग की सामान्य चिकित्सा अर्थात् व्याधि-प्रत्यनीक चिकित्सा एक फार्मेकोपिया के रूप मे तैयार रहना आवश्यक है। सर्वप्रथम एक-डढ वर्ष मे *निदान तथा सामान्य* चिकित्सा तथा उसके अध्ययन की सीमा हो। उसके लिये एक छोटा-सा रुग्णपरीक्षापत्रक होना चाहिए। द्रव्यगुणविज्ञान के विभाग म वह द्रव्यो के गुणो का परिचय प्राप्त करेगा। इस एक डढ वर्ष के अध्ययनकाल मे उसे नित्य की व्याधियो म प्रयुक्त औषध-योजना, सामान्य निदान तथा रसवीर्यविपाक आदि का प्रत्यक्ष ज्ञान होगा। पश्चात् के एक वर्ष म उसे विशेषत विशेष चिकित्सा तथा अघाश कल्पना प्रदर्शित करनेवाल पत्रको के द्वारा जीर्णव्याधि के उपचार म लगाना चाहिए तथा *अन्तिम वर्ष मे तो उसे गृहवैद्य* का कार्यभार सौपा जाय तथा बारी-बारी से उसे शल्य शालाक्य तथा सौतिकादि अन्य आयुर्वेदीय विभागो म कार्य करने का अवसर दिया जाय। निदान चिकित्सा, शल्य शालाक्य अथवा सौति कादि कोई भी विषय हो, आयुर्वेद का ज्ञान सर्वत्र समान रहता है।

रुग्णालयीन पाठ्यक्रम के विषय मे यह मेरी योजना है। किस पद्धति-से कौन से विषय का अध्ययन तथा किन-किन रुग्णो अथवा व्याधियो के लिए किस किस औषधि का ज्ञान कराया जाय इस विषय मे मै एक विस्तृत योजना बना रहा हूँ। पाश्चात्य वैद्यक का स्नातक पूर्ण रूपेण तज्ज्ञ होता है ऐसा ग्रह होने की कोई आवश्यकता नही है। परन्तु यह निर्विवाद है कि वह कर्मकुशल अवश्य होता है जिसमे कोई शका नही। यही नीति हमे अपनानी होगी। अपनी इस योजना म आयुर्वेदीय चिकित्सालय को मैं आयुर्वेद का एक महान् वैभव मानता हूँ।

आयुर्वेद का दूसरा वैवव है औषधि निर्माणशाला। आयुर्वेदीय स्नातक से जो अपेक्षा की जाती है (जिसका ऊपर निर्देश है) इसकी पूर्ति के लिये इस दूसरे विभाग की आयुर्वेदीय सस्था के लिये अनिवार्यता है। इस निर्माणशाला का स्वरूप भी विशाल तथा साधन-सम्पन्न होना चाहिए। निर्माणकारी भी महान कुशल, प्रत्यक्षकर्मी तथा अनुभवी हो तथा निर्माणशाला में वानस्पतिक तथा अन्य खनिज द्रव्यो के विविध कल्पो का निर्माण होना आवश्यक है। पारद के अष्टविध-सस्कार, सत्वपातन, द्रुति, कूपीपक्वरसायन, जारण आदि का वर्णन ग्रन्थो में ही पडा न रखकर उनको प्रत्यक्ष में लाना होगा। उत्कृष्ट औषधियो का निर्माण भी चिकित्सा के लिए अत्यन्त अनिवार्य है। प्राचीनो ने वनस्पतियो की अनेक प्रक्रियाए निर्माण कर दी। तदनन्तर सिद्धौषधियो का व्यवहार प्रारम्भ होकर चिकित्सा मे एक महान क्राति हुई और चिकित्सा म प्रयुक्त औषधियो मे स्थैर्य, शीघ्र गुणकारित्व तथा उनकी अल्पमात्रा आदि का व्यवहार रूढ हुआ। आज के युग म तो औषधियो के इन गुणो की आवश्यकता अधिक ही प्रतीत होती है। अध्यापक चिकित्सालय मे औषधियो के शीघ्र तथा निश्चित गुणो का परिचय नही करा सके तो उसक द्वारा आयुर्वेद का उपासक होने पर भी उसका प्रचार नही हो सकता। अतएव औषधि निर्माण-शाला प्रभावी औषधियो के निर्माण मे सदैव *व्यस्त* हो। स्थगित हुए प्रयोगो को पुनरुज्जीवित किया जाय। शास्त्र के आधार पर नूतन प्रक्रियाओ का भी निर्माण किया जाय। विद्यमान परिस्थिति म यदि प्रतिस्पर्धा म सफल होना हो तो इन्जक्शन्स से उत्पन्न होनेवाले तात्कालिक तथा शीघ्रकारी गुणो के समकक्ष आयुर्वेदीय औषधियो का निर्माण करने की महत्वाकाक्षा का सम्मुख होना आवश्यक है। इस विषय को दृष्टि से दूर नही किया जा सकता है। अतएव आयुर्वेदीय-निर्माणशाला अथवा फार्मेसी आयुर्वेद का द्वितीय वैभव है ऐसा मै मानता हूँ। विविध प्रकार की प्रक्रिया सम्बन्धी विभाग, उसम अध्ययन की योग्य व्यवस्था तथा साधन-सामग्री से सम्पन्न यह विभाग होना चाहिए। आयुर्वेद को प्रत्यक्ष पर सिद्ध करने के लिये उपर्युक्त विशाल समुचित चिकित्सालय तथा विशाल फार्मेसी से युक्त शिक्षा सस्था होने पर ही इस प्रकार का पाठ्यक्रम सफल होगा। फार्मेसी से सम्बद्ध एक वनस्पति उद्यान होना चाहिए। वनस्पति उद्यान स्वतन्त्र न हो तो भी चल सकेगा। लेकिन एक विशाल वस्तु सग्रहालय होना चाहिए जिसमे वनस्पति तथा खनिज द्रव्यो के नमूने, एव वर्गीकरण दर्शक चित्रादि का समावेश हो।

आयुर्वेदीय पाठ्यक्रम को सफल बनाने के लिए अन्तिम तथा अत्यन्त महत्व के वैभव का अब मैं विवेचन करूँगा। यह वैभव सब से प्रथम होता है। गृह निर्माण की योजना तो बनाई परन्तु इन्जीनियर न हो, 'घट' का निर्माण करना हो किन्तु कुम्भकार न हो तद्वत् आयुर्वेदीय महाविद्यालय में रुग्णालय, फार्मेसी, उद्यान तथा इतर अन्य आवश्यक साधन

सामग्री होने पर भी उनमें चैतन्य को देनेवाला आत्मा, दृष्टकर्मा, शास्त्रनिपुण, अध्यापक न हो तो सब व्यर्थ सिद्ध होता है। जिस प्रकार आयुर्वेद के यशापयश के लिए उपर्युक्त साधन सामग्री की आवश्यकता होती है उसी तरह योग्य अध्यापक वर्ग पर भी यह निर्भर करता है। इस उत्तरदायित्व को अध्यापक टाल नही सकता। पाश्चात्य विज्ञान के समान अन्य कितने भी विज्ञान प्रतिस्पर्धा में हो परन्तु अध्यापक को अपने शास्त्र सम्बन्धी दृढ़ आत्म-विश्वास होना चाहिए। प्राय आयुर्वेदीय अध्यापक में इस प्रकार के आत्मविश्वास का अभाव होता है। उसे पाश्चात्य वैद्यक ही आदर्श एव प्रमाण प्रतीत होता है। आयुर्वेद की उस विज्ञान के साथ तुलना की जाती है। अध्यापक स्वत दुर्बल तथा परावलम्बी होता है। उसकी स्वशास्त्र में निष्ठा तथा विश्वास न होने से वह स्वय अपने व्यवसाय में तथा प्रसग आने पर अपने घर मे भी पाश्चात्य औषधि आदि का प्रयोग करता है। अत आयुर्वेद के अध्यापक के गुणो पर ही स्नातको का निर्माण निर्भर करता है। अतएव अध्यापक को पूर्णत आयुर्वेदीय बनाना होगा। इसके लिए स्नातकोत्तर शिक्षणक्रम की व्यवस्था होनी चाहिए। वर्तमान में पूना के तिलक विद्यापीठ द्वारा तथा जामनगर में केन्द्रीय शासन के द्वारा इस तरह की व्यवस्था है। यह व्यवस्था अभी अपूर्ण है ऐसा नही लगता—किन्तु इस विषय मे आवश्यक प्रवृत्ति अध्यापको में अभीतक उपलब्ध नही होती। आयुर्वेदीय शिक्षा के लिये स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम की व्यवस्था होने पर ही आयुर्वेदीय सस्थाओ का गौरव होगा। स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में एलोपेथी का समावेश करने से 'मूले कुठार' वाला हाल होगा-ऐसा मेरा स्पष्ट मत है।

अध्यापक की आयु, योग्यता तथा अनुभव के विषय में विश्वविद्यालयो से सम्बद्ध सस्थाओ में तो कुछ ऐक्य है, परन्तु देश के विभिन्न राज्यो में आयुर्वेदीय शिक्षाक्रम के लिए विभिन्न प्रवेश-योग्यता होने से यह एक जटिल समस्या हो गई है। पूना, त्रिवेन्द्रम तथा गुजरात विद्यापीठ वालो ने B A M S. की उपाधि रखी है। बनारस, लखनऊ तथा सागर विश्वविद्यालयो की उपाधियाँ भिन्न है, परन्तु प्रवेश योग्यता सर्वत्र एक समान है—यह एक समाधान का विषय है। विक्रम विश्वविद्यालय तथा मराठवाडा विश्व-विद्यालय में आयुर्वेद के शिक्षा की विद्याशाखा (Faculty) के निर्माण होने की सम्भावना है। स्नातकोत्तर शिक्षित अध्यापक ही सर्वत्र हो, ऐसा नियम विश्वविद्यालयो होना उचित होगा।

आयुर्वेदीय सस्था में कार्य करनेवाला अध्यापक उसकी आत्मा होता है और सस्था के यशापयश का उत्तरदायित्व बहुधा उसी के कौशल्य पर निर्भर है। यह मेरा मत सर्वमान्य होने से उसकी उपादेयता समझी जा सकती है।

आयुर्वेदीय शिक्षाक्रम के लिए प्रस्तुत सुझाव का साराश इस प्रकार है।

(१) ७५-१०० आयुर्वेदीय रुग्णशय्यावाले चिकित्सालय के अभाव मे आयुर्वेदीय सस्था का प्रारम्भ न किया जाय।

(२) प्रथम वर्ष से लेकर अतिम वर्ष तक छात्रो का सम्बन्ध चिकित्सालय से होना चाहिए।

(३) शारीर दोष-धातु-मल विज्ञान तथा द्रव्यगुण विज्ञान के अध्यापको का प्रत्यक्ष सम्बन्धी कार्यक्षेत्र चिकित्सा-लय ही होना चाहिए।

(४) प्रत्यक्ष क्षेत्र में अधिक समय व्यतीत करने के बिना छात्र आयुर्वेद का व्यवहार नही कर सकेगा।

(५) निदान-चिकित्सा सम्बन्धी प्रत्यक्ष ज्ञान एक विशिष्ट पद्धति से सम्पूर्णत आयुर्वेदीय विभागो से ही कराया जाय तथा उसमें व्यावहारिकता पर भी भार दिया जाय।

(६) सर्व प्रक्रियाओ के लिये अलग-अलग विभागो में विभक्त तथा शिक्षा देने की व्यवस्था से युक्त निर्माणशाला (फार्मेसी) का आयुर्वेदीय शिक्षा सस्था से सम्बन्ध होना चाहिए। सस्था के पास इसी फार्मेसी से सम्बन्धित वनस्पति उद्यान, वस्तु-सग्रहालय आदि भी हो।

(७) आयुर्वेदीय अध्यापक सुयोग्य तथा विशिष्ट आचार एव नियमो का अनुसरण करने वाला हो।

दीर्घ मनन के पश्चात् मैंने उपर्युक्त विचार प्रस्तुत किये हैं, जिसके व्यवहार्य होने के विषय में मुझे पूर्ण विश्वास है। अध्यापक तथा सस्था दोनो को इसमें अथक परिश्रम करना होगा, लेकिन अब दूसरा कोई मार्ग नहीं है।

आचार्य, आयुर्वेदीय स्नातकोत्तर
प्रशिक्षण केन्द्र, जामनगर।

'रक्त' दोष नहीं—सुश्रुत का अभिमत

वैद्य देवव्रत शास्त्री, विद्यावारिधि

आयुर्वेद आयु का विज्ञान है, यह इसके शब्दार्थ से ही स्पष्ट है। 'आयु' क्या है, आयुर्वेद मे इसकी वैज्ञानिक व्याख्या सुलभ है। "शरीर जीवयोर्योग जीवनम्" या "शरीरेन्द्रिय सत्वात्माजीव धारितम्" अर्थात् शरीर और जीव के योग या शरीर-इन्द्रिय-सत्व-आत्मा के सयोग का नाम "जीवन" है। इन सब का सयोग जब तक रहता है, जीवन का अस्तित्व भी तभी तक बना रहता है। इसी शरीर और जीव के योग अथवा शरीर-इन्द्रिय-सत्व-आत्मा के सयोग को अथवा इस सयोग—जीवन के साथ अनवच्छिन्न अर्थात् जुड़े हुए "काल" को आयुर्वेद में 'आयु' कहा गया है। एव प्रत्येक जीवधारी के साथ 'आयु' की अनवच्छिन्नता सन्निहित है यह सुस्पष्ट है।

अत शरीर क्या है, इन्द्रिय क्या है, मन क्या और आत्मा क्या है, इन सबका सयोग और उसके साथ अनवच्छिन्न 'आयु' क्या है उसका यथार्थ क्या है, आयुर्वेद इन सभी प्रश्नो का हल एक साथ प्रस्तुत करता है। जीवन को तथा जीवन के प्रत्येक सघटक को स्वस्थ, सुन्दर तथा सुदृढ बनाए रखने के उपायो के साथ-साथ आयुर्वेद आयु-वृद्धि के उपाय भी प्रस्तुत करता है। इतना ही नही, मानव जीवन के अन्तिम उद्देश्य धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष का पथ भी वह प्रशस्त करता है। इस प्रकार आयुर्वेद का यह व्यापक शास्त्र सपूर्ण रूप से मानव जीवन का यथार्थ शास्त्र है।

आयुर्वेद न केवल चिकित्सा शास्त्र है, प्रत्युत वह पूर्ण आरोग्य शास्त्र भी है। चरक आदि सहिताओ के चिकित्स्य (चिकित्सा) स्थानो मे वाजीकरण तथा रसायन अध्यायो की प्राथमिकता इसके पोषक प्रमाण है। किन्तु स्वस्थ तथा अस्वस्थ की दोनो दशाओ में आयुर्वेद-भित्ति की अध - शिला त्रिधातु—वात-पित्त-श्लेष्मा का अस्तित्व अक्षुण्ण बना रहता है।

हाँ, अपनी स्वाभाविकता के कारण जहाँ स्वस्थ देह स्थिति को ये समथ बनाते हैं, वहाँ अपनी अस्वाभाविकता के कारण ये उसके असमथ-हीन भी बना डालते हैं। त्रिधातु की इन्ही स्वाभाविक तथा अस्वाभाविक दशाओं को आयुर्वेद में 'सम' और 'विषम' कहा गया है। किन्तु दोनो ही दशाओ में त्रिधातु—वात-पित्त-कफ का अस्तित्व कायम रहता है। यही आयुर्वेद की मान्यता है। इसमें विमति सभव नही। वैदिक तथा आयुर्वेदिक सहिताओ में आयुर्वेद के इन्ही मौलिक सिद्धान्तो का सूक्ष्म किन्तु सूत्र रूप में विवेचन किया गया है।

सहिताओ में त्रिधातु (त्रिदोष) के महत्व पर प्रकाश प्रदर्शन के साथ ही उसमें भौतिक तत्वो—पृथिवी-अप्-तेज-वायु-आकाश के सम्यक् सामजस्य का सुन्दर दर्शन भी प्रस्तुत किया गया है। किन्तु इसके बाद भी त्रिधातु के महत्व को तथा उसके साथ अन्य किसी प्राणवान् तत्व को सप्रसग न समझना, न जानना केवल अपनी ही भूल है, सहिताओ तथा सहिताकारो का भला इसमें क्या दोष ? किन्तु अपनी अनभिज्ञता और सहिताओ या सहिताकारो पर उसका उलटे ही दोषारोपण ! यह तो ठीक वैसा ही है, जैसा किसी भूखे भाई का रोटी को गाली देना। वह रोटी को गाली तो देता है, किन्तु उसको पाने का प्रयत्न नही करता।

आयुर्वेद के मूल स्तम्भ वात-पित्त-कफ के प्रसग में प्रस्तुत कुछ वैद्य विद्वानो का कथन है कि सुश्रुतजी भी 'रक्त' को दोष मानते हैं। जहाँ उन्होने वात-पित्त-कफ को देहधारक बताया है, वहाँ 'रक्त' को भी साथ गिना है।" इतना ही नही सुश्रुत के शब्दो में ये लोग कुछ प्रमाण भी प्रस्तुत करते है। प्रवाह में ये 'रक्त' को दोष मानना भ्रान्त-बुद्धि का परिचायक भी कहते हैं, तो क्या इस भ्रान्त-बुद्धि का दोषारोपण सुश्रुत पर है ? क्या वस्तुत सुश्रुत ने 'रक्त' को दोष माना है, अथवा विवेचक स्वय ही भ्रान्ति के शिकार बन गये है ?

प्रश्न महत्वपूर्ण है, अत विचारणीय है। सुश्रुत तो हमारे समक्ष नही हैं। हाँ उनकी कृति उनका प्रतिनिधित्व अवश्य करती है , अत उसके द्वारा वे भी प्रत्यक्ष हैं। किन्तु उनकी कृति के माध्यम से हमें निर्णय करना है कि उन्होने 'रक्त' को दोष माना है या अदोष। जहाँ तक

वात-पित्त-कफ के साथ 'रक्त' की धारकता की बात है, यह तो स्पष्ट एव स्वयसिद्ध है ही, सहिताकार ने इसी तथ्य को स्पष्ट किया है। किन्तु वातादि के साथ वह भी उनकी ही कोटि का बन गया है अर्थात् क्या वह दोष बन गया है, यहाँ यही बात विचारणीय है।

विद्वान वैद्य विवेचको ने आयुर्वेद के त्रिदोष का स्वय भी समर्थन किया है। अपने इस समर्थन में थोडी-बहुत युक्तियो का प्रदर्शन भी उन्होने किया है। किन्तु उसके लिए वे स्वय श्रेय के अधिकारी नही। क्योकि साधारण आयुर्वेद-विद् भी यह भली-भाँति जानता है कि त्रिदोष आयुर्वेद के मौलिक आधार है और इनका निदर्शन आयुर्वेदिक सहिताओ तथा आयुर्वेद से सम्बन्धित अन्य वैदिक सहिताओ मे भी स्पष्ट रूप से है। अत' त्रिदोष को प्रमाणित करने का प्रयास आयुर्वेद-जगत् के लिए इन विचारको की कोई नई देन नहीं है। विचारको की जो उनकी अपनी बात है, वह सुश्रुत पर 'रक्त' के दोषत्व निरूपण का आरोप है। इसलिये उनका यहा यही अश विचारणीय है।

डॉ० वाइज, डॉ० रायल, डॉ० डेविड सी मुथ, सर जान मार्शल, मि० वैवर, एम० डी० क्लार्क, डॉ० कास्टरलानी, डॉ० शर्मेष आदि आयुर्वेद के प्रशसक विश्व विश्रुत प्रतीच्य विद्वान् विचारक एव वैज्ञानिक आयुर्वेद के वात-पित्त-कफ के सम्बन्ध मे निर्दिष्ट सहिताओ के यथार्थ प्रसग को यदि सम्यक् न समझ सक तो यह बात समझ म आ सकती है। किन्तु आयुर्वेद के वरद पुत्र वैद्य विद्वान् भी सहिताओ की वाणी सप्रसग न समझ सके, प्रत्युत् स्वय यथाप्रसग न समझ सकने के कारण सहिताकारो पर दोषारोपण करने लगे तो यह उनका दुर्बोध ही समझना चाहिये।

"वायु पित्त कफश्चेति'—"वात-पित्त-कफास्त्रय'॥ चरक। "वात-पित्तश्लेष्माण"—"त्रय एव दोषा"॥ सु० "वायु पित्त कफश्चेति त्रयो दोषा समासत ॥अ० हृ०। "वात पित्त कफा ज्ञेया'॥ शार्ङ्ग०॥ इस प्रकार अभिहित वात पित्त-कफ, ये ही आयुर्वेद के त्रिदोष हैं। आयुर्वेद में इनको 'दूषणा दोषा" कहा गया है, किन्तु "धारणाद्धातव" तथा "मलिनी करणान्मला" भी इनको कहा गया है। देहधारक होने के कारण इनकी उपमा मडप को धारण करनेवाले त्रिस्थूण से दी गई है।

"शरीरमिद धार्यतेऽआगारमिव-स्थूणाभिस्तिसृभि"। सूर्य-सोम-अनिल से भी इनकी तुलना की गई है —

विसर्गादानविक्षेपै सूर्य सोमानिला यथा।
धारयन्ति जगद्देह वातपित्त कफास्तथा॥

ऊपर शारीरिक दोषो की त्रिस्थूण से तुलना की गई है। यद्यपि सुश्रुत से भी पूर्व ये दोष स्थूणवत् माने जा चुके है, तथापि सुश्रुत ने इसका कोई प्रतिवाद नही किया है। अत त्रिदोष के स्थूणवत् प्रतिपादन मे सुश्रुत का भी अभिमत स्पष्ट है। प्रत्युत् सुश्रुत ने अपने शब्दो मे त्रिदोष को स्थूणवत् ही स्वीकार किया है।

अब सुश्रुत के 'शरीरमिदम्' इत्यादि का विश्लेषण कीजिये और देखिए कहाँ तक उनके मत मे रक्त का दोषत्व सम्भव है। इस प्रसग मे त्रिदोष स्थूणवत् माने गए है। यहाँ दोषो की स्थूण से उपमा दी गई है और वह भी त्रिस्थूण से। सुश्रुत न जब 'रक्त को भी दोष माना है तो दोष चार हुए न कि तीन? तब इन चार उपमितो की 'त्रिस्थूण' से दी गई उपमा मे क्या अलकार है? जहा उपमेय चार हो और उपमान केवल तीन वहा उनकी परस्पर तुलना कैसी? नि सन्देह उपमेय तथा उपमान की सख्यात्मक श्रेणी जब समान होगी तभी उनकी परस्पर तुलना भी सम्भव है। उपमेय, उपमान के गुण-धर्म की असमानता तो कही तक सम्भव है। किन्तु जहा उपमा मे सख्यात्मक धर्म का महत्त्व विशेष हो, वहा उपमेय-उपमान की सख्यात्मक असमानता किसी प्रकार भी सम्भव नही। क्योकि सख्यात्मक तुलना 'दो और दो' अथवा "तीन और तीन" की ही सम्भव है।

यहाँ कहा जा सकता है कि गुण धर्म की दृष्टि से उपमेय और उपमान यहाँ दोनो ही समान है। किन्तु उपमेय यहाँ दोष—त्रिदोष है। यदि 'रक्त' भी दोष है, तो इन उपमितो मे उसका भी नाम होना चाहिए। किन्तु वह नही है। अत इससे स्पष्ट है कि सुश्रुत ने त्रिदोष से अतिरिक्त 'रक्त' को दोष नही माना। अन्यथा "स्थूण-भिस्तिसृभि का निर्देश वे नही करते। बल्कि देह के आधारभूत वात पित्त-कफ तथा 'रक्त' की तुलना "स्थूणा-भिश्चतसृभि' कह कर की गई होती। किन्तु यहाँ "स्थूणाभिस्तिसृभि" का ही निर्देश है अर्थात् आगम के आधार केवल तीन है, तब उपमान की सख्या चार किस प्रकार सम्भव है? अत यहाँ उपमान की संख्या से स्पष्ट है कि उपमेय की सख्या भी उतनी ही है। यहाँ त्रिस्थूण उपमान है और त्रिदोष उपमेय।

सुश्रुत ने त्रिदोष के अतिरिक्त 'रक्त' को दोष नही माना है, यह यहाँ उपमेय उपमान की यथार्थता से स्पष्ट है। इसी प्रकार सूर्य-सोम-अनिल-उपमेय वात-पित्त-कफ के उपमान है। यदि सुश्रुत ने वस्तुत 'रक्त' को दोष माना होता तो अवश्य ही यहाँ भी उपमेय वात-पित्त-कफ के साथ 'रक्त' को भी जोडकर उपमान सूर्य-सोम-अनिल के साथ कुछ और जोडने का प्रयत्न भी किया होता जो कि निश्चित् रूप से अनुमानित उपमेय 'रक्त का उपमान बन सकता। किन्तु उपमान की त्रिकता यह प्रमाणित करती है कि उपमेय भी केवल त्रिक् ही है। अन्यथा दोषो के महत्व बोध के लिए एव उनकी सख्या के अनुसार सूर्य-सोम अनिल का ही केवल निर्देश क्यो किया गया होता ? इसलिए सुश्रुत की इस उपमा से भी यही स्पष्ट होता है कि यहा भी उपमान उपमेय के ही समान है। सोम सूर्य-अनिल यहा उपमान है। अत उपमेय केवल वात पित्त-कफ ही है। इस तुलना से भी यही स्पष्ट है कि वात-पित्त-कफ से अतिरिक्त 'रक्त' सुश्रुत के अनुसार दोष नही,।

दोषो के प्रसार वर्णन के प्रसग म सुश्रुत का निम्न निर्देश है —"दोषा कदाचिदेकशोद्विश समरता शोणित सहिता वानेकधा प्रसरन्ति'। अर्थात् दोष सचित होने पर कभी एक-एक, कभी दो-दो और कभी सभी के सभी एक साथ होकर तथा इसी क्रम से 'शोणित' से मिलकर भी शरीर मे फैलते है।

अनुमानित दोष 'रक्त' के प्रसग मे यहा सुश्रुत की शब्द-योजनाओ पर ध्यान देना आवश्यक है। दोषो के प्रसार वर्णन मे यहा उनका नाम निर्देश नही किया गया है। किन्तु आगे "एकशो द्विश समस्ता" कहा गया है। इस प्रकार सुश्रुत के इस त्रिक्-शब्द समूह से केवल त्रिदोष की ही अभिव्यक्ति होती है। दोष एक-एक, दो-दो या सब-के-सब अर्थात् तीनो ही एक साथ मिलकर भी शरीर मे फैलते है। सुश्रुत की इस शब्द योजनानुसार त्रिदोष से अतिरिक्त अन्य कोई दोष प्रमाणित नही होता।

कदाचित् यहाँ यह प्रश्न हो कि गणना में एक तथा दो से अधिक सख्या के वाचक शब्द से सदा बहुत्व का ही ग्रहण होता है। इसलिए एकशो द्विश के बाद समस्त से न केवल तीन-तीन का ही बल्कि उससे भी अधिक सख्या का ग्रहण सम्भव है, इस प्रकार समस्ता से न केवल त्रिदोष ही बल्कि, 'रक्त' का भी ग्रहण हो जाता है। अन्यथा सहिताकार 'समस्ता का प्रयोग ही क्यो करते ? एकश द्विश के बाद केवल तीन-तीन के लिए कोई अन्य प्रयोग आचार्य के लिये क्या सुलभ न था ?

प्रश्न स्वाभाविक है। इसका प्रस्तुत हल भी कदाचित् अयथार्थ न हो। नि सन्देह 'समस्ता' शब्द से एक और दो ही क्यो, अनेकानेक सख्याओ का भी ग्रहण सम्भव है। किन्तु एक-एक, दो-दो के बोधक एकशो द्विश के अग्रिम क्रम तीन-तीन के बोध के लिये प्रथम आवश्यकता है और आयुर्वेद के त्रिदोष सिद्धान्त के अनुसार 'समस्ता' निश्चित् रूप से इसी आवश्यकता की पूर्ति करना है। तीन-तीन के बाद जब और कुछ है ही नही तो 'दो के बाद समस्ता 'तीन के अतिरिक्त और किस का ग्राहक हो सकता है।

जहा तक इस शब्द से 'रक्त' के भी सुगृहीत होने की बात है सुश्रुत ने 'दोषा से शोणित सहिता' का पृथक् प्रदर्शन करके इसके दोषत्व प्रतिपादन को शून्य बना दिया है। 'शोणित' अर्थात् 'रक्त' से मिलकर भी दोष शरीर मे फैलते है। ये दोष कभी एक एक करके, कभी दो-दो करके और कभी तीनो के तो तीनो ही एक साथ होकर तथा रक्त से भी मिलकर शरीर मे फैलते है। सहिताकार की इस शब्द-योजना से क्या यह ज्ञात होता है कि 'रक्त' का भी दोष होना किसी प्रकार सम्भव है ? यहाँ दोषो का 'रक्त' से पृथक्त्व स्पष्ट है।

इस प्रकार समस्ता से 'रक्त' का ग्रहण सम्भव नही। "एकशो द्विश समस्ता" से एक-एक, दो-दो और तीन-तीन करके त्रिदोष ही केवल सुगृहीत है। इससे स्पष्ट है कि आयुर्वेद विश्रुत दोष त्रिदोष ही है। सुश्रुत ने 'रक्त' को भी दोष माना है, यह कथन केवल प्रलाप है।

तब 'तीन-तीन' के लिए एकश द्विश जैसा ही कोई स्पष्ट प्रयोग आचार्य ने क्यो नही किया ? इसलिये कि 'एकशस्, द्विशस्' जैसा 'त्रिशस्' आचार्य को सुलभ नही था और होता भी तो उसके स्थान पर 'समस्ता' का प्रयोग ही समुचित होता। क्योकि 'तीन-तीन' की पूरी सीमा को वह समुचित रूप से समाप्त करता है। अत सहिताकार को समस्ता का प्रयोग करना पडा। किन्तु शब्द योजना-नुसार इससे तीन-तीन का बोध स्पष्ट है ही। "सर्वे समायन्तु श्रीमन्त" क्या यहाँ 'सर्वे' से केवल 'तीन' का बोध सम्भव नही ? हाँ, तीन के बाद इससे 'सौ' और उससे भी

अधिक सख्या का बोध भी सम्भव है। किन्तु जहाँ तीन से अधिक कुछ हो ही नही, वहाँ इससे अधिक इससे भला किस प्रकार सम्भव है? फिर एक-दो के बाद 'सर्वे' तीन का ही तो बोधक होगा? बिना समझे ही 'शोणित' को दोष समझकर 'समस्ता' मे उसका सन्निपात करना नि सदेह आचार्य के साथ अन्याय करना है।

सहिताकार ने यहाँ स्पष्ट रूप से दोषों से 'शोणित' का पृथक्त्व प्रदर्शित किया है —'दोषा शोणित सहिता वा प्रसरन्ति"। सहिताकार के मत मे 'रक्त' यदि दोष होता तो 'दोषा' से वह स्वय ही गृहीत हो जाता। 'दोषा' से पृथक् उसके निर्देशन की आवश्यकता होती ही क्यो? किन्तु पृथक् से भी उसका प्रदर्शन सिर्फ इसलिये आवश्यक था कि उसके द्वारा ही दोष शरीर में प्रसरण करते है।

आचार्य ने 'समस्ता' शब्द का प्रयोग बहुत सोच-समझ कर किया है। अन्यथा प्रवाह में एकश द्विश के बाद 'समस्ता' के स्थान पर 'बहुश' का प्रयोग यदि कर बैठते तो आयुर्वेद का त्रिदोष सिद्धान्त नि सन्देह सन्दिग्ध हो जाता। अत 'समस्ता' का प्रयोग वहाँ हर दृष्टि से समुचित है। और सहिताकार की शब्द-योजनानुसार उससे त्रिदोष वात-पित्त-कफ ही गृहीत है।

सुश्रुत ने केवल 'रक्त' को दोष ही नही माना, बल्कि, त्रिदोष का प्रतिपादन भी किया है। दोषो की निरुक्ति करते हुए सहिताकार ने—'एतेषो क्षयवृद्धिहितै प्रत्ययैर्वात पित्त श्लेष्मेति च रूपाणि भवन्ति' कहा है। यदि सहिताकार ने 'रक्त' को भी दोष माना होता तो यहाँ वात पित्त-कफ के साथ वे 'रक्त' की भी निरुक्ति अवश्य करते। यहाँ 'रक्त' की निरुक्ति भी उतनी ही अपेक्षित होती। फिर आचार्य ने उसकी उपेक्षा क्यो की? इसलिये कि आचार्य के मत में 'रक्त' दोष है ही नही। यदि वह दोष होता तो अवश्य ही 'दोषाणा' से वह भी गृहीत हो जाता।

दोषो के सामान्य स्थानो के वर्णन से पूर्व सहिताकार ने "दोष स्थानान्यत ऊर्ध्वंवक्ष्याम' कहा है और दोषो के स्थान वर्णन करते हुए उन्होने वात पित्त-कफ के स्थानो का ही वर्णन केवल किया है। यदि सहिताकार ने 'रक्त' को भी दोष माना है तो यहाँ 'रक्त' के स्थानो का भी वर्णन उन्होने क्यो नही किया है। "दोष स्थानान्यत वक्ष्यामि" में 'दोष' से भला 'रक्त' क्यो नही सुलभ हो सका, यदि वह दोष है। जब दोष स्थानो के कहने की बात आचार्य कहते हैं तो 'दोष' से 'रक्त' गृहीत क्यो नहीं हुआ, यदि वह दोष है? इससे भी यही स्पष्ट है कि सुश्रुत ने 'रक्त' को दोष नही माना।

आगे प्रकृतिस्थ दोषो के विभिन्न स्थानो के वर्णन के बाद सहिताकार ने—'एतानि खलु दोषाणा स्थानान्य व्यापन्नानाम्" कहा है और यहाँ भी वात पित्त-कफ के स्थानो का ही केवल वर्णन किया है, यहाँ 'रक्त' का नाम तक भी नहीं लिया है। यदि आचार्य के मत में 'रक्त' दोष है तो 'दोषाणा' में उसका भी समावेश क्यो नही किया गया? अत इससे भी यही स्पष्ट है कि सुश्रुत के मत में 'रक्त' दोष नही।

यहाँ इस प्रसग में 'पित्त' और श्लेष्मा के साथ सहिताकार ने 'वात' के विभिन्न स्थानो का वर्णन नही किया है और "तत्र वातस्य वातव्याधौ वक्ष्याम" कहकर उसको आगे के लिये छोड दिया है। किन्तु 'पित्त' और 'श्लेष्मा' के विभिन्न स्थानो और उनके विभिन्न स्थानीय गुणो के विशद वर्णन के बाद सहिताकार ने पुन "एतानि खलु दोषस्थानानि" कहा है। सहिताकार के इसी सकेत को लेकर 'रक्त' को दोष मान लेने का दोषारोपण कर के वैद्य विद्वानो ने अपने व्यग बाणो से सहिताकार की अच्छी सेवा की है। लेकिन कौन कह सकता है कि सहिताकार के प्रति विवेचको के ये व्यग-बाण स्वय उनको ही उपहासास्पद नही बना डालेगे? इससे ज्ञात होता है कि तथ्य से परे छिद्रान्वेषण में विवेचक किस तरह तन्मय है। किन्तु छिद्र को भी प्रमाणित करने की सामर्थ्य उनमें नही है, ऐसा जान पडता है।

"एतानि खलु दोषस्थानि" से पूर्व भी सहिताकार ने 'एतानि खलु दोषाणा स्थानानि" कहकर दोषो के सम्बन्ध में अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी है। यहाँ दोषो के विभिन्न स्थानो तथा उनके विभिन्न स्थानीय गुणो के विशेष वर्णन के बाद "एतानि खलु दोष स्थानानि" का पुन पाठ सहिताकार का उपसहारात्मक पाठ है। पूर्वापर सम्बन्ध तथा वर्णन विशेष को देखते हुए इस उपसहारात्मक वाक्य का पुनर्निर्देशन अस्वाभाविक नही। विषय-वर्णन के उत्तरोत्तर स्तर के अनुसार किसी वाक्य विशेष की पुनरावृत्ति तो स्वाभाविक है ही। अत यह कहना कि सहिताकार के इस वाक्य से 'रक्त' का दोष होना प्रमाणित है, मिथ्या है। अन्यथा "एतानि खलु दोषाणा स्थानान्य व्यापन्नानाम्" में "दोषाणाम्"

से 'रक्त' को भी दोष स्वीकार करके उसके स्थानो का भी वर्णन अवश्य किया गया होता।

दोषो के विभिन्न स्थानो तथा स्थानानुसार उनके निर्दिष्ट गुण-प्रकथन के एकदम बाद 'रक्त के स्थानो का सकेत केवल (वर्णन नही) करते हुए सहिताकार ने "एतानि खलु दोष स्थानानि" कहा है। अत विवेचको ने इससे यह तथ्य निकाला है कि सुश्रुत ने 'रक्त' को दोष मान लिया है। यहाँ विवेचको का कहना है कि यदि आचार्य ने 'रक्त' को दोष न माना होता तो इस उपसहारात्मक वाक्य से पूर्व तथा दोषो के विभिन्न स्थानो के विशेष वर्णन के बाद बीच मे उसके स्थानो का सकेत उन्होने क्यो किया होता ?

इस प्रकार के प्रश्न और उनसे इस तरह के तथ्य निकालना स्वाभाविक है। किन्तु एक विवेचक की सुलझी वाणी के लिए यह बिल्कुल ही स्वाभाविक नही। ऐसा जान पडता है कि आक्षेपक केवल आक्षेप की ही अपेक्षा रखते है, यथातथ्य को समझना और जानना वे आवश्यक नही समझते।

तथ्य यह है कि सहिताकार ने अपनी शैली के अनुसार प्रसगवश "शोणितस्य स्थान यकृतप्लीहादौ' कहकर आगे "तच्च प्रागभिहितम्" कहते है। अर्थात् यकृत और प्लीहा "रक्त" के स्थान है और वे पहले ही कहे जा चुके है। आचार्य के इस कथन से यह साफ है कि 'एतानि खलु दोष स्थानानि" के उपसहार सकेत से 'रक्त' के स्थानो का यहाँ रचमात्र भी सम्बन्ध नही है। अन्यथा सहिताकार ने "तच्च प्रागभिहितम्" और आगे जो कुछ उन्होने कहा है वह न कहते। कदाचित् यह अनुमान भी तभी सभव हो पाता कि इस उपसहार वाक्य से सहिताकार ने 'रक्त' को भी दोष स्वीकार किया है। किन्तु आचार्य ने "तच्च प्रागभिहितम्" कहा है। अर्थात् 'रक्त के स्थानो का वर्णन पहले ही किया जा चुका है। अत इससे स्पष्ट है कि "एतानि खलु दोष स्थानानि" मे दोष से केवल वात-पित्त-कफ के स्थानो का ही सम्बन्ध है न कि रक्त के स्थानो का? अतएव दोषो के स्थान-प्रकथन के बाद सहिताकार के इस उपसहारात्मक सकेत से उन पर 'रक्त' को भी दोष मान लेने का जो आरोप किया गया है, भ्रामक है। विवेचको ने यदि "तच्च प्रागभिहितम्" पर स्वय भी ध्यान दिया होता तो "एतानि खलु दोष स्थानानि" से 'रक्त' के स्थानो का वर्णन भी सुगृहीत है, इसलिए 'रक्त' का भी दोष होना आचार्य की सम्मति मे स्पष्ट है ही, यह कहने की चेष्टा वे कभी नही करते।

'रक्त' के स्थान सकेत से तुरन्त बाद "तच्च प्रागभिहितम्" कहकर सहिताकार ने स्पष्ट कर दिया है कि "एतानि खलु दोष स्थानानि' से वातादि त्रिदोषो के स्थान कथन का ही केवल उपसहार किया गया है। 'रक्त' के स्थान तो पहले ही कहे जा चुके है। यहाँ इस उपसहार से उनका सम्बन्ध जोडना व्यर्थ है। अत इस वाक्-सघर्ष से भी यही सिद्ध हुआ कि 'रक्त' सुश्रुत के अनुसार दोष नही।

त्रिदोष अपनी साम्यावस्था के कारण शरीर के धारक बताए गए है। जिस प्रकार ये अपनी विषम स्थिति के कारण शरीर-हानि के हेतु बन जाते है, उसी प्रकार 'धातु' और 'मल' अपनी विषम स्थिति के कारण शरीर-हानि के हेतु बन जाते है। इसलिए स्वस्थ देह के लिए, 'सम दोष' के साथ-साथ 'समधातु मल क्रिय' भी कहा गया है। स्वस्थ और अस्वस्थ देह की इन दोनो स्थितियो के लिए दोष-धातु और मल ही जिम्मेदार है। जहाँ ये अपनी समस्थिति से शरीर को धारण करते है, वहाँ अपनी विषमस्थिति से शरीर का विनाश भी कर डालते है। इस प्रकार शरीर की दोनो अवस्थाओ के लिए दोष-धातु-मलो का महत्त्व समान है। यही कारण है कि प्रसग विशेष मे जहाँ इनके साथ-साथ सकेत की आवश्यकता पडती है, इनका निर्देशन वहाँ आवश्यक हो जाता है। किन्तु इसका निष्कर्ष यह नही कि दोषो के साथ-साथ 'रक्त' का या इनमे से किसी का भी प्रसग विशेष मेँ महत्त्व प्रदर्शन यदि कर दिया जाए या ऐसा करना आवश्यक हो जाए तो ये भी दोष अर्थात् वात-पित्त-कफ की श्रेणी के बन जाएँगे।

विविध तत्वो के विविध प्रसग सम्भव है। किसी एक प्रसग मे विविध तत्वो के गुणपरक समानता भी सम्भव है। किन्तु इसका अर्थ यह तो नही कि किसी एक प्रसग मे समान महत्त्व रखनेवाले अनेक तत्व एक कोटि के समझ लिए जाएँ? सम्भव है किसी कान्ता का मुख सौन्दर्य में चन्द्र के समान हो। किन्तु ऐसा तो नही कि वह चन्द्र ही हो—वह चन्द्रमा ही कहलाने लगे? तब किसी प्रसग में दोषो की समानता के कारण धातु 'रक्त' दोष कैसे बन जायेगा, जब कि 'दूषणाद्दोषा' कहे गये हैं और यह धारणाद्धातु है, विवेचक को यह जानने का प्रयत्न करना चाहिये कि आचार्य ने किस प्रसग मे 'रक्त' को दोषो के

साथ प्रस्तुत किया है। इस लेख मे उसका यथास्थान सकेत तो किया जायेगा ही।

नि सन्देह दोष, धातु और मल प्रसग विशेष मे गुणो की समानता रखते हुए भी अपने वर्गीकृत नाम के निश्चित् स्थान पर ही रहेंगे। इनमे गुण-परक समानता सम्भव होने पर भी ये एक दूसरे का स्थान-नाम ग्रहण नही कर सकते।

यदि ऐसा है तो दोषो को 'धारणाद्धातव' और 'मलिनी करणान्मला' भी कहा गया है ऐसा क्यो? प्रत्यक्ष मे यह प्रश्न बहुत सुन्दर एव स्वाभाविक है। फिर भी इस प्रश्न को यथातथ्य (यथार्थ) नही कहा जा सकता। वस्तुत 'धातु' और 'मल' ये दोषो के नाम नही हैं, बल्कि ये उनके गुण-धर्म के परिचायक हैं। 'धातु' और 'मल' की भाँति 'दोष' भी वातादि के गुण-धर्म का ही परिचायक है। फिर भी वातादि आयुर्वेद मे दोष नाम से विश्रुत हो चुके है। वातादि को दोष कहना कहाँ तक उचित है, इसका थोडा-सा विश्लेषण आगे किया जायगा।

'धातु' और 'मल' जिनका सकेत अभी किया गया है, वातादि के गुण-धर्म है, नाम नही। आकाश व्यापक है, इसलिये वह 'विष्णु' है। पशु, पक्षी, जीव, जतु सब गतिशील है, इसलिये य सब 'गौ' है। क्योकि 'वेवेष्टीति विष्णु' और 'गच्छतीति गौ'। अर्थात् जो व्यापक हो 'वह 'विष्णु' और जो गतिशील हो वह 'गौ'। इसलिए अपनी व्यापकता के कारण आकाश विष्णु है। इसी प्रकार गतिशील होने के कारण पशु-पक्षी भी 'गौ' है। यदि यह सब कुछ यथार्थ है तो नि सदेह दोष भी 'धारणाद् धातव' और 'मलिनी करणान्मला' नाम्ना अवश्य कहे जायेंगे। किन्तु व्यापक होने के कारण आकाश को 'विष्णु' और गतिशील होने के कारण कीडे-मकोडो को भी 'गौ' कहा जाए यह सभव नही। यद्यपि 'विष्णु' की निरुक्ति मे आकाश की व्यापकता विद्यमान है। इसी प्रकार 'गौ' की निरुक्ति मे भी मनुष्यादि की गतिशीलता सन्निहित है। फिर भी आकाश 'विष्णु' और गतिशील मनुष्यादि 'गौ' नही कहे जायेंगे।

वस्तुत व्यापकता और गतिशीलता ये गुणधर्म के द्योतक हैं और असीमित है, तथापि गुण-धर्म होने के कारण ये अपने गुणी और धर्मी मे रूढ अर्थ में सुनिश्चित हैं। जो तथ्य रूढ अर्थ मे सुनिश्चित हो, वह उसका परित्याग नही कर सकता। हाँ उसके रूढिगत अर्थ मे अतिरिक्त अर्थ का समावेश सभव है। किंतु जहाँ तक शब्द-शास्त्र का सबन्ध है, अर्थानुकूल शब्द और उसकी निरुक्ति का मूल प्राय एक होना चाहिए। वैसे अपवाद सभव है, किंतु अपवाद की अर्थविहीनता सभव नही।

'गौ' शब्द 'गम्लृ' धातु से बनता है। इसलिए इसकी निरुक्ति इसी धातु के रूप से होगी। इसी प्रकार 'विष्णु' 'विष्लृ' धातु से बनता है। इसलिए इसकी निरुक्ति भी इसी धातु के रूप से सभव है। इस प्रकार 'वेवेष्टि' और 'गच्छति' से 'विष्णु' और 'गौ' की ही निरुक्ति सभव है। इन निरुक्तियो से व्यापकता और गतिशीलता केवल 'विष्णु' और 'गौ' मे ही सन्निहित है। 'वेवेष्टीति आकाश' और 'गच्छतीति मनुष्यादि जिस प्रकार सभव नही, उसी प्रकार 'धारणाद् धातव' से दोष और 'मलिनी करणान्मला' से भी दोष—त्रिदोष किसी प्रकार भी सभव नही। वातादि दोषो के गुणधर्म 'धातु और 'मल' मे भी जा सकते है, यद्यपि दोष नाम कारण मे उनके ये गुण-धर्म समाप्त हो जाते है। किंतु अपने गुण-धर्म की व्यापकता के कारण वातादि दोष रूढ अर्थ मे नियत 'धातु' और 'मल' नही बन सकते, जब कि उनका नाम ही दोष रख दिया गया है। फिर इनके लिए 'धातु' और 'मल' की निरुक्तियो का आदान किस प्रकार सभव है? 'धारणात्' से रसादि धातु, 'मलिनी करणात् से पुरीषादि मल तथा इसी प्रकार 'दूषणात् से' वातादि दोष ही सुगृहीत है। शरीर-शास्त्र मे इन निरुक्तियो से वातादि त्रिदोष, रसादि सप्त धातु, और पुरीषादि मल रूढ अर्थ मे सुनिश्चित् है, तथापि अपने गुण धर्म के अनुसार इनकी व्यापकता परस्पर एक दूसरे मे सन्निहित है। किंतु रूढ अर्थ मे ये सब अपने स्थान पर दृढ है।

लेकिन 'धारणात्' धातु भी दोष,' मलिनीकरणात् मल' भी दोष और 'दूषणात्' दोष तो है ही, यह सब कुछ असगत-सा जान पडता है। यह तो वैसा ही हुआ, जैसे आकाश भी 'वेवेष्टीति विष्णु' और मनुष्यादि भी 'गच्छतीति गौ' निरुक्ति की यह सूझ नि सदेह अनूठी है। सभव है, यह कोई शैली विशेष हो। किन्तु इसकी आवश्यकता यहाँ अनावश्यक एव भ्रामक जान पडती है।

त्रिदोष की दोनो अवस्थाओ मे ये सभी प्रक्रियाए स्वय सन्निहित है। अपनी साम्यावस्था मे दोष 'देह समवहेतव' अर्थात् देह धारण के हेतु हैं। किन्तु असाम्यावस्था में वे 'दूषणाद् दोषा' अपने रूढ अर्थ से अतिरिक्त 'मल' के ही

बाधक हैं। फिर 'धारणाद्धातव' और 'मलिनीकरणान्मला' से वातादि त्रिदोष ग्रहण करने का प्रयास भ्रामक नही तो क्या है, जब कि 'धातु' और 'मल' शरीर शास्त्र मे विशिष्ट एव रूढ अर्थ मे वैसे ही सुनिश्चित है ?

यहाँ 'दोष' और 'मल' के सबन्ध मे कुछ उलझने तो थी अवश्य, लेकिन उनकी भ्रामक निरुक्तियो के साथ उनको सुलझाने का प्रयत्न नही किया गया, ऐसा जान पडता है। शब्द शास्त्र के अनुसार 'दोष' और 'मल' की निरुक्तियाँ यद्यपि सगत और सुस्पष्ट है, किंतु शरीर शास्त्र म इनसे जो तथ्य लिए जाते है, उनकी ये द्योतक नही, ऐसा जान पडता है। आयुर्वेद मे 'मलिनी करणान्मला' का अभिप्राय पुरीषादि से है। किंतु वह इस निरुक्ति से गृहीत नही होता। क्योकि पुरीष आदि धारक भी है और यह उनके एक पक्ष को अर्थात् उनकी असाम्यावस्था को ही प्रस्तुत करती है और यदि पुरीष से 'मल' का ग्रहण सभव हो भी तो इससे वातादि दोषो का ग्रहण सभव नही, क्योकि वातादि दोषो की व्यापकता 'मल' तक ही तब सभव होगी। कारण 'मल' का वातादि दोषो के गुण धर्म का समावेश हो जाता है। किंतु वातादि त्रिदोषो का ग्रहण पुरीषादि से इसलिए सभव नही कि वह मल से रूढ अर्थ मे गृहीत है और वातादि दोषो के गणधर्म की व्यापकता वहाँ तक पहुँच नही पाती।

इस प्रकार निरुक्ति के अनुसार 'मल' से पुरीष गृहीत नही होता। क्योकि वह धारक भी है और उसकी निरुक्ति केवल उसके सहारक पक्ष का ही निर्देश करती है। यदि 'मल' से पुरीष सभव भी हो जाता है तो उससे धारक वातादि दोषो का ग्रहण सभव नही, क्योकि वह 'मल' से रूढ अर्थ मे गृहीत है। भला 'पुरीष' वातादि दोष कैसे बन सकता है? इसी प्रकार 'दूषणाद्दोषा' से यदि वातादि त्रिदोष गृहीत है तो दोष की यह निरुक्ति सभव होने पर भी उससे वातादि दोष गृहीत होते। क्योकि ये 'देह सभव हेतव' भी कहे गए है और यह निरुक्ति उनके सहारक पक्ष का अर्थात् उनकी असाम्यावस्था का ही निर्देश करती है। निर्दिष्ट निरुक्तियो से वस्तुत वातादि दोष और 'मल' के धारक पक्ष ओझल पड जाते है।

सभव है, इन विवादो का कोई हल हो। अन्यथा अपनी दोनो अवस्थाओ के साथ दोष' से वातादि और 'मल' से पुरीषादि को रूढ अर्थ मे मानकर ही सतोष कर लेना पडेगा। क्योकि इनकी निरुक्तियो के कारण सर्वांगपूर्ण तथ्य से इनका स्पर्श अस्पष्ट है। किन्तु इस स्थिति मे विज्ञान के साथ इनका सामजस्य कहाँ तक सभव हो सकेगा, यह आयुर्वेद के महारथी विचारको पर निर्भर है।

(क्रमश)

बुंदेलखण्ड आयुर्वेदिक कालेज, झासी }

वैद्यनाथ बंग भस्म

असंयम से पैदा होनेवाले रोगों तथा दुर्बलता को दूर कर शरीर को ताकत देती है। विशेष जानकारी के लिए वैद्य से सलाह लें।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०
कलकत्ता · पटना झाँसी · नागपुर

कुष्ठव्याधि में नेत्र की क्षति

डा० राय एवेन्थर

(जून १९५८ अंक से आगे)

अन्तरालीय कनिकाशोथ (Interstitial keratitis) आँख की पुतली की बाहरी झिल्ली के शोथ के रूप मे बढ़ता है। सधान-मडल धमनी (Ciliary artery) की शाखाएँ निम्नतम स्तरो मे विकसित हो जाती है तथा स्वच्छ-मडल (Cornea) के रक्त-स्रोतो मे रोग कीटाणुओ को लाते हुए पारान्धता (opacity) को वाहिनीकृत (Vascularize) करती है। अक्षितारा के तन्तुओ में रोग-कीटाणु—वातनाडीशोथ (Neural) तथा कुष्ठार्बुदीय दोनो ही प्रकारो मे पाए गए है। शोथ होने का यह दूसरा कारण है। वाहिनीकरण (Vascularization) का जहाँ तक प्रश्न है, यह धरातल से निम्नतम स्तरो तक हो जा सकता है।

कुछ दशाओ मे एकपक्षीय अथवा द्विपक्षीय बेल का पक्षाघात (Bell's Palsy) होता है। कुष्ठार्बुदीय तन्तु कनिकाशोथ के क्षेत्र में वर्द्धिष्णु रहते हैं और कुष्ठार्बुद कनीनिका का निर्माण करते हैं।

कनीनिका सम्बन्धी व्रण (Corneal ulcer)—व्रणात्मक कनिकाशोथ (Ulcerative keratitis) मुख्यतया अश्रु सम्बन्धी मार्ग (Lachrymal passage) के सक्रमण से अथवा व्रण तथा अन्य प्रकार के सक्रमण द्वारा होता है। चेतनाशून्यता (Anaesthesia) के साथ तथा चेतनाशून्यता के बिना भी यह हो सकता है। व्रणो द्वारा क्षतिग्रस्त स्थान की प्रवृत्ति वाहिनीकृत होने (to get vascularized) की रहती है और अतत इस स्थान में कुष्ठार्बुदीय तन्तु (Lepromatous tissue) भी सक्रमित हो सकते है। कभी-कभी श्वेतमय (Leucoma, आँख का एक रोग) के साथ अतिम परिणाम के बतौर छिद्र (Perforation) भी हो जाता है।

कनीनिका के कुष्ठार्बुद—कुष्ठार्बुदीय तन्तु का आक्रमण कनीनिका के धुँधलेपन (Opacity) पर हो सकता है जो व्रणात्मक कनिकाशोथ के परिणामस्वरूप होता है—अथवा सीमा से विस्तृत रूप में कनीनिका से सम्बन्धित झिल्ली की सूजन होती है। पहले तो एक वृत्त के चतुर्थ भाग जितना ही आक्रान्त होता है, किन्तु बाद मे पूरी कनीनिका इससे आक्रान्त होती है। कुष्ठार्बुद अत्यन्त मोटे हो सकते हैं—यहाँ तक कि उनकी मोटाई १ से १ २५ सेटीमीटर तक हो सकती है। नि ष्यन्दन (Infiltration) के प्रारभ म ही कुष्ठार्बुद आसानी से चाकू द्वारा पृथक् किया जा सकता है, किन्तु बाद म, जब कि सक्रमण बडी गहराई तक हो चुकता है इसको पृथक् करना कठिन है। जब कुष्ठार्बुदीय तन्तु कनीनिका (Cornea) के परिणाह को आवृत्त कर लेते है और क्रमश बढने लगते हैं तब लघु कनीनिका के कारण कनीनिका अत्यन्त छोटी होने लग जाती है। अक्षितारा (Iritis) और वलिकाय का शोथ (Cyclitis) इस अवस्था मे बढ जाता है और नेत्र की ज्योति मे ह्रास होते-होते अधापन तक हो जाता है।

चूर्णमय पदार्थ (Calcareous deposits)—अन्तरालीय कनिकाशोथ (Interstitial Keratitis) के साथ-साथ कनीनिका का क्षय (Atrophy of the Cornea) भी बाद मे जाकर प्रारभ हो जाता है। नेत्र की अवस्था अस्तव्यस्त-सी हो जाती है, धरातलीय एव गहरे तौर पर Vascularization हो जाता है। ऐसे नेत्र मे कैल्शियम कार्बोनेट (Calcium carbonate) इकट्ठा हो जाता है। यह छोटा, पीत-श्वेत अथवा भूरा रग लिए हुए दिखायी देता है और स्पर्श करने पर किरकिरा (Gritty) ज्ञात होता है।

सारभत तत्वो तथा अणुओ के बने ठोस पदार्थ (Concretion) को सूची द्वारा सरलतापूर्वक हटाया जा सकता है, किन्तु उस स्थान पर व्रण होने की आशका बनी रहती है। सभी दशाओ में १७ ८६ प्रतिशत रोग सुगठित अन्तरालीय कनिकाशोथ के साथ और ३ १७ प्रतिशत रोगो मे इसके बगैर भी सारभूत तत्वो तथा अणुओ के बने ठोस पदार्थ (Concretion) की वृद्धि होने लगती है, जिससे यह प्रकट है कि धुँधलापन (Opacity) के बढने की भारी सभावना बनी रहती है। कनिकाशोथ (Keratitis) के प्रथम ही आक्रमण के बाद चूर्णमय पदार्थ (Calcareous

deposits) को प्रकट होने में ३ वर्ष से लेकर ४ वर्ष और ५ माह तक का समय लगता है।

अक्षितारकशोथ (Iritis) मुख्यतया रक्त-स्रोतो का एक सक्रमण है। अक्षितारा (Sclera) और तारक-बिन्दु तथा आँख के पीछे के हिस्से की सतह (Retina) के मध्यवर्ती स्थान एव सधान मडल (Ciliary body) में शोथ का विस्तार होता है। कुष्ठरोगियो मे ११ ३ प्रतिशत रोगियो को अक्षितारक शोथ (Iritis) हो जाता है। उग्र अक्षितारक शोथ (Acute iritis) के दो प्रकार है—एक मे अत्यल्प नि ष्यन्दन होता है, जो अक्षितारा तथा कनीनिका की विकृत-सधि के साथ समाप्त हो जा सकता है तथा इसकी प्रवृत्ति घटने अथवा कम होने की रहती है, दूसरे प्रकार का अक्षितारक शोथ व्याधि की जीर्णावस्था म प्रकट होता है जिसमे प्रचुर नि ष्यन्दन होता है।

बहुधा, नेत्र के रोगाक्रात होने की पहली पहचान उग्र अक्षितारक शोथ (Acute iritis) का हठात् आक्रमण ही है। कुष्ठ व्याधि के काफी प्राचीन हो जाने की स्थिति मे इसका आक्रमण और भी होता है। कुष्ठ व्याधि के विकास-क्रम मे कतिपय रोगियो पर इस व्याधि की विभिन्न प्रतिक्रियाएँ होती है। कुछ लोगो को ज्वर के साथ शरीर पर नए घाव, लाल धब्बे, त्वचा मे गुल्म (ग्रथियाँ), अण्डकोष की वृद्धि (Orchitis), तथा वात-नाडीशोथ (Neuritis) आदि हो जाते है। इनमे से कुछ लोगो को अक्षितारक शोथ (Iritis) प्रतिक्रिया के तौर पर हो जाता है। इसके पश्चात् आक्रमणो का लगातार दौर चलता है। कुष्ठ के कीटाणुओ की अत्यधिक अनुभूति-जन्य प्रतिक्रिया होती है और रक्त-स्रोत (Blood stream) मे और भी अधिक कुष्ठ के कीटाणु प्रसार पाते है। साधारणतया बलिकाय और अक्षितारा अधिक सरलता-पूर्वक आक्रात होते हैं, एक अथवा दोनो ही नेत्र इससे प्रभावित हो सकते है।

Hydnocarpus (एक पेड, जिसके बीज का तेल चालमुग्रा के तेल की तरह होता है और कुष्ठ-व्याधियो में प्रयुक्त होता है) श्रेणी की औषधियो तथा प्रलवण (Ester) के साथ-साथ प्रायोगिक औषधियाँ (Experimental drugs) जैसे एम० बी० ६९३, Reinsterna Serum, Sheep Serum, Diphtheria toxoid, Antidiphtheritic Serum तथा गन्धक से तैयार की गयी औषधियाँ, जैसे Suldox Copper तथा म्योक्रिसिन (Myocrisin)—ये सारी औषधिया अक्षितारक शोथ (Iritis) रहने अथवा नही रहने पर कुष्ठव्याधि मे प्रभावकर होती है। पोटेशियम आयोडायड (Potassium iodide) भारी मात्रा में, चिकित्सा की प्राचीन पद्धति के अनुसार, देने से यह प्रतिक्रिया होती है कि रक्त-स्रोतो म भारी सख्या में रोगाणुओ के आने के कारण अक्षितारक शोथ हो जाता है। रोम के अतिरिक्त दाँत, टॉन्सिल, नासूर (Sinus) तथा सक्रमण के अन्य स्थानो में कीटाणु एकत्र हो जाते है।

नेत्र आक्षेप (Blepharo-Spasm) और अश्रु आने के साथ-साथ पीडा भी अत्यन्त तीव्र हो सकती है। सर-दर्द भी भीषण रूप म होता है और प्राय नेत्र की पीडा असह्य होती है तथा अत्यन्त तीव्र दर्दनाशक औषधियो की जरूरत पडती है। कुछ दिनो के पश्चात् आक्रमण समाप्त हो जाता है किन्तु पुन कुछ समय के अनन्तर इसका आक्रमण प्रारभ होता है, हालाकि आक्रमण मन्द या तीव्र रूप मे हो सकता है। लगातार आक्रमण होने के फलस्वरूप अक्षितारा (Iris) पर Atrophy (पौष्टिक आहार के अभाव मे शरीर का क्षय होना) प्रकट होती दिखायी देती है। आमतौर पर कनिकाशोथ (Iritis) पहले एक नेत्र म होता है और इसके पश्चात् दूसरे नेत्र में भी इसका प्रसार हो जाता है। कनिकाशोथ के लगभग ८३ ७१ प्रतिशत रोगियो म यह देखा गया है कि प्रथमत एक ही नेत्र मे इसका आक्रमण होता है और शेष रोगियो में यह पाया गया कि उनके दोनो ही नेत्र आक्रात होते है। कुष्ठ व्याधि की पहली प्रतिक्रिया के रूप में कनिका-शोथ का उग्र आक्रमण हो सकता है। त्वचा पर नए-नए घाव निकलते है और कुष्ठ व्याधि के कीटाणुओ के लिए दाग प्रत्यक्ष से हो जाते है। व्याधियो की क्रियाशीलता की यह एक पहचान है।

छोटे-बडे Keratic precipitates दिखायी देते हैं। सगीन मामलो मे उत्स्वेदन (Exudates) के साथ अस्पष्ट रूप से नेत्र मे जल आते रहते हैं। ज्ञातव्य है कि उत्स्वेद अक्षितारा (Iris) में ही सगृहीत रहता है। कनिकाशोथ के १३ ९६ प्रतिशत रोगियो में स्पष्ट तौर पर उत्स्वेदन (Exudation) दिखायी देता है। वृत्तखण्ड की तरह नेत्र के अग्रवेश्म (Anterior chamber) मे

एकत्रित मवाद का उत्स्वेदन नेत्र द्वारा होता रहता है और कनीनिका के साथ अक्षितारा (Iris) तथा कनिका की विकृत संधि होती है। उग्र एवं कठिन कनिकाशोथ के विपरीत, कनिकाशोथ अथवा आँख की पुतली के सफेद भाग की झिल्ली की सूजन (Scleritis) के साथ अक्षितारक शोथ (Iritis) सापेक्षतया कम उद्‌गमनात्मक प्रतिक्रिया (Exudative reaction) और मन्द रोग-लक्षणों के साथ बढ़ता है। बर्फ अथवा रुई के टुकड़े की तरह श्वेत उद्‌गमन (Exudates) उग्र किस्म के अक्षितारक शोथ मे कम किन्तु साधारण किस्म के अक्षितारक शोथ में अत्यधिक दिखायी पड़ते है। जब रोग-लक्षण कम रहते हैं और सूजन की गति धीमी किन्तु दैनन्दिन प्रगति की ओर रहती है, तब नेत्र की ज्योति कम होने लगती है—नेत्र को स्थिर (Quiescent) होने मे काफी लम्बा अर्सा लग जाता है। काफी लम्बी अवधि, यहाँ तक कि ६ वर्षों तक अक्षितारकशोथ (Iritis) का आक्रमण थोड़े थोड़े समय के बाद होता रहता है और प्रत्येक आक्रमण की तीव्रता या उग्रता भी विभिन्न प्रकार की होती है।

अनुतीक्ष्ण अक्षितारक शोथ (Sub-acute iritis)—आमतौर पर इसका आक्रमण बड़ा उग्र होता है। इसके दर्द के साथ मामूली सूजन हो सकती है और प्रकाश की असहनीयता भी कम होती है। इस प्रकार की सूजन की विशेषता यह है कि अक्षितारा (Iris) पर श्वेत धब्बे अथवा कुष्ठीय गुल्म (Leprotic nodules) होते हैं। प्राय ही ये गुल्म दिखायी देते है किन्तु प्रत्येक दशा में इनका होना कोई आवश्यक नहीं है। ये धब्बे जो छोटे-छोटे कुष्ठार्बुद ही हैं देखने में पीत-श्वेत अथवा पीलापन और भूरापन लिए (Pale brownish) होते हैं। कुष्ठ व्याधि में अनुतीक्ष्ण और जीर्ण कनिकाशोथ (Sub acute and chronic iritis) की १६ ६ दशाओं में रोगियो को श्वेत धब्बे और गुल्मादि अक्षितारा (Iris) पर होते हैं। इनमें से ४५ प्रतिशत तो सुदृढ आकार-प्रकार की कुष्ठार्बुदीय ग्रंथियाँ होती है। अक्षितारा पर जो श्वेत धब्बे होते हैं, उनमें ७१ ४ प्रतिशत तो कोटरों (Crypts) में होते हैं तथा शेष धब्बे सकोचक पेशियो के पार्श्ववर्ती भागो में होते हैं। हनसेन रोग-कीटाणुओं (Hansen's bacilli) के फलस्वरूप श्वेत धब्बे सूजनवाले स्थान पर ही होते हैं। इनका निदान (Pathology) कुष्ठार्बुद की तरह ही होता है। ये धब्बे उत्स्वेदन (Exudates) की तरह नही होते और न उन्हे एकत्रित चूना (Deposits of Calcium) ही कहा जा सकता है। छोटे, श्वेत और सकुचित धब्बे, जिनमें कुछ तो श्वेत रग के चमकदार और पिन की नोक के आकार के होते हैं—अकेले अथवा जोड़ो में एक साथ बडी सख्या में पाए जाते हैं। अक्षितारा की भूरी पीठिका पर ये धब्ब रहते है। श्वेत धब्बे एक साथ मिल कर अस्तव्यस्त रूप से गुल्मो का निर्माण करते है। धब्बे एक अनियमित लडी के रूप में दिखायी दे सकते हैं अथवा पुतलियो के चारो ओर बाहर सकोचक पेशी के पास होते है और फूलो की माला के दाने की तरह प्रतीत होते है। गुल्म या ग्रथियाँ तथा धब्बे अक्षितारा के Stroma में बलिकाय सीमान्त (Ciliary margin) के समीप दिखायी दे सकते है। इसके पश्चात् अक्षितारा के क्षयिष्णु क्षेत्र दिखायी देते हैं।

श्वेत धब्बों की अपेक्षा ग्रथियाँ बडी होती है। ग्रथियो के इर्द गिर्द के स्थान कोशाओ से आच्छादित हो जाते है। एक लाक्षणिक ग्रथि मे कुष्ठ कोशा, वृहत् कुष्ठ कोशा, फेनिल वृहत् कोशा आवर्त्त कोशा जीवाणु कोशा और हनसेन रोग-कीटाणु रहते है। गुल्म बहुत बाद म, यहाँ तक कि अक्षितारक शोथ (Iritis) के सातव आक्रमण के बाद भी हो सकते है। प्रारभ मे इन गुल्मो की विद्यमानता के बावजूद दृष्टि में बाँकपन रहता है। इसके बाद ग्रथियाँ (Nodules) सकुचित हो जाती हैं और घाव के भर जाने का चिह्न अक्षितारा ((Iris) पर दिखायी देने लगता है। उत्तरकालीन अक्षितारा तथा कनीनिका की वृहत संधि (Posterior Synechiae) और अपुष्टिता (Atrophy) के क्षेत्र दिखायी देते है। इस प्रकार की अक्षितारा (Iris) शल्यक्रिया करने के बाद टुकडो में चूर्ण की तरह परिणत हो जा सकती है। कनिकाशोथ के चिह्न अथवा लक्षण के बिना भी बाजरे के दाने के समान अक्षितारा पर ग्रथियाँ दिखायी पड सकती है। अक्षितारक शोथ इसके बाद हो सकता है। अनुतीक्ष्ण अक्षितारक शोथ (Sub acute iritis) से पीडित रुग्णो की चिकित्सा करने के उपरान्त ३२ प्रतिशत रुग्णो केसो के श्वेत धब्बे और ग्रथियाँ शनै-शनै २ से ७ माह तक की चिकित्सा के दौरान में मिट जाती हैं। चिकित्सा से धब्बों के पृथक्करण में शीघ्रता होती है। कभी-कभी बिना किसी उपचार के

भी—लगभग उनके प्रकट होने के ७ माह बाद—ग्रंथियाँ स्वत मिट जाती है। ५६ प्रतिशत तो उपचार होते रहने पर भी रह जाती है। ग्रथियो के प्रकट होने की औसत अवधि अक्षितारक शोथ (Iritis) के प्रथम आक्रमण से लेकर १ वर्ष ६ माह तक रहती है। अल्पतम अवधि ५ सप्ताह और दीर्घतम अवधि ४ वर्ष ३ माह तक की रहती है। इस प्रकार अनुतीक्ष्ण एव जीर्ण अक्षितारक शोथ मे ही ग्रथियो के उभरने की प्रवृत्ति रहती है।

जीर्ण अक्षितारक शोथ (Chronic Iritis)—नेत्र की पुतली उत्तरकालीन अक्षितारा तथा कनीनिका की विकृति सधि के साथ सम्बद्ध है। तारातट (Pupillary margin) के उत्स्वेदन के फलस्वरूप पुतली सम्बन्धी झिल्ली का निर्माण हो सकता है। अक्षितारक शोथ की लगभग ४६ १५ प्रतिशत दशाओ म पर्याप्त उत्स्वेदन (fair amount of exudates) होता है, और दशाओ मे कुछ भी उत्स्वेदन नही होता। कभी-कभी पुतलियो से सम्बन्धित झिल्ली रक्तशिराओ के साथ प्रकट होती है।

अग्रवस्य (Anterior Chamber) म विभिन्न ढग से उत्स्वेदन होता है। लघु और सीमात धवलता लिए हुए उत्स्वेदन दृष्टिगोचर होते हैं। ये मुलायम तथा जल-सदृश तरल (Serous) होते है और शीघ्र ही सूखने योग्य होते है। किन्तु कभी-कभी ऐसा भी होता है कि ये रेशेदार तन्तुओ से युक्त अशोष्य अवशेष कई महीनो अथवा वर्षों के बाद छोड जाते है।

पुतलियो से सम्बन्धित झिल्ली (Pupillary membrane) पतली और चमकदार अथवा डोरी से चिह्नित की गयी जैसी होती है। इसका रग कुछ मटमैलापन लिए पीत-श्वेत होता है। देखने मे यह हलके भूरे रग की होती है। दृष्टि की स्पष्टता (Visual acuity) काफी क्षीण हो जाती है, और व्याधि की शान्तावस्था मे पुतलियो को खोलने के लिए शल्य-क्रिया की सहायता भी आवश्यक हो सकती है। यह केन्द्र स्थान मे मोटी किन्तु परिणाह (Periphery) मे क्षीण अथवा पतली हो सकती है। अक्षितारक शोथ की प्रारम्भिक अवस्था मे उत्तरकालीन अक्षितारा तथा कनीनिका की विकृत-सधि को तोडना बहुत सरल है और आँखो की पलको की विकृतावस्था अर्थात् पलको का अधिक टिमटिमाना (Mydriatics) के साथ झिल्ली का निर्माण भी रोका जा सकता है। ऐसी झिल्ली के निर्माण की प्रवृत्ति प्लास्टिक के ढग के अक्षितारक शोथ (Plastic type of Iritis) मे अधिक होती है। पुतलियो को फैली हुई अवस्था मे (विस्तृत) रखने मे बडी कठिनाइयाँ होती है, क्योकि शोथ के आक्रमण तथा घाव के भर जाने पर रह जानेवाले चिह्न (Cicatrices) के फलस्वरूप इसका स्वरूप (ढाँचा) विकृत हो जाता है। सधान-मडल (Ciliary body) क्रमश उपयुक्त आहार न मिलने के कारण क्षयिष्णु होन लगता है।

जहाँ तक अक्षितारा शोथ (Iris) का सम्बन्ध है, यह पोषणाभाव मे क्षयिष्णु (Atrophic) और नाशवान (friable) हो जाता है। रक्त शिराओ के पोषण की कमी के फलस्वरूप स्वत बारम्बार रक्तस्राव (Haemorrhage) हो सकता है, क्योकि शिराएँ टूट जाती है। रक्त की प्रवृत्ति शोषित जाने की (absorbed) होती है।

अधिमन्थ (Glaucoma)—कुष्ठीय कनीनिका शोथ म Occlusio and Seclusio pupilla के बावजूद कोई जटिलता (Complication) नही होती। केवल कनीनिका शोथ के पुराना होने पर ५ ६५ प्रतिशत रोगियो में, कनीनिका शोथ तथा अधिमथ बारम्बार आक्रमण होने के बाद Cyclitic Glaucoma होता है। आँखो की पलक की विकृतावस्था के उपचार के साथ क्षणस्थायी तौर पर तनाव मे कुछ वृद्धि हो जाती है। कुछ रोगियो म शोथ होते ही सधान मडल (Ciliary body) बहुत जल्द प्रभावित हो जाता है और इसके फलस्वरूप वह क्षयिष्णु होने लग जाता है। अक्षितारा और बलिकाय शोथ से सम्बन्धित रोगो मे नत्र जल का निर्माण अत्यल्प होता है और नेत्र-गोलक (Eye ball) का तनाव भी कम हो जाता है।

बलिकाय-शोथ (Cyclitis)—अक्षितारा मे शोथ हो जाने के बाद प्रधानत सधान-मडल (Ciliary body) प्रभावित होता है। बडी तीव्र वेदना होती है, रात्रि में तो वेदना और भी असह्य हो जाती है। सधान-मडल (Ciliary body) के ऊपर स्थित बाह्य स्तर (Sclera) में मृदुलता रहती है। अक्षितारा और अग्रवेश्य (Anterior chamber) पर उत्स्वेदन (Exudates) के साथ बडे-छोटे आकार के श्वेत-पीत Keratics शीघ्रता से फैलते अथवा बढते है। नेत्र की ज्योति घट जाती है और तनाव में भी क्रमश कमी हो जाती है—इसका परिणाम यह होता है कि

Irido cyclitis के ३६ ७१ प्रतिशत रोगियों में Atrophic bulbi होता है।

मोतियाबिन्द (Cataract)—Irido cyclitis के पुराने रोगियो में ११ ४६ प्रतिशत रोगियो को मोतियाबिन्द हो जाता है। लेन्स की परिपक्वता व्याधि की क्रियाशीलता के साथ पूर्ण सामजस्य रखती हुई-सी प्रतीत होती है। प्रारम्भिक अवधि मे ४ माह और ३ सप्ताह और बाद में २ वर्ष तक की अवधि मे मोतियाबिन्द का निर्माण होता है—किन्तु इसका निर्माण अक्षितारक शोथ के प्रथम आक्रमण के साथ ही होता है। पुराने कुष्ठार्बुदीय रोगियो में नेत्र-मणि (Lens) पर अक्षितारक शोथ से उत्स्वेदन (Exudates) प्रारम्भिक अवस्था मे अधिक होता है।

कुष्ठ के कीटाणु, वातनाडी बध (Nerve bundles) में छोटी धमनियो (arterioles) द्वारा प्रविष्ट होते हैं जिससे नेत्र-गोलक सम्बन्धी नाडी नि सृत होती है—उत्तेजन और सूजन (Irritation and inflammation) भी इन्ही के कारण होती है। बडी नाडियो मे नेत्र-गोलक सम्बन्धी नाडी को छोड कर, खासकर अन्त बाहु अस्थि सम्बन्धी (Ulnar nerve) नाडियो म (क्षय से मिलती-जुलती व्याधि में) तथा वातनाडी सम्बन्धी कुष्ठार्बुद की व्याधि से ग्रस्त लोगो को नाडी व्रण (Nerve abscess) होते है। नेत्र-गोलक सम्बन्धी नाडी-तन्तु (Nerve fibres) विनष्ट हो जाते है और उनका स्थान तन्तुओ एव रेशो से निर्मित तन्तु (Tissue) ले लेते है और ये ही पुन Optic atrophy उत्पन्न करते हैं।

पुतली सम्बन्धी वातनाडी शोथ (Optic neuritis)—यह रोग Toxic manifestation की तरह कुछ थोडे मामलो मे Diamino diphenyl Sulphone के साथ जब कि रक्त का स्तर लगभग २ mg. हो जाता है और २ से मह माह तक दवा-सेवन किये जान के बाद होता है।

पेंदे या तले में परिवर्तन (Fundus changes)—कनीका शोथ (Keratitis) के बाद अक्षितारा परिष्कृत नही रहता है तथा उत्स्वेदनात्मक अक्षितारा शोथ (Exudative Iritis) अथवा बलिकाय शोथ (Cyclitis) जनित पारान्धता (Opacity) के फलस्वरूप काच धुँधला रहता है—ऐसी स्थिति में पेंदे की परीक्षा करने पर पूरा विवरण प्राप्त नही हो पाता।

नेत्र-वितान (Retina)—नेत्र-पटल की ही तरह अक्षितारा (Iris) पर कुष्ठार्बुद के काफी पुराने हो जाने पर एक श्वेत-रग का गुल्म दिखायी दे सकता है।

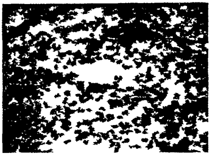
कर्बुरवृत्ति (Choroid) के साथ रजकीय उपद्रवो सहित फुसी की तरह आँख की पुतली के अन्दर की झिल्ली म सूजन हो आती है जिसका कारण कोई सक्रमण नही होता। आँख की पुतली के अन्दर की झिल्ली में जो सूजन (Choroiditis) होती है उसका एक और विस्तृत प्रकार होता है जो पुराने कुष्ठ-व्याधिग्रस्त मनुष्यो को होता है। इसम Choroiditis (अर्थात् आँख की पुतली के अन्दर की झिल्ली म सूजन होना) यत्र-तत्र हो जाती है। आँख की पुतली के अन्दर की झिल्ली के सूजनवाले क्षत्रो म जो क्षतियाँ होती है, उनका अन्य कई कारणो से कोई वैशिष्ट्य नही है।

किरणवक्रता सम्बन्धी भूल (Refractive error)—अक्षितारा के आक्रात हो जाने पर दृष्टि-वक्रता के फलस्वरूप दृश्य वस्तुओ को दृष्टिगत करने म कठिनाई होती है और दृष्टि पूर्णतया केन्द्रित नही हो पाती। इसलिए चश्मा वगैरह लगाने सम्बन्धी निदान तब तक नही करना चाहिए जब तक कि सूजन (Inflammation) मिट न जाय, क्योकि कुष्ठ व्याधि जन्य क्रियाओ के साथ-साथ astigmatism (अर्थात् आँख चश्मा, दर्पण या लेंस के दोष के कारण दृष्टि केन्द्रित नही होना) की प्रवृत्ति भी परिवर्तित होते रहन की होती है। मोतियाबिन्द और अन्य प्रकार के Intra-occular operation के उपरान्त चश्मा लगाने सम्बन्धी निदान करने म शीघ्रता नही होनी चाहिए क्योकि ऑपरेशन के बाद सूजन प्रारभ हो जाती है और दृष्टि बडी शीघ्रता के साथ क्षीण होने लग जाती है। जब नेत्र पूर्णतया स्थिर हो जाय, उसके कम-से-कम ३ माह बाद चश्मा लगाने का निदान करना उत्तम है।

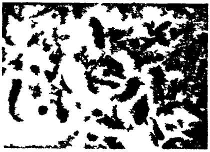
मिथ्या वेदना—कुष्ठ व्याधि का सामान्य कारण नासूर सम्बन्धी सूजन (Sinus inflammation) है। ऊपर के जबडे की हड्डी और ललाट (Frontal) मुख्यत रोगाक्रात होता है। परिधि के चारो ओर वातनाडी शोथ (Neuritis), गण्डास्थ नाडी (Zygomatics) आदि के कारण वेदना होती है। नेत्र-तारा के बृहत् कर्कुदीय प्रविकार (Tuberculoid lesions) में वातनाडी शोथ के फलस्वरूप नाड़ियों में उत्तेजना होती है।



बाए नत्र के स्वच्छ मण्डल म कुष्ठाबद प्रसार पर है और दाहिन नत्र के अक्षितारा तथा सधान मण्डल म शोथ उत्पन्न हो गयी है। भौं तथा पलको के बाल झड गए ह।



कुष्ठ कोशा फनिल बहुत कोशा तथा लसीका कोशाओ के साथ-साथ अक्षितारा के कुष्ठाबदो का चित्र।



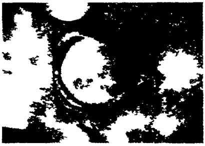
अक्षितारा के कुष्ठाबदो का चित्र जिसम हनसेन रोगकीटाण बशमार दिखायी दे रह ह।



उग्र कनीनिका शोथ म अक्षितारा की अवस्था।



विस्तत रूप से फला हुआ शक्लाकोप।



कनीनिकाशोथ म शक्लाकोप का प्रभाव।



शुक्लाकोप तथा अन्तरालीय कनीनिकाशोथ।



नत्र-पटल के किनारो पर कुष्ठाबुद का प्रभाव।



कुष्ठाबुद की उग्रावस्था अक्षितारा पर कुष्ठाबुद का प्रसार।



तारा क्षत्र म पसीन से निकल हुए पदाथ के साथ अक्षितारक शोथ।



नत्र के भीतरी हिस्से म एकत्रित मवाद के साथ नत्र-तटो पर फल हुए कुष्ठाबुद।



पुरानी शोथ में कुष्ठार्बुद सन्धान-मण्डल की स्थिति जब कि अक्षितारा में सकुचन आ जाती है।



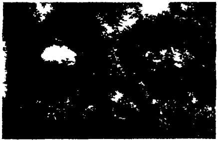
नत्रो की पुतली के ऊपर की कठोर झिल्ली में शोथ का फलाव।



अक्षितारक शोथ जिसम नत्र के आभ्यन्तरिक भाग म मवाद एकत्रित है।



उचित आहार के अभाव म शरीर क्षय की प्रतिक्रिया कुब्ज के रूप में।



अपोषक-क्षय की प्रतिक्रिया।

पौष्टिकता के अभाव में क्षयिष्णुता—कठिन सूजन के साथ नेत्रो में दृष्टिहीनता और तनाव (Tension) आ जाता है तथा क्षीणावस्था प्रारभ हो जाती है। प्लास्टिक अथवा उत्स्वेदनात्मक अक्षितारा शोथ (Exudative iritis) का क्रमश अपोषकक्षय (Atrophy) होता है और Vitreous मे धुँधलापन (Opacities) दिखायी देता है। Cyclitic Glaucoma के रोग में भी—तनाव म वृद्धि होने के कुछ काल बाद वैसी ही घटनाएँ घटती है। ऐसी दशा मे नेत्र की पुतली (Cornea) अपुष्टिता (Atrophy) की ओर प्रवृत्त होती है और इसकी भीतरी परत पतली होती जाती है और इनका पर्यवसान Staphyloma के रूप में होता है।

कुष्ठार्बुद (Lepromas) सीमावर्ती स्थानो यथा कोण और तन्तु-समूह-सधान मडल (Ciliary body) पर आक्रमण करता है और तदुपरान्त उत्तरभागीय खण्ड में कुष्ठार्बुद तनाव नष्ट होने के साथ प्रसार करता है। प्लास्टिक अक्षितारक शोथ (Plastic iritis) के रोग में खासकर वैसे रोग म जो अक्षितारक व्रण (Corneal ulceration) होने के पश्चात् बढते है नेत्र के अन्तर्निहित तत्व शोथ के फलस्वरूप शनै शनै रेशेदार तन्तुओ से युक्त (Fibrosed) हो जाते है। शुक्लाकोप (Scleritis) होने के बहुत दिनो बाद की स्थिति म तनाव भी मिट जाता है। इन सभी दशाओ म Complicated मोतिया बिन्द हो जाते है। १ वर्ष ४ माह से लेकर ३ वष १० माह तक—जब से कुष्ठ सम्बन्धी शिकायतें आरभ हुई—के दौरान में अपोषकक्षयता (Atrophy) बढती है। यथाशीघ्र सक्रिय रूप से यदि उपचार न किया जाय तो कोई कारण नही कि अधता रोकी न जा सके। कुछ मामलों में तो आमूल सुधार हो सकता है। ज्यो-ज्यो कुष्ठ-व्याधि मे सुधार होता है त्यो-त्यो नेत्रो की स्थिति मे भी अनिवार्यतया परिवर्तन होते है। नेत्र मे व्याधि होते रहने पर भी कुष्ठ व्याधि का उपचार बन्द नही होना चाहिए, पहले औषध की थोडी मात्रा दी जा सकती है, जो क्रमश बाद में बढ़ायी जा सकती है। नेत्र की स्थिति में आधुनिक सल्फोन चिकित्सा द्वारा पर्याप्त सुधार हो सकता है।

खाद्योजों की कमी (Vitamin dificiency)—लगभग १० प्रतिशत बच्चों में विटामिन 'ए' की कमी विभिन्न अवस्थाओ में मृदु स्वच्छा (Keratomalacia) पायी जाती है। रोगाणुनाशक उपचार (Antibiotic treatment) के अतिरिक्त भी, दूध अथवा दूध से बनी अन्यान्य वस्तुओ के सेवन के साथ सामान्य प्रोटीन चिकित्सा भी लाभप्रद होती है।

अश्रुधानकोप (Dacryocystitis) मुख्यतया पुराने कुष्ठार्बुदीय कुष्ठ मे पाया जाता है। इसका कारण नासिका का कुष्ठार्बुदो से आक्रात होना तथा नासिका-व्रणो का विस्तृत रूप से फैलना ही है। नासिका उपचार Sac infection के साथ ही होना चाहिए। व्रणो के कारण (Ulceration) कुछ रोगियो के लिए Dacryocysto rhinostomy अनुपयुक्त होती है।

शुक्लाकोप (Scleritis)—चिकित्सा की अन्यान्य विधियो के साथ कम-से-कम लगातार पाँच दिनो तक प्रत्येक चौथे घटे के बाद २ ५ प्रतिशत Cortisone drop देने से शोथ नियत्रित हो जाता है। रात्रि म १ ५ प्रतिशत हायड्रो कोर्टीसन नामक मलहम का भी प्रयोग किया जा सकता है। शॉर्क लीवर ऑयल पीन Avimin की सुइयाँ लेने तथा पर्याप्त पौष्टिक आहार का सेवन करने से वह कमी दूर हो सकती है। कुछ रोगियो के मुख के कोणस्थ स्थानो पर व्रणादि द्वारा क्षत (Ariboflavinosis) हो जाया करते है। Riboflavin की ६ सुइयाँ लगाने तथा भोजन म पर्याप्त खाद्योजो के सेवन से स्थिति में काफी सुधार हो सकता है।

मुख सम्बन्धी पक्षाघात (Facial palsy)—इथुल प्रलवण (Ethyl esters) की सुइया सप्ताह म एक बार ½ सी० सी० से लेकर ५ सी० सी० तक की मात्रा मे लगाना और समय-समय पर विद्युत द्वारा मालिश (Electric massage) कराना लाभप्रद होता है। अधखुले नेत्र की स्थिति में रोगाणुनाशी उपचार (Antibiotic treatment) और दोनो नेत्रच्छदो (वर्त्म) की शल्यक्रिया द्वारा (Tarsorraphy) चिकित्सा होने से नेत्र की पुतली (Cornea) को क्षत होने से बचाया जा सकता है। सामान्य तौर पर प्रचलित चिकित्सा के तरीके अधिकतर से सम्बन्धित व्रणो को अच्छा करने मे कारगर सिद्ध होते हैं।

छाल से निकाली हुई ग्लीसरीन (Tannic Glycerine) द्रव १ ५ प्रतिशत का धीरे-धीरे अनुप्रवेशन (Instillation) तथा जप अक्षिकला सम्बन्धी [illegible] का प्रयोग सप्ताह में एक या दो बार [illegible] के

पश्चात् होने से अक्षिकला सम्बन्धी विस्तृत कुष्ठार्बुद को क्षयिष्णु बनाया जा सकता है। ऊपर जिस चिकित्सा का उल्लेख किया गया है, उसके साथ Irgapyrin द्रव का दैनिक व्यवहार करने से—खासकर अक्षितारक शोथ (Iritis) अथवा अक्षितारा और तन्तु समूह-सघान मण्डल मे शोथ (Iridocyclitis) रहने पर लाभ होता है। सकुचित कुष्ठार्बुद (Circumscribed leproma) चेतनाशून्यता (Anaesthesia) समेत मास-दाह (Cautery) द्वारा समूल नष्ट हो जा सकता है।

कनिकाशोथ (Keratitis)—नेत्रो की पलक की विकृतावस्था (Mydriatics) की प्रारम्भिक स्थितियो मे आवश्यकतानुसार वाह्यका चिकित्सा (Cortisone treatment) की जानी चाहिए। इसके साथ-साथ १ प्रतिशत दुग्ध रस (Plasma) के साथ १ प्रतिशत द्रयायी (Dionine) अथवा मरहम, शोथ की उग्रता कुछ कम हो जाने की स्थिति मे देने से शोथ और पारान्धता (Opacity) बहुत अशो मे नष्ट हो जाती है। एक ड्राम के ६० वे भाग से प्रारम्भ करके क्रमश बढाते-बढाते ८ मिनिम (१ मिनिम=एक ड्राम का ६० वाँ भाग) तक की साधारण सैलाइन इजेक्शन सप्ताह मे एक बार अथवा २ प्रतिशत शक्तियुत क्वीनाइन-बाय-सल्फेट मरहम ((Quinine-bi-sulphate ointment) कनिकाशोथ मे बडीसख्या मे अक्षितारा सम्बन्धी आशिक अन्धता (Nebulæ) एव अनेक धब्बो (Maculæ) को मिटाने में बडा उपयोगी सिद्ध होता है। चूर्णमय पदार्थ (Calcareous deposits) बडी आसानी के साथ हटायी जा सकती है। और ह्रासान्वित अक्षिकला की परतो की सुरक्षा भी शार्क लीवर आयल (Shark liver oil) तथा रोगाणुनाशक औषधियो (antibiotics) द्वारा की जा सकती है।

अक्षितारक शोथ (Iritis)—अक्षितारक शोथ की मर्मान्तक पीडा को दूर करने के लिए दर्दनाशक औषधिया (Analgesics) जैसे Codopyrin तथा Luminal अत्यावश्यक है। Atropine Sulphate १ प्रतिशत ड्राम और Scopolamine ½ प्रतिशत ड्राम अथवा मरहम का प्रयोग करने से अक्षितारिका फैली हुई-सी रहती है। Mydricaine के बस्तिकर्म द्वारा चार मिनिम से प्रारम्भ करके अधिक-से-अधिक ८ मिनिम तक की आवश्यकता बन्द अक्षितारा को खोलने के लिए पड़ जा सकती है। बस्तिकर्म प्रतिदिन किया जाता है—दो से चार बार बस्तिकर्म आवश्यक हो सकता है। Salicylates और असामान्य प्रोटीन उपचार (Non-specific protein-therapy) चिकित्सा मे बडे सहायक सिद्ध होते है। उत्स्वेदनामक अक्षितारक शोथ बहुत शीघ्र मिट जाता है।

सल्फोन चिकित्सा (Sulphone therapy)—अक्षिकला और कनीनिका (Cornea) के व्रणो मे सल्फेट्रोन १ प्रतिशत, आप्थैलमिक आइन्टमेन्ट अथवा १ प्रतिशत ड्राप्स (Drops) २ से ३ बार दैनिक व्यवहार करने पर बडा लाभ होता है। इसी तरह, सल्फेट्रोन की सुइयाँ लगाने से धीरे-धीरे कुष्ठार्बुद मिट जाते है। बाद में औषधि की मात्रा और सुइयो (Injections) की सख्या भी बढाई जा सकती है। औषधि की मात्रा ० २ सी सी और सुइयाँ चार दिनो के पश्चात् ३ से ४ तक बढायी जा सकती है। अधिकाश कुष्ठ व्याधि से पीडित रोगियो को व्यवस्थित रूप से सल्फोन-चिकित्सा मनोनुकूल पडती है। नासिका एव त्वचा के व्रण तथा कुष्ठार्बुद सक्रमण (Leprotic infiltration) मिटने लग जाते है, नेत्र का शोथ भी ह्रासोन्मुखी हो मिटने लग जाता है, सल्फोन वर्गीय औषधियो मे डी० डी० एस० सर्वोत्तम औषधि है।

रोगाणुनाशक (Antibiotics)—सल्फेसेटेमाइड (Sulphacetamide) द्रव का ३० प्रतिशत, औरियोमायसिन (Aureomycin), टेरामायसिन (Terramycin) और क्लोरोमाइसेटिन (Chloromycetin) की १ प्रतिशत शक्ति से युक्त, एव २५०० यूनिट की पेनिसिलिन का कुष्ठ के रोगाणु पर कोई प्रभाव नही होता। हाँ, अक्षिकला और कनीनिका (Conjunctiva and Cornea) के सक्रमण को रोकने मे इनका उपयोग अवश्य है। कनीनिका के पुराने व्रणो (Chronic ulcerations) मे स्ट्रेप्टोमायसिन आफ्थेल्मिक आइन्टमेंट (Streptomycin ophthalmic ointment) बडा फायदेमन्द होता है।

ए० सी० टी० एच० और वाह्यका (Cortisone)—नेत्र के कुष्ठार्बुदीय शोथ की वाह्यका (Cortisone) के साथ अच्छी प्रतिक्रिया होती है। शोथ की कठिन जटिलता के कारण जो दृष्टि को अत्यन्त क्षीण बना देती है, उत्स्वेदनो के प्रशोषण के कारण अवरोधित हो जाया करता है—किन्तु निश्चित् कुछ काल तक इसका प्रयोग होना चाहिए। कुष्ठ पर इसके विपरीत प्रभाव होने के कारण ए० सी० टी० एच०

की उपेक्षा कर देना उचित ही है। वाह्यका २ ५ प्रतिशत शक्तिवाला चार-चार घटे के उपरान्त दिया जा सकता है। इसी प्रकार अन्तर्वर्ति नाडियो मे ग्लुकोज सैलाइन, बूँद-बूँद टपका कर ४० ड्राप (बूँद) प्रति मिनट ५ से ७ दिनो तक देना चाहिए।

आपरेशन—कुष्ठ व्याधिजन्य नेत्र-व्रणो की चिकित्सा का जहाँ का सम्बन्ध है, इसमे शल्यक्रिया (ऑपरेशन) भी महत्त्व रखता है। ऑपरेशन करने के बाद जहाँ तक इसके परिणामो का प्रश्न है, वह तो नेत्र की सक्रियता अथवा निष्क्रियता के अनुसार बदलते है। सक्रिय नेत्रो (Active eyes) का ऑपरेशन उचित नही, क्योकि इससे अस्थायी तौर पर दृष्टि (Vision) मे कुछ सुधार भले ही हो जाय किन्तु व्रण (Trauma) के कारण कुष्ठव्याधि प्रसार करती ही रहती है और प्लास्टिक उत्स्वेदन बनते हे। अक्षि-बहि पटलाह (Scleritis), कनिकाशोथ (Keratitis) अथवा अक्षितारक शोथ (Iritis) मे भी सक्रियता आ सकती है, जो दृष्टि के लिए खतरनाक सिद्ध हो सकती है।

मोतियाबिन्द (Cataract)—रोगी की कनीनिका (Cornea) मे चेतनाशून्यता (Anæsthesia) होने पर शल्यक्रिया के बाद (Post-operative period) कनीनिका मे व्रण (Corneal ulceration) हो जाते हे। कुष्ठार्बुदीय रोगियो म, (Lepromatous cases) जैसा कि दरी-दीप-परीक्षण (Slit-lamp examination) द्वारा सिद्ध हो चुका है, नेत्र को शोथ के स्थान पर शात होने या स्थिर होने मे कम-से-कम ६ माह लग जा सकते है। तब कही जाकर ऑपरेशन के लिए अनुकूलता पड सकती है। ऐसी दशा मे ८७ ५० प्रतिशत रोगियो को उत्तरभागीय अक्षितारा तथा कनीनिका की विकृत सधि (Posterior synechiae) होती है। इस बात का पता ऑपरेशन करने के पूर्व अथवा ऑपरेशन करते समय लगता है। चूँकि अपोषक क्षय (Atrophy) के कारण अधिकाश रोगियो मे अक्षितारा आसानी से चूर्णीकृत (Friable) हो सकती है, अतएव ऑपरेशन करते समय अक्षितारा (Iris) टुकडो म नि सृत हो सकती है। जब नेत्र स्थिर हो, कोई क्रिया-शीलता न हो और यदि Bacilli index निम्न स्तर पर हो तो मोतियाबिन्द का ऑपरेशन अच्छी सफलता के साथ हो सकता है। ऑपरेशन के समय अक्षितारा (Iris) से रक्तस्राव (Hæmorrhage) का होना सामान्य घटना है। ऑपरेशन के पश्चात् रक्त और उत्स्वेदनो (Exudates) को जज्ब करने में सामान्य प्रोटीन चिकित्सा (Non-Specific protein therapy) लाभदायक होती है।

कृष्णोच्छेदन (Iridectomy)—ऐसी प्रत्येक शल्य-क्रिया Occulsio or seclusio pupilla के लिए की जाती है। ऐसे रोगियो के ६६ प्रतिशत अक्षितारको में अपुष्टिता (Atrophied) पायी जाती है। वातनाडी सम्बन्धी (Neural) अथवा स्थिर कुष्ठार्बुदीय रोगियो में कृष्णोच्छेदन (Iridectomy) से अच्छा परिणाम दिखायी देता है।

नेत्रों के ऊपरी तथा निम्न पलको की शल्यक्रिया (Tarsorraphy)—मुख सम्बन्धी पक्षाघात रहने पर, जहा तक Tarsorraphy का प्रश्न है, यह एक आँख म या तो बगल मे अथवा नासिकावर्ती स्थान (Nasal Sector) पर किया जा सकता है। टाँके खूब मजबूती से लगाने चाहिएँ, क्योकि त्वचा मे अपोषकक्षयता (Atrophy) के कारण टाँको के टूटने की आशका बनी रहती है। अतएव, हल्की पट्टी लगानी चाहिए।

कुष्ठ व्याधिजन्य शनै-शनै बढनेवाली नेत्रान्धता के विरुद्ध—इस महामानवतावादी अभियान मे—नेत्रो की अक्षेपन से रक्षा करने तथा प्रत्येक व्यक्ति को सुख-शान्ति पहुँचाने के लिए यथाशीघ्र चिकित्सा करने की दिशा में हमे सप्रयत्न प्रवृत्त होना चाहिए।

—(एण्टीसेप्टिक के सौजन्य से)

समन्वय की समस्या

आयुर्वेदपंचानन प० जगन्नाथप्रसाद शुक्ल, आयुर्वेदबृहस्पति

भारतवर्ष मे इस समय आयुर्वेद, एलोपैथी, होमियोपैथी, नेचरोपैथी, क्रोमोपैथी आदि कितनी ही चिकित्सा पद्धतियो का प्रचार है। सभी के चाहने और जाननेवाले यह चाहते है कि हमारी पद्धति देशव्यापी हो, जनता मे इसका सम्मान बढे और राज्य मे इसके लिये स्वीकृति प्रदान हो। यही नही सहायता द्वारा इसे पुष्ट किया जाय और विद्यालय आदि खोलकर इसके शिक्षण द्वारा इसके प्रचार को स्थायित्व प्रदान हो। सभी के हिमातियो का यह प्रयत्न रहता है कि असेम्बलियो, प्रान्तीय कौंसिलो, केन्द्रीय ससद और राजकीय परिषदो मे हमारी प्रणाली की चर्चा होती रहे और सरकार के सामने हमारी पद्धति की ताजगी बनी रहे। हरएक के प्रयत्नकर्त्ताओ को ऐसे सदस्य मिल ही जाते है जो सरकारी सस्थाओ में प्रभाव रखते है। ऐसे लोग समय-समय पर प्रस्तावो के द्वारा उनकी चर्चा करते रहते है। प्रश्नो के द्वारा सरकारी सचालन विभागो को झकझोरा करते है और उनके उत्तरो से तथ्यो की जानकारी, सरकारी रवैया का पता, सरकारी तन्त्र मे उसके प्रभाव का अन्दाजा और सरकारी रुख के परिवर्तन का ध्यानाकर्षण प्राप्त करने का प्रयत्न करते रहते है।

बजट के समय खर्च में कटौती का प्रस्ताव रखकर सरकारी तन्त्र की आलोचना करते रहते है और इस प्रयत्न से सरकारी अधिकारियो के मस्तिष्क को चक्करो में डालकर अपने सभी अभीष्ट विषय की भलाई के लिये, सहायता के लिये, प्रचार और प्रतिष्ठा के लिये कुछ न कुछ रकम बढवा लेते है, भलाई के वादे करा लेते हैं। राजकीय तन्त्र में इस शैली के कारण कभी एकरूपता, सिद्धान्त की स्थिरता और अपनत्व की भावना की पोषकता नही आने पाती। सभी के प्रयत्न औरो को दबाकर अपने अभीष्ट विषय को आगे बढा रहने का होता है, इसलिये स्वाभावत ऐसा विषय राज्य-सचालन के अधिकारियों के लिये सिर-दर्द बना रहता है। वे कुछ निश्चय नही कर पाते। अपने राष्ट्रीय चिकित्सा-विज्ञान पर उनकी भक्ति दृढ नही हो पाती, इसलिये उनकी शक्ति भी बिखरी रहती है।

चिकित्सा विषय मे वे राष्ट्रीय और स्वदेशी भावना से भागना चाहते है और यह कह कर जी छुडाना चाहते हैं कि रोग भी तो स्वदेशी है, फिर उनकी रक्षा क्यो न की जाय। भले ही सत्य से प्रभावित उनका हृदय उन्हे कचोटता होगा कि यह तो बचना है, स्वदेशी के साथ मखौल है। स्वदेशी, स्वदेशी ही है और उसके साथ प्रवचना करना अपराध है, पाप है। यह कहकर बाजी मार लेना और बात है कि जो चिकित्सक शरीर का ज्ञान नही रखता, उसे सरकार नही मान सकती। खासकर आयुर्वेद के सम्बन्ध मे तो यह आक्षेप किसी तरह लागू हो ही नही सकता। आयुर्वेद अपने मे पूर्ण है और विश्व के स्वास्थ्य एव चिकित्सा के तत्त्वो को, अपने मे समेट लेने की उसमे शक्ति है। क्योकि उसके सिद्धान्त और आधारभूत तत्त्व इतने पूर्ण और व्यापक है कि विश्व की अन्य चिकित्सा-पद्धतियाँ उसकी शाखा-बहन-बेटियो के रूप मे मानी जा सकती है। ऐसी दशा मे इस बहुरूपता के जजाल को समेट कर एक रूपता लाने का विचार कुछ मनस्वियो के हृदय मे उठना स्वाभाविक है। आयुर्वेद विश्वव्यापी व्यापक चिकित्सा-विज्ञान है। किन्तु इसी देश मे आविष्कृत होने के कारण यह अपना है, स्वदेशी है और इस देश मे व्यापक राष्ट्रीय चिकित्सा-विज्ञान होकर रहना चाहिए।

समन्वय की आवश्यकता—इस एकरूपता की विचार-परम्परा ने समन्वय की समस्या को उपस्थित किया है और अशत इस विवाद के हल को प्राप्त करने मे सहायक समझा है। मध्यप्रदेश के भूतपूर्व स्वास्थ्य मन्त्री जी ने आयुर्वेद, यूनानी और एलोपैथी के औषधालय और अस्पताल एक साथ चलाकर सक्रिय रूप से आयुर्वेद की शक्तिशालीनता को सामने रखना चाहा था। विषय महत्त्वपूर्ण और अनुकरणीय था। किन्तु वर्तमान शासनक्रम में स्थिरता और दृढता न होने के कारण उनके मन्त्री न रहने पर प्रयत्न ढीला पड गया। उत्तर प्रदेश के मेडिसिन बोर्ड ने, चेयरमैन

मुलेकरजी, कविराज प्रताप सिंहजी और स्वयं मेरे द्वारा ऐसा पाठ्यक्रम तैयार कराया जो आयुर्वेद और यूनानी के विषयों की समानता रखनेवाला और आयुर्वेद एवं यूनानी-शिक्षण को प्रधानता देते हुए सभी नयी बातों को उसमे सम्मिलित करनेवाला था। परन्तु मन्त्रियों के आग्रह से, चेयरमैन और सदस्यों के परिवर्तन से अब वह पाठ्यक्रम आयुर्वेद को गौण बनाकर पृथक्-पृथक् आयुर्वेद और एलोपैथी के विषयों का प्रवर्तक पाठ्यक्रम हो गया है। अन्य प्रान्तों में भी ऐसी ही छीछालेदर चल रही है और समन्वय की समस्या को जटिल बना रही है। अतएव इस विषय पर नए क्रमसे विचार करने की आवश्यकता प्रतीत हो रही है। सभी चिकित्साओं से समन्वय करने की बात यदि उद्देश्य मे हो तो भी उद्देश्य के ऊँचे शिखर पर पहुँचने के लिये एकदम छलांग मारकर पहुँचना सम्भव नही होता। मार्ग तय करने के लिये मंजिल-मंजिल तय करना होता है और ऊपर चढने के लिये सीढी-दर-सीढी चढना पडता है। एलोपैथी के साथ समन्वय अभीष्ट हो तो भी इसकी इच्छा दोनो ओर से होनी चाहिये। एलोपैथी वाले तो आयुर्वेद से समन्वय इसी अंश मे चाहते है कि आयुर्वेद म जो चिकित्सा फलीभूत और सफल हो उसे एलोपैथी मे अपना लिया जाय और इस बात का प्रयत्न हो कि देश मे आयुर्वेद खतम कर दिया जाय। उन्हे आयुर्वेद के समस्त विज्ञान का मन्थन अभीष्ट नही है। इसके सिवाय आयुर्वेद के आधारभूत विज्ञान और सिद्धान्तो से एलोपैथी का पूरा मेल नही बैठता। आयुर्वेद में सृष्टिक्रम के साथ दार्शनिक सम्बन्ध लेते हुए जिस प्रकार तत्त्वनिरूपण और जीवोत्पत्ति का विषय है उतनी बारीकी से एलोपैथी मे वर्णन नही है। आयुर्वेद में चिकित्सा के जो छ सिद्धान्त है उनमे से एलोपैथी केवल विपरीत चिकित्सा पर जोर देती है। हेतुविपरीत के अतिरिक्त उसे व्याधि विपरीत, हेतुव्याधि विपरीत, हेतुविपर्यस्तार्थकारी, व्याधि विपर्यस्तार्थकारी और हेतु व्याधि विपर्यस्तार्थ कारी विभागो की उसे परवाह नही है। इसके सिवाय एलोपैथी मे दोष परम्परा का तत्त्व स्वीकार नही है। वह रोगो को कीटाणु-सम्भव मानती है। किन्तु कीटाणुओ की उत्पत्ति क्यो होती है? "रोगस्तु दोषवैषम्यम्, दोषसाम्यमरोग्यता" सिद्धान्त की उसे परवाह नहीं है। इसके आहार-विहार के सिद्धान्त को वह अब सरसरी से समझने का प्रयत्न कर रही है, किन्तु उसके विज्ञान को पकडने का अभी भी उसे ध्यान नही है। और सौ बात की बात तो यह है कि उसे इसकी परवाह क्यो हो? पहले अंग्रेजी राज्य में वह सरकार द्वारा पोषित थी, अब स्वराज्य के जमाने में भी उसका उसी प्रकार बोलबाला है। हमारी सरकार अभी भी एलोपैथी का पल्ला सर्वथा छोडने और आयुर्वेद को वैज्ञानिक रूप से बढाने और पढाने को तैयार नही दिखती। ऐसी दशा मे आयुर्वेद से समन्वय करने की उसे आवश्यकता क्यो प्रतीत हो। नैचरोपैथी और क्रोमोपैथी पूर्ण चिकित्सा विज्ञान नही है। वे चिकित्सा के एक अंशमात्र है। उनसे समन्वय की अभी जल्दी नही है। जिस समय आयुर्वेद का स्वास्थ्य विज्ञान और उसका पंचकर्म विज्ञान अच्छी प्रकार उन्नत हो जायगा, उस समय नेचरोपैथी उसके स्वास्थ्य सिद्धान्तो के अन्तर्गत होने के कारण आप ही उसम समा जायगी और जिस समय वैदिक जल चिकित्सको को वैज्ञानिक रूप से विस्तार मिलेगा, उस समय वह भी आयुर्वेद से भिन्न कोई वस्तु न रह जायगी। अतएव उसका भी समन्वय हो जायगा। रही होमियोपैथी की बात सो वह भी अभी समय सापेक्ष है। अभी हमे उससे भिडने या मिलने-मिलाने की जल्दी नही करनी चाहिये। अभी उसका विज्ञान पूर्ण विकास को प्राप्त नही हुआ है। वह विपर्यस्तार्थकारी चिकित्सा है। अभी अष्टांग या षोडशांग होने का उसका दावा सिद्ध नही है। जिस समय आयुर्वेद अपने पूर्णस्वरूप मे विकसित हो जायगा, उस समय वह आयुर्वेद के विराट्स्वरूप में सामाता हुआ प्रतीत होगा। किन्तु यूनानी की समस्या इन सबो से भिन्न है। वह आयुर्वेद से निकली है, किन्तु यूनान मे फली-फूली और अरब म पली है। यूनानी और अरबी नामकरण और लिबास मे वह भिन्न मालूम पडती है, अतएव अभी विदेशी है। हमे उसका रूप निखारकर आयुर्वेदकरण करने की आवश्यकता है। वह यहाँ से निकली और आजकल यही फिर आकर बसी हुई है तो भी अपने को देशान्तरित और धर्मान्तरित रूप मे समझती हुई पृथक्ता का अनुभव कर रही है। वह भी आयुर्वेद के समान देश मे विस्तार और प्रचार चाहते हुए भी पराधीनता का अनुभव कर रही है। उसके आधारभूत सिद्धात आयुर्वेद से निकले हुए हैं, अतएव समानता सूचक है। हमारा और उसे माननेवाले हकीमो का कर्तव्य है कि नाम और स्वरूप को स्पष्ट कर जगत् के सामने स्पष्ट कर दे कि वह आयुर्वेद से भिन्न नही है। राष्ट्रीय चिकित्सा

की समस्या हल करने के लिये यह नितान्त आवश्यक है कि आयुर्वेद और यूनानी के बीच जो खाई पडी हुई है वह पाट दी जाय। जो विभिन्नता का भ्रम फैला हुआ है उसे दूर कर दिया जाय। आयुर्वेद का आधार होते हुए भी सदियो तक यूनान और अरब का उस पर जो प्रभाव पडा है, उससे उसके स्वरूप मे कुछ अन्तर अवश्य आ गया है। आयुर्वेद के वैज्ञानिक अश की उसमे कुछ कमी रह गयी है और भिन्न दृष्टिकोण से विचार और विस्तार होने के कारण उसमे कुछ ऐसी बाते भी आ गयी है जो हमारे यहाँ विस्तार और विचार की दृष्टि से विशेषता रखती है। हम वैज्ञानिक और समन्वय के दृष्टिकोण से उनकी कमी उनके सामने रख देना है और उनकी विशेषताओ को समझकर अपने यहाँ मिला लेना है। इस आदान-प्रदान म किसीके सन्मान में ठेस लगने की आवश्यकता नही है। सभी प्रान्तो में आयुर्वेद और यूनानी के बोर्ड सयुक्त है और सयुक्त बोर्ड मे ही उनके शिक्षण और प्रचार की व्यवस्था है। ऐसी दशा में एक ऐसे पाठयक्रम की आवश्यकता है जिसे वैद्यो और हकीमो मे प्रचलित किया जाय। आयुर्वेद वालो को यूनानी के आधारभूत सिद्धान्त और चिकित्सा के सिद्धान्त सिखा दिये जायें और यूनानी वालो को आयुर्वेद के वैज्ञानिक सिद्धान्त और चिकित्सा के सिद्धान्त पढा दिये जायें। इससे वैद्यो और हकीमो के अन्तर दूर होगे और एकत्र का मार्ग प्रशस्त होगा। यही नही दोनो वर्ग अपने में पूर्णता का अनुभव करने लगगे। हमारे कुछ वैद्य इस योजना के नाम पर बहुत घबडाते है और सम्भव है कुछ हकीम भी इससे भडके। किन्तु यह भ्रम पूर्ण धारणा है। देश के स्वास्थ्य और चिकित्सा विभाग के सचालन की क्षमता दोनो के सम्मिलित स्वरूप मे आ जावे यह एक राष्ट्रीय लाभ होगा। इस पाठयक्रम का श्री गणेश दोनो के कालेजो में आरम्भ हो सकता है और स्नातकोत्तर शिक्षण के द्वारा एक या दो वर्ष म इसकी पूर्णता की जा सकती है। ऐसे पाठयक्रम का एक दिग्दर्शन हम दिखाने का प्रयत्न करते है।

पाठ्यक्रम का सुझाव—आयुर्वेद और यूनानी का समन्वय करने मे उसका एक स्वरूप निर्धारण करना पडेगा। यह स्वरूप निर्धारण उसके पाठयक्रम के रूप में हो सकता है। यहाँ पर हम एक सुझाव मात्र दे रहे हैं। उसका विस्तृत पाठयक्रम आयुर्वेद और यूनानी के विद्वान् एकत्र सम्मिलित होकर तैयार करेंगे। हमारा यह सुझाव उनके लिये मार्ग-दर्शक रूप में ही हो सकता है। ऐसे पाठयक्रम के लिये कुछ विषयक्रम निर्धारित करना उचित होगा।

आधारभूत सिद्धान्त—आयुर्वेद में आधारभूत सिद्धान्तो का दिग्दर्शन सहिता ग्रन्थो मे सूत्र रूप में हो जाता है। फिर उसका विस्तार अपने-अपने विभाग मे होता है। यूनानी में आधारभूत सिद्धान्त को 'उमूरकुल्लिया या 'कुल्लियात कहते है। सिद्धान्त की परिभाषा, उसके स्वरूप, सिद्धान्त के भेद, सामान्य सिद्धान्त या अहकाम कवानीन कुल्लिया और प्रायोगिक अर्थात् अमली का भेद एव भेदस्वरूप। शास्त्रीय अर्थात् इल्मेइल्मी और कार्यपद्धति का कैफियते अमल की परिभाषा और स्वरूप तथा भेदो का वर्णन, आयुर्वेद या तिब्ब की परिभाषा, प्रयोजन या प्रतिपाद्य (मौजूआते तिब्ब) विषय का विवरण, स्वास्थ्य (मौजूअ सेहत) और अस्वास्थ्य (मर्ज) का स्वरूप स्वास्थ्य और अस्वास्थ्य अवस्था का कर्त्तव्य, मानव शरीर की उत्पत्ति, कार्य और कारण (असबाब) का विवरण, इनके भेदो की समीक्षा मानव शरीर की उत्पत्ति का दार्शनिक (हिकमत या फिलसफा) विवरण, भौतिक शास्त्र (इल्म तबई या फिजिक्स) और रसायन शास्त्र (कीमिया) ज्ञान की आवश्यकता का प्रतिपादन, चिकित्सा के पाद चिकित्सक रोगी, चिकित्सा के द्रव्य और सुश्रूषक का सक्षिप्त वर्णन और उनका महत्त्व एव कर्त्तव्य दर्शन, साराश आयु की रक्षा और शारीरिक स्वास्थ्य सरक्षण का सिद्धान्त।

शरीरोत्पत्ति और महाभूत—यूनानी वाले भी महाभूत परम्परा को मानते है। महाभूतो को वे अरकान या अनासिर कहते है। इसका अर्थ मौलिक द्रव्य है। रूक, उन्सुर, उस्तुकुस और बसीत चार मौलिक द्रव्य है। उन्ही के सम्मिलित बहुवचन में अनासिर, अरकान आदि का व्यवहार होता है। यूनानी वालो ने पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु चार ही महाभूतो को तत्त्व रूप में ग्रहण किया है। यूनानी विद्वानो नें भी आकाश को महाभूतो में ग्रहण नहीं किया था। हमारा प्रयत्न होगा कि इस सम्बन्ध में हम समन्वय की दृष्टि से यूनानी चिकित्सको को आकाश का स्वरूप भी समझावे। मानव सृष्टि जीवात्मा के शरीरधारी होने से सचालित होती है। यह जीवात्मा का अशभूत चैतन्य है। परमात्मा स्वय निर्विकार है और प्रकृति स्वय जड है। प्रकृति में आत्मतत्त्व का सहयोग होने से ही प्रकृति सृष्टि रचना में तत्पर होती है। अतएव महाभूतों

की बात समझाने के लिये पहले परमात्मा, प्रकृति, महान, अहकार, बुद्धि, चित्तशक्ति, मन, पचतन्मात्र का ग्रहण पाठ्य-क्रम मे करना होगा। फिर तन्मात्राएँ किस प्रकार स्वरूप ग्रहण कर आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथिवी के रूप मे परिणत होकर शारीरिक घ्राणेन्द्रिय (पृथिवी–पार्थिव), रसग्राही रसना द्वारा (जल-जलीय) चक्षुग्राह्य (अग्नि-तैजस), त्वचा-त्वगेन्द्रिय ग्राह्य (वायु-वायवीय) और श्रोत्रेन्द्रिय ग्राह्य, (आकाश-आकाशीय) इन्द्रियो की रचना और गन्ध, रस, रूप, स्पर्श और शब्द का ग्रहण-कार्य साधन होता है। किस प्रकार इन्द्रियाँ अपने अर्थों को ग्रहण कर मन और बुद्धि द्वारा कार्य साधन करती है यह बताना होगा। इन्ही महाभूतो से वात पित्त कफ, धातु और दोषरूप में किस प्रकार शरीर का सचालन और विकार साधन करते है, इसे बताने के लिये उनका निर्माण, स्वरूप, भेद, वृद्धि-स्वरूप, क्षयस्वरूप, गुण-कार्य आदि का ज्ञान प्राप्त कराना पडेगा। त्रिदोषो के सम्बन्धो मे मुख्य बात यह है कि यूनानी वाले रक्त को भी दोष के रूप मे ग्रहण करते है। हमारे यहाँ सुश्रुत ने भी प्रसग विशेष मे ऐसा किया है। किन्तु वह सर्जरी मे रक्त की प्रधानता और आवश्यकता का ध्यान रखकर किया गया है। दोष रूप में सुश्रुत को भी तीन दोष ही स्वीकार है। वात-पित्त कफ जैसे स्वय भी दूषित होते है और दूसरे दोषो और धातुओ को भी दूषित करते है किन्तु रक्त स्वय दूषित नही हो सकता, दोषो द्वारा ही दूषित होता है, जो उसे स्वतन्त्र दोष होने से रोकता है। यह हमें यूनानियो के साथ समन्वय परा-मर्श से तय करना पडेगा। शरीर सिद्धि मे रस-रक्त-मास मेद-अस्थि-मज्जा और शुक्र की बनावट, कार्य, भेद, वृद्धि स्वरूप, क्षयस्वरूप, विकृत स्वरूप आदि के विषय पाठ्यक्रम मे रखने होगे। पुरीष, मूत्र, स्वेद तथा उपमल आदि के विषय में भी सामञ्जस्य स्थापित करना होगा। विशेष कर ओज के सम्बन्ध मे विशद विवेचन अपेक्षित होगा। शरीर विषय को लेकर पेशी, धमनी, नाडी, स्रोत, कण्डरा, आदि में भी सामञ्जस्य स्थापित करने का प्रयत्न अपेक्षित होगा।

हमारे कुछ राष्ट्र नायक समझते है कि वैद्यो और हकीमो को शारीर-ज्ञान नही होता। परन्तु आयुर्वेद के समान यूनानी में भी स्वास्थ्य-रक्षण के लिये और रोगज्ञान के लिये शरीररचना-विज्ञान और शरीरक्रिया-विज्ञान के साथ ही शरीर विकृति-विज्ञान का ज्ञान अपेक्षित माना गया है। इस अश को समन्वित रूप से सम्पादित कर प्रकट करना और स्वायत्तीकरण करना परमावश्यक है। शरीर पर कारणो—असबाब का विविध रूप मे असर होता है। उस असर पर स्वास्थ्य या अस्वास्थ्य की स्थिति होती है। इन कारणो के भेद समझने आवश्यक है। शारीरिक स्थिति समझने के लिये अरकान-महाभूत और अखलात-दोष के अतिरिक्त प्रकृति (मिज़ाजात), अमिश्रावयव (आज़ाए बसीता या मुफरेदा), सम्मिश्रावयव (आज़ाए मुरक्कबा), अरवाह (प्राण और ओज) विविधबल (कुवाएतबैया, कुवाए हैवानिया, कुवाए नफसनिया आदि) शरीर क्रिया कर्म (अफआल), स्वास्थ्य और अस्वास्थ्य मध्यवर्ती अवस्था (हालात सालेस), चेष्टा-निश्चेष्टा (हरकात व सकूनात) आदि का समझना भी आवश्यक है। शास्त्रीय सिद्धान्त (मबादी मुसल्लमात) और उपशास्त्रीय सिद्धान्त (उलूम जुज़इय्या) मे तर्क आवश्यक नही। शारीरज्ञान-प्राप्ति के लिये एलोपैथी ही नही आयुर्वेद और यूनानी मे भी शव-च्छेदन (तशरीह—लाश चीर ने को) आवश्यक माना है और उसे गुण-कर्म के ज्ञान साधान का हेतु कहा गया है।

शरीर के सघटनकर्त्ता तत्त्वो (उमूर मुकव्वमा) को समझना स्वास्थ्य (सेह्हत) समझने के लिये आवश्यक है। इसीको फिजियालॉजी (फिजियास—तबीयत या प्रकृति—लॉजी—शास्त्र या विज्ञान) कहते है। इसके लिये महा-भूत (अरकान या अनासिर), मिज़ाज इनसान (मानव-प्रकृति), मिज़ाज आज़ा (अग प्रत्यग की प्रकृति) अखलात (मानव शरीर के प्रवाही उपादान चतुर्दोष), आज़ा (अग-प्रत्यग के कठिन एव सान्द्र उपादान), अरवाह, (शरीर के सूक्ष्म वायवीय और वाष्पीय उपादान एव प्राण और ओज), कुवा (शक्ति) एव अफआल (कर्म), आदि को समझना ही शरीरक्रिया-विज्ञान (मुनाफेअ आज़ा) कहलाता है।

दोषो के भेदो का वर्णन यूनानी में आयुर्वेद की अपेक्षा कुछ भिन्नता लिये हुए है। अपने यहाँ के पाच-पाँच भेदो से मेल बैठाना विचार पूर्वक आवश्य होगा। यूनानी मे रक्त और कफ की अपेक्षा देहधारकत्व में पित्त और सौदा का महत्व उतना अधिक नही है। वात-नाडियो का सम्बन्ध भी आयुर्वेद में बताते है; परन्तु यूनानी की कल्पना कुछ भिन्न है।

धातुओ और मलो का निर्माण यूनानी मे आयुर्वेद से कुछ मिलता जुलता और भिन्न प्रतीत होनेवाला है। उसका समन्वय और सशोधन प्राचीन तथा आधुनिक शारीर-शास्त्र के विवरण से मिलाकर करना आवश्यक है। शिरोभाग को आयुर्वेद मे उत्तमाग कहते है, यूनानी मे उससे मिलता-जुलता नाम आजाए आलिय्या या आजाए रईसा कहा जाता है। पेशी, मासबन्धनी, नाडी, कला, मुख-मण्डल, नेत्र आदि की बनावट और उनके रोग विवरण सावधानी से अध्ययन करने योग्य है। हृदय, मस्तिष्क, यकृत, वृषण, वृक्क आदि के वर्णन भी अध्ययन के आवश्यक विषय हो सकते है।

निदान और चिकित्सा—आयुर्वेद मे रोग-निदान के लिये कारण, जिसमे नजदीकी कारण और दूर के कारण का विचार होता, प्राग्रूप, रूप या लक्षण, उपशय व्याधिसात्म्य तथा अनुपशय और सम्प्राप्ति का सहारा लिया जाता है। रोगी का निदान करने मे नाडी-परीक्षा, मूत्र-परीक्षा, मल-परीक्षा, जिह्वा-परीक्षा, शब्द-परीक्षा, स्पर्श-परीक्षा, नेत्र-परीक्षा का सहारा लिया जाता है। इनका समावेश दर्शन-स्पर्शन और प्रश्न के अन्तर्गत हो जाता है। रोगभेद, रोग के अधिष्ठान, शारीरिक दोष और मानसिक दोषो के अनुसार रोग का विचार रोग के देश, भूमि देश और देह देश और उसकी विकृति का विचार, भेषजयोग के क्षणादिकाल, व्याधि की अवस्था के काल शोधन-चिकित्सा, शमन-चिकित्सा, शोधन-चिकित्सा के साधन, शमन चिकित्सा के साधन, सुखसाध्य रोग कष्टसाध्य, रोग याप्यरोग और असाध्य रोग के लक्षण, रोगी का बलाबल, रोग का बलाबल रोग-निदान में मल के प्रकोप का विचार, हिताहित औषधान्न-विहार, रोगावस्था में दोषो के वृद्धि-प्रकोपादिका विचार, धातुओ की दुष्टि का विचार, भोजन-मात्रा और औषध-मात्रा का विचार, दोष-विकृति, दूष्यविकृति (मल और धातु विकृति), दोष भेद और उनके स्थान तथा विकृति अवस्था के स्वरूप एव शुद्धावस्था के स्वरूप, सचय, प्रकोप, शमन आदि के स्वरूप, रोग के बलवान स्वरूप के विचार से चिकित्साक्रम, रोग का नाम अज्ञात हो ऐसी दशा मे चिकित्सा, दोष के साथ ही दूष्य-देश-बल-काल-अग्नि-विचार, प्रकृति, वय-सत्त्व-सात्म्य-आहार-रोगावस्था के स्वरूप का विचार आदि का निरूपण करते हुए चिकित्सा में प्रवृत्ति होने का विचार आवश्यक होता है। यथा समय शोधन या शमन उपायो को प्रयोग मे सावधानी रखनी पडती है। दोषो के उपक्रम का विचार आयुर्वेद में अच्छी तरह हुआ है। यह देखना होगा कि यूनानी का क्रम क्या है? आयुर्वेद और यूनानी के क्रम में कहाँ मेल खाता है और कहा मिलता है। भिन्नता का विचार होकर परस्पर विचारो का आदान-प्रदान होना आवश्यक है। सन्तर्पण, अपतर्पण, बृहण, लेखन, स्नेहपान, स्वेदन, वमन, विरेचन, बस्ति आदि का विवरण दोनो म है, किन्तु उसका विचार कर सामजस्य स्थापित करना आवश्यक होगा।

चिकित्साका विषय बहुत विस्तृत है। कायचिकित्सा, ऊर्ध्वाङ्ग चिकित्सा (जिसके अन्तर्गत कर्णचिकित्सा, नासा-चिकित्सा, नेत्रचिकित्सा और शिरोरोग आते है), स्त्री और बालरोग चिकित्सा, ग्रहचिकित्सा (जिस के अन्तर्गत समस्त मानसरोग, कीटाणुशास्त्र और भूत विद्या के विषय आ जाते है।) शल्यशास्त्र, अगदतन्त्र और न्यायवैद्यक, रसायन (स्वास्थ्य कायम रख दीर्घायु प्राप्त करने का विज्ञान) और वृष्यचिकित्सा अर्थात् शरीर को हृष्ट-पुष्ट, शक्तिशाली और सन्तानोत्पादन की शक्ति बनाये रखने की विधि सम्मिलित है। ये चिकित्सा के मुख्य अग है। इसम इल्मी या नजरी और अमली सिनाअत कर्माभ्यास एव कार्यपद्धति-कैफियते अमल के दृष्टिकोण से विचार कर दोनो की विशेषताओ को छाँटना और एक दूसरे की विशेषताओ को समझना और ग्रहण करना आवश्यक होगा। जिस प्रकार चिकित्सा के विषय को चरकसहिता और भावप्रकाश मे वैज्ञानिक और कला दोनो दृष्टियो से विस्तार के साथ वर्णन किया है, उसी प्रकार यूनानी शास्त्रकारो ने भी अपने दृष्टिकोण से कही-कही प्रशसनीय वर्णन किया है। इस विषय को भी विशषज्ञो द्वारा सकलित कर विशेषबातो को एक दूसरे को परिचित कराना समन्वय के दृष्टिकोण से आवश्यक होगा। विशेषकर शल्यशास्त्र या सर्जरी के जर्राही भाग का यूनानी-वालो ने अच्छा वर्णन किया है और जर्राहो ने उसे अब तक सुरक्षित कर रखा है। हमारे समन्वय का उद्देश्य होगा कि उसे परस्पर समझे और अपने को पूर्णता मे लाने का प्रयत्न करें। शल्य और शालाक्य हमारा निजी विषय होने पर भी वैद्य और हकीम दोनो को इस विषय में आधुनिक एलोपैथी से भी बहुत कुछ ग्रहण करना होगा, किन्तु वह हमारा अगला कदम होगा। ग्रहचिकित्सा में आयुर्वेद का वर्णन बहुत विचारणीय है। वह आधुनिक कालमें उपेक्षित और

तिरस्करणीय हो रहा है, किन्तु उसे वैदिक और वैद्यक दृष्टिकोण से मानस शास्त्र और आधुनिक विज्ञान के प्रकाश में उपयोगी स्वरूप मे लाने का प्रयत्न करना होगा। यह सशोधित विषय चिकित्सा-जगत् के लिये एक मूल्यवान् देन साबित होगी।

यूनानी मे दोषो को विलोम करनेवाली (रादेअ) और वृहणकारी (मुकव्विय) औषधियो पर आयुर्वेद के समान अच्छा विचार हुआ है। इसमे परस्पर आदान-प्रदान लाभकारी होगा। हकीम बनने के लिये यूनानी में इल्मे इल्मी (शास्त्रज्ञान) और इल्मे अमली (प्रायोगिक ज्ञान) की प्राप्ति को महत्त्वपूर्ण माना है, जो सुश्रुत और चरक के विचारो का प्रतिबिम्ब है। अनुभव और परीक्षण (मुशाहिदा या मुआइन) पर भी आवश्यक जोर दिया गया है। निदान-परीक्षा मे कार्य और कारण का सम्बन्ध समझना आवश्यक होता है। आयुर्वेद मे तीन कारण हैं—निमित्तकारण (सबबफायली), समवायिकारण (असबाब माद्दिया) और असमवायी। इसके बदले यूनानी म स्वरूप या आवृत्ति सूचक सबबसूरी है। एक अधिक चौथा प्रयोजन (सबबग्राई) है। समीपी कारण (मौजूअ करीब) और दूरस्थ कारण (मौजूअ बईद) इनके अधिष्ठान अखलात (चतुर्दोष) और अरकान (चतुर्भूत) है। यह विभाग गम्भीरता से समझने योग्य है। सामान्य कारण (असबाब कुल्लिया-उमूमी असबाब) को दर्शन ग्रन्थो के अनुसार लिया गया है।

द्रव्यविचार—आधारभूत सिद्धान्तो मे द्रव्यविचार की प्रधानता है। द्रव्यो के जगम, वृक्ष और खनिज भेद दोनो वैद्यक को स्वीकार है। उनकी उत्पत्ति महाभूतो के क्रम से होती है, यह भी दोनो शास्त्र मानते है। किन्तु यूनानीवाले द्रव्योत्पत्ति के दार्शनिक स्वरूप को गहराई से सोचने की आवश्यकता नही समझते, क्योकि वैद्यक से उस अश का घनिष्ट सम्बन्ध नही है। आयुर्वेद में द्रव्यनिरूपण विस्तार के साथ हुआ है। यद्यपि द्रव्य किसी एक ही भूत से निर्मित नही; किसी-न-किसी अश में पाचो महाभूतो का सम्मिश्रण रहता है, किन्तु जिस महाभूत की अधिकता होती है, वह द्रव्य उसी-उसी महाभूत का माना जाता है। चिकित्सा और आहार के विवेचन मे द्रव्य-गुण का बहुत महत्त्व है। इसलिये चिकित्सक को यह जानना आवश्यक है कि नाभस, वायवीय, तैजस, आप्य और पार्थिव द्रव्य के लक्षण और स्वरूप क्या है। उनके गुण-दोष क्या है। द्रव्य के गुर्वादिक २० गुणो का विवरण जानना भी आवश्यक है। द्रव्य के विचार से रस-वीर्य-विपाक और प्रभाव का ज्ञान अनिवार्य है। यूनानी मे इनका वर्णन कुछ भिन्न-स्वरूप मे हुआ है। इसका विचार यूनानी के विद्वानो के साथ करके उपयुक्त पाठ्यक्रम तैयार करना होगा। आयुर्वेदिक द्रव्य वर्गों मे कुछ यूनानी के द्रव्यो को उनके गुणविचार के साथ मिलाना आवश्यक होगा। इसी प्रकार यूनानीवालो को भी अपने द्रव्यवर्गों मे आयुर्वेदिक द्रव्यो का समावेश करना उचित होगा। यूनानी मे द्रव्यगुण का विचार करते हुए गुण के तर-तम दृष्टिकोण का अच्छा विचार हुआ है। उसे आयुर्वेदवालो को समझकर अपने निघण्टु में बढाना होगा।

अरबी रुक् शब्द का अर्थ उपादान-मूलद्रव्य-कारण द्रव्य है जिसका चार होने के कारण बहुवचन रूप अरकान हो जाता है। उन्सुर एकवचन का बहुवचन अनासिर हो जाता है। उस्तुकुस का बहुवचन उस्तुकुस्सात एव बसीत का बहुवचन बसाइत हो जाता है। ये अनासिर जाराम (जीवधारी-हैवानान), औद्भिद (नतात) और पार्थिव (खनिज-मादनियात) तीन प्रकार के है। महाभूतो का विभाजन विभिन्न गुणस्वभाव एव स्वरूप के उपादानो में नही हो सकता। इन मूल उपादानो के ससर्ग से ही कार्य द्रव्यो या यौगिको (मुरक्कबात) की उत्पत्ति होती है। अखिल सृष्टि के द्रव्य चतुर्भूतो से निर्मित चातुर्भौतिक है। अर्थात् यूनानी हकीम आकाश तत्त्व को ग्रहण नही करते। ये भूत जब कारणावस्था परमाणुरूप मे रहते है उसे ही आयुर्वेद मे तन्मात्र स्थिति कहते है। कार्यावस्था स्थूल होकर द्रव्य कहलाते है। आधुनिक पाश्चात्यो का ईथर आकाश रूप है। आकाश कारणावस्था और कार्यावस्था दोनो मे परम महत् परिणाम वाला और सर्वगत होता है। शेष सभी तत्त्व अन्त मे इसी मे लीन होते है, यहाँ तक कि उनका पृथक्-पृथक् अनुभव नही किया जा सकता। यह अव्यक्त और तटस्थ है। किसी व्यक्त पदार्थ की क्रिया मे साधक या बाधक नही होता। इसके विशद विज्ञान को हमे समझना होगा। यूनानी भौतिकशास्त्री इसे शून्य होने के कारण छोड देते है, परन्तु शून्य होते हुए भी अपने शब्द अर्थ के द्वारा गुणाश्रयी होने से द्रव्यारम्भक तत्त्वरूप मे ग्राह्य है। आधुनिक विज्ञान भी ईथर मे शब्द का होना मानता है और रेडियो के शब्द आकाश द्वारा ग्रहण होने से भी उसका महा-

भूततत्त्व प्रतिपाद्य है। अग्नि (नार-आतश) की परिणति पित्त मे होती है। अतएव अग्नि और पित्त की प्रवृत्ति उष्ण और रूक्ष है। आप या जल की परिणति श्लेष्मा (बलगम) मे होती है। इसलिये जल और कफ दोनो का मिजाज शीतल और स्निग्ध है। वायु (हवा-बाद) से रक्त की उत्पत्ति मानी गयी है। इसलिए उसका मिजाज उष्ण और स्निग्ध माना गया है। पृथ्वी (अर्ज-खाक) की परिणति सौदा नामक दोष मे होती है। यह आहार रस (कैलूस) के निष्ठा पाक के समय यकृत की तलछट (दुर्द) के रूप मे रक्त के नीचे रहता है। इस का मिजाज शीतल और रूक्ष है। इसके प्राकृत (तबई) और वैकृत (गैरतबई) दो भेद हैं। यही नही, श्लेष्म विदग्ध के रूप मे सौदाए बलगमी, विदग्ध रक्त के रूप म सौदाए दम्बी, विदग्ध सौदा के रूप मे सौदाए सौदावी और विदग्ध पित्त के रूप मे सौदाए सफरावी कहलाता है। श्लेष्मा की उत्पत्ति मस्तिष्क म मानी गयी है। चतुर्भूत के समान यूनानी में दोष भी चार प्रकार के है। दम या रक्त, बलगम या श्लेष्मा, सफरा या पित्त और सौदा। यहाँ वायु की स्थिति गडबडा जाती है। सौदा को वायु मानना कठिन है, क्योकि उसकी उत्पत्ति पृथिवी तत्व से मानी गयी है। इनके उत्पत्तिक्रम, स्थान और भेदो म भी अन्तर है। अतएव दोष विषय मे बहुत सावधानी से समन्वय की आवश्यकता है। आकाश सम्भूत शब्द और स्पर्श गुणशील वायु की स्थिति यूनानी मे स्पष्ट करनी पडेगी।

मिजाज या प्रकृति—भिन्न विषय होते हुए भी यूनानी मे इसका वर्णन ऐसा मिला जुला किया गया है जिससे शरीर और द्रव्य प्रकरण के साथ भी इसका जिक्र हो सकता है। आयुर्वेद में प्रकृति शब्द का प्रयोग मनुष्य के स्वभाव के पर्याय मे आता है और मनुष्य जन्म के पहले माता-पिता के संसर्ग के समय पिता के शुक्र और माता के रज के मेल से जैसी दोषस्थिति होती है उसी के अनुसार मनुष्य की प्रकृति वातज, पित्तज या कफज बनती है। यदि तीनो दोषो की समानता हो तो श्रेष्ठ प्रकृति बनती है। वातज प्रकृति हीन, पित्तज मध्यम और कफज प्रकृति उत्तम मानी जाती है। यो चार प्रकार की प्रकृति हुई। वातज-पित्तज, कफज-पित्तज और वातज-कफज प्रकृति भी मिलकर प्रकृति सात प्रकार की हो सकती है, किन्तु द्वन्द्वज प्रकृति निन्द्य होती है। जो हो, सब मिलाकर सात प्रकार की प्रकृति होती है। यूनानी में प्रकृति शब्द का प्रयोग मानव प्रकृति के अतिरिक्त किसी भी द्रव्य के गुण-स्वभाव के अर्थ मे भी ग्रहण होता है। यूनानी मे प्रकृति शब्द का पर्याय मिजाज है जिस परिमाण के अनुपात से महाभूतो का मेल होकर वस्तु का निर्माण होता है, उसी रासायनिक परिवर्तन के अनुसार समवाय (आमेजिश) के परिणामस्वरूप इम्तियाज कीमियाई या इम्तियाज हकीकी का निर्माण होता है। इस प्रकार महाभूत समवाय के आकर्षण द्वारा उत्पन्न योगशक्ति (उलफत) के द्वारा संसर्ग या समवाय (इम्तियाज बाहमी) से मिजाज की सिद्धि होती है। इस प्रकार के समवाय-सयोग को आयुर्वेद मे प्रकृति समसमवाय कहते है। इसके विपरीत कुछ महाभूतो में परस्पर समवेत होने का गुण होता है। मिलाने का प्रयत्न करने पर भी तेल और पानी के सयोग समान वे अलग हो जाते है। इस घृणा और नफरतरूपी अवस्था को विकृति विषमसमवाय अर्थात् विग्जत या नफरते कीमियाविय्या कहते है। जब दो या अधिक भूतो के समवेत होने पर उनके गुण स्वभाव यथावत् बने रहते हैं तब उस प्रकृति समसमवाय (इम्तियाज साजज) को सादा सयोग पानी और चीनी के मेल के समान मानते है। इसे द्रव्यगुण प्रकरण के नैसर्गिक प्रभाव के रूप म मान सकते है। किन्तु जब महाभूत इस प्रकार समवेत हो कि उन के पूर्वस्थित गुणस्वभाव परिवर्तित होकर नवीन रूप ग्रहण करे तब उसे इम्तिजाज हकीकी कहते है। आहाररस से रक्त, रक्त से मासादि का निर्माण इसी स्वरूप का समझें। द्रव्य प्रकरण मे विचित्र प्रत्ययारब्धकारी द्रव्यो का प्रभाव भी ऐसा ही होता है। इस विषय के आधारभूत सिद्धान्त में तो कोई अन्तर नही है क्योकि आयुर्वेदिक प्रकृति का निर्माण दोषो के आधार पर माना गया है और यूनानी प्रकृति का निर्माण महाभूतो के सयोग के आधार पर माना गया है। दोषो का निर्माण भी तो महाभूतो से ही होता है। यही नही, सुश्रुत ने महाभूतो के अनुसार भी प्रकृति का वर्णन किया है। किन्तु इस विषय में भी समन्वय की आवश्यकता है।

यूनानी मे प्रकृति मिजाज शब्द का प्रयोग द्रव्य-गुण प्रकरण मे भी होने के कारण आयुर्वेदिक प्रकृति से इसमें भिन्नता आ जाती है। द्रव्यगुण के शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष के साथ मिजाज शब्द का प्रयोग होता है। आयुर्वेद मे द्रव्य के गुण २० माने गये है—गुरु, मन्द, शीत,

स्निग्ध, श्लक्ष्ण, सान्द्र, मृदु, स्थिर, सूक्ष्म और विशद ये १० गुण और १० इनके विपरीत लघु, तीक्ष्ण, उष्ण, रूक्ष, खर, द्रव, कठिन, सर, स्थूल और पिच्छिल। यूनानी में मिजाज के नौ भेद है, एक मोअतदिल और आठ गैरमोअतदिल। मोअतदिल मे महाभूतो का सम्मिलन अभीष्ट अनुपात कर्म और स्वभाव के अनुसार यथेष्ट रूप मे रहता है। इसे आयुर्वेद के अनुसार स्वाभाविक प्रकृति या श्रेष्ठ प्रकृति कहेगे। जब सयोगी महाभूतो के नैसर्गिक अनुपात का लोप हो जाता है तब उसे गैरमोअतदिल या विकृति या विप्रकृति या विषम प्रकृति या निन्द्य प्रकृति कहेगे। गैर-मोअतदिल मिजाज के आठ भेदो मे चार स्वतन्त्र या अमिश्र (मुफरद) है और चार समिश्र या मिश्रगुणप्रकृति (मुरक्कब) है। अमिश्र (मुफरद) के चार भेद मे हार्र (उष्ण), बारिद (शीत), याबिस (रूक्ष) और रतब (स्निग्ध) है। इसमे आवश्यकता से अधिक उष्णता, शीतलता, रूक्षता और स्निग्धता मानी जाती है। गैरमोअतदिल मुरक्कब के चार भेदो म हार्र-याबिस (उष्ण-रूक्ष) हार्र-रतब (उष्ण-स्निग्ध), बारिद-याबिस (शीत-रूक्ष) और बारिद-रतब (शीत-स्निग्ध) है। पहल में गर्मी और खुश्की की अधिकता, दूसरे मे गर्मी और तरी की अधिकता, तीसरे मे सर्दी और खुश्की की अधिकता और चौथे मे शीत और तरी की अधिकता अपेक्षित है। इसमे विशेष अन्तर नही है। आयुर्वेद के अनुसार पहले को एक गुणाधिक्य और दूसरे भेद को द्वन्द्वज या ससर्गज गुणाधिक्य कहेगे। किन्तु पाठयक्रम म समन्वय दृष्टि से विषय रखना पडेगा। यूनानी मे शरीरावयव की अगुलियो की त्वचा से हथेली तथा हाथ और पाव की त्वचा का भी प्रकृति विचार हुआ है। यही नही सारे अग-प्रत्यङ्गो और अवस्थाभेद से मिजाज का विचार हुआ है। यहाँ तक कहा गया है कि पुरुषो की अपेक्षा स्त्रियो का मिजाज शीत-स्निग्ध (बारिद-रतब) है। इसे भी आपस मे समझने योग्य है।

अरवाह—यूनानी का अरवाह अरबी रूह शब्द का बहुवचन है। रीह अर्थात् प्राणवायु को भी इसी के अन्तर्गत माना जाता है। जीवनाधार शक्ति या तत्व भी इसी का अंश है। आयुर्वेदीय पुरुष की समस्या भी इसी मे उलझी समझिये। आत्मनिरूपण भी इसके अन्तर्गत आ जाता है। शक्ति, बल-कुव्वत इसी के अन्तर्गत है। हृदय की शक्ति-प्राणशक्ति और ओज की खोज इसी में हो सकेगी। हृदय की प्राणशक्ति (कुव्वत हैवानिया) या रूह हैवानिया या यकृत की कुव्वत तबीइय्या की समस्या अरवाह के सामञ्जस्य से ही सुलझेगी। धार्मिक आत्मा (नफ्स) से हकीमो का अरवाह कुछ भिन्न सूक्ष्म बाष्परूप (लतीफ और बोखारी गैस रूप) द्रव्य धातुओ का उत्कृष्ट सूक्ष्म अश है, जो हृदय के वामनिलय मे पहुँच कर अपने सूक्ष्म अश से बाष्प के रूप मे परिणत हो जाता है। वह वाष्पाश प्राणवायु से मिलकर तेजोपुज (माद्दए मुश्तइला—लौ या शोअला बननेवाला द्रव्य) रूह का स्वरूप प्रकाशित करता है। कोई-कोई इसे रक्त का सूक्ष्म वाष्पाश (बोखा-रुद्दमेल्लतीफ) कहते है। इस अरवाह की समस्या ओज (अखलाते लतीफा) के साथ ही प्राणवायु, आहाररसाररस (कसाफत अखलात), अवयवनिर्मायक (अज्ज़ा मुकव्वना) अश क विवरण के साथ सुलझानी पडेगी। आयुर्वेदिक पुरुष विज्ञान के विशद वर्णन से हकीमो को तसल्ली देनी होगी। शरीर के सारे अवयवो को सजीव और कार्यक्षम रखन म जिस चेतनाश की आवश्यकता होती है उसे रूह से मिलाना होगा। प्राणवायु (हवाए मुस्तनश्क) रूह के लिय समवायी कारण या उपादान कारण माना गया है। रक्त के विशेष घटको (हमत-रक्तकणो) के आकर्षण से उसके विशेष उपादान शोषित होकर रक्त केशिकाओ में प्रविष्ट होते है। रक्तपरिभ्रमण में ये रूह के उपादान (रुहानी अज्जा) साथ रहत है। इसके त्याज्यांश को फुजुल दुखानिया और बोखारात दुखानिया अर्थात् उदान-प्ररित अपानवायु-कार्बन डायोआक्साइड कह सकते है। रूह के कार्य, शक्ति, अरवाह के भद, लक्षण, क्रिया, अधिष्ठान आदि का विषय भी विवेचनीय होगा। इस विवेचन से बहुत से दार्शनिक सिद्धान्त, जीवनीशक्ति, चेतनाश आदि के विवरण को नया प्रकाश मिलेगा।

कुवा-शक्ति या बल—शक्ति या बल का विवेचन शरीरधारण के साथ आ जाना चाहिए। किन्तु यूनानी मे उसके आधारभूत तत्वो (उमूर तब्बीइय्या) में इसे छठा तत्व मानकर प्रधानता दी गयी है। आयुर्वेद में रस से लेकर शुक्रपर्यन्त धातुओ के परम तेजरूपी ओज को ही बल कहा गया है। किन्तु आयुर्वेद की अपेक्षा यूनानी से बल का विशेष विवरण दिया गया है। कुवा के तीन भेद है—कुवाए तबई, कुव्वते नफसानी और कुव्वते हैवानी।

कुवाए तबई के एक भेद से शरीर का धारण, पोषण और वर्धन होना है और दूसरा भेद जाति रक्षा के लिये आवश्यक है। धारण-पोषण और वर्धन दो उपभेदो के रूप मे होता है। गाजिया शरीर को आहार पहुँचाकर पुष्ट करती है। नामिया—इसके द्वारा शरीर की लम्बाई, चौडाई और मोटाई का वर्धन होता है। कुवाए तबई के दूसरे उपभेद से जाति रक्षा होती है। इसके भी दो अवान्तरभेद है। प्रथम मुवल्लिदा है जो शुक्रोत्पादन का काम करती है और धातुओ से उसके सारभाग (जौहरमनी) को अलगाती है। दूसरी मुसब्विरा है जो शुक्र को उपादानो से उस जाति की स्वरूपाकृति उत्पन्न करती है। शरीर म जो नित्यप्रति छीजन होती है, उस की क्षतिपूर्ति यह कुव्वतेगाजिया (पोषणकारिणी शक्ति) विविध आहार के द्वारा करती रहती है। इसी तरह कुव्वते नामिया शरीर के आकार-प्रकार को कायम रख बढाती रहती है। इस कार्य के लिए चार सहायक शक्तियाँ इसकी सविका-खादिमा स्वरूप है। जाजिया आहार के सार का शोषण कर अगों या धातुओ के पास पहुँचानेवाली शक्ति है। मासिका आहार रस को तबतक रोके रहती है जब तक धातुओ की स्वरूपाकृति नही बन जाती। हाजिया अपनी पचनशक्ति के द्वारा आहार के शोषित उपादानो को धातुओ और अग प्रत्यङ्गो की भौतिक स्थिति (किवाम)) और प्रकृति के अनुकूल बनाने के लिये पाचन करती रहती है। दाफेआ आहाराश के शरीर के अनुपयोगी भाग मल—फुजला का उत्सर्जन करती है। इन चारोका काम गर्मी, सर्दी, तरी और खुश्की गुणो पर निर्भर है।

कुवा के दूसर भद कुव्वते नफसानी के भी दो उपभेद है—मुहर्रिका और मुद्रिका अर्थात् चेष्टाबल और सज्ञाबल। पहली के द्वारा अवयवो को चेष्टाओ (हरकतो) को पहुँचाने का आदश होता है। दूसरी क द्वारा शरीरावयवो म शुभाशुभ सवेदनाओ का अनुभव इन्द्रियो क केन्द्रो तक पहुँचाया जाता है। कुव्वत मुहर्रिका के दो उपभेद है शौकिया और फाएला। शौकिया के दो अवान्तर भेद शहवानिय्या और गजबिय्या है। शौकिया चेष्टा का कारण है और फाएला के द्वारा चेष्टा सम्पन्न होती है। जिस समय किसी प्रिय या अप्रिय विषय या वस्तु का चित्र हृदय मे अकित होता है, उस समय शहवानिया उसकी प्राप्ति की इच्छा करती है। यदि वह अनिष्टकर हो तो कुव्वत गजबिय्या उसके निवारण के लिये कटिबद्ध होती है। कुव्वते फाएला का काम पेशियों का आकुचन और प्रसारण करना है, जिससे कण्डरा और अवयव सिकुडता है अथवा पेशी ढीली होती है जिससे कण्डरा खिचती और पेशी फैलती है। यह कार्य जीवधारी के जाने विना हुआ करती है। कुव्वते मुदरिका के भी दो उपभेद है। प्रथम जाहिरी (वाह्य) और द्वितीय बातिनी (आभ्यन्तरिक)। जो सज्ञाबल मस्तिष्क मे रहता है वह वातिनी है और मस्तिष्क के बाहरी सज्ञाबल को जाहिरी कहते है। जाहिरी के पाँच अवान्तर भेद उसके जासूस या भेदिया के रूप मे है। इन्हे वाह्यज्ञानेन्द्रियपञ्चक (हवास खम्सा जाहिरा) भी कहते है। इनका कार्य बाहरी सवेदनाओ का अनुभव मस्तिष्क की आभ्यन्तरिक शक्तियो तक पहुँचाना है। इनमे से प्रथम कुव्वतेबसारत दृष्टिशक्ति की इन्द्रिय—चक्षु है। द्वितीय कुव्वत सामआ श्रवणशक्ति की इन्द्रिय—श्रोत्र है। तृतीय कुव्वते शाम्मा घ्राणशक्ति की इन्द्रिय—नासिका है। चतुर्थ कुव्वते जायका रसेन्द्रिय—जिह्वा है और पचम कुव्वते लामेसा स्पर्शनेन्द्रिय त्वक है।

आभ्यन्तर वातिनी के भी पाच अवान्तर उपभेद है। प्रथम हिस्सनुश्तरका मस्तिष्क के पूर्वकोष्ठ का अगला भाग है। द्वितीय कोष या खजाना खियाल है। जिसका स्थान मस्तिष्क के अगले कोष्ठ का पिछला भाग है। तृतीय आभ्यन्तरिक ज्ञानेन्द्रिय कुव्वतेवहम या भावना का केन्द्र है। चौथी शक्ति का कोष हाफिजा (स्मृति) मस्तिष्क के पश्चात् कोष्ठ मे है। पचम अन्तरेन्द्रिय कुव्वत मुतसर्रिफा है जो मन की सेवा करती है। बाह्य ज्ञानेन्द्रियो के द्वारा जो ज्ञान या सवेदना प्राप्त होती है उन्हे यूनानी परिभाषा मे सूर या सूरतें कहते है। जिन सवेदनाओ का ज्ञान बाह्य ज्ञानेन्द्रियो से नही हो सकता उन्हे मानी कहते है। प्रकाश, गन्ध, शब्द, स्वाद, उष्णता, शीतलता सूरते है, जिन्हें आयुर्वेद मे पचेन्द्रियो का अर्थ कहते है। परन्तु प्रेम, घृणा आदिका ज्ञान वहिरेन्द्रियो से नही होता इसलिए इन्हे मानी (मानसिक) कहते है।

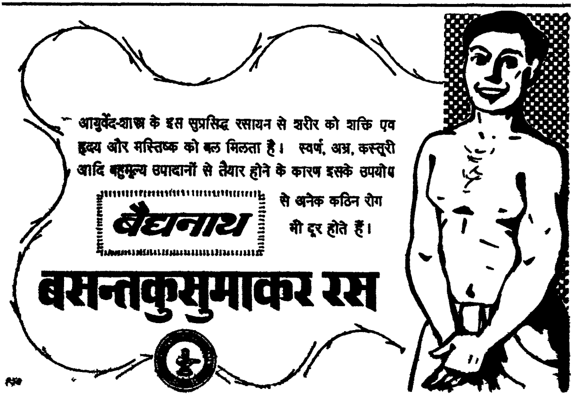
कुवा का तीसरा भेद कुव्वते हैवानी है। यह शरीर के सभी अग-प्रत्यग मे पायी जाती है और उन अगों को मनोबल—कुव्वते नफसानी ग्रहण करने के लिये तत्पर करती है। इसके द्वारा शरीर में जीवन, प्राण या चैतन्य प्राप्त होता है। इसका अधिष्ठान या आधार प्रकृति शरीरोष्मा (हरारते गरीजी) उपकरण रूप में है।

इस कुवा प्रकरण को समन्वय की दृष्टि से आयुर्वेदवालो को समझना और आदान-प्रदान के द्वारा ठीक रूप निर्धारण करना होगा। इसकी कुछ शक्तियाँ तो ओज से सम्बन्ध रखती है। कुछ ज्ञानेन्द्रियो के विषय हैं जिन का निर्धारण मन और बुद्धि द्वारा होता है। कुछ आत्मचैतन्य की शक्ति है। अतएव उन-उन विभागो में इसका विवरण होना चाहिए या एक स्थान मे भी निर्देश रहना चाहिये। बुद्धि इन्द्रियातीत विषय महान के अन्तर्गत है।

अफआल—यूनानी का आधार सातवाँ तत्व या विषय अफआल है। यह अरबी के फेल (कर्म) शब्द का बहुवचन है। कर्म द्रव्य-विज्ञान का अग है। बल या कुव्वत से इसकी सिद्धि होती है। शक्तिसम्पन्नता आने पर कार्य-शक्ति का प्रकाशन होता है। पदार्थ-विज्ञान का विषय होन पर भी शरीर म जो शोषण (जज्ब) और उत्सर्जन (दफा) आदि कार्य सम्पन्न होते है, उनका वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। शोषण, उत्सर्जन आदि कार्य अमिश्र (मुफरदा) श्रेणी का है। कुछ कार्य ऐसे हैं जो एक से अधिक कुव्वतो अर्थात् शक्तियो या बलो से निष्पन्न होते हैं, जैसे निगलना, चलना, फिरना आदि। ऐसे कर्म को सम्मिश्र अर्थात् मुरक्कबा कहते है। इन आठ विषयो को विचार कोटि मे लेकर आयुर्वेद और यूनानी का समन्वय अभीष्ट है।

यहा कुछ निर्देशनमात्र किया गया है। इस कार्य की सफलता कुछ आयुर्वेदज्ञो और कुछ यूनानी के विद्वानो को मिलकर करना पडेगा। कठिनाई यह है कि अधिकाश वैद्य यूनानी से अपरिचित है और अधिकाश हकीम आयुर्वेद से अधिक परिचित नही है। अतएव कुछ मध्यम जनों के द्वारा इस कार्य को बढाना पडेगा। इस समस्या का हल इस समय एक राष्ट्रीय आवश्यकता के रूप में उपस्थित है। आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा का पद प्राप्त होने में इस कार्य से सुलभता होगी।

सुधानिधि कार्यालय,
प्रयाग।



आयुर्वेद के अध्ययन का स्वरूप क्या हो?

डा० सम्पूर्णानन्द

आयुर्वेद के अध्यापन का स्वरूप क्या हो तथा स्वतन्त्र अध्येय विषय के रूप म आयुर्वेद का भविष्य क्या होगा, इन विषयो पर भूतकाल मे भारत सरकार तथा प्रादेशिक सरकारो द्वारा नियुक्त समितियो ने अनेक बार विचार कर अपने प्रतिवेदन उपस्थित किए है। उत्तर प्रदेश की उच्च-स्तरीय शिक्षा समिति भी इसी महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर विचार करने के लिए नियुक्त हुई है। भूतकाल में नियुक्त विभिन्न समितियो ने बहुत परिश्रम के बाद अपने महत्त्वपूर्ण सुझाव दिए थे, जिनमें से अनेक सुझावो को अब भी व्यावहारिक रूप देना सम्भव नही हुआ है। किन्तु मेरे विचार से इन समितियो में दो बड़े दोष थ। या तो उनमें मुझ जैसे अल्पज्ञो का बाहुल्य था या एलोपैथी के डाक्टरो का उनमे प्राधान्य था। इन डाक्टरो की इच्छा चाहे कितनी ही निरपेक्ष तथा निष्पक्ष रहने की रही हो परन्तु उनसे यह आशा नही की जा सकती थी कि अपनी प्रणाली से भिन्न किसी अन्य प्रणाली के सम्बन्ध में ऐसा मान सकते कि वह किसी सार्थक अध्ययन का विषय बन सकती है। किन्तु इस सब के पीछे यह धारणा भी रहती है कि आयुर्वेद, हिकमत और होमियोपैथी को, विशेषकर आयुर्वेद और हिकमत को, अन्य कारणो से नही राजनैतिक कारणो से ही सही एकदम छोड़ना सम्भव नही है, यद्यपि ये इतनी सम्माननीय नहीं है कि विज्ञानविद् उनका अनुशीलन और अध्ययन करें। परिणाम स्वरूप निश्चय ही आयुर्वेद को कुछ सबब से सहारा मिला है और कुछ वैद्य सरकारी नौकरी में छोटे-मोटे स्थान पा गये है। किन्तु इसके अतिरिक्त एक बात और हुई है जिसका भविष्य में भयकर परिणाम हो सकता है। चाहे यह अभीष्ट न रहा हो परन्तु जो शिक्षा आयुर्वेदिक कालेजो और स्कूलो में दी जाने लगी है उसका यह परिणाम अवश्यम्भावी है। सुशिक्षित वैद्य ही चिकित्सा कर सकें इस विषय में सरकार की सतर्कता शास्त्रीय परम्परा के अनुकूल ही है। सुश्रुत के कथना-नुसार वैद्य को अधिगत तन्त्र और उपासित तन्त्रार्थ और दृष्टकर्मा होना चाहिए, किन्तु ऐसा व्यक्ति भी राजाज्ञा के बिना चिकित्सा का कार्य नही कर सकता। चरक ने तो यहाँ तक कहा है कि यदि किसी राज्य में नीम हकीमो को अपना व्यवसाय करन की छूट हो तो राज्य की कर्तव्यविमुखता को ही इसका कारण कह सकते है। ऐसे लोग समाज के कटक है और इन्हे काँटे के समान ही निकाल कर फेंक देना चाहिये। जैसा मैने अभी कहा है यह ठीक ही हुआ कि उचित प्रशिक्षण की अनिवार्यता पर इतना जोर दिया गया, किन्तु उस प्रशिक्षण का रूप क्या हो इस ओर उतना ध्यान नही गया जितना आवश्यक था।

इन सब बातों का परिणाम बड़ा भयकर हुआ है। नीम हकीमों की एक नई जाति पैदा हो गई है। पिछले कतिपय वर्षों में आयुर्वेदिक कालेजों से जो वैद्य पढ़कर निकले है, उनको नीम हकीम (क्वेक) कहना शायद श्रुतिकटु और अतिशयोक्ति हो किन्तु उन्हें और क्या उपयुक्त नाम दिया जाय यह मेरी समझ में नहीं आता। ये लोग वैद्य नहीं माने जा सकते। उन्हें आयुर्वेद में किसी प्रकार की आस्था नहीं है और वे स्पष्ट रूप से उसकी अवैज्ञानिकता की निन्दा करते हैं। विज्ञान की उनकी जानकारी बहुत ही थोड़ी है इसलिए अहम्मन्यता और वैज्ञानिक होने का गर्व जताने में उन्हें सकोच भी नहीं होता। अल्पज्ञान खतरनाक होता है क्योंकि अन्य बुराइयों के अतिरिक्त उससे झूठा अभिमान उत्पन्न होता है। आयुर्वेदाचार्य कहलाने में वे अपना अपमान समझते है और उनकी अभिलाषा यह रहती है कि उन्हें ऐसी उपाधियाँ दी जायें जो बोलने में एलोपैथिक कालेजों के स्नातकों की उपाधियों से मिलती-जुलती हों। किन्तु वे एलोपैथ भी नहीं है और उनके प्रशिक्षण का स्तर एम० बी० बी० एस० उपाधि प्राप्त स्नातकों के प्रशिक्षण से कहीं नीचा है। वे अपने आप को नैराश्य के गर्त में पाते है क्योंकि समाज ने उन्हें एलोपैथी डाक्टरों के समकक्ष समझने की गलती नहीं की। क्योंकि ये उन लोगों की विचारहीनता के शिकार हुए है जिनका यह कर्तव्य था कि उन प्रशिक्षण के लिए उपयुक्त पाठ्यक्रम बनाते। इन अभागों के साथ हमारी सहानुभूति तो होगी

चाहिये किन्तु यह गलत बात होगी कि हम यह आशा करें कि ये समाज के स्वास्थ्य और चिकित्सा सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकेंगे। मेरी राय में जिस नयी प्रणाली ने इनका सर्वनाश किया है उसे चालू रखना बड़ा भारी अपराध होगा।

जिस परिस्थिति में आज हम अपने को पाते है, उसका उत्तरदायित्व उन लोगो पर है जिन्होने यह निर्णय किया कि आयुर्वेद के विद्यार्थियो को इटेग्रेटेड (एकीकृत) प्रणाली की शिक्षा दी जाय। चिकित्सा के विषय मे मै स्वय एकीकरण में विश्वास करता हूँ क्योकि मानव शरीर और मस्तिष्क इतनी महान वस्तुएँ हैं कि उनको विभिन्न चिकित्सा प्रणालियो का अखाडा नही बनाया जा सकता। मेरी दृष्टि में एक ही चिकित्सा-प्रणाली वैज्ञानिक हो सकती है। इस प्रणाली की औषधि-सूची मे सैकडो प्रणालियो से औषधियाँ ली जा सकती है। किसी औषधि-विशेष का प्रयोग किसी रोग-विशेष की चिकित्सा के लिये कुछ हद तक प्रयोगात्मक हो सकता है, किन्तु वैज्ञानिक बनने के लिये किसी भी प्रणाली को निश्चित नियमो से बद्ध होना चाहिये। विज्ञान और प्रयोगसभूत ज्ञान मे यही अतर है। केवल अनुभव पर आधारित ज्ञान से विज्ञान इसीलिये विशिष्ट है कि उसमें प्राकृतिक नियमो का निर्देश रहता है। जब अनेक में अनुस्यूत प्राकृतिक नियम पहिचान लिया जाता है तो हम को ऐसे विषयो की भी जानकारी हो सकती है जो अभी प्रत्यक्ष अनुभव में नहीं आये है। आप चाहे तो इसे भविष्यकथन कह सकते है। इस दृष्टि से आयुर्वेद और एलोपैथी का एकीकरण वास्तविक एकीकरण होता। किंतु इस प्रकार का कोई प्रयत्न न तो राज्य की ओर से किसी केन्द्रीय या देशीय सरकारी कमेटी ने किया और न किसी एलोपैथी या आयुर्वेद के कालेज में किया गया। वास्तव मे एकीकरण का अर्थ आधुनिक चिकित्सा-प्रणाली की एक झीनी चादर को आयुर्वेद की एक पतली पर्त पर उढाना मात्र ही था। पतली या मोटी, मूल बात तो यह है कि यह मान लिया गया है कि आयुर्वेद स्वय अवैज्ञानिक और अपूर्ण है और उसमें जान डालने के लिये एलोपैथी का एक तीव्र पुट देना होगा। एलोपैथी ने इस एकीकरण मे आयुर्वेद की ओर एक कदम आगे नही बढाया बल्कि आयुर्वेद ही का रूपान्तर किया जा रहा है। इसको एकीकरण नही कहा जा सकता। यदि यही क्रम रहा तो थोडे ही समय में आयुर्वेद का नाम-निशान मिट जायगा। केवल कुछ औषधियो का प्रयोग ही बच रहेगा। हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि पश्चिम मे सर्पगन्धा आदि कुछ आयुर्वेद की औषधियो के प्रयोग का यह अर्थ नही है कि एलोपैथी का आयुर्वेद के साथ एकीकरण हो रहा है। यह दु ख की बात है कि कुछ ऊँचे वैद्यो ने भी समय रहते इस भयकर सभावना को नही पहचाना और वे अनजाने इस एकीकरण के समर्थक बन बैठे।

मेरी अपनी राय इस विषय में यह है आयुर्वेद पूर्णतया वैज्ञानिक है किन्तु यह गतिहीन विज्ञान नही है। एक समय था जब वैद्य काष्ठ औषधियो पर ही बहुत कुछ निर्भर रहते थे। बाद में नागार्जुन जैसे लोगो ने रस औषधियों का प्रयोग चलाया। इनके प्रयोग को यदि रसायन शास्त्र का आयुर्वेद से एकीकरण कहें तो ठीक न होगा। केवल यही कह सकते है कि वैद्य ने रासायनिक क्रिया का उपयोग किया। इसलिये मेरी धारणा यह है कि आयुर्वेद में सैकडों ऐसी औषधियो का प्रयोग होने पर भी पूर्वकाल में जिनसे वैद्य अनभिज्ञ थे, आयुर्वेद अपना स्वत्व नही खो सकता। चरक और सुश्रुत जैसे आयुर्वेद के प्रतिपादको ने भी तो यही कहा है कि वैद्य को निरन्तर नई औषधियोका अन्वेषण करना चाहिए और इस अन्वेषण के लिये जगली और असभ्य लोगो के व्यवहार का अध्ययन करना भी वाछनीय हो सकता है, केवल शर्त यह है कि वैद्य प्रत्येक औषधि को आयुर्वेद की कसौटी पर कसे। पेनसिलीन या क्लोरोमाइसेटीन का प्रयोग इसलिये ही न किया जाय कि कुछ रोगो में ये उपयुक्त सिद्ध हुई है। आयुर्वेदिक औषधि इन्हें तभी कह सकते है और वैद्य उन्हे बिना सकोच के तभी प्रयोग कर सकता है जब ये त्रिदोष सिद्धान्त की कसौटी पर खरी सिद्ध हो जायें।

आयुर्वेद मे अविश्वास पैदा करने मे सबसे अधिक उसके भक्तो अर्थात् वैद्यो का ही हाथ है जो उसकी गलत व्याख्या किया करते है। वे जिन शब्दो का प्रयोग करते है उनके वास्तविक अर्थ को समझने का कष्ट उठाना नहीं चाहते। वात, पित्त तथा कफ को यदि कोई वैद्य हवा, पीले रंग का रस जो उदरविकार मे कभी-कभी बाहर आ जाता है और बलगम समझे तो वह अपने को ही नीचे गिराता है। उसी प्रकार यदि कोई यह समझता है कि क्षिति, अप, तेज, वायु और आकाश, मिट्टी, पानी, हवा और आसमान के नाम है और फिर लोग उस पर हँसे और आयुर्वेद से घृणा करने

करें तो इसमे आश्चर्य की क्या बात है। तीन धातुए क्या हैं? यह समझने के लिए ही भारतीय दर्शन का थोड़ा-सा ज्ञान आवश्यक है। इसलिये वैद्यो के पाठयक्रम मे दर्शन का अध्ययन भी रखा जाता है। जैसा हम सब जानते हैं, परमात्मा की पराशक्ति के तीन रूप है—ज्ञान, इच्छा और क्रिया। जैसे-जैसे सृष्टिक्रम आगे बढ़ता है पराशक्ति प्रधान या मूल प्रकृति के रूप मे प्रकट होती है जिसके तीन भेद—सत्व, रज और तम व्यक्त होते हैं। ये तीनो गुण सृष्टि के प्रत्येक चेतन-अचेतन पदार्थ मे वर्तमान रहते हैं। मनोविज्ञान के क्षेत्र मे ये काग्निशम, अफैक्शन और कोनेशन (सवेदन, भावना, और क्रिया प्रवृत्ति) के रूप मे प्रकट होते हैं। जडात्मक सृष्टि के प्रत्येक छोटे-बड़े पदार्थ मे ये तीनो गुण पाये जाते हैं। शरीर मे ये तीन शक्तियो के रूप मे रहते हैं जिन्हें वात, पित्त और कफ कहते हैं। ये तीन शक्तियाँ शरीर की प्रत्येक क्रिया का प्रवर्त्तन और नियन्त्रण करती हैं, चाहे उसका सम्बन्ध मासपेशियो से हो, चाहे पाचनादि मे रासायनिक परिवर्तनो से, चाहे मानसिक काल से। जिन्हे हम साधारण बोलचाल मे वात, पित्त और कफ कहते हैं वे शरीर से सम्बद्ध वह तीन स्थूल पदार्थ हैं जिनमे यह धातु अभिव्यक्त हो रहे हैं। कोई धातु एक पदार्थ म अधिक उद्भूत है, कोई दूसरे म। पच-महाभूत का सिद्धान्त पूर्णरूपेण वैज्ञानिक है। इसके समर्थन मे कई लोगो ने अध्ययन किया है। उदाहरण के लिय बड़ी विनम्रता से मै आपका ध्यान इस विषय के उस विवेचन की ओर दिलाता हूँ जिसे मैने अपनी पुस्तक 'चिद्‌विलास' में किया है। जो वैद्य महाभूतो की उस व्याख्या से चिपटा रहना चाहता है जिसे मध्यकाल के लेखको ने किया था जब कि राजनीतिक परतन्त्रता थी और अन्वेषण तथा नये प्रयोगो की सुविधायें न थी, वह अपनी विद्या की कुसेवा करता है। दोष प्राचीन ऋषियो के लेखो का नही परन्तु आधुनिक टीकाकारों का है। मै विज्ञान का विनम्र विद्यार्थी हूँ और अपनी पूरी शक्ति से कह सकता हूँ कि त्रिदोष सिद्धान्त की नींव उतनी ही दृढ़ है जितनी कि किसी चिकित्सा सम्बन्धी सिद्धान्त की हो सकती है। यह उन परिस्थितियो को बतलाता है जिनमें स्वास्थ्य की रक्षा हो सकती है और जिनमें स्वास्थ्य को हानि पहुँच सकती है। इसकी सहायता से वैद्य लक्षणों को जानकर यह समझ सकता है कि शरीर के भीतर की अव्यवस्था क्या है जिससे वे लक्षण प्रकट हुये हैं और शरीर को जिस उपचार की आवश्यकता है यह भी पूरी तरह समझ म आ जाता है। निदान के आधुनिक वैज्ञानिक तरीको को यदि वैद्य अपनाये तो यह बिलकुल उचित ही है। परन्तु कीटाणु और रासायनिक कमियां उसके दृष्टिकोण से बाहरी लक्षणो के अतिरिक्त और कुछ नही हैं। वे केवल इस बात की ओर सकेत करते हैं कि शरीर के भीतर धातुओ मे विषमावस्था और अव्यवस्था उत्पन्न हो गई है। आयुर्वेद के आधुनिक अध्यापन मे यह प्रयत्न होना चाहिये कि वैद्य का आयुर्वेद मे खोया हुआ विश्वास लौट आवे और यह दृढ विश्वास स्थापित हो जाय कि आयुर्वेद पूर्णरूपेण वैज्ञानिक है। आधुनिक विज्ञान न जो तथ्य ढूँढ निकाले हैं उनको न मानने से वैद्य अपने या अपनी विद्या के गौरव को नहीं बढ़ाता। जो सत्य है वह सत्य रहेगा और जो व्यक्ति उससे मुह मोडता है उसे अपन शुतुर्मुर्गी व्यवहार की भारी कीमत चुकानी होगी।

रसायन, शरीर रचना, जीवशास्त्र, मनोविज्ञान, कीटाणु विज्ञान जैसे शास्त्रो का किसी चिकित्सा प्रणाली से विशेष सम्बन्ध नही होता। वैद्य उन्हे साधिकार उसी प्रकार प्रयोग करता है जैसे एलोपैथ। किन्तु उसे अपने मूलाश्रय को न भूलना चाहिए और इन शास्त्रो का उसी दृष्टिकोण से प्रयोग करना चाहिए। शल्य चिकित्सा के बारे म भी यही बात सही है। एक समय था जब वैद्य की चिकित्सा म शल्य को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। सुश्रुत के दिय हुय आदश आज भी आदर की दृष्टि से देखे जाते हैं। कुछ कारणो से जिनका मै यहाँ उल्लेख नही करूँगा शल्य चिकित्सा का प्रयोग बन्द हो गया, यद्यपि वैद्य अब भी शल्य चिकित्सा का अध्ययन करते हैं। यह विभाजन अब न रहना चाहिए और शल्य चिकित्सा आयुर्वेदिक प्रशिक्षण का अनिवार्य अग होना चाहिये। इस विषय में भी मै एक बात की ओर फिर ध्यान दिलाना चाहता हूँ और वह यह है कि शताब्दियो पूर्व लिखी पुस्तको में वर्णित शल्य के उपकरणो को आज यदि कोई प्रयोग करने को कहे तो इससे बढ़कर मूर्खता की कोई बात न होगी। यदि आज का एलोपैथ ५० वर्ष पहिले प्रयोग किये जानेवाले उपकरणो और विधियो को छोडने में स्वतन्त्र है और ऐसा करने से उसकी विद्या की एकता तथा क्रमिकता में कोई ह्रास नहीं होता तो कोई कारण नही कि वैद्य को सहस्रो वर्ष पूर्व निर्मित साधनो और उपकरणो का उपयोग करने के लिये विवश

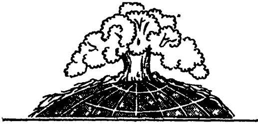
किया जाय। शल्य क्रिया के क्षेत्र मे जो आधुनिकतम अन्वेषण हुए है उनका उपयोग वैद्य को करना चाहिये। वे आयुर्वेद के अग ही माने जायेगे। आयुर्वेद और आधुनिक शल्य चिकित्सा में कोई विरोध नही हो सकता क्योकि अवयवो मे कोई विरोध नही होता। किन्तु मेरी यह निश्चित धारणा है कि जिसे मै फिर दुहराता हूँ और वह यह है कि आधुनिक औषधियो के प्रयोग की शिक्षा आयुर्वेदिक प्रशिक्षण का अग नही होना चाहिए, जब तक कि इन औषधियो की उपयोगिता आयुर्वेदिक सिद्धान्तो से परीक्षित न हो और आयुर्वेद मे उनका समावेश न हो गया हो ठीक उसी प्रकार जैसे सुपचित भोजन अपना स्वतन्त्र अस्तित्व खोकर शरीर के साथ एकरस हो जाता है। जो अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बनाये रखना चाहे और विदेशीयता को विज्ञापित करता रहे वह पराया तत्व है और आयुर्वेदिक प्रणाली से वहिष्कार करने योग्य है।

ये विचार एक अल्पज्ञ के है और उनका उतना ही सम्मान होना चाहिये जो विशेषज्ञो के क्षेत्र म हुए अल्पज्ञ के विचारो का होता है। किन्तु मै आशा करता हूँ कि आप उन पर पूरी तरह चिन्तन करेंगे। मेरी यह धारणा है कि हमारे इन प्रश्नो को महत्व न देने के कारण ही वर्तमान परिस्थिति उत्पन्न हो गई है। उनकी महत्ता इसलिए नही है कि मैंने उन्हे व्यक्त किया है, किन्तु मेरी जानकारी मे ये विचार बहुत-से वैद्यो और आयुर्वेद के प्रेमियो के मन मे उठ कर उन्हे चिन्तित कर रहे है। थोड ही समय मे वैद्यो की वर्तमान पीढी, वे वैद्य जिन्होने आयुर्वेद का ज्ञान ऐसे गुरुओ के चरणो म बैठकर प्राप्त किया है जो शताब्दियो से परम्परा प्राप्त ज्ञान के भण्डार थे, समाप्त हो जायगी और हमारे बीच मे वे लोग रह जायेगे जो नाम के ही वैद्य होगे क्योकि आयुर्वेदिक नुसखो की छोटी-मोटी जानकारी मात्र उन्हे होगी। यदि आयुर्वेद की आधारशिला ही टूट जायेगी तो आयुर्वेद का विनाश हो जायगा। मानवीय ज्ञान मे योग देने के लिये उसके पास कुछ न बचेगा और वह चिकित्साशास्त्र के इतिहास के विद्यार्थियो के सिवाय और किसी के लिये प्रयोजन की वस्तु न रह जावेगा। हम मे से बहुतो का यह विश्वास है कि आयुर्वेद मानव त्राण और सुख मे इससे अधिक योग दे सकता है। यही कारण है कि मै उसके पाठ्यक्रम को सुधारने का अनुरोध कर रहा हूँ। जिन शास्त्रों का मैंने ऊपर वर्णन किया है उनमे जो सहायता प्रदान करने वाले उत्तम तत्व हैं उन्हे हम ग्रहण कर ले किन्तु आयुर्वेद अपने सत्य को न छोडे और अपने मौलिक सिद्धान्तो पर अडिग रहे तभी वह सच्चे अर्थ मे आयुर्वेद कहलायगा।

किस पाठ्यक्रम को हमे अपनाना चाहिये और उसमे क्या-क्या हो यह सुझाव देना मेरे अधिकार की बात नही है। आप मे से जो विशेषज्ञ है व मुझ से कही अधिक अच्छी तरह से यह काम कर सकते है। जिसे हम आधुनिक चिकित्सा कहते है उसके बोझ से हलके होने के पश्चात् भी आयुर्वेद के विद्यार्थी के लिये अध्ययन की पर्याप्त सामग्री रहगी और कालेज मे पाच या अधिक वर्ष जो उसे व्यतीत करने होगे वे पूरी तरह से व्यस्त रहेगे। आपको यह ही निश्चय नही करना होगा कि कौन विषय पाठ्यक्रम मे रखे जाय प्रत्युत यह भी सोचना होगा कि आधुनिक चिकित्सा के अतिरिक्त कौन से विषय निकाल दिये जाय। उदाहरण के लिये पुरानी पुस्तको मे बतायी हुई शरीर रचना प्रणाली का अध्ययन अनावश्यक है। यदि आधुनिक विज्ञान ने असदिग्ध साधनो से यह निश्चय कर दिया है कि शरीर के अग विशष मे १०० नाडियाँ है तो इसमे कौन-सी बुद्धिमत्ता है कि विद्यार्थी का समय ऐसी पुस्तक या उसके किसी ऐसे भाग के अध्ययन मे नष्ट कराया जाय जिसमे यह लिखा है कि नाडियो की सख्या ७० है। यह उदाहरण मात्र है। यदि प्राचीन ज्ञान के इस प्रकार के स्मारको का कोई स्थान है तो वह आयुर्वेद के इतिहास म ही हो सकता है यदि इस विषय का पाठन करना वाछनीय ही हो। आपको यह भी निश्चय करना है कि जो कुछ पढाना है वह किस ढग से पढाया जाय कि उसे ऐसा विद्यार्थी, जो सतर्क बुद्धि है और जिसे आधुनिक विज्ञान की प्रगति मे आस्था है, हृदयगम कर सके। वैद्यो मे से कुछ को आधुनिक विज्ञान को दृष्टि मे रखते हुए अपने शास्त्र के सिद्धान्तो की पुन मीमासा करनी होगी। मैं वैद्यो से यह नही कहता कि वे अपनी बातो को छोड दे, केवल इसलिये कि जो समय की दृष्टि से नवीन है उससे उनकी बातो का समर्थन नही होता। मेरा तो केवल वैद्यो से इतना ही कहना है कि वे अपनी शास्त्रीय स्थिति की पुन समीक्षा करे और यह देखे कि क्या यह सम्भव नही है कि आप अपने सिद्धान्तो को आधुनिक विज्ञान की भाषा मे समझा सके। ज्ञान गत्यात्मक होता है, वह निरन्तर आगे बढता है। न आयुर्वेद में न अन्य किसी विज्ञान में दुराग्रही होने की आवश्यकता है।

एक बहुत महत्वपूर्ण प्रश्न और भी है जिस पर आपको विचार करना है। वह यह है कि आयुर्वेदिक कालेजो मे किस प्रकार का विद्यार्थी प्रवेश पावे। इस विषय में बहुत कुछ मतभेद है। विज्ञान और सस्कृत दोनो का ज्ञान साथ-साथ हो तब तो सब से अच्छा हो। किन्तु अभी इस तरह के पाठ्यक्रम की सुविधा शिक्षा सस्थाओ मे उपलब्ध नही है। मै आशा करता हूँ कि शिक्षा सस्थाए निकट भविष्य मे ऐसा करेगी। जब तक ऐसा न हो तब तक के लिये यह कहा जाता है कि क्योकि जिन विद्यार्थियो ने इन्टर-मिडियेट परीक्षा विज्ञान के साथ पास की है, साधारणत उनको आयुर्वेद के वैज्ञानिक होने मे शका रहती है। इसलिये अच्छा यह हो कि जिन्होने सस्कृत मे मध्यमा परीक्षा पास की हो उन्हे ही लिया जाय। भैषज्य विज्ञान का किसी भाषा विशेष से कोई सरोकार नही होता। ससार की किसी भी भाषा के माध्यम से यह विद्या पढायी जा सकती है। किन्तु कई कारणो से आयुर्वेद के विद्यार्थियो के लिये सस्कृत ज्ञान की अभी कुछ दिनो तक अनिवार्यता माननी होगी। यह आवश्यक नही है कि वे सस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान हो। हा, थोडा ज्ञान कार्य सुगमता के लिये अवश्य होना चाहिये। यदि हम ६ वर्ष का पाठ्यक्रम रखे जिसमे पहिले वर्ष मे प्रारम्भिक अध्ययन हो तो ऐसी व्यवस्था शायद सब तरह से आदर्श व्यवस्था होगी। लेकिन मै इस बात से सहमत हूँ कि पाच वर्ष से अधिक पाठ्यक्रम के लिए विद्यार्थी कठिनाई से मिलेंगे विशेषकर जब कि एम० बी० बी० एस० के लिये ५ वर्ष का पाठ्यक्रम है। इसलिये मेरा सुझाव यह है कि आप उन विद्यार्थियो को ही ले जिनकी वैज्ञानिक योग्यता वही हो जो एलोपैथिक कालेजो मे प्रवेश पाने के लिये स्थिर की गई है, अर्थात् विज्ञान के विषय के साथ इन्टरमीडिएट परीक्षा पास विद्यार्थी ही लिये जाय। इसके साथ सस्कृत का एक पाठ्यक्रम निश्चित कर दे जिसे प्रत्येक विद्यार्थी को अध्ययन करना होगा। इस पाठ्यक्रम मे साधारण सस्कृत, गद्य और पद्य का अर्थ समझना और साधारण सस्कृत मे लिखना होना चाहिये। इसमे तर्क शास्त्र का प्राथमिक ज्ञान भी रखा जाय, कुछ-कुछ तर्क सग्रह के समान, किन्तु नवीन, आधुनिक ढग पर। इसमे सशय नही कि प्रतिदिन दो घण्टे के अध्ययन से बुद्धिमान विद्यार्थी सस्कृत के इतने ज्ञान का तीन या चार महीने में अर्जन कर सकता है। विज्ञान के स्नातक भी एलोपैथिक मैडिकल कालेजो की प्रवेश परीक्षा प्रशिक्षण के हेतु तीन-चार मास का समय व्यय करते है। आयुर्वेदिक कालेजो मे प्रवेश पाने के इच्छुक भी इसी प्रकार के प्रशिक्षण पाने के पश्चात् ही प्रवेश पाने योग्य परीक्षा समझे जाने चाहिए। आप देखे कि मैंने मध्यमा को इसमे कोई स्थान नही दिया है। मैं इसका समर्थक नही हो सकता, जब तक इन्टरमीडिएट परीक्षा वाली विज्ञान की योग्यता उसके साथ-साथ न हो।

मेरे विचार से आयुर्वेद को पुन प्रतिष्ठित करना हमारा कर्तव्य है। इस दिशा मे यदि अविलम्ब प्रयास न किया गया तो यह शास्त्र समाप्त हो जायगा। मै आयुर्वेद का समर्थक इसलिये नही हूँ कि इसमे सस्ती दवाए प्राप्त है। कुछ आयुर्वेदिक औषधियाँ बडी महगी होती है। सस्तापन इसकी सिफारिश नही हो सकती। मै आयुर्वेद के पक्ष मे इसलिये हू कि मै यह मानता हूँ कि यह मानव समाज के लिये उपयोगी है। आप से अधिक और कोई इस स्थिति मे नही है जो इस तथ्य की जाँच कर सके। यदि आप मुझ से सहमत हो तो आपको चाहिये कि भविष्य मे होने वाले वैद्यो के लिये एक उपयुक्त प्रशिक्षण प्रणाली प्रस्तुत कर अपने प्रदेश की सहायता करे। उसके पश्चात् अगला कदम सरकार को उठाना होगा। इसे आपकी सिफारिशे केवल कार्यान्वित ही न करनी होगी किन्तु यह भी स्मरण रखना होगा कि किसी भी विद्या के तब तक अध्येता न मिलेंगे जब तक कि वह अर्थकारी न हो। यदि हमे अच्छे वैद्य चाहिए तो हमे यह भी देखना होगा कि उन्हे समाज मे वह सम्मान प्राप्त हो और वह आर्थिक निश्चिन्तता रहे जो उन लोगो को मिलनी ही चाहिये जिन्होने रोग और मृत्यु से लडकर मानवता की सेवा करने का व्रत लिया है। सच्चा वैद्य जिसने अपने शास्त्र के आचार्यों की शिक्षा हृदयगम की है केवल धन के लिये अपना कार्य नहीं करता। किन्तु समाज को चाहिये कि ऐसे व्यक्तियों के प्रति जो उसका कर्तव्य है उसका पालन करे।



आयुर्वेद-जगत्

बैद्यनाथ कार्यालय में उडूपा समिति

आयुर्वेदीय चिकित्सा प्रणाली के क्षेत्र मे होनेवाले कार्यों का मूल्याकन करने के लिए भारत सरकार ने एक समिति का गठन किया है। इस समिति के अध्यक्ष है हिमाचल प्रदेश के सर्जिकल स्पेशलिस्ट डा० के० एन० उडूपा। गवर्नमेंट आयुर्वेदिक कालेज त्रिवन्द्रम के रिसर्च प्रोफेसर वैद्य के० परमेश्वरम् पिल्लई इस इस समिति के सदस्य है और भारत सरकार के स्वास्थ्य मत्रालय के उप-सचिव श्री आर नरसिहम् इस समिति के सदस्य एव सचिव है। यह समिति सारे भारत की आयुर्वेदीय शिक्षण सस्थाओ, औषधि निर्माण प्रतिष्ठानो, आतुरालयो आदि का निरीक्षण कर यह पता लगाने की चेष्टा कर रही है कि आयुर्वेदीय शिक्षण सस्थाओ को समुन्नत बनाने के लिये केन्द्रीय और राज्य सरकारो को क्या करना चाहिए, आयुर्वेदीय शिक्षण और प्रतिसस्कार की वर्तमान अवस्था क्या है, आयुर्वेदीय औषधिया कितने प्रकार की, किस परिमाण मे और किस स्तर की तैयार होती है और आयुर्वेदीय चिकित्सा की वास्तविक परिस्थिति क्या है। पिछले अगस्त महीने के द्वितीय सप्ताह मे यह समिति कलकत्ता आयी थी। यहाँ इसने विभिन्न आयुर्वेदीय शिक्षा सस्थाओ, आतुरालयो तथा औषधि निर्माण प्रतिष्ठानो का निरीक्षण किया। श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के कार्यालय मे आकर इस समिति ने बैद्यनाथ औषधि-निर्माणशाला का निरीक्षण किया और बैद्यनाथ-प्रतिष्ठान के डायरेक्टर श्री बनवारीलालजी शर्मा से आयुर्वेदोन्नति विषयक विभिन्न प्रश्नो पर विचार-विमर्श किया। श्री बनवारीलालजी शर्मा ने समिति के समक्ष अनेक महत्वपूर्ण सुझाव उपस्थित किए, जिनको डा० उडूपा ने बड़े आग्रह के साथ दर्ज किया और बैद्यनाथ औषधियो की उत्कृष्टता एव शुद्धता के लिए पूर्ण सन्तोष व्यक्त किया।

आयुर्वेदिक वनस्पतियों की खेती

राजस्थान सरकार के आयुर्वेद परामर्श बोर्ड ने राज्य सरकार को इस आशय का सुझाव दिया है कि राजकीय वनो तथा उपवनो मे सुयोग्य वैद्यो की देखरेख मे आयुर्वेदिक वनस्पतियो की खेती करवायी जाय। इस सुझाव की उपादेयता पर प्रकाश डालते हुए आगे बताया गया कि शुद्ध वनस्पतियो एव जडी-बूटियो के उपलब्ध होने पर ही प्रभावशाली औषधियो का निर्माण हो सकता है। बोर्ड ने अपने अन्यान्य सुझावो मे कहा है कि आयुर्वेद विभाग के सचालक को स्वास्थ्य एव चिकित्सा विभाग के सचालक के समकक्ष समझा जाए तथा अधिकार दिए जाँय। सुझाव मे यह भी कहा गया कि सार्वजनिक सम्पर्क कार्यालय स्थापित किए जाय तथा चलचित्रो, विज्ञप्तियो आदि समस्त साधनो का उपयोग करते हुए आयुर्वेद का प्रचार किया जाय।

कलकत्ता विश्वविद्यालय में आयुर्वेद कालेज

सयुक्त आयुर्वेद उत्थान समिति में प्रधान अतिथि-पद से भाषण करते हुए कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति प्रो० निर्मल कुमार सिद्धान्त ने कहा कि आयुर्वेद की शिक्षा के लिए सन् १९५० म कलकत्ता विश्वविद्यालय ने जो सिद्धात ग्रहण किया था उसे शीघ्र ही कार्यान्वित किया जायगा—किन्तु इसके लिए आयुर्वेद-प्रेमियो एव विद्वानो का सहयोग अपेक्षित है।

प्रोफेसर सिद्धान्त ने कहा कि पश्चिम बगाल मे आयुर्वेद का अति प्राचीन काल से महत्त्व रहा है। दुर्भाग्यवश कलकत्ता विश्वविद्यालय के अन्तर्गत आयुर्वेद कालेज की स्थापना नही हो सकी है—किन्तु अब इस कार्य मे विलम्ब न होगा और चोपडा कमेटी की सिफारिशो की शीघ्र ही कार्यान्विति होगी। इस अवसर पर बगाल के कतिपय आयुर्वेदीय विद्वानो के भाषण हुए।

राजस्थान में आयुर्वेद का पृथक् विभाग

राजस्थान के मुख्य मत्री श्री मोहनलाल सुखाडिया ने मारवाड आयुर्वेद प्रचारिणी सभा मे भाषण देते हुए यह रहस्योद्घाटन किया कि राजस्थान विश्वविद्यालय मे आयुर्वेद का पृथक विभाग खोलने के प्रश्न पर राज्य सरकार

विचार कर रही है। मुख्य मत्री ने आग कहा कि इसके जरिए राजस्थान म आयुर्वेद के प्रसार प्रचार तथा विस्तार के काय किए जायेंगे। आयुर्वेद तथा एलोपथी म तुलना करने सम्बन्धी प्रवृत्ति की तीव्र भत्सना करत हुए श्री सुखाडिया ने कहा कि आयुर्वेद के विकास क लिए यह आवश्यक है कि आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली म आधुनिक अनुसधान को अपनाया जाय तथा व्याधियो के निदान एव चिकित्सा म उनका उपयोग किया जाय।

आयुर्वेदिक और यूनानी औषधियो पर नियत्रण

औषधि सलाहकार समिति न सिफारिश की है कि अच्छी आयुर्वेदिक और यूनानी औषधियो को औषधि अधिनियम के अन्तगत नियत्रित किया जाना चाहिए। अखिल भारतीय यूनानी और तिब्बी सघ न इस बार म माग की थी और उस पर विचार करन के बाद भी समिति न उक्त सुझाव दिया। समिति न आग यह भी सुझाव दिया कि पटट औषधियो के निर्माताओ को औषधियाँ थोडी मात्रा म पकिग करनी चाहिए जिससे कि खरीददार उन्ह उसी रूप म खरीद सक और धोख की बिल्कुल गुजायश न रह। समिति न इस बात की भी समीक्षा की कि विभिन्न राज्यो म औषधि तथा चमत्कारी इलाज (आपत्तिजनक विज्ञापन) अधिनियम किस हद तक लाभकारी सिद्ध हुआ और इस बात पर भी विचार विमर्श किया गया कि इस अधिनियम को कडाई से लागू करन के लिए क्या उपाय किय जान चाहिए।

आयुर्वेद स सभी रोगो की चिकित्सा सभव

आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली क एक व्याख्याता श्री अनन्तमहाराज न एक पत्र प्रतिनिधि के भट करन पर बताया कि आयुर्वेद शास्त्र म इतनी क्षमता है कि वह किसी भी व्याधि को ठीक कर द सकता है। उक्त व्याख्याता न आग बताया कि आयुर्वेदिक प्रणाली एक सिद्धान्त पर आधारित है। उक्त सिद्धात क अनुसार प्रकृति न प्रत्यक मानव व्याधि के लिए इलाज की व्यवस्था की है। आपन कहा कि वतमान अवस्था म खान-पान की वस्तुओ म उन आवश्यक तत्त्वों की कमी है जो कि मानव-स्वास्थ्य सरक्षण एव सवद्धन की दृष्टि से परमावश्यक है। श्री अनन्त महाराज ने इस बात पर खेद प्रकट किया कि केन्द्रीय सरकार आयुर्वेदिक प्रणाली म अनुसन्धान के लिए पर्याप्त प्रोत्साहन नही दे रही है।

आयुर्वेदीय पाठ्यक्रम में एलोपैथी का समावेश अनुचित

उत्तर प्रदेश सरकार न राज्य म आयुर्वेद के शिक्षण का अध्ययन करन के लिए जो समिति नियुक्त की थी उसन यह सुझाव दिया है कि भारतीय और पश्चिमी चिकित्सा प्रणालियो के एकीकरण से पूर्वीय और पश्चिमी चिकित्सा प्रणालियो म समन्वय के विकास की दिशा म असफलता हुई है। समिति न अपन अन्तरिम प्रतिवदन म लिखा है कि तथ्य यह है कि समीकृत शिक्षण से पहल ही क्षीण आयुर्वेद के ऊपर पाश्चात्य चिकित्सा प्रणाली का मुलम्मा चढ गया है। इसके परिणामस्वरूप आयुर्वेद पुनरुज्जीवित होन के बदल और पीछ पड गया है।

समिति न कहा है कि एकीकृत शिक्षा के बार म गत एक चौथाई शताब्दी म जो अनुभव प्राप्त हुए ह व बड निराशाजनक ह। प्रतिवदन म कहा गया है कि विज्ञान लकर इटर उत्तीण छात्र आयुर्वेद की अपेक्षा पाश्चात्य चिकित्सा प्रणाली को पढना अधिक पसन्द करत ह और अपने अज्ञान के कारण व आयुर्वेद को अवज्ञानिक और अनुप योगी समझते ह। यहाँ तक कि व अपन आपको वद्य या हकीम कहलान म लज्जा का अनुभव करत ह। इस प्रकार शिक्षा का एकीकृत पद्धति आयुर्वेद क लिए कुठार बन गयी है। यह स्पष्ट है कि यदि घटनाक्रम को परिवर्तित न किया गया तो आयुर्वेद का अस्तित्व ही खतर म पड जायगा।

समिति न यह भी सुझाव दिया है कि राज्य की विभिन्न आयुर्वेदिक सस्थाओ से पढकर निकल छात्रो को आयुर्वेदाचाय की उपाधि दी जाए और इस उपाधि का पाठ्यक्रम ५ वष का रखा जाय। समिति न यह भी सिफारिश की है कि आयुर्वेदाचाय स्नातको का वतन एम० बी० बी० एस० डाक्टरो से किसी भी अवस्था म कम न हो।

आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना जरूरी

लोकसभा के अध्यक्ष श्री अनन्तशयनम् आयगर न तिब्बिया कालज दिल्ली म निखिल भारतीय शास्त्रचर्चा परिषद् के तत्वा वधान म आयोजित शारीर-सज्ञा समिति की बठक म भाषण देते हुए कहा कि भारत की राजधानी दिल्ली म आयुर्वेद की उच्च शिक्षा के लिए भारतीय सस्कृति क अनुरूप एक

आयुर्वेदिक विश्वविद्यालय की अतीव आवश्यकता है। आपने कहा कि आयुर्वेदशास्त्र बहुत ही प्राचीन है, लेकिन आज चरक संहिता एव अन्य ग्रन्थो के हिन्दी म अनुवाद करने की आवश्यकता है। इससे एक लाभ यह होगा कि सस्कृत भाषा से अनभिज्ञ लोग भी आयुर्वेद को समझ सकगे।

वैद्यो की सभा में श्री दुर्गाप्रसाद शर्मा का भाषण

आर्यसमाज मन्दिर गोरखपुर मे गोरखपुर के वैद्य समाज की ओर से श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के डाइरेक्टर प० दुर्गाप्रसाद जी शर्मा आयुर्वेदाचार्य का अभिनन्दन श्री सत्यनारायण शर्मा प्रधान मत्री, गोरखपुर जिला वैद्य सम्मेलन व्यवस्थापक श्री महाबीर औषधालय, गोरखपुर के तत्त्वावधान म किया गया। श्री दुर्गाप्रसाद शर्मा न अपने भाषण म कहा कि गोरखपुर शहर तथा कमिश्नरी म मेरा यह प्रथम आगमन है।

आपने वैद्यो द्वारा गोरखपुर म आयुर्वेद विद्यालय खोलने के निमित्त माग की गयी धनराशि के उत्तर मे कहा कि किसी भी आयुर्वेदिक सस्था म वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन तथा अपनी ओर से मै पूर्ण सहयोग दूंगा।

आपन कहा कि हिन्दू राजाओ के बाद आयुर्वेदिक चिकित्सा पर आघात होते रहे। समयानुसार यूनानी चिकित्सा तथा एलोपैथिक चिकित्सा को प्रोत्साहन तथा राजकीय प्रश्रय मिलता रहा और एलोपैथी की वही परिपाटी अब भी चली आ रही है। पर आयुर्वेद सदैव अपनी सत्यता और विशेषता के कारण हमशा खडा रहा और अपनी शक्ति के भरोसे आगे बढता गया।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद नेताओ ने इस ओर ध्यान दिया और आयुर्वेद फैक टी का निर्माण भी हुआ। केन्द्रीय सरकार के ध्यान देने के साथ-साथ विदेशियो का भी ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ। रूस ने आयुर्वेदिक चिकित्सा के प्रचार के लिए २ करोड डालर खर्च करने का निश्चय किया है और इसके लिए १५ रूसी औषधि विशेषज्ञ भी आ गये हैं, जो देश मे भ्रमण कर इस सम्बन्ध मे जानकारी प्राप्त करेगे।

शीत ज्वर के सम्बन्ध मे एलोपैथी वालो ने पूर्ण प्रयास किया, पर सफलता नहीं मिली। इसमे विशेष सफलता आयुर्वेद को मिली है। इस समय बिहार में पीलिया रोग व्याप्त है। उसके लिए कैम्प योजना चल रही है। हर एक वैद्य वहाँ का सहयोग करने को तैयार है और बिहार सरकार ने भी इसमे काफी सहयोग दिया है। आपने गोरखपुर शहर तथा कमिश्नरी के वैद्यो से अपील की कि ऐसा समय आने पर वे भी हर सहयोग के लिए तैयार रह। आपने कहा कि आयुर्वेद द्वारा जितना ही जनता की सेवा की जा सकेगी उतना ही उसका प्रचार हो सकेगा।

आपने कहा कि यदि वैद्य आपस मे विचार-विमर्श करते रह तो आयुर्वेद और जनता का भला हो सकेगा।

वैद्यराज श्री मोहनलालजी का अभिनन्दन

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के झाँसी केन्द्र के निर्माण विभागाध्यक्ष वैद्यराज पण्डित श्री मोहनलाल जी चतुर्वेदी आयुर्वेदाचार्य का स्थानान्तरण झाँसी से नागपुर केन्द्र के लिए हो गया है। उनकी विदाई के अवसर पर झासी कार्यालय म भव्य सम्मान-समारोह का आयोजन किया गया। तीन दिन पृथक् पृथक् आयोजनो म निर्माण विभाग, औषध-सवेष्ठन विभाग और कार्यालय के कार्य-कर्त्ताओ की ओर से वैद्य मोहनलालजी को सम्मान-पत्र दिय गए और स्वल्पाहार गोष्ठियाँ हुई।

प्रथम दिवस निर्माण विभाग की ओर से झासी कार्यालय के कार्यकर्त्ता विश्राम-कक्ष मे सम्मान-सभा का आयोजन बुन्देलखण्ड वैद्य हकीम परिषद् के प्रधान आयुर्वेदाचार्य प० रामगोपाल जी शास्त्री की अध्यक्षता म हुआ। इस अवसर पर झासी केन्द्र के प्रबन्धक बाबू रामप्रकाश अग्रवाल, श्री बैजनाथ शर्मा श्री गुलझारीलाल मुदगल आदि ने श्री मोहनलाल जी की व्यवहार कुशलता कार्य निपुणता और सहयोग साधुता पर प्रकाश डाला। श्री द्वारिकेश मिश्र ने पद्यबद्ध सम्मान पत्र भट किया। भवन के प्रबन्ध सचालक वैद्यराज श्री रामनारायण जी शर्मा ने वैद्य श्री मोहनलाल जी की सोलह वर्षों की सेवाओ की प्रशसा करते हुए कहा कि वे उन दिनो हमारे सम्पर्क म आये जब कि झाँसी का निर्माण-केन्द्र छोटे से रूप मे आरम्भ किया गया था। मोहनलाल जी की कार्यदक्षता और लगन का सबसे बडा प्रमाण झाँसी निर्माण केन्द्र का आज का विशाल स्वरूप है। आपने कहा कि जिन कुछ विशिष्ट व्यक्तियो के अध्यवसाय से श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन ने आज इतना विस्तृत रूप पाया है, श्री मोहनलाल जी उनमे से एक है और उनके

प्रति मेरे अन्तर्मन में सम्मान का स्थान है। श्री मोहनलालजी की यहाँ से विदाई पर हममें से किसी को वियोग का अनुभव नही करना चाहिए क्योकि वे कही बाहर नही जा रहे। झाँसी निर्माण केन्द्र को उन्होने अपनी लगन पूर्ण सेवाओ से जो विकसित रूप दिया है, उसका अनुभव यह अपेक्षा रखता है कि हम उन्हे इससे भी अधिक उत्तरदायित्व और बडे क्षेत्र का कार्य करने का अवसर दे। नागपुर मे हमने अपना जो नया कारखाना बनाया है, वह साधनो, कार्य और क्षेत्र की दृष्टि से झाँसी से बडा है। वहाँ के कार्य सम्पादन मे हमें मोहनलालजी की योग्यता का लाभ मिलेगा और उनको भी अधिक विस्तृत कार्य मे अपनी प्रतिभा के विकास का अवसर मिलेगा। इस प्रकार श्री मोहनलाल जी की विदाई पर हमे सतोष और शुभकामनाए ही व्यक्त करना चाहिए। यद्यपि यह निश्चित है कि श्री मोहनलाल जी इतने अधिक कुशल, व्यवहारपटु, मिष्टभाषी और कर्मचारियो के प्रति भ्रातृत्वभाव रखने वाले रहे है कि उनको उनको बीच से थोडी ही दूर जाते देखकर प्रत्येक सहयोगी के मन को विछोह का कष्ट पीडा देता है, परन्तु यह विछोह तो मगलकारक है।

अन्त मे वैद्यराज श्रीमोहनलालजी ने भवन के सचालको और सहयोगी कार्यकर्त्ताओ के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट की। आगत सज्जनो को स्वल्पाहार दिया गया।

दूसरे दिन झासी केन्द्र के पैकिंग कक्ष मे भव्य समारोह आयोजित किया गया जिसमे समस्त कार्यकर्त्ताओ के अतिरिक्त स्थानीय प्रमुख वैद्यो एव नागरिको ने भी भाग लिया। पण्डित श्री किशोरीलाल जी शास्त्री, वैद्य श्री चन्द्रभानु जी शास्त्री, वैद्य रामकृष्ण जी शर्मा, वैद्य सोमनिधि जी शास्त्री, विनोदाचार्य वैद्य गगाप्रसाद जी शास्त्री, श्री यासीन खाँ साहब, वैद्य श्री रामगोपाल जी शास्त्री, आदि ने अपने भाषणो में वैद्य मोहनलाल जी के सम्पर्क के अच्छे सस्मरण सुनाये और उनके स्वाभाविक गुणो की भूरि-भूरि प्रशसा की। श्री द्वारिकेश मिश्र ने सम्मान पत्र प्रस्तुत किया और श्री नेमिचन्द्र जैन तथा श्री गुलझारीलाल ने सुन्दर कविता पाठ किया। इस अवसर पर बोलते हुए वैद्यराज पण्डित रामनारायण जी शर्मा ने कहा कि झाँसी केन्द्र के कार्यकर्त्ताओं द्वारा वैद्य मोहनलाल जी के सम्मान मे हो रहे यह आयोजन उनकी सर्वप्रियता के परिचायक है। यह सर्वप्रियता व्यक्ति को सहज ही नही मिल जाया करती। वैद्य मोहनलाल जी ने गत सोलह वर्ष ऐसे उत्तरदायित्वपूर्ण स्थान पर कार्य किया है, जिसका सम्बन्ध व्यवस्था और अनुशासन से रहा है। ऐसे पद पर कार्य करते हुए कोई व्यक्ति अपने उच्चस्थ अधिकारी का कृपाभाजन बने और अधीनस्थ सहकारियो का स्नेह पात्र भी बने यह एक महत्त्वपूर्ण बात है जो मोहनलाल जी के उन गुणो की ओर सकेत करती है, जिनका सब सहयोगियो को अनुकरण करना चाहिए। मैं अपने को इस प्रसग मे बडा भाग्यशाली मानता हूँ कि बैद्यनाथ प्रतिष्ठान के समस्त कार्यकर्त्ता, चाहे छोटे हो, चाहे बडे—एक परिवार की भावना रखकर कार्य कर रहे है और अपने इस प्रयास को उन्नत बना रहे है। हमलोग जो सचालक कहे जाते है—वे तो निमित्त मात्र हैं, वस्तुत बैद्यनाथ प्रतिष्ठान के विकास का मूल श्रेय उसके कार्यकर्त्ताओ को है। मुझे अच्छे लगनशील और काम के प्रति रुचि रखने वाले कार्यकर्त्ता मिले, और विगत चालीस वर्षों मे कभी मुझे नौकर-मालिक की भावना को अनुभव करने का अवसर नही आया। जिन लोगो ने भवन की उल्लेखनीय सेवाये की हैं उनके प्रति मेरे मन मे सदा महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। अच्छे कार्यकर्त्ताओ को तदनुकूल पुरष्कृत और उन्नत करने की अपने भवन की एक परम्परा है, जिसे आप सब देखते रहे है। मेरी कामना है कि हमारा प्रत्येक कार्यकर्त्ता अपने को अपने कार्य से, ऐसा सिद्ध करने मे समर्थ हो जिसको 'भवन' मुक्त रूप से पुरस्कृत, उन्नत और सम्मानित करने मे गौरव का अनुभव कर सके। वैद्य मोहनलाल जी अनेक गुणो के केन्द्र है, वे औषध निर्माण क्रिया के अत्यन्त पटु आचार्य है, आयुर्वेद शास्त्र के अध्ययनशील विद्वान हैं, लेखक है, विचारक है और कवि है। दूसरी ओर वे बहुत कुशल प्रबन्धक और व्यापारपटु व्यक्ति है। इतने गुण एक साथ उनमें न तो आरम्भ से थे और न ही अनायास आ गए है। उन्होने अपने कार्यक्षेत्र की प्रत्येक दिशा से प्रयत्नत लाभ उठाया है। वस्तुत इन सब गुणो के एकत्रीकरण के लिए उन्होने अपने में सुरुचि, लगन, निष्ठा और श्रम के सामञ्जस्य की साधना की है, और उनकी यह साधना ही अभिनन्दनीय है। यह कोई विशेष अवसर नही है जब कि मै श्री मोहनलाल जी के प्रति कुछ विशेष कामनायें प्रकट करूँ। उनके प्रति मेरे मन में सदा एक सी कामना रहती है कि वे उन्नत हो, सुखी हो, यशस्वी हो और यह कामना बैद्यनाथ प्रतिष्ठान

के समस्त कार्यकर्त्ताओ के प्रति मेरे अन्तर मे अक्षुण्ण रूप से विद्यमान है।

वैद्य श्री मोहनलाल जी ने अपने ललित सस्कृत पद्यो द्वारा अभिनन्दन का भावभीना उत्तर दिया और अपनी कृतज्ञता प्रकट की। आपने कहा कि ऐसा प्रतीत होता है कि मेरी बहुत अधिक प्रशसा कर दी गई है। सहयोगियो ने जो कुछ कहा उसका उन्हे अधिकार है। विद्वान वैद्यो ने जो भाव मेरे प्रति व्यक्त किये वह उनकी स्वाभाविक उदारता है और श्रद्धेय वैद्य रामनारायण जी ने मेरे प्रति जो कुछ कहा वह उनका वात्सल्य और स्नेह है जो सौभाग्यवश मुझे सदा एक सा मिलता रहा। मैने अपना काम एक सिपाही की भाति किया है। मै नही कह सकता कि मेरा काम किसी भी प्रशसा का पात्र है। यदि उसमे मुझसे कुछ अच्छा बन गया है तो यह एक मौलिक तथ्य है कि उसका श्रेय मुझको नही है। मेरी ऐसी मान्यता है कि काम की अच्छाई-बुराई, बहुत अशो मे काम करने वाले पर नही, प्रत्युत काम कराने वाले के चातुर्य पर निर्भर करती है। मेरी सेवाओ मे यदि कोई चमत्कार है तो उसका श्रेय मेरे उपयोगकर्त्ता को है। अन्त मे आपने सहयोगियो के प्रति हार्दिक आभार प्रकट किया। स्वल्पाहार के बाद कार्यक्रम पूर्ण हुआ।

तीसरे दिन वैद्य श्री रामनारायण जी के निवासस्थान पर विद्वान वैद्यो की गोष्ठी मे श्री मोहनलाल जी को अभिनन्दन पत्र भेट किया गया और आगत सज्जनो को भोज दिया गया।

हिमाचल आयुर्वेद सम्मेलन

हिमाचल आयुर्वेद सम्मेलन के पचम वार्षिक अधिवेशन का समारोह आर्यसमाज मन्दिर शिमला मे दिनाक ५ व ६ जुलाई १९५८ को सम्पन्न हुआ। प्रथम दिन लोक सभा के माननीय अध्यक्ष श्री अनन्तशयनम आयगर ने अधिवेशन का उद्घाटन किया। इनके अतिरिक्त सुदूरपूर्व से आये हुए माननीय अतिथियो मे श्री जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल इलाहाबाद (अधिवेशन सभापति) श्री एस० एन० बोस आचार्य डी० ए० वी० आयुर्वैदिक कालेज जालन्धर, श्री लक्ष्मीनारायण मिश्र आचार्य आयुर्वैदिक कालेज मेरठ, श्री ठाकुरदत्त शर्मा अमृतधारा देहरादून, श्री धर्मस्वरूप रतूरी देहरादून, स्वामी श्री सन्तोषानन्द, पजाब कण्डाघाट वैद्यमडल के सदस्य तथा हिमाचल के चम्बा, मण्डी, सिरमौर, महासु और शिमला के स्थानीय वैद्यगण अधिवेशन मे भारी सख्या मे उपस्थित थे।

अधिवेशन का प्रारम्भ राष्ट्रीय गीत से हुआ। तत्पश्चात् सम्मेलन मन्त्री श्री भीमदत्त ने लोकसभा के अध्यक्ष महोदय को अभिनन्दन-पत्र भेंट किया। श्री पद्मदेव स्वागताध्यक्ष एम० पी० ने उपस्थित प्रतिनिधियो का स्वागत करते हुए कहा कि हम यहाँ पर एक महान् उद्देश्य से इकट्ठे हुए है। हमारा उद्देश्य ससार मे जन-स्वास्थ्य की उन्नति करना है। देश की स्वतन्त्रता के पश्चात भारत की सस्कृति तथा कलाओ का विकास अवश्यम्भावी था। उनमे से प्राचीन आर्ष आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति का विकास जनहित के हेतु आवश्यक है, परन्तु जो राजकीय प्रोत्साहन इस पद्धति को मिलना चाहिये था, वह प्राप्त नही हो रहा है। पाश्चात्य चिकित्सा की सफलता का कारण यह नही है कि उसमे आयुर्वेद से अधिक गूढ साहित्य है अपितु राजकीय प्रोत्साहन ही उसकी सफलता का मूल कारण है।

श्री अनन्तशयनम आयगर अध्यक्ष लोकसभा ने अपने प्रारम्भिक उद्घाटन भाषण मे कहा कि रामायण काल मे जब श्री हनुमानजी मूर्च्छित लक्ष्मणजी के लिये सजीवनी बूटी लाये थे तो वह बूटी इसी उत्तराखण्ड से गई थी। अब भी यह प्रदेश दिव्य औषधियो का भारी कोष है। उनके अन्वेषण तथा प्रयोग की आवश्यकता है। जो भी औषध हमारे सामने अच्छे अच्छे पैकटो मे आती है वह सब वनस्पतियो एव खनिज द्रव्यो से ही बनती है। उन्होने अन्वेषण की ओर विशेष बल दिया और कहा कि जामनगर जैसी अन्वेषण शालाओ की स्थापना कई प्रान्तो मे होनी चाहिये। इतने बडे देश के लिये एक ही प्रयोगशाला अपर्याप्त है। उन्होने चिकित्सा के पाठ्यक्रम की चर्चा की और कहा कि प्रत्येक चिकित्सक को, चाहे वह डाक्टर हो या वैद्य, दोनो पद्धतियो का ज्ञान होना चाहिये। मेरे मत से पाँचवे वर्ष मे डाक्टरो का आयुर्वेद और वैद्यो को एलोपैथी सीखना चाहिये। ज्ञान कोई भी सीमित नही होना चाहिये, उसका उत्तरोत्तर विकास तथा उन्नति होनी चाहिये। मै यह मानता हूँ कि आयुर्वेद के विकास के लिये जो सहायता सरकार से मिल रही है वह बहुत कम है तथा यह भी परमावश्यक है कि केन्द्र मे एक आयुर्वेद परिषद् बननी चाहिये जिससे कि सरकार को समुचित परामर्श प्राप्त हो। मै यह भी मानता हूँ कि आयुर्वेद विभाग

स्वतन्त्र आयुर्वेद के विद्वानो की ही अध्यक्षता मे सचालित होना चाहिये। उन्होने कहा चरक जैसे प्राचीन ग्रन्थो में हजारो वर्ष पूर्व की अनुभूत और प्रशस्त औषधियो का पूर्ण उल्लेख मिलता है जिसको आधुनिक नवीन चिकित्सक अब तय कर पाये है। अन्त मे उन्होने कहा कि मै देश में आयुर्वेद की उन्नति व प्रगति देखना चाहता हूँ। इसके लिये जो भी आवश्यक सहयोग मुझसे अपेक्षित है पूर्णतया आप लोगो के सर्वदा साथ है। आप लोग मिलकर गम्भीरता से विचार के पश्चात् प्रस्ताव द्वारा सरकार से मॉग करे। मै इसका यथासम्भव लोकसभा म समर्थन कराऊँगा।

सभापति श्री जगन्नाथ प्रसादजी शुक्ल ने अपने अध्यक्षीय भाषण मे कहा कि आयुर्वेद एक बडा गूढ विज्ञान है। इसके आठ अग है जो सोलह उपागो मे विभक्त है। इसके अन्तर्गत ससार का समस्त चिकित्सा-विज्ञान निहित है। कोई भी जो आधुनिक नवीन चिकित्सा प्रणाली प्रचलित है वह षोडश उपागो से पृथक् नही है। उसको ठीक तरह समझना, क्रियान्वित करना हमारा कर्तव्य है। अपने ज्ञान की न्यूनता से हम अपने शास्त्रो को अधूरा समझते है।

इस बैठक के पश्चात् श्री लोकसभा के अध्यक्ष महोदय के सम्मान में चाय-पार्टी दी गई,जिस में समस्त प्रतिनिधि उपस्थित थे।

रात्रि को भेषज निर्माण सम्मेलन श्री एस० एन० बोस आचार्य डी० ए० वी० कालेज जालन्धर की अध्यक्षता मे आरम्भ हुआ। आचार्य जी ने अपने भाषण मे औषधि ो के निर्माण का उल्लेख करते हुए कहा कि हमारा चिकित्सा ससार म औषध ही हथियार है। इसलिये उसका विशुद्ध तथा शास्त्रोक्त निर्माण ही चिकित्सा को सफल बना सकता है। उन्होंने वनस्पतियो की चर्चा करते हुए कहा कि वह पूर्ण-रसवीर्य सम्पन्न होनी चाहिये।

आयुर्वेद महाविद्यालय में प्रधान मंत्री श्री नेहरू

गत १ अगस्त को प्रधान मत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने गुरुकुल के आयुर्वेद विभाग का निरीक्षण किया। गुरुकुल कागडी के नवनिर्मित विज्ञान भवन का उद्घाटन करने मे निमित्त प्रधान मत्री दिल्ली से पधारे थे। साढे दस बजे से दो बजे तक वे गुरुकुल मे छात्रो तथा उपाध्यायो और अधिकारियो के साथ रहे। आयुर्वेद जगत की दृष्टि से प्रधान मत्री की यह गुरुकुल यात्रा बहुत महत्त्व की है। प्राचीन भारतीय पद्धति से यज्ञ के धूपित सुगन्धित वातावरण मे वेद मन्त्रो की पवित्र ध्वनि म श्री नेहरू ने विज्ञान भवन का उद्घाटन किया। तत्पश्चात् वे आयुर्वेद महाविद्यालय का निरीक्षण करने कार द्वारा गये। आयुर्वेद महाविद्यालय के आचार्य ने उनका प्रवेशद्वार पर स्वागत किया। आयुर्वेद महाविद्यालय की शानदार इमारत के ऊपरी भाग मे स्थित सग्रहालय को उन्होने गौर से देखा। इस सग्रहालय मे अनेक प्रकार के चार्ट मौडल, जीवित रोगियो के शल्यकर्म द्वारा निकले हुए विकृत अग, भारत मे पाये जाने वाले साप तथा अन्य जीव-जन्तु, आदि देखने के बाद वे जब औद्भिदी सग्रहालय मे जाने लगे तो प्रवेश द्वार पर सर्पगन्धा की पुष्पित अभिनव शिखा उन्ह भेट की गई। सग्रहालय मे रखी



गुरुकुल कागडी आयुर्वेद महाविद्यालय की प्रयोगशाला का प्रधान मत्री श्री नेहरू निरीक्षण कर रहे हैं।

भारतीय जड़ी बूटियो के सम्बन्ध मे प्रधान मन्त्री ने दिलचस्पी ली। इस सग्रहालय मे आयुर्वेद की जड़ी बूटियो के प्रामाणिक फोटो, हर्बेरियम स्पेसिमेन (पादप प्रादर्श, जो मोटे कार्ड बोर्ड पर विधिवत् सुरक्षित किये गये है), जडे, छाल, बीज, फल आदि भागो के नमूने इत्यादि बहुत बडी सख्या में रखे हुए है। किसी भी आयुर्वेदिक सस्था के लिये यह सग्रहालय प्रेरणा का स्रोत बन सकता है।

आयुर्वेद महाविद्यालय की आधुनिकतम उपकरणो से सुसज्जित प्रयोगशालाओ का निरीक्षण भी प्रधान मन्त्री ने किया। इसके बाद वे कार द्वारा गुरुकुल कागडी की फार्मेसी देखने के लिये गये। आधुनिक यन्त्रो-उपकरणो द्वारा भारत के प्राचीन चिकित्सा शास्त्र म उल्लिखित दवाओ के निर्माण की पद्धति श्री नेहरू को बताई गई।

गुरुकुल कागडी के आयुर्वेद महाविद्यालय के विभिन्न भागो का अवलोकन करके प्रधान मन्त्री को सन्तोष हुआ। अपने अत्यन्त व्यस्त जीवन म से कुछ समय निकाल कर प्रधान मन्त्री ने यहा जो सभी गतिविधियो का निरीक्षण किया, उसके लिये सभी कुलवासी उनके कृतज्ञ है।

श्री वैद्यनाथ धर्मार्थ औषधालय, पटना

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा सचालित वैद्यनाथ धर्मार्थ औषधालय पटना मे गत जुलाई '५८ मे कुल ८५४ रोगियो की मुफ्त चिकित्सा की गई। इसमे ४३९ नये और ४१५ पुराने रोगी थे। इसमे पुरुष रोगियो की सख्या २३९, स्त्री रोगियो की सख्या ८४, और शिशु रोगियो की सख्या ११६ थी। इस मास की दैनिक उपस्थिति का औषत २७ ५४ रहा। नये रोगियो की सख्या रोगानुसार निम्न लिखे मुताबिक है —

ज्वर ३३, विषमज्वर २, मन्थरज्वर ६, उत्फुल्लिका १, उदर ८०, आमातिसार ३६, कृमि १०, कास २८, श्वास ८, प्रमेह ७, अर्श १, वातव्याधि २१, आमवात ३, वातरक्त २, रजोदोष ७, व्रण ३२, शिरोरोग ४, नेत्र रोग २१, कर्णरोग २२, नासारोग २२, मुखरोग २३, पार्श्वशूल ३, क्षुद्र कुष्ठ २१, वृद्धिरोग ३, श्लीपद ४, पाण्डु ५, मूत्रकृच्छ्र ४, गुल्म २, हिक्का १, रक्तपित्त २, कालाज्वर (काला आजार) १, विषूचिका १, अम्लपित्त ४, शीतपित्त १, परिणाम शूल १।

वैद्यनाथ धर्मार्थ औषधालय पटना मे गत जून मास मे कुल ६४२ रोगियो की मुफ्त चिकित्सा की गई। इनमें ३३० नये और ३१२ पुराने रोगी थे। इनमें पुरुष रोगियो की सख्या १६७, स्त्री रोगियो की सख्या ७७, और शिशु रोगियो की सख्या ३३० थी। इस मास की दैनिक उपस्थिति का औसत २ १४ रहा। नये रोगियो की सख्या रोगानुसार निम्न लिखे मुताबिक है —

ज्वर ४७, विषमज्वर १, मन्थरज्वर १, अपुवात ६, उदर ४४, आमातिसार १०, कृमि ६, प्रमेह १, अर्श २, वातव्याधि १२, आमवात ३, रजोदोष १२, रक्तश्वेतप्रदर ६, क्षुद्र कुष्ठ १०, व्रण ३०, कास २६, श्वास ८, शिरोरोग ५, नेत्र ४, नासा ८, कर्ण १५, मुख १२, उत्फुल्लिका ५, शोथ ४, पाण्डु ३, श्लीपद ४, रक्तपित्त ४, मूत्रकृच्छ्र ५, प्रसूताज्वर १, व्रणरोग २, वृद्धि ५, गर्भस्राव १, गर्भवतीज्वर १, उर शूल १, प्लुष्ट १, विसर्प ५, उन्माद १, अश्मरी १, विविध १६।

वैद्यनाथ धर्मार्थ औषधालय पटना मे गत मई मास में कुल ८८५ रोगियो की मुफ्त चिकित्सा की गई। इनमें ४६१ नये और ४२४ पुराने रोगी थे। इनमे पुरुष रोगियो की सख्या २६८, स्त्री रोगियो की सख्या ७८, और शिशु रोगियो की सख्या ११५ थी। इस मास की दैनिक उपस्थिति का औषत २८ ७ रहा। नये रोगियो की सख्या रोगानुसार निम्न लिखे मुताबिक है —

ज्वर ३९, विषमज्वर १, मन्थरज्वर ३, उत्फुल्लिका ३, प्रमापात ६, उदररोग ७४, आमातिसार १६, कृमि १२, प्रमेह ५, कास ३३, श्वास ८, अर्श ३, वातव्याधि २८, आमवात ४, श्लीपद ४, रजोदोष ६, कुष्ठ १, क्षुद्रकुष्ठ २६, व्रण २६, शिरोरोग ८, नेत्ररोग ३४, कर्ण २०, मुखरोग २३, प्रतिश्याय २९, चेचक १, शोथ २, पार्श्वशूल ५, वृद्धिरोग २, गण्डमाला २, पाण्डु १, अम्लपित्त ४, विसर्प १, रक्तपित्त १, गर्भवतीज्वर २, गर्भस्राव १, विषूचिका ३, मूत्रकृच्छ्र २, प्लुष्ट २, योनिक्षत्र १, ग्रन्थिरोग १, विविध १५।

वैद्यनाथ धर्मार्थ औषधालय, झांसी

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० झांसी द्वारा सचालित श्री धर्मार्थ औषधालय तथा स्वास्थ्य रक्षा केन्द्र मुहल्ला खत्रियाना में जुलाई १८५८ मे १७९८ रोगी की मुफ्त चिकित्सा की गई जिसमे नये आए हुए रोगी ५२४ थे।

आयुर्वेदीय औषधों के निर्माण, गुणधर्म, उपयोग आदि पर

विशद विवेचनपूर्ण महान ग्रन्थ

आयुर्वेद सारसंग्रह

(तृतीय संस्करण)

सम्पूर्ण आयुर्वेद-शास्त्र का मथन कर यह महान् ग्रन्थ—आयुर्वेद सारसंग्रह—अनेक वर्षों के घोर परिश्रम से तैयार किया गया है। इसमे रोगो के अवस्थानुसार औषधो का गुण-धर्म और प्रयोग तथा औषध-निर्माण, औषध-अनुपान, पथ्यापथ्य आदि का पूरा विवरण सरल भाषा मे समझा कर लिखा गया है। आयुर्वेद के महर्षियो द्वारा अतिप्राचीन काल से जिन प्रसिद्ध योगो का प्रयोग होता आया है और जिन प्रयोगो का चिकित्सको द्वारा सफल परीक्षण असख्य बार कर लिया जा चुका है, ऐसे ही सफल प्रयोगो का इस ग्रन्थ मे सग्रह किया गया है। इस ग्रन्थ मे परिभाषा प्रकरण के अन्तर्गत औषध-निर्माण परिभाषा, मान-परिभाषा, साकेतिक परिभाषा, रासायनिक परिभाषा, यन्त्र-पुट-खरल परिभाषा, औषध-प्रयोग विधान, पथ्यापथ्य, पारद-गधक-हिगुल परिभाषा, शोधन-मारण प्रकरण के अन्तर्गत धातुओ का शोधन, भस्म-निर्माण और उनका गुण-धर्म विवेचन, कूपीपक्व रसायन, रस-रसायन, गुटिका-बटी, पर्पटी, लौह मण्डूर, गुग्गुलु, अवलेह-पाक, चूर्ण, आसवारिष्ट, तैल, कषाय (क्वाथ), मल्हम आदि प्रकरणो मे विविध प्रकार की औषधियो की निर्माण-विधि, प्रयोग, गुण-धर्म, पथ्यापथ्य आदि सभी वैद्योपयोगी बातो का सविस्तार वर्णन किया गया है। इसके साथ ही रस-रसायन, अर्क आदि बनाने के यन्त्रो के चित्र भी दिए गये है, जिनसे औषधि-निर्माताओ को काफी सुविधा होगी। राष्ट्रभाषा हिन्दी मे इस ढग की यह एक ही पुस्तक है। इस पुस्तक की लोकप्रियता का सब से बडा प्रमाण यह है कि कुछ ही वर्षों में इसके तीन सस्करण निकल चुके है। सर्वसाधारण तथा चिकित्सकमात्र के लिए सर्वाधिक उपयोगी ११०० पृष्ठ के इस विशाल ग्रन्थ का मूल्य मात्र—७०० रु०

प्रकाशक

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

कलकत्ता · पटना झाँसी नागपुर


वैद्यनाथ च्यवनप्राश कफ-खाँसी-नाशक एक औषधि-मात्र नहीं है। यह परम पुष्टिकारक रसायन भी है। इसका सेवन बालक, वृद्ध और युवा–सभी उम्र के लोग–सब समय कर अपने शरीर को स्वस्थ बनाये रखने में सक्षम होते है। आप भी इसका सेवन करें और जीवन के आनन्द से सदैव भरे-पूरे रहें।
सब समय, सबके लिये सेवनीय
वैद्यनाथ
च्यवनप्राश
अष्टवर्गयुक्त
वैद्यनाथ
देशी दवाओ का सब से बड़ा और विश्वासी कारखाना
कलकत्ता पटना झाँसी नागपुर

सचित्र

वर्ष १०　　कलकत्ता, जनवरी, १९५८　　अंक ७

आयुर्वेद में मन का स्थान

आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति में मन और शरीर का यह अन्योन्याश्रय सबध बहुत पहले से स्वीकार किया जा चुका है और आधुनिक औषधि विज्ञान म भी मन और मस्तिष्क को न केवल स्वास्थ्य के लिए एक आवश्यक चीज माना है वरन उसे एक चमत्कारपूर्ण रोगोपचारक भी स्वीकार किया है। चिकित्सा विज्ञान वस्तुत अन्य प्रकार के ज्ञान विज्ञान से सवथा पृथक कोई विषय नहीं बल्कि भौतिक-शास्त्र रसायन-शास्त्र और मनोविज्ञान आदि से सबद्ध ज्ञान का ही एक अग है जिसे मानव न कालक्रम से अर्जित किया है। आयुर्वेद और आधुनिक चिकित्सा का मुख्य पार्थक्य यह है कि आधुनिक चिकित्सा म जहा शरीर के रासायनिक परिवतनो और तज्जन्य दोषो को दूर करन की चेष्टा की जाती है वहां आयुर्वेद में उन मौलिक दशाओ के ही उन्मूलन का प्रयत्न किया जाता है जिनके कारण शरीर में इस प्रकार के रासायनिक परिवतन हुआ करते ह। ऐसी दशा में शारीरिक दोषो और दशाओं का अध्ययन करन के साथ ही आवश्यकता इस बात की है कि शरीर की उन विविध प्रक्रियाओं का भी भलीभाति अध्ययन किया जाय जिनका सतुलन बिगड जाने से मनुष्य का शरीर रुग्ण हो जाता है।

डा० सम्पूर्णानन्द
मुख्य मत्री उत्तर प्रदेश



प्रकाशक
वैद्यनाथ



मन्दाग्नि
दुर्बलता
शारीरिक क्षीणता
इन्हें रोकिये
ये शरीर के बडे दुश्मन हैं। आप की थोड़ी-सी लापरवाही का नतीजा आप के लिए बहुत बुरा हो सकता है।
इन दुश्मनों से बचे रहने और शरीर को बलिष्ठ बनाये रखने के लिये कम से कम जाडे भर इस महारसायन का सेवन करें और पूरे वर्ष तक बलवीर्य से परिपूर्ण रहें।
SHREE BAIDYANATH AYURVED BHAWAN LTD. CALCUTTA
बैद्यनाथ
बैद्यनाथ
च्यवनप्राश
अष्टवर्गयुक्त

'सचित्र आयुर्वेद' के पाठकों को सूचना

भारत की निजस्व चिकित्सा-पद्धति—आयुर्वेद के विकास और प्रनिसस्कार के साथ-साथ राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति के गौरवपूण आसन पर आयुर्वेद को पुन प्रतिष्ठित कराने की दिशा मे "सचित्र आयुर्वेद" पिछले १० वर्षो से पूरी सचाई, ईमानदारी तथा लगन के साथ सलग्न है। आयुर्वेद-जगत के इस सर्वाधिक प्रचारित और सर्वजन प्रशसित वैज्ञानिक पत्रिका —सचित्र आयुर्वेद की सर्वश्रेष्ठता को सभी लोगो ने मुक्तकण्ठ से स्वीकार किया है और इसमे प्रकाशित लेखादि की आयुर्वेद-जगत एव सरकारी क्षेत्रो म समान रूप से कद्र हो रही है।

'सचित्र आयुर्वेद' का एकमात्र लक्ष्य आयुर्वेद-पद्धति को राष्ट्रीय चिकित्सा के रूप मे मान्य कराना एव वैद्य समुदाय के सामाजिक और आर्थिक स्तर को समुन्नत बनाना है। इस लक्ष्य की पूर्ति की दिशा म 'सचित्र आयुर्वेद' शुरू से ही प्रयन्न करता आ रहा है और अपने कर्तव्य-पथ पर अविचलित रहने के लिए कृतसकल्प है। अब, इस तथ्य को सर्वत्र स्वीकार किया जा चुका है कि आयुर्वेद और यूनानी चिकित्सा-पद्धति म विशेष पार्थक्य नही है और यूनानी पद्धति का मूल आयुर्वेद ही है। सरकार ने भी आयुर्वेद-यूनानी को एक ही भारतीय चिकित्सा-पद्धति स्वीकार की है। अतएव, इन दोनो पद्धतियो के सम्बन्ध मे विशद विवेचन होना वाछनीय है।

आयुर्वेद-यूनानी पद्धतियो के पारस्परिक महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध को ध्यान मे रखकर **'सचित्र आयुर्वेद' का एक विशेषांक आगामी जून '५८ में** प्रकाशित करने का विचार किया जा रहा है, जिसमे उभय चिकित्सा-पद्धतियो के समन्वयात्मक स्वरूप के विषय पर देश के प्रमुख विद्वानो के विवेचनात्मक निबन्ध प्रकाशित किए जायँगे। इस विशेषाक के सम्बन्ध म विस्तृत सूचना आगामी अको मे प्रकाशित की जायगी। 'सचित्र आयुर्वेद' के सभी ग्राहको को यह विशेषाक मुफ्त दिया जायगा। अतएव, जिन ग्राहको के चन्दे का रुपया अबतक कार्यलय मे नही आया है, वे अविलम्ब रुपया भेजकर ग्राहक बन जायें तथा इस महत्त्वपूर्ण विशेषाक की प्राप्ति को सुनिश्चित बना ले।

ग्राहकों को नया कैलेण्डर मुफ्त

'सचित्र आयुर्वेद' के ग्राहको को नये वर्ष का सुन्दर बहुरगा कैलेण्डर भी मुफ्त दिया जायगा। ऐसी आशा है कि जनवरी '५८ के अन्त तक ग्राहको के पास नया कैलेण्डर अवश्य पहुँच जायगा।

— सम्पादक

सम्पादक—कामेश्वर शर्मा 'कमल'

विषय-सूची

वार्षिक मूल्य ५) **एक प्रति ।।) (५० नये पैसे)**

आयुर्वेद-जगत् में सर्वजन-समादृत और सर्वाधिक बिक्री होनेवाला आयुर्वेद-विज्ञान का प्रमुख-मासिक पत्र

सचित्र आयुर्वेद

आयुःकामयमानेन धर्मार्थसुखसाधनम् । आयुर्वेदोपदेशेषु विधेयः परमादरः ॥

वर्ष १० | कलकत्ता, जनवरी, १६५८ | अंक ७

'सचित्र आयुर्वेद' के विज्ञ पाठकों से

आपको विदित ही है कि आपका सचित्र आयुर्वेद बहुत दिनो से इस मांग को आयुर्वेद जगत म एक आन्दोलन के रूप मे उठाता आ रहा है कि राजधानी दिल्ल। मे केवल वद्य समाज के प्रयत्न पर आधारित एक सवा पूण आदश 'आयर्वेद महाविद्यालय' की स्थापना होनी चाहिए। १६५२ मे आयुर्वेद विश्वविद्यालय याजना के अ कस्मिक अन्त पर दु खी होकर सचित्र आयुर्वेद न तथ्यो पर प्रकाश डालन के लिए एक-दो लख प्रकाशित किय थ जिनके कारण उसको एक एसे विनाशक मुकदमे मे उलझ जाना पडा जा उसके लिए जावन मरण का प्रश्न बन गया। वस्तुत उस समग्र विपत्ति का कारण ही विद्यालय स्थापित न होना था। इस प्रकार एम महाविद्यालय के लिए आन्दालन करना "सचित्र आयुर्वेद के लिए स्वाभाविक था। बड हष की बात है कि हमारे प्रयास पर आयुर्वेद जगत का ध्यान गया और स्थायी समिति एव विद्यापीठ प्रबन्धक समिति के विगत अधिवशन मे दिल्ली मे शीघ्र ही **अष्टाग आयुर्वेद महाविद्यालय स्थापित करने का निश्चय कर लिया गया है।** वैद्य समाज मे इस काय के लिए उत्साहपूण सहयोग का वातावरण है। सब ओर से महाविद्यालय के निमित्त आर्थिक सहायता प्राप्त होन की स्थिति है। **'सचित्र आयुर्वेद' के सचालको ने महाविद्यालय के लिए पाच सौ रुपया मासिक देने का सकल्प किया है।**

अपने कृपालु पाठको के सहारे ही हमन इस प्रश्न को आन्दोलन के रूप मे आगे बढाया था। आयुर्वेदोत्थान के इस पुण्य यज्ञ मे हम आशा करते है कि हमारे कृपालु पाठकगण मुक्तहस्त होकर सहायता प्रदान करेग। महाविद्यालय के हेतु द्रव्य सग्रह के लिए विश्वस्त समिति बन जाने पर हम 'सचित्र आयुर्वेद महाविद्यालय कोष की स्थापना करेंगे और उसमें दान देने के लिए पाठको तथा आयुर्वेद-हितैषियो से प्रार्थना करेंगे।

—सम्पादक।

आयुर्वेद महासम्मेलन-सदस्यों की सेवा में

कृतज्ञता-ज्ञापन

सम्मान्य महोदय,

सादर नमस्कार !

आयुर्वेद महासम्मेलन-स्थायी समिति एव विद्यापीठ केन्द्रीय प्रबन्धक समिति के २७-२८ नवम्बर को नियोजित दिल्ली अधिवेशनो के अवसर पर गत १७-११-५७ को अपना एक नम्र-निवेदन मैंने आपकी सेवा मे प्रस्तुत किया था और यह आग्रह किया था कि उक्त अधिवेशनो मे अधिकाधिक सख्या मे एकत्र होकर आप रचनात्मक कार्यों की यथार्थ योजनाओ को कार्य रूप मे परिणत करने मे भरपूर बल प्रदान करे।

मुझे बहुत परिताप है कि आप सबसे अधिवेशन मे आने का उद्बोधन करके, मैं स्वय उस महत्त्वपूर्ण अवसर पर दिल्ली न पहुँच सका। एक अति दु खद घटना ने मुझे अस्तव्यस्त कर दिया। उन्ही दिनो मे मेरे अग्रज पण्डित रामकरण जी जोशी के युवक पौत्र का देहावसान हो जाने के कारण मैं विवश हो गया था।

मेरे उस साधारण से निवेदन पर महासम्मेलन के माननीय सदस्यो ने, निश्चय ही, आशा से अधिक कृपा दिखाई। मेरे निवेदन के उत्तर मे सैकडो पत्र मुझको मिले है, जिनमे सदस्यो की सुरुचि के साथ ही, उत्साह की वह अभिनन्दनीय भावना निहित है, जिसके आधार पर कहा जा सकता है कि आज आयुर्वेद-क्षेत्र मे रचनात्मक कार्य करने के इच्छा-सकल्पो की निष्ठा महासम्मेलन-सदस्यो मे प्रचुर मात्रा मे विद्यमान है। बडी सख्या मे सदस्यो ने दिल्ली मे भाग लेकर स्थायी समिति के गत अधिवेशन को ऐतिहासिक महत्त्व प्रदान किया। जो माननीय सदस्य स्वय नही पधार सके, उन्होने मुख्य विषयो पर अपनी बहुमूल्य सम्मतिया भेजी। बहुत सदस्यो ने अपनी सम्मति की प्रतियाँ कृपा करके मेरे पास भी भेजी है। कुछ महानुभावो के ऐसे भी पत्र मेरे पास आये है—जिनमे लिखा है कि महासम्मेलन की वर्तमान अवस्था से वे अत्यन्त दु खी एव निराश है, इस कारण उसमे भाग नही लेना चाहते। कुछ ठोस कार्य होने लगे, तो वे अपना सक्रिय सहयोग देंगे, ऐसा उन पत्रो मे आश्वासन भी है। जो माननीय सदस्यगण मेरे निवेदन पर कृपा करके दिल्ली पधारे, जिन्होने अपनी बहुमूल्य सम्मति भेजी और जिन्होने उत्साहवर्द्धक पत्रोत्तर दिये, उन सबके प्रति, मैं पृथक्-पृथक् उत्तर न देकर, यह ज्ञापन उनकी सेवा मे प्रस्तुत करके अपनी विनम्र कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

दिल्ली मे अनुष्ठित अधिवेशनो की कार्यवाही का जो विवरण मुझको मिला है, वह अत्यधिक सन्तोषजनक है। स्पष्ट ही ज्ञात होता है कि वहा उपस्थित हुए पच्चानवे प्रतिशत लोगो का दृष्टिकोण वास्तविक, सृजनात्मक और आयुर्वेद के लिए भरपूर हितचिन्तन पूर्ण था। जैसा उत्साह इस अवसर पर लोगो ने दिखाया उससे यह कहा जा सकता है कि महासम्मेलन मे नवजीवन-सचार करने के लिये उसके सदस्यगण दृढप्रतिज्ञ प्रतीत होते है। महासम्मेलन के इतिहास मे स्थायी समिति का यह, कदाचित् एकमात्र, ऐसा अधिवेशन हुआ है जिसमे प्राय डेढ सौ सदस्यो की उपस्थिति हुई है। जब कि ऐसे उदाहरण भी है कि महासम्मेलन के वार्षिक अधिवेशनो मे तक २०-२५ सदस्यो ने भाग लिया। इस प्रकार स्थायी समिति के गत अधिवेशन का महत्त्व अद्वितीय है। जैसी कि मेरी कामना थी, दिल्ली मे विद्यापीठ की ओर से आयुर्वेद महाविद्यालय स्थापित करने का निश्चय तो हो ही गया, महासम्मेलन का आगामी वार्षिक अधिवेशन भी दिल्ली मे करने का निश्चय किया गया। यह दोनो ही बाते, महासम्मेलन और आयुर्वेद के उज्ज्वल भविष्य की दृष्टि से अत्यधिक कल्याणकर है। प्रमुखत दिल्ली के वैद्यो ने इस अवसर पर जो सक्रियता एव उत्साह का वातावरण प्रस्तुत किया, वह अनुकरणीय और अभिनन्दनीय है। आगामी वार्षिक अधिवेशन का भार उन्होने अपने सबल कन्धो पर जिस साहस के साथ लिया है, मुझे विश्वास है कि सुदृढ एव व्यवस्थित सगठन तथा यथार्थ कार्य-प्रणाली की दृष्टि से, वे महासम्मेलन मे युगान्तर उपस्थित करने में सर्वथा समर्थ हो सकेंगे। भारत की राजधानी दिल्ली में आगामी वार्षिक अधिवेशन का आयोजन बहुत

महत्त्वपूर्ण है। मुख्यत आज की परिस्थितियो में केन्द्र म आयोजित आयुर्वेद सम्बन्धी प्रत्यक रचनात्मक गतिविधि प्रचार और प्रभाव की दृष्टि से बहुत ही हितकारी और सुफलप्रद होगी। राजकीय क्षत्र म जो माननीय नतागण आयुवद के पक्ष म हार्दिक सहानभूति रखते ह केन्द्र म आयो जित हमारे यथाथ कार्यो से उन्ह बल और उत्साह मिलगा तथा जो राजकीय प्रभावशाली पक्ष हमारा कुछ सक्रिय काय देखकर ही आयवद के लिए कुछ करन की इच्छा रखता है वह प्रभावित और प्ररित होगा। इस दृष्टि से वार्षिक अधिवशन और महाविद्यालय दोनो का आयोजन दिल्ली म करन का निश्चय सब प्रकार से युक्तिपूण है और उसके निश्चयकर्ताओ को म हार्दिक बधाई देता हू।

विद्यापीठ क ओर से महाविद्यालय सचालित करन की कामना कोई नय नही है। वद्य समाज पिछल अनक वर्षो से लालसापूवक इसका बाट जोह रहा है। बहुत काल से मेरी इच्छा रहा है कि यह महत्त्वपूण आयोजन राजधानी दिल्ल म ही किया जाय और वहा विद्यापाठ क ओर से एक एसे सर्वांगपूण आयुवद महाविद्यालय की स्थापना हो जिसके पाठयक्रम सचालन और रीति नीति का निर्धारण सवथा वद्यो द्वारा स्वतन्त्र रूप से किया जाय। अपन इस इच्छा के सम्बन्ध म मन अपन गत जन मास के वक्तव्य म निवदन किया और उसके उपरान्त स्थान-स्थान पर हुई सभाओ म बार बार अपन निवदन को दोहराया। दिल्ल के वद्य बन्धुओ से आग बढकर काय को हाथ म लन क प्राथना क। मैं कह सकता हू कि मन सवत्र ही एसे महाविद्यालय के विषय म वद्य समाज म अभूतपूव और वास्तविक उत्साह पाया है। इसी आधार पर विद्वद्वर कविराज श्री उपेन्द्रनाथ दास जी से विद्यापीठ म एक योजना प्रस्तुत करन का आग्रह किया। और तदथ ही आप सदस्य महानभावो से उसको दिल्ली म स्वीकृत करन एवं कार्यान्वित करन के निमित्त नम्र निवदन किया था।

इस योजना के भारी बहुमत से स्वीकार होन पर जहा मुझ आप सदस्य महानभावो की कृपा के सबल के लिए हर्ष और सन्तोष है वहा दिल्ली के विवरण म यह जानकर आत्मिक क्लश भी हुआ कि कुछ माननीय व्यक्तियो न अधिवशन म महाविद्यालय के महत्त्वपूण काय को टालन का भी भरसक प्रयत्न किया। महाविद्यालय के हतु दिल्ली से पृथक अन्य जगह दखन और विचार करन पर बल दिया तथा वार्षिक अधिवशन के निमित्त दिल्ली के बजाय जगन्नाथ पुरी को ही स्वीकार करन का दृढतर आग्रह किया। यही पर यह सन्दह प्रबल हो जाता है कि महासम्मेलन और विद्या पीठ म जिन लोगो का स्वाथ निहित है व केवल प्रचार के लिए विद्यालय आदि की चर्चा तो करते ह परन्तु वास्तव म व उसको कार्यान्वित करना नही चाहते। यह बात कल्पना म नही आती कि जो लोग आयवद के हितैच्छ महारथी होन का दावा करत नही अघाते व ही यथाथ काय होन म रोड अटकाते ह दिल्ली अधिवशनो म यह बात प्रकट रूप म दखन म आयी। दिल्ली म विद्यापीठ के महा विद्यालय स्थापित न करन के पक्ष म कोई सबल तक बुद्धि म नही आता। प्रत्यत उसका अकाट्य महत्त्व सुविदित है फिर भी क्यो लोग इस काय म रोड अटकाते ह और क्यो दिल्ली म सम्मेलन नहा ह न दना चाहते—यह बात समझ म नही आती। बन्धुवर पण्डित शिवशर्मा जी न सदा की भाति इस अवसर पर भी अपना कटनीति और वाक चतुरता का भरपूर प्रयोग करन म कसर नहा रखी। उन्ह भरोसा था कि पटियाला से तत्थ भरकर लाय गय वद्यबन्धु उनका अन्ध समथन करग परन्तु पटियाला के बन्धुओ न अपना स्वाभाविक विवक नही त्यागा और व तटस्थ रह। प्रस्तुत परिस्थिति को दखकर सत्य के लिए उन भाइयो न जिस उदारता का परिचय दिया वह सम्मान नीय है। मान्य श्री केशवप्रसाद जी आत्रय न इस अधि वशन म दिल्ली म ह विद्यालय हो और दिल्ल म ही सम्मे-लन इस पक्ष म अपना प्रकट अभिमत व्यक्त करके एक वग विशष को भल ही आश्चयचकित किया हो परन्तु कहा जा सकता है कि वह उनका सदाशयता का ही परिचायक है।

सब मिलाकर यह कहना पर्याप्त होगा कि अब बहु सख्यक वद्य समाज यह समझन लगा है कि बिना क्रियात्मक काय किय उसका अस्तित्व असंदिग्ध नही है। महा सम्मेलन का प्रयास न दल अपन चातुय से अब भी इन योज नाओ को टालन के उपक्रम म सक्रिय हो सकता है परन्तु जाग्रत वद्य समाज बहुत ही उत्साहपूण वातावरण म है और समय की यह माग है कि इन आयोजनाओ को टाला नही जाना चाहिए। कुछ बन्धु यद्यपि कहना कुछ और करना कुछ की अपनी पुरानी परिपाटी पर ही चलना चाहते है— परन्तु महासम्मेलन के उत्साही और जाग्रत सदस्यगण एसा

नही होने दगे इसका मुझ पूरा भरोसा है। बन्धुवर श्री सीतारामजी मिश्र महाविद्यालय-योजना की सफलता के लिए विद्यापीठ मन्त्री होन के नाते यथष्ट प्रयत्नशील दिखायी देते है। दिखाऊ काम करन वाल कुछ व्यक्ति यदि उनको भी अपन जसा बनान के प्रयत्न में सफल न हुए तो श्री मिश्र जी के प्रयत्न यथाथ सिद्ध होग और उनका कायकाल एक महत्त्व के श्रय का भागी होगा।

यह निश्चित है कि दिल्ली-सम्मेलन के अवसर पर महाविद्यालय के हतु अभतपूव सहयोग मिलगा। आज वैद्यो म इसके लिए अत्यतम उत्साह है। कुछ लोगो न मुझ पत्रोत्तरो म मार्मिक चन्दा दन का आश्वासन दिया है। दिल्ली के वद्यगण केवल दिल्ली से कम से कम पचास हजार रुपया एकत्र करन की आशा रखते है सब मिलाकर एक लाख रुपया एकत्र हो जाना सभव ह। दिल्ली-सम्मेलन पर ही दिल्ली म महाविद्यालय का उदघाटन और शुभारम्भ किया जाय—यह मेरी प्राथना है।

अन्त म सबसे पहल मै उन भाइयो से अति विनम्र निवदन करना चाहूगा जो किन्ही कारणो से ही सही दिल्ली म विद्यालय और सम्मेलन करन का विरोध करते है कि व सम्पूण वद्य समाज पर कृपा करके कम से कम एक बार सद्विवक से काम लव। आयुर्वेद के नाम पर मै उनसे अपील करता हू कि पारस्परिक विवादो को व्यक्ति गत हितो को और अपनी ही बात रखन की प्रवृत्ति को व इस अवसर पर कृपा करके भला द और दुनिया क दिखा द कि हम आपस म लडन वाल भी अपन सामहिक हित के लिए एक होकर कुछ कर सकते है। जो जीवन भर आयुर्वेद हित काय करन का बात करते रह है मेरी उनसे विनय है कि व एकबार दिल्ली के इन आयोजित यज्ञा म सारे मतभदो को भुलाकर अपना सच्चा और उत्साहपूण सहयोग प्रदान कर। उनक इस कृपा के लिए म सारा आयुर्वेद जगत सदा कृतज्ञ रहगा और इस काय की सफलता से जो महत् आयोजन होगा वह उनकी उदारता का स्मारक होगा।

दिल्ली में महाविद्यालय और महासम्मेलन का आयोजन निश्चय ही दिल्ली के वैद्य-बन्धुओ के साहस की सगठन और कायशीलता की कसौटी है उनसे मेरा निवदन है कि व विशष उत्साह से अभी से सक्रिय हो जाव और इस बात का भरपूर प्रयत्न कर कि समस्त असुविधाओ और विरोधाभासो को सफलता के साथ पार करके व एक साथ ही महासम्मेलन एव महाविद्यालय के आयोजनो को एसे सुव्यवस्थित रूप म सम्पादित करन म सफल हो सक जो सदा के लिए अच्छा उदाहरण बन जाय।

अन्त म महासम्मेलन के समस्त माननीय सदस्यो और सम्पूण आयुर्वेद जगत से मेरा पुन विनम्र निवदन है कि इस अवसर पर अनुकल परिस्थितियो को ध्यान म रखते हुए इस बात के लिए सतक रह कि हमारे अधिकारी वग अविवकवश पहिल की भाति इस बार भी दिल्ली अधिवशनो के निणयो को कायरूप दन म किसी प्रकार की टाल टूल या ढील-ढाल करन की नीति न अपना सक। सदस्यगण यदि ध्यान रखग तो अधिकारी वग आसानी से जनमत की उपेक्षा करन का दुसाहस नही कर सकग।

मख्यत महाविद्यालय-योजना म भरपूर सहयोग दन के लिए मै प्रत्यक वद्य से निवदन करता हूँ। आयुर्वेद की कीर्ति रक्षा के लिए यह योजना महत्त्वपूण है इसलिए प्रत्यक वद्य इसम मक्त हस्त होकर स्वय दान दे और दूसरो को प्रोत्साहित करके दिलाव। कण कण के एकत्रीकरण से एक विशाल स्तम्भ बनगा जिसमें प्रत्यक कण का अपना महत्त्व होगा। वद्यो से प्राथना है कि व कृपाकर अपन सहयोग के विषय म पत्रोत्तर द्वारा सूचित करके उपकृत करें।

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० गुसाईपुरा झासी

विनयावनत
रामनारायण वैद्य



जनस्वास्थ्य और दूध

एक दिन हमारे एक मित्र आकर बोले, 'मैंने एक अटूट प्रतिज्ञा कर ली है, आप भी कीजिए! हम दोनो अपने निश्चय को निभाने मे परस्पर सहकारिता की नीति अपनावे और एक-दूसरे की निगरानी भी रखे।'

जिज्ञासा भरी आँखो से हम मित्र का मुँह देखने लगे कि कौन-सा गढ ताडने की प्रतिज्ञा कर बैठे हमारे भाई! फिर वे तुरन्त बोले हमारे देश के माननीय स्वास्थ्य मन्त्री जी ने गवेषणा के तथ्यो के आधार पर कहा है कि धूम्रपान से और तम्बाकू के प्रयोग से फेफडे का कैंसर होने की आशका बढ जाती है—हमे तम्बाकू छोड देनी चाहिए। मैंने तो प्रतिज्ञा कर ली है कि कभी धूम्रपान नही करूँगा।'

हमारे मित्र धूम्रपान करते थे और हम तम्बाकू खाते थे। पहिले हमारा मत यह था कि तम्बाकू खाना अच्छा—पीना खराब। और हमारे मित्र का मत यह था कि पीना अच्छा, खाना खराब। दोनो के मत एक दूसरे से टकराते रहते थे, पर ढीला कोई नही पडता था। स्वास्थ्य मन्त्री के एक वाक्य ने हमारे मित्र के मत को तो ढेर ही कर दिया था। हमारा मत मित्र की चपेट में था। निदान हम दोनो के मत पर स्वास्थ्य मन्त्री के वाक्य ने विजय पायी। पीना-खाना दोनो बुरे।—यह निष्कर्ष लेकर हम लोगो ने परस्पर निश्चय कर लिए और तब से हम माननीय स्वास्थ्य मन्त्री के वाक्य और अपने निश्चय दोनो के घोल को मिलने-वालो पर डाला करते है।

यह घटना इस बात का उदाहरण है कि व्यावहारिक दृष्टि से, हमारे माननीय मन्त्रियो और नेताओ का कितना गहरा प्रभाव पडता है। अभी हाल की बात है मान्य श्री नेहरू जी के कहने से प्रभावित होकर सन्तप्रवर विनोवा भावे ने चावल खाना छोड दिया। राष्ट्रपति भवन में चावल का उपयोग ही स्थगित कर दिया गया है। नेताओ के वाक्यो से होने वाले प्रभाव के यह तो ऐसे उदाहरण है जो बडो की बात होने के कारण अखबारो से हमारे सामने आ गये। सामान्य जनता के कितनो ही ने इन उद्बोधनो का अनुसरण किया होगा—जिनका पता नही।

निश्चय ही माननीय व्यक्तियो के सन्देशो का जन-मानस पर गभीर प्रभाव पडता है और जनता का एक अश अवश्य ही उनका अनुकरण करता है। ऐसी स्थिति मे क्या यह वाञ्छनीय नही है कि हमारे माननीय जननेतागण अपने इस प्रभाव का उपयोग सदाशयो मे ही करने की वृत्ति अपनायें। हाल ही में हमारे राष्ट्रनायक पण्डित नेहरू जी ने दो विचित्र बाते कही है एक तो यह कि स्वास्थ्य के लिए दूध आवश्यक नही है और दूसरी यह कि यज्ञ हवन इत्यादि बन्द कर दिये जाने चाहिए। पहली बात के प्रमाण मे उन्होंने किसी चीनी वैज्ञानिक का उल्लेख किया है और दूसरी बात का आधार खाद्यान्न की रक्षा करना बतलाया है।

राष्ट्रनायक की इन दो छोटी छोटी बातो पर जब हमने सोचा तो हमे ऐसा लगा कि यह दोनो ही बाते राजनैतिक महत्त्व को ध्यान मे रखकर कही गयी है। पहली का निशाना है गो हत्या निरोध के लिए चलने वाला आन्दोलन और दूसरी का लक्ष्य है समाज की सास्कारिक रूढियो पर चोट। हवन और यज्ञ अब होते भी कहाँ कितने है? नाममात्र के यदि कही होते भी है तो उनको रोकने से कितने खाद्यान्न की रक्षा हो सकती है? स्वास्थ्य के लिए दूध को अनावश्यक बताते हुए नेहरूजी ने यहाँ तक कहा कि चीनी जनता मे रोग से लडने की शक्ति दूध छोडने के कारण ही बढी है।

हम यहाँ राष्ट्रनायको से विनम्र निवेदन करना चाहेंगे कि वे अपने वक्तव्यो में कम से कम इतना ध्यान अवश्य रखा करे कि उनके राजनीतिक दृष्टिकोण को ऐसे वक्तव्यों से जहाँ बल तो मिलेगा थोडा सा, वहाँ समाज मे नागरिक जीवन पर उसका अहितकर प्रभाव बहुत तो नही पडेगा?

किसी बात के राजनैतिक दृष्टिकोण से हमे कोई मतलब नही, परन्तु जहाँ हम देखते है कि राजनीति की चपेट में अनावश्यक ही साधारण जीवन की अन्य अनिवार्यताओ का चूर्ण किया जाने लगा है तो दुःख होता है। आज देश की जनता का स्वास्थ्य वैसे भी गिरावट पर है। सामान्य स्वास्थ्य की इस कमी का कारण हम अपने विचार से यही मानते हैं कि पहिले तो लोगो मे स्वास्थ्य के प्रति सुरुचि

नहीं है दूसरे सुगठित स्वास्थ्य के लिए जिस पौष्टिक और सन्तुलित भोजन की अनिवाय आवश्यकता है उसकी ओर लोगो का ध्यान आकर्षित नही किया जाता। कृत्रिम रोग रोधिनी शक्ति के उत्पादन के उपायो मे तो लोगो को उलझाया जाता है परन्तु भोजन क पौष्टिक तत्वो की मात्रा बढान के लिए प्रोत्साहित नही किया जाता। परिणामत साधारण जनता का स्वास्थ्य कमजोर होता जा रहा है। उस पर भी राष्ट्रनायक नहरूजी का यह उपदेश कि स्वास्थ्य के लिए दूध आवश्यक नही।—क्या सामान्य जन की स्वास्थ्य के प्रति उपेक्षा वृत्ति को और भी अधिक गहरी बनान का कारण नही बन जायगा ? पौष्टिक पेय के नाम पर केवल दूध ही एसा रह गया है जिसका प्रचलन सवसाधारण म अभी थोडा बहुत मात्रा मे अवशष है। राष्ट्रनायक के उपदेश को मानकर और यह सोचकर कि चानियो की तरह दूध छोड देन से रोग प्रतिरोधना शक्ति बढगी यदि लोग दूध के सवन के प्रति भी उपेक्षित हो जावे—तो स्वास्थ्य की स्थिति पर इसका कितना अहितकर प्रभाव पडगा यह उपदेश दन वाल को सोचना चाहिए। और यह भी ध्यान मे रहना चाहिए कि यह भारत है—चान नही।

राष्ट्रनायक नहरूजी के प्रत्यक शब्द का बहुत बडा महत्त्व है। विशष कर भारत की जनता के लिए उनका हर वाक्य यही अथ रखता है कि प्रत्यक दशवासी उसको अपन जीवन म उतारन के लिए प्रवृत्त होव। एसी दशा मे माननीय नहरू जी को अपनी बात को कहन के पूव उसके प्रभाव पर विशष रूप से ध्यान देना चाहिए।

यहा प्रसगवश हम यदि यह निवदन भी कर दे तो अपराध नही करग कि हमार नतागण जनसाधारण से त्याग करन की बातो मे तो विदशो के उदाहरण द दत है परन्तु राष्ट्रीय जीवन को स्वस्थ बनान की दिशा मे विदशी सरकारो का अनुसरण क्यो नही करते। स्वास्थ्य के लिए दूध को अनावश्यक बताते हुए पडोसी दश चीन का उदाहरण प्रस्तुत करके यहाँ तक कितना नि सकोच कह दिया गया कि चीनी जनता मे रोग से लडन की शक्ति दूध छोडन के कारण बढी है। फिर यह बतान म क्यो कृपणता की गयी कि चीन मे दूध को छोडकर और किन पौष्टिक तत्त्वो को अपनाया गया है ? क्या भारत की सरकार चीन की भाँति उन अन्य पौष्टिक तत्त्वो को अपनी जनता को दन में समथ है ? इसके अतिरिक्त केवल दूध छोडन में ही चीन की नकल करन का उपदेश देन के साथ ही यह क्यो भुला दिया जाता है कि चीन न देश के स्वास्थ्य के लिए एक राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति अपनायी है। चीन मे देशी औषधियो को ही सरकार न सर्वाधिक प्रोत्साहन दिया है जब कि भारत की न तो राष्ट्रीय स्तर पर कोई स्वास्थ्य नीति है और दशी चिकित्सा पद्धति के प्रति सरकार न जिस अदूरदर्शिता का अख्तियार कर रखा है वह तो किसी से छिपा नही है।

कहन क लिए यह साधारण सी बात थी परन्तु जैसा कि हम ऊपर कह चुक है विशषकर एसी अवस्था मे जब कि भारत का साधारणजन स्वाभाविक रूप से ही स्वास्थ्य रक्षण के प्रति उतना सचष्ट नही है जितना कि होना चाहिए प्रत्युत दु खद रूप से उदासीन है तो एसी कोई बात नही कही जानी चाहिए जिसके प्रभाव के परिणाम मे स्वास्थ्य के विषय म जनता की रही-सही रुचि भी विरक्ति की ओर झुके।

यह बताया जाता है कि आज खाद्यान्न का स्पष्ट अभाव है। इतना गभीर अभाव है कि उसस चिन्तित होकर हमारे प्रधान मत्री घी शकर-जौ तिल इत्यादि से होन वाल यज्ञ-हवनो को भा समाप्त कर दन की सलाह दत है। खाद्यान्न के अभाव की इस गभीर स्थिति को ज्यो का त्यो स्वीकार कर लिया जाय तो फिर स्वास्थ्य को सरक्षित और सवर्द्धित करन के लिय केवल दूध ही पौष्टिक पदाथ रह जाता है—विशषकर भारत का धर्मारूढ अहिंसक जनता के लिए। यदि हमारे प्रधान मन्त्री उसको भी स्वास्थ्य के लिए अनावश्यक घोषित कर देते है तो फिर दश के नवनिर्माण के लिए अत्यधिक श्रम व जिस जनता से कराना चाहते है उसके स्वास्थ्य के लिए किस सुलभ और अन्य पौष्टिक पदाथ को उपयोगी कहा जायगा ?

यहा हम उन विचारवान सदस्य की हृदय से प्रशसा करते है जिन्होन खाद्यान्न-कमी की समस्या के प्रसग में दूध के उपयोग बढान का सुझाव दिया है और जिसके उत्तर में माननीय नहरूजी न अपनी उपर्युक्त व्यवस्था दी है।

कई कारणो से भारत की जनता भोजन के विषय में विदशो की नकल नही कर सकती। विदशो मे अन्न कम खाया जाता है और शरीर को पौष्टिक तत्त्व देन के लिए अण्डा-मास आदि का बहुतायत के साथ प्रयोग किया जाता है। हम स्वास्थ्य के सरक्षण और सवर्द्धन के महत्त्वपूर्ण

(शेषांश ६४४ पृष्ठ पर)

स्वास्थ्य-समस्या का समाधान कैसे हो !

वैद्य पं० रामनारायण शर्मा

भारत की विशाल जनसख्या को सर्वत्र चिकित्सा की समान सुविधाए प्रदान करने के लिए हमारी केन्द्रीय सरकार विचार रखती है और चिकित्सा सेवा के विस्तार मे सबसे बडा अवरोध चिकित्सको की कमी बतायी जाती है। सरकार इस कमी को पूरा करने के लिए प्रयास कर रही है। परन्तु सरकार के प्रयासो म सारा जोर इस बात पर लगाने मे सक्रियता दिखायी जाती है कि बहुत बडी सख्या मे डाक्टर तैयार करने के लिए जगह-जगह भोर कमेटी की योजना के अनुसार मेडिकल कालिज स्थापित किये जाय। इन मेडिकल कालिजो की स्थापना मे यदि, यह कार्य विधिवत् किया जाता है तो करोडो रुपये का व्यय होना निश्चित है। और वह व्यय भी अधिकाश भारत मे नही होगा, सामग्री और साधन यहाँ तक की पुस्तके भी विदेशो की ही अनिवार्यत होगी।

द्वितीय पचवर्षीय योजना मे जो विशाल धनराशि स्वास्थ्य सेवाओ के निमित्त निर्धारित की गयी है, यदि यही दृष्टिकोण रहता है तो उसका बहुत बडा अश बडी सख्या मे डाक्टर तैयार करने के लिए बडे-बडे मेडिकल कालिजो की स्थापना में ही व्यय हो जायगा और परिणाम मे जनस्वास्थ्य समस्या का किंचित भी हल कदाचित् ही हो सकेगा। ऐसी अवस्था मे जब कि आर्थिक साधनो की कमी के कारण योजना के निर्धारित लक्ष्यो पर पुर्नविचार करने की स्थिति है, सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित करना उचित होगा कि चिकित्सा सेवा के विस्तार के लिए सरकार इन बहुत खर्चीले और अनावश्यक मेडिकल कालिजो की स्थापना का विचार त्याग दे। इनके स्थान पर कम खर्च मे ऐसे कालिजो की स्थापना को सम्पन्न किया जाय जिनमे आयुर्वेद-यूनानी की भारतीय प्रणाली के, नव्य विज्ञान के समन्वय से सुगठित, शिक्षण की व्यवस्था करके अधिकाधिक चिकित्सक तैयार किए जा सके। जहाँ एक ही मेडिकल कालिज की रचना मे प्राय एक-डेढ करोड रुपया व्यय हो जाता है, वहाँ उस एक-डेढ करोड के व्यय मे ही कम से कम बीस भारतीय चिकित्सा प्रणाली के श्रेष्ठतम विद्यालयों का आयोजन सुगमता के साथ हो सकता है और यह स्पष्ट निश्चित है कि एक मेडिकल कालिज जितने चिकित्सक तैयार करेगा, आयुर्वेद-यूनानी के विद्यालय उससे बीस गुने चिकित्सक तो प्रस्तुत करेगें ही। इस प्रकार एक ओर तो योजना का व्यय-भार कम होगा, दूसरी ओर भारतीय प्रणालियो के चिकित्सको की सख्या-वृद्धि से, स्वाभाविक ही उन करोडो रुपयो की धनराशि मे उल्लेखनीय बचत हागी जो प्रतिवष ही औषधियो के लिए विदेशो को जाती है। यह भी अनुभव सिद्ध है कि मेडिकल कालिजो से तैयार हुए डाक्टर अधिकाश शहरी जीवन का भार ही बनेगे और देश के अति विस्तृत ग्रामीण क्षेत्र की स्वास्थ्य-समस्या ज्यो की त्यो बनी रहेगी। इसके विपरीत भारतीय प्रणाली से बन चिकित्सक स्वाभाविक रूप से ही देश की गरीब और ग्रामीण जनता के काम आवेंगे। ग्रामीण क्षेत्रो मे स्वास्थ्य चिकित्सा कार्यों का प्रबन्ध नितान्त आवश्यक है। उसके बिना बडे से बडे विकास कार्य और निर्माण योजनाओ की सफलता की आशा करना दुरुह कल्पना के समान है। ग्राम्यजीवन को स्वस्थ बनाने का कार्य आयुर्वेद-यूनानी चिकित्सा प्रणालियो के द्वारा और उनके ज्ञाता भारतीय चिकित्सको के माध्यम से ही अधिकाधिक सफलता के साथ सम्पन्न किया जा सकता है। सरकार को इस वस्तु-स्थिति पर गभीरता के साथ विचार करना चाहिए।

हाल ही मे हमारे माननीय राष्ट्रपति जी ने अपने एक वक्तव्य मे इस सर्वथा विचारपूर्ण बात की ओर देश का ध्यान आकृष्ट किया था कि जनता की स्वास्थ्य समस्याए बडी सख्या मे डाक्टर उत्पन्न करने से कदापि हल नही हो सकती। निश्चय ही जनता के स्वास्थ्य-सरक्षण मे चिकित्सा विकास पर ही ध्यान केन्द्रित करना कदापि उपयोगी नही है और उसके लिए अधिक डाक्टर उत्पन्न करने का विचार भी तर्क-सगत नही है। जनता मे बीमार हो जाने पर ही विवशता की दशा मे दवा लेने और चिकित्सक की शरण जाने की वृत्ति का प्रभाव बढ गया है और स्वाभाविक रूप से स्वस्थ रहने की चेष्टा का स्पष्ट अभाव दिखाई देता है। डाक्टरो की भीड बढाने से जनता की यह वृत्ति ही अधिक बढेगी।

स्वाभाविक स्वास्थ्य के प्रति उदासीनता की दु खद उपेक्षा-भावना का उन्मूलन जब तक नही किया जाता तब तक देश स्वस्थ बन सकेगा, यह कल्पना गलत है। देश में मृत्यु सख्या कम हो रही है, यह कहकर ऐसा मान लेना कि जनता का स्वास्थ्य ठीक हो रहा है, एक हास्यास्पद बात है। स्वास्थ्य रक्षा के पाश्चात्य तरीको को अपनाने से कोई लाभ नही हुआ, यह इधर सौ वर्षों का अनुभव बता रहा है, जब कि भारतीय स्वास्थ्य सिद्धान्तो को जीवन मे उतारकर देश का जन-मन पूर्ण स्वस्थ रह सका है, यह हमारा हजारो वर्ष का इतिहास सिद्ध करता है। आज की परस्थितियो मे भी देश की जनता को स्वस्थ रखने के लिए भारतीय स्वास्थ्य सिद्धान्तो का अनुसरण उपयोगी, सरल और फलप्रद होगा। भारतीय स्वास्थ्य सिद्धान्त आयुर्वेद मे सुरक्षित है। भारतीय प्रणालियो मे दीक्षित चिकित्सक ही उन सिद्धान्तो के प्रतिपादन में सचेष्ट हो सकते हैं और जनता मे उनका व्यापक प्रचार कर सकते हैं। इस दृष्टि से भी आयुर्वेद-यूनानी की शिक्षण पद्धति वाले विद्यालय खोलकर अल्प व्यय से ही अधिक मात्रा मे भारतीय चिकित्सको का उत्पादन ज्यादा श्रेयस्कर होगा, बजाय इसके कि करोडो रुपया व्यय करके मेडिकल कालिजो की योजना द्वारा कुछ डाक्टर बनाये जावे। इस तर्कसगत सुझाव की ओर सरकार का ध्यान जाना चाहिए और जनता तथा जननेताओ को भी स्थिति की गभीरता को अनुभव करके सरकार को इस दिशा मे आकृष्ट करना चाहिए।

शेषाश]

सम्पादकीय

[६४२ पृष्ठ का

प्रश्न को ध्यान मे रखते हुए अण्डा-मास इत्यादि खाने का विरोध नही करते। निश्चय ही यदि इन पौष्टिक चीजोको बहुतायत से अपनान की परम्परा भारत मे नहरूजी चला सके तो खाद्यान्न का अभाव प्रतीत ही न हो। मूल बात तो यही है कि भारत मे पौष्टिक तत्त्वो को अधिक मात्रा मे लन की वृत्ति लोगो मे है नही और लोग शरीर को चलान के लिए अन्न ही अधिक खाते हैं। देश मे अन्न की अधिक खपत का यह एक कारण है। इस कारण का हटान का सर्वमान्य हल यही हो सकता है कि जनता को अन्न कम खान और उसके स्थान पर दूसरे ग्राह्य पौष्टिक तत्त्वो को उपयोग मे लान के लिए प्रभावपूण ढग से प्ररित किया जाय। जो अण्डा-मास खा सकते हैं—खावे। परन्तु जो किसी सास्कारिक या धर्म-भावनावश यह चीजे नही खा सकते, उनके लिए भारत मे दूध को छोडकर कौन-सा पौष्टिक पदार्थ है? स्वास्थ्य विशारदो के विचार मे भी विशेषत भारतीय अहिंसा सिद्धान्त माननेवालो के लिए तो दूध ही सर्वस्व है। दैनिक कम से कम आधा सेर दूध अथवा एक छटाक शुद्ध घी (वजिटबिल नही!) तो स्वास्थ्य के लिए उतना ही आवश्यक है, जितना जीवन के लिए वायु! चाय के अन्धाधुध प्रचार से वैस भी दुग्धपान का प्रचलन कम हो गया है, उस पर राष्ट्रनायक के इस विचार के प्रसार से तो दूध का उपयोग नि शष ही हो जायगा। करोडो लोगो का, जो मास-अण्डा आदि से सख्त परहज करते हैं—पौष्टिक पदार्थ के अभाव मे स्वास्थ्य कैसे टिकगा? जननेताओ को इस महत्त्वपूर्ण बात पर ध्यान देना चाहिए।

और वैद्य जगत पर जनता को स्वास्थ्य-रक्षण मे सचेष्ट रखन की जिम्मेवारी है, इसलिए उसको दूध छोडने जैसी अहितकर व्यवस्थाओ का प्रतिवाद करके जनता-जनार्दन की स्वास्थ्य-रक्षा के प्रति जागरूक होने का परिचय देना चाहिए।

आयुर्वेद-हित की स्वस्थ प्रतियोगिता के लिए—

आइये, अखाड़ा तैयार है !

श्री हारिकेश मिश्र

राजसत्ताओ के उत्थान-पतन और उथल-पुथल का औपन्यासिक इतिहास लिखते हुए एक बडे लेखक न अपनी पुस्तक के परिचय का आरम्भ इस प्रकार किया—

'कुछ लोगो का कहना है कि राजनीतिज्ञ वह जन्तु है, जो, बैठा तो रहता है पेड की ऊँचाई पर, परन्तु कान लगाये रहता है नीचे की भूमि पर रेगने और चलने-फिरनेवाले जीवो पर। जर्मनी का सगठन करनेवाले विख्यात विस्मार्क ने राजनीतिज्ञ और राजदर्शी मे यह अन्तर बतलाया था कि राजनितिक आनेवाले चुनाव की चिन्ता मे ग्रस्त रहता है, परन्तु राजदर्शी आनेवाली पीढी के कल्याण की बात सोचता रहता है। डेढ सौ वर्ष से ऊपर हो गए जब एक ने झुझला कर कहा था कि यदि पदो का बटवारा राजनीतिज्ञो के स्वयसिद्ध अधिकार की बात है तो पद रिक्त हो कैसे ? पद रिक्त होता है या तो किसी अधिकारी की मृत्यु से—जो कभी-कभी ही होती है—या फिर पदत्याग से, परन्तु पदत्याग तो कोई करता नही। ऐसे भी है जो कहते है कि राजदर्शी वह जो भेड के बाल काटे, और राजनीतिज्ञ वह जो भेड की खाल खीचने पर जुट पडे !'

राजनीतिज्ञ और राजदर्शी की उक्त परिभाषाए काँटे की तोल सच्ची तो है ही, मनोरजक भी है। सूक्ष्म दृष्टि से यदि देखा जाय तो आयुर्वेद जगत् मे वैसे ही राजनीतिज्ञ भी है और राजदर्शी भी ! और इन दोनो प्रकारो के बीच मे ऋषि-प्रणीत वेदोक्त आयुर्वेद का भविष्य झूल रहा है। वैद्य समाज के हित इधर-उधर टकरा रहे है ! राजनीतिज्ञ प्रकार के लोगो ने आयुर्वेद की गर्दन पकड रखी है और ऐसा लगता है, जैसे वे वास्तव मे खाल खीचने पर जुट पडे हो। छोडने का वे नाम भी लेने को तैयार नही, चाहे फजीहत कितनी भी हो जाय ! राजनीतिज्ञ जो ठहरे !

परन्तु इस प्रकार की खीचतान में आयुर्वेद का उसके घर में ही जो पतन हो रहा है और वैद्य-समाज के हितो के साथ जो अनहोनी हो रही है, वह दु खद है। आयुर्वेद-जगत् का नेतृवर्ग यदि और कुछ दिनो अपने इसी स्वभाव-सुलभ खेल का अभ्यास करता रहा तो कहा नही जा सकता कि भविष्य क्या होगा।

जिन्हे कुछ कार्य करना चाहिए वे दिखावा मात्र करके कर्तव्य की इतिश्री कर देते है, और दूसरो को करने देते नही, फिर काम कैसे चले ? कुछ नही मिलता तो आड लेने के लिए कोई विवाद ही ले खड होते है, और व्यक्तियो के निज की महत्वाकाक्षा से टकरानवाले आपसी विवाद सम्पूर्ण समाज के हितकार्यो मे बाधक बना दिये जाते है, यद्यपि ऐसा होना नही चाहिए, परन्तु फिर राजनीतिज्ञ का चातुर्य ही क्या ?

हाल ही मे दिल्ली मे स्थायी समिति एव विद्यापीठ प्रबन्धक-समिति के अधिवेशनो के अवसर पर कुछ ऐसा वातावरण बनाने का प्रयास किया गया था, जिसमे लोगो का ध्यान यथार्थ और रचनात्मक कार्यो से उचट कर व्यक्तियो के विवादो मे उलझ कर रह जाय, और राजनीतिज्ञ का चातुर्य उसको जहाँ के तहाँ जमे रहने का अवसर सुलभ करदे ! सम्पूण वैद्य-समाज पर एहसान का गौरव ब्याज मे !

परन्तु, ऐसा होने से बच गया। कही तो राजनीतिज्ञ चक गया और कही सभा-सदस्य वैद्यो न सतर्क विवक से काम ले लिया, इस प्रकार आयुर्वेद की स्थायी सेवा के यथार्थ कार्य की दिशा मे सस्था का एक कदम तो उठ ही गया !

अवसर ऐसा आ गया है जब कि हम राजदर्शी और राजनीतिज्ञ—दोनो प्रकार के आयुर्वेद-सेवियो से कुछ कह डाले। हाल ही मे वैद्य रामनारायण जी ने अपने वक्तव्य मे एक बडा सुन्दर सुझाव दिया था, जिसका भावार्थ यह था कि जो लोग विग्रह की वृत्ति का त्याग नही कर सकते और जिन्हे विवाद ही प्रिय है वे रचनात्मक कार्य करने में प्रतिस्पर्द्धा कर ले। यह कसौटी वैद्य-समाज पर किसका कितना प्रभाव है और किसमे कितनी कार्य-शक्ति है—इस बात का निर्णय कर देगी। वैद्य रामनारायणजी ने जो यह सुझाव

दिया, उसको ऐसे अर्थों मे प्रचारित करना नासमझी की बात है कि यह एक पूंजीपति का कहना है या धन का मद है! इसमे केवल स्वय देने का तो प्रश्न ही नहीं—प्रतियोगिता की बात तो अपने प्रभाव का उपयोग करके समाज से, समाज के ही विकास-कार्य के हेतु सहयोग, धन, साधन और शक्ति के सचय के लिए है! धन की प्रतिस्पर्द्धा भी यदि है तो किसी बुरे काम के लिए नही है, सदाशय के लिए है! स्पष्टत अग्रेजी मे जिसको sportsman spirit (खिलाडी की उमग) कहते है, यह उसका ही रूप है। ऐसी वृत्ति को ससार मे समाज के लिए अत्यन्त हितकारी माना जाता है। आयुर्वेद-जगत् के राजनीतिज्ञो और राजदर्शियो में यदि इस वृत्ति को स्थान मिल जाय तो वास्तव मे श्रेयष्कर हो! मै तो कहता हूँ कि आयुर्वेदीय-क्षेत्र मे इस चुनौती को स्वीकार किया जाना चाहिए और यथार्थ कार्य करने की ही होड होनी चाहिए। ऐसी होड मे जो आगे आये, उसको ही सच्चा आयुर्वेद हितू समझा जायगा। लडाई या वाद-विवाद जो आज प्रस्तुत है और जिसको ले कर आरोप-प्रत्यारोपो का अम्बार उठा हुआ है—कोई जर-जमीन पर तो है नही। लगभग इसी बात का विवाद है कि आयुर्वेद के लिए अमुक ने क्या किया या कर सकता है और अमुक क्या? तो फिर पिछले विरुद-बखानो को तो दीजिए छोड—साहस जगाने के लिए कुछ स्मरण करना हो तो करते रहिए!—वैसे मैदान तैयार है, अपनी-अपनी कला-करामाते दिखाइये! दिल्ली मे महाविद्यालय-स्थापन की योजना को कार्यान्वित करने का निश्चय किया जा चुका है। कार्य करने और अपनी परीक्षा दे कर खरे उतरने का अवसर प्रस्तुत है। वह निश्चय किसी एक व्यक्ति का नही। अच्छी खासी पचास वर्ष पुरानी आयुर्वेद की एकमात्र सस्था का निश्चय है! और इस बात मे दो मत नही हो सकते कि सर्वांगपूर्ण आयुर्वेद महाविद्यालय—आयुर्वेद के वर्तमान एव भविष्य दोनो को उज्ज्वलतर बनाने का सर्वश्रेष्ठ साधन है। महाविद्यालय को बडे-से-बडे पैमाने और अच्छे-से-अच्छे ढग पर चलाने के लिए जो जितना अधिक धन-साधन जुटा सके, उसी की बडी और यथार्थ सेवा! इसके लिए ही कार्य की होड हो। इस होड मे भाग लेने वाले प्रत्येक प्रकार के राजनीतिज्ञ या राजदर्शी का आयुर्वेद-जगत् युग-युग तक चिरऋणी रहेगा। और यह भी निश्चय है कि यह कार्य वास्तविकता को शीशे की भाँति साफ बता देगा कि थोथी बातें करके यश लूटनेवाले कौन है, नेतृत्व पर येन-केन अधिकार कर लेने की चेष्टा करनेवाले कौन है और वास्तविक आयुर्वेद-हित के कार्य करनेवाले कौन है? सभी वर्गों के लोगो को ऐसी होड मे आगे बढ कर उत्साह के साथ भाग लेना चाहिए। प्रमुख व्यक्तियो के लिए तो यह कसौटी है ही!

हमारे सुविख्यात पण्डित शिवशर्माजी अपने को आयुर्वेद-जगत् मे सबसे अधिक मर्यादासम्पन्न नेता कहते है, उन्होने १९५५ मे त्रिवेन्द्रम महासम्मेलन की मात्र तीन दिन की अध्यक्षता केवल इस कारण ही की थी कि अधिवेशन की प्रधानता को मर्यादा-पूर्वक सम्पन्न करनेवाला, आयुर्वेद-जगत् मे, उनको छोड कर दूसरा कोई था ही नही। निश्चय ही वे अपने विषय मे और अपने तौर-तरीको मे अद्भुत प्रतिभा-सम्पन्न है। सबसे अधिक मर्यादा-शाली नेता का सर्वाधिक प्रभाव होना ही चाहिए। फिर आयुर्वेद-जगत् के नेतृत्व का अट्ठारह वर्षों का अनुभव उनकी गाँठ मे है। अब वह समय आ गया है जब कि पण्डित शिवशर्मा को, यदि वास्तव मे उनका प्रभाव वैद्य-समाज पर है, और उनमे वास्तविक कार्य-शक्ति है, अथवा वे आयुर्वेद-हित के लिए निश्चय ही कुछ करने की सच्ची इच्छा रखते है, तो उन्हे अपने प्रभाव और कार्य-शक्ति का चमत्कार विद्यापीठ के दिल्ली मे अनुष्ठित महाविद्यालय के हेतु अधिकाधिक कार्य करके दिखाना चाहिए। १९५४ में पण्डित शिवशर्माजी ने एक बार लिखा था कि आयुर्वेद विद्यालय के लिए पाँच लाख रुपया तो आनन-फानन दक्षिण के दो-चार प्रदेशो से ही एकत्र करा लेगे। और प्राय तीन वर्ष में विश्वविद्यालय के लिए पन्द्रह लाख रुपया का कोष जुटा लेगे। दक्षिण के भाइयो मे आयुर्वेद के लिए बडा जीवट है और वे, जैसा कि पण्डित शिवशर्माजी ने कहा है, कर सकते है इसमे कोई सन्देह नही। पिछले कई वर्षों से महासम्मेलन ने निरन्तर दक्षिण की ओर ही जा कर वहाँ के वैद्य-समाज मे अपूर्व उत्साह का वातावरण निर्माण किया है। ऐसी दशा मे उस ओर से पाँच लाख एकत्र होना क्या असम्भव है? पन्द्रह लाख रुपया का कोष—निश्चय ही सच्चे कार्यकर्ता को और ऐसे नेता को जिसका अखिल भारतीय क्षेत्र हो—आयुर्वेद के सर्वाधिक हितवाली विद्यालय-योजना के लिए—एकत्र कर लेना कोई कठिन बात नही है!

बशर्ते कहने वाला कोरी बात न बनाता हो और वास्तव म काय करन की इच्छा रखता हो!

महासम्मेलन के पूर्वाध्यक्ष वद्यराज श्रीयत वाई० पाथनारायण पण्डित महोदय न तो विगत बगलोर महा सम्मेलन के अवसर पर अभी कुछ ही महीन हुए इसी वष यह घोषणा अपन एक भाषण म की थी कि सस्था के लिए एक लाख रुपया एकत्र करके दूगा। एसी उत्साहवद्धक घोषणाओ से किस दुबल आयवद प्रमी का सीना फल कर छत्तीस इञ्च न हो जायगा? जिस समाज म एसे पुरुषार्थी हो जो अकेल एक एक लाख रुपया जटा कर सस्था को अमर जीवन देन का बता रखते हो उसकी अवस्था को कमजोर कहनवाल को तो दुनियावाल सरफिरा ही कहग। पर है तभी जब इन घोषणाओ म सचाई का ब-वास हो पण्डित पाथनारायणजी को अपना प्रतिज्ञात घोषणा को अमल कर दिखान का इससे अच्छा अवसर कब आयगा?

यह कोई आवश्यक नही कि सब लोग काय की होड महाविद्यालय पर ही कर। महासम्मेलन को समद्ध बनाना भी आवश्यक है विशषकर एसी दशा म जब कि उसकी रोकड घाट म जा रही हो सगठन विस्तार करके यह कलक भी धो डाला जाना चाहिए कि इतन विशाल देश के विस्तत वद्य-समाज की एकमात्र राष्टीय सस्था की सदस्य-सख्या केवल डढ हजार पण्डित वाई० पाथ नारायणजी जब पहली बार सम्मेलनाध्यक्ष बन तब तो अरसट्ट म बन गय थ परन्तु जब दूसरी बार बाकायदा महासम्मेलन के सभापति निर्वाचित हुए तो अपन अध्यक्षीय भाषण म उन्होन बडी ही करुणा-पूवक महासम्मेलन की इस सदस्य सख्या पर क्लिष्ट क्लश व्यक्त किया था और उस एक वष म ही महासम्मेलन के एक हज़ार आजीवन और दस हज़ार साधारण सदस्य—वह भी कम-से-कम—बना डालन की इच्छा व्यक्त की थी तब की बात जान दीजिए अब सही और लोग महाविद्यालय के लिए काय कर तो पण्डित वाई० पाथनारायणजी महासम्मेलन की सस्था और सगठन को समद्ध और दढतर विस्तत बनान के काम को अपन हाथ म ल ल इसी प्रकार मिल-बाट कर यदि काय की यह होड चल जाय तो भगवान जान आयुवद का झण्डा हिमालय की त्रिकोणाकार चोटी—एवरेस्ट—पर दिखाई देगा

और हमारे महासम्मेलन के पचवर्षीय प्रधान मन्त्री भाई वामनराव दीनानाथ वद्य जी कह चुके ह कि उनका तो जन्म और जीवन ही आयवद के लिए है। इस जीवन तक अपण कर दन वाल त्यागी महापुरुष से आयर्वेद के लिए और क्या मांगा जाय? बड सकोच की स्थिति है। फिर भी एक चीज मागी जा सकती है और वह है आयुवद के लए अर्पित जीवन का तदथ उपयोग। अभी पिछल अधिवशन पर उन्होन अपन गत वर्षों के काय का विवरण बताते हुए कहा था कि उनके कायकाल म दक्षिण का सम्पूण वद्य समाज महासम्मेलन के झण्ड के नीच एकत्र हो गया है और उत्तर के वद्यो के साथ कन्धा लगाकर आयवदोत्थान के लिए काय करन का तत्पर है। इतना बडा कम एक बार शायद अगस्त्य मुनि न किया था जिनको दक्षिण का माग दन के लिए हिमालय के दादा विन्ध्याचल को अपना उठा हुआ मस्तक झका लना पडा था—और उनके लौटन की प्रतीक्षा म वह मस्तक आज तक झका हुआ है। तो वद्य वामनराव भाई इतना तो कर ही डाल कि उनके झण्ड के नीचे एकत्र हुआ विशाल दक्षिणाय वद्य समदाय केवल मह न देखता रह उस झण्ड म हाथ भी लगा उठ। प० श्री पाथनारायण जी के साथ मिलकर वद्य वामनराव भाई सगठन विस्तार-काय की होड म अच्छा याग दे सकते ह। हम चाहते ह कि व भी वचनो का निर्वाह करन म अब आगा पीछा न देख

स्वाभाविक है कि जब यह प्रधान लोग यथाथ काय की होड म सत्य पर आधारित सक्रियता को लकर जुट पडग तो इनकी आलोचना करन वाल भी इनके साथ दौड लगा यग और दानो ओर से आयवद का हित होगा वद्य समाज का भला होगा। प्रकट रूप म इमस बढकर दूसरा कोई लक्ष्य न इनका है न उनका विवाद अपवाद आरोप प्रत्यारोप का इससे बढिया काई फसला नही

आलोचक लोग जो कहते ह कि इसन कुछ नही किया उसन कुछ नही किया—व स्वय भी अब कुछ करके ही दिखाव तब तो बात है यह हष की बात है कि आलोचक वग के एकाध व्यक्ति न आग बढकर क्रियात्मक कदम बढा भा दिया है जा नतवग और महासम्मेलन के पदासीन दल के लिए अच्छी खासी चनोती है

आयवद जगत का यह कत्तव्य है कि वह राजनीतिज्ञो और राजदर्शियो की इस क्रियात्मक होड के लिए उपयक्त वातावरण बनाव और दोनो को अपना निस्पह उन्मक्त सहयोग देव उसके सहयोग का मन्य आन वाली पीढिया आकगी। साथ ही वद्य जगत इस बात की परख भा करे कि काय की इस होड म कौन पीछ हटता है और कौन ढढ-खोजकर बहान बनाता है। जो लोग अबतक आकाश-पाताल की बात करके दिखाऊ काय करन का केवल ढोग करते रह ह उनके लिए यह परीक्षा का अवसर है। यदि व इस काम के अवसर पर भी काय करन के लिए उपयुक्त योजना और अनकल स्थिति के होते हुए भी कुछ करन पर आमादा नही होते तो उनको धिक्कार का अधिकार सम्पूण वद्य समाज को होगा।

आयवद हित के कार्यो के लिए यह स्वस्थ प्रतियोगिता सब प्रकार से कल्याणकर होगी। सभीश्वर्गों और सभी दलो के वद्य इसम व्यक्तिश या दलश सोत्सह भाग लव। तो आइए अखाडा तयार है!

उदावर्त या कब्ज

वैद्य रणजितराय

उदावर्त एक इन्द्रिय-दोष

साख्य दशन नाम से दर्शन ग्रन्थ उपलब्ध होने पर भी महामुनि ईश्वरकृष्णरचित बहत्तर कारिकाओ मे उपनिबद्ध **साख्यकारिका** नामक ग्रन्थ साख्य सिद्धान्त का प्रधान मूल ग्रन्थ माना जाता है। उपलब्ध साख्य दर्शन कपिलमुनि का नही है यही आप्तो का मत है। इस साख्यकारिका पर सवतन्त्र-स्वतन्त्र वाचस्पति मिश्र की **साख्य तत्त्वकौमुदी** नामक टीका स्वाध्याय प्रवचन मे सर्वोपरि विश्रुत है। साख्यकारिका की उनचासवी कारिका मे **बुद्धि की अठाईस अशक्तिया** बताई है। इनके प्राथमिक भेद दो है—बुद्धि की **स्वतन्त्र अशक्तिया** तथा इन्द्रियो की अशक्ति के कारण हुई बुद्धि की **परतन्त्र अशक्तिया**। इन्द्रिया ग्यारह सुविदित है—पांच ज्ञानेन्द्रिय, पाच कर्मेन्द्रिय तथा एक उभयेन्द्रिय मन। बुद्धि की परतन्त्र अशक्ति की कारणभूत इन्द्रियाशक्तियाँ भी इन्द्रियो के ग्यारह होने से समग्र ग्यारह है। कारिका के आरम्भ मे इनका उल्लेख करते ईश्वरकृष्ण कहते है—**एकादशेन्द्रियवधा** इन्द्रियो का वध या अशक्ति के प्रकार ग्यारह है।

ग्यारह इन्द्रियाशक्तियो की गणना तन्त्रान्तर का वचन उद्धृत करते वाचस्पति मिश्र ने इस पद्य मे की है—

बाधिर्यं कुष्ठिताऽन्धत्व जडताजिघ्रता तथा।
मूकता कौण्यपगुत्वे क्लैब्योदावर्तमन्दता ॥

साख्यतत्त्वकौमुदी सहित साख्यकारिका की विद्वत्तोषिणी टीका मे **श्री बालराम उदासीन** ने कहा है कि किस किस इन्द्रिय का दोष होने से उसकी अशक्ति होकर कौन-कौन-सी बुद्धि की अशक्ति होती है। तदनुसार—**बाधिर्य श्रोत्रदोष**—प्रथम इन्द्रियाशक्ति बधिरता कर्णदोष से होती है। **कुष्ठिता त्वग्दोष**—स्पर्शनेन्द्रिय रूप त्वचा की दुष्टि होकर स्पर्शग्रहण की अशक्ति होती है। इसे कुष्ठिता कहते है। इस अर्थ मे यह सज्ञा आयुर्वेदाभिमत कुष्ठिता (कुष्ठ रोग पीडित होना) से कुछ भिन्न है। **अन्धत्व नेत्रदोष**—चक्षुरिन्द्रिय की दर्शनाशक्ति या अन्धता नेत्रदोष से होती है। **जड़ता रसनादोष**—जिह्वा—जाड्यरूपो येनाऽऽस्वादविघातादि—जडता का अर्थ है जिह्वा या रसनेन्द्रिय की दुष्टि या अशक्ति जिसके कारण मधुरादि रसो और रुचि का नाश इत्यादि विकृतियाँ होती है। **अजिघ्रता घ्राणदोष**—अजिघ्रता घ्राणन्द्रिय के दोष से होती है जिसमे घ्राण का नाश आदि विकृतियाँ होती है। **मूकता वाग्दोष**—मूकता वागिन्द्रिय की दुष्टि से होती है। इसमे वाणी का सग (अप्रवृत्ति) साद (अल्प प्रवृत्ति) आदि विकृतियाँ होती है। **कौण्य कुणित्व कुणिभावो हस्तदोष**—कौण्य या लूलापन हस्तदोष से—हाथ मे विकृति होने से—होता है। **पगुत्व पाददोष**—पगुता या लङ्गडापन पाद की विकृति से होता है। **क्लैब्य प्रजननेन्द्रिय दोष**—क्लीबता नाम मैथुनाशक्ति तथा प्रजोत्पादनाशक्ति (निष्फलत्व) प्रजननेन्द्रिय की दुष्टि से होता है। **उदावर्त पायु दोष**—उदावर्त पायु या मलोत्सजन की इन्द्रिय के दोष से होता है। **मन्दता मनोदोष**—बुद्धि की मन्दता अन्त करण की दुष्टि से होती है।

यहा निर्दिष्ट उदावर्त का अर्थ इतर इन्द्रियो के कर्मों के नाश के सदृश मल की अप्रवृत्ति या अल्प प्रवृत्ति ही ग्राह्य है। उपलब्ध आयुर्वेदीय सहिताओ मे भी यह सज्ञा इसी अर्थ मे व्यवहृत है। इसका पुन प्रचार करना चाहिए। प्रश्न केवल पुरानी सज्ञा के प्रचार का नही है। जैसा कि शीर्षक से विदित होगा इस सज्ञा का शुद्धार्थ सामने रखा जाए तो इसके प्रसिद्ध पर्याय कब्ज' के विषय मे आयुर्वेदीय दृष्टि विशद होगी। और ये पक्तियो इसी आशय से लिखी जा रही है।

आयुर्वेदीय दृष्टि से अधिक विचार करने के पूर्व इस वस्तु का उल्लेख करना उचित प्रतीत होता है कि आयुर्वेदीय वाङ्मय के प्रतिसस्कार के लिए हमें कितनी दूर-दूर तक दृष्टि दौडानी होगी। **शास्त्र के स्वरूपावबोध के लिए जैसे आयुर्वेदीय तथा आयुर्वेदेतर वाङ्मय का अवगाहन आवश्यक रहेगा, वैसे विशेषतया चिकित्सा के परिज्ञानार्थ आदिवासियों तथा वृद्ध ग्रामवासियो और नगरवासियो का सपर्क साधकर उनसे** निदान—**चिकित्सा के गूढ सिद्धान्त और द्रव्यों की प्राप्ति**

करनी होगी। कारण, यह निश्चित नही है कि वर्तमान उपलब्ध सहिताओ मे आयुर्वेद सपूर्ण समा गया है। क्योंकि, एक तो उपलब्ध सहिताएँ मूल तथा सपूर्ण होने का कोई प्रमाण नही है। दूसरे, ये मूल तथा सपूर्ण हो तो भी यह निश्चित नही कि, किसी ग्रन्थ मे उस काल जितना विषय प्रचलित रहा हो उसका समग्रतया सदोहन हो ही जाए। कि बहुना, जैसा कि **कुमारिल स्वामी** ने कहा है किसी प्रचलित आचार (प्रथा)-विशेष को देखकर उसकी पोषक कोई स्मृति होगी ही, और स्मृति होगी तो उसकी मूलभूत कोई श्रुति भी होनी ही चाहिए, इस प्रकार तर्क किया जाता है—**आचारात तु स्मृति, ज्ञात्वा श्रुतिर्विज्ञायते तत**। इसी प्रकार कोई प्रचलित या अप्रचलित निदान, चिकित्सा आदि वृद्धजनो से सुनकर यह सभावना की जा सकती है कि मूल आयुर्वेद मे उसके लिए कोई प्रमाण रहा होगा। अथ च, वर्तमान मे आयुर्वेद के प्रतिमस्करण और परिवृहण के लिए इनका ऊहापोहपूर्वक दोहन और सदोहन हमे करना होगा। गम्भीर अध्ययन से विदित होगा कि इन आचारो मे कई वर्तमान उपलब्ध सहिताओ मे भी किसी न किसी रूप मे प्राप्त हो सकते है।

डल्लन कृत अर्थ

उदावर्त प्रतिषेध अध्याय (सुश्रुत, उत्तर तन्त्र ५५), के आरम्भ मे ही टीकाकार डल्लन ने उदावर्त शब्द की व्युत्पत्ति दी है। अर्थावबोध मे सहायक होने से लेख का आरम्भ उसी से करना योग्य प्रतीत होता है। वह कहता है—**उत् ऊर्ध्वं वात-विण्मूत्रादीनाम आवर्तो भ्रमण यस्मिन् रोगे स उदावर्त। अन्ये पुरीष वायुना वर्तुलीकृतमुदावर्तं मन्यन्ते।** अर्थात उदावर्त शब्द के दो अर्थ है। अधिक समत किवा डल्लनाभिमत अर्थ यह है।—जिस रोग मे अधोवायु, पुरीष, मूत्र, आर्तव आदि का अधोगमन रुक जाता है तथा विलोम गति होकर उनका उत्—ऊर्ध्व या विपरीत दिशा मे **आवर्त**—भ्रमण होता है उसे उदावर्त कहते है। उदावर्त का अन्य आचार्यों को अभिमत अर्थ यह है।—**वर्त** शब्द का अर्थ है वर्तुलीभाव, गोल हो जाना। **आ** का अर्थ है समन्तात्—चारो ओर से। जिस रोग मे वातप्रकोपवश पुरीष का इस प्रकार वर्तुलीभाव हो जाए—वह शुष्क होकर गाँठो के रूप मे परिणत हो जाए उसे उदावर्त कहा जाता है।

यद्यपि आगे मूल ग्रन्थ मे उदावर्त का अन्य भी अर्थ दिया है तथापि उसका **अधिक प्रसिद्ध अर्थ** प्रस्तावना के रूप मे डल्लन ने उल्लिखित पदो मे दिया है। उससे इसका वास्तविक अर्थ जानने मे सुगमता होगी। अधिक लिखने के पूर्व सक्षेप मे इस विषय का विचार कर ले। सुश्रुत ने उदावर्त शब्द का व्यवहार दो अर्थों मे किया है (१) तत्तद् वेगो का अवरोध तथा उससे हुई विकृतियाँ, एव (२) ऊपर डल्लन ने व्युत्पत्ति द्वारा इसका जो अर्थ बताया है वह, जिसे जैसा कि व्युत्पत्ति से स्पष्ट ज्ञात होगा, वर्तमान मे 'कब्ज' कहा जाता है।

चरक ने वेगावरोध और उदावर्त दो पृथक् रोग माने है तथा उनका पृथक् दूर-दूर उल्लेख किया है। वेगावरोध का सूत्र स्थान के सातवे अध्याय मे तथा उदावर्त का चिकित्सास्थान के छब्बीसवे अध्याय मे (त्रिमर्मीय अध्याय मे)। वैद्यो मे भी उदावर्त शब्द वेगावरोध के अर्थ मे उतना प्रचलित नही, परन्तु उसका उल्लिखित अर्थ मे व्यवहार भी इन दिनो रहा नही है। वेगावरोध उदावर्त का व्याकरण-सिद्ध अर्थ भी प्रतीत नही होता। तथापि उदावर्त शब्द का व्यवहार सुश्रुत जीने वेगावरोध के लिए भी किया है उसका एक ही कारण कहा जा सकता है कि वेगावरोध उदावर्त (कब्ज) के कारणो मे प्रमुख है। हेतु और हेतुमान् (कार्य-कारण) मे अभेद मानकर उदावर्त का वेगावरोध अर्थ मे भी स्वीकार सुश्रुत ने किया है। नवीनो ने, विशेषतया निसर्गोपचारको ने, कब्ज का कारण वेगावरोध (नग्लेक्ट) बताया है तथा उसे अधिकाश रोगो का कारण वे बताते है। अच्छा हो, नवीन लेखक उदावर्त शब्द का व्यवहार 'कब्ज' के ही अर्थ मे मर्यादित करे।

उदावर्त के प्राथमिक भेद

उदावर्त के अर्थ के विषय मे अपना स्थिर मत ऊपर दर्शा कर भी सुश्रुत के पदो मे उदावर्त के दोनो अर्थ विषय की पूर्ति के प्रयोजन से दिए जाते है।

उदावर्त प्रतिषेधाध्याय के आरम्भ मे सुश्रुत कहते है—पुरीषादि अधोमार्ग से प्रवृत्त मलो एव उद्गारादि ऊर्ध्व मार्ग से प्रवृत्त मलो के वेगो का धारण, पुरुष अपने जीवन की रक्षा चाहता हो तो उसे, कभी न करना चाहिए।

न वेगान्धारयेत् प्राज्ञो वातादीनां जिजीविषु ।

इतना भीषण परिणाम वगो के अवरोध का होता है। (राजयक्ष्मा के चार कारणो मे एक वगावरोध है। इस सिद्धान्त को यहा स्मरण किया जा सकता है)। आग आचाय न पुरीष मूत्र क्षुधा तृष्णा प्रभृति त्रयोदशविध वेगावरोधज उदावर्तो का नाम निर्देश कर उदावत के अन्य भद की प्रस्तावना करते कहा है—

अपथ्यभोजनाच्चापि वक्ष्यते च तथाऽपर ॥

तात्पय—उदावत का एक अन्य भी भद होता है जिसका कारण सक्षप मे अपथ्य भोजन होता है। चरक न इस अपथ्य भोजन जन्य उदावत का ही उदावत नाम दिया है। सुश्रुत न वगावराध जन्य उदावर्तो के यथाक्रम लक्षण तथा चिकित्सा देकर आग अपथ्य भोजनजन्य उदावत के कारण तथा लक्षण दिए हैं। सुश्रुत के इन वचना तथा चरक के प्रासगिक वचनो को दृष्टि मे रखकर उदावत के कारणो और लक्षणो का विचार अब प्रस्तुत किया जाता है।

अपथ्य भोजन जन्य उदावर्त

पहल दोनो तन्त्रो मे कह अपथ्य भोजन तथा अपथ्य विहार का स्वरूप एव रोगजनक सप्राप्ति देखे —

कषायतिक्तोषण रूक्षभोज्यै सधारणाभोजनमैथुनैश्च।
पक्वाशये कुप्यति चेदपान स्रोतास्यधोगानि बली स रुद्धा ॥
करोति विण्मारुतमूत्रसग क्रमाद् उदावतमत सुघोरम् ॥

च० चि० २६।५

वायु कोष्ठानुगो रूक्षं कषायकटुतिक्तकं ।
भोजनं कुपित सद्य उदावर्तं करोति हि ॥
वातमूत्रपुरीषासृक्कफमेदोवहानि वै ।
स्रोतास्युदावर्तयति पुरीष चातिवर्तयेत[1] ॥

सु० उ० ५५।३७ ३८

चरक न अपथ्य भाजन के साथ अपथ्य विहार वगावरोध आदि की भी उदावत के कारणो मे गणना की है और वह प्रत्यक्षाविरुद्ध एव ग्राह्य ही है। अब इन पद्यो का अर्थ देखिए।—

पुरुष कषाय कटु और तिक्त रसवाल तथा रूक्ष (स्नहरहित) भोजनो का उपयोग करे किंवा अनशन या प्रमिताशन करे, वेगो का धारण करे या अति मैथुन करे तो इससे उसका कोष्ठगत वायु अपान कुपित होता है तथा उदावर्त रोग को उत्पन्न करता है। इसके लक्षणो को दो भागो मे विभक्त कर सकते हैं १—पुरीष का अतिवर्तन[1] पुरीष ऊँट, बकरी आदि प्राणियो के पुरीष के सदृश वर्तुलाकार हो जाना। २—वात, मूत्र पुरीष, रक्त (आतव) कफ और मद इनके स्रोतो का उदावर्तन। इस विकृति का अथ यह है कि इन मलो की अपन अपन मार्ग से जो स्वाभाविक शुद्धि होती रहनी चाहिए वह नही होती उसका सग हो जाता है। इतना ही नही इनकी गति विलोम हो जाती है। जो स्रोत अपन वाह्य द्रव्यो का अधोवहन करते थ व अब वायु की विगुणता के कारण वाह्य द्रव्यो का ऊर्ध्व वहन करन लगते हैं। वात मत्र तथा पुरीष के स्रोतो का इस प्रकार ऊर्ध्ववहन होन से सक्षप मे इनके वगावरोध होन वाल परिणाम होते हैं। विशष मे प्राय समग्र रोग इन मलो की विलोमगति से होते हैं। इनका अधिक उत्तम विवरण आचार्यो न सहज अश से होनवाल रोगो की सप्राप्ति मे दिया है। उदावत से होन वाल रोगो को सम्यक् समझन के लिए इस प्रकरण का परिशीलन भी आवश्यक है। इसकी अधिक उपयोगिता तो व्यवसाय मे चिकित्सा की शुद्धि की दृष्टि से है। कफवह तथा मदोवह स्रोतो से यहा क्या अभिप्रन है तथा इनका अधोवहन और ऊर्ध्ववहन क्या होता है यह विषय मुझ स्पष्ट अवगत नही हुआ है। कोई विद्वान इस पर प्रकाश डालकर कृताथ करे। हाँ, प्रधान स्थान आमाशय तथा उर मे स्थित कफ पर अवरोध-वशात कुपित वायु का प्रभाव होकर शरीर मे कफ की भी सचिति और तज्जन्य विकृतिया होती हैं। यह विषय भी हम सहज अशो क उपद्रव एव उनकी सप्राप्ति क प्रसग मे दखेग। शष आतववह स्रोतो के उदावतन का अर्थ है उदावर्ता योनि नामक शास्त्रोक्त रोग का आविर्भाव, जिसक लिए कष्टार्तव यह अशास्त्रीय सज्ञा रूढ हो गयी है। इसक लक्षण सुप्रसिद्ध है—आतव क दिनो मे कष्ट, आर्तव की अल्प प्रवृत्ति प्रवृत्ति क पश्चात् सुखलाभ। परन्तु, उदावर्तन या आर्तव का ऊर्ध्ववहन होन का एक अन्य भी स्मरणीय परिणाम होता है। जैस पुरीष और अधोवायु का अवरोध होकर ऊर्ध्ववहन होन स स्वय पुरीष एव वायु की प्रवृत्ति

१—कोष्ठानुगो वायुरत्र अपान । समानतन्त्र दर्शनात्। उदावर्तयति उर्ध्वमावतयति, अधोवहानि स्रोतास्यूर्ध्ववहानि करोतीत्यर्थ । पुरीष चातिवर्तयेदिति उष्ट्रादि पुरीषवान् कठिन कुर्यादित्यर्थ । —डल्हन

१—अतिवर्तन का अर्थ अतिप्रवृत्ति भी होता है। अप्रसक्त होने से वह यहाँ ग्राह्य नही।

मुख से होती है, किंवा तदन्तर्गत द्रव्य शरीर मे प्रसृत हो मुख, श्वास आदि मे उनके गन्ध आदि का आविर्भाव होता है, वैसे आर्तव रक्त भी अधोमार्ग से प्रवृत्त न होता हुआ मुख, नासिका आदि विमार्गो से प्रवृत्त होता है। ऐसी स्थिति मे इस सप्राप्ति को लक्ष्यमे रख सुचिकित्सक मलवात-प्रवर्तन द्वारा अपान का अनुलोमन एव आर्तव-प्रवर्तक उपचारो द्वारा आर्तव का अधोवहन कर सिद्धिलाभ करते है। वायु का ऊर्ध्ववहन होकर ऊर्ध्वमार्ग से उद्गार के रूपमे प्रतिप्रवृत्ति के लिए ऊर्ध्ववात शब्द प्रसिद्ध है। तद्वत् आर्तव के ऊर्ध्ववहन का भी समावेश उदावर्ता योनि मे करना प्रत्यक्षादि प्रमाण से सिद्ध है।

थोडा ठहर कर आर्तव के उदावर्तन का यह स्वरूप छात्रोपयोगी होने से शास्त्रीय दृष्टि से देख ले।

राजयक्ष्मा मे रक्त की प्रवृत्ति के दो प्रकार चरकाचार्य ने बताए है।—सकफ रक्तप्रवृत्ति तथा केवल रुधिर प्रवृत्ति। इनमे सकफ रक्त प्रवृत्ति की सप्राप्ति बताते महामुनि कहते है—

अभिसन्ने शरीरे तु यक्ष्मिणो विषमाशनात्।
कण्ठात् प्रवर्तते रक्तं श्लेष्मा चोत्क्लिष्ट सचित।

च चि ८।५७

प्रस्तावना में टीकाकार कहते ह—**सरक्त कफमस्यतीति यदुक्तं तल्लक्षण विवृणोति—अभिसन्न इत्यादि।** परन्तु पूर्व वाक्यो में 'सरक्त 'कफमस्यति' यह वचन मेरे देखने मे नही आया। प्रत्युत—**क्षणनादुरस कासात् कफ ष्ठीवेत सशोणितम** (च चि ८।१८)—यह वाक्य आया है। इसमे विशेष यह कहा है कि कास के कारण छाती का क्षणन होता है जिससे कफ के साथ रक्त की भी प्रवृत्ति होती है। **क्षणन या क्षत होना इसका अर्थ है** मास का क्षत होकर किंवा सिराओ का क्षत होकर उनमे स्थित **रक्तधरा कला का क्षत** होना। रक्तधरा कला मास के अन्तर्गत रहती है। **यह** मासपेशी आदि अवयवो के रूप म रहता है किंवा सिरा (रक्तवह अवकाश—धमनी और सिरा दोनो) को मण्डलाकार वेष्टित करके रहता है। देखिए कलाओ के प्रकरण मे सुश्रुताचार्य कहते है—

द्वितीया रक्तधरा मांसस्याभ्यन्तरत। तस्यां शोणितं विशेषतश्च सिरासु यकृत्प्लीह्नोश्च भवति।

वृक्षाद्यथाऽभिप्रहतात् क्षीरिण क्षीरमावहेत्।
मांसादेव क्षतात् क्षिप्र शोणित सम्प्रसिच्यते॥[1]

सु० शा० ४।१०-११

अर्थात्—कलाओ मे द्वितीय रक्तधरा नामक है। यह मास के अन्तर्गत (मास से वेष्टित) होती है। इसमें रक्त रहता है। यह रक्त विशेषतया सिराओ में तथा यकृत्प्लीहा मे रहता है। जैसे क्षीरी वृक्ष पर आघात हो तो उसमे से क्षीर का स्राव होता है वैसे रक्तधरा कला को वेष्टित करनेवाला मास क्षत हो जाए—कट जाय—तो उसमे से रक्त की स्रुति होती है।

किं बहुना, रक्षक मासधातु के कट जाने से रक्तधरा कला भी क्षत हो जाती है। सो **क्षत का शास्त्रशुद्ध मुख्यार्थ रक्तधरा कला की क्षति** ही समझना चाहिए। **अतएव** सस्कृत वाङ्मय मे रुधिर को क्षतज ही कहा है। सो, निदान-चिकित्सा के प्रकरणो मे जहाँ भी रक्तदर्शन का उल्लेख हो वहाँ सुश्रुत शारीर के इस उल्लेख के आधार पर निज किंवा आगन्तु कारणो से रक्तधरा कला की क्षति होने का ही ग्रहण करना चाहिए। निज का अर्थ है पित्त और रक्त का प्रकोप तथा आगन्तुक कारण से तात्पर्य है आघातादि का।

सो, रक्त जब उर से आता है तो साहस या कास के वेग के कारण छाती मे स्थित रक्तधरा कलाका क्षणन (क्षति) होता है। छाती कफ का स्थान होने से कफ भी कास के वेग के साथ प्रवृत्त होता है। इसे **सकफ शोणित प्रवृत्ति** कहते है। कफ की प्रवत्ति का कारण यह होता है कि विषमाशन के कारण रोगी का शरीर **'अभिसन्न'** होता है—सर्व प्रकार से दुर्बल और शिथिल होता है। परिणामतया, स्वस्थावस्था मे तो उर प्रदेश या प्राणवह स्रोतो में कफ जैसे-जैसे बनता जाता है वैसे-वैसे वह ऊर्ध्वमार्ग से प्रवृत्त होता रहता है, परन्तु यक्ष्मी पुरुष का शरीर अति दुर्बल होने से कफ की यह समभाव से प्रवृत्ति उसके शरीर में होती नही। वह सचित होता रहता है। सचय के कारण उसका उत्क्लेश होता है और कास के वेग से उसकी बहि प्रवृत्ति होती है। इसमे रक्त का भी ससर्ग रहता है।

राजयक्ष्मा में कफ की प्रवृत्ति के विषय मे भी कुछ ज्ञातव्य विशेष होता है। वह यह कि, रसधातु का अपना

१—संप्रसिच्यते प्रस्रवतीत्यर्थः—डल्हण।

स्थान हृदय कफप्रधान दोषो क कारण मन्दीभत होता है। उसकी एव व्यान वायु क विक्षपणात्मक व्यापारो स रस रक्त तथा मारुत को सब शरीर म सचारित करन वाली सिराम्रो की गति भी मन्द होती है। इसी को यक्ष्मा में दोषो द्वारा हुम्रा स्रोतो का म्रवरोध समझना चाहिए। रसवह स्रोतो क रोध का परिणाम यह होता है कि रस की गति म्रनुलोम—सर्वाङ्ग म—न होकर विलोम—विरुद्ध दिशा म—प्राणवह स्रोतो की दिशा म—छाती की म्रोर होती है। वि वधत पद्य म प्रयक्त वि उपसग द्वारा म्रग्ल पद्य म म्राचाय न इसा स्थिति का निरूपण किया है। बस म्रनलोम न गया हुम्रा विलोम होकर म्रपन स्थान में विपरीत दिशा म गया हुम्रा यह रस हा प्राणवह स्रोतो म म्राकर कफ क रूप म कास के वग से बाहर प्रवत्त होता है।

रस कफ क रूप म प्रवत्त होता है इस वचन का म्रथ यह है कि यक्ष्मा म इतर म्रग्नियो क सदश रसाग्नि भी मन्द होती है। परिणामतया जो म्रन्नरस रसधातु क परिपोषण क लिए उसक म्राशय म म्राता है उसका पूण पचन होकर रसधातु योग्य प्रमाण म बन नही पाता। कितु उसक मल कफ की ही निर्मिति म्रौर पुष्टि सविशष होती है। उसी प्रकार जस किसी रोगम जठराग्नि मन्द हो तो प्रसादभत म्रन्नरस म्रपन प्रमाण म नही बनता पुरीषादि म्रन्नमल ही म्रधिक मात्रा म बनते हैं। सो रसवह स्रोतो क रोध से रस विलोम होकर प्राणवह स्रोतो म म्राता है। रसधात्वग्नि की मन्दता क कारण उससे रसधातु की पुष्टि उतनी न होकर कफ की ही सविशष पुष्टि होती है म्रौर यह कफ जसा कि ऊपर कहा यक्ष्माक्रान्त पुरुष क शरीर क दुबल (म्रभिसन्न) होन स बाहर नही निकल पाता किन्तु स्रोतो म ही सचित होता है तथा सचय बहुत होन पर उसका उत्क्लश होता है

सचय क कारण म्रन्य मलो क समान इस कफ म भी कोथ होकर दौर्गन्ध्य म्रादि उत्पन्न होत ह। इसी कारण प्रवृत्त हुम्रा यह कफ म्रनक प्रकार का (बहुरूप) होता है। देखिए

रस स्रोतःसु रुद्धषु स्वस्थानस्थो विवधत।
स ऊर्ध्वं कासवगन बहुरूप प्रवतते॥

च चि ८।४३

यहाँ कफ को बहुरूप कहा है। उसका स्वरूप निर्देश कुछ म्रागे जाकर स्वय तन्त्रकार निम्न पद्य म करते है—

पिच्छिल बहुल विस्र हरित श्वतपीतकम।
कासमानो रस यक्ष्मी निष्ठीवति कफानुगम॥

च चि ८।५१

म्रर्थात—यक्ष्मी पुरुष म कास क वग स निष्ठयूत—प्रवृत्त—हुम्रा कफमिश्रित यह कफ पिच्छिल (तन्तुमान्) सचय क कारण प्रचुर मात्रावाला विस्र—दुर्गन्धयुक्त हरित श्वत तथा किंचित् पीत होता है।

धातुक्षय होकर फुफ्फुसो क घटक मास का क्षय होन से फफ्फुसो म वातप्रकोप का लक्षणभत सौषिय बढता जाए तो कफ क सचय क लिए उपयक्त म्रवकाश भी बढता जाता है तथा दौबल्य भी रोग स्वभाववश बढ जान से उस का सचय भी म्रधिक काल रहता है म्रौर कफ क प्रमाण म वद्धि दौर्गन्ध्य म्रादि विकृतिया म्रधिकतर होती जाती हैं। सौषिय वायु या धातुक्षय क लक्षणो म एक है (दखिए वात कलाकलीय म्रध्याय च सू १२)। फुफ्फुसो म होनवाली यह सुषिरता कविटी नाम से म्रग्रजी म प्रसिद्ध है म्रौर लोक म भी इसी नाम स ख्यात है। यह सुषिरता शरीर परमाणम्रो से लकर शारीर म्रवयवो म उत्तरोत्तर बढती हुई म्रनक नाम रूप तथा लक्षणो से म्रभिव्यक्त होती है। यह विषय विस्तारापक्ष होन से उस यही छोड कर मल विचार करता हू।

राजयक्ष्मा म सकफ रक्त की प्रवत्ति का विचार हुम्रा। इस रोग म रक्तप्रवत्ति का म्रन्य प्रकार **केवल रुधिरच्छदन** (केवल—कफरहित—रक्त का वमन म्रामाशय से प्रवृत्ति) है। इसकी सप्राप्ति दर्शाते चरकाचाय कहत है।—

रक्त विबद्धमागत्वान्मासादीन्नानुपद्यत।
म्रामाशयस्थमुत्क्लिष्ट बहुत्वात्कण्ठमति च॥[1]

च चि ८।५८

यक्ष्मा म रक्त क वहन क माग म्रवरुद्ध होत हैं। (स्रोतो क रोध का म्रथ दोष भद से भिन्न भिन्न होता है। इस विषय की चर्चा कभी-कभी इस पत्रिका म की गयी है।

१—कवलरुधिरच्छदनेन युक्त विवणोति—रक्त मित्यादि। विबद्धमागत्वादिति रक्तस्य मासाद्यभिगम यो मागस्तन्निरोधा मासादभिगच्छद्रक्त मासाशय एव कृता धिष्ठान प्रस्रवण जलमिव विबद्धमागत्वाद बहु भवति। बहुत्वनोत्क्लिष्ट द्वाराम्नरागमनात् कण्ठमति। एव रक्तस्य पोषकरसनासबधात क्षीयमाणस्यामाशय एव बहुत्व ज्ञयम। तन रक्तादीना च सक्षयात् इत्यनन रक्तक्षयो य उक्त स उपपन्न एव। —चक्रपाणि।

भविष्य मे प्रसगवश करेगे)। इस मार्गावरोध के कारण रक्तमासादि धातुओ मे उनके पोषणार्थ जा नही पाता। किन्तु रक्ताशयो मे ही सचित हो रहता है। यह रक्त अतिमात्र सचित हो जाता है तो आगे तो मार्गावरोध क कारण जा सकता नही, तत्-तत् आशय मे सचित हाता है। यह यदि आमाशय मे सचित होतो इसकाप्रमाण अतिशय होने पर जब इसका उत्क्लेश होता है—शुद्धि के निकटवर्ती द्वार-मुख के प्रति गति होती है—तो उस गति के वश कण्ठ में आकर मुख से बहि प्रवृत्त होता है।

यह स्थिति अशत रक्तपित्त मे होती है। उसमे भी रक्ताशयो—यकृत् और प्लीहा—मे रक्त को ले जानेवाल स्रोतो का मार्ग रुद्ध होता है। उसमे पित्त की दुष्टि आदि अन्य विकृतियाँ भी होती है। परन्तु मार्गावरोध तो राजयक्ष्मा में होनेवाले रक्तवमन के सदृश ही होता है। इस प्रकरण का तात्पर्य यह है कि जैसे राजयक्ष्मा का रक्त-वमन रक्त के मार्ग का रोध होने से होता है वैसे आर्तव के उदावर्त मे भी आर्तववह स्रोतो का मार्ग रुद्ध होने से यह आर्तव रक्त सार्वदेहिक रक्त में मिश्रित हो उसकी वृद्धि कर ऊर्ध्वमार्ग से प्रवृत्त होता है। चरक ने उदावर्त के उपद्रवो मे रक्तपित्त की भी गणना की है। उससे यथार्थ रक्तपित्त के समान आर्तव के उदावर्त से हुए रक्तपित्त का भी ग्रहण कर सकते है। अग्रेजी मे इसे विकारिअस मन्स्ट्रएशन कहा जाता है

रूक्षादि द्रव्यों से वायु के प्रकोप का प्रकार

आयुर्वेद के विद्यार्थी जानते है कि वायु की उत्पत्ति तृतीय अवस्थापाक मे पक्वाशय मे होती है। यह वायु शरीर मे प्रसृत हो पाँचो वायुओ की पुष्टि करता हुआ उन्हे समावस्था में रखता है तथा उनके द्वारा विविध प्राकृत कर्म कराता है। परन्तु जो रस या गुण वायु के पोषक कहे जाते है उनका—कषाय, कटु, तिक्त रस तथा रूक्ष आदि गुणो का—सेवन अतिमात्रा मे हो तो वायु की उत्पत्ति उसी हिसाब से अधिक होती है। इसके विपरीत जो मधुराम्ललवण रस तथा स्निग्धादि गुण वायु के शामक कहे जाते है उनका जितना ही प्रमाण अन्न-पान मे होता है उतने ही अश मे वायु की उत्पत्ति तृतीय अवस्थापाक मे न्यून होती है। (देखिए च चि १५। ६-११ पर —चक्रपाणि)

कटु, तिक्त, कषायादि रसो तथा रूक्षादि गुणो के अतियोग से पक्वाशय मे जिस वायु की उत्पत्ति होती है वह निराम होता है। परन्तु जठराग्नि के बल, अपनी प्रकृति, स्वस्थवृत्तोक्त आहार विषयक चर्या आदि का अति-क्रमण कर अन्नपान सवन करन से अजीर्ण हो कर अन्नपान का अन्नरस न्यून प्रमाण मे बनता है तथा मल ही अधिक बनते है। अन्नपान क मलो मे वायु भी एक होता है। यह वायु अन्नपान की आमता के कारण साम वायु होता है। आहार-विहार के स्वरूप-भेद को दृष्टि मे रखकर प्रथम प्रकार से वृद्ध वायु को अपतर्पणजन्य वायु भी कह सकते हैं तथा द्वितीय प्रकार से कुपित वायु को सतर्पणजन्य भी कहा जा सकता है। ये दोनों भेद जानने का प्रयोजन यह है कि ज्वरादि जिन रोगो मे वायु कारणभूत दोष हो तो लङ्घन का प्रतिषेध किया गया है वह निराम वायु पर ही घटित होता है। सतर्पणोत्थ साम वायु मे निरामता उत्पन्न होने तक लङ्घन विधेय होता है।

सक्षेप मे छ रसो के कर्म तथा विपाक दर्शाते हुए भी रसो के गुण-कर्म के उपसहार के रूप मे उनकी वातमूत्र-पुरीष पर क्रिया का ही निरूपण किया गया है। उसका मूल भी यही है कि पुरीषादि की सम्यक् प्रवृत्ति दोषो के साम्य तथा तन्मूलक आरोग्य का एव पुरीषादि की असम्यक् प्रवृत्ति तथा उमसे सर्वदोषो का प्रकोप होकर प्राय रोगो की उत्पत्ति का प्रधान हतु है। रसो तथा विपाको का कर्म इस दृष्टि से आलोचनीय है।

मधुरो लवणाम्लौ च स्निग्धभावात् त्रयो रसा ।
वातमूत्रपुरीषाणा प्रायो मोक्षे सुखा मता ।।

च सू २६-५६

मधुर, अम्ल और लवण रस स्निग्धस्वभाव होने के कारण प्राय पुरीष, मूत्र और वायु (तथा शुक्र) की सम्यक् प्रवृत्ति करात है। इसक विपरीत—

कटुतिक्तकषायास्तु रूक्षभावात् त्रयो रसा ।।
दु खाय मोक्षे दृश्यन्ते वातविण्मूत्ररेतसाम् ।।

च सू- २६।६०

कटु, तिक्त और कषाय ये तीन रस अपनी स्वाभाविक रूक्षता के कारण अधोवायु, पुरीष, मूत्र और शुक्र की प्रवृत्ति होने नही देते—उनकी प्रवृत्ति मे बल प्रयोग करना पड़ता है।

इस प्रकार रसो के गुणकर्म का सक्षेप मे निरूपण पुरीषादि की प्रवृत्ति पर उनकी क्रिया के निर्देश के रूप मे कर आगे विपाको का भी निरुपण इसी परिपाटी से करते तन्त्रकार कहते है—

(शेषाश पृष्ठ ६५८ पर)

आतुर परीक्षानुष्ठान विज्ञानीय

आचार्य विश्वनाथ द्विवेदी, बी० ए०, आयुर्वेदशास्त्राचार्य

चिकित्सक के सामन जब रोगी उपस्थित होता है अथवा रोगी-गृह मे जब चिकित्सक का आह्वान किया जाता है, तो सर्वप्रथम रोग के ज्ञान के लिए जो क्रिया की जाती है, उसको 'परीक्षा' या 'व्याधि-परीक्षा' कहते है।

परीक्षा का प्रयोजन

महर्षि चरक ने रोगी-परीक्षा का प्रयोजन निम्नरूप से व्यक्त किया है—

"परीक्षायास्तु प्रयोजनम् प्रतिपत्तिज्ञानम् प्रतिपत्तिर्नाम
यस्तु विकारो यथा प्रतिपत्तव्यस्तस्य तथानुष्ठान ज्ञानम्।'

अर्थात्—रोगी की परीक्षा का प्रयोजन व्याधि की प्रतिपत्ति का ज्ञान करना है। प्रतिपत्ति का सामान्य अर्थ है—जो विकार जिन अनुष्ठानो द्वारा समझा जा सके, उन सब अनुष्ठानो के प्रयोग का क्रमबद्ध ज्ञान होना। अत चिकित्सक का प्रथम कर्त्तव्य रोगी की परीक्षा करना और परीक्षानुष्ठानो का क्रमश प्रयोग कर व्याधि का निर्णय करना है। महर्षि चरक के मत से चिकित्सा कर्म में प्रवृत्त चिकित्सक के तीन प्रधान अनुष्ठान (कार्य) है, यथा —(१) रोग-परीक्षा (Diagnosis) (२) औषध (निर्णय) परीक्षा (Selection of Medicine) और (३) कर्म समारभ (Treatment)। चिकित्सक जब तक रोग-परीक्षा और औषध-निर्णय नही कर लता तबतक चिकित्साकर्म का वह समारभ नही कर सकता। इन तीनो विभदो के ज्ञानार्थ आयुर्वेद मे विशाल साहित्य उपलब्ध है। इनका क्रमबद्ध विवरण यहा दिया जा रहा है।

महर्षि आत्रय ने रोग निर्णयार्थ ४० साधनो के ज्ञान की व्यवस्था की है। इन्द्रिय स्थान का प्रथम अध्याय इनका विवरण देता है। पुन विमानस्थान मे दशविध करणादि परीक्षा का तथा उत्कल्पनीयाध्याय मे द्वादशविध परीक्षा का ज्ञान करने का विवरण मिलता है।

सुश्रुत ने भी सूत्रस्थान के आतुरोपक्रमणीय अध्याय ३५ मे एकादशविध और वाग्भट ने द्वादशविध परीक्षा का अनुष्ठान करने का निर्देश किया है। अत यह स्पष्ट है कि कम से कम १२ और अधिक से अधिक ४० अनुष्ठ्य परीक्षाविधियो का विवरण उपलब्ध है। यदि इन विधियो का क्रमश उपयोग किया जाय तो रोग परीक्षा के सम्बन्ध मे कुछ भी शेष नही रह जाता। इन रोग-परीक्षा, अनुष्ठानो का ज्ञान करने के लिए उनकी सज्ञाए क्रमश दी जा रही है।

सामान्य अनुष्ठान (द्वादशविध अनुष्ठान)

दूष्य देश वल कालमनल प्रकृतिवय।
सत्व सात्म्य तथाऽऽहारमवस्थाश्चपृथग्विधा।
सूक्ष्म सक्ष्म समीक्ष्यषा दोषौषध निरूपणे।
यो वर्त्तते चिकित्साया न स स्खलति जातु चित्।
(अ० हृ० सू० १२)

रोगी की परीक्षा के लिए कम से कम द्वादशविध परीक्षा अनुष्ठानो का ज्ञान होना चिकित्सक मात्र के लिए आवश्यक है। इनका सूक्ष्मरूप से विचार कर चिकित्सा कर्म मे प्रवत्त होनेवाला चिकित्सक कदापि विफल नही होता। निम्नलिखित सरणी से विविध सामान्य परीक्षाओ का ज्ञान निर्दिष्ट हो जाता है। अत एक साथ तुलनात्मक रूप मे द्वादशविध अनुष्ठानो का नीचे विवरण दिया जा रहा है।

चरक (द्वादश) उत्कल्पनीयाध्याय	चरक (दश) विमान स्थान	सुश्रुत	वाग्भट
दोष	प्रकृति	व्याधि	दोष
भषज	विकृति	भेषज	औषध
देश	सार	देश	देश
काल	सहनन	ऋतु	काल
वल	प्रमाण	वल	वल
शरीर	सात्म्य	देह	दूष्य
आहार	सत्व	अग्नि	अनल
सात्म्य	आहारशक्ति	सात्म्य	सात्म्य
सत्व	व्यायामशक्ति	सत्व	सत्व
प्रकृति	वय	प्रकृति	प्रकृति
वय		आयु	आहारावस्था
स्थानान्तराणि		वय	वय

१—रोगमादौपरीक्ष्येत ततोनतरमौषधम्,
तत कर्म भिषग् पश्चात ज्ञानपूर्वसमाचरेत।

यदि इन द्वादशविध परीक्षानुष्ठानो का ठीक ढग से क्रमबद्ध प्रयोग किया जाय तो रोग का सामान्य ज्ञान और साध्यासाध्य का भी सम्यक् ज्ञान हो जाता है। इनसे सन्निकृष्ट ज्ञान एव विप्रकृष्ट ज्ञान ((Immediate & Remote prognosis) हो सकता है। सन्निकृष्ट भेद मे देहलक्षण, देहप्रमाणलक्षण, देहस्पर, प्रकृति, सात्म्य व वय आदि प्रधान हैं। विप्रकृष्ट भेद मे व्याधि, भेषज, देह, वल आदि का ज्ञान होता है। परीक्षा सम्बन्धी विशिष्ट ज्ञान का जो विवरण चरक ने दिया है, उसकी पूरी जानकारी रोग, भेषज एव कर्म-निर्णय के लिए अत्यन्त लाभप्रद है। आधुनिक रोग-परीक्षा मे यह विवरण बहुत कम है। अतएव आयुर्वेदीय चिकित्सको को इसका सम्यक् ज्ञान होना अति आवश्यक है।

विशिष्ट परीक्षाएँ (अनुष्ठान)

चरक के इन्द्रिय स्थान अध्याय प्रथम मे विशिष्ट परीक्षाओ का विवरण दिया गया है। चरक का कथन है कि प्रत्यक्ष, अनुमानुपमान, देश—इन त्रिविध परीक्षाओ द्वारा निम्नलिखित परीक्ष्य विषयो की परीक्षा करनी चाहिए।

इन्द्रियार्थ परीक्षा—वण परीक्षा, स्वरपरीक्षा, गध परीक्षा, रसपरीक्षा, स्पर्शपरीक्षा।

ज्ञानेन्द्रिय परीक्षा—चक्षु परीक्षा, श्रोत्रपरीक्षा, घ्राण-परीक्षा, रसनापरीक्षा, स्पर्शनेन्द्रियपरीक्षा।

अन्य परीक्षाएँ—भक्ति-इच्छा, शौच, शील-सहजवृत्त, आचार, स्मृति, आकृति, वल, ग्लानि, तन्द्रा, आरभ-रोगारभ, गौरवम्-भारीपन, लाघवम्-हल्कापन, गुणपरीक्षा, आहार-परीक्षा, आहार-परिणाम, उपाय, अपाय, व्याधिपरीक्षा, व्याधिपूर्वरूप परीक्षा, वेदना, उपद्रवश्च, छाया च, प्रति-च्छाया, स्वप्नदर्शनम्, दूताधिकार, पथि औत्पातिकश्च, आतुरकुले भावावस्था, भेषज सवृत्ति, भेषजविकारयुक्ति, सत्त्वपरीक्षा।

इस प्रकार परीक्ष्य विषयो की परीक्षा प्रत्यक्ष, अनुमान, उपदेश द्वारा करनी चाहिए। यह परीक्षा दो प्रकार की है—(१) पुरुष सश्रयाणि और (२) पुरुषमनाश्रितानि। जो पुरुष या रोगी से सम्बन्धित है उनकी प्रकृतित परीक्षा एव विकृतित परीक्षा द्वारा तथा जो पुरुषातिरिक्त है, उनकी उपदेश एवं युक्तिपूर्वक परीक्षा करनी चाहिए।

आतुरचयनम् (Case taking)

विशेष परीक्षानुष्ठान में निम्नलिखित बातो की आवश्यकता होती है—

(१) नाम, आयु-व्यवसाय, स्थान, ग्रहणतिथि, विवाहित या अविवाहित, जाति और देश।

(२) रोगी की वर्त्तमान व्यथा (Complaint) पूर्ववृत्त (Previous illness))

(३) रोग प्रारभकाल (Duration) या आरम्भ (चरक के शब्दो मे)

(४) कुलगत इतिवृत्त (Family History)।

इस विषय में रोगी के माता-पिता, भाई-बहन तथा रोगी की सतानो का रोग-विवरण लेना होता है। उनका स्वास्थ्य, दीर्घायु, अल्पायु, मृत्युकालीन आयु इत्यादि का विवरण भी लिया जाता है।

(५) शारीरिक परीक्षा (ज्ञानेन्द्रियो की स्थिति और उनके विषय की परीक्षा)

(अ) नेत्र (Eye)–वर्ण स्थिति (colour) व रूप

(व) श्रोत्र (Ear)–श्रवण व स्वर (शब्द)

(स) घ्राणेन्द्रिय (Nose)–घ्राण (गध) (Smell)

(द) रसनेन्द्रिय (Tongue)–रसन-स्वादरस (Taste)

(ह) त्वगिन्द्रिय (Skin)–स्पर्श (Touch)।

इनके ज्ञानार्थ प्रत्येक इन्द्रिय की प्राकृत व विकृत स्थिति की परीक्षा करनी चाहिए।

मानसिक प्रभाव—रोगी के विषय की निम्नलिखित स्थितियो का ज्ञान भी जरूरी है—

सत्वम्—मन की स्थिति-शाति इत्यादि,

भक्ति—देव-द्विजाति-गुरु-पितृमातृ भक्ति,

शौच—शुद्धता सम्बधी (Cleanliness),

शील—चरितानुकारी (Charactar),

आचार—आचरण (Conduct) कैसा करता है,

स्मृति—स्मरण शक्ति कैसी है (memory),

मेधा—बुद्धि की स्थिति (Intellect),

ग्लानि—उदासी-आकृति-निरीक्षण-म्लानता (Depression)),

हर्ष—प्रसन्नता इत्यादि।

आकृति विज्ञान—आकृति-मुख की आकृति म्लान इत्यादि। सज्ञायुक्त है, विसज्ञ, मुमुर्षु है या दीर्घायु आदि। शारीर-प्रकृति (Nature), शारीरिक विकृति (Morbi-

dity), बल (Vitality), हर्ष (Exhilaration), रौक्ष्य (Dryness), स्नेह, तन्द्रा-निद्रा (Sleep), आरम्भ (Effort on set), गतिमानस्थिर-गौरव (Heaviness), और लाघव (Light) इस विषय के अन्तर्गत शरीर के कर्मेन्द्रियो की विकृति, ज्ञानेन्द्रियो की विकृति आदि सब का समावेश है।

विशेष परीक्षा

(क) आहार (Diet), विहार (Recreation), परिणाम-पाचन शक्ति परिज्ञान।

(ख) उपाय-रोगारम्भ (onset), अपाय-निवृत्ति (Disappearence)।

(ग) छाया (Lusture), प्रतिच्छाया (Reflection), स्वप्नदर्शन (Dreams), दूताधिकार (Behaviour of Doot), शकुन विचार (Omens) और भावान्तर परिज्ञान (Good & bad peculiarities)

विशिष्ट परीक्षा—पच निदान-व्याधि निदान (Cause of the illness, Etiology) व्याधि पूर्व रूप (Premonitary Symptoms) रूप (Symptoms) उपशय, सप्राप्ति (Pathology), वेदना (Pain) और उपद्रव (Complication)।

भेषज क्रिया—भेषज सवृत्ति, औषध निर्माण प्रकार भेषज विकार युक्ति, औषधि के गुण-दोष, प्रयोग, ज्ञान, (application of medicine & therapeuties)।

साध्यासाध्यता (Prognosis)।

प्राक कर्मानुष्ठानीय—(क) पूर्वरूप कालीन (ख) रूप कालीन (ग) व्याध्युत्तर उपद्रव (घ) अरिष्ट।

दोष अशाश कल्पना—ज्ञानेन्द्रिय प्रासगिक, कर्मेन्द्रिय प्रासगिक, सार्वदैहिक, स्थानीय, व्याधि असाध्य-लक्षण विविध व्याधि के असाध्य लक्षण।

चिकित्सा—सार्वाङ्गिक, पचकर्म (वमन, विरेचन, स्नेहन, स्वेदन, वस्ति, नस्य)।

स्थानिक—लेप-वध-अभ्यग स्वेद, कवल-गण्डू। अजन, पिण्डी, विम्लायन आदि।

औषधि साध्य, शस्त्रसाध्य-कर्मकार्य प्रारम्भ—पूर्वकर्म, पश्चात् कर्म।

परीक्ष्य—कारण—भिषक
करण—औषधि
कार्य—धातु साम्य
कार्यफल—सुख
अनुबध—आयु
देश—भूमि व आतुर
काल—आतुरावस्था-ऋतु
प्रवृत्ति—प्रति कर्म समारभ
उपाय—चतुष्पाद सपत सौष्ठव
उपाय विजय

विशेष परीक्षाएँ—दर्शन—पचेन्द्रिय प्रत्यक्ष
स्पर्शन—आत्रिक स्पर्श
प्रश्न—सधि सम्बन्धी विशेष प्रश्न।

विशिष्ट परीक्षाएँ—त्रिविध परीक्षण मे दर्शन व स्पर्शन के बाद कुछ विशिष्ट परीक्षाएँ की जाती है, जिनमें विशेष प्रकार के नाडी यत्र, एक मुख उपचतोमुख तथा सदश-ताल यत्रादिको का पृथक या मिश्रित के बने यत्रो का भी प्रयोग करते है—उनमे विशेष परीक्षाएँ निम्न है—ये परीक्षाएँ कुछ प्राचीन और कुछ आधुनिक है—यथा—

नेत्राणु दर्शक यत्र (Ophthalmoscope)
नासावीक्षण यत्र (Nasal speculum)
कर्ण वीक्षण यत्र (Aceral Speculum)
कण्ठ वीक्षण यत्र (Pharyngoscope)
स्वान्त दर्शन यत्र (Laryngoscope)
अत प्रणाली द क यत्र (Oesophagoscope)
आमाशय दर्शक यत्र (Gastroscope)
गुदावीक्षण (Rectal speculum)
गुदान्तक दर्शक यत्र
कर्ण श्रवण यत्र (Stethoscope)
रक्त निपीड मापनयत्र (B P Instrument)
नाडी दर्शक यत्र (Sphygmomanometer)
जिह्वा मापक यत्र (Tongue depressures)

अन्य परीक्षाएँ—मल परीक्षा, मूत्र परीक्षा, रक्त परीक्षा, (रक्तसार परीक्षा), मास परीक्षा, मेद परीक्षा, मज्जा परीक्षा, शुक्र परीक्षा नाडी परीक्षा, जिह्वा परीक्षा, त्वक परीक्षा, नेत्र परीक्षा और पित्त परीक्षा।

रोग परीक्षण क्रम विज्ञानीय-दर्शन विज्ञान

रोगी जब चिकित्सक के सामने उपस्थित होता है अथवा जब चिकित्सक को रोगी के घर पर चिकित्सार्थ

बुलाया जाता है तब रोगी की परीक्षा का अवसर आता है। अत चिकित्सक को रोगी की शरीर-स्थिति और रोगी के रोग की स्थिति की परीक्षा के लिए रोगी का परीक्षण आवश्यक होता है। इसकी तीन विधियाँ है—(१) दर्शन (Inspection), (२) स्पर्शन (Palpation), (३) प्रश्न (Interrogation)।

अत रोगी के पास पहुँचने पर सर्व प्रथम दर्शन विधि का प्रयोग करते है। इस दर्शन कर्म के लिए उपदेशत परीक्षा पहले लेते है। शास्त्रीय उपदेश, गुरु या आचार्य का उपदेश प्रथम प्रयुक्त होता है। उसके अनुसार प्रत्यक्ष अपनी चक्षुरीन्द्रिय द्वारा या यान्त्रिक सहयोग से दर्शन की क्रिया को करते है। पश्चात् इनके आधार पर अनुभव, अनुमान व सहारा लेते है।

दर्शन (निरीक्षण) परीक्षा

काय—शरीर को देखकर ये निम्न बाते ज्ञातव्य होती है।

(१) शरीर का आयाम (आयत या लम्बाई),

(२) शरीर का विस्तार—व्यास (चौडाई)

(३) परिणाह (घेरा)

इनका सम्बन्ध आयु की विभिन्न दशा में विभिन्न प्रकार का होता है। इनका निरीक्षण करके रोगी दीर्घायु-मध्यमायु-अधम आयु (अल्पायु) है—इसकी परीक्षा करते है।

काय की बनावट देखकर स्पष्ट समझ सकते है कि यह देवकाय, दैत्यकाय, लघुकाय (वामन) या किस प्रकार के काय का है।

स्वस्थकाय—(१) स्वस्थकाय की लम्बाई-चौडाई देश, जाति, वय के आधार पर विभिन्न होती है इसका ध्यान रखना चाहिए। (२) स्थूलकाय-कृशकाय या मध्यम काय का है अथवा (३) अतिदीर्घ, अतिह्रस्व, अतिलोम, अलोप अतिकृष्ण, अतिगौर, अतिस्थूल ((Plethoric Type), अतिकृश, (Pthisical Type) (४) भार—इसका सम्बन्ध भी आयु और ऊँचाई से होता है।

नोट—रोगी की ऊँचाई को वक्ष की परिधि से गुणनकर सत्रह का भाग करने पर शरीर का भार पौण्ड में ज्ञात होता है। यह नयी पद्धति है। **कर्ण**—कान को देखकर—अपस्मार व मस्तिष्क के रोग मे कान छोटे व चिपके, निर्बुद्धिता में कान लम्बे, वातरक्त के कर्णपाली में अम्ल संग्रह, कुष्ठ मे कर्णपाली का मोटा हो जाना इत्यादि।

शाखाएँ—(१) पदवाह की दीर्घता, पतलापन व अगुली के पर्व को बढा देखकर तथा वक्ष चपटा, गर्दन ऊँची, लम्बा शरीर—अवसन्नता कर सूचक है। (२) बाहु व पाद की लघुता, अस्थियो मे टेढापन, मेरुदण्ड झुका हुआ और धड मोटा होता है, यथा-फक्क रोग मे। (३) बाहु और पाद की लम्बी अस्थियो की शिरा पर मोटापन, यथा—आमवात मे।

धड या अंतराधि—उदर प्रान्त मे नीली नसो का दिखाई पडना। यथा जलोदर यकृतोदर-प्लीहोदर। उदर का बढ जाना, भीतर को धस जाना, उदर चर्म कृष्णवर्ण का झुर्रीदार दिखाई पडना।

आमाशय प्रदेश पर शोथ, अर्बुद का दर्शन, छूने म पीडा। यकृत् वृद्धि—प्लीहा-वृद्धि, ग्रहणी प्रदेश पर पीडा, पित्ताशय प्रदेश की कठोरता।

उर स्थल—शोथ युक्त लाल त्वचा का वक्ष मे दिखाई पडना (फुफ्फुस प्रदाह मे) पर्शुकाओ का उभर आना और मास का कम होना, हृच्छूल की दशा मे वक्ष पर हाथ रख दबाकर बैठना इत्यादि उर स्थल को देख करके तब विचार कर रोग निर्णय मे सहायता मिलती है।

आकृति—(अ) शरीर के विभिन्न अगो की बनावट के आधार पर पुरुष की शारीरिक मानसिक स्थितियो का ज्ञान होता है।

(ब) विभिन्न प्रकार के रोगो में अत्रो की आकृति मे विभेद हो जाता है। (१) दीर्घकाय (२) स्थूलकाय (३) क्षीणकाय कृशकाय।

गति—(Gait) रोगी की चाल को देखकर कई सस्थान के रोगो का ज्ञान होता है—विशेषकर वात-सस्थान मे नाडी-क्रिया हानिज रोगो का। अत रोगी को धीमी व तीव्रगति से चलाकर गति का अध्ययन करना चाहिए। खज, कलायखज, पगु, छाल, अवसन्नता आदि का ज्ञान शीघ्र हो जाता है। गृध्रसी, त्रिधारा, नाडियो के रोगो का भी ज्ञान गति देखकर होता है।

स्थिति—(Posture)—रोगी अपने रोग की स्थिति के अनुसार अपने को अच्छी स्थिति में रखने का प्रयत्न करता है। यथा श्वास और हृद्रोग में बैठने से आराम मिलता

हैं। फुफ्फुस और उसके आवरण शोथ म विपरीत (स्वस्थ) पाश्व से शोथ उदरशूल म रुग्ण प्रात दबाकर सोना इत्यादि। धनस्तम्भ म बाह्यायाम अतरायाम सन्निपात म शिरोलोठन गदन तोड बखार म गदन का टढा हो जाना इत्यादि। विभाग के अनसार कई रोगो का ज्ञान करते है—उध्वजत्रु प्रदेश।

शिर प्रदेश—शिर के आकार पर ध्यान देकर कई रोगो का ज्ञान होता है। यथा —जलशीष-पक्करोग अस्थिशोथ (osteiles deforms)।

लघुशिर वहतशिर—कुम्भवत शिर।

ग्रीवा—ग्रीवा के प्रदेश को देखकर गलगण्ड गण्डमाला मन्याशिरा महामातृमाशिरा (Jugular Vein) का स्पन्दन श्वास प्रणाली का स्थान अन्त प्रणाली की स्थिति।

नत्र—(१) नत्र देखकर प्राय कई रोगो का ज्ञान हो जाता है। तिमिर काय नीलिकाकाय (Cataract)।

(२) नत्र का वहि श्वसन गलगण्ड म अन्त श्वसन क्षय म अत प्रविष्ट जिह्वा (टढी) इत्यादि।

(३) अधोवम कला म रक्तस्राव—रक्तवर जीर्ण वक्क रोग कपालास्थिमग्न तीव्र मास म दिखायी पडता है।

(४) नील कृष्ण कातिहीन प्रनष्ट कुमारिका रोग की असाध्यावस्था म।

मख—मुख तथा मख के भीतर के अग तालु ओष्ठ काकल गलग्रंथि गलतोरण दतमास तदतदख करके रोगी के रोगो का ज्ञान करना। नीलिका लक्ष्यादि का ज्ञान।

—क्रमश

शषाश] उदावत या कब्ज [६५३ पृष्ठ का

शुक्रहा बद्धविण्मूत्रो विपाको वातल कटु।
मधुर सष्ट विण्मूत्रो विपाक कफशुक्रल॥
पित्तकृत सष्टविण्मत्र पाकोऽम्ल शुक्रनाशन॥
च सू २६।६१ ६२

कटुविपाक वातप्रकोपक होता है। वह शक्र को क्षीण करता है। (उसक कारण रति की इच्छा शक्ति तथा अपत्योत्पादन क्षमता न्यून होती है)। यह कट विपाक मल तथा मत्र को बद्ध करता है—उन्ह साद्र और शुष्क करता है। जस द्रवगुण क साथ सरगुण रहता है वस शष्क के साथ स्थिर गण रहता है। मल शष्क होन से मलद्वार क प्रति उसकी गति यथावत नही रहती।

मधुर विपाक कफ और शक्र की पुष्टि करन वाला है। पुरीष और मूत्र की प्रवत्ति उसक कारण ससुख होती है। अम्ल विपाक भी शक्र का नाशकर्ता तथा मल मत्र को उत्तम प्रकार स लानवाला है।

तात्पय—**रस गुण वीय विपाक के कम कितन भी हो आचार्यों न शरीर पर उनकी क्रिया को सक्षप म देखन के लिए एक द्रव्य को पसद कर लिया है—वह है पुरीष।** वात पित्त-कफ की शरीर म स्थिति क परिज्ञान का भी यह सुलभ उपाय है। यशस्वी व्यवसायी चिकित्सक निदानम इस पुरीष पर ही प्रधानतया दष्टिपात करत है और चिकित्सा म भी मल की प्रवत्ति पर मख्यतया लक्ष्य दत हैं। कारण जसा कि एक पूव लख म दर्शाया है—दोष कुपित होकर धातुओ को दूषित करत ह दोष तथा धातु दोनो मिलकर मलोको दुष्ट करत ह और दूषित मलो का प्रभाव मलद्वारो पर होता है। मलो म प्रधान पुरीष है अत अन्य मलो की अपेक्षया पुरीष की परीक्षा द्वारा ही दोषो क तारतम्य का ज्ञान उत्तमतया होता है और उस ही आयवद म प्रकृष्ट पद दिया गया है।

प्रकरण छोडन क पूव विपाको क सम्बध म एक उपयक्त स्पष्टता लग हाथ कर दू। ऊपर घत पद्यो क प्राम चरक-सहिता म एक पक्ति है जिस पर कम ध्यान दिया जाता है **ते॥ गुरु स्यान्मधुर कटुकाम्लावतोऽन्यथा।** (अतोऽन्यथेति लघु —चक्रपाणि)।—अर्थात मधर अम्ल और कट य जो तीन विपाक बताए ह उनम मधर गरु होता है तथा कट और अम्ल लघ। इन शब्दो द्वारा तन्त्रकार न सुश्रतोक्त विपाको से अपना अभद दिखाया है। इसका अथ यह है कि चरक और सुश्रत म कोई भद नही है। केवल वणन करन की पद्धति म भद है। चरक न विपाको का परिचय उनक रस क अनसार दिया है तथा सुश्रत न उनकी गरुता लघता को लक्ष्य म रखकर। यह वस्तुस्थिति न समझ कर आज भी लखक अध्यापक विपाको क वणन म कोई तात्त्विक मतभद है एसा ही विवरण उपस्थित करत है।

गरु लघ सज्ञाओ द्वारा विपाको की परिभाषा दते हुए सुश्रतजी न भी उनकी क्रिया पुरीषादि पर ही निम्न पदो म दर्शायी है—**गरुपाक सृष्टविण्मूत्रतया कफोत्क्लेशेन च। लघुबद्ध विण्मूत्रतया मारुतकोपन च**—सु सू ४१।११। ऊपर जिस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है उसकी सुतरा पुष्टि इन वचनो से होती है। **(सावशेष)**

१—देखिए दिसम्बर क सचित्र आयुर्वेद म—रोग -परीक्षा पद्धति का प्रथम सूत्र।

भारतीय चिकित्साशास्त्र का इतिहास

वैद्यरत्न कविराज प्रताप सिंह रसायनाचार्य

भारतीय चिकित्सा-शास्त्र का इतिहास उतना ही प्राचीन है, जितना प्राचीन पीडा से मुक्ति पाने की मानवीय नैसर्गिक इच्छा रही है, और चूंकि पीडा के प्रति अनिच्छा अथवा विकर्षण मानवो मे स्वाभाविक तौर पर रहा है, अतएव ऐसा कहा जा सकता है कि मानव जीवन के साथ औषधि भी एक दुष्ट सहचर की तरह सदैव मौजूद रही है। इस प्रकार चिकित्साशास्त्र का इतिहास जीवन की उत्पत्ति के साथ प्रारभ होता है, और इस कारण आयुर्वेद का प्रारभ कब से हुआ, इस सम्बन्ध मे कोई तिथि निश्चित करना सर्वथा धृष्टता होगी। आयुर्वेद अनादि है और इसकी उत्पत्ति किसी मनुष्य द्वारा नही हुई है। वदो की अभिव्यक्ति दिव्य पुरुष के जीवन से हुई है—**अस्य महतो भूतस्य नि श्वसितमेतदृग्वेद** इत्यदि **'यस्य नि श्वसित वेदा, न कश्चिद् वेद कर्तास्ति वेदस्मर्ताचतुर्मुख'** आदि। आयुर्वेद को उपवेद कहा गया है, क्योकि वह वेद का ही एक अग है और उसका स्वरूप तथा वैशिष्ट्य भी वेदो जैसा ही है। ऋग्वेद मे विस्त्रल, च्यवन आदि की चिकित्सा के बारे मे अनेक श्लोक है, जिनसे पता चलता है कि आयुर्वेद के मूलस्रोतो मे ऋग्वेद भी एक है। आयुर्वेद की उत्पत्ति के अन्य सूत्र भी है। महर्षि श्री कृष्ण द्वैप्यन कहते है— **ऋग्वेदस्य आयुर्वेद उपवेद।**

सुश्रुत के मतानुसार आयुर्वेद, अथर्ववेद की एक शाखा है। वह कहते है—**इह खल्वायुर्वेदो नाम यदुपागमथर्ववेदस्य। अनुत्पाद्यैव प्रजा श्लोकशतसहस्रमध्याय सहस्र च कृतवान् स्वयम्भू।**

चरक, वृद्ध वाग्भट तथा अन्यो का भी इसी बात पर जोर है कि आयुर्वेद का उद्भव वेदो से हुआ है। ये शाश्वत सत्य है, अतएव दिक् और काल की सीमाओ से सर्वथा परे है। हाँ, इन सत्यो का प्रकटीकरण विभिन्न रूपो मे विभिन्न अवसरो पर होता रहा है।

चरक, सुश्रुत तथा आयुर्वेद के अन्य प्रामाणिक विद्वानो का काल-निर्णय करना अत्यन्त न्यायसगत और समीचीन होगा। भारत मे प्राचीन ग्रथकर्ताओ (लेखको) का समय और तारीख निश्चित करना बडा टेढा कार्य है। कतिपय योरोपीय विद्वानो के मतानुसार चरक, सीथियन सम्राट कनिष्क के यहाँ राजपण्डित थे, जिसका राजत्वकाल ईसा के पूर्व पहली सदी मे था। बौद्ध त्रिपिटको के चीनी अनुवाद मे भी चरक के नाम का उल्लेख कनिष्क के राजपण्डित के रूप मे मिलता है, किन्तु कोई ऐसा सटीक प्रमाण नही मिलता कि 'चरक सहिता' के महान प्रणेता चरक ही कनिष्क के राजपण्डित थे।

कवल नाम-सादृश्य के आधार पर आधारित निष्कर्ष को अन्य प्रमाणो के बगैर कदापि स्वीकार नही किया जा सकता। दूसरी ओर इस बात क पुष्ट प्रमाण मिलते है कि चरक कनिष्क से बहुत पहले हुए थे। वस्तुत चरक का उल्लेख पाणिनी ने किया है और पतञ्जलि द्वारा उनकी टीका भी की गयी है—और ये दोनो ही महानुभाव ईसा के जन्म के बहुत पूर्व हुए थे। हालाकि इस सम्बन्ध मे कोई निश्चित घोषणा करके सकट मोल नही लिया जा सकता, फिर भी सभवत चरक पाणिनी के पहले हुए, ऐसा नही कहा जा सकता, क्योकि गोल्डस्टुकर (Goldstuker) के निश्चयात्मक प्रमाणो के अनुसार चरक का प्रादुर्भाव ईसापूर्व छठी शताब्दि के बाद कभी नही हुआ होगा। चरक की शैली और अभिव्यक्ति की प्रणाली से भी इस बात का प्रमाण मिलता है कि इस ग्रथ का प्रणयन अति प्रारभिक युग मे हुआ होगा। यह तो सर्व विदित है कि अग्निवेश ही 'चरक सहिता' के असली लेखक थे और चरक ने स्वय प्रत्येक प्रकरण के अन्त मे "अग्निवेशकृते तन्त्रे चरकप्रतिसस्कृते" कहकर इस बात को स्वीकार किया है। चरक ने अग्निवेश के सम्पूर्ण ग्रन्थ (Treatise) का, केवल अन्त के ४४ परिच्छेदो को छोडकर सपादन किया। इन बचे हुए परिच्छेदो का सपादन दृढबल ने किया, जो पचनदपुरा के एक ग्रामीण थे। पचनदपुरा नामक स्थान का अबतक सतोषजनक पता नही लग सका है। कुछ लोग वर्तमान बनारस को ही उक्त स्थान बताते है, जब कि कुछ लोग पजाब और काश्मीर मे इस स्थान को प्रतिष्ठित करते है।

अग्निवेश प्रणीत ग्रथ का मूल आकार-प्रकार क्या था, यह जानना बडा कठिन है—उतना ही कठिन यह भी है कि चरक ने मूलग्रथ मे कितना और कहाँतक सशोधन किया। किन्तु यह बात नि सन्देह कही जा सकती है कि चरक द्वारा 'सहिता' मे महत्वपूर्ण सशोधन-परिवर्धन किए गए, क्योकि ऐसा कहा जाता है कि चरक को पुन नए सिरे से पूरी पुस्तक लिखनी पडी।

विस्तारयतिलेशोक्त सक्षिपत्यति विस्तरम्।
सस्कर्त्ता कुरुते तत्र पुराण च पुनर्नवम्॥

अग्निवेश के पाच सहचर-शिष्य थे, जिनमे से प्रत्येक ने ग्रथकर्त्ता अग्निवेश के नाम से एक-एक ग्रन्थ लिखा। इनमे से केवल हारीत-सहिता ही अभी हाल तक प्राप्य थी। किन्तु 'चरक सहिता' के साथ तुलनात्मक दृष्टि से 'हारीत सहिता' का अध्ययन करने पर उक्त पुस्तक के अग्निवेश के समकालीन हारीतप्रणीत होने मे सदेह मालूम होता है। इन दोनो सहिताओ की ध्वनि और विषय-निरूपण मे इतना पार्थक्य है कि उक्त ग्रथ एक ही गुरु के शिष्यो द्वारा लिखे गए प्रतीत नही होते। हा, 'भेल सहिता', जो तजौर राज्य पुस्तकालय मे अपूर्णावस्था मे अन्वेषित और कलकत्ता विश्वविद्यालय से प्रकाशित हुई थी, असली सहिता प्रतीत होती है। इन दोनो ग्रथो के सम्बन्ध मे अबतक कुछ भी शोध नही हुई। १६२३ ई० की जनवरी मे कलकत्ते की एक सभा मे सुप्रसिद्ध रिसच-स्कालर डाक्टर बेणीमाधव बरुआ ने भेल विषयक एक व्याख्यान के सिलसिले मे यह प्रमाणित करने का प्रयास किया था कि भेल, बुद्ध और महाबीर के युग तक जीवित रहे थे, किन्तु चरक—जिनका प्रादुर्भाव अग्निवेश के बहुत पीछे हुआ था और जो भेल के समकालीन थे—के युग के बारे मे व्यक्त उनके विचार यहाँ पर समानरूप से लागू होते हैं। अबतक बहुत-सी ऐसी बातो का पता नही लगाया जा सका है, जिनके लगने से अनेक लाभ हो सकते है। अतएव इन विषयो मे और भी शोध की आवश्यकता है।

चरक के बाद, वैद्यकशास्त्र के विख्यात प्रणेताओ मे अग्निवेश ही सुश्रुत के नाम से प्रसिद्ध प्रतीत होते है। सुश्रुत ने दिवोदास के साथ अध्ययन किया था, जो कि देवगणो के चिकित्सक धन्वन्तरि के अवतार थे। वह राम के समकालीन विश्वामित्र के पुत्र थे। सुश्रुत अपने युग के सर्वोत्कृष्ट शल्य-शास्त्री (Surgeon) थे—ठीक उसी तरह चरक भी सब से बडे चिकित्सक थे और सुश्रुत के युग मे भारत मे शल्य-चिकित्सा (Surgery) अपने चरमोत्कर्ष पर थी।

सुश्रुत के बारे में काल-निर्णय सम्बन्धी मतभेद होने के अतिरिक्त उनके रचनाकाल के बारे मे भी विद्वानो मे मतैक्य नही है। ग्रथकर्त्ता ग्रथ के आरभ मे अन्यो की वन्दना करते हुए सुश्रुत की भी वन्दना करता है, ऐसा सुश्रुत मे मिलता है—**"नमो ब्रह्म प्रजापत्यश्विबलभिधन्वत्तरि सुश्रुत प्रभृतिभ्य"**। सचमुच सुश्रुत ने स्वय अपने बारे में कदापि ऐसा नही लिखा होगा। डल्हणाचार्य की टिप्पणी मे आए एक वाक्य के अनुसार नागार्जुन ने सुश्रुत का सपादन किया था। ऐसी स्थिति मे उक्त वाक्य निश्चय ही नागार्जुन अथवा अन्य टीकाकारो द्वारा उद्धृत किया गया होगा। उक्त वाक्य की टीका करते हुए डल्हण कहते है—**"यत्र तत्र परोक्षे नियोगस्तत्र तत्रैव प्रतिसंस्कर्तृसूत्रं ज्ञातव्यमिति प्रतिसस्कर्त्तापीह नागार्जुन एव।"**

अन्य विख्यात लेखको मे वाग्भट्, माधवकार, चक्रपाणि, शार्ङ्गधर और भावमिश्र उल्लेखनीय है, किन्तु इन लेखको मे स अधिकाश ऐसे है, जो न्यूनाधिक आधुनिक कहे जा सकते है।

विभिन्न लेखको के काल-निर्णय सम्बन्धी अभिमतो के बारे मे यह कहा जा सकता है कि नामो की एकरूपता पर आधारित प्रमाणो से बडी भ्राति उत्पन्न हो सकती है। इस कारण, यह प्रमाण विश्वसनीय नही है। इसके सिवा, भारत की एक प्रथा यह रही है कि विशेष शास्त्र या मतवाद के प्रवर्त्तको के नाम के द्वारा उक्त शास्त्र या मतवाद का प्रतिनिधित्व होता रहा है—जैसे न्यायादि शास्त्र। भारत और चिकित्सा विज्ञान ही क्यो—ज्ञान की अन्य शाखाओ मे भी यही बात लागू होती है। इस प्रकार हमे प्राय विभिन्न विचारधाराओ की वैसी पुस्तके देखने मे आती है, जिनमे एक-दूसरे के मत और युक्तियो का खण्डन-मण्डन रहता है। स्पष्ट ही पूर्ववर्त्ती लेखको के लिए यह सभव नही था कि वह किसी उत्तरकालीन भाष्यकार द्वारा प्रस्तुत किए गए तर्कों का खण्डन कर पाता। अतएव, इन सारी बातो का एक ही निष्कर्ष प्रतीत होता है और वह यह कि प्रत्येक लेखक के मूल ग्रथ मे आवश्यकतानुसार उनके अनुयायियो द्वारा कुछ अश पूरक की तरह जोडे गए तथा उनका रूप-परिवर्त्तन किया गया, तथापि लेखक के मूलनाम को रखा गया था। इस प्रकार मूलग्रथ के आकार-प्रकार में

मे वृद्धि होती चली गयी और अन्तत ऐसा हुआ कि मूल ग्रथ का स्वरूप और रचना-काल दोनो ही विस्तृत हो गए। चरक और सुश्रुत सहिताओ के सम्बन्ध मे भी बहुत सभव है कि यही बात हुई हो।

पुरातत्ववेत्ता अभी तक पूरी तरह मोहेंजदडो की खुदाई मे प्राप्त अवशेषो के समय के बारे मे समुचित प्रकाश नही डाल सके है, जिससे कि इतिहासकार मोहेंजदडो की सभ्यता का तादात्म्य अथवा समत्व द्रविड, असीरिया और बेबीलोन की सभ्यताओ के साथ स्थापित कर सकने मे सक्षम हो सके। किन्तु मोहेंजदडो की सभ्यता के सम्बन्ध मे यह बात निश्चित तौर पर कही जा सकती है कि यह सभ्यता स्वरूपतया तथा कालक्रमानुसार निश्चय ही प्राग्वैदिक (Pre-Vedic) थी। इसकी लम्बी-चौडी गलिया, सुनिर्मित नाले, स्नान गृह और जनता के मनोरजनार्थ सुरम्य-स्थान आदि अत्युन्नत शहरी सभ्यता का प्रतिनिधित्व करते हैं। साथ ही यह भी प्रतीत होता है कि स्वास्थ्य और स्वच्छता के सम्बन्ध मे उनलोगो का ज्ञान कितना विकसित था। खनिज द्रव्यो तथा अन्य औषधियो की विद्यमानता यह कल्पना करने के लिए विवश करती है कि मानव इतिहास के उस प्रारभिक युग मे भी उन लोगो को खनिज औषधियो (Mineral drugs) के आरोग्यकारी और निवारक मूल्यो (Preventive & curative value) का ज्ञान था।

देवता को प्रसन्न करने क लिए मत्रोच्चार के साथ आतुरो को औषध दी जाती थी, क्योकि प्राचीनो का दृढ विश्वास था कि व्याधियाँ देवताओ के आक्रोश के फलस्वरूप ही होती है। प्राचीन युग मे धर्म के साथ चिकिसा का सम्बन्ध इसलिए किया गया कि चिकित्सा विषयक ज्ञान के मूलस्रोत ऋषिगण थे। सासारिकता से विरक्त हो जाने के बाद ज्ञान का अन्वेषण और अपने अनुभूत ज्ञान का शिष्यो को मुक्त दान उनका सामाजिक दायित्व होता था। इस धार्मिक अनुबन्ध (Religious association) के कारण ही चिकित्सावृत्ति लोकसेवा की भावना के साथ सम्पृक्त रही है। वैदिक और उत्तरवैदिक कालीन चिकित्सा-पद्धतियाँ, बहुत अशो मे 'डाक्ट्रीन ऑफ सिगनेचर" नामक सिद्धान्त द्वारा निर्देशित की गयी है। शरीर के व्याधिग्रस्त भागो से मिलती-जुलती सी दीख पडनेवाली वस्तुओ के रग, आकारादि के आधार पर ही आतुरो की चिकित्सा की जाती थी। इस प्रकार की शुरूआतो और निम्न श्रेणी के पशुओ की सहज प्रवृत्ति (Instincts) तथा मनुष्य के प्रातिभ ज्ञान (Intuition) द्वारा निर्देशित होकर आरोग्यशास्त्र (Healing science) वर्त्तमान स्वरूप प्राप्त कर सका। अतीन्द्रिय यथार्थ (Super-sensual reality) की मानसिक चेतना के साथ मानव को आचारो और उपचारो द्वारा इस बात की आवश्यकता प्रतीत हुई कि जीवन के पार्श्व मे रहनेवाली रहस्यात्मक शक्तियो को, जो देवताओ, देवदूतो और भूतो (Spirits) के रूप मे व्यक्त होती रहती है, अनुकूल बनाया जाय अथवा उन्हे सन्तुष्ट रखा जाय। इस प्रकार अथर्ववेद चिकित्सा सम्बन्धी मन-शारीरिक प्रक्रिया की एक ऐसी पजिका (रेकार्ड) है, जिसमें अति-पुराकालीन जादू-टोने, मन्त्रोपचार, प्रार्थना, ताबीज-जन्तर के साथ-साथ औषधियो द्वारा उपचार किये जाने का विवरण हमे प्राप्त होता है। इसके ११४ श्लोक ऐसे हैं, जिनमे वैद्यक प्रसगो की ही चर्चा है और ज्वर, यक्ष्मा (Consumption) व्रण (Wounds), कुष्ठ रोग (Leprosy) वात रोग (Rheumatism), चर्म रोग (Worms) नेत्र और कर्ण रोग, जहरबाद, उन्माद, अपस्मार (Epilepsy) हृदय रोग, शिर शूल आदि का उल्लेख अथर्ववेद मे मिलता है।

अथर्ववेदकालीन लोग सर्प अथवा अन्य जगली जानवरो के काटे जाने पर मत्रो और टोने-टोटको द्वारा विष उतारने का उपचार किया करते थे। इन वैदिक आर्यो को शरीर-रचना शास्त्र (Anatomy) और शल्य-क्रिया का व्यावहारिक ज्ञान था। वैज्ञानिक चिकित्सा के रूप मे आयुर्वेद की कहानी का प्रारभ इस वैदिक युग के बाद ही होता है, जब कि मानवो (Mortals) और देवो (Immortals) ने मिलकर दान-प्रतिदान किया—जब कि देव-दानव और प्रेतात्माएँ प्रतिदिन यथार्थरूप मे दृष्टिगोचर हुआ करती थी और जब कि राक्षसगण अविरल प्रवाहित निर्झरो मे रहते और गन्धर्व लोग पार्वत्य प्रदेशो और घाटियो मे मृगया किया करते थे। स्वाभाविकतया उस युग मे पुरोहित और चिकित्सक एक ही व्यक्ति होता था।

विश्व मे आयुर्वेद के प्रचलित होने के सम्बन्ध मे ऐसा कहा जाता है कि सर्व प्रथम करुण-हृदय स्वयम्भू ब्रह्मा ने ही आयुर्वेद की रचना की। प्रजापति ने यह विद्या उनसे सीखी, प्रजापति से पुन अश्विनीकुमारो ने सीखी और अश्विनी-कुमारो से इन्द्र को यह विद्या प्राप्त हुई। चरक सहिता मे

एसा उल्लख मिलता है कि कृतयुग क अन्त मे जब पृथ्वी पर व्याधियाँ उत्पन्न हुई तो अनक महर्षियो न भारद्वाज मुनि को इन्द्र क पास आयुर्वेद का अध्ययन करन क लिए भजा। दवताओ के राजा इन्द्र क यहा भारद्वाज न आयुर्वेद का अध्ययन किया और स्व अर्जित आयुर्वेदीय ज्ञान का दान उन्होन आत्रय पुत्र पुनवसु तथा अन्यो को दिया। पुनवसु न बड यत्नपूवक अग्निवश भल जतुकण हारीत पाराशर और क्षारपाणि को चिकित्सा-कला की शिक्षा दी और उन लोगो को चिकित्सा-कला म निष्णात बनाया। जैसा कि पहल कहा जा चुका है इनम स प्रत्यक न एक-एक ग्रथ लिखा और इस तरह आयुर्वेदीय ज्ञान क प्रसार म इन महानुभावो से बडी सहायता प्राप्त हुई। भावप्रकाश म जैसा उल्लख है उसक अनुसार कहा जाता है कि आत्रय मुनि स्वय दवराज इन्द्र क यहा गय थ। भावप्रकाश म एसा बताया गया है—

आयुर्वेद पठिष्यामि नैरुज्याय शरीरिणाम।
इति निश्चित्य गतवानात्रयस्त्रिदशालयम॥

सुश्रुत म पुन एसा उल्लख मिलता है कि सुरराज इन्द्र स धन्वन्तरि न प्रशिक्षण प्राप्त किया था और प्रशिक्षित होन क पश्चात धन्वन्तरि न उपधानव सुश्रुत और अन्य लोगो को इस ज्ञान से लाभान्वित किया।

इस युग क अन्त म चरक क अनुसार हिमालय पर ऋषियो का एक महासम्मलन हुआ था। चरक और सुश्रुत की कृतिया ईसापूव १००० से २०० वष क बीच प्रकाश म आयी। इस युग म वैज्ञानिक छानबीन करन की वास्तविक भावना विद्यमान थी और उसका व्यावहारिक रूप भी दिखायी दता था। दशन ज्योतिष गणित त्रिकोणमिति (Trignometry) सगीत और प्रशासन (Administration) आदि विषयो का इस युग में विकास हुआ और उन विषयो की बुनियाद पडी। तक्षशिला और नालन्दा जैस विश्वविद्यालय समग्र ससार क विद्वानो तथा आचार्यों को अपनी ओर आकृष्ट करत थ और इन दोनो ज्ञान केन्द्रो म विश्व विश्रुत विद्वान रहत थ। औषधीय जडी-बूटियो म शोध करन की दृष्टि से यह विशाल दश सदैव अत्यन्त उवर रहा है। ईसा पूव ३२३ और ६४२ वष क बौद्ध सस्कृति यग क दौरान में आयुर्वेद की शैक्षणिक प्रगति (Academic progress) का प्रतिमान स्थिर बना रहा साथ ही अस्पताल स्थापित करन सम्बन्धी विचारो का इस युग म उदय हुआ और धात्री विद्या (Nursing) की ओर भी इस यग म पर्याप्त ध्यान दिया गया तथा उसको सुव्यवस्थित रूप मिला। चिकित्सा विषयक सहायता धार्मिक सगठन का एक आवश्यक अग बन गयी। इस प्रकार आयुर्वेद का प्रसार भारत की सीमा क बाहर भी हुआ। यनान चीन तथा रोम से अध्ययनाथ विद्यार्थी आत थ क्योकि भारत उस समय विद्या का कन्द्र था। सक्षप म एसा कहा जा सकता है कि उपनिषद अथवा ब्राह्मणयुग वदिक युग क बाद आया और उपनिषद युग म ही आत्रय मनि न औषधियो और व्याधियो क सम्बन्ध म मान्य सिद्धान्तो को परिष्कृत किया और एसा करक उन्होन वैज्ञानिक चिकित्सा प्रणाली क युग म पदापण किया। उस युग म बाहरी दशो म भारतीय चिकित्सक आमन्त्रित किए जात थ उनस परामश किया जाता था और व ही चिकित्सालयो म प्रधान चिकित्सक क पद पर प्रतिष्ठित भी किए जात थ।

(सावशेष)



ग्रहणी-विमर्श

श्री ज्योतिर्मित्र आचार्य, ए० एम० बी० एस०, साहित्याचार्य, दर्शनाचार्य, आयुर्वेदाचार्य

आयुर्वेदे ग्रहण्या यद्वर्णनमुपलभ्यते, तत्रैकतयाऽपितु पृथङ्नामत पृथग्रूपेण च। यदा खलु वयन्दत्तावधाना विमृशामो रचनादृष्ट्या कार्यदृष्ट्या विकृतितया वा तदा नून विशदी भवति स्थानविनिश्चितिर्हि चास्या रचनाया इति। अद्यत्वेऽपि जना सशेरतेऽस्या ऊरीकरणे।

तत्र ग्रहणी नाम अग्नेराश्रयीभूतमधिष्ठानम्, याऽऽमाशयादागतमर्धपक्वमन्न, यावत् कात्स्न्र्येन न विपच्यते तावद् गृह्णाति, परिपक्वताञ्चापन्न स्वस्मादव कोष्ठाङ्गे विसृजति, नाभेरुपरि ह्यस्या स्थानमस्ति[1]। चरके ग्रहण्या स्वरूप प्रतिपादने प्रसगात्तत्प्राकृतकर्मनिरूपणावसरे च यद् "बलोपस्तम्भबृहिता" इति पद निवेशित तत्तु विमर्शार्हम्। अत्राचार्यचक्रपाणिर्व्याचष्टे "उपस्तम्भिता इति अग्निना पित्तव्यापारकरणेनानुकूलिता, उपबृहितेति अग्निना बृहणव्यापारकरणेन सशक्तीकृता, किंवा उपस्तम्भत्वेन उपबृहिता, अत्र पक्षे उपस्तम्भसाधारण्य ग्रहण्या ग्राह्"इत्यस्मादेतदवगत भवति यदत्र पित्तव्यापार सगच्छते, उपबृहणपदेनाग्निना सशक्तीकृता भवति, इह प्राच्य प्रस्थानस्य "अनुकूलिता पित्तव्यापारेण सशक्तीकृताऽग्निना" पुष्टिर्भवत्यर्वाच्यदृशाऽवलोचनेन[2]। 'तत्र च पित्तकोषादागत पाचकपित्तम् (Bile), अग्न्याशयादागत आग्नेयरस (Pancreatic juice) इत्र पृथक् स्रोतोद्वयेनान्ते सम्मिलित मुखेन प्रसिच्यते, अर्द्धपक्वस्यान्नस्य सम्यग् विपाकाय" इति गणनाथसेनमहाशयानुसारेणापि सुस्पष्ट, पर पाश्चात्य क्रिया शारीरविद्‌भि द्वयोरसयोर्हि स्रवण कोष्ठेऽन्नमुपगते सत्येव भवति इति प्रत्यक्षीकृत्य निरूपितमस्ति तस्मादत्र कश्चिद् विसवाद।

ग्रहणीय षष्ठीपित्तधरा कलाऽस्ति, या चतुर्विधमन्नपानमामाशयात् प्रच्युत पक्वाशयोपस्थित धारयति, पित्ततेजसा पचति शोषयति चेत्यादि विवृत सुश्रुताचार्येण[1]। वाग्भटमतानुसारेण ग्रहणी एव पित्तधरा कला सा च पाचक पित्तस्य स्थानमस्ति, इय पक्वाशयद्वारि अर्गलेव सती आमाशय एवाहार पचति पक्वाऽधो विमुञ्चति, एव ग्रहण्याबलमग्निरग्नेश्चबल ग्रहणीति अन्योऽन्याश्रयीभूत वरीवर्ति[2]। वृद्धवाग्भटमतमनुसृत्य सम्यक्तया विषयवैशद्य प्रकटी भवति। व्याहरति स यत् इय पक्वामाशयमध्यस्था षष्ठी पित्तधरा कला याऽग्नेरधिष्ठानतयाऽऽमाशयात् पक्वाशयोन्मुखमन्न पचति शोषयति पक्वे सति विमुञ्चति। दोषाश्रिता सत्यामेवातएवान्नग्रहणाद् ग्रहणी प्रोच्यते। सा युक्ता सती शरीर वर्त्तयतीति[3]।

१—अग्न्यधिष्ठानमन्नस्य ग्रहणाद्ग्रहणी मता।
नाभेरुपरिसा ह्यग्निर्बलोपस्तम्भ बृहिता॥
अपक्व धारयत्यन्न पक्व सृजति चाप्यध॥
—चरक चि० १५।५६।५७।

२—(a) × × × When the food enters the duodenum an harmone termed CHOLECYSTOKININ is secreted which causes contraction of gall-bladder and hence a small amount of bile enters the duodenum —J Mellanby's thought in "Handblook of Physiology" Page 257,

(b) In the duodenum the pancreatic juice, which is essential for the digestion of proteins and fats, and with bile, which promotes the absorption of the products of digestion of the latter —A Text book of the practice of medicine Page 599, Edition 1934 2

१—षष्ठी पित्तधरा (कला) या चतुर्विधमन्नपानमामाशयात्प्रच्युत पक्वाशयोपस्थित धारयति। अशित खादित पीत लीढ कोष्ठगत नृणाम्। तज्जीर्यति यथाकाल शोषित पित्ततेजसा॥ —सुश्रुत शा० ४।१८-१६।

२—तदधिष्ठान मन्नस्य ग्रहणाद् ग्रहणी मता।
सैव धन्वन्तरिमते कला पित्तधराह्वया।
स्थिता पक्वाशयद्वारि भुक्तमार्गार्गलेव सा॥
ग्रहण्या बलमग्निर्हि सचापि ग्रहणी बल।
भुक्तामामाशये रुद्ध्वा स विपाच्य नयत्यध॥
—अष्टाङ्गहृदय शा० ३।५०,५१,५२,५३

३—षष्ठी पित्तधरा नाम पक्वामाशयमध्यस्था, सा ह्यन्तरग्नेरधिष्ठानतयाऽऽमाशयात्पक्वाशयोन्मुखमन्न बलेन विधार्य पित्ततेजसा शोषयति, पचति, पक्व च विमुञ्चति। दोषाधिष्ठिता तु दौर्बल्यादाममेव। ततोऽसावन्नस्य ग्रहणात् पुनर्ग्रहणी सज्ञा। बल च तस्या पित्तमेवाग्न्यभिधानमत साऽग्निनोपबृहितैकयोगक्षेम शरीर वर्त्तयति।
—अष्टाङ्गसग्रह नि०

ग्रह उपादान इति धातो "ग्रहेरनि" इत्युणादिसूत्रेणानि प्रत्यये कृते ङिषा ग्रहणी साध्यते। अनया व्युत्पत्या सिद्धमिद यद् या गृह्णाति सा ग्रहणी इति कृत्वा केवल कार्यज्ञानमेव प्रतीयते न चावस्थिति, अस्मिन् विषये चेदृशी विवेचना यत्—

नेय स्वतन्त्रावयवरूपा रचना कोष्ठाग परिगणनेऽस्या अकीर्त्तनात्, तस्मात्कोष्ठान्तर्गता कस्यचिदङ्गस्य विभाग-रूपा। चरके कोष्ठाग परिगणने सम्भवत पक्वाशय शब्द एवास्य बोधको भवितु शक्नोति नान्यत्[1]। एतादृशमेव वर्णन सुश्रुतवाग्भटयोरप्युपलभ्यत।

इय धात्वाशयमध्यगैकाऽन्तस्त्वक् कला वा तस्या पित्त-धराऽऽख्यानात् कलागुणोपपन्नत्वाच्च यतश्चाभिहित सुश्रुतेन "कला खल्वपि सप्त भवन्ति धात्वाशयान्तर्मर्यादा" अर्थात यथा बहिष्ठात् त्वक् शरीरमावृणोति तथैव कलाऽपि आभ्यन्तरतया दोषधातुमलानावृणोतियद्धि दृढीकृत डल्हणेन। उदाजहार सुश्रुतस्ता "काष्ठसारवत्' मन्यमान, यथा-काष्ठमध्यभागो बहिःस्थत्वगावृतत्त्वात् सुरक्षितो भवति तथैव कलामयी ग्रहण्यपि सुरक्षिता भवितव्यैव[2]।

इय पित्तस्य स्थानमस्या अग्निकार्यकरत्वात्, सुश्रुते दहनपाचनाद्युपचार परम्परया पित्ताव्यतिरिक्तोऽग्नि-रभिमत[3]। द्रवत्वसरत्वयोरपि प्राधान्यमाम्नयस्यैव यत्पचत्या हार पक्वे रस गृह्णाति पक्वपदार्थान् विशषतो मल-भूतान् उण्डुके प्रक्षिपति। उण्डुको नाम पक्वाशयस्यान्तिमो भाग पुरीषाधागे वा कोष्ठ विशेष।

१—पचदशकोष्ठागानि यथा × × यकृच्च प्लीहा च, वस्तिश्च, पुरीषाधारश्च, आमाशयश्च, पक्वाशयश्च, उत्तर-गुद, अधरगुद च, क्षुद्रान्त्र स्थूलान्त्र, च वपावहन चेति॥

—चरक

२—यथा हि सार काष्ठेषु छिद्यमानेषु दृश्यते।
तथा हि धातुमांसेषु छिद्यमानषु दृश्यत॥

—चरक शा० ७।१०

स्नायुभिश्च प्रतिच्छन्नान् सन्ततांश्च जरायुणा।
श्लेष्मणावेष्टिताश्चापि कलाभागास्तु तान् विदु॥

—सुश्रुत शारीर० ४।६-७

३—तत्र जिज्ञास्य किं पित्तव्यतिरेकादन्योऽग्नि ? आहोस्वित् पित्तमेवाग्निरिति ? अत्रोच्यते न खलु पित्तव्यति-रेकादन्योऽग्निरुपलभ्यत, आग्नेयत्वात् पित्ते दहन-पाचनादि-ष्वभिप्रवर्त्तमानेऽग्निवदुपचार क्रियतऽन्तरग्निरिति।

—सुश्रुत सूत्र० २१।९

ग्रहण्या बलमग्नावाश्रितमस्ति ग्रहण्याऽग्नावाग्ने[1], यदा पित्त विकृतिमापद्यते तदाऽस्या कार्यविरोधो भवति, बल-नाशात्। यदा खलु पित्तधराकलाधिष्ठितो दोषो भवति तदाऽग्निरपि अकिञ्चित्करो भवति।

अथेद विमृश्यते यद् "ग्रहणी" इत्यनेन कस्य बोध स्यात् तत्र विनिश्चेतु शक्ता वयन्तस्या रचना-क्रिया-विकृतिदृशा च। ग्रहण्या स्थान नाभेरुपरि वर्त्तते। इय पक्वा-माशयमध्यगा क्रमश पक्वाशयात् प्रथमा ग्रहणी भवति। इय कला नाडीरूपा वा रचना, या तत्र प्रसृताऽस्ति। यत् कार्यं पित्तधरायास्तत्कार्यमेव ग्रहण्या। इय पित्तधरा-कलाऽभिधाना सती-अपि पच्यमानाशयपित्ताशयाभ्यामपि व्यपदिश्यतेऽग्निस्थानस्वरूपाऽपि। इयमीदृशी रचना याऽऽ माशयात्पक्वाशयगमाहार गृह्णाति पुनश्च पक्वाशये विमुञ्चति तद्द्वारि चार्गलावत् कार्य कुर्वन्ती—अधितिष्ठति। सुश्रुते पित्ताशयपक्वाशययोर्वर्णन पृथक्कृतमुपलभ्यते।

कार्यदृष्ट्या ग्रहणी जाठराग्नेरधिष्ठान पाचकपित्तस्य वा स्थानमस्ति या ईषत्पक्वमन्न गृहीत्वा सम्यक् पचति, पाचकाग्निशक्ति विबर्द्धयति ह्रासयति च, एवमामान्नस्य पक्त्री सारकिट्ट विवेचनी च, अविपक्वान्न वामपार्श्वे (चरके) ऽधो (मधुकोषव्याख्यायाम्) वा विसृजति। चतुर्विधमन्न-पान पित्ततेजसा पचति शोषयति च। आहोस्विदग्निरेव-ग्रहणी अन्योऽन्याश्रितत्वात्परस्परोपकारकत्वादेकयोगक्षेमकर करत्वाच्च, आयुर्बलवर्णस्वास्थ्योत्साहौजस्तेज प्रभृतीना सम्पादिका[2]। पाकादिकर्मणा चानलशब्देन व्यवह्रियेत[3] अस्योपर्येव धात्वग्निर्भूताग्नि पञ्चविधपित्तञ्चाश्रितमस्ति। इहहि पित्तमच्छमुदीर्यते। आमाशयस्य नाभेरुर्ध्व पक्वाशयस्य

१—ग्रहण्या बलमग्निर्हि स चापि ग्रहणी बल।

—अ० हृ० शा० ३।५३

२—आयुर्वर्णोबलस्वास्थ्यमुत्साहोपचयौप्रभा।
ओजस्तेजोऽग्नय प्राणाश्चोक्ता देहाग्नि हेतुका।

—चरक चि १५।३

३— × × तत्र पक्वामाशयमध्यगम्।
पचभूतात्मकत्वेऽपि यत्तजस गुणोदयात्।
त्यक्तद्रवत्व पाकादिकर्मणाऽनल शब्दितम्।
पचत्यन्न विभजते सारकिट्टौ पृथक्तथा॥
तत्रस्थमेव पित्ताना शेषाणामप्यनुग्रहात्।
करोति बलदानेन पाचक नाम तत्स्मृतम्॥

—अ हृ सूत्र. १२

चाधोऽवस्थितत्वाच्च शरीररक्षा सम्पद्यते। इयमेव रचनाऽप्यपित्तस्थानेष्वनुग्रह करोति।

विकृतिदृष्ट्या च पर्यालोचनेनाहिताहारवशाद् दोषेण दोषैर्वा दुष्टा सती अग्नेर्विकृतत्वाच्च, अपक्व कदाचित्पक्वमाम मुहुर्बद्ध मुहुर्द्रव चान्न विमुञ्चति ईदृशी ग्रहणी व्याधिरूपा व्यपदिश्यते[1]। अग्निग्रहण्योश्चान्योऽन्याश्रितत्वादाराधेयभावाच्च एकस्य दुष्टेऽन्यस्य दुष्टि सिद्धैव, अतोऽग्निना पच्यमानेऽपि ग्रहण्येव पचतीति व्यवह्रियते बुधै। ग्रहणीदुष्ट्या ग्रहण्याश्रित वह्नेरपि दुष्टेऽग्निमान्द्यादयोऽपि ग्रहणी-विकार उच्यन्ते[2]। ग्रहणीगताग्नेरतिप्रबलत्वाद्भस्मकस्तीक्ष्णाग्निना वा रोग प्रादुर्भवत्येवञ्च मन्देऽग्नौ नानारोगजातजनकस्यामदोषस्यामविषस्य वोत्पादको भवति सामान्यतोऽपक्वान्नस्यापक्वमलस्याध प्रवृत्तिरेव ग्रहणीरोग कीर्त्यते। यतश्च प्रतिपादितमपि—

> अधस्तु पक्वामाम वा प्रवृत्त ग्रहणी गद ,
> उच्यते, सर्वमेवान्न प्रायोह्यस्य विदह्यते ।।
> अतिसृष्ट विबद्ध वा द्रव तदुपदेश्यते।

केचन आमाशयस्याधोद्वार मुद्रिकाद्वारमेव (Pyloric orifice) ग्रहणी पदेन मन्वते तन्न—शरीर-क्रियादृष्ट्या च तल्लक्षणैरसम्बद्धत्वात्। इतरे तत्पदेन समग्र क्षुद्रान्त्रमभिनिवशयन्ति तदप्यसमीचीन-पचन-सार-किट्ट विभजन प्रभृतीना क्रियाणान्तत्रासभवात्। उण्डुकानन्तर मलाधराकला सगच्छते यदाह सुश्रुतेऽपि पञ्चमी पुरीषधरा नाम यान्त कोष्ठेमलमभिभजते पक्वाशयस्था भवति चात्र—

> यकृत्समन्तात् कोष्ठ च तथाऽन्त्राणि समाश्रिता।
> उण्डुकस्थ विभजते मल मलधरा कला।।

एवमूहापोहैर्नैतन्निगमन भवति यद् ग्रहणी पदेन "पित्तव्यापारकरणेनानुकुलिता" "अग्निना बृहण व्यापारकरणेन स शक्तीकृता" इत्यत्र चक्रपाणेर्व्याख्यानेन पुरा विमृष्ट। अर्वाच्य विधिनाऽऽलोच्यमानमामाशयादधोलघ्वन्त्र प्रारभ यावत् स्थान यदि ग्रहणी (Duodenum) नाम्नोच्येत्तर्हि नात्र कश्चिद्भ्रम सभाव्येत।

चिकित्सासौकर्यार्थमेवास्या विनिश्चय क्रियते। ग्रहणीरोगे यानि सामान्य लक्षणान्युपलभ्यन्त तानि सर्वाणि sprue रोगेण सम साम्यमावधति। परिभाषानुसारेण य उष्णकटिबन्धे आमाशयलघ्वन्त्रमार्गस्याव्यवस्थयाऽज्ञात निदानो व्याधिरस्ति यश्च वसाद्राक्षशर्करा-नियतजीवितिक्ति-सुधानामपर्याप्तशोषणेन न्यून (हीन) शोषणेन वोत्पद्यते स एव ग्रहणी[1]।

ग्रहणी (माधवनिदाने)	Sprue (Savills System of medicine)
× ×पीताभपीताभ सार्यते-द्रवम, भिन्नामश्लेष्मससृष्ट गुरु-वर्चं प्रवर्त्तनम्।	A pyrexial morning diarrhoea with bulky, acid, pale, frothy, fatty stool
पूत्यम्ल	
× × ×कार्श्यदौर्बल्यम्।	Emaciation & wasting

उपर्युक्त तुलनात्मक प्रणाल्याऽनुशीलनेनास्मदीयो विनिश्चयो दृढायते। आशास्यते यद् विद्वत्तल्लजैरस्या समधिक विमर्क्ष्यते।

१—एकैकश सर्वशश्चदोषैरत्यर्थमूर्च्छितै ।
सा दुष्टा बहुशो भुक्तमाममेवविमुञ्चति ।।
पक्व वा सरुज पूति मुहुर्बद्ध मुहुर्द्रवम् ।
ग्रहणीरोगमाहुस्तमायुर्वेदविदो जना ।।
—सुश्रुत उत्तर ४०।१७१-१७२

२—सग्रहण्या वर्णने मधुकोशकारो विजयरक्षित ।

१—Sprue is a tropical disease of unknown itiology associated with derangement of the gastro-intestinal tract, characterised by deficient absortion of fat, glucose, certain vitamins and calcium

—Savill's System of Medicine Page 391 Edition 13

आयुर्वेदीय कायचिकित्सा

श्री गणपतिलाल शर्मा मिश्र बी० आई० एम० एस०, आयुर्वेदाचार्य, विद्यावाचस्पति

यह विश्वविदित है कि वेद अनादि एव अनन्त है एव आयुर्वेद एक उपवेद होने से इसकी भी अनादिता व अनन्तता स्वत सिद्ध है। यह एक ऐसा महासमुद्र है जिसमे समस्त चिकित्सा के तत्त्व भरे हैं। इसमे जो जितनी गहरी डुबकी लगाता है, उसे उतने ही अधिक मूल्यवान् रत्न प्राप्त होते हैं।

आयुर्वेद मे कुछ नही है, ये शब्द प्राय वे ही व्यक्ति कहते है जो आयुर्वेद के अर्थ एव उसकी वास्तविकता से अनभिज्ञ हैं। प्राचीनकाल मे शास्त्रो को सूत्र रूप मे ही लिखने की परिपाटी थी। उसी परिपाटी के अनुसार आयुर्वेद को भी सूत्र रूप मे ही लिखा गया था। इसके बाद अनेक प्रकार की क्रान्तियाँ हुई, समय बदलता रहा, हमारे देश मे अनेको विदेशी आये और उन्होने भारत की प्राचीन सस्कृति एव विज्ञान को दबा कर अपनी सभ्यता को प्रसरित किया। फलत अनेको ग्रन्थ इस देश से लुप्त हो गये एव जो बचे वे भी प्राय अपूर्ण रहे। यह हमारा दुर्भाग्यकाल कहा जा सकता है।

आज भारत पूर्ण स्वतन्त्र है। अब हमारा कर्त्तव्य है कि जितने भी आयुर्वेद विषयक शास्त्र प्राप्त होते हैं, उनके सूत्रो (फारमूलो) के वास्तविक अर्थो को अपनी बुद्धि से बडी सावधानी से सोच-विचार कर उन्हे विश्व के सम्मुख सर्वोत्कृष्ट बता फिर से इस भूमि पर आयुर्वेद का स्वर्ण युग लाने मे अपना सहयोग प्रदान करे।

आयुर्वेद आठ अगो मे विभक्त था एव उस समय प्रत्येक अग अपने-अपने क्षेत्र में सर्वोत्कृष्ट था। परन्तु आज कायचिकित्सा के अतिरिक्त सभी अग लुप्तप्राय हो गये है अथवा यदि हैं भी तो छिन्न-भिन्न, शीर्ण-विशीर्ण रूप मे प्राप्त होने के कारण उतने नही है जितनी कायचिकित्सा। आयुर्वेद मे निहित गौरव को आयुर्वेद का एकमात्र अग—कायचिकित्सा विशद रूप से जिज्ञासुओ की इच्छा पूर्ति करने मे समर्थ है। प्रस्तुत लेख मे केवल "कायचिकित्सा" शब्द के अर्थ एव महत्ता को बताने का प्रयास किया गया है।

शब्दार्थ की दृष्टि से कायचिकित्सा का अर्थ होता है काय सम्बन्धी चिकित्सा। यहाँ पर दो शब्द है प्रथम काय, एव दूसरा चिकित्सा। अब हम सबसे पूर्व काय शब्द को देखे।

काय—काय शब्द के पर्याय स्वरूप देह, शरीर, गात्र, वपु, सहनन, वर्ष्म एव विग्रह शब्द मिलते हैं। अब प्रश्न यह है कि इसका नाम शरीर चिकित्सा, देह चिकित्सा आदि पर्याय शब्दो मे से किसी के साथ न रखते हुए काय के साथ ही क्यो रखा गया। अत यह स्पष्ट है कि ऋषियो ने जो कायचिकित्सा ही नाम दिया तो वह किसी विशिष्ट कारण से ही दिया है। जितने भी काय के पर्यायवाची शब्द है उनको यदि हम देखे तो प्रत्येक से एक विशिष्ट अर्थ निकलता है जो हमारे शास्त्र की सर्वांगता एव उत्कृष्टता का द्योतक है। जैसे—

(१) देह—दिह् उपचये धातु है घञ् प्रत्यय होकर यह रूप बना है, "दिह्यते उपचीयते इति देह" अर्थात्—युक्ताहार विहार से वृद्धि होना, बढना, या उचित होना, य आधुनिको के (Anabolic) की ओर सकेत करता है।

(२) शरीर—शृ धातु से इरन् प्रत्यय होकर यह शब्द बना है। "शीर्यते इति शरीरम्" जिसका अर्थ है शीर्ष होना (क्षीयमाण होना), टुकडे-टुकडे होना। यह शरीरान्तर्गत होने वाली अपचयात्मक या विघटनात्मक क्रियाओ (Katabolic process) की ओर सकेत करता है।

(३) वपु—डुवप् बीज सन्ताने धातु से उस् प्रत्यय होकर इसकी सिद्धि होती है। "ऊप्यते तद् वपु" जो ऊप्त हो उसे वपु कहते हैं। शुक्र-शोणित सयोग रूपी बीज-वपन के बाद बढते-बढते मनुष्य कितनी वृद्धि को प्राप्त हो जाता है एव किस प्रकार इसकी वृद्धि होती है, यह अर्थ इस के द्वारा आ जाता है। इसमे गर्भ वृद्धि क्रम (Embriology) समाविष्ट हो जाता है।

(४) गात्र—गाते विभिन्नाङ्गासु अनेन इति गात्रम् जिसमे विभिन्नार्गों की गति हो।

(५) सहनन—हन् हिसागत्यो-इस धातु से शत्यर्थ मे बना है। "सहन्यते इति सघननम्" अर्थात् जिसका सुव्यवस्थित गठन हुआ हो।

(६) विग्रह—"विशेषेण गृह्णाति पच महाभूतादि अन्नादि इति विग्रहम्" जो पच महाभूतो का एव अन्नादि का विशेष रूप से ग्रहण करे।

(७) वर्ष्म—"वर्षति नव द्वारेभ्य यत् मल वष्म" जो मुखनासादि शरीरस्थ नौ द्वारो से मल का त्याग करता हो।

(८) काय—चिञ्, चयने इस धातु से काय शब्द बना है। इसका अर्थ है सग्रह करना। सग्रह आहार का निर्देशक भी है जैसे "चियते अन्नादिभि"।

दूसरा "चीयते असौ काय" यह भी है। इसका हम सूक्ष्मभूत अणुओ के चयन से निर्मित यह अर्थ करते है, एव इससे शुक्रार्त्तव से गर्भ एव मनुष्य की क्रमश वृद्धि होती रहती है (युवा वस्था तक) यह तात्पर्य इससे निकलता है। प्रथम व्युत्पत्ति के अर्थ से ("चियते अन्नादिभि" इससे) ज्ञात होता है कि काय अन्नादि का ग्रहण करता है, व उसका शोषण सघटन, विघटन, (धातु मल का) करता है अर्थात् आहार से शरीर का निर्माण करना इसका भावार्थ हुआ।

उक्त पर्यायो की व्युत्पत्ति द्वारा हमे यह ज्ञात होता है कि केवल काय शब्द से शरीर की चयापचयात्मक सपूण क्रियाओ का बोध हो जाता है, जैसा अन्य किसी पर्यायवाची शब्द से नही होता। अत काय चिकित्सा का उन व्याधियो से सम्बन्ध होगा जो चयापचय विकृति जन्य हो। या हम यो कहे कि विघटन, पाचनादि कार्य अग्नि द्वारा होता है इसको समझना अन्तराग्नि के ज्ञान पर निर्भर है। "काय चिकित्सेति कायस्यान्तराग्ने चिकित्सा (गगाधर) या "कायस्यान्तराग्ने चिकित्सा" (चक्रपाणि)।

या हम इस प्रकार कहे कि वे रोग जो अन्तराग्नि के वैषम्य से उत्पन्न होते हैं उनका समावेश काय चिकित्सा मे प्रधानत होता है, जैसा कहा भी है—कायचिकित्सा नाम सर्वाङ्ग ससृतानाम् व्याधी नाम् ज्वरातिसार रक्तपित्त शोषोमादापस्मार कुष्ठ मेहादीनामुपशमनार्थं (सुश्रुत)।

इस दृष्टिकोण से काय चिकित्सा का सम्बन्ध उन रोगो से है जो आभ्यतरिक कारणो से होते है, विशेषत आहार और चयापचय विकृति से। इसीके अन्तर्गत सम्पूर्ण शरीर आ जाता है जैसा शिवदास सेन ने कहा है "काय सकल शरीर तस्य चिकित्सा प्रायेण रसादे सर्वाग व्यापकस्य दोषादेव ज्वरातिसाररक्तपित्तादय सभवन्ति" एव अन्त मे बताते है कि "काय चिकित्सा विषय रोगा अग्नि दोषादेव भवन्ति"। इस उक्ति से उपर्युक्त कथन की पुष्टि होती है।

आयुर्वेदानुमार यह शरीर आहारजन्य एव रोग मिथ्या-हार जन्य है। चरकानुसार शरीर आहार सभूत और रोग भी (विकृत) आहार सभूत है। सुख (स्वास्थ्य) और दुख (व्याधि) का विभेद हित और अहित आहार के विभेद पर ही निर्भर है। कहा है —

आहार सभवं यस्तु रोगाश्चाहार सभवा।
हिताहित विशेषाश्च विशेष सुख दुखयो।
(च० सू० २८–४५)

पूर्वोक्त विवरण से काय शब्द का अर्थ पाठको के हृदय मे आ ही गया होगा। यहा पर काय का प्रयोग शरीर एव अग्नि अर्थ मे हुआ है। इसमे अग्नि अर्थ बहुत ही महत्वपूर्ण प्रतीत होता है। "रोगासर्वेपिमन्दाग्नौ" यह आर्ष सूत्र अग्नि अर्थ मे दृढ प्रमाण है। प्रकरणवश अग्नि का विवेचन आपेक्षित है। अग्नि १३ प्रकार की है एव उनके दोषानुसार मन्दाग्नि आदि ४ भद है। प्रस्तुत लेख मे यदि अग्नि पर विशद विवेचन यहा करे तो विषय बहुत ही विस्तृत हो जाता है, अत अग्रिम लेख मे केवल अग्नि के ऊपर विशद विवेचन करेगे। इस समय अपने विषय पर आपका पुन ध्यान आकर्षित करूगा। यहा अब यह स्पष्ट हो गया कि काय का क्या अर्थ है, उसके क्या पर्याय है और उनमे काय की महत्ता क्या है। इन्ही सब को ध्यान रख ऋषियो ने गात्र-देह आदि शब्द न रख काय शब्द को ही प्रधानता दी है।

चिकित्सा—चिकित्सा शब्द कित्‌रोगापने धातु से बनता है। इसका अर्थ है एसे उपायो का प्रयोग करना जो रोग को दूर करने मे समर्थ हो, या रोग की चिकित्सा करना। अमर सिह (अमरकोश के निर्माता) के अनुसार चिकित्सा का अर्थ रुक् प्रतिक्रिया और वैद्यक शब्दसिन्धु के अनुसार रोग निदान प्रतिकार होता है।

आयुर्वेदानुसार निम्न परिभाषाए चिकित्सा शब्द की प्राप्त होती है—

(१) "या क्रिया व्याधिहरणी सा चिकित्सा निगद्यते"-अर्थात् जो क्रिया व्याधि को हरण करनेवाली हो उसे चिकित्सा कहते है।

(२) 'याभि क्रियाभिर्जायन्ते शरीरे धातव समा सा चिकित्सा'—जिन क्रियाओ के द्वारा शरीर की धातुओं

म साम्यता हो जाय (या साम्यता उत्पन्न कर) उह चिकित्सा कहते है।

चतुर्णां भिषगार्थाना शस्ताना धातु वक्रते।
प्रवत्तिर्धातु साम्यार्था चिकित्सेत्यभिधीयते ।।
—च० सू० ६२ श्लो० ५

रोग निदान प्रतीकार शब्द रोग के कारणो को दूर करन पर ही महत्व देता है जसा सुश्रुत न कहा है— सक्षपत क्रियायोगो निदान परिवजनम अर्थात सक्षप म रोग के कारणो का दूर करना ही चिकित्सा है। परन्तु चरकाचाय न चिकित्सा का क्षत्र विस्तृत कर दिया है। उनके मत से निदान परिवजन से ही रोग का पूण नाश नही होता क्योकि रोग के परिणाम फिर भी प्रभावशील रहते है। इस कारण इनके मत म चिकित्सा का उद्दश्य निदान का ही समल निवारण ही नही अपितु दोष साम्य स्थापित करना भी है जिससे व्याधि की पुनरुत्पत्ति की शका ही न रह एव इन दोनो उद्दश्यो की प्राप्ति चिकित्सा के चार अनिवाय साधनो पर निभर होती है जिन्हें चतुष्पाद के नाम से कहा है। य चतुष्पाद अयोयाश्रय है अत चिकित्सा के प्राणभत ह। य न केवल व्याधि नष्ट करते ह पर साथ म दोष धातु साम्य भी स्थापित करते है।

अब हम जरा काय की भाति चिकित्सा शब्द के भी पर्याय देख ल।

चिकित्सा के पर्याय—चिकित्सित व्याधिहर पथ्य साधन औषध प्रायश्चित प्रशमन प्रतिस्थापन हित।

चिकित्सित व्याधिहर पथ्य साधनमौषधम।
प्रायश्चित प्रशमनम प्रकृति स्थापन हितम।
—च० चि० अ० १ ३

चिकित्सा का विवचन ऊपर हो चका अब व्याधिहरण आदि का अथ देख—

व्याधिहरण—व्याधि हरतीनि व्याधिहरम—रोग दूर करनवाली।

पथ्य—पथ्य पथोनपेत यत (तत्पथ्य)—च० सू० २५ ४५। पथ्य पथिष श्रोतसु हितम (गगाधर) जो स्वास्थ्य के हतु अनुकल हो।

साधन—साधन प्रकरणात रोगा साध्यन्ते निवत्यन्ते अनन इति साधनम (गगाधर) अर्थात व उपाय जो व्याधि हतु और व्याधि प्रभाव दोनो को दूर करन म उपयोगी है।

औषधम्—औषधिभिर्निष्पन्न व्याधि हित हि यत तत औषधम (गगाधर) औषधि वह है जो रोगो का नाश करे। ओषधि—ओषति दहति दोषान धत्त—गुणान इति ओषधि (गदाधर भाष्य) अर्थात जो दोषो को नष्ट करे एव गुणकारी हो उसे ओषधि कहते है।

प्रायश्चित—प्रायस्य पापस्य चित्त शोधन यस्मात तत प्रायश्चितम (गगाधर) रोगी के मन से रोग को दूर करना तात्पय है।

प्रशमनम—प्रकषण शमयति व्याधीन इति प्रशमनम (गगाधर) जो व्याधियो को शमन करे।

प्रकृति स्थापन—प्रकृतौ स्थापयतीति प्रकृति स्थापनम (गगाधर) धातु साम्यता स्थापित करना।

हितम—हितपोषकत्वात (गगाधर) हित का प्रयोग स्वास्थ्य रक्षण और पोषण म हुआ है।

इन समस्त पर्यायो को देख कर इनके द्वारा जो विशिष्ट अर्थों को सामान्य व क्रमिक रूप म कह तो निम्न उद्दश्य की पूर्ति करते ह—

(१) स्वस्थ म स्वास्थ्य बल व बुद्धि का सरक्षण (स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षण)

(२) रोगी म रोग की निवत्ति अर्थात रोग निवारक चिकित्सा—(आतुरस्य रोग प्रशमनम)।

इनको हम चिकित्सा के उद्दश्य कहते है।

(१) स्वस्थ म स्वास्थ्य की रक्षा—इस क्षत्र म दो प्रकार के साधनो का समावश होता है—(१) रोग सरक्षण (२) राग प्रतिबध। इसम व्याधि व क्षय से शरीर की रक्षा व ओजादि की वद्धि स्वस्थवृत्त का पालन रसायन व वाजीकरण सेवन। इनसे प्रथम उद्दश्य की पूर्ति होती है।

(२) रोग निवत्ति—इसम चरक न बताया है त्रिविध औषधमिति (१) दव व्यपाश्रय (२) युक्ति व्यपाश्रय (३) सत्वावजयश्च (चरक सू० ११ ५२) इसको हम सक्षपत देख—

(१) दवव्यपाश्रय—इसम मत्र औषधि मणि मगल बलि उपहार होम उपवास आदि आते है। चरक न कहा है—मत्रौषधिमणिमगलवल्युपहार होम नियम प्रायश्चित्तोपवासस्वस्त्ययन प्रणिपात गमनादि। च० सू० अ० ११ सू० ५२

(२) युक्तिव्यपाश्रय— युक्तिव्यपाश्रयपुनराहारविहा रौषधद्रव्याणा योजना। च० सू० ११ सू० ५२

(क्रमशः)

आयुर्वेद में शवच्छेद विज्ञान

प्रोफेसर श्री कान्तिकृष्ण आयुर्वेदालंकार

"शारीर-शवच्छेद का इतिहास ४०० वर्ष पहले शुरू होता है, जब कि सन् १५४३ मे इटली मे वेसेलिग्रस (Vesalius) का ध्यान इसके महत्त्व की ओर गया। उससे पहले हेनरी अष्टम ने इगलैण्ड मे प्रतिवर्ष सिर्फ चार शवच्छेद किए जाने की अनुमति दी थी। लेकिन, जहा तक सिर्फ 'शवच्छेद' की बात है, वीएना (Viena) आधुनिक इतिहास मे शवच्छेद शुरू करने मे अग्रसर रहा। सबसे पहला शवच्छेद वीएना मे १२ फरवरी १४०४ को सार्वजनिक रूप से किया गया। वेसेलिअस के बाद इगलैण्ड मे एलिजावेथ ने मृत्युदण्ड प्राप्त अपराधियो के शव पर शवच्छेद करने की अनुमति दी (१५६५)। डोनेटो ने १५८६ मे पोस्टमॉर्टेम की परम्परा शुरू की"[1]।

योरोप में शवच्छेद

योरोप मे शवच्छेद का इतिहास बहुत रोचक रहा है। 'केनेथ-वाकर' F R C S ने "द स्टोरीग्राफ मेडिसिन" मे शारीर-शवच्छेद के इतिहास का विवरण इस प्रकार दिया है—

"मध्ययुग मे मनुष्य-शारीर (Human Anatomy) पढने की अनुमति चर्च की ओर से नही थी। चर्च ने अपनी शक्ति के अनुसार 'सर्जिकल आपरेशन' न होने देने के लिए सब प्रयत्न किए। ११६३ ई० मे एक राजाज्ञा द्वारा स्पष्टत घोषणा कर दी गई कि चर्च खून बहाने के विरुद्ध है[2]। दो शताब्दी बाद पोप बोनिफेस अष्टम (Pope Boniface VIII) ने आज्ञा प्रसारितकी कि जो कोई भी मनुष्य-शरीर का छेदन करेगा या उसकी अस्थियाँ प्राप्त करने के लिए उसके किसी अग को उबालेगा, वह चर्च से बहिष्कृत कर दिए जाने का अपराधी होगा। इसके परिणामस्वरूप कोई भी सम्भ्रान्त या शिक्षित व्यक्ति, भले ही वह चर्च की आज्ञा की अवहेलना करके उसे अपमानित करने की ताक मे रहता हो, लेकिन अपनी पद-मर्यादा भ्रष्ट होने के भय से सर्जिकल आपरेशन तथा शवच्छेद सदृश कार्यों को नही करता था।"

"मध्ययुग के उत्तरार्द्ध मे चर्च इस बात को समझने लगा कि चिकित्सा के ज्ञान की पूर्णता के लिए मानव-शारीर (Human Anatomy) का अध्ययन जरूरी है। अतएव, चर्च ने यदा-कदा शवच्छेद करने की अनुमति दे दी। शवच्छेद के लिए प्राणदण्ड प्राप्त अपराधियो के, जो बहुत थोडे होते थे, शव का उपयोग ठीक समझा गया। मृत्यु-दण्डापराधी को फासी देने के बाद उसका शव यूनिवर्सिटी के अधिकारियो को सुपुर्द कर दिया जाता था और उस शवच्छेद-समारोह मे सम्मिलित होने के लिए प्राय सब मुख्य अधिकारियो, सभ्यो को आमन्त्रित किया जाता था। अभ्यागतो के आ जाने पर, उनके यथास्थान बैठ जाने पर, पोप का कृपापूर्ण आज्ञापत्र—जिसमे शवच्छेद करने की आज्ञा दी होती थी—उच्चस्वर से पढा जाता और उस शव पर यूनिवर्सिटी की मोहर लगा दी जाती थी। शवच्छेद समारोह का वर्णन H W Haggardने इस प्रकार किया है—'शवच्छेद के समय शुरू मे शव का शिर काटा जाता और मस्तिष्क खोला जाता था, क्योकि क्रिश्चियन-मत के अनुसार वह आत्मा का स्थान होता था। फिर, इस प्रकार की वैधानिकताएँ निभाने के बाद विषय प्रवेशात्मक (Introductory) व्याख्यान होते और चिकित्सक कोरस गान गाते। तदनन्तर उपेक्षणीय ढग से वे शवच्छेद करने का सिलसिला बाधते। चिकित्सक शव नही छूता था। उसके बदले नौकर शव को खोलता और चिकित्सक एक तरफ खडा हो कर जोर से किताब (Galen) पढता और किताब मे लिखी रचनाओ को छडी से दिखाता जाता था। शवच्छेद का कार्यक्रम समारोहपूर्वक होता था। उस अवसर पर सगीत, अभिनय तथा दावत का कार्यक्रम रखा जाता। सारा कार्यक्रम दो दिन तक चलता और अन्त मे जहाँ-तहा चीरे-फाडे शव को दफना दिया जाता था। इस प्रकार शवच्छेद का कार्यक्रम उत्सवपूर्वक समाप्त किया जाता था।"

शवच्छेद के लिए शव मिलना एक कठिनाई है। यह समस्या आज भी है और पहले भी थी। पहले इस

१—डी० एन० बनर्जी—'आयुर्वेद शारीर
२—Galen 'Ecclesia abhorret a sanguine.'

कठिनाई को हल करने के लिए शव-व्यापारियो को किन अवैध उपायो का सहारा लेना पडता था, उसका वर्णन डा० केनेथ वाकर ने इस प्रकार किया है—

"वेसेलिग्रस द्वारा किया गया शवच्छेद शारीरशास्त्र के इतिहास में एक नया अध्याय था। क्योकि उससे पहले के और उसके बाद के एनाटॉमिकल-चार्ट्स व मॉडल्स प्राय सब अशुद्ध थे, जबकि वेसेलिग्रस की शारीर-पुस्तक प्रकाशित होने के बाद के चार्ट्स-मॉडल्स मानव शरीर की रचनाओ के यथार्थ निदर्शन थे। शवच्छेदार्थ चर्च की आज्ञा मिलने और वेसेलिग्रस के प्रोत्साहन के बावजूद शारीरशास्त्र का अध्यापन मन्दगति पर था, क्योकि शवच्छदार्थ प्रतिवर्ष शव मिलना कठिन समस्या थी। **उस समय शव मिलना इतना कठिन हो गया कि १७वीं शताब्दी में मॉन्टपेलियर यूनिवर्सिटी के शारीर-प्रोफेसर रोनडेलेट को शारीर पढाने के लिए अपने मृत बालक के शव का उपयोग करना पडा।** यद्यपि उस समय शवच्छेद कम होते थे, तथापि इसके विरुद्ध जनता मे भयकर रोष जागृत हुआ। १८वी शती में एक गली की क्रुद्ध भीड ने उस इमारत पर आक्रमण किया, जिसमें डा० शिपन और फिलेडेल्फिया-यूनिवर्सिटी के सस्थापक अमेरिकन मेडिकल छात्रो को शव पर शारीर पढा रहे थे। एक अन्य अवसर पर जब डा० शिपन फिलेडेल्फिया मे अपनी गाडी पर जा रहे थे, तब उन पर किसी ने गोली चलायी। लेकिन, विलिग्रम शिपन अपनी गाडी से कूदकर एक तग गली मे छिप गए।"

"१९वी शती मे शव मिलने की कठिनाई उसी तरह बनी रही। उस समय शारीर अध्ययन की आवश्यकता विशेषरूप से महसूस की जाने लगी और उसका व्यापक प्रचार भी हुआ। अत १८२७ मे एडिनबरा के विलिग्रम-हेग्रर और विलिग्रम बर्क ने साझीदार होकर शारीरविज्ञो को (एनाटमिस्ट) शारीर-शवच्छेद पढाने के लिए शव मुहय्या करने का व्यापार शुरु किया। प्रारम्भ ने उनका यह व्यापार बिना किसी खतरे के, लेकिन स्थानीय अधिकारियो के प्रति कुछ बदनीयती के साथ शुरू हुआ। अधिकारियो ने एक मृत भिक्षुक के शव को लाने के लिए शव-गाडी भेजी। लेकिन, हेग्रर और बर्क ने शव की जगह गाडी मे छालें भर दीं और शव को 'एडिनबरा-एनाटमी स्कूल' के डा० नौक्स (Knox) के हाथ बेच दिया। इस धोखा-धडी से किसी को क्षति नहीं उठानी पडी और हेग्रर तथा बर्क ने सात पौंड दस शिलिंग की चाँदी बना कर आनन्द अनुभव किया। इस प्रकार वे एडिनबरा-एनाटमी स्कूल को समय-समय पर रात में शव पहुँचाने लगे। हेग्रर और बर्क का शव-व्यापार सब तरह से ठीक चलता रहता यदि वे अपने इस व्यापार को लावारिस भिक्षुको के शवो तक सीमित रखते जिससे उन शवो के गायब होने से किसी का ध्यान उस तरफ न जाता। लेकिन, एनाटमिस्टो द्वारा अधिक से अधिक शव की माग से और प्रत्येक शव पर खूब चाँदी पाने के लोभ से उनका मन बढता गया। एक दिन अचानक 'मेरी पेटर्सन' —एडिनबरा की प्रसिद्ध वेश्या, और 'डाफ्टजेमी', जो समान रूप से एडिनबरा के मशहूर बाशिन्दे थे, लापता हो गए। लापता की तलाश के लिए पूछ-ताछ शुरू हुई जिसके फलस्वरूप हेग्रर और बर्क सयोगवश पकडे गए। हेग्रर ने चुस्ती से राजा के प्रमाण को व्यर्थ कर दिया। बर्क को फाँसी हुई। तब एडिनबरा की क्रुद्ध भीड का अभागे एनाटमिस्ट डा० 'नौक्स' की ओर ध्यान आकर्षित हुआ। लेकिन डा० 'नौक्स' की जान पुलिस के बीचबचाव करने से बच गई।"

"**डा० रोबर्ट नौक्स (१७९१-१८६२) एनाटमी का जीवट शिक्षक था। उसकी एनाटमी की क्लासें इतनी मशहूर थीं कि उसमें ५०० तक की सख्या में लोग उपस्थित होते थे।** उसके सुरुचिपूर्ण शारीर व्याख्यानो मे सिर्फ डाक्टर तथा मेडिकल छात्र ही नही—अपितु सभ्यगण, वकील, लेखक तथा कलाकार भी भाग लेते थे। बाद मे डा० रोबर्ट नौक्स को चिन्ता हुई और उसे आश्चर्य भी हुआ कि कैसे बर्क और हेग्रर उत्तम कोटि के इतने शवो को मुहय्या करते रहे। जाँच के बाद यह प्रकट हो गया कि लगभग बत्तीस व्यक्तियो का रहस्यमय ढग से गला घोट कर उनके शवो को हेग्रर-बर्क रात मे एडिनबरा-एनाटमी-स्कूल' मे डा० नौक्स के पास पहुँचाते रहे। इस हालत में डा० नौक्स ने अपने को विकट स्थिति में अनुभव किया। लेकिन, उसने इन परिस्थितियो का शान्ति तथा बहादुरी के साथ सामना किया। उसने कुछ वर्षों के लिए शारीर-क्लासें पुनरारम्भ की। तदनन्तर एक दिन अचानक, अज्ञात कारणवश, उसने शीघ्र एडिनबरा छोड दिया और अपने जीवन के शेष दिन लन्दन में अप्रकट रूप से काटने लगा। आज भी शवच्छोदार्थ शव कठिनाई से तथा कम मिलते है।"

प्राचीन शवच्छेद

भारत में शवच्छेद का इतिहास उतना ही पुराना है जितना सुश्रुत का इतिहास। सुश्रुत शल्यसप्रदाय के थे। शल्यचिकित्सा में दक्ष होने के लिए शवच्छेद की विशेष उपयोगिता है। अत सुश्रुत ने शल्यचिकित्सक होने के लिए शवच्छेद पर विशेष बल दिया है, यद्यपि शवच्छेद का महत्त्व कायचिकित्सा में भी है। दक्ष वैद्य होने के लिए चरक ने शारीर-ज्ञान (Anatomy) की विशेष उपयोगिता बताई है। "शरीर सर्वथा सर्वं सर्वदा वेद यो भिषक्, आयुर्वेद स कार्त्स्न्येन वेद लोक-सुखप्रदम्" (च० शा० ६)। जो समस्त शरीर की रचना को जानता है वह लोकसुखप्रद आयुर्वेद को सपूर्ण रूप से जानता है।

शारीरे सुश्रुतः श्रेष्ठ

शरीर-रचना का ज्ञान सुश्रुत मे श्रेष्ठ है। इसकी पुष्टि इस कथन से होती है—"शारीरे सुश्रुत श्रेष्ठ चरकस्तु चिकित्सिते" (शारीर मे सुश्रुत श्रेष्ठ है और चिकित्सा मैं चरक)। चरक कायचिकित्सा सम्प्रदाय के थे अत चरक का चिकित्सास्थान सर्वश्रेष्ठ है। यह कथन ठीक ही है। लेकिन, सुश्रुत तो शल्यसप्रदाय के थे, अत सुश्रुत की शल्यचिकित्सा को श्रेष्ठ कहना चाहिए था न कि शारीर-ज्ञान को। तो इस कथन का मर्म क्या है? मेरे खयाल मे शारीर शल्यतन्त्र का आधार है। आधार ही नही वह उसका एक अविच्छेद्य अग है। विद्वद्वर श्री डा० घाणेकर ने भी सुश्रुत-शारीरस्थान की आयुर्वेदरहस्यदीपिका टीका में लिखा है—"जिसको प्रत्यक्ष शारीर कहते हैं वह शास्त्र, शल्यतन्त्र का एक विभाग होता है और शल्यतन्त्र मे ही उसका विवरण किया जाता है। क्योंकि उसके सिवा शरीरगत शल्यो को सफलता से निकालना एक असभवनीय घटना है। आधुनिक काल मे भी यह कथन सत्य प्रमाणित हुआ है। क्योंकि जो शल्यचिकित्सक होना चाहते हैं, उनको प्रत्यक्ष शारीर पर अधिक ध्यान देना पडता है और शवच्छेद (डिसेक्शन) भी अधिक करना पडता है।" (सु० शा० अ० ५, पृ० १६७)। सुश्रुत ने भी कहा है कि—"त्वक्पर्यन्तस्य देहस्य योऽयमङ्गविनिश्चय। शल्यज्ञानादृतेनैष वर्ण्यतेऽङ्गेषु केषुचित्।" अस्थि मास से लेकर त्वचा पर्यन्त शरीर का जो यह अगविनिश्चय है, वह शल्यज्ञान के अलावा आयुर्वेद के अन्य किन्हीं आठ अंगों में नहीं वर्णित किया जाता। तात्पर्य शल्यविज्ञान में ही शारीर का वर्णन होता है। क्योंकि शारीर (Anatomy) के बिना शल्यविज्ञान है ही नही। इसीलिए सुश्रुत ने शल्यज्ञाता होने के लिए शवच्छेद (Dissection) पर पूरा बल दिया है—"तस्मान्नि सशय ज्ञानं हर्त्रा शल्यस्य वाञ्छता, शोधयित्वा मृतं सम्यक् द्रष्टव्योऽङ्गविनिश्चय।" अतएव शल्यतन्त्र का नि सशय ज्ञान प्राप्त करने के लिए मृतशरीर का सुरक्षण करके उस पर शवच्छेद का अभ्यास करे। सुश्रुत ने आयुर्वेद के आठो अगो के वर्णन में शल्यकर्मात्मक दृष्टिकोण को ही प्रधानता दी है जबकि चरक में सब विषयो का वर्णन कायचिकित्सात्मक भाव से ओतप्रोत है।

सुश्रुत ने शवच्छेद की प्रक्रिया द्वारा प्रत्यक्ष देखे गए अगविनिश्चय को शारीर कहा है। अतएव सुश्रुत का कहना है कि—"'प्रत्यक्षतो हि यद्दृष्ट शास्त्र दृष्ट च यद्भवेत्। समासतस्तदुभयं भूयो ज्ञानविवर्धनम्।" प्रत्यक्ष दृष्ट और शास्त्रदृष्ट दोनो मिलकर अधिक ज्ञान बढाने वाले होते हैं। इस सम्बन्ध में आगे सुश्रुत कहते है —

"तस्मात् समस्तगात्रम्, अविषोपहतम्, अदीर्घव्याधिपीडित, अवर्षशतिकं, नि सृष्टान्त्रपुरीषं पुरुषम् अवहन्त्याम् आपगायां निबद्धं पंजरस्थं मुंज-वल्कल-कुश-शणादीनाम् अन्यतमेन आवेष्टिताङ्गप्रत्यङ्गम् अप्रकाशे देशे कोथयेत्। सम्यक् प्रकुथित च उद्धृत्य ततो देहं सप्तरात्रात् उशीर-बाल-वेणु-वल्कल-कूर्चानाम् अन्यतमेन शनै शनै अवघर्षयन् त्वगादीन् सर्वानेव बाह्याभ्यन्तरान् अंगप्रत्यंगविशेषान् यथोक्तान् लक्षयेत् चक्षुषा।" क्योंकि प्रत्यक्षज्ञान का महत्त्व है इसलिए सम्पूर्ण अगोवाले, विष से न मरे हुए, दीर्घव्याधि से न मरे हुए, बुढापे से जर्जर होकर न मरे हुए और अन्त्रगत मल साफ कर लिए गए पुरुष के शव को नदी के स्थिर प्रवाह में डुबा कर बाधे और जल-जन्तुओ से बचाने के लिए उसे पिंजरे में रखे। फिर मुज-वल्कल-कुश-सन मे से किसी एक से अग-प्रत्यग को लपेट कर अप्रकट स्थान में सडाए। फिर सात दिन बाद उसके भलीभाँति प्रकुथित होने पर उसे नदी से बाहर निकाल ले। फिर उस पर से आवेष्टित मुज-वल्कल को हटा कर उसे खस-बाल-बास और छाल की कूची में से किसी एक से

घिसते हुए उसकी त्वचा तथा समस्त बाह्य आभ्यन्तर अंग-प्रत्यंगो को अपनी आंखो से देखे[1]।

सुश्रुत के उपर्युक्त सन्दर्भ से हम तीन परिणाम निकाल सकते है।

(१) **शव कैसा लें ?** (क) जिसके सब अंगप्रत्यंग विद्यमान हो। क्योंकि किसी अवयव के कटे-फटे होने से या न होने से उस अवयव का प्रत्यक्ष ज्ञान न होगा और शारीर ज्ञान अपूर्ण ही रह जाएगा। (ख) जो विष से न मरा हो। क्योकि विष से मरे होने पर शव के किन्ही अवयवो का प्राकृत स्वरूप नष्ट हो जाने से शारीर-ज्ञान यथार्थ न होगा। (ग) जो दीर्घ व्याधि से न मरा हो। क्योकि दीर्घ व्याधि से मरे होने पर शव के किन्ही अंगो का प्राकृत स्वरूप विकृत या नष्ट हो जाने से उन अवयवो की रचना का ठीक-ठीक ज्ञान न होगा। डा० घाणेकर इसकी व्याख्या में लिखते हैं—"दीर्घ व्याधि से पीडित होने पर शरीर के अंग और धातु खराब हो जाते हैं। जैसे—फिरंग में नासा तथा अन्य स्थान की हड्डियाँ गलती हैं। विषमज्वर, कालाजार में प्लीहोदर होता है। अत दीर्घ व्याधियों से मृत मनुष्य का शरीर देखने से इन अंगो का परिज्ञान विकृत होगा।" (घ) जो बुढापे से जर्जर होकर न मरा हो। इसकी व्याख्या मे डा० घाणेकर लिखते हैं कि "हड्डियाँ वृद्धावस्था में कुछ हलकी, विरल और भंगुर हो जाती हैं। दाँत सब गिर जाते हैं। अधोहनु का आकार बदलता है। गर्भाशय सिकुड कर छोटा होता है और उसका मुख बन्द होता है।" इसके अलावा मेरे खयाल में संक्रामक व्याधियो—क्षयरोग चेचक हैजा, प्लेग से मरे को भी शवच्छेदार्थ न लें।

(२) **शव को सुरक्षित (अविकृत) कैसे किया जाए ?** (क) शव के आन्त्र मे विद्यमान मल को निकाल दे। क्योकि आन्त्रो में विद्यमान जीवाणुओ से शव के अन्य अवयव भी संक्रमित होकर सडेंगे। (ख) उसे मुंज-वल्कल कुश-शण से वेष्टित कर पिंजरे मे रख मन्द प्रवाह नदी में बांध दे। इसकी व्याख्या में डा० घाणेकर लिखते है —"मुंजादि से आवृत रहने के कारण त्वचा अक्षत रहती है और बाह्य जीवाणुओं का सम्बन्ध कम होता है। आन्त्र तथा उसका मल निकाल देने से शरीरगत जीवाणु, जो कोथ में मुख्यतया सहायता करते है, प्राय नष्ट हो जाते है। गहरे पानी में प्रेत रहने के कारण उसका बाह्य वायु तथा बाह्य जीवाणुओ के साथ सम्बन्ध टूटता है और प्रेत न्यून ताप तथा एक ताप पर रहता है। इसके शरीर मे कोथ देर से परन्तु एक सा (Uniform) प्रारम्भ होता है।"

(३) **उस शव पर कैसे शवच्छेद का अभ्यास करें ? (शवच्छेदविधि)**—सात दिन बाद उस शव को नदी मे से निकाल कर बांस की कूची से उसका अवघर्षण करते हुए उसकी त्वचा तथा बाह्य आभ्यन्तर अंगो (सिरा, धमनी यकृत् प्लीहा, हृदय) को देखे। डा० घाणेकर इसकी टीका मे लिखते हैं 'कुथित शरीर कूची द्वारा रगडने से मृदु बन जाता है और रगडने पर धीरे-धीरे त्वचादि अंग निकल जाते है और निकलते समय उनका परीक्षण किया जाता है।

प्राचीन शव-सुरक्षण

प्राचीन काल में शव-सुरक्षण तैल में किया जाता था। तैल में कोथ रोकने और कीटाणुनाशन की शक्ति है। रामायण अयोध्याकाण्ड मे वर्णन है कि राम के वन में चले जाने के बाद दशरथ की मृत्यु हुई तो उस समय उनके पुत्रो में से राम-लक्ष्मण तो वन मे ही थे और भरत भी उपस्थित न थे, तब आमात्यो ने दशरथ के मृतशरीर को तैलद्रोणी में सुरक्षणार्थ रखा। **तैलद्रोण्यां तदामात्या संवेश्य जगती-पतिम्। राज्ञ सर्वाण्यथादिष्टा चक्रु कर्माण्यनन्तरम्।** (रामायण, अयोध्याकाड)

तेल नावँ भरि नृप तनु राखा।
दूत बोलाई बहुरि अस भाखा।
धावहु बेगि भरत पहिं जाहू।
नृप सुधि कतहूँ कहहुँ जनि काहू।
(तुलसी रामायण)

इसके अलावा शालिहोत्र आशुमृतक-परीक्षामें तैलाभ्यक्त शव की आशुमृतक परीक्षा (पोस्टमॉर्टम) करने को कहते है (तैलाभ्यक्तमाशुमृतक परीक्षेत) क्योकि शव को तैलाक्त करके सुरक्षित रखने से उसमें कोथजन्य विकृतियाँ नहीं

---

१ अष्टांगहृदय न भी कहा है—"युक्तकारी भिषग्-मुमूर्षु पुरुष सपूर्णगात्रम्, अविषोहतम् अदीर्घव्याधि पीडित निष्कृष्ट वृष्टान्त्रम् अवहन्त्याम् आपगाया मुंज-वल्कल-वेष्टित पंजरस्थमप्रकाश देशे कोथयेत्। त सम्यक् प्रकुथितं चोद्धृत्यायतदेह कृत्वा उशीर-वेणु-कुशादीनामन्यतमेन शनै शनैरवघृष्य त्वगादीन् सर्वानेव बाह्याभ्यन्तरान् अंगसिरास्नाय्वादीन् अवयवान् आचार्योपदर्शितेन आगमेन चक्षुषा च लक्षयेत्।

होगी जिससे आशुमृतक-परीक्षा यथार्थ होगी[१]। सुश्रुत ने शवसुरक्षणार्थ शव को नदी के स्थिर प्रवाह में डुबा रखने को कहा है। शव को पानी या तैलद्रोणी मे डुबा रखने से वह वायुमण्डल के बाह्य कीटाणुओ से संक्रमित नहीं होता।

अर्वाचीन शव-सुरक्षण विधि

सुश्रुत मे उपलब्ध प्राचीन शव-सुरक्षण विधि उतनी विकसित नही जितनी कि अर्वाचीन शव सुरक्षण विधि विकसित है। अर्वाचीन शवसुरक्षण विधि शुरू से समुन्नत है। शव-सुरक्षण का प्राचीन-अर्वाचीन उद्देश्य एक ही है—शव को शवच्छेद के लायक बनाना, ताकि उसमें से तेज दुर्गन्ध न निकले, न उसमे कीडे पैदा हो और न उसके अवयव सड कर विकृत हो अपितु उनकी प्राकृत रचना यथावत् रहे। "मुस्तफीज-प्रैक्टिकल-एनाटमी" मे शवसुरक्षण विधि की अर्वाचीन पद्धति का इस प्रकार विवेचन किया है—"उष्णकटिबन्ध-देशो मे शवच्छेद के लिए सर्वाधिक कठिन समस्या यह है कि ग्रीष्म मे तापमान चरम सीमा ११० फा० तथा शव इससे भी अधिक होता है। अत ग्रीष्म मे मृत्यु के कुछ ही घण्टो बाद शीघ्र सडने लगता है। उस दशा में शव को सडने से बचाने के लिए प्रयुक्त किया गया कोई भी कोथप्रशमन घोल (प्रीजर्वेटिव सॉल्युशन) उस शव का कोथ से पूर्णत सतोषजनक सरक्षण इस दृष्टि से नही कर सकता कि तेज दुर्गन्ध अनुभव किए बिना सुगमता से उस शव पर शवच्छेद किया जा सके। इसके अलावा भारत मे कई जगह ऐसा रिवाज भी है कि अस्पताल मे मृत व्यक्ति के शव मे शवच्छेद करने की दृष्टि से सुरक्षणार्थ कोथप्रशमन घोल २४ घण्टे तक प्रयुक्त नही किया जा सकता, ताकि इस बीच उसके किसी कुटुम्बी के आने और मृतक के दाह-सस्कार करने का मौका कुटुम्बी को दिया जा सके। (चौबीस घण्टे तक उसके वारिस की खोज की जाती है। तदनन्तर उसे लावारिस कह कर अस्पताल से बाहर किया जाता है)। ग्रीष्म में इन २४ घण्टो के अन्दर शव इतना सड जाता है कि कोथप्रशमन घोल शव में देने के बाद भी वह शवच्छेदार्ह पर्याप्त कोथप्रशान्त नही होता। अतएव भारत में मेडिकल कालेजो मे शवच्छेद के लिए शव सग्रहार्थ शीतगृह बनाने की जरूरत महसूस की गई। ग्रीष्म मे मृत्यु के बाद छ घण्टे के भीतर यदि शव में कोथप्रशमन घोल भरा जाए तो शव कोथप्रशान्त (प्रीजर्व्ड) हो जाता है और उस पर सुगमता से शवच्छेद का अभ्यास किया जा सकता है। शीतकाल मे, विशेषत दिसम्बर-जनवरी मे, शव शीघ्र नहीं सडता। यहाँ तक कि मृत्यु के २४ घण्टे बाद भी शव में कोथप्रशमन घोल भरने से वह कोथप्रशान्त होकर शवच्छेद के योग्य पूरी तरह होता है। शवसरक्षण के बारे में अगली कठिनाई शव के प्रान्त भागो के शुष्क होने की है।"

"किंग-एडवार्ड मैडिकल कालेज, सिंगापुर के प्रोफेसर गोर्डन हारोवर (Gordon Harrower) ने 'जर्नल आफ एनाटमी' (Part II, Jan 1924) में उष्णकटिबन्ध देशो मे शवसुरक्षणार्थ नुस्खा प्रकाशित कराया था। वह इस प्रकार है—

"एक शव के लिए—(कोथप्रशमन घोल)

एसिड कार्बोलिक (क्रिस्टल्स)	पौन पौंड
मैथिलेटेड स्पिरिट .	१॥ पाइण्ट
ग्लिसरिन .	१॥ पाइण्ट
फार्मेलिन	१॥ पाइण्ट

"पहले कार्बोलिक एसिड (क्रिस्टल) को कण्टेनर मे गरम करे और एसिड कार्बोलिक क्रिस्टल्स के घुलने के लिए फार्मेलिन मिलाएँ। तदुपरान्त स्पिरिट तथा ग्लिसरीन मिलाएँ। यह घोल कीमती होता है और इससे भी शव पूरी तरह कोथप्रशान्त नही होता यदि ग्रीष्मकाल मे मृत्यु के ८ घण्टो बाद शव मे यह घोल भरा जाए। तदुपरान्त (२४ घण्टे बाद) रगद्रव्य भरे जिसकी विधि अधोलिखित है—

"स्टार्च .	१ पौंड
कार्मीन	जितना प्रर्याप्त हो
फार्मेलिन	२ औंस
पानी	१॥ पाइण्ट "

"इस घोल को गरम ही भरें। अन्यथा ठण्डा होने पर जम जाने का भय है।"

(१) To prevent decomposition, dead bodies were kept immersed in oil or olejenous preparations (**Ashumritak pariksha in the Arthashastra** P P 215-217) When Dasharath died as Ram was away in the forest and Bharat was away in the house of his maternal uncle, the dead body of his father was kept by the ministers immersed in oil in an iron pan —**History of Indian Medicine, G. N. Mukhopadhya**

"इसके अलावा शीतकाल में विशेषत दिसम्बर-जनवरी मे, मृत्यु के २८ घण्टे बाद भी (उक्त घोल से) सस्ता घोल सफलतापूर्वक भरा जा सकता है। उसकी विधि यह है—"

"एक शव के लिए —(कोथप्रशमन घोल)

फार्मेलिन		८ औंस
आर्सेनियस		पौन औंस
पौट कार्ब		पौन पौंड
एसिड कार्बोलिक	..	८ औंस
ग्लिसरीन	...	४ औंस
पानी	:..	३ पाइण्ट"

"आर्सेनिक (ह्वाइट आर्सेनिक) का पौट कार्ब के साथ खौलते पानी मे घोल बना ले। (तदनन्तर क्रम से अन्य वस्तुएँ मिला लें)। यह घोल पूर्व के कोथप्रशमन घोल से सस्ता है। शीतकाल मे इससे शव सम्यक्तया कोथ-प्रशान्त होता है। तदुपरान्त २४ घण्टे बाद रगद्रव्य भरें। इसकी विधि यह है—"

स्टार्च	पौन पौंड
रेड लेड	६ औंस
पानी	१॥ पाइण्ट'

"पानी खौला ले और इसमे अन्य वस्तुएँ मिला कर घोल बना ले। इस रगद्रव्य घोल को शव मे गरम ही भरे।"

"शव के हाथ-पैर तथा त्वचा को सूखने से बचाने के लिए अगो पर नीचे लिखे द्रव का लेप करे—"

"एसिड कार्बोलिक	आधा औंस
कैस्टर आयल	आधा पाइण्ट
ग्लिसरीन	आधा पाइण्ट"

"इस द्रव मे सन भिगा कर उसे हाथ-पैर मे लपेट दे। फिर ऊपर से तैलयुक्त कागज लपेटे। फिर उस पर कपडे की पट्टियाँ लपेटें। फिर पट्टी के ऊपर पिघलता हुआ पैराफीन लगा दे, ताकि सारा आवरण यथासम्भव निर्वात (एअर टाइट) हो जाए। जब-तब शेष शरीर तथा मुख पर भी इस द्रव का लेप करे और फिर उसे चारो ओर से कपडे से ढक कर रखे।"

"मस्तिष्क तथा सुषुम्नाकाण्ड को प्रीजर्व करने और सख्त बनाने के लिए उन्हे एक सप्ताह तक रैक्टीफाइड स्पिरिट में रखें। फिर उसमें से निकाल कर फार्मेलिन के १ १० के घोल मे रखें।"

"कोथप्रशमन घोल (तथा रगद्रव्य घोल) एक तरफ की ऊर्वी धमनी (फीमोरल आर्टरी) द्वारा भरें। उक्त घोल ग्रीवा में महामातृका धमनी या तोरणी महाधमनी द्वारा भी सुविधानुसार भरा जा सकता है।"

इसके अलावा शव के शवच्छेदगृह मे आने पर सबसे पहल उसकी दाढी-मूछे, सिर-बगल-गुप्तागो तथा शरीर के अन्य स्थान के रोमो को उस्तरे से साफ कर दें। फिर उसे कार्बोलिक साबुन से नहला दें और पोछ दे। फिर उसमें कोथप्रशमन घोल तथा रगद्रव्य भरे।

उपसहार

सुश्रुत ने शल्यतन्त्र मे प्रयुक्त होने वाले शस्त्र-यन्त्रो के कर्माभ्यास पर वल देने के लिए 'योग्यमसूत्रीय' अध्याय लिखा है जिसमे छदन (Incision), कर्त्तन (Amputation) का अभ्यास अलाबु, कूष्माण्ड को सूक्ष्मता से छील-काट कर करने को कहा है और वेधन कर्म (Puncture) का अभ्यास तैल-पानी से भरे मशक को व्रीहिशस्त्र से वध कर करने को कहा है। वैसे तो यन्त्र-शस्त्रो के कर्माभ्यास के लिए शव ही उत्तम अधिष्ठान तथा शवच्छेद ही एक मात्र क्रिया है। सुश्रुत ने शल्य चिकित्सा मे शस्त्र-कर्म को ही सर्वप्रधान माना है। **अस्मिन् शास्त्रे शस्त्र-कर्मप्राधान्याद् शस्त्रकर्मैव तावत् पूर्वमुपदेक्ष्याम।** अत सुश्रुत न कहा है कि सपूर्ण शास्त्र पढ लेने पर भी शिष्य को शस्त्रकर्म करने के योग्य बनाएँ। शस्त्रकर्म के इस अभ्यास को 'योग्या' कहा है। **अधिगतसर्वशास्त्रार्थमपि शिष्य योग्या कारयेत्।**

अत शवच्छेद से शस्त्रकर्म का अभ्यास होता है, शरीर का ज्ञान होता है। शल्यचिकित्सा मे निपुणता प्राप्त होती है और आशुमृतक परीक्षा के लिए अभ्यास होता है। शस्त्रकर्म का अभ्यास करने के उद्देश्य से सुश्रत ने शव का उपयोग बताया है—"मृत पशुओ की सिराओ में सिरावेध का, रोमयुक्त चर्म पर लेखन का, मृत पशुओ के दाँतो में आहरण कर्म सिखाएँ।" (सु० सू० अ० ९)। प्राचीन शवच्छेद विधि इतनी समुन्नत न थी जितनी कि अर्वाचीन। प्राचीन शवच्छेद कूची से मृतक को घिसकर किया जाता था जब कि अर्वाचीन शवच्छेद चाकू, कैंची, आरी आदि से विधिवत् चीरा देकर काट कर किया जाता है। अर्वाचीन शवच्छेद विधि प्राचीन से समुन्नत है।

प्रयोगज्ञस्य वैद्यस्य सिद्धिर्भवति नित्यश।
तस्मात् परिचय कुर्यात् शस्त्राणा ग्रहणे सदा॥
सु० सू० अ० ९

A few points about research in Ayurved

Vaidya N. V Joshi, B. A Ayurvidyavisharad

It is a matter of great delight that the Central and State Governments are interested in the Research of Ayurveda and a large amount of money is given by way of grants for this Research in the Ayurvedic System of Medicine

However looking to the various schemes of this Research it is found that priority is given to the research about the chemical contents of drugs and their use in diseases with an eye to modern medicine and its methods of diagnosis and treatment Very few of these schemes are based on the fundamental principles of Ayurveda and it is therefore doubtful as to how far such Research will add to the science of Ayurveda

According to Ayurveda the body is essentially made up of Dosh Dhatu and Mala (वोष धातुमलमूल हि शरीरम) The Anatomy Physiology and Pathology of Ayurveda is based on the above three principles and the theory of Tridosh (त्रिदोष) is the fundamental base of Ayurveda Hence Research in diseases and their treatment (durgs) must be based on the theory of Tridosh and Rasa Vipak, Veerya and Prabhav (रस विपाक वीर्य प्रमाव) Mere chemical analysis of drugs and findings of their contents will not help clinical research in Ayurveda For instance calcium is the main content in शौक्तिक मौक्तिक भस्म but the clinical effect of these two vary to a great extent Much more the effects of the herbs can only be judged clinically as a whole The instances of सहस्रपुटी अभ्रक and preparation like पर्पटीकल्प can be cited to prove this Modern therapy can be benefitted by finding out their chemical contents and their uses according to modern medicine and it may be useful to the general public also But this, certainly is not a Research in Ayurveda nor will it add to the Ayurvedic Science Such researches may be done in the department of Modern Medicine but they should not be carried on by the department of Ayurveda under the name of Ayurvedic Research to the deception of the Vaidyas and the general public

Nobody denies the importance of Research in Science like Ayurved Medicine is a progressive Science based on experience and new findings Study of the History of Ayurveda will also prove this fact New diseases and drugs have to be explained in keeping with Tridosh theory as mentioned above Otherwise under the external garb of the study of Ayurveda there will be a tendency to think on the lines of modern medical theory and try to express it in terms of Ayurveda For instance a modern Vaidya tends to diagnose a fever as Typhoid fever but expresses it as in Ayurvedic terms tries to treat it with Ayurvedic drugs but along with it gives modern drugs and injections also Unfortunately such a tendency is found to have increased amongst the Vaidyas coming out from the institutions teaching a combined course in Ayurveda and modern medicine

Taking all these factors into consideration the following few points have been written to indicate the way in which proper Research in Ayurveda can be carried out

Research in Ayurved can be divided mainly under the following three heads –

(1) Research regarding Literature in Ayurveda old and new

(2) Clinical Research

(3) Standardization of drugs and preparations in Ayurveda

(1) *Literature* —Charak, Sushrut and Vagbhat are the three great writers of Ayurveda and their works are known as बृहत् त्रयी Few additions are made by succeeding writers like

Bhavamishra and Sharangdhar but their works are mainly collections of sutras from the बृहत् त्रयी

Owing to the new system of education it has been quite necessary to prepare subject-wise text books with detailed explainatory notes It is also essential to take into consideration the experience of new diseases and drugs which have to be explained in terms and theory of Ayurveda and these have to be added in new text books

(2) *Clinical Research*—This can be sub-divided in two heads (*a*) Diseasewise and (*b*) Drugwise

(a) According to Ayurvedic Pathology (सम्प्राप्ति विज्ञान) the unbalanced Dosh while circulating in the different parts of the Body, finds a local debilitated spot and disturbing its functions causes the disease कुपितानां हि दोषाणा शरीरे परिधावताम् यत्र सग खवैगुण्याद् व्याधिस्तत्रोपजायते। Thus the Pathology in Ayurved takes into consideration both the Dosh and the Sthan (स्थान) in explaining a disease from the very beginning The causes, symptoms and treatment are described accordingly दोषहतु व्याधिहेतु दोषलक्षण व्याधिलक्षण दोषप्रत्यनीक चिकित्सा, व्याधिप्रत्यनीक चिकित्सा। Instances of diseases can be cited to explain the above factors Taking into consideration these factors, the causes and symptoms of the disease have to be ascertained and explained New diseases have to be added in the same way In such clinical research, help of modern methods of investigation may be taken independently, to check and ascertain the results of the cases under investigation Such help should not vitiate the mind of Vaidya who has to diagnose and treat the case purely on Ayurvedic lines

(*b*) Drugwise Research —After the advent of रसशास्त्र a number of preparations (सिद्ध-कल्प) have been used in the treatment They are found to be useful by experience But their use has not been completely explained according to the theory of त्रिदोष and रस-वीर्य-विपाक Their use is described mainly as प्रभावी (Empirical) But now research is essential to completely rationalise the use of these drugs according to the रस-वीर्य-विपाक and Tridosh theory Such two-fold Research can only be carried out in large Hospitals.

(3) *Standardisation of durgs*—Formerly every Vaidya had his own Pharmacy for the preparation according to the Scientific formula Hence the question of reliability did not arise

But with the total change in the circumstances and surroundings, it is not generally possible for a Vaidya to have his own Pharmacy Hence they have to purchase the drugs from other Pharmaceutical firms But these firms being run mainly on business lines cannot in many cases, be relied upon for the scientific preparations of drugs In case of large number of Ayurvedic preparations clinical test has to be the main test Chemical test will not be of much use For instance a drug like त्रिभुवनकीर्ति and the सहस्रपुटी अभ्रक भस्म etc For this purpose the Government may have to start Ayurvedic Pharmacies in which methods of standardisation could be studied and supply of standard drugs could be made for the chemical research mentioned above

Now a days it has become a growing tendency amongst the learned Vaidyas to prove the efficacy of Ayurved by the Empirical use of the प्रभावी drug But such drugs can be included in the meteria-medica of any medicine It is not the specific action—Prabhav (प्रभाव) of the drug that proves the efficacy of any system of medicine The Scientific theory of the use and action of the drug described by that system can alone prove that efficacy And for this purpose Research in Ayurveda based on purely Ayurvedic Theory of त्रिदोष एव रसवीर्यविपाक is essential

For such Research work it is essential to have a team of Vaidyas who have fullest faith in the fundamentals and functioning of the theory of Ayurved with a background of deep study and long experience of Ayurvedic Science and methods

पाचक पित्त

कविराज लाला बदरीनारायण सेन, जी० ए० एम० एस०

मानव शरीर अपने पोषण या वृद्धि के लिये जो कुछ भी प्राप्त करता है उसे आहार या विहार द्वारा ही प्राप्त करता है। मगर आहार-विहार द्वारा यह जो कुछ भी प्राप्त करता है उसे उसी रूप में अपने पोषण या वृद्धि के काम मे नही लाता है। आहार-विहार द्वारा ग्रहण किये द्रव्यो को पहले यह एक अपने रूप में परिणत करता है और तब इस परिणत रूप को आत्मसात करके अपना पोषण या वृद्धि करता है। आहार-विहारादि द्वारा ग्रहण किये द्रव्यो को एक अपने रूप मे परिणत करने वाली क्रिया का नाम पाचन क्रिया है। जिस शक्ति द्वारा यह पाचन क्रिया एव पचित द्रव्यो को आत्मासात करने की क्रिया सम्पादित होती है उसे पाचक पित्त कहते है।

पाचकं पचते भुक्त शोषाग्नि बल वर्द्धनम्।
रस मूत्र पुरीषाणि विरेचयति नित्यश ॥

भा० पू० गर्भ० प्रा० २ श्लोक १३१

जैसा कि ऊपर कह चुके है कि शरीर की सारी आवश्यकताओं की पूर्त्ति आहार-विहार द्वारा ही होती है। इस पाचक पित्त की भी यह आवश्यकता आहार-विहार द्वारा ही पूर्ण होती है। आहार द्वारा पाचक पित्त की प्राप्ति और पाचक पित्त द्वारा आहार का पचन, फिर पचित आहार से इसकी प्राप्ति यह चक्र निरन्तर चालू रहता है।

पचनं देह धात्वोज बल वर्णादि पोषकम्।
तत. अग्निर्हेतुराहारन्नह्यपक्वाद्रसादय· ॥

च चि १५ अ० श्लो० ४

मूल पाचक पित्त शुक्र-शोणित के सयोग के समय ही निर्मित हो जाता है। चूंकि पाचक पित्त, दोष का एक भेद है और दोष या धातुरूप पित्त शुक्र-शोणित मे विद्यमान रहते ही है, सयोग के समय एव सयोगान्तर भी इन की उपस्थिति रहती ही है, अत पाचक पित्त भी अपने मूल वस्तु धातु पित्त के साथ रहता ही है।

पुरुषस्यानुपहररतरेतसः स्त्रियाश्च प्रदुष्टयोनीशोणित-गर्भाशयाया यदा भवन्ति संसर्गं ऋतु काले जीवोऽवक्रामति...गर्भोऽभिनिर्वर्तते ॥ (च० शा० ३ अ० श्लो० २)

चूंकि यह पित्त धातु का एक भेद है अत पित्त धातु की ही तरह यह भी अत्यन्त सूक्ष्म इन्द्रिय अगोचर व्यापक एव शक्तिस्वरूप है। मगर क्रिया काल मे यह दो रूप से कार्य करता है—एक शक्तिस्वरूप हो एव दूसरा स्थूल रूप लेकर। शक्तिस्वरूप तो इन्द्रिय अगोचर है ही मगर स्थूल रूप इसका स्रावो के रूप मे होता है जिसमे लालास्राव, आमाशयिकस्राव, ग्रहणीस्राव, याकृतीय स्राव, अग्न्याशयिक स्राव एव आन्त्रिक स्राव प्रमुख है। इसके शक्तिस्वरूप का नाम अग्नि भी है एव स्थूल का पित्त।

अग्निर्भिन्नगुणैर्युक्त पित्त भिन्न गुणैस्तथा।
द्रवं स्निग्धमधोगञ्च पित्तं वह्निरतोऽन्यथा ॥

भा० पू० ख० गर्भ प्र० २ श्लो० १३६

सूक्ष्म रूप के पाचक पित्त को न तो देखा जा सकता है और न सग्रह, केवल उसके क्रियाफल को देख कर उसका अनुमान किया जा सकता है। एक भूखे व्यक्ति के सामने भोज्य पदार्थों को रखा जाये और उसके अज्ञात कारणवश उसे खाने मे विलम्ब हो तो उसके मुख मे लालास्राव होने लगता है और आमाशय मे आमाशयिक स्राव। आहार के बिना पहुचे ही मुख एव आमाशय उसे स्थूल रूप से पचाने के लिये प्रस्तुत हो जाते है। दृष्टि मात्र से ही ऐसा होना शक्तिरूपी एव व्यापक पाचक पित्त का ही कार्य है जिसे हम देख नही पाते। यो तो स्थूल द्रव्यो के पाचनार्थ स्थान विशेष निर्दिष्ट है जहा उनका पाचन एव शोषण होता है मगर यदि शरीर के किसी भाग मे भी एक कोमल काटे को चुभा कर कुछ देर छोड दिया जाये और तब उसे निकाल कर अणुवीक्षणयन्त्र द्वारा देखे तो पायगे कि उस का कुछ अश शरीर मे ही पचकर विलीन हो गया है। और यह कार्य भी सम्पादित होता है पाचक पित्त के द्वारा ही। इस प्रकार पाचक पित्त सूक्ष्म एव व्यापक रूप से सारे शरीर में कार्य करता है, मगर स्थूलद्रव्यो का पाचन मुख्यत नियत स्थूल स्थानो मे स्थूल रूप की वस्तुओ द्वारा ही होता है। बोध सौकार्य्यार्थ इन स्थानो का सामूहिक नाम पाचन-सस्थान एव पाचक वस्तुओ का नाम पाचकपित्त या पाचकस्राव

कहा जाता है। स्थानो मे मुख्य है मुख, आमाशय, ग्रहणी एवं पक्वाशय। स्रावो का नाम ऊपर बताया जा चुका है। इन स्थानो पर इन स्थूल स्रावो द्वारा आहार द्रव्य अपना रूप परिवर्तित कर एक ऐसे रूप मे आ जाता है जिसे कि शरीर आसानी से आत्मसात कर सके। इसी कारण इन स्थानो का नाम पाचन-सस्थान एव स्रावो का नाम पाचक पित्त दिया गया है एव शक्तिरूप, जिसे कि हम देख नही सकते, वह्नि दिया गया है। स्राव सभी "द्रवस्निग्धमधोगन्च" हैं और वह्नि शक्तिमान है।

पाचन कार्य

सर्व प्रथम स्थूल एव ठोस आहार द्रव्यो को दात एव लालास्राव दोनो एक साथ मिल कर गलाने एव पचाने का कार्य करते है। दात उन्हे कुचल कर सूक्ष्म बनाता और लालास्राव उस सूक्ष्म द्रव्य को अपनी द्रवता से द्रवित, स्निग्धता से स्निग्ध करता एव पाचकता से गलाने का काम करता है। मगर आहार द्रव्यो के कुछ ही अश पर और उन अशो के भी कुछ ही राशि पर वह कार्य करता है।

इसके बाद भुक्त आहार आमाशय मे आता है। यहा इसके कुचलने का काम तो प्रत्यक्ष रूप से दातो की तरह नही होता मगर पेशी-गति के दबाव से यह काम भी कुछ हद तक होता है। यहा एक प्रकार का स्राव होता है जिसे आमाशयिक स्राव कहते है। आमाशयिक अम्ल स्राव मुख से आये भुक्त आहार द्रव्यो मे से लाला स्राव को जो कि क्षारीय होता है, उदासीन कर नष्ट करता है और अपना पाचन कार्य करता है। आहार द्रव्यो के कुछ अशो की कुछ ही राशि पर अधिकार जमा यह स्राव उन्हे गलाने का काम करता है और लालास्राव ही की तरह इसे द्रवित एव स्निग्ध करता है।

इसके पश्चात् भुक्त आहार आमाशय से ग्रहणी मे आता है। इन आशयो की पेशीगति के कारण आहार एक निर्धारित समय से अधिक देर नही ठहरता, वह धकेला जाकर आगे बढ जाता है। ग्रहणी मे आहार द्रव्यो का सयोग तीन प्रकार के स्रावो से होता है। एक ग्रहणी का अपना स्राव, दूसरा याकृतीय स्राव एव तीसरा अग्न्याशयिक स्राव।

लालास्राव एव आमाशयिक स्राव

ये दोनों स्राव दो कारण से स्रवित होते हैं। एक तो शक्तिरूपी पाचक पित्त (Physical & Nerves) के कारण, दूसरा भुक्त आहार द्रव्यस्थ रसो (Chemicals) के कारण। प्रथम तो शक्तिरूपी है, दृष्टि मात्र से ही कार्य करता है एव द्वितीय किञ्चित स्थूलरूपी है, जो स्पर्श से होता है। आहार द्रव्यो मे कुछ रस ऐसे रहते हैं जिनके स्पर्शमात्र से ही स्थानीय तन्तु उत्तेजित हो इन स्रावो को स्रवित करते हैं। जैसे तम्बाकू को लिया जाय—इस के स्पर्शमात्र से ही मुख विवरस्थ तन्तु उत्तेजित हो अत्यधिक लालास्राव स्रवित करते है, मास एव सुगन्धित भोज्यपदार्थों को ले, इनके स्पर्श से ही आमाशय अपना स्राव अधिक स्रवित करने लगता है। लालास्राव तो मुख्यत भौतिक (Physical) एव द्रव्य रस के सयोग से स्रवित होता है। मगर आमाशयिक स्राव इसके अतिरिक्त लालास्राव के कारण भी स्रवित होता है। लालास्राव भी परोक्ष रूप से उसे उत्तेजित कर अपना स्राव स्रवित करने पर बाध्य करता है। लालास्राव क्षारीय होता है एव अग्न्याशयिक स्राव अम्ल।

ग्रहणी रस

ग्रहणी रस ग्रहणी का अपना स्राव है जो क्षारीय होता है। इसका काम यह है कि आमाशय से आहार द्रव्यो मे से आमाशयिक स्राव को जिस से कि वह ओत-प्रोत रहता है उदासीन कर नष्ट करता है। इतना ही नही उसमे से वह उसे विलग कर आमाशय मे धकेलकर वापस भेज देता है बल्कि उसके साथ-साथ स्वय भी आमाशय मे प्रवेश करता है और आमाशय मे प्रविष्ट होकर उस पर यह नियन्त्रण करता है कि वह अन्दाज से अधिक अपना स्राव स्रवित नही करे। और आमाशय जब आहार द्रव्यो से रिक्त हो जाता है उस समय भी यह अपना स्राव स्रवित करते रहना जारी नही रखे इस पर भी नियन्त्रण रखता है। यदि ग्रहणीस्राव का यह कार्य अव्यवस्थित हो जाता है तो कई प्रकार के रोग उत्पन्न होते है। यदि यह अव्यवस्थित हो जाये तो नाना प्रकार के शूलादि रोगो को उत्पन्न करता है। अगर आमाशय से आये आहार द्रव्यो मे से आमाशयिकस्राव को यह उदासीन नही करे तो ग्रहणी व्रण (Deudonal ulcer), यदि आमाशय मे प्रविष्ट हो उसे अन्दाज से अपना स्राव स्रवित करने पर नियन्त्रण नही कर सके तब अन्नद्रवशूल, यदि आमाशय को आहार द्रव्यो से रिक्त होने पर भी अपना स्राव स्रवित करने से नही रोक सके तो अम्लपित्त एव आमाशयिक व्रण (Gastric ulcer) एव यदि अत्यधिक मात्रा मे यह ग्रहणी स्राव आमाशय में प्रविष्ट हो तो परिणामशूल (Bilious attack) नामक रोग उत्पन्न होते हैं। वह

ग्रहणी स्राव, याकृतीय स्राव, अग्न्याशयिक स्राव एव ग्रहणी कला के अपने स्राव का योग है जो क्षारीय होता है।

याकृतीय स्राव (पित्त)

याकृतीय स्राव यकृत द्वारा स्रवित एक हरित पीत वर्ण का तरल पदार्थ है जो यकृत से एक नलिका द्वारा ग्रहणी में आकर गिरता है। इस स्राव का निर्माण यकृत, आहार रस एव रक्त के प्रसादन कार्य कर परिणाम है।

भुक्त आहार जब पचित होकर इस रूप मे परिवर्तित होता है कि उसका आत्मसात हो सके तब आन्त्रस्थ रसाकुर (villies) इस का शोषण कर सूक्ष्म स्रोत द्वारा शरीर मे भेजता है। आहार द्रव्यो के इस शोषित रूप का नाम आहार रस है। आहार रस दो राहो मे शरीर मे प्रविष्ट होते है—एक यकृत के माध्यम से, दूसरा सीधे। आहार रस दो रूप का होता है—एक आग्नेय या तामस एव दूसरा सात्विक एव राजस। सात्विक आहार रस तो रसाकुरो द्वारा शोषित हो रस प्रपिक मे आता है और वहा से सीधे उत्तरा महाशिरा मे गिर हृदय मे प्रविष्ट हो समस्त शरीर मे सचारित होता है। मगर आग्नेय रस मे ऐसा नही होता। यह रसाकुरो द्वारा शोषित हो सूक्ष्म स्रोतो द्वारा प्रतिहारिणी महासिरा मे सग्रहित होता हुआ यकृत मे आता है और यकृत उनके प्रसादन का कार्य करता है और प्रसादित होने के बाद पुन यह एक मोटे स्रोत अधरामहासिरा मे एकत्रित हो हृदय मे आता है और वहा से सार शरीर मे सचारित होता है। रक्त भी जब सवहन करता हुआ प्रतिहारिणी महासिरा में एकत्रित हो यकृत मे आता है तो यकृत इसका भी प्रसादन करता है। इसे भी प्रसादित कर अधरामहासिरा द्वारा हृदय मे पुन सचारित होने को भेजता है। इस प्रकार यकृत आहार-रस एव रक्त दोनो के प्रसाद का कार्य करता है।

यकृत आहार-रस एव रक्त दोनो मे से आग्नेय वस्तुओ पर विशेष रूप से कार्य करता है—बल्कि यो कहे कि आग्नेय या पित्तल वस्तुओ पर यह विशेष नियन्त्रण रखता है। यो तो यह आहार-रस एव रक्त दोनो मे से हानिकर वस्तुओ को निकाल उसे नष्ट कर उन्हे प्रसादित करता है, मगर आग्नेय या पित्तल वस्तुओ पर चाहे वे इसकी किसी भी जाति अथवा सूक्ष्म एव वैकारिक किसी भी रूप के हो उन पर विशेष नियन्त्रण रखता है। आहार-रस या रक्त दोनो मे से किसी में भी यदि इसके सूक्ष्म रूप (पित्त के) या वैकारिक रूप जैसे क्षार-अम्ल-लवणादि—अपने मात्रा या अनुपात से अधिक हुए तो उन्हे छान कर यह अलग कर देता है। ये मात्रा या अपने अनुपात से अधिक सवाहित होने के लिये इससे आगे नही जा सकते।

चूंकि यकृत् हर जाति एव रूप के पित्तो पर नियन्त्रण रखता है अत रजक पित्त पर भी इसका एक विशेष नियन्त्रण रहता है। मृत रक्त कणो से रजकसस्थान एक हरित पीत वर्ण के रजक पदार्थ का निर्माण करता है जो रक्त में ही घुल जाता है। रक्तकणो की मृत्यु प्रतिदिन एक बहुत बडी सख्या मे होती रहती है और इससे रजक सस्थान एक बहुत बडी राशि मे हरित पीत वर्ण के रजक पदार्थ का निर्माण प्रतिदिन करता रहता है। यदि इस रजक पदार्थ का निष्काषण शरीर से नही हो तो शीघ्र शरीर का वर्ण अस्वाभाविक रूप से हरित पीत हो जाता है एव नाना प्रकार के अन्य कष्टकर लक्षण उत्पन्न होते है। यकृत इसे नियन्त्रित रखता है। रक्त मे से इसे भी छान कर यह विलग कर देता है। इस प्रकार यकृत आहार-रस एव रक्त मे से अनावश्यक वस्तुओ को छान कर विलग कर रक्त का प्रसादन करता है।

इन छने द्रव्यो के याने सूक्ष्म स्वरूप पाचक पित्त, वैकारिक रूप पाचक पित्त तथा हरित पीत वर्ण के रजक पदार्थ के मिश्रण से एक प्रकार का हरित पीत, कटु, लघु, स्निग्ध, तीक्ष्ण, सत्वगुणोत्तर, मृगमदगधी तथा क्षारीय द्रव्य का निर्हरण हो जाता है जो पाकान्तर अम्ल भी हो जाता है। वर्तमान आयुर्वेद ग्रन्थो मे यही याकृतीय तरल स्राव पित्त नाम से भी सम्बोधित हुआ पाया जाता है। चूंकि यह यकृत द्वारा निर्मित होता है इस लिये इसे याकृतीय स्राव कहा है।

पित्तमुष्ण द्रव पीत नील सत्वगुणोत्तर।
रस कटु लघु स्निग्धतीक्ष्णमम्लन्तु पाकत ॥

यह तरल याकृतीय स्राव सूक्ष्म नलिकाओ से होता हुआ एक-एक वृहत नलिका से यकृत के दोनो खण्डो से बाहर निकलता है। बाहर आकर ये दोनो नलिकाए परस्पर सयुक्त हो एक हो जाती है और एक नलिका हो कर आगे बढ ग्रहणी मे आकर खुलती है। इस नलिका का अधोभाग किञ्चित घूम कर ग्रहणी को अपने आक्रोश मे लेता हुआ ग्रहणी मे आकर खुलता है। मगर बीच मार्ग मे ही इस नलिका से एक कोष स्थान का मुख भाग आकर

जुट गया है। नलिका का वह भाग जहाँ आकर कोषस्थान का मुखभाग जुटा रहता है एक मुख का निर्माण कर उस से सयुक्त हो जाता है। इस प्रकार एक ही नलिका दो स्थानो मे आकर खुलती है—एक कोषस्थान मे एव दूसरा ग्रहणी में। इसी नलिका द्वारा याकृतीय स्राव यकृत से निकल कर कोषस्थान मे एव ग्रहणी मे आता है। इस नलिका का नाम याकृतीय स्राव नलिका या पित्त नलिका है। कोषस्थान का नाम पित्त कोष है।

इस नलिका द्वारा याकृतीय स्राव ग्रहणी मे निरन्तर गिरता रहता है मगर जिस समय ग्रहणी में आहार द्रव्य रहता है उस समय अधिक राशि मे गिरता है और आहार द्रव्यो से ग्रहणी जब रिक्त रहता है तब एक साधारण राशि मे गिरता है। इस का कारण यह है कि जब आहार द्रव्य आमाशय से मुद्रिका द्वार के राह ग्रहणी मे प्रविष्ट होता है तो मुद्रिका द्वार विस्फारित होता है। इस से एक प्रकार की उत्तेजना की लहर सम्पूर्ण ग्रहणी मे दौड जाती है और ग्रहणी पेशियां किञ्चित दृढ हो जाती है। पित्तनलिका का ग्रहणीय मुख भाग से लेकर समूचा वह भाग जो ग्रहणी को अपने घरे मे रखती है वह भी दृढ हो जाता है। इस का परिणाम यह होता है कि नलिका का मार्ग भी दृढ एव विकसित हो जाता है जो पहले कुछ अवसादित (Relaxed) था और याकृतीय स्राव निर्वाध रूप से बाहर निकलने का मार्ग पाता है। ग्रहणी मे आहार द्रव्यो के आने एव उसके प्राचीरो के दृढ होने से पित्तकोष पर भी हल्का सा दबाव पडता है, चूँकि पित्तकोष का निचला भाग का एक हिस्सा ग्रहणी से सटा रहता है। इस दबाव से पित्तकोष मे सग्रहित याकृतीय स्राव भी अपने मुख भाग से बाहर निकल कर पित्तनलिका में गिरता है। इस प्रकार पित्तकोष भी अपने में सग्रहित याकृतीय स्राव को ग्रहणी में आहार द्रव्यो के प्रविष्ट होने पर पित्तनलिका में उडेलता है। इस समय यकृत से चला स्राव एव पित्तकोष द्वारा उडेला गया स्राव दोनो पित्तनलिका द्वारा ग्रहणी में आकर गिरता है और पित्तनलिका इन दोनो के सयुक्त स्राव को मार्ग देता है।

मगर जब ग्रहणी आहार द्रव्यो से रिक्त रहता है तो उस समय यह ढीला-सा हो जाता है—पित्तनलिका का निचला भाग इस प्रभाव से प्रभावित हो जाता है वह भी किञ्चित ढीला सा रहता है। इस का फल यह होता है कि नलिका का अन्त मार्ग किञ्चित सकुचित (Relaxed) सा हो जाता है और इस समय याकृतीय स्राव की समूची राशि निर्वाधित रूप से बाहर निकल जाने को मार्ग नहीं पाती है। यकृत तो अपना स्राव निरन्तर एक ही सा स्रवित करता रहता है चाहे आहार द्रव्य ग्रहणी मे हो अथवा नही हो। इसकी राशि में कोई अन्तर नही आता, यह अपनी राशि मे स्रवित होता है। मगर पित्तनलिका का निम्न भाग जब किंचित सकुचितावस्था में रहता है तो यह निर्वाध रूप से ग्रहणी मे नही गिरता है, नलिका के अन्त मार्ग के सकोच के कारण इसके प्रवाह मे बाधा पहुँचती है। प्रवाह मे किञ्चित बाधा पाने के कारण याकृतीय स्राव का कुछ अश इस समय पित्तकोष मे गिरकर सग्रहित होता रहता है। आहार द्रव्यो से ग्रहणी जब रिक्त रहता है तब याकृतीय स्राव का कुछ अश तो बूँद-बूँद कर निरन्तर ग्रहणी में गिरता है और कुछ अश पित्त कोष मे सग्रहित होता है जो आवश्यकता आने पर पुन उसे पित्त नलिका में उडेल ग्रहणी में गिराता है। इस प्रकार याकृतीय स्राव का पित्तकोष में सग्रह एव ग्रहणी मे पतन दोनो एक साथ होता रहता है। ग्रहणी मे जब आहार द्रव्य उपस्थित रहता है उस समय पित्तकोष मे याकृतीय स्राव का सग्रह नही होता है। इस समय पित्तकोष भी अपने में सग्रहित याकृतीय स्राव को पित्तनलिका में उडेल कर बाहर निकालता है। इस प्रकार पित्तकोष मे भी याकृतीय स्राव का सग्रह एव पुन उनके निष्काषण का क्रम चलता रहता है।

इस याकृतीय स्राव में पाचकपित्त के सूक्ष्म एव शक्ति स्वरूप तथा वैकारिक रूप दोनो ही रहते हैं। इसके अतिरिक्त इस मे रजकपित्त के भी कुछ अश मिले रहते है। वसा के भी कुछ अश एव आहार रस एव रक्त में रहे अन्य अनावश्यक अश जिसे कि यकृत छान कर अलग कर देता है सभी मिले रहते है। शक्तिरूपी पाचक पित्त तो शक्ति-रूप है—उसका कोई रूप नही, वह शक्ति रूप में ही इसमें भी रहता है। वैकारिक रूप में मुख्य जो इस में रहते है वे हैं, कुछ जाति के क्षार,कुछ जाति के लवण जैसे सैन्धव तथा अन्य वस्तु, रजक पित्त का एक अश हरित पीत वर्ण के रजक पदार्थ के रूप में रहता है जिसे मृत रक्तकणो से रजक बनाता है एव यकृत उसे छान कर अलग करता है। कुछ स्निग्ध पदार्थ इस में (Mucinoids) मिले रहते है, कुछ वसा का अश

रहता है कुछ जलीयांश रहता है। इस प्रकार यह नाना प्रकार के ऐसे द्रव्यों का मिश्रण होता है।

यद्यपि यकृत इन्हें छान कर एक त्याज्य वस्तु के रूप में बाहर निकाल कर फेंकता है फिर भी इस का कुछ उपयोग होता है। इस के एक-एक वस्तु पर यदि ध्यान दें तब यह सिद्ध होगा कि ये शरीर के लिये अनावश्यक थे और इसीलिये यकृत उन्हें छान कर बाहर निकालता भी है। मगर इन सभी के मिश्रण से जिस वस्तु का निर्माण हो जाता है उस में कुछ विशेषता आ जाती है। अतः शरीर इसकी विशेषता को उपयोग में लाकर ही शरीर के बाहर निकालता है। या यों भी कहा जा सकता है कि बाहर जाते जाते भी यह अपना कुछ कार्य करता जाता है।

याकृतीय स्राव ग्रहणी में गिर कर तीन कार्यों को करता हुआ पुरीष के साथ बाहर निकल जाता है। एक तो यह क्लोम रस (Secretine) को उत्पन्न करता है दूसरा यह अग्न्याशयिक स्राव को स्रवित करता है एवं तीसरा वसा का पाचन वसाम्ल से करता है। इसी अम्ल पाचन को सूत्र रूप में 'अम्लन्तु पाकतः' कहा है।

क्लोम रस

याकृतीय स्राव का गिरना ग्रहणी में निरन्तर होता रहता है। ग्रहणी की पित्तधराकला याकृतीय स्राव के कुछ अंशों को शोषित कर क्लोम रस (Secretine) नामक वस्तु का निर्माण करती है। पित्तधराकला याकृतीय स्राव के संयोग से प्रतिक्रिया रूप में इसे उत्पन्न करती है। यह क्लोम रस ग्रहणीस्थ रक्तस्रोतों द्वारा शोषित हो जाता है और सारे शरीर में संवाहित होता है।

अग्न्याधिष्ठान अन्नस्य ग्रहणात् ग्रहणी मता।

च० चि० १५ अ० श्लो० ५५

षष्ठी पित्तधरा नाम या कला परिकीर्तिता।
आमपक्वाशयान्तःस्था ग्रहणी साऽभिधीयते ॥
ग्रहण्यां पच्यते कोष्ठ वह्निना जायते कटु।

भा० पू० प्र० २ श्लो० २०४ २०५

षष्ठिपित्तधरा कला पक्वाशयमध्यस्था सा ह्यन्तर ग्न्याधिष्ठान। —अष्टांग संग्रह।

यह क्लोम रस शरीर में संवाहित होता हुआ अग्न्याशय में आ कर उसे उत्तेजना प्रदान करता है। अग्न्याशय इस से उत्तेजित होकर शक्तिरूपी कायाग्नि को उत्पन्न करता है जिसे कायोष्मा भी कहते हैं। अग्न्याशयस्थ रक्तस्रोत द्वारा शोषित हो यह सारे शरीर में फैल उसे उष्ण बनाये रखने का कार्य करता है। रक्तस्थ क्लोम रस इस में भी सहायक होता है। क्लोम रस से उत्पन्न यही कायाग्नि शारीरिक तन्तुओं को आहार रस आत्मसात करने की शक्ति प्रदान करती है यही पाचक स्रावों में शक्ति रूप से उपस्थित रह उन्हें आहार द्रव्यों को पचाने की शक्ति देती है—शरीर को उष्मा प्रदान कर जीवित रखती है। इसे ही सूत्ररूप में कहा है—

तस्मात् तत्सोमयं पित्तं पित्तोष्मा यः स शक्तिमान।
स सञ्चरति कुक्षिस्थः सर्वतो धमनी मखः ॥
स कायाग्निः स कायोष्मा स पक्ता स च जीवनम्।
अन्यगतिरिव्ययव वह कायाग्निरुच्यते।

भा० पू० प्र० २ श्लो० १४० १४१

यह क्लोम रस पाचक स्रावों से सर्वथा भिन्न वस्तु है। यह अन्य स्रावों की तरह आहार द्रव्य से संयुक्त हो उसका पाचन करता हुआ बाहर निकल नहीं जाता बल्कि रक्तवाहिनी द्वारा शोषित हो कर सारे शरीर में फैलता है एवं रह जाता है। चूंकि याकृतीय स्राव ग्रहणी में निरन्तर गिरता रहता है इसलिए क्लोम रस का निर्माण भी पित्तधरा कला द्वारा होता रहता है और शरीर में निरन्तर कायाग्नि का निर्माण होता रहता है। मगर यदि क्लोम रस एक साधारण मात्रा से अधिक बने तो यह अपनी अधिक राशि के कारण अग्न्याशय को भी अधिक उत्तेजित करता है। आमाशय उत्तेजित होकर तो कायाग्नि का निर्माण करता ही रहता है मगर अधिक उत्तेजना मिलने पर कायाग्नि के साथ-साथ एक स्राव को स्रवित करने लगता है जिसे अग्न्याशयिक स्राव कहते हैं। इस प्रकार अग्न्याशय अधिक अधिक उत्तेजना को अन्य काम में लगा अपने कायाग्नि उत्पन्न करने के अपने गुण को सन्तुलित रखता है। हाँ क्लोम रस की अधिक राशि में उपस्थित होने के कारण रक्त की उष्णता उस समय किञ्चित अधिक अवश्य हो जाती है। मगर यह क्लोम रस के अपने प्रभाव से होता है जो कि रक्त में संवाहित होता रहता है—अग्न्याशय के अधिक कायोष्मा उत्पन्न करने के कारण नहीं और यह उष्माधिक्यता प्रायः स्वाभाविक होती है। (सावशेष)

हेमन्त ऋतु और स्वास्थ्य

श्री बी० एस० अग्रवाल, आयुर्वेदाचार्य, साहित्यरत्न

मार्गशीर्ष (अगहन) तथा पौष (पूस) —ये दो मास हेमन्त ऋतु के अन्तर्गत माने जाते है। गुजरात में नव वर्ष का आरम्भ इसी समय होता है। गीता मे योगेश्वर श्रीकृष्णचन्द्र ने मार्गशीर्ष मास को सर्वश्रेष्ठ तथा प्रिय मास कहकर सम्बोधित किया है। वस्तुत यह ऋतु ऐसी ही है। विसर्ग काल की अतिम ऋतु होने के कारण यह ऋतु प्राणियो मे शक्ति-सचय की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ मानी गई है। इस समय सूर्यनारायण वृश्चिक तथा धन राशि मे आ जाते है और दक्षिणायन सूर्य का प्रभाव और भी नष्ट हो जाता है। यही कारण है कि पृथ्वी के सौम्य अश को वे पूर्णरूपेण ग्रहण करने मे असमर्थ हो जाते है। इसके विपरीत सौम्याश विधायक चन्द्रदेव पूर्ण शक्तिशाली होकर अपनी सुधामयी किरणो के द्वारा पृथ्वी पर पूर्ण स्नेह प्रदान करने लगते है। परिणामस्वरूप द्रव्य विशेष माधुर्ययुक्त तथा प्राणी शक्ति-सम्पन्न हो जाते है।

हेमन्त ऋतु मे उत्तर दिशा की वायु चलती है। उस वायु मे शीतलता रहती है और सभी दिशाएँ धूल तथा धुएँ से व्याप्त प्रतीत होने लगती है। कोहरा और पाला भी पडने लगता है। यहाँ तक कि सूर्य पर भी इसका प्रभाव पडता है और वे कोहरे से ढँक-से जाते है। जलाशय आदि का जल हिम के रूप मे बदल जाता है और पशु प्रसन्नता का अनुभव करने लगते है। नदियो मे तनिक भी अस्वच्छता नही रह जाती, जल और मार्ग भी पूर्ण स्वच्छ हो जाते है, धान पक जाता है और अन्न खूब तैयार हो जाता है।

शीतकाल के प्रभाव से शरीर के बाहरी भाग मे शीत का स्पर्श होने के कारण त्वचा की उष्णता भीतर रुक जाती है और शीतल वायु से आघात पाकर शरीर मे पहुँच जाती है जिससे जठराग्नि को शक्ति मिलती है। इस शक्तिमयी जठराग्नि को यदि आहार रूपी लकडी पर्याप्त मात्रा मे नही मिल पाती है तो शरीर की रक्तादि धातुओ का शोषण करने लगती है। अतएव इसे भारी तथा स्निग्ध, मधुर, अम्ल एव खारे पदाथ पर्याप्त मात्रा मे देते रहना चाहिए। ऐसा करने से पाचन एव शारीरिक पोषण पूर्णरूपेण होता है। ऐसा न करने से शीत के कारण वायु-प्रकोप होने की सम्भावना रहती है। अत हेमन्त ऋतु मे अवलेह, मोदक, पाक, ईख का रस तथा उससे निर्मित पदार्थ, मिष्ठान्न, दूध, घृत, चावल, उडद, बाजरा, मक्का सरीखे नये अन्न, मधु (शहद), तेल, केसर-कस्तूरी आदि सुगन्धित द्रव्य, गुड तथा अमरूद का सेवन करना उपयोगी है। इस ऋतु में शुद्ध घृत लड्डू, मेवा सरीखे पौष्टिक का विशेष सेवन करने से रस की वद्धि होती है और कफधातु से शक्ति बढती है। कफ प्रकृति के लोगो का कफ इस ऋतु मे बढ जाने से उनको दमा खाँसी, जुकाम, हृदयशूल आदि व्याधिया उत्पन्न हो जाती है किन्तु जिनकी कफ प्रकृति नही होती, उनमे विशेष कफ-वृद्धि हो जाने पर वसत-ऋतु मे पडने वाली सूर्य-किरणो की उष्णता से वह कफ पिघलने लगता है और उससे अनेक रोग उत्पन्न हो जाते है। अत बढे हुए कफ को वसन्त ऋतु मे कम कर देना आवश्यक ही नही, अपितु अनिवार्य है।

हेमन्त ऋतु मे स्नान गरम जल से करना चाहिये। इसके पूर्व तैल-मालिश और उबटन का विधान है। इस ऋतु मे शौच तथा हाथ-पैर धोने के काम मे भी कुनकुने जल का प्रयोग करना चाहिये। घर मे गरमाहट रखनी चाहिये। गरम तहखाने भी उपयोगी होते है। शरीर को ढँककर रखना चाहिये ताकि शीत से रक्षा होती रहे। पहनने तथा ओढने-बिछाने मे ऊनी, रेशमी तथा रुई भरे गर्म कपडो का व्यवहार करना चाहिये। सचित कफ के पूर्वोक्त प्रकोप से बचने के लिये हेमन्त ऋतु में धूम्रपान तथा अजन-क्रिया उपयोगी मानी गई है। आग तापना तथा सूर्य-किरणो का सेवन करना भी लाभप्रद है। सूर्य की किरणे पीठ की ओर और अग्नि पेट की ओर रहे यह स्मरण रखना आवश्यक है। कुशल कुश्तीबाजो से यथाशक्ति कुश्ती लडना और पैरो से बदन दबवाना इस ऋतु मे उपयोगी है। वस्त्रो मे कीटाणुओ के प्रवेश से सुरक्षा की दृष्टि से केसर, कस्तूरी, अगर आदि की धूनी देनी चाहिये। जूते और मोजे का उपयोग तो सुबह-शाम करना ही चाहिये।

(शेषांश ६८६ पृष्ठ पर)

स्वप्नों की दुनिया

आयुर्वेदाचार्य डा० श्रीकृष्ण जायसवाल, ए० एम० एस०

जिस प्रकार शरीर के मनोरजन के लिये खेलकूद आदि आनन्दकर होते है उसी प्रकार स्वप्न, मस्तिष्क को व्यक्ति के स्वभावानुसार मनोरजन देना है। स्वप्न, स्वस्थ मस्तिष्क की पहिचान है। अस्वप्नावस्था मस्तिष्क के विकृत होने का लक्षण है। हमारे जीवन मे न जानते हुए तथा जाग्रतावस्था की इच्छाए, जिन्हे हम कोई महत्त्व नही देते स्वप्न द्वारा पूरी की जाती है। स्वप्न बच्चो, बूढो, युवको-युवतियो सभी को अवस्था तथा स्वभाव के अनुसार मनोरजन प्रदान करता रहता है।

यह स्वप्न निद्रावस्था मे आता है जब कि शरीर के सभी वाह्य अग 'इन्द्रिय वाह्य ससार से सम्पर्क बनाये रहते है। 'चरक' पाश्चात्य मनोवैज्ञानिको के मत से सहमत नही है। उनका कहना है कि मस्तिष्क वाह्य ससार से सम्बन्ध नही रखता जिसे पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक मानते है। यह भी इन्द्रियो के समान वाह्य ससार से पृथक हो जाता है। स्वप्नावस्था ही एक ऐसी अवस्था है जिस समय यह वाह्य ससार से सम्पर्क करता है।

यदा तु मनसिक्लाते,
कर्मात्मान क्लमान्वित।
विषयेभ्यो निवर्तन्ते,
तदा स्वपिति मानव ॥

(चरक)

जब कि मस्तिष्क तथा अन्य वाह्य अग थक जाते है वे वाह्य ससार से पृथक हो जाते है और मनुष्य सोता है। इससे प्रमाणित होता है कि मस्तिष्क ही सोता है जिसे पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक नही मानते।

स्वप्नों के कारण

(१) वाह्य, (२) आभ्यन्तरीय, (३) आभ्यन्तरीय भौतिक, (४) मनोवैज्ञानिक।

वाह्य

सूचना से जाने वाली लहरे (अवाज, स्पर्श, गध आदि) सोते समय मस्तिष्क मे पहुँचती हैं। ये लहरे बडी सरलता से स्वप्नो का कारण बन जाती है। इसी कारण हमलोग सोते समय एकान्त चाहते है—प्रकाश, शब्द आदि सभी से। आँख बद कर सुखप्रद बिछौना आदि पर हाथ पाँव मनोनुकूल फैला या सकुचित कर लेते है। परन्तु इन शब्दो द्वारा हम कभी भी जगाये जा सकते है। वाह्य ससार से निद्रावस्था मे मस्तिष्क का सम्बन्ध बना रहना ही स्वप्नावस्था है। 'वाग्भट' भी मस्तिष्क की अवस्था उसी प्रकार स्वप्नावस्था मे बतलाते है।

"सर्वेन्द्रिय व्युपरतौ मनोऽनुपरत यदा।
विषयेभ्यस्तदा स्वप्न नानारूप प्रपश्यति ॥"

(अष्टाग सग्रह)

जब कभी वाह्य अग 'इन्द्रिय' वाह्य ससार से पृथक कर दिये जाते है और निद्रावस्था मे मस्तिष्क वाह्य ससार से सम्पर्क रखता है, वैसे ही जिस प्रकार जाग्रतावस्था मे रहता है, तब स्वप्न विभिन्न प्रकार के आते है।

इससे स्पष्ट हो जाता है कि पुरातन काल मे जब कि पाश्चात्य देशो को अ–ब–स भी नही मालूम था, हमारे यहाँ के विद्वानो को पता था कि मस्तिष्क की दशा स्वप्नावस्था में क्या रहती है।

विभिन्न प्रकार की वाह्य उत्तेजनाओ की लहरे अपने प्रकार का स्वप्न देती है। बादलो की गडगडाहट लडाई-वाला स्वप्न देती है, मुर्गे की बाग घबराहट या डर की आवाज देती है। रात्रि के समय जब कम्बल या चादर शरीर के ऊपर से हट जाती है, तब नगे चलने का या पानी में गिरने का स्वप्न होता है। अगर चारपाई से आगे पाँव बढे हो, तो ऐसा स्वप्न आता है कि हम पहाड से गिर रहे हो या किसी ऊँचे स्थान से।

इन उदाहरणो से यह साफ मालूम होता है कि वाह्य उत्तेजना स्वप्न पैदा करने मे अधिक सहायता देती है।

प्रश्न यह आता है कि वाह्य लहरे एक प्रकार की और उससे सम्बन्धित स्वप्न दूसरे प्रकार क्यो होते हैं। स्ट्रमपेल साहब का कहना है कि लहरो तथा मस्तिष्क का सम्बन्ध निद्रावस्था मे बिगड जाता है तथा उतना साफ

नही रहता। जिसका परिणाम रस्सी को साँप समझने के समान हो जाता है। जैसे हम एक दूर स्थित वस्तु को देखते है। वह सफेद-सी कोई वस्तु मालूम होती है। किन्तु जैसे-जैसे उसके पास आते जाते है वह सफेद पत्थर या टीला, से सफेद कपडा पहने हुए कोई व्यक्ति में परिवर्तित हो जाती है।

इस प्रकार पहले मस्तिष्क पर प्रभाव स्पष्ट नही पडता। इसलिये यह विभिन्नता देखने को मिलती है। जब जाग्रतावस्था मे कुछ वस्तु दूसरी दिखाई पडती है, तब स्वप्नावस्था में अन्तर होना अधिक स्वाभाविक है।

आभ्यन्तरीय

इसमे उन लहरो का प्रभाव अधिक होता है जिनसे दृष्टि तथा अन्य इन्द्रियाँ अधिक परिचित होती है। इन स्वप्नो में अधिक समानता रहती है। जैसे प्रात काल के स्वप्न मे लहरे प्रकाश से अधिक मिलती है। ये बाद मे आँखो से हो कर मस्तिष्क मे सूचना देती है। इसी कारण जो प्रात देर तक सोने के अभ्यासी होते है उन्हे अधिक स्वप्न दिखाई देते है।

आभ्यन्तरीय भौतिक

हमको अपने शरीर के अन्दर कार्य करनेवाले अवयवो का ज्ञान नही रहता। वे बिना किसी प्रकार की लहरें दिए हुए कार्य करते रहते है। उनकी उपस्थिति तभी मालूम होती है जब उनमे किसी प्रकार की विकृति आ जाती है।

मनोवैज्ञानिको का कहना है कि निद्रावस्था मे मस्तिष्क उनकी खबर विशेष रूप से लेता है। जाग्रतावस्था मे उसके पास अन्य कार्यों की भरमार रहती है। इसी कारण हम देखते हैं कि दिन के शोर-गुल समाप्त होने पर रात्रि के समय रोगी अपने कष्ट को अधिक अनुभव करता है। वह जाग्रतावस्था मे इन अवयवो की लहरो पर विशेष ध्यान नही दे पाता। उन्ही लहरो पर वह निद्रावस्था में ध्यान देता है। इसलिये इस प्रकार के स्वप्नो पर विशेष ध्यान देना चाहिए, क्योकि यह बीमारी होने के पहले आगाह कर देता है।

मेरे एक रोगी ने देखा कि उसके दाँत गिर रहे है, उसके तीन दिन बाद उसे टाइफाइड हो गया। इससे मालूम होता है कि आँतो के खराब होने की सूचना मस्तिष्क को तीन दिन पूर्व ही मालूम हो गई थी।

आयुर्वेद मे 'चरक' तथा 'सुश्रुत' ने विभिन्न प्रकार के स्वप्नो का वर्णन किया है, जो निदान (रोग पहचानना) तथा साध्यासाध्यता (अच्छा होगा या नही) पर विशेष बल देते है इस प्रकार का कोई भी वर्णन पाश्चात्य वैज्ञानिको ने नही किया है। उदाहरण स्वरूप—

"लभेताश्नीत वा पक्वमन्न यश्च पिबेत् सुराम्।
स्वस्थ स लभते व्याधि व्याधितो मृत्युमृच्छति ॥"
(सुश्रुत)

जो पका हुआ भोजन तथा शराब पीना स्वप्न में देखता है वह स्वस्थ है, तो बीमार पड जायगा और अगर बीमार है, तो मर जायगा। इस प्रकार बहुत से स्वप्नो का एक पाठ ही दिया है। यह आयुर्वेद की सूक्ष्म देन है। घबराहट के स्वप्नो को फेफडे या हृदय के विकार का प्रमाण सभी मानते है। विकृत अगो की सूचना हमे स्वप्न द्वारा पहले से ही मिल जाती है अर्थात् रोग के लक्षण होने के पूर्व। हृदय विकार के स्वप्न बडे-छोटे होते हैं तथा वे हमे जगा देते हैं। पाचन-सस्थान की विकृति से पैदा हुए स्वप्नो मे मनुष्य विभिन्न प्रकार के भोजन खाता है। स्वप्नदोष व्यक्ति की लैगिक इच्छा का द्योतक होता है।

मनोवैज्ञानिक

स्वप्नो का सम्बन्ध जब जाग्रतावस्था से स्थापित किया जाता है तब यह मालूम होता है कि मनुष्य उन विषयो को स्वप्न में देखता है जिसे उसने किसी न किसी रूप में जाग्रतावस्था में देखा है। वह अपनी रुचि से सम्बन्धित विषयो को विशेषकर देखता है। क्योकि ये विषय जाग्रतावस्था से स्वप्नावस्था मे बडी सरलता से चले जाते है।

स्वप्नो को क्यो भूल जाते है ?

हम कहा करते है कि रात्रि में एक बहुत सुन्दर स्वप्न हमने देखा है, परन्तु उसे भूल गए। इस भूलने के विभिन्न कारण है।

(१) जो कारण किसी विषय को जाग्रत अवस्था में भुला देते है वे सभी कारण स्वप्नो को भी भुला देते है। यह स्वाभाविक है। अगर मनुष्य मे भूलने की आदत न हो, तो वह पागल हो जाये तथा शायद ही उसका कोई

मित्र सम्बन्धी बना रहे। बचपन से न जाने कितने अत्याचार, लड़ाई, झगड़े एक दूसरे से करते रहते है तथा हम उन्हें भूलते भी रहते हैं। अगर न भूले, तो माँ-बाप, भाई-बहन, पत्नी, पुत्र सभी से झगड़ा बना रहे।

(२) बहुत-से स्वप्नो मे आकार आदि इतने विचित्र रहते है कि हम उन्हे स्मरण नही रख सकते।

(३) अगर किसी कविता को अस्त-व्यस्त करके तथा बिना किसी भाव या अर्थ का बना डाले तो उसे याद करना कठिन होता है। भावपूर्ण तथा नियमबद्ध कविता तथा विषय याद रहते है।

स्वप्नो मे यही दोष होते है। जिन स्वप्नो मे कोई नियमबद्धता नही होती तथा जो बिना सिर-पैर के होते है, वे याद नही रहते।

(४) जाग्रतावस्था मे आते ही ससार के सुख-दु ख, चिन्ता, काम, शोर-गुल आदि सभी मस्तिष्क को घेर लेते है। इसलिये स्वप्नो की मृदु रेखाये मिट जाती है और हमें स्वप्न याद नही रहते।

(५) अधिकतर लोग स्वप्नो के बारे में नही सोचते। परन्तु जिन लोगो की आदत स्वप्नो के बारे मे सोचने की होती है, उन्हे स्वप्न याद रहते है।

स्वप्नो का प्रभाव

(१) डेल बूफ का सिद्धान्त—इसमे जाग्रतावस्था तथा स्वप्नावस्था मे विशेष अन्तर नही माना जाता। इसमे जाग्रतावस्था का मनोवैज्ञानिक प्रमाद स्वप्नावस्था मे पूर्ण-रूप से चला जाता है।

(२) भौतिक सिद्धान्त—स्वप्न हमेशा जाग्रतावस्था में दिखाई देते है। मस्तिष्क को थकाने वाले पदार्थ इकट्ठा हो जाते है। उन्हें रक्तप्रवाह धीरे-धीरे बहा ले जाता है। इस तरह कुछ भाग मस्तिष्क के साफ हो जाते है, कुछ साफ होते रहते है और इस बीच के काल मे स्वप्न पैदा होते है। यही कारण है कि प्रात काल के स्वप्न मध्य रात्रि के स्वप्नो से अधिक भावपूर्ण होते है क्योकि इस समय मस्तिष्क को थकाने वाले पदार्थ बहुत ही अल्प मात्रा में रह जाते है।

(३) रोबर्ट का सिद्धान्त—मनुष्य अधिकतर दिन के प्रभावहीन विषयो को स्वप्न मे देखता है। दिन के प्रधान विषयो को यदाकदा ही स्वप्न में देखता है। पूर्ण हुए विषय तथा जिन विषयो का पूर्ण निर्णय हो चुका है उन्हे स्वप्न में नही देखा जाता। स्वप्नो द्वारा हम मस्तिष्क से न जाने कितने विषय बाहर निकाल देते है जो कि जाने-अनजाने मस्तिष्क मे पहुँच जाते है। अगर स्वप्न मनुष्य के जीवन से पृथक कर दिया जाय तो मस्तिष्को मे विकार पैदा हो जायेंगे, क्योकि न जाने कितने विषयो तथा बातो की कितनी रेखाए मस्तिष्क मे पडती जायेंगी और ये रेखाए मस्तिष्क को भार पहुँचायेंगी, स्मरणशक्ति तथा ग्राह्य शक्ति कम होती जायगी। इसलिए स्वप्न द्वारा हमारे मस्तिष्क मे पड़ी रेखाए मिट जाती है तथा मस्तिष्क हल्का हो जाता है।

(४) बूर्डा का सिद्धान्त—स्वप्न मस्तिष्क का स्वाभाविक गुण है तथा वाह्य बातो द्वारा यह सचालित नही होता।

स्वप्न मस्तिष्क को आनन्द पहुँचाने के लिये होते है। स्वप्न के अभाव मे हम जल्दी बूढे होते है। यह मस्तिष्क को स्वस्थ रखने के लिये हल्का-सा व्यायाम है।

भारतीय सिद्धान्त

वेदान्त—स्वप्नो में नई दुनिया का निर्माण होता है जो कि 'माया' द्वारा बनाई जाती है। यह माया जिसको हम चेतनता से नही समझ सकते बहुत-सी बातें दिखलाती है जो हमारे जीवन मे किसी प्रकार बीत चुकी होती है। आधुनिक मनोवैज्ञानिक इस माया को अचेतन मस्तिष्क समझते है।

न्याय—निद्रावस्था मे स्वप्न आते है, जिससे न जानते हुए भी मस्तिष्क की लहरे वाह्य दुनिया से प्राप्त होती रहती है और इसका ज्ञान वाह्य अगो 'इन्द्रियो' को नही रहता और ये लहरे पिछले जीवन से कुछ न कुछ सम्बन्ध रखती है।

आयुर्वेद —नाति प्रसुप्त पुरुष सफलान फलानपि।
इन्द्रियेशेन मनसा स्वप्तान् पश्यत्यनेकधा॥

निद्रावस्था मे जबकि मनुष्य अर्ध जाग्रतावस्था मे रहता है तथा मस्तिष्क के पास लहरे पहुँचती रहती हैं, वाह्य जगत की विभिन्न बातो को वह इन्द्रियो द्वारा स्वप्नो में देखता है जो कभी पुरानी बातो के होते है तथा कभी नवीन बातो के।

स्वप्न तथा मस्तिष्क के विकारों का सम्बन्ध

पागलपन का पहला दौर साधारणत घबराहट के स्वप्न के बाद शुरू होता है। अगर स्वप्न में भूत-प्रेतों को अपने साथ नाचते देखे तथा बाद में पानी में डूब जाय

तब वह मस्तिष्क-विकार से जरूर पीड़ित होगा और प्राण त्याग देगा।

विवेचन

(मनोवैज्ञानिको द्वारा)

(१) पागल जाग्रतावस्था मे स्वप्न देखता है।

(२) पागलपन एक स्वप्न है, जिसमे इन्द्रियाँ जागती रहती है।

(३) स्वप्न थोडा सा पागलपन है तथा पागलपन एक लम्बा स्वप्न है।

बेतरतीबी से मिले विचारो तथा निर्णय की कमजोरी ही स्वप्न तथा पागलपन के प्रधान विषय होते है। बीमारियो मे बडबडाना आदि को रोगी बिना आराम का स्वप्न देखता है।

स्वप्न इच्छापूर्ति का साधन

स्वप्न हमेशा बिना अर्थ के नही होते, न बेकार होते है। अगर प्यासा मनुष्य सोता रहता है तो वह जाग उठता है। जागने के पहले वह स्वप्न देखता है जैसे वह कुछ पी रहा है। प्यासा रहने से पानी पीने की इच्छा रहती है। स्वप्न उसे जगाकर पूरा कर देता है। पानी पीकर वह सो जाता है और स्वप्न नही आते। इसी प्रकार हर स्वप्न किसी न किसी प्रकार से इच्छा की पूर्ति करते रहते हैं। इन्हें दो भागो में बाँटा जा सकता है। (१) इच्छा की पूर्ति, (२) इच्छा की पूर्ति, न पहुचाने आने वाले स्वप्न—जो कि छिपाए जाते है। पहले प्रकार के स्वप्न बच्चो को अधिक दिखाई देते हैं और दूसरी प्रकार के बडो को।

स्वप्नो के प्रकार

आधुनिक मनोवैज्ञानिक सभी स्वप्नो को इच्छापूर्ति वाले मानते है परन्तु 'चरक' ने इन्हे सात प्रकार का माना है।

दृष्ट श्रुतानुभूत च प्रार्थित कल्पित तथा।
भाविकतदोषजञ्चैव स्वप्न सप्तविध विदु॰॥

सुने-देखे, अनुभव किये हुए, करने की इच्छा वाले, करने के पक्के इरादे के, करने वाहने की आशा वाले, शरीर की अस्वस्थता के।

इस प्रकार चरक ही एक ऐसे ज्ञाता ससार में हुए है जो स्वप्नो का सच्चा विश्लेषण कर सके। वही स्वप्नों का मनोवैज्ञानिक प्रभाव तथा बीमारी से सम्बन्ध जोड सके जबकि आजकल के मनोवैज्ञानिक विभिन्न यन्त्रो द्वारा भी इतनी दूर तक पहुँचने मे असमर्थ है। हमारे पूर्वजो को स्वप्नो के बारे मे कितना ज्ञान था यह देखकर हमे आश्चर्य होता है।

शेषांश] हेमन्त ऋतु और स्वास्थ्य [६८२ पृष्ठ का

शयन के समय मृगचर्म तथा कम्बल सुखदायक सिद्ध होगे। इस ऋतु मे सम्भोग किया जा सकता है। किन्तु "अति सर्वत्र वर्जयेत्"। रात्रि मे तापने के लिये धधकती हुई आग बन्द कमरे मे रखते समय धुआ निकलने की व्यवस्था कर लेनी चाहिये अर्थात् खिडकी वगैरह खुली रखनी चाहिये और धूनी आदि देते समय स्वयम् उस बन्द स्थान मे भूलकर भी नही रहना चाहिये। यदि सुबह या रात्रि के समय कही कार्यवश बाहर जाना हो तो बन्द सवारी मे जाना चाहिए ताकि शीत से रक्षा होती रहे। हेमन्त ऋतु मे अल्पाहार के साथ ही कटु, तीक्ष्ण, कषाय, वातकारक हल्के, शीतल शुष्क आहार से बचना चाहिये। कर्कश-पूर्वी वायु और शीतल जल का सेवन भी हानिप्रद है। बर्फ, सत्तू, कसेरू, सिंघाडा, पोस्ता, पुराना आलू, केला, मोठ, जौ पुराना अन्न तथा भैस का दूध—ये सभी हेमन्त ऋतु में अपथ्य माने गये है, अत त्याज्य—न ग्रहण करने योग्य है। सक्षेप में, यही आयुर्वेदोक्त हेमन्त ऋतुचर्या है।

गोरक्ष संहिता

(षष्ठ पटल)

(पूर्वतोऽनुवृत्त)

तारकान्तस्य दिव्यस्य कालपाशेन वज्रवत् ।
काठिन्य मौक्तिक लोके तस्या सज्ञा विधीयते ॥५४॥
सबध्नाति रस क्षिप्र धनद स्पर्धते नर ।
कर्षेणैवोपयुक्तेन यमस्तयैव किङ्कर ॥५५॥
हेम तारेण सयुक्त सूतक कारयेदबुध ।
उक्तमूषोदरे सस्थ कर्षाग्नौ तन्निधापयेत् ॥५६॥
मुखे तस्य मणिर्देय पूर्णिमाया (?) निर्ह्नुत ।
त्रिपुरादिहित मन्त्र धारयेत्कालयोगत ॥५७॥
सोमस्याशुसमायोगात्तारका तु (न्तो) मृतोपम ।
बध्नाति स्पर्शनात्सूत (त) रञ्जत्यत्र न सशय ॥५८॥
महानलसहो ह्येषु सारयित्वा महारसम् ।
वेधयेत्सर्वलोहानि कोटघशेन महारस ॥५९॥
कर्षेणैवोपयुक्तेन विश्वार्थ व्रजति क्षणात् ।
अमरश्च तथा विन्ध्यो यथा रुद्रस्तथैव स ॥६०॥

अथ चपलस्य कर्म सर्वस्वे ।

वङ्गवत्द्रवते वह्नौ च (प) लस्तेन कीर्तित ॥६१॥
क्षीयते नापि वह्निस्थ ( ) सत्वरूपो महाबल ।
इदृशश्चपलो वा स्याद्वादिना वादकर्मणि ॥६२॥
वस्त्रेण बध्वा चपल लङ्घयेद्यदि सागरम् ।
वस्त्रेण वेष्टघते सद्यस्तेन तच्चपलो मत ॥६३॥
सितपीताऽरुण कृष्ण इति भेदाच्चतुर्विध ।
चपलेन सम सूतो क्षणेनैव निबध्यते ॥६४॥
द्रावकेन तु योगेन मूषालेप तु कारयेत् ।
हेम्नैवाऽथ च तारेण योजयित्वा महारसम् ॥६५॥
खदिराग्नावधो धाम्य तत्क्षणान्मिलति ध्रुवम् ।
चतुर्थांशेन तु तस्य ग्रास दद्याद्धि साम्लकम् ॥६६॥
चणकाम्लेन समर्द्य द्रावक तु विनिक्षिपेत् ।
कृत्वा गर्भद्रुर्ति तस्य धाम्य (म्य) मूषागत हि तत् ॥६७॥
तत्क्षणाद्बन्धमायाति वज्रौपम्यो न सशय ।
सारयित्वा सम हेम तारैकशत वेधितम् ॥६८॥
सहस्रलक्षकोटीभि कुर्यादेष रसोत्तम ।
चारणोत्तरयोगेन उच्चवेधी क्रमाद्भवेत् ॥६९॥
यदा कल्प पलेनैव उपयुक्तेन जीवति ।
अथ वज्रस्य पातेन सूतको बन्धमाप्नुयात् ॥७०॥
विबोध्य हेमताराभ्या वज्रकन्दरसेन तु ।
ततस्तद्धि न्यसेत्सूत निर्मले धा (धो) षभाजने ॥७१॥
समुन्नता यदा मेधा (मेघा) जेष्ठाषाढेऽम्बुपूरिता ॥
कार्तिक वाश्वयुजि वा नभस्योपरि विन्यसेत ॥७२॥
वने वा तरुशाखाया यत्र कश्चिन्न पश्यति ।
आरामशून्यगेहे वा यत्र वज्र निपातयेत् ॥७३॥
तडित (त) घोषप्रिया नित्य जीमूतस्या क्वचित्क्षण ।
निष्कामवातयोगेन तदावस्य तु तत्र सा ॥७४॥
निप्यते तत्क्षणादेव भस्मता सन्नयेद्रसम् ।
निपुणस्तद्रस ग्राह्यवज्रकन्देन लेपिते ॥७५॥
उत्थाय निक्षिपेत्सूत तार हेम च सयुतम् ।
शतांशेन तु तेनैव छादयित्वा तवोपरि ॥७६॥
अथ (न्ध) यित्वा धमेद्धीमास्तद्भस्म तत्क्षणाद्भवेत् ॥
पुन शतेनैव गोलक सर्वजो भवेत् ॥७७॥
हेमतारसमायुक्त सारयित्वा सम बुध ।
शतसाहस्त्र (स्र) योगेन लक्षकाशप्रयोगत ॥७८॥
वेधयेत्सर्वलोहानि क्रमाद्धेम सित भवेत् ।
पलोपयोगमात्रेण महाकल्पप्रदो भवेत् ॥७९॥
रक्ताभ्रस्य ततो वक्ष्ये यथाकर्म व्यवस्थितम्
योगेनैकेन विधिवदर्क हेम्ना नियोजयेत् ॥८०॥
यथा करोति बन्ध सूतकस्य तथा शृणु ।
यान्यमलसारसा[1] पीत सिद्ध वन्योपलाग्निना ॥८१॥
चक्रयोगेन निर्बीज खल्वाचूर्ण समायुतम् ।
चाङ्गेरी कोष्ट्रकी रम्भा दधिस्थ (त्थ) दधिवारिणा ॥८२॥
क्षारमूत्र त्रिधा पीत पादटङ्कागुहागतम् ।
वज्रमूषादिक्षि (दी) प्ताग्नौ खादिरे द्वन्द्वता व्रजेत् ॥८३॥
खज वातेन योगेन पतत्यथ निरञ्जनम् ।
खल्वावशेषित कृत्वा वापसेकेन निर्दहेत् ॥८४॥
टङ्कसिन्धुधरा काक्षी रञ्जनी शक्लयोजनात् ।
रक्तपीतेन तैले (न) रक्त रागेन रञ्जितम् ॥८५॥

१—पादेऽस्मिन्नवाक्षराणि पादभ्रश सूचयन्ति ।

खख गुरुत्मता याति दग्माद्वै मातृकोत्तरम् ।
बलिना रक्ततैलस्य भ्रष्ट भागस्य जीवितम् ।।८६।।
तत्खख टके सूते सप्ताह स्वेदयेन्मनाक् ।
तदारविंदलेप त (न्तु) विश्राम पुटित तु तत् ।।८७।।
वर सयोज्य लेपेन विश्रामपुटित तत ।
लिप्ता (प्त) गुहागत (त) ध्मात त्रिसार मात्रि (तृ) कोत्तरम ।।८८।।
स्वस्वा (खखा) भ्र समचूर्णं तु हेमाभ्रस्यैव चारणात् ।
सितहिंगुधरा काक्षी सितकनक टङ्कणम् ।।८९।।
जलशूकमवक्षारस्त्रिरथ वमनीरस ।
सोष्मे (ष्णे) समर्द्य याम तु गर्भोदरभवोभवेत् ।।९०।।
बलिना व (ा) सित भाव्य मुहु क्षारेण सप्तधा ।
दोलाग्निसोमसचीर्णं विधिनानेन सर्वजम ।।९१।।
खजाभ्रनिर्गते सारे समसारित मर्वज ।
प्रत्यानुसारेण कार्या जीर्णे समचतुर्गुण ।।९२।।
भ्रष्टधा चैव सचीर्ण शतसाहस्र लक्षधा ।
त्रिभागव्यूढ शुल्व तु क्रमात्काञ्चनता नयेत् ।।९३।।
खादेत्सवत्सर त्वेक माषनिष्पावरक्तिका ।
जरामृत्युविनिर्मुक्तो कल्पायुर्जायते नर ।।९४।।
सक्रीडेन्मर्त्यलोके तु दिव्यदेहो यदे (दृ) च्छया ।
खखाभ्रकविधान तु सरहस्य प्रकाशितम् ।।९५।।
गोपयितव्य यत्नेन दद्याद्वैसव्यकर्मणि ।
सस्यकस्याप्यतोवक्ष्ये यथा कर्म व्यवस्थितम् ।।९६।।
पूर्वोक्तेन विधानेन पातयित्वा तु सस्यकम् ।
रसैश्चोपरसैश्चैव यथा लाभेन वापयेत् ।।९७।।
रक्ततैले निषेक्तव्य ततो हेम्ना नियोजयेत् ।
द्वन्द्वमेलापकेनैव तद्रसे चारयेदबुध ।।९८।।
गर्भे द्रव्ये ततो जार्य (र्यं) तेन हेम तु निर्गतम् ।
सारयित्वा (ऽथ) मन्त्रेण शताशेन सम बुध ।।९९।।
वेधेन जायते हेम जाम्बूनदसमप्रभम ।
उत्तरोत्तरयोगेन उच्चवेधी महारस ।।१००।।
महारसायने योग्यो रक्त (क्ति) मात्रोपयोगत ।
जरामयास्था (?) मृत्यु षण्मासान्नश्यति ध्रुवम् ।।१०१।।
समेन दिव्यदेहस्तु खेचरै सह गच्छति ।
सस्यक पतति शोध्य रागस्नेहेन सेचनात् ।।१०२।।
सितानि कृष्णहेमानि षोडशाशेन भावयेत् ।।
उत्तमत्व नयेत्साधि कलमूनान्यवाप्नुयात् ।।१०३।।
सस्यकाश्म तु सभाव्य त्वम्लेन तु यथाक्रमात् ।
रागस्नेहेन सस्नेहात्पञ्चमाशेन वापयेत् ।।१०४।।
रागस्नेहे निषेक्तव्य चतुर्गुणगुणोदयम् ।
हेमात्कर्षस्त्वय श्रेष्ठ सस्यकाश्म न समवेत् ।।१०५।।
तत्सम वाहयेत्तारे रागस्नेहे निषेचयेत् ।
तदर्घमूल्य भवति हेमार्द्धे (र्घे) नाष्टकोणकम् ।।१०६।।
ताराविष्टे सम वाऽपि तारशेष तु कारयेत् ।
तत्पीत जायते हेम (?) पीत सोऽष्टकोणकम् ।।१०७।।
सस्यक पतित ध्मातमम्लवर्गेण सूतकम् ।
चारयित्वा तु पादेन मध्वाज्येन विमर्दयेत् ।।१०८।।
तेन तार पुटे पीत त्रिभि पीत तु जायते ।
पीतेन मन्त्रका (मात्रिका) तुल्य लभते नात्र सशय ।।१०९।।
तेन शुल्व पुट पक्व क्रमेण (?) समन्वितम् ।
हेमार्द्धे (र्घे) न भवेद्धेम सोमार्कं वा पुटे पुटेत् ।।११०।।
हेमार्धार्द्धे (र्घे) भवेद्धेम रससस्यकयोगत ।
मध्वाज्येन कृत कल्प सस्यक सूतमेकत ।।१११।।
सृष्टि त्रया वला शून्य मेघनादरस तथा ।
मुनिपुष्प चैव तेन मर्द्य दिने दिने ।।११२।।
माषक प्राशयेन्मन्त्री दीप्तबीजादिभिर्बुध ।
कामदेववपु श्रीमान पद्मगर्भोपम (मो) वपु ।।११३।।
जरामयविनिर्मुक्त षण्मासाज्जीवितायुत ।
महाकल्प समेनैव सम्यक् सूतक योगत ।।११४।।
चारणाज्जारणान्तेन पद्मरागोपमोद्भ (भ) वेत् ।
सूतको हेमकारी स्याद्धेमयुक्तस्तु सारित ।।११५।।
तारारविन्दारेम्योऽथ शतभेदी (वेधी) महारस ।
उत्तरोत्तर योगेन उत्तरोत्तरवेधकृत् ।।११६।।
तदोपयोगे दीर्घायु खेचरत्वमवाप्नुयात् ।
अथादिकस्य वक्ष्यामि यथा कर्मक्रम श्रृणु ।।११७।।
पतितमग्नितापेन पीतरक्तासित तु तत् ।
तद्धेमयुक्त सूते तु जारयेच्च सम बुध ।।११८।।
रसैश्चोपरसैश्चैव यथा लाभेन चाम्लिजै ।
स्नहैस्तैर्वापयेत्पूर्वं रागस्नेहे निषेचयेत् ।।११९।।
तेन बद्धो रस श्रीमान् भवेदिन्द्रायुधोपम ।
शैलेन निर्गत हेम सारयित्वा सम बुध ।।१२०।।
चतुष्षष्टिगुण तार ताम्रार वाऽथ हेमकृत् ।
तद्धि द्व (?) शतवेधी स्याच्चतुर्धा तु सहस्रधा ।।१२१।।
भ्रष्टधा लक्षवेधी स्यात्षोडशात्कोटिवेधत ।
रसायेन भवेच्छ्रेष्ठो महाकल्पायुदो रस ।।१२२।।

(क्रमशः)

रोग परीक्षा-चिकित्सा

वैद्य पं० सभाकान्त झा, शास्त्री

रोग-परीक्षा चिकित्सा का आवश्यक अग है। रोग का पूर्ण निश्चयात्मक ज्ञान हुए बिना चिकित्सा मे प्राय सफलता नही मिलती। हारीत मुनि कहते है कि जो वैद्य रोग को बिना जाने चिकित्सा प्रारम्भ कर देता है, वह शास्त्र तथा क्रिया का विशेषज्ञ होने पर भी चिकित्सा में सफलता प्राप्त नही करता। अतएव रोग-रोगी, औषध, देश, कालादि का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लेने के बाद ही चिकित्सा प्रारम्भ करनी चाहिये।

रोग किसे कहते है ?

आयुर्वेद वातादि दोष, रस-रक्तादि धातु और मूत्र-पुरीषादि मलो की न्यूनाधिकता जन्य दु खसयोग को रोग मानता है और उसी न्यूनाधिक्य को प्राकृतावस्था मे लाना सफल चिकित्सा कही जाती है। कभी कई ऐसे रोगी भी देखे जाते है, जिनके रोग का ज्ञान सरलता से नही होता अथवा वह रोग ही अदृष्टपूर्व होता है। ऐसी स्थिति मे अनुभवी चिकित्सक रोग की प्रकृति, रोगाक्रान्त अधिष्ठान रोगोत्पादक कारण आदि विषयो का अनुमान कर चिकित्सा करके रोगियो को रोगमुक्त कर देते है।

साधारणतया रोग-परीक्षा अनुमान (प्रश्न द्वारा), प्रत्यक्ष (इन्द्रियो द्वारा परीक्षा) तथा आप्तोपदेश इन तीन विभागो मे विभक्त की जा सकती है। यथा—

"त्रिविध खलु रोगविशेषज्ञान भवति। तद्यथा—आप्तोपदेश प्रत्यक्षमनुमानचेति।"

यद्यपि रोग-परीक्षा विधान का भिन्न-भिन्न आचार्यों के पृथक्-पृथक् है। यथा—सुश्रुत का मत है—"षड्विधो हि रोगाणा विज्ञानोपाय। पञ्चभि श्रोत्रादिभि। प्रश्नेन-चेति।" हारीत का मत है—"दर्शन-स्पर्शन—प्रश्नै रोगज्ञान त्रिधास्मृतम्। मुखाक्षि दर्शनात् स्पर्शनात् शीतादि प्रश्नत परम्॥" भगवान धन्वन्तरि का मत है—पश्येत् स्पृशेत् पृच्छेच्च, त्रिभिरेतै विज्ञानोपायै रोगा॥" वाग्भट का मत है—"दर्शन स्पर्शन प्रश्नै परीक्षेताथ रोगि-णाम्॥" ये भेद पाठको की जानकारी के लिये लिखे गये है। वास्तव में रोग-परीक्षा तो रोगी को देखकर रोगी से प्रश्न पूछकर और रोगी को स्पर्श करने से ही सरलता से हो जाती है।

प्रश्न-परीक्षा

प्रश्न द्वारा रोगी का नाम-जाति, आयु, जन्म एव रहने का स्थान देश, रोगोत्पत्ति और वृद्धि, काल, सात्म्य (आहार और व्यसन), *लक्षण, पूर्वरूप, कारण, मानसिकबल, वात*-मूत्र पूरीषादि मलो की प्रवृत्ति अथवा सग—आदि बातें जाननी चाहिये।

प्रश्न करते समय वैद्य को रोगी द्वारा दिए गए उत्तर को खूब शान्तचित्त से सुनना चाहिये। क्योकि प्राय देखा जाता है—रोगी सामान्य कष्ट को भी अधिकाधिक भूमिका बाध कर बतलाते है। इसके विपरीत कई रोगी भयकर कष्ट को भी सक्षेप मे बतलाते है कई रोगी अन्यथा बात अधिक करते जिनसे रोग का कोई सम्बन्ध नही। ऐसी स्थिति मे वैद्य को चाहिये, कि रोगी की इन बातो से ऊब कर रोगी का विश्वास नष्ट न करे अन्यथा चिकित्सा मे सफलता नही मिलेगी। अत धैर्य तथा प्रेमपूर्वक रोगी से प्रश्न करना तथा उसका उत्तर सुनना चाहिये।

प्रश्न करते समय निम्न बातो पर ध्यान देना आवश्यक है—

१—प्रश्न सक्षिप्त और सारगर्भित हो, (अनावश्यक बातो से रोगी का विश्वास उठ जाता है।

२—एक ही प्रश्न दुबारा न किया जाय (इससे चिकित्सक की उपेक्षा वृत्ति सूचित होती है)।

३—प्रश्न उत्तरात्मक न हो यथा—विबन्ध तो नही, (इस प्रकार प्रश्न करने पर स्वल्प बुद्धि वाले रोगी, विबन्ध होते हुए भी प्रश्न मे सकेत होने से नकारात्मक ही उत्तर देते है) उत्तरात्मक प्रश्न दो स्थानो मे पूछे जाते है—(१) जहाँ चिकित्सक को सन्देह हो, कि वस्तुत इस रोगी को कोई रोग नही, केवल ठोग बना रहा है, अथवा इस व्यक्ति को केवल रोग का बहम मात्र है। ऐसे समय में जान-बूझ कर उत्तरात्मक प्रश्न करने से रोगी भ्रम मे पडकर वस्तु-स्थिति का निर्देश कर देता है। (२) कुष्ठादि रोगो के

पूर्णरूप म स्पर्शज्ञान जानन के लिए सुई अथवा पिन चुभाकर पूछा जाता है कि—मालूम होता है या नही ? अथवा उष्ण-शीत पदार्थों का स्पर्श कराकर पूछना कि उष्ण है या शीत आदि ।

(४) गुप्त रोगो (आतशक-सुजाक) म रोगो के विषय म सभ्यता का विशेष ध्यान रखना चाहिये । (इसम एक ही प्रश्न कई बार पूछा जा सकता है) ।

(५) स्त्रियो से एकान्त म न तो कोई प्रश्न करना और न उनकी परीक्षा ही करना चाहिये । सामान्य और विशेष भेद से प्रश्न परीक्षा दो विभागो म विभक्त की जाती है ।

(१) सामान्य रूप से सभी रोगियो म पूछ जान वाले प्रश्न को सामान्य प्रश्न कहा जाता है । यथा—रोगी का नाम जाति आयु आहार स्थान आदि । (२) जिस प्रश्न द्वारा रोग सम्बन्धी विशेष बातो का ज्ञान होता है उसे विशेष प्रश्न कहते है ।

यथा—निदान पूर्वरूप लक्षण (वर्तमान कष्ट) उपशय रोगी के कुल का वृत्तान्त रोगी के स्वास्थ्य का पूर्व वृत्तान्त रोगोत्पत्ति काल आदि । चिकित्सक उपरि निर्दिष्ट क्रम म अपनी सुविधानुसार परिवर्तन कर सकते है ।

प्रत्यक्ष इन्द्रियो द्वारा परीक्षा

रोग—परीक्षा का दूसरा भेद प्रत्यक्ष (इन्द्रियो द्वारा रोग परीक्षा) है । इसम कान नाक जीभ आख त्वचा आदि इन्द्रियो द्वारा रोग परीक्षा की जाती है । यथा—

(१) **कान**—कानो से सुनकर ही हम जान सकते है कि रोगी को डकार आ रही है आतो म वायु गडगड शब्द कर रहा है । रोगी अनाप-सनाप बक रहा है कण्ठ में घर घर कफ बोल रहा है और स्वरभग हो गया है ।

(२) **नाक**—नाक से ही हम सुगन्ध दुर्गन्ध का ज्ञान होता है नाक से सूघते है तब मालूम होता है कि रोगी के शरीर म एक अपूर्व सुगन्ध या दुर्गन्ध आ रही है । यह गन्ध अरिष्ट सूचक है या स्वाभाविक है । यह जानन के लिए अथवा जख्मो की बदबू वगैरह जानन के लिए नाक से भी काम लेना चाहिये ।

(३) **जीभ**—जीभ से रक्तपित्त के रोगी का हाल तथा प्रमेह रोगी के पेशाब का हाल मालूम होता है । रक्तपित्त वालों के रक्त को यदि कौए या कुत्त न खाऐं तो निश्चय ही रक्तपित्त समझ । मधुमेह के पेशाब पर चीटियाँ लगें तो पेशाब मीठा है एसा समझते है ।

(४) **आँख**—आख से ही देखन पर मालूम होता है कि रोगी का शरीर दुबला या मोटा है रोगी की आकृति अच्छी है या खराब आँख सफद है या पीली । शरीर का रग कैसा है इत्यादि ।

(५) **त्वचा**—त्वचा या चमड से कोई स्पर्श करके ही हम जान सकते है कि रोगी का बदन ठढा है या गरम । शरीर चिकना है या खरदरा कडा है या नरम । सूजन शीतल है या गरम आदि ।

आप्तोपदेश (निदान पचक)

चरकोक्त आप्तोपदेश के अन्तर्गत ही माधव का निदान पचक है । यथा –

निदान पूर्वरूपाणि रूपाण्युपशयस्तथा ।
सम्प्राप्तिश्चेति विज्ञान रोगाणा पञ्चधा स्मृतम् ।।

अर्थात निदान पूर्णरूप रूप उपशय सम्प्राप्ति—इन पाँचो के द्वारा रोग ज्ञान होता है । एसा माधवकार लिखते है । बस इस निदान पचक को ही आप आप्तोपदेश अर्थात् त्रिकालज्ञ महात्माओ का उपदेश समझिए । यद्यपि इन पाचो से रोग ज्ञान हो सकता है परन्तु बगर अनुमान (प्रश्न) और प्रत्यक्ष (इन्द्रियो द्वारा परीक्षा) की सहायता से कुछ भी ज्ञान नही हो सकता ।

हम शास्त्रोपदेश से जानते है कि ज्वर म शरीर तपन लगता है मगर बिना शरीर को स्पर्श किए हम शरीर के गर्म होन का निश्चय कैसे हो सकता है । हम जानते हैं कि पीलिया म रोगी के नत्र नखादि पील हो जाते है किन्तु बिना आँखो से देख हम कैसे मालूम हो सकता है कि रोगी के नत्र नख मूत्र प्रभृति पील हो गय है । हम शास्त्रोपदेश से जानते है कि अमुक रोग म आतो म गुडगुड आवाज होती है । मगर बिना कानो से सुन हम पक्का निश्चय कैसे हो सकता है । हम शास्त्र पढन से जानते है कि चचक अथवा मोतीझरा के रोगी के शरीर म एक प्रकार की बदबू आया करती है । पर बिना नाक से सूघ हम इस बात का पक्का निश्चय कैसे हो सकता है । हम शास्त्र से जानते है कि रक्तपित्त में रोगी का रक्त अशुद्ध हो जाता है । रोगी का खून खराब हुआ है या नही इसकी परीक्षा के लिए रक्तपित्ती रोगी का रक्त कुत्त या कौए को डाला जाता है ।

इस तरह देखा जाता है कि रोग-परीक्षा के लिए अनुमान, प्रत्यक्ष और आप्तोपदेश तीनो की सहायता लेना आवश्यक है। इनमे से किसी एक की कमी होने से रोग परीक्षा अच्छी तरह हम नही कर सकते, अत इसका जानना आवश्यक है।

चिकित्सा

"याभि क्रियाभिर्जायन्ते शरीरे धातव समा ।
सा चिकित्सा विकाराणा कर्म तदभिषजा मतम् ।।"

भगवान चरक ने चिकित्सा की परिभाषा करते हुए उपर्युक्तश्लोक कहा है। अर्थात्—मिथ्या आहार विहार से शरीर में रहे हुए वात, पित्त और कफ धातुओ म उत्पन्न हुई विकृतिजन्य क्रियाओ द्वारा दूर होकर समानता को प्राप्त हो, वह 'चिकित्सा' कहलाती है और चिकित्सको का वही कर्म माना गया है।

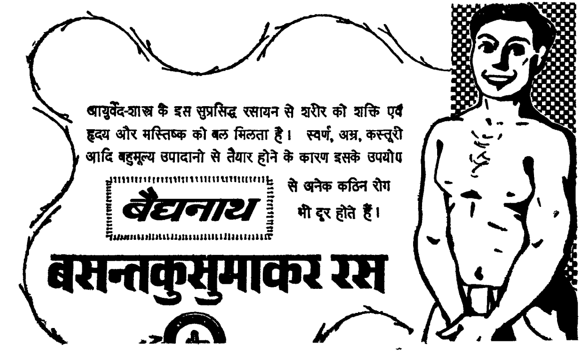
प्रधानतया चिकित्सा के (१) दोष प्रत्यनीक और (२) व्याधि प्रत्यनीक भेद से दो भेद माने गये है।

(१) **दोष प्रत्यनीक चिकित्सा**—दोष प्रत्यनीक का अर्थ होता है दोष के विरुद्ध। वात आदि दूषित धातुओ के न्यूनाधिक लक्षणो पर विचार कर दूषित धातुओ को समस्थिति मे लाने वाली ओषधियो के उपचार और क्रियाओ को दोष प्रत्यनीक चिकित्सा कहते हैं।

रोगी के बाह्य लक्षणो पर विशेष लक्ष्य न देकर जिस दोष प्रकोप से रोग और लक्षणो की उत्पत्ति हुई हो, उस मूल हेतु के विरुद्ध चिकित्सा करने से व दोषजन्य विकार स्वयमेव नष्ट हो जाते हैं। जैसे किसी रोग में वात धातु की विकृति हो, तो प्रथम यह निश्चय करना चाहिये कि रूक्षता, शीतता, चलत्व आदि गुणो में से किस गुण की वृद्धि या ह्रास होने से विकृति हुई है? इस बात को जानकर दोष के गुण विरोधी औषध और आहार विहार आदि क्रियाओ द्वारा धातुओं को सम-अवस्था मे स्थापित करने से उस विकृत दोष से उत्पन्न विकारो का प्रवाह बन्द हो जाता है। इस चिकित्सा को श्रेष्ठ माना गया है।

(२) **व्याधि प्रत्यनीक**—रोग विरुद्ध उपायो की योजना करने को व्याधि प्रत्यनीक चिकित्सा कहते है। जैसे—अतिसार शमनार्थ व्याधि विपरीत स्तम्भक औषध देना। इस चिकित्सा मे दोष-दूष्य का विवेचन नही किया जाता। जिससे कभी-कभी बाहर निकलने योग्य विष का भी अवरोध हो जाने से (यथा—अतिसार की आमावस्था में ही शमन हो जाने से) उस दूषित द्रव्य (विष) का शरीर के अन्य भागो में प्रवेश होकर का-ान्तर मे पुन उसी व्याधि की अथवा अन्य किसी व्याधि की उत्पत्ति हो जाती है।

आयर्वेद मे इन दोनो प्रकार की चिकित्सा मे दोष प्रत्यनीक श्रेष्ठ और व्याधि प्रत्यनीक कनिष्ठ चिकित्सा मानी गयी है। दोष प्रत्यनीक चिकित्सा मे रोग के नाम अथवा रोग की सख्या के बोध को महत्त्व नही दिया गया परन्तु रोग के दोष-दूष्य और स्थान आदि के ज्ञान को ही आवश्यक माना गया है। किस प्रकार कौन दोष दूषित हुआ? किस दोष का किन दूष्यो से सयोग हुआ और कौन-कौन स्थान दूषित हुए—इन विचारो के निश्चय को ही प्राधान्य दिया गया है। इनका सम्यक बोध हो जाने पर चिकित्सा निर्भयतापूर्वक की जा सकती है।



मसूरिका

(Small Pox)

वैद्य योगेन्द्रचन्द्र शुक्ल, आयुर्वेदाचार्य, आयुर्वेदरत्न

माता शीतला का नाम जितना सुन्दर और श्रवण सुखद है, मानव शरीर में प्रकट होनेवाला उनका स्वरूप उतना ही रौद्र, भयकर और कष्टप्रद है। भारतवर्ष में सहस्रो बालक प्रतिवर्ष इस रोग से पीडित होकर करुण चीत्कार करते काल-कवलित हो जाया करते है। किन्तु अज्ञानान्धकार मे पडे धर्मभीरु भारतवासी उन अबोध निरीह बालको की करुण चीख-पुकार और मृत्यु से दुखी होते हुए भी उनकी रक्षा का कोई उपाय नही करते। जनता मे आमतौर पर यह अधविश्वास प्रचलित है कि इस रोग मे कदापि चिकित्सा न करनी चाहिए, अन्यथा शीतला माता कुपित हो जाती है। यह विश्वास जितना भ्रममूलक है, उससे अधिक विनाशकारी है। इस सम्बन्ध मे आगे अधिक प्रकाश डाला जायगा।

रोग परिचय—बहुत सक्रामक व्याधि है। रोगी बालक के निकट सम्पर्क मे आने से छूत फैलती है। यह रोग महामारी के रूप मे फैलने पर तेजी से फैलता है और बहुतो की मृत्यु होती है। बेचैनी के साथ निरन्तर रहने-वाला ज्वर, सारे शरीर मे विशेषतया कटि मे तीव्र पीडा, सारे शरीर मे विस्फोट या छाले उत्पन्न होना इसके मुख्य लक्षण है।

कारण-काल—यह सक्रामक रोग विषाणु (Virus) के उपसर्ग के कारण उत्पन्न होता है। गोलाकार बिन्दु के रूप मे रोगविष त्वचा के निम्नस्तर में फैलकर विस्फोटक प्रभाव उत्पन्न करता है। यह रोग हर अवस्था और ऋतु में स्त्री-पुरुषो मे समान रूप से उत्पन्न हो सकता है, तथापि बचपन में विशेषतया होता है। प्रौढो को यह रोग प्राय कम होता है। एक बार रोग हो जाने पर प्राय रोगक्षमता (Immunity) हो जाने से रोग दुबारा प्राय नही होता। यह विशेषतया शिशिर के अत या वसत मे सामूहिक रूप से फैलता है। रोगोत्पादक कीटाणु अभी अज्ञात है। आयुर्वेद-शास्त्र तो सब रोगो का मूल कारण अपथ्य सेवन से प्रकुपित वात-पित्त और कफ (त्रिदोष) को ही मानता है। किन्तु आधुनिक विज्ञानवेत्ता इसे न मानकर कीटाणुवाद के चक्कर मे पडे रहते है। इस रोग के सम्बन्ध मे आयुर्वेद के आचार्यो का मत है कि विक्षोभक, विदाहकारी, उत्तेजक और रक्त-दूषित करने वाले आहार-विहारादि के सेवन से दोष-प्रकुपित रक्त मे असाधारण उबाल-सा आ जाता और रक्त सन्तप्त हो जाता है तब रोग की उत्पत्ति होती है। कडुए, खट्टे, सड, गले भोजन, फल, शाक अधिक खाने से, घनी बस्ती, प्रकाश और शुद्ध वायु रहित गन्दी बस्ती या सकुचित स्थान मे बहुत लोगो के निवास करने से जैसा कि मेले और सिनमाघरो मे होता है, मसूरिका रोग के प्रसार होने मे सहायता मिलती है। दूध-मछली या दूध के साथ खट्टे फल जैसे विरुद्ध गुण के द्रव्य मिलाकर खाने से, गन्दे अशुद्ध सक्रमित जल का प्रयोग करने से अथवा क्रूर ग्रहो का प्रकोप होने से शीतला रोग की उत्पत्ति होती है।

सम्प्राप्ति—उपर्युक्त आहार-विहार का सेवन करने से वातादि दोषो का प्रकोप होकर शारीरिक रक्त मे विक्षोभ उत्पन्न हो जाता है—वह अत्यधिक बिगड जाता है। शरीर में इस कारण मसूरिका के दाने या विस्फोट निकल आते है।

पूर्वरूप—दाने निकलने के पूर्व से ही रोगी को सहसा तीव्र ज्वर हो जाता है। सारे शरीर मे खाज होती है। सारे शरीर, सन्धियो और विशेषतया कमर मे तीव्र पीडा, भोजन या किसी काम मे रुचि नही होती, चक्कर आते हैं, शरीर की त्वचा सूजी हुई लाल और ममरियाई-सी होती है। नेत्र की श्लेष्मल कला (Conjuctiva) में रक्ताधिक्य, दाने होते है। इस प्रकार विचार करने से ज्ञात होता है कि आयुर्वेदोक्त मत ही ठीक है, क्योकि ज्वर, अगमर्द रोग का लक्षण नही पूर्वरूप है, जो मुख्य लक्षण विस्फोट की उत्पत्ति के बाद शात प्राय हो जाता है।

लक्षण—आरम्भ में शिर, शरीर विशेषतया कटिप्रदेश में तीव्र वेदना, व्याकुलतायुक्त निरन्तर रहनेवाला ज्वर, शरीर भर में दाह तीसरे दिन तक रहती है। पाँचवें दिन

असली विस्फोटो या दानो की उत्पत्ति होती है। दाने पहले कठिन, लाल, विन्दु रूप में उगते हैं और बाद मे छर्रे जैसे हो जाते है, जो कि स्पर्श किए जा सकते हैं। प्राय दानो की उत्पत्ति के बाद ज्वर मन्द पड जाता है। विस्फोटो मे मवाद पड़ते समय फिर कुछ बढ जाता है। प्राय पूयोत्पत्ति के बाद ज्वर शान्त हो जाता है अथवा रह भी सकता है।

विस्फोट (Rash) दो प्रकार के होते है—(१) पूर्वरूपीय विस्फोट (२) असली विस्फोट।

(१) पूर्वरूपीय विस्फोट—ज्वरारम्भ के दो दिन बाद प्रकट होते हैं। ये वक्षण प्रात मे प्रकट होकर ऊपर नाभि की ओर और वक्षण बधन के २-३ इच नीचे फैलते हैं। ये रक्तवर्ण के होते हैं—कभी कभी इनसे रक्तस्राव भी होता है।

(२) यथार्थ (असली) विस्फोट—असली दाने मस्तक, चेहरे से आरम्भ होकर हाथ-पैर, धड, उदर, पीठ, मुख, नेत्र की श्लैष्मिककला मे निकलते है। ये धड मे कम, हाथ-पैर, चेहरादि दूरस्थ अगो मे अधिक निकलते, खुले रहनेवाले भाग तथा वाह्य पृष्ठ पर विशेषतया निकलते है। काँख मे प्राय नही निकलते। अवस्था भेद से दाने चार भागो मे विभक्त किए जा सकते है।

(अ) आमविस्फोट (Maculas)—ये कठिन दाने त्वचा मे बहुत गहराई मे होते हैं। स्पर्श करने पर छर्रे जैसे प्रतीत होते है। स्फोट स्थान मे ऊष्मा कम, स्फोटो का रग त्वचा समान, स्फोट कठिन और स्थिर होना, स्फोटो मे वेदना मन्द होना, उनमे उभार भी कम नही होना आमावस्था के लक्षण है।

(ब) पच्यमान विस्फोट (Velicles)—इस अवस्था मे स्फोटो मे नीर भरना आरम्भ होने से यथाक्रम उनका उभार बढने लगता है। भीतर दोषसचय पाकाभिमुख होने से वेदना बहुत बढ जाती है। मानो स्फोट स्थल मे सुई चुभाई अथवा शस्त्र गडाए जा रहे हो, अग्निक्षार से जलाया जा रहा हो, बिच्छू काट रहा हो—ऐसी पीडा होती है। रोगी को लेटे-बैठे किसी दशा मे भी शाति नही मिलती। ज्वर अधिक रहता है, जलन होती है। रोगी के लिए यह अवस्था बडी कष्टप्रद होती है। त्वचा (स्फोटो की) का रग परिवर्तित हो जाता है।

(स) पक्वविस्फोट (Puctules)—इस अवस्था मे स्फोटो में पाक होता, अत स्फोट स्थल की त्वचा पाण्डुवर्ण, शोथ, वेदना में कमी, कुछ सिकुडन, स्फोट भरे हुए पूयोद्गम के कारण खुजली मालूम होती है। विभिन्न वेदनाएँ, दाह, ज्वर, पिपासा आदि लक्षण घट जाते हैं। रोगी पहले की अपेक्षा कुछ शाति और राहत अनुभव करता है।

(द) विशुष्यमाण विस्फोट—इस अवस्था मे विस्फोट का पूय सूखकर पपडी-सा हो जाता है और त्वचा समतल होने लगती है, किन्तु चिह्न अवशिष्ट रह जाते हैं। सपूयावस्था मे खुजला देने से सडन भी पैदा हो सकती है और घाव देर मे भर सकते हैं।

दोनों मसूरिका के दानों में अतर—पूर्वोक्त वर्णन से विदित है कि मसूरिका के दाने धड मे कम तथा दूरस्थ हाथ, पैर, चेहरे आदि अगो मे तथा बाह्य पृष्ठ और खुले रहनेवाले भागो मे अधिक निकलते है। किन्तु लघुमसूरिका (Chicken Pox) के दाने खुले और दूरस्थ भागो की अपेक्षा धड, उदरपृष्ठ मे अधिक निकलते हैं। मसूरिका के दाने काँख मे नही निकलते। लघु मसूरिका के दानो का निकलना ज्वरारम्भ के प्रथम दिन से ही आरभ हो जाता है। पहले दाने अन्त मुख, स्वरयत्र, नेत्र की श्लेष्मिक कला में निकलकर धड, उदरपृष्ठ एव सारे शरीर मे फैलते है। दाने गुच्छो मे निकलने के कारण एक ही समय मे विभिन्न अवस्था के देखे जाते हैं। कोई सजल, कोई सपूय एव कोई सूखे भी होते हैं। किन्तु मसूरिका के दाने ललाट, मुखमण्डल और कपोल की त्वचा से आरम्भ होकर कलाई, भुजा, धड, उदर, पीठ आदि पर निकल कर फैलते है। दाने झुण्ड या गुच्छे के रूप मे नही निकलते, प्राय एकसे होते हैं। विभिन्न अवस्था मे एक ही समय मे नही पाये जाते। दाने के चारो ओर लालचक्र-सा तथा बीच मे दबाव होता है, जैसा कि 'चरक सहिता' मे भी वर्णित है—"याश्चापरास्यु पिडका, प्रकीर्णा स्थूलाणु गत्राअपि पित्तजास्ता। सर्वत्र गात्रेषु मसूर भा श्यो मसूरिका पित्त कफ प्रदिष्टा। उत्पत्ति-प्रकार और चिकित्सा की दृष्टि से आयुर्वेदिक वर्णन-शैली बहुत महत्त्वपूर्ण है। दोषानुसार रोग का वर्णन करने से रोग की पहचान और चिकित्सा सरलता के साथ की जा सकती है।

वातज मसूरिका के दाने श्याम और गुलाबी रग के, रूखे, तीव्र पीडायुक्त और कठिन होते हैं। इनमे पूयोद्गम देर से होता है। परिणामत व्याकुलता, ज्वरादि लक्षण भी तीव्र और अधिक काल तक पाए जाते हैं। अस्थि,

सन्धियों में टूटन की-सी पीड़ा खाँसी कम्पन थकान भूख मुख तालू ओठ सूखना अरुचि तृष्णा आदि शारीरिक अन्य लक्षण पाए जाते हैं।

पित्तज मसूरिका में विस्फोट पीले श्वेत होते हैं। दाह पीडायक्त होता है। पूयोत्पत्ति शीघ्र होती अन्य लक्षणों में पतले दस्त आ दर्द दाह तृष्णा अरुचि नेत्र मुख के अन्दर दाने निकलने के कारण पाक और लालिमा तीव्र ज्वर होता है। रक्तज मसूरिका में यही लक्षण प्रबल होते हैं।

कफज मसूरिका में दाने श्वेत स्निग्ध बड़े आकार के मन्द वेदनायुक्त किन्तु खुजली तीव्र मुख से कफ स्राव चर्म गीले वस्त्र से ढके रहने के समान शीतल शिर और शरीर में पीड़ा तथा भारीपन जी मिचलाना अरुचि नींद आना झपकी सी लगे रहना जकाम होकर बिगड़ जाने से न्यूमोनिया (Pneumonia) होने का भय रहता है।

सन्निपातज—तीनों दोषों के प्रकोपजनित मसूरिका में तीनों दोषों में वर्णित लक्षण होते हैं। दाने नीले चिपटे लम्बाकार मध्य में अधिक दबे तीव्र पीड़ा युक्त देर से पूयोत्पत्ति दुर्गन्धित सड़े स्राव वाले होते हैं। इसके अतिरिक्त विकृत दोष विभिन्न धातुओं में स्थित होकर विभिन्न लक्षणों के मसूरिका उत्पन्न करते हैं। जैसे कि—

रसगत मसूरिका के विस्फोट जल के बुलबुले के समान चमकीले होते हैं। फूटने पर इनसे जलस्राव होता है।

रक्तज के विस्फोट लाल शीघ्र पकने वाले स्फोटों के ऊपर की त्वचा पतली होती है। ये साध्य माने गए हैं। फूटने पर दोनों से रक्त-स्राव होता है।

मांसगत के दाने कठिन स्निग्ध पतली त्वचा वाले देर से पकनेवाले खुजली और दाहयुक्त होते हैं। भ्रम मद बेचैनी तृष्णा और मूर्छा भी होते हैं।

मेदोगत मसूरिका के दाने कोमल गोल उन्नत स्थूल और काले रंग के होते हैं। वेदना घोर ज्वर मूर्छा दाह सन्ताप ये शारीरिक अन्य लक्षण होते हैं। इसके रोगी कम बचते हैं।

अस्थिगत मसूरिका के दाने बहुत छोटे कम उन्नत प्रायः शरीर के समतल से चिपटे होते हैं।

मज्जागत मसूरिका में भयानक पीड़ा व्याकुलता और मूर्च्छा होती है। मर्मच्छेदन की-सी पीड़ा होती है रोगी की अस्थि भँवरों से छेदी गयी के समान बहुछिद्रा हो जाती है। इसका रोगी नहीं बचता।

शुक्रगत मसूरिका के दाने पके हुए के समान चिकने चमकीले स्पर्श के श्लक्ष्ण (Smooth) होते हैं। अत्यन्त वेदना शरीर त्वचा गीले वस्त्र से ढके हुए के समान होती है रोगी में बेचैनी मूर्छा दाह प्रलाप आदि अधिक होते हैं इस अवस्था का रोगी बचता नहीं।

साध्यासाध्य—त्वचा (रस) गत रक्तगत पित्तज कफज पित्त श्लेष्मज मसूरिका उचित उपचार होने से अच्छी हो जाती है। वातज वातपित्तज मसूरिका कठिनता से अच्छी होती है। मसूरिका के जिस रोगी में तीनों दोषों के लक्षण मिलें एवं कुछ दाने मूंग के समान लाल कुछ जामन के समान काले या अधिक काले सघन निकलें—लोहे के तारों की जाली के समान प्रतीत हो अलसी के बीज के समान हो वह सन्निपातज मसूरिका असाध्य होती है।

अरिष्ट—श्वास हिचकी अचेतना तीव्र दारुण ज्वर प्रलाप तीव्र प्यास दाह आंख फाड़कर देखना (घूरना) मुख नेत्र और नासिका से रक्तस्राव गले में घरघराहट श्वासकष्टयुक्त (Pneumonic stage) के लक्षण शीघ्र मृत्यु होने के सूचक हैं।

पारस्पर्य के निदान लघु मसूरिका (Chicken Pox) से करना चाहिए। बचपन के साथ अकस्मात् होनेवाला ज्वर निरन्तर बना रहे सारे शरीर विशेषतया कमर में असह्य वेदना पांचवें दिन असल दाने निकलना तथा पूर्व वर्णनानुसार लघु मसूरिका और मसूरिका विस्फोटों के लक्षण की समीक्षा करके सहज ही रोग निश्चित किया जा सकता है।

चिकित्सा—यह रोग अत्यन्त संक्रामक होता है। अतः यह आवश्यक है कि यदि रोगी को अस्पताल में भर्ती करने की सुविधा न हो तो घर के स्वच्छ हवादार और जिसमें किसी किस्म का सामान न हो ऐसे खुले कमरे में परिवार के अन्य सदस्यों से सर्वथा पृथक रखा जाय। चारपाई कसी हुई उस पर कोमल गद्दा और चादर बिछी हो मुलायम तकिया भी हो। रोगी के प्रयोग में आनेवाले बर्तन अलग हों—उन्हें दूसरे लोग काम में न लावें। साफ करने के बाद बर्तनों को कार्बोलिक लोशन में डुबा देना चाहिए। दरवाजे पर कार्बोलिक लोशन से भीगी हुई चादर लटकी रहे—अनावश्यक लोग कमरे में न जाँय।

रोशनदान और दरवाजो में हरे या नीले कॉंच हो तो अत्युत्तम। हल्का, तरल, सुपाच्य, अविदाहकारी आहार देना चाहिए। आम मसूरिका मे दूध देने की राय लोग नही देते–उससे दाने सूखने मे विलम्ब होने की सभावना है, क्योकि गुरु और बृहण आहार सूखती मसूरिका मे ही देना उचित है। रोगी के कण्ठ और नत्र मे व्रण होने पर नीम का काढा या पचतिक्त (नीम, परवल, गुर्च, अडूसा, भटकटैया) का क्वाथ या जल मे भूनी हुई फिटकरी मिलाकर प्रयोग करना चाहिए। सूखने छाले पर डस्टिग पाउडर या पचक्षीरी वृक्षो की छाल (गूलर, पीपल, बड, पाकड तथा सिरस) का चूर्ण रूई से छिडकना चाहिए। नेत्र को फिटकरी के घोल या बोरिक घोल से धोकर गुलाबजल, फिटकरी और रसवत डालना चाहिए। चारपाई पर नीम की टहनी रख कर उससे ही हवा करनी चाहिए और मक्खी उडानी चाहिए।

औषधि प्रयोग—मसूरिका मे औषधि प्रयोग करने की प्रथा भारत मे सम्प्रति नही है। सामान्यतया यह भावना फैली हुई है कि शीतला मे दवा देने से शीतला माता कुपित हो जाती है। फलत रोगी बचने के बदले मर जाता है। यह प्रश्न विचारणीय है कि इसमे कहातक सचाई है और क्या कभी भी इस रोग की चिकित्सा की जाती थी या नही? प्राचीन काल मे ऋषिगण और भगवान धन्वन्तरि के शिष्य सुश्रुत महोदय कही अधिक आस्तिक या ईश्वरपरस्त रहे होंगे—इसमे सन्देह की कुछ भी गुजायश नही है। जब त्रिकालज्ञ ऋषि आत्रेय और महर्षि सुश्रुत ने विस्तारपूर्वक शीतला के उपचार का वर्णन किया है और चिकित्सा करने का आदेश दिया है, तब आजकल के मिथ्या देवी-पूजको की बात तर्क की कसौटी पर खरी नही प्रतीत होती।

मसूरिका मे चिकित्सा न कराने सम्बन्धी विचारो के बारे मे विश्लेषण करने पर इसके दो कारण प्रतीत होते है। (१) धार्मिक भावना (२) वैज्ञानिक विचार।

(१) धार्मिक भावना के रूप मे शीतला मे चिकित्सा न करने का एक आधार प्रधानतया शीतलाष्टक का एक श्लोक प्रतीत होता है। यथा—"न मत्रो नौषध किञ्चित् पाप रोगस्य विद्यते। त्वामेका शीतले धात्रीनान्या पश्यामि देवताम्"। इसके आधार पर औषधोपचार रुक गया, किन्तु आश्चर्य है कि सबसे पहला निषेध "अमन्त्रो" का कोई प्रभाव न पड़ा। जब शीतला का शामक कोई मत्र औषधोपचार नही है, तब औषधोपचार के साथ झाड-फूंक और टोटके को क्यो न रोका गया? स्पष्ट है कि यह झाड-फूंक करने वाले माली-ओझा आदि के स्वार्थमूलक षडयत्र की सफलता का परिणाम है। क्यो कि व चिकित्सको को अपनी कमाई मे बाधक होने देना नही चाहते।

(२) वैज्ञानिक या चिकित्सको से सम्बन्धित चिकित्सा-शास्त्र की दृष्टि से समीक्षा करने पर ज्ञात होता है कि शीतला रोग मे रोग का विष बडी उग्रता के साथ समस्त रक्त में व्याप्त होकर सारे रक्त को विक्षुब्ध किए रहता है जिससे रोगी बडी नाजुक स्थिति मे रहता है। इसलिए इस व्याधि मे बडी सतर्कता के साथ आशुफलदायी और सौम्य उपचार करना ही श्रेयस्कर है। थोडी भी असावधानी भयकर परिणाम ला सकती है।

अतएव मसूरिका मे चिकित्सा न कराने के सम्बन्ध में जो मूढता जन-साधारण मे फैली हुई है, वह यथाशीघ्र दूर होनी चाहिए। सरकार की ओर टीका लगाने की व्यवस्था की जाती है। टीके से अमित लाभ होता देखा गया है। मसूरिका की रोकथाम के लिए टीके का अधिकाधिक प्रसार-प्रचार होना आवश्यक है।

आयुर्वेद शास्त्र, दैवव्यपाश्रय और युक्तिव्यपाश्रय भेद से दो प्रकार की चिकित्सा मानता है। शीतला ही क्यो, ज्वरादि सभी रोगो मे दवाराधन, हवन, पूजन आदि करना उचित और विहित ही माना गया है। फिर शीतला जैसे कष्टदायी रोग मे शीतला देवी की आराधना करने से कौन आस्तिक भारतीय इन्कार कर सकता है? साथ ही आयुर्वेद शास्त्र मे ऋषियो द्वारा वर्णित वनौषधियो का सेवन श्रेयस्कर बताया गया है।

शीतलारोग में दुर्गासप्तशती का साधारण पाठ अथवा "सर्वमङ्गल माङ्गल्ये" "शरणागतदीनार्त्ति" "रोगानशेषान-पहसितुष्टा" आदि मत्रो से सम्पुटित पाठ अथवा शीतलाष्टक का पाठ रोगी के पास करना चाहिए। शीतला के आयुर्वेदिक उपचार का हम यहाँ सक्षिप्त उल्लेख करते हैं, आशा है, इससे जनता लाभ उठावेगी।

कमरे की वायु शुद्धि के लिए निम्नलिखित धूनी आग मे डालनी चाहिए—

(१) बच, घी, बाँस की पत्ती, नीम की पत्ती, नील, अडूसे की पत्ती, बिनौला, बाह्मी, तुलसीपत्र, लाख और अपामार्ग। (२) केवल नीम की पत्ती जलावे (३)

केवल गुग्गुल की धूनी दें। चिकित्सा के प्रतिबन्धात्मक (Preventive) तथा प्रतीकारात्मक या रोगशामक दो मुख्य भेद हैं—यहां इन दोनों प्रकारों पर प्रकाश डाला जाता है।

(अ) प्रतिबन्धात्मक उपाय के रूप में सर्वप्रसिद्ध एवं सर्वसुलभ शीतला के टीके (Small pox vaccine) का उपयोग है। यह शहर और गांव सभी स्थानों की जनता के लिए सुलभ है। सरकारी स्वास्थ्य विभाग की ओर से वैक्सीनेटरों के द्वारा इसके लगाने का प्रबन्ध होता है। इसके लगाने के बाद रोग नहीं होता। कभी-कभी हलका आक्रमण होता देखा गया है किन्तु टीका लेने के बाद मृत्यु का भय नहीं रहता।

निम्नलिखित आयुर्वेदिक प्रयोग भी शीतला के आक्रमण से रक्षा करते हैं—(१) महामारी के समय बच्चों को रुद्राक्ष धारण कराया जाय। (२) पूस या माघ के महीनों में ही बच्चों को २-३ बार एक-एक तोला करेले के पत्तों का रस मधु के साथ पिलाया जाय। (३) रोग के दिनों में रुद्राक्ष जल में घिसकर मधु के साथ बच्चों को चटाया जाय। (४) कभी-कभी केले की फली में बीज बहुत पैदा होते हैं— उनके बीजों को ४।५ की संख्या में लेकर जल के साथ निगला दें। रोग के दिनों में स्वस्थ लोग कचनार के पुष्प या नीम की फली की कोमल पत्ती का शाक घी में भूनकर हल्का सेंधा नमक मिलाकर सेवन करें।

(ब) प्रतीकारात्मक चिकित्सा कुष्ठ विसर्प के सिद्धान्त से करनी चाहिए। चिकित्सा शोधन शमन भेद से दो प्रकार की होती है। शोधन का प्रयोग एवं शमन की चिकित्सा का प्रयोग निर्बल सुकुमार और धनियों के लिए किया जाता है। विशेषता यह है कि वमन विरेचन वस्ति द्वारा शरीर और दोषों का शोधन कर देने से रोग सदा के लिए बिदा हो जाता है फिर उत्पन्न नहीं होता। "ये तु संशोधनैः शुद्धा न तेषां पुनरुद्भवः"। शीतला रोगी के लिए भी यही नियम है। सबल रोगियों को वमन विरेचन देकर उदर शुद्धि करायी जाती है। वमन कराने के लिए परवल के पत्ते नीम और अडूसे के पत्ते का काढ़ा आधा सेर कड़ई बच इन्द्रयव और कुटज की छाल मुलठी और मैनफल की पीठी या चूर्ण १ तोला मिला कर पिलावें कै होगी और रोग शांत होगा। ब्राह्मी का रस दो या तीन तोले १ तोला मधु डालकर पिलावे। रस न मिल सके तो ऽ। या ऽ।। ब्राह्मी निर्मित काढ़ा पिलावें।

वमन कराने के बाद निम्नलिखित दवा देकर (विरेचन) कराना चाहिए —

१ निशोथ का चूर्ण ६ माशा १ तोला मिश्री मिलाकर गर्म पानी के साथ पिलावे।

२ बीजरहित मनक्का अमलतास का गूदा हरीतकी गलाबफल कचनार की छाल और कुटकी समान भाग तीन तोला लेकर ऽ।।। पानी में पकावें ऽ- रहने पर छान कर कुनकुना (मन्द उष्ण) पिलावें अथवा इनका चूर्ण बनाकर रख लें और ६ माशे गर्म पानी के साथ पिलावे। उदर का शोधन होगा।

शामकयोग—(१) काले जीरे की पत्ती का रस या काढ़ा हल्दी का चूर्ण मिला कर पिलावे।

(२) नीम और बहेड़े का बीज मज्जा २।। माशे जल में पीस कर दिन में दो बार दें।

(३) इमली के पत्तों का रस २ तोला हल्दी का चूर्ण २ माशा सबेर शाम पिलावे। एक प्राचीन वैद्य जी का अनुभव है कि इमली के फल जल में घोल कर पना तयार कर—उसमें केवल शक्कर और हल्दी मिलाकर पिलावे दो बार प्रतिदिन — इससे रोग का आक्रमण शान्त होता है।

सब प्रकार की मसूरिका की शांति के लिए—(१) परवल के पत्ते गुर्च नागरमोथा अडूसे की पत्ती जवासा चिरायता नीम की छाल या पत्ते कुटकी पित्तपापड़ा सब समान भाग २ तोला ले ऽ।। पानी में पकावे ऽ रहने पर पिलावे। दोनों मसूरिका रोमान्तिका विस्फोट विसर्प शान्त होते हैं। (२) खैर की छाल आमला हर्र बहेड़ा नीम की पत्ती परवल की पत्ती गुर्च और अडूसे का काढ़ा दोनों मसूरिका रोमान्तिका कुष्ठ विसर्प विस्फोट और खुजली को नष्ट करता है। दोषानुसार नीचे चिकित्सा लिखी जाती है।

वातप्रधान—दशमूल रास्ना दारुहल्दी खस जवासे की जड़ गन्ध धनियाँ और नागरमोथा समान भाग २ तोला दवा ऽ।। पानी में पकावें ऽ- बचने पर छान कर पिलावे।

मसूरिका के पाक काल में—जब दाने पकने वाले हों तब गुर्च रास्ना मुलठी लघु पञ्चमूल पिठवन गोखरू छोटी बड़ी भटकटैया लालचन्दन और गम्भार की छाल का काढ़ा पिलावें।

पित्तजन्य मसूरिका में मुनक्का, खम्भार, छोहारा, परवल की पत्ती, नीम की पत्ती, रुसे की पत्ती, धान का लावा, आमला और जवासा का काढा, मिश्री मिलाकर दे।

कफज मसूरिका में जवासा, पित्तपापडा, चिरायता, कुटकी का काढ़ा दे।

सन्निपातज मसूरिका यद्यपि दु साध्य है तथापि प्राण-रक्षा का प्रयास तो करना ही चाहिए। नीम की छाल या पत्ते, पित्तपापडा, पाढी, परवल पत्र, वासा, जवासा, आमला, खस, दोनो चन्दन का काढा, शक्कर मिलाकर पिलावे। यदि दाने निकल कर सुप्त हो गये हो तब यह काढा विशेष लाभप्रद है—दानो का पुन उभार होकर शान्ति मिलती है।

दाह शांति—विजौरे के फल के केशर, काँजी के साथ पीस कर लेप करें। (१) नीम की पत्ती को पीस और जल मे घोलकर उसका शरीर पर लेप करे।

पाक काल मे वायु दानो को सुखाने की ओर प्रयत्न-शील होता है—अत उन दिनो वृहण और पौष्टिक आहार देना चाहिए, जिससे वायु अधिक कुपित होकर कष्टकर न हो जाय। रुक्ष और हलके द्रव्य कर्षणकारी एव अपथ्य होगे। गुर्च, मुलेठी, मुनक्का, मोरट और अनार का काढा, गुड मिलाकर पिलावे—इससे शीघ्र पककर दाने सूख जाते है। बेर के फल का चूर्ण १ माशा, गुड़ दो माशा मिलाकर खिलावे।

लेप—हल्दी, दारुहल्दी, खस, सिरस की छाल या बीज, पठानी लोध, लालचन्दन और नागर के रस का लेप लगाने से दाने शीघ्र पककर सूख जाते है और सरलता से पपड़ी छूट कर त्वचा शुद्ध हो जाती है।

नोट—रोग का सक्रमण फैलाने में यह पपडी बडी सहायक होती है—अत स्वस्थ बच्चे इससे दूर रहें तभी अच्छा होगा।

हरी दूब, हल्दी पीसकर सरसो के तैल में मिलाकर शरीर पर लगाने से सरलता से पपडी छूट कर त्वचा साफ निकल आती है।

शीतला में कुछ उपयोगी औषधि प्रयोग—(१) १ भाग पारद शुद्ध, २ भाग शुद्ध आमलासार गधक की कज्जली घोट ले। १-१ रत्ती गुर्च के रस और मधु से खिलावे (२) परवल की जड, लाल चौलाई क पत्ते का काढा हल्दी और आमले की पीठी मिलाकर पिलावे। (३) रोगी का कण्ठ गर्म जल मे फिटकरी डालकर रुई से पोछकर, खब साफ कर देना चाहिए—अन्यथा व्रण बढकर कण्ठावरोध उत्पन्न कर सकते है। मधु और भुना हुआ टकण मिलाकर गल मे लगाना चाहिए अथवा बोरोग्ली-सरीन लगा सकत हैं—फिटकरी जल से नत्र भी धोना चाहिए, जिससे माडा न पड जाय।

उपद्रव—इस रोग मे सब से भयानक उपद्रव श्वसनक सन्निपात (Pneumonia) है, जो रोगकाल मे शीतल द्रव्यो एव दही आदि अभिष्यन्दी वस्तुओ के खाने अथवा किसी प्रकार स कफ विकृत होन स हो जाता है। पकाए हुए जल का प्रयोग करन से बचत रहती है। कण्ठ और नत्र की विकृति भी होती है—अत उधर भी ध्यान रखना आवश्यक है। दान जहाँ तक हो न खुजलाये जावे। रोग के अन्त मे कोहनी, कलाई, कन्ध मे शोथ आना भी कष्टकर उपद्रव है।

शोथ शान्ति के लिए व्रणशोथ नाशक, वातनाशक (दशमूलादि) द्रव्यो का लप कर उस स्थान पर जोक लगाकर रक्त-मोक्षण कराकर शान्त करे। तिल क तैल मे पुनर्नवा की जड-छाल पकाकर लेप करना चाहिए।

बन गोखरू

वैद्य कृष्ण प्रसाद द्विवेदी बी० ए०, आयुर्वेदाचार्य

बन गोखरू का उल्लेख किसी भी पाश्चात्य डाक्टर या यूनानी हकीम ने नही किया है, और न आयुर्वेदीय निघण्टुओ मे इसका कही विस्तृत वर्णन पाया जाता है। कहा जाता है कि पहले यह भारतवर्ष मे या अन्यत्र भी कही देखने मे नही आता था। आजकल तो यह भारत मे ठेठ दक्षिण से लेकर ऊपर युक्तप्रदेश के प्राय सभी स्थानो मे पाया जाता है। यह घने जगलो मे उतना नही पाया जाता जितना शहर या ग्रामो मे घरो के आसपास के कूड़ा-कचरो मे, नालियो, नाले या नदियो के किनारे पाया जाता है। लगभग १५ या २० वर्षो के अन्दर ही इसकी जहाँ-तहाँ इतनी भरमार हो गई है कि इसके कारण दूसरे उपयोगी पौधे उगने ही नही पाते। जहाँ देखो वहाँ समूह या झुंड के रूप मे इसके क्षुप उगते है।

राजनिघण्टुकार ने जिसे आम्रगधकृत, नद्याम्र, गण्डीर, समष्ठिल, कष्टकिफल, उपदश आदि नामो से पुकारा है, शायद वही यह हो ऐसी कल्पना की जाती है। हिन्दी में इसे कही-कही कोथई, बना और बनगोखरू कहते है। मराठी भाषा मे 'कोतुम्बा' कहते है।

इसके फल काटेदार होने से राजनिघण्टुकार ने इसे 'कष्टकिफल', नदी या जलाशयो के किनारे ग्राम की अमराई जैसे समुदाय रूप में होने से, 'नद्याम्र,' इसमें अष्ठीला या अठली, तथा ऊपर का कटक युक्त छिलका एक समान होता है, अर्थात् इसका फल अठलीमय ही रहता है, इसीसे 'समष्ठीला', इसके पत्तो मे कुछ कच्ची केरी या आम जैसी गध आने से शायद 'आम्रगधकृत', इसके पौधे में यत्रतत्र कुछ गाठें होती है, अथवा फलो पर धत्तूर, फल या कटहल फल के समान काटेदार गाँठियाँ होती है, इसीलिये 'गाण्डीर', तथा इसके पौधो के पास (उप) से जाने पर ये फल वस्त्रो में या शरीर में (दश) छिद जाते है, इसलिये शायद (उपदश) नाम दिया गया है।

विवरण—इसके पौधे का आकार प्राय भिण्डी के पौधे जैसा होता है। यह एक हाथ से लेकर दो या ढाई हाथ ऊँचा बढ़ता है। प्राय वर्षाकाल में ही ऊगता है, और फाल्गुन या चैत्र मास तक बना रहता है। पत्ते भिण्डी के ही पत्र जैसे रोयेदार और कडे होते है। पुष्प हमारे देखने मे नही आये, किन्तु कहा जाता है, कि इसमे बैंगन के पुष्प जैसे कुछ नीले वर्ण के फूल आते है। फल गुच्छो मे, कटकयुक्त, छोटे छोटे, लम्बे, गोलाकार होते है। ये फल वस्त्रो मे और शरीर मे चिपट जाते है। वस्त्रो में ये ऐसे उलझ जाते है कि इनका निकालना कष्टदायक हो जाता है।

गुणधर्म—जहाँ तक हमने पता लगाया, हमें मालूम हुआ कि ये उष्ण है, पित्त प्रकृतिवाले को हानिकर है, दाहक, कफवात नाशक, दीपन तथा मुख को विशेष शुद्ध करने वाले है। स्वाद मे फल कसैले और चरपरे होते है। राज-निघण्टुकार ने भी इसी प्रकार से इसके गुणधर्म लिखे है।

किन्तु परम खेद की बात है कि यह वनौषधि हमारे यहाँ आसपास अत्यधिक विपुल प्रमाण मे प्रतिवर्ष होने पर भी इसका परीक्षणात्मक अनुसधान अभीतक किसी ने नही किया। केवल कोथई नामक नेत्र रोग मे, जो बाल्यावस्था मे बहुत कष्टदायक होता है यह प्रयुक्त होता है। (इस रोग मे, नेत्र के ऊपर की पलको के अन्दर की श्लेष्मल त्वचा मे नुकीली ग्रन्थि या ग्रन्थिया उभर कर नेत्रो को पीडा पहुँचाती है और बालक बडा दु ख पाता है।) इस 'अर्शोवर्त्मन' रोग मे, इसके फलो के काँटो को दूर कर, तागे मे पिरोकर माला बना बालक के गले मे धारण कराते हैं तथा फलों को थोडे जल के साथ स्वच्छ पत्थर पर घिस कर आँख के अन्दर भी लगाते है। इस प्रयोग से देखा गया है कि यह कष्टदायक रोग बडी सरलता से दूर हो जाता है। इसीसे इस पौधे का नाम 'कोथई' रखा है।

कहा जाता है कि इसके पत्रो में रक्तप्रदर नाशक शक्ति है। इसके पत्रो का रस निकाल कर उसमें थोडी मिश्री मिला कर रक्त प्रदर पर सेवन कराया जाता है।

इन्फ्लुएंजा और कभी-कभी निमोनिया की दशा में इसके पत्तो की लुगदी को आग पर गरम कर, कठ से लेकर

छाती और पसुलियो पर थोप दिया जाता है, और ऊपर से सेंक किया जाता है। लुगदी के सूख जाने पर दूसरी लुगदी का लेप उसी प्रकार किया जाता है और सेंका जाता है। रोगी को शीघ्र आराम मिलता है और उसे सुखपूर्वक निद्रा आती है।

इसके अन्य गुणधर्म और प्रयोगो का निरीक्षण किया जा रहा है, जो आगे क्रमश प्रकाशित किये जायेगे।

नोट —ध्यान रहे, जिसे लैटिन मे लिम्नोफाइला ग्रेटिओलायडिस (Limnophila Gratioloides) कहा जाता है, तथा जिसका सस्कृत मे 'आम्रगधा' नाम रखा गया है, वह उक्त वनौषधि से एकदम भिन्न है। वह ब्राह्मी वर्ग (Scrophularineae) की है, जो प्राय समशीतोष्ण कटिबन्ध मे पाई जाती है। इस आम्रगधा का भी सतोषदायक विवरण आयुर्वेदीय निघटुओ मे नही पाया जाता। कीचड या जलमय स्थानो मे ही प्राय उत्पन्न होने से इसे किसी ने 'अम्बुज' नाम दे दिया है, जो भ्रमात्मक ही है। कारण अम्बुज' से कमल, हिज्जल आदि कई चीजो का बोध होता है। इसके अतिरिक्त 'आम्रगधा' नाम आमाहल्दी या आम-आदा को भी दिया गया है।

इस ब्राह्मी वर्ग की वनौषधि को हिन्दी की प्रान्तीय भाषा मे कही कही कुतर' बगाल मे कर्पूर मराठी मे अम्बुली आदि कहते है। इसका छोटा बहुशाखी पौधा ४ से ७ इच ऊँचा होता है। जबलपुर और रायपुर के तालाबो के किनारे पर हमने इसे बहुत देखा है। इसकी जडे अधिकाश मे नीचे की ओर विस्तृत रूप से फैली हुई होती है। इसका तना पुष्ट एव कोमल होता है। इसके पत्ते डठल के चारो ओर चक्राकार परिवेष्टित, कतरनदार, लगभग आधे इच तक लम्बे होते है। अधिक आर्द्रस्थलो मे तने के सिरे पर, जल से बाहर निकले हुए सम्मुखवर्ती इसके पत्ते दिखलाई देते हैं। फूल छोटे-छोटे नील वर्ण के होते है।

गुणधर्म —यह दुर्गन्ध, कृमि, श्लीपद, ज्वर, अतिसार और प्रवाहिका को दूर करती है।

डॉक्टर डाइमाक का कथन है, कि यह कोथ प्रशमन (antiseptic) है, तथा हिन्दू लोग सक्रामक ज्वरो मे इसके रस को शरीर पर मालिश करते है। आमातिसार या प्रवाहिका मे इसे सोठ व जीरा तथा अन्य सुगन्धित द्रव्यो के साथ उपयोग मे लाते है। श्लीपद (हाथी पाँव) रोग मे इसके कल्क को नारियल तैल मे मिला लेप करते हैं। इसके ताजे पौधे की गध अत्यन्त शातिदायक एव ग्राह्य होती है तथा कर्पूर और नीबू तैल का स्मरण दिलाती है।

डॉक्टर देसाई जी लिखते है कि यह पूतिहर तथा छोटी रक्तवाहिनियो को सकोचन करने वाली है। रोगी का सस्पर्शजन्य ज्वर दूसरो को न लग जाय, इस ख्याल से इसके पचाग के रस को ज्वर रोगी के शरीर पर मर्दन करते हैं। सूक्ष्म रक्तवाहिनियो के सकोचनार्थ इसके रस का श्लीपद पर मर्दन करते है। रक्तमिश्रित प्रवाहिका में इसके रस का जीरा और बच के चूर्ण के साथ सेवन कराया जाता है। इस प्रयोग से सूक्ष्म रक्तवाहिनियो का सकोचन होकर रक्तस्राव दूर हो जाता है।

हमने इसके स्वरस १ तोला मे, जीरा (श्वेत) भूना हुआ का चूर्ण १ माशा कपूर देशी १ रत्ती और बच (मीठी) ४ रत्ती मिला (यह एक मात्रा हुई) रक्त प्रवाहिका के रोगी को दिन मे तीन बार सेवन कराया था। ४ दिन में पूर्ण लाभ हो गया था।

ध्यान रहे हिन्दी मे जिसे कुतरा' कहते हैं, वह इसी की जाति की एव समान गुणधर्म वाली है। इसे लेटिन मे लिम्नोफाइला ग्रेटिसिमा (Limnophila Gratissima) कहते है। यह भारतवर्ष मे बहुत कम पाई जाती है। यह पश्चिमी प्राय द्वीप, सीलोन, मलाया द्वीप, फिलीपाइन्स, चीन जापान आदि देशों में बहुतायत से होती है। इसका स्वरस ज्वरोष्मा को शात करता है। इसके रस का सेवन दूध मे मिला कर करने से पुत्रवती स्त्री के दुग्ध की खराबी दूर हो जाती है। माता का शुद्ध दूध पीकर बालक हृष्ट-पुष्ट हो जाता है। इसमे कृमिघ्न गुण की विशेषता है। यह गुण उक्त 'कुतर' बूटी मे नही पाया जाता। कहा जाता है कि यह बूटी आल्मोडा, टेहरी, गढवाल के जलाशयो के किनारे पर होती है, तथा वहाँ के पसारी लोग इसे 'कोकतारा' नाम से बेचते है।

गाजर और सेव

कविराज श्री केवल वीर

प्राचीन समय में ऋषि-मुनि खुले मैदानो मे रहते थे, स्वच्छ जलवायु ग्रहण करते थे और अधिकतर अपना निर्वाह फल तथा सब्जियो द्वारा ही करते थे। यही उनका रहन-सहन और भोजन था। प्रकृति मे उन्हे पूर्ण विश्वास था। यही विशेष कारण था उनके सुखी तथा स्वस्थ रहने का। आज के वैज्ञानिको द्वारा निकाला गया परिणाम भी यही है कि प्राकृतिक नियमो का पालन करने से मनुष्य सदैव सुखी रहता है तथा दीर्घकाल तक जीवित रह सकता है।

फल-सब्जिया मनुष्य को प्रकृति की देन है। जितना अधिक हो सके मनुष्य को इनका प्रयोग करना चाहिये।

गाजर अपने स्थान पर फल भी है और सब्जी भी। यह प्रकृति की अमूल्य देन है। यह कई प्रकार की होती है। लाल तथा काले रग की गाजरे अन्य प्रकार की गाजरो से अच्छी होती है। गाजर मे ८६ प्रतिशत पानी, ६ प्रतिशत प्रोटीन, एक प्रतिशत चरबी (Fat), कुछ नमक (Salts), ११/५ प्रतिशत कारबोहाईड्रेटस (Carbohydratcs), ४/५ प्रतिशत कैलिसियम (Calsium) तथा कुछ फास्फोरस (Phosphorus) होता है। गाजर मे शक्कर (Sugar) भी पाई जाती है। इसके अतिरिक्त इसमे गधक तथा कुछ स्टाच (Starch) भी होती है। यह हर लिहाज से स्वास्थ्य के लिये बहुत लाभकारी है।

फासफोरस (Phosphorus) के होने के कारण इसके प्रयोग से आँखो को बहुत लाभ होता है। इससे आँखो के भीतरी अग शक्तिशाली होते है क्योकि इसमे लोह के तत्व भी होते है। गाजर के लगातार प्रयोग से रक्त की कमी जाती रहती है। गधक की कुछ मात्रा होने के कारण शरीर के ऊपरी भाग के रोग फोडे फुन्सी आदि नही हो पाते। खुजली आदि विशेषत शीतकाल मे ही होती है। गाजर भी इसी मौसम मे होती है। इसके प्रयोग से चर्म रोग जाते रहते हैं। दाद या किसी अन्य रोग के हो जाने पर गाजर तथा दूध का सेवन कुछ दिनो तक करना चाहिये। इससे यह रोग जाते रहते है। पीलिया, क्षय रोग, बवासीर तथा पित्त आदि रोगो में यह बहुत लाभकारी है।

गाजर के प्रयोग से शरीर मुलायम तथा सुन्दर हो जाता है। यह शरीर मे शक्ति का सचार करती है। इसके प्रयोग से मनुष्य के वजन मे भी अतर पड जाता है। यह पेट को साफ करती है तथा दस्त आदि ठीक आता रहता है। बच्चों को गाजर का रस पिलाने से उनके दाँत निकलने मे सुविधा रहती है तथा उन्हे दूध भी ठीक प्रकार से हजम होता रहता है।

गाजर का रस मस्तिष्क के लिये बहुत अच्छा सिद्ध हुआ है। शारीरिक विकास एव बुद्धि के लिये इसका प्रयोग अवश्य करना चाहिये। रोगो के आक्रमण से रक्षा तथा इनसे सुरक्षित रखना गाजर का विशेष गुण है। गुर्दों की जलन मिटाने मे भी गाजर अद्वितीय है। उदर तथा आँतो के घाव की तो गाजर रामबाण औषधि है। भयकर कोष्ठबद्धता के निवारण का विलक्षण गुण गाजर मे भरा पडा है। पके हुए पुराने घाव पर गाजर को उबाल कर बाँधने से शाति मिलती है। कच्ची गाजर कुचल कर और उसमे आटा मिलाकर छालो तथा जलन वाले घावो पर यदि बाध दिया जाय तो अवश्य लाभ होता है।

गाजर की जड और पत्तो मे भी विशेष गुण है। इसकी जड को स्त्री-दुग्ध मे पीसकर, उसे नाक से खीचने पर हिचकी जाती रहती है। इसकी पत्तियो के दोनो ओर घी चुपड कर, उसे गरम करके और उसका रस निकाल कर एक-एक बून्द कान तथा नाक मे डालने पर आधाशीशी (अधकपारी) का कष्ट दूर हो जाता है। पाचन क्रिया की खराबियो से आँतो मे विषैले पदार्थ एकत्रित हो जाते है और उनके सडने से भयङ्कर कीटाणु उत्पन्न हो जाते है, किन्तु गाजर का सेवन करने से सडन नष्ट हो जाती है और कीटाणु समाप्त हो जाते है। इसमें विटामिन ए अधिक रहने के कारण दूध, दही, मछली के तेल के पूरक के रूप मे इस की गणना होती है। गाय तथा घोडो की जाति के पशुओ के लिये भी गाजर मे पोषक तत्व है। दूध गाढ़ा करने तथा बढाने के लिये गावो मे गाय को गाजर खिलाई जाती है।

गाजर प्राय सभी जगह पाई जाती है। इसकी खेती नरम तथा भुरभुरी मिट्टी में की जाती है। नमकीन मिट्टी इसकी उपज के लिये विशेष उपयोगी है। भाद्रपद से कार्तिक पर्यन्त बोई जाने के कारण गाजर की खेती मे विशेष सिंचाई की आवश्यकता नही होती। गाजर को कच्चे रूप में ही प्रयोग करना चाहिये। उबालने या पकाने से इसके बहुत से रासायनिक तत्त्व नष्ट हो जाते है। यह प्रकृति की अमूल्य देन है, हमे इसका अधिक से अधिक लाभ उठाना चाहिये।

उपयोगी फल सेब

किसी भी देश के प्राचीन इतिहास को पलटिये आप को पता चलेगा कि सेब की जानकारी लोगो को बहुत पहले से है। बाईबल मे, मिस्र के प्राचीन इतिहास मे तथा प्रस्तर युग के प्राचीन शिलालेखो से भी इसकी जानकारी प्राप्त होती है। सबसे पूर्व सेब काकेशस पहाड पर पाये जाते थे। इस पहाड पर आज भी जगली सेब प्राप्त होते हैं। किन्तु आज के समय मे यह फल सभी शीतोष्ण क्षेत्रो और स्वल्प-उष्ण देशो मे उपजाया जाता है तथा यह ससार का सबसे अधिक सामान्य फल है। हमारा देश गर्म देश है किन्तु यहाँ भी समुद्र-स्तर से पाँच हजार फुट की ऊँचाई पर पाया जाता है।

ससार भर मे सबसे अधिक फ्रास, अमेरिका, इटली, जर्मनी, कनाडा, आस्ट्रेलिया तथा जापान मे यह होता है। स्वादिष्ट होने के अतिरिक्त इस फल का महत्त्व बहुत अधिक है। यह आरोग्यवर्धक फल है। पुराने लोग कहा करते थे कि जो मनुष्य प्रतिदिन एक सेब खाता है, उसे डाक्टर का द्वार खटखटाने की आवश्यकता नही होती। आज ऐसा लगता है कि यह कहावत शत-प्रतिशत सत्य है। सेब का रासायनिक विश्लेषण करे तो पता चलता है कि इसमे ० ३ प्रतिशत प्रोटीन, ० १ प्रतिशत वसा (चर्बी), ० ०१ प्रतिशत कैलशियम, ० ०२ प्रतिशत फास्फोरस और १ ६ प्रतिशत लोह होता है। इनके अतिरिक्त इसमे शर्करा, पोटैशियम, सोडियम, गधक, कैरोटाईन, थियामाईन, रिबोफ्लोविन तथा विटामिन 'सी' आदि पदार्थ भी है।

शर्करा से ही सेब के भोजन मूल्य (Food Value) का मुख्य रूप से विचार किया जाता है। इसमें शर्करा का अंश भी बहुत अधिक अर्थात् ६ से २१ प्रतिशत तक होता है, जिसका ८८ प्रतिशत से भी अधिक भाग दो सुपाच्य शर्कराओ से युक्त रहता है अर्थात् ६० प्रतिशत फल-शर्करा और २५ प्रतिशत ग्लूकोज होता है। कच्चे सेब में साधारणत थोडा-सा श्वेतसार रहता है। पकते समय प्राय वह सम्पूर्ण स्टार्च, शर्करा मे बदल जाता है किन्तु यह शर्करा सामान्य तौर पर पेड की पत्तियो मे तैयार होती है और तब फलो में होती है। शर्करा के साथ साथ सेब का अम्ल तत्त्व भी प्राय पूरे का पूरा 'मोलिक एसिड' होता है जो शर्करा की भाँति शरीर में जल जाता है तथा पूर्ण रूप मे व्यवहृत होता है। सेब मे इस अम्ल तत्व का अश ० १६ से १ ११ प्रतिशत तक होता है। सेब में 'पेक्टिन' भी पाया जाता है। इसमे विटामिन तथा खनिज लवण अधिक नही होता। प्रोटीन तथा वसा भी बहुत कम मात्रा मे पाई जाती है। यदि कोई दो सेब प्रतिदिन खाता है तो अपनी आँतो की सफाई के विषय में उसे चिंतित नही होना चाहिये।

यह फल बच्चो के उग्र तथा जीर्ण पेचिश में बहुत लाभप्रद है। ऐसे रोगो मे पके हुए और मीठे सेब की मुलायम लुगदी बना कर बच्चो को दिन मे कई बार खिलाई जाती है। अक्सर ४८ घण्टे के भीतर ही यह रोग दूर हो जाता है।

सेब अनुत्तेजक खाद्य है, इसलिये यह आँतो की अन्य कई बीमारियो में भी अच्छा साबित होता है। पथ्य की दृष्टि से सेब का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। सेब का रस पेट और आँतो के कीटाणुओ को नष्ट कर देता है। यह सडन-विनाशक भी है। यह पेट और आँतो के श्लेष्म-स्राव, पित्त प्रकोप, पीलिया, गुर्दे तथा यकृत की खराबी में बहुत लाभप्रद है। यदि सेब को चबाकर खाया जाय तो इसका अम्ल रस भी मुँह और दाँतो में मौजूद कीटाणुओं पर प्रभाव डालता है। दातो की तकलीफ में भी इसे प्रयोग में लाया जा सकता है। सेब में एक प्रकार का तत्त्व रहता है जो रक्त के क्षारतत्त्वो को कायम रखता तथा अम्लत्त्व को दूर भगाता है। सेब गठिया तथा अस्थि रोग मे भी प्रयोग मे लाया जाता है। जब यह रोग 'यूरिक-एसिड' के विष से पैदा हो तब यह फल विशेष हितकर सिद्ध होता है।

सेब अधिकांश कच्चा और भोजन के खतम होने पर सेवन किया जाना चाहिए। मीठे तथा सुगन्धित रस वाले

(शेषांश ७०३ पृष्ठ पर)

अलर्क विष रोग

कविराज लक्ष्मीनारायण पाण्डेय, आयुर्वेदाचार्य

पर्याय—अलर्कविषजन्य रोग, श्वानश्रृगालादि विष रोग, हाइड्रोफोबिया, रेबीज।

परिभाषा—यह एक तीव्र सक्रामक पीडाकारक रोग है जो विक्षप्त हुए श्वान-श्रृगाल प्रभृति पशु के काटने के कारण उत्पन्न होता है।

सम्प्राप्ति—यह व्याधि अधिकतर विक्षिप्त कुत्ते के काटने से उत्पन्न होती है जैसे बिल्ली, भेडिया, लोमडी आदि के द्वारा भी पागल अवस्था मे मनुष्य को काटने से यह उत्पन्न हो सकती है। जब उक्त पशुओ मे से कोई भी विक्षिप्त अवस्था मे मनुष्य को काटता है तो रोग का कीटाणु उसकी लार द्वारा मनुष्य शरीर में प्रविष्ट हो जाता है। यहाँ यह यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि इस प्रकार पागल कुत्तो से काटे जाने पर सभी रोगग्रस्त नही होते है किन्तु इसका यह तात्पर्य नही कि सावधानी न बरती जाय।

कीटाणु शीघ्र ही मस्तिष्क तक पहुँच जाते है और सुषुम्नाकाण्ड, लाला ग्रन्थियाँ, अन्ननलिका और आमाशय मे एक प्रकार की विकृति या शोथ पैदा कर देते है।

साधारणतया दो तीन दिन के भीतर ही इस रोग के लक्षण प्रकट हो जाते है, किंतु कभी-कभी १ वर्ष तक की अवधि भी देखी गई है।

आयुर्वेद-मतानुसार श्वान श्रृगाल प्रभृति पशुओ के शरीर में जब वायु कफदुष्टि से दुष्ट हो जाता है तो वह उन पशुओ के मस्तिष्क को प्रभावित कर सज्ञावहा शिराओ की गति में बाधक बन जाता है। उनके सारे कार्य विरुद्ध चेष्टामय होकर वे काटने व एक ही मार्ग पर दौडने लग जाते है। साधारणत ऐसे पशु जल से डरते है। लाला-स्राव निरन्तर होता है रहता है। प्राय उनकी पूंछ भी सीधी हो जाती है।

पागल कुत्तो या अन्य पागल पशुओ के काटे मनुष्यो में भी प्राय वैसे लक्षण दिखाई देते हैं।

रोग लक्षण व उसकी भिन्न-भिन्न अवस्थाएँ

१ प्राय कटा हुआ स्थान शून्य हो जाता है और कुछ भूरे मटमैले रग का खून निकलता है। दश-स्थान पर कभी-कभी जलन भी ज्ञात होती है और यह भी देखा गया है कि घाव दो-चार दिनो मे भर जाता है और किसी प्रकार की पीडा नही होती है। साधारणत ऐसी दशा मे रोगी निश्चित हो जाता है और उस ओर कोई ध्यान नही देता। किन्तु तीन चार मास के पश्चात ये लक्षण उभर आते हैं और दशित व्यक्तियो को दश-स्थान पर जलन या पीडा का अनुभव होता है और इसके साथ ही दूसरे अन्य लक्षण भी प्रकट होने लगते है। मन्दज्वर वातसूत्रो में खिचावट, बैचेनी आदि लक्षण सामान्य है।

२ रोगी को प्यास का अनुभव होता है पर जल से भय होता है और जल पीने मे भी नाडियो के खिंचाव के कारण असमर्थ रहता है। प्रलाप मूर्च्छा या बार-बार भय-प्रदर्शन सामान्य से हो जाते है। रोगी को नींद भी नही आती। कभी-कभी तो यह भी होता है रोगी बहते हुए जल के शब्द से भी डरने लगता है। गलग्रन्थियो के शोथ के कारण रोगी परेशान हो जाता है। उससे कफ बाहर भी नही निकाला जाता है। उसे सदा थू-थू करना पडता है। जल से वह इस प्रकार डरने लगता है कि प्यासा छटपटाता रहता है किन्तु जल पीता नही। यही कारण है कि इस रोग का नाम हायड्रोफोबिया रखा गया है। यह स्थिति १ से ३ दिन तक रहती है। इसी स्थिति मे आक्षेप भी कभी-कभी देखे जाते है।

३ यह बडी तीव्रतर स्थिति होती है। आक्षेप की गति तीव्र हो जाती है साथ ही ज्वर का वेग भी बढ जाता है। रोगी बेहोश हो जाता है और श्वासावरोध या हृद्‌गति रुकने से वह इस असार ससार से प्रयाण कर जाता है। मेरे देखने में जो रोगी आए है उनमे उक्त लक्षणो के अतिरिक्त रोगी का दौडना, सामने बैठे व्यक्ति को न पहचानना, जल को कुत्ते की भाति चाटना व कुत्ते के समान भर्राये हुए स्वर में निरर्थक आवाजे करना आदि लक्षण होते है।

जो मनुष्य उक्त पशुओ के काटने से रोग सक्रान्त हो तो उसकी चिकित्सा व्यवस्था तत्काल होनी चाहिए, अन्यथा

उपचार में बडी कठिनाई होती है और रोगी हाथ से जाता रहता है।

चिकित्सा—काटे स्थान पर तीव्र कीटाणुनाशक औषध "कार्बोलिक एसिड" प्रभृति लगाना लाभदायक है। "ऐन्टिरेबिक वेक्सीन" ऐलोपैथी का विशिष्ट इलाज है। अल्पमात्रा मे मर्फिया, ऐट्रोपिन आदि का प्रयोग भी होता है।

साधारणत रोगी को बन्द कमरे मे रखना चाहिए तथा बर्फ चूसने को देना चाहिए। आयुर्वेद मतानुसार रोगी को श्लेष्मा नाश के लिए वमन-विरेचन देना आवश्यक है। घाव को गरम जल से धोना एव उस स्थान का खून निकालना जरूरी है।

रोगी के घाव पर गर्म घी लगाना तथा रोगी को घी पिलाना भी विहित है। रोगी को "स्वेद" चिकित्सा द्वारा भी चिकित्सा करते देखा गया है। उसे बाष्प स्वेद दिया जाता है या फिर उष्ण जल से स्नान कराया जाता है।

आज भी गाँवो में जब किसी को पागल कुत्ता काट खाता है तो उसे लहसुन और नमक का प्रयोग कराया जाता है। गाँवो में इस रोग को "हडकवा" कहते है, जिससे वायु के दूषित होने का स्पष्ट बोध होता है।

रोगी को खट्टे या चरपरे पदार्थ हानिकर होते है साथ ही उसे जल से भी दूर रखना जरूरी है।

आक का दूध, लहसुन, पुनर्नवा, कुचला व जटामासी आदि के भिन्न प्रयोग लाभदायक रहते है।

"विमर्कर्मपयोलेप श्वान वृश्चिकयोर्जयेत्।
कौक्कुरु पान लेपाभ्यामयश्वान विषहरेत् ।।

—वैद्य सर्वस्व

असाध्य लक्षण

'योऽद्भ्यस्त्येद् दष्टोऽपि शब्द सस्पर्शदर्शनै ।।
जल सत्रास नोमान दष्ट तमपि वर्जयेत् ।।

—वाग्भट

शेषांश] गाजर और सेब [७०१ पृष्ठ का

फल प्राय भोजन के साथ प्रयोग मे लाये जाते है। कहा जाता है कि ताजे सेव का रस अगूर के रस से कही अधिक अच्छा होता है। यदि सेव के रस का सेवन मधु (शहद) के साथ किया जाय तो अधिक अच्छा तथा आरोग्यवर्धक होता है।

सेव की चटनी, मुरब्बा, खीर, कढी तथा केक आदि तैयार की जाती है। सेव से सिरका तथा शराब भी बनती है। सेव का छिलका भी अपना महत्व रखता है। प्राय देखा गया है कि सेव का छिलका फेक दिया जाता है। याद रहे कि इस छिलके में गुदे से कहीं अधिक विटामिन 'सी' होती है। पुराने समय में जब 'स्कर्वी' रोग अर्थात् पोषणाभाव से शरीर की त्वचा पर चकत्ते पडने की बीमारी के कारण का ठीक से पता न था और टमाटरो तथा सतरो का प्रयोग भी शायद ही किया जाता था, उस समय सेव ने ही बहुत से देशो के निवासियो की इस रोग से रक्षा की। सेव के गूदे की अपेक्षा उसके छिलके मे विटामिन 'ए' भी पाँच गुना अधिक पाया जाता है। इसलिये छिलके को फेंकने की बजाय उसे भी प्रयोग करना चाहिये।

सेव खाने से पूर्व यह ध्यान रखे कि उसे पानी में खूब अच्छी प्रकार से धो ले। जहाँ यह स्वादिष्ट तथा मीठा फल है वहाँ एक उपयोगी दवा भी है।

चना के महान गुण

श्री आचार्य नित्यानन्द

पिछले दिनो मैंने एक लेख मे नास्ते के रूप मे मेवे खाने की सलाह दी थी। उसी के सम्बन्ध मे प्राथमिक विद्यालय के एक अध्यापक ने मुझे उलाहना दिया है कि सामान्य स्थिति के मनुष्य के बूते की बात मेवे खाना नही है। बात जचनेवाली है, वास्तव मे मेवे महगे है। मेवे की जगह उसी के समान गुणकारी दूसरी चीज का प्रयोग भी किया जा सकता है। इस को हम जानते है—यह है चना। चने का प्रयोग खाद्यान्नो मे जनप्रिय है। चने के बेसन से बनी मिठाइया और नमकीन का उपयोग बराबर किया जाता है। किन्तु नास्ते मे सस्ते और अत्यन्त गुणकारी ढग से इस का प्रयोग वाछनीय है।

गर्मियो मे दो बार नास्ते की जरूरत महसूस होती है, एक तो प्रात काल और दुबारा दोपहर के बाद। सौभाग्य से दोनो ही समय चने का प्रयोग किया जा सकता है। प्रात - कालीन नास्ते मे भीगे चने और दोपहर मे भुने चने का प्रयोग होना उचित है। जिन लोगो को चने खाने की आदत न हो, उन्हें सम्भव है, प्रारम्भ में चने का प्रयोग उतना रुचिकर न हो। किन्तु बाद में वे इस के स्वाद और गुणो की प्रशसा किये बिना न रहेंगे।

प्रातःकालीन नास्ता

रात को चौगुने पानी में साफ किये हुये चने भिगो देवे। यदि चने एक छटाक हो तो हमे एक पाव जल डालना चाहिए। भिगोने का बर्तन मिट्टी का हो तो उत्तम है। शीशे या चीनी मिट्टी के पात्र भी लिये जा सकते हैं। पानी और चना पात्र में उलने के बाद उसे ढक देवें। इस प्रकार सवेरा होने तक चने फूल जायेंगे और नरम हो जायेंगे। आपका सवेरे का नास्ता तैयार है। यदि पहले थोडी कसरत भी कर लें, तो चना वह गुण करेगा, जो दूध या मेवे ही कर सकते हैं। जिन्हें दूध पीने की आदत हो, वे चने के बाद दूध पी सकते हैं।

यह बात ध्यान मे रखनी चाहिए कि चने को अधिक मात्रा में न खाया जाये, वर्ना भूख बन्द होने से भोजन का आनन्द जाता रहेगा। मेरे ख्याल से ३ तोले से ५ तोले तक चने का नियमित प्रयोग सवेरे के नास्ते में किया जाय। इस प्रकार का नास्ता गर्मियो की मौसम में प्रत्येक स्कूल में अनिवार्य कर छात्रो की शारीरिक उन्नति बिना विशेष खर्च के की जा सकती है। थोडी देर की ड्रिल या कसरत के बाद प्रत्येक छात्र को मुट्ठी भर भीगा चना दीजिये।

यह तो सरल तरीका है। गुणो के लिहाज से इस में थोडा परिवर्तन वाछनीय है। रात के भीगे चने को सवेरे एक कपडे मे बाध कर रख देवे। कपडे को किसी गीले स्थान मे रख दे। कपडा सूख जाये तो भिगो देवे। फिर इस प्रकार दो दिन बाद चनो से अपने आप अकुर निकल आयेंगे। इन अकुरो मे खाद्योज "सी" पर्याप्त है और ये पहले की अपेक्षा अधिक गुणकारी हो गये है। इनका उपयोग सवेरे के नास्ते मे कीजिये।

मध्याह्नकालीन नास्ता

गर्मियो के दिन काफी बडे होते है, इसलिये जिन्हें दोपहर मे नास्ता करने की आदत नही है, वे भी भूख महसूस करते है। इस समय भी दो मुट्ठी चने ले लीजिये। किन्तु चने भुने हुए हो। दिन भर भीगे चने खाने से अरुचि होने का डर रहता है। चने के बाद ठण्डे पानी का गिलास ले लीजिये। कुछ लोगो का तो यह नियम होता है कि जब भी उन्हें प्यास लगती है, दस पाच चने (भुने हुए) खाने के बाद ही पानी पीते है। ऐसा करने में बडा लाभ यह है कि पसीने में पानी पिये जाने पर भी किसी किस्म का नुकसान नही करता। वर्ना जुखाम लगने का अन्देशा बना रहता है। इस समय भूने चने के साथ धानी (भुने हुए जौ) खाने का रिवाज भी है। यह भी लाभप्रद है। कुछ प्रदेशो में सत्तू खाने का प्रचलन है, वह भी उपयोगी है।

इस समय के नास्ते मे भीगे या अकुरित चने को छौंकने के बाद भी उपयोग में लिया जा सकता है। मसाले मिल जाने से अरुचि नही होती।

बलक-रसायन

चने का प्रयोग शक्तिदाता रसायन के रूप मे भी किया जाता है। जो लोग सदा कमजोर रहते है, वे इस प्रयोग

से अपने आप को इतना स्थूल बना सकते है कि देखनेवाले दातो तले अगुली दबाकर रह जायेंगे। इस कम्म के लिये केवल भीगे चने का उपयोग वाछनीय है। पहले मास मे एक छटाक से अधिक भीगे चने मत खावे और ये भी प्रात काल ही लें। फिर अगले दो महीने में दोपहर के बाद भी एक छटाक भीगा चना लेना चाहिए। चना खाने के पूर्व हलका सा व्यायाम भी कर लें और चने खाने के बाद थोडा सा दूध भी पी ले।

तीन मास के बाद केवल चने का प्रयोग करे। दूसरे अनाज सर्वथा छोड दे। दिन मे तीन-तीन घण्टे के अन्तर से अकुरित चने ले लिया करें और खूब चबाया करे। चबाना इतना चाहिए कि यह कहा जा सके कि चने पिये जा रहे है। इसके बाद दूध भी पी लेवे। इस अर्से में फल या फलो का रस भी लिया जा सकता है। ब्रह्मचर्य से रहना जरूरी है। छ महीनो मे ही आप देखेगे कि शरीर वज्र के समान मजबूत हो जायेगा। जितनी स्थूलता अच्छे-अच्छे टानिको से प्राप्त नही हो सकती, वह इस सस्ते कल्प द्वारा मिल सकेगी। चने का यह महान चमत्कार जो भी देखेगा, आश्चर्य-चकित हुए बिना नही रह सकेगा।

इस रसायन मे साधारण चने की जगह काबुली चने का प्रयोग करे तो और भी अच्छा। यदि कभी भूख न लगे और पेट फूलने सा लगे तो हिग्वाष्टक चूर्ण का प्रयोग करना चाहिए।

अद्भुत वाजीकरण

धातुक्षीणता को नष्ट कर शुक्र बढानेवाली दवाइया वाजीकरण कहलाती है। घोडे को ही 'वाजी' कहते हैं। घोडे की कामशक्ति प्रसिद्ध है। घोडे में भी यह शक्ति चने के द्वारा ही आती है। चने की दाल घोडो का मुख्य खाद्य है। यही चना मनुष्य की कामशक्ति को भी बढाता है। जो युवक कमजोर रहते हो, उनको चने के प्रयोग किसी भी रूप में अवश्य करना चाहिए।

प्रमेह मे चने का सफलता के साथ उपयोग किया जाता है। जिन्हें भोजन में पौष्टिक पदार्थ उपलब्ध नही होते हो, उन्हें भोजन में चने का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। मै स्वय अपने भोजन में पिछले दस वर्षों से चने का नियमित प्रयोग करता हूँ। मै गेहूँ के आटे में ही चना डलवा लेता हूँ।, इस प्रकार की बेसी रोटियां खाने में भी स्वादिष्ट लगती है। पहले पहल मैंने यह प्रयोग मलावरोध को दूर करने के लिये किया था। किन्तु अब तो चने के दूसरे गुणो को देख कर उसका कायल हो गया हूँ।

भुने हुए चने

कुछ लोगो का खयाल है कि भुने हुए चने खून को कम करते है। यह गलत है। चने केवल खून की शुद्धि करते हैं। रक्त की खराबी दूर करने से कुछ समय के लिए खून मे कमी सी प्रतीत होती है। हिकमत के अनुसार भुने चने का पहला गुण तेजी के कारण मलावरोध को दूर करना है। दूसरे वह अगो को विकसित करता है।

तुरन्त भुने चनो का प्रयोग जुखाम में लाभप्रद है। कुछ लोगो का तो कहना है कि गरमागरम चनो को सूघने से ही जुखाम नष्ट हो जाता है। परन्तु मेरे विचार से गरम चने खाने से तो अवश्य ही जुखाम चला जाता है। खूनी बवासीर मे भी गरम चने खाने का रिवाज है।

यदि आप चेहरे की कान्ति बढाने और झाई आदि मिटाने के चक्कर मे क्रीम और वैसलीनो से ऊब चुके हो, तो मै चने के आटे से बनी पिठ्ठी को लगाने की सलाह दूगा। आप देखेगे कि कुछ दिनो के प्रयोग से ही चेहरे पर कमल के समान कोमलता आ जायेगी। रग निखर कर गोरा हो जायेगा।

गले को साफ करने और खासी में जमे कफ को बाहर निकालने मे भी भुने चने का प्रयोग किया जाता है। बहुमूत्र रोग मे भी भुने चने का प्रयोग तुरन्त लाभ दिखाता है।

विभिन्न रोगो में

हरे चने के पत्तो का साग पित्तनाशक है और बुखार को दूर करता है। मसूढो की सूजन मे विशेष उपयोगी है। कच्चे हरे चने पित्त की बिमारियो में अत्यन्त फायदा पहुँचाते है। चने से बढे हुए यकृत और प्लीहा अपना प्राकृतिक रूप धारण कर लेते है। सभी किस्म के वीर्य-विकारों में इसका प्रयोग वाछनीय है। चने का क्षार अजीर्ण, भूख की कमी और अशुघात में फायदेमन्द है। हिक्का, जलोदर और विषमज्वर मे भी उपयोगी है।

आयुर्वेद मे चने को "सकलप्रिय" कहा गया है। गुण और उपयोगिता की कसौटी पर मुझे भी यह नाम सर्वथा उपयुक्त लगता है। केवल सस्ते होने से हमे चने को त्याज्य नही मान लेना चाहिए।

आतशक-मीमांसा

श्री शिवपूजन सिंह, कुशवाहा 'पथिक' बी० ए०,

भयङ्कर और कष्टदायक सक्रामक व्याधियो मे 'आतशक' भी है। भारतवर्ष मे इसे आतशक, गर्मी व फिरङ्ग नाम से पुकारा जाता है। यह एक विदेशी व्याधि मानी जाती है। इस व्याधि को भिन्न-भिन्न देशवाले अन्य देशो से आया हुआ समझते हैं। फ्रान्स वाले इसे नेपल्स से आया हुआ समझ कर 'नेपल्स रोग' (Madle Napoles) कहते है। इटालियन इसे फ्रास से आया हुआ समझकर 'फ्रेच रोग' (Malum Francoum) कहते है। पुर्तगाल वाले स्पेन से आया समझकर 'स्पेन की बीमारी' (Madle Castılea) कहते है। स्पेन वाले फ्रास की बीमारी' (Madle Gallıes), पोलैण्ड वाले 'जर्मन रोग' (Dent-Schekran kheıt), रूस वाले 'पोलैण्ड का रोग' (Polnıschekran-kheıt), कहते है। भारतीय इसे 'फिरग रोग' कहते है। यह रोग पहिले यहाँ नही था। इसे फिरङ्गी (पुर्तगीज) जाति ने ही यहाँ लाया, अत, 'फिरग' नाम समुचित है। 'गर्मी' और 'आतशक' नाम इस व्याधि की प्रकृति-निदान के अनुसार रख लिए गए है। इसे 'उपदश' भी कहते है। कई लोग इसे भिन्न रोग समझते है, पर यह बात नही है। आग्ल भाषा मे इस रोग को 'सिफसिल' (Syphılıs) कहते है।

कारण—(१) यह एक सक्रामक रोग है। इस रोग के कीटाणु होते है, जिसे आग्ल भाषा मे 'स्पाइरोकीट' (Spıro-choete Pollıda) कहते है। सर्वप्रथम इन कीटाणुओ का 'शाडीन' और 'हॉफमैन' नामक अग्रेजो ने पता लगाया था। ये कीटाणु मच्छर-मक्खियो के द्वारा नही आते और न चूहे से फैलते है, वरन् इन कीटाणुओ के फैलाने मे मादक द्रव्य अत्यन्त सहायक सिद्ध हुए है। नशा करने से इन कीटाणुओ में तेजी आ जाती है। यह रोग आतशक पीडित वेश्या के ससर्ग से उत्पन्न होता है। मुख व ओठो की श्लेष्म-धरा कला द्वारा भी रोग फैलता है। चुम्बन, उच्छिष्ट पात्र, हुक्के और सिगरेट द्वारा भी रोग सक्रमण होता है। बच्चो को खेलाते समय प्रत्येक व्यक्ति का बच्चे को चूमना, इस प्रकार के खतरे से खाली नही है। यदि माता-पिता को यह रोग हो तो उनके सयोग से उत्पन्न होने वाले बच्चो मे भी रोग सक्रमण हो जाता है, जिसे पैतृक सक्रमण कहा जाता है। कुछ लोग इस रोग का आक्रमण होते ही बिना रोग वाली स्त्री के साथ इस खयाल से सहवास करते है कि रोग से मुक्ति मिल जायेगी, परन्तु परिणाम सर्वथा ही विपरीत होता है। विषय-भोग करने से गर्मी के घाव फट कर अत्यन्त भीषण यन्त्रणा देते है। यह एक ऐसी व्याधि है जिसे मूर्ख लोग किञ्चिन्मात्र आनन्द के लिए बाजार से खरीदते है। परन्तु कुछ निर्दोष व्यक्ति भी ससर्ग से रोगाक्रान्त हो जाते है।

सक्रमणकाल—आतशक रोगग्रसित वेश्याओ के साथ रमण करने से पुरुष की उपस्थेन्द्रिय के उपचर्म की त्वचा फट कर उसमे स्त्री के जननेन्द्रिय के भीतर की कोमल त्वचा से इसका विष प्रवेश करता है। कभी-कभी त्वचा के न फटने पर भी उपस्थेन्द्रिय मे इस विष के लगने और सूक्ष्म सिराओ द्वारा शोषित होने पर यह रोग उत्पन्न हो सकता है। तीन दिन से लगाकर १४ दिन मे यह रोग फूटता है। कभी कभी इससे भी देर से आक्रमण होता है। जब कीटाणु अपना क्षेत्र तैयार कर लेते है, तब उपस्थेन्द्रिय के अग्रभाग (मुण्डाग्र) पर एक फुन्सी उठती है। धीरे-धीरे यह फुन्सी बढकर फोडे के रूप मे हो जाती है और फूटकर घाव का रूप धारण कर लेती है। इस घाव के किनारे और आसपास की चमडी कठोर हो जाती है जिसे अग्रेजी मे 'हार्डशेकर' (Hard chancre) अर्थात् 'कर्कश व्रण' कहते है। 'सॉफ्ट शेकर' (Soft chancre) अर्थात् 'कोमल व्रण' भी होता है। कर्कश व्रण पुरुषो के 'शिश्न-मुण्ड' और स्त्रियो के 'योनि-मुख' के पास ही होता है। इस व्रण में किसी प्रकार की पीडा नही होती और पूय (पीब) आदि भी नही निकलती, केवल पानी-सा क्षेप बहता है। दस दिनो के बाद आसपास की गिल्टियाँ सूजने लगती है, परन्तु वे न तो पकती है और न दर्द करती है। इस प्रकार की गिल्टियाँ शरीर के अन्य हिस्सो में भी निकल आती है। इस समय तक गर्मी रोग का विष समस्त शरीर पर प्रभुत्व स्थापित कर लेता है।

माध्यमिक अवस्था—प्रारम्भिक फुन्सी उत्पन्न होने के लगभग चार मास पश्चात् इस रोग का माध्यमिक काल प्रारम्भ होता है। इस रोग में ज्वर भी होता है। त्वचा पर लाल दाने और चकत्ते होने प्रारम्भ हो जाते हैं। शरीर में खुजली होती है। भूख कम लगती है। मुख और जिह्वा मे घाव हो जाते हैं, नेत्रो और सन्धि स्थानो मे पीडा होती है। सिर मे गज होकर बाल गिरने लगते हैं। गलित कुष्ठ हो जाता है। स्नायुशूल, क्षय और हृदय रोग भी हो जाते है। गले के अन्दर शोथ हो जाता है और व्रण बन जाते हैं।

जीर्णावस्था—माध्यमिक अवस्था मे उचित औषधि न करने से यह रोग अत्यन्त भीषण रूप मे प्रकट हो जाता है। सारा शरीर गर्मी से सड जाता है। तालू सड कर फट जाता है। नासिका के छिद्र रुक जाते है। जिह्वा पक जाती है। अण्डकोष सूज जाते है। उपस्थेन्द्रिय सड जाता है। मृर्गी का दौरा भी हो जाता है। अस्थि आवरणो मस्तिष्कावरणो, प्लीहा यकृत अण्डकोष मे एक प्रकार की ग्रन्थियाँ उत्पन्न होने लगती है जो 'गमा' (Gumma) कहलाती हैं। यह ग्रन्थियाँ गाठदार और चपटी होती है। गमा के ऊपर की खाल धीरे-धीरे घिसती रहती है और अन्त मे यह सडकर फूट जाती है। इनमे भूरे रग का गाढा पीब जमा रहता है। जब यह सख्त जमा पीब का भाग अलग हो जाता है तो उस स्थान पर गहरा घाव हो जाता है। यह गमा तालू मे होने पर वहा छेद कर देता है जिसे तालू फूटना कहते है। मस्तिष्क और सुषुम्ना मे गमा होने से लकवा, पक्षाघात, उन्माद मिर्गी (अपस्मार) हो जाते है।

भेद—फिरग तीन प्रकार का होता है—वाह्य, आभ्यन्तर और वाह्याभ्यन्तर।

वाह्य का फिरग फोडे के समान होता है। उसमे फोडे के समान ही वेदना होती है। यह औषधि स ध्य है।

आभ्यन्तर रोग शरीर मे अन्दर रहता है। रोग-कीटाणु रक्त मे पहुँच कर उसे दूषित करते है। शरीर मे चकत्ते, व्रण हो जाते है।

वाह्याभ्यन्तर अर्थात बाहर और भीतर जो रोग होता है, उसमें शरीर बुरी तरह सड जाता है। सिर के बाल गिरने लगते है। अपस्मार-उन्माद होता है। यह दु साध्य है।

आतशक के अन्य उपद्रव

बद—आतशक के रोगी को ठीक उसी प्रकार बद होती है, जैसे पूयमेह के रोगी को। पूयमेह की बद प्राय पकती नही है, पर आतशक की बद अवश्य पकती है।

गठिया—शरीर के सन्धि स्थानो मे फिरग का विष पहुँच कर वहाँ वेदना उत्पन्न करता है। उसे गठिया कहते हैं। घुटनो मे और रीढ मे विशेषतया वेदना होती है।

उपचार—उपदश (आतशक) के मैथुनजन्य रोग होने के कारण प्राय रोगाक्रान्त व्यक्ति लज्जा का अनुभव करके भिषको के पास जाकर उपचार नही कराते हैं। किसी अच्छे दक्ष भिषक् से उपचार कराना चाहिए अन्यथा इस रोग का परिणाम बडा भयकर होता है। औषधि लेने के पूर्व रेडी का तेल दुग्ध मे मिलाकर पीने से उदर साफ हो जाता है। खाने और लगाने दोनो औषधियो का प्रयोग करना चाहिए। रोगी को पथ्य का ध्यान रखना चाहिए। गेहूँ की रोटी या दलिया बिना लवण का और भुने हुए चने ही उत्तम पथ्य है। औषधि सेवन के पश्चात शुद्ध गन्धक का सेवन करना अनिवार्य है।

आयुर्वेदिक चिकित्सा

(क) गेहूँ के आटे की कुप्पी बना उसमे रस कर्पूर ४ रत्ती बन्द कर आटे पर लवँग चूर्ण लगा जल के साथ निगलने को देना चाहिए। दात से स्पर्श नही होने देना चाहिए और ऊपर से पान खिलाना चाहिए। पान मे तम्बाकू न हो। इसके सेवन के समय शाक, अम्ल, नमकीन पदार्थ, धूप, परिश्रम, स्त्री-प्रसग सर्वथा ही त्याज्य है।

(ख) चिकनी सुपारी को घिस कर घावो पर लगाने से लाभ होगा।

(ग) खुरासानी अजवाइन, देशी अजवाइन, अजमोद प्रत्येक तीन-तीन माशा, सफेद मिर्च २१ सख्या, लौंग टोपीदार २१ दाना, शुद्ध रस कर्पूर ६ माशा और मुर्दाशख ३ रत्ती, इन सब को एक सप्ताह तक अदरक के रस में खरल करके छोटे बेर के बराबर गोलियाँ बना ले। नित्य एक गोली पानी के साथ निगला देनी चाहिए। दो सप्ताह तक सेवन करे, स्नान करना वर्जित है। हवा मे न रहे। चने की तरी के साथ केवल गेहूँ की रोटी खावे और कुछ न खावे। जीर्ण आतशक भी जाता रहेगा।

(शेषांश ७१४ पृष्ठ पर)

आयुर्वेदीय द्रव्यों का होम्योकरण

कविराज डा० गौरीशंकर श्रीवास्तव

होम्योपैथी (सदृश्य विज्ञान) पाश्चात्य जगत मे भले ही एक स्वतत्र विज्ञान माना जाता हो, किन्तु भारतीय दृष्टि से उसे आयुर्वेद के एक अङ्ग मात्र के रूप मे प्रतिष्ठापित करना पडेगा। आयुर्वेद में स्पष्ट रूप से दो चिकित्सा विधियो का वर्णन है —(१) विपरीत और (२) सदृश्य। माधवाचार्य ने पच निदान के अन्तर्गत उपशय शीर्षक मे लिखा है—

"हेतुर्व्याधि विपर्यस्त विपर्यस्तार्थ कारणाम्
औषधान्न विहाराणामुपयोग सुखावहम।"

विपरीत विधि मे—(अ) हेतु विपरीत (ब) व्याधि विपरीत और (स) हेतु-व्याधि उभय विपरीत। इसी प्रकार सदृश्य विधि मे—(क) हेतु सदृश्य (ख) व्याधि सदृश्य और (ग) हेतु-व्याधि उभय सदृश्य।

पित्तजन्य व्रण मे पुल्टिश बाँधना, छर्दि रोग मे मेनफल आदि वमनकारी पदार्थो का प्रयोग और विषजन्य रोगो मे विष के द्वारा चिकित्सा करना इसी सदृश्य विधि के दैनिक उदाहरण है जो आयुर्वेदिक चिकित्सक नित्यश व्यवहृत करते है।

स्पष्ट है कि सदृश्य विधान का सिद्धान्त आयुर्वेद का प्राचीन सिद्धान्त है। किन्तु महात्मा हेनीमन ने उसका विकास करके जो स्वतत्र चिकित्सा विधान के रूप मे उसे प्रतिष्ठित किया है इसका श्रेय उन्हें देना ही होगा। आज होम्योपैथी एक स्वतत्र चिकित्सा प्रणाली है और हमे भी उसे इसी रूप मे स्वीकार करना पडेगा। किन्तु इतना निर्विवाद मानना पडेगा कि होम्योपैथी को जितनी बारीकी से एक आयुर्वेदिक चिकित्सक समझ सकने मे समर्थ होगा उतना स्वय आयुर्वेद से अनभिज्ञ होम्योपैथ नही।

कुछ भी हो, हमारा विषय इस विवाद के झमेले मे पडने का नही है। प्रस्तुत लेख मे हम किसी अन्य सत्य की ओर ही पाठको का ध्यान आकर्षित करना चाहते है।

होम्योपैथिक मेटेरिया मेडिका (निघण्टु) मे प्रारम्भ में वही भेषज द्रव्य प्रयुक्त होते रहे है जो एलोपैथी मे उपलब्ध थे। किन्तु इधर कुछ दिनो से भारतीय होम्योपैथो का ध्यान आयुर्वेदीय द्रव्यो की ओर आकर्षित हुआ है और वे उन द्रव्यो का होम्योकरण करके चिकित्सा क्षेत्र मे यश-लाभ कर रहे है। मै चाहता हूँ कि आयुर्वेदिक चिकित्सक-गण भी इन भेषजो से अवगत होकर उनकी परीक्षा करे और लाभ उठाएँ।

विल्व पत्र (Eagle Folia)

(१) प्रवल नया बुखार अथवा सन्निपातिक ज्वर में मस्तिष्क में रक्त सचय के लक्षण पैदा हो जाना।

(२) शोथ की विशेष (Specific) औषधि है। नए अविराम ज्वर (Continous fever) मे, जिसमें शोथ भी हो, बहुत लाभप्रद है।

(३) बेरीबेरी रोग मे, जिसमें आँख-मुँह-हाथ-पाँव तथा समूचे शरीर में शोथ हो जाता है—लाभप्रद है। इसकी नाडी मोटी और सरल होती है तथा पेशाब की मात्रा घट जाती है।

(४) इन्फ्लुएजा या बलगमी बुखार मे या अविराम ज्वर मे जिसमे चेहरा और पलके फूल जाती है।

(५) धातु दौर्बल्य और ध्वजभग, स्त्री सहवास की शक्ति का लोप।

(६) यह शोरा दोषनाशक और धातुशोधक औषधि मानी जाती है।

क्रम— Q अतिसार के साथ शोथ मे।
३०x कब्जियत के साथ शोथ मे।
२००x धातु दौर्बल्य मे।

बेल का गुदा (Eagle Marmelus)

(१) अतिसार और रक्तामाशय मे।

क्रम—मूल अरिष्ट (Q)

अर्जुन (Terminalia Arjun)

(१) हृत्पिण्ड की सब तरह की बीमारिया—कलेजा धडकना, हृत्पिण्ड का दर्द (एञ्जिनाइना पेक्टोरिस) (२) गिर पडने की वजह से बदन मे दर्द। हड्डी टूटने या खिसक जाने पर। चोट लग जाने से चमडे के ऊपर काला दाग पड जाना।

अभी तक इसका पूरा पूरा प्रूविंग होम्योमत से नही हो सका है। आयुर्वेदिक मत से इसे—नाना प्रकार के रक्त-स्राव, रक्तातिसार, ग्रहणी, मूत्राघात प्रदर आदि रोगो मे व्यवहार मे लाया जा सकता है।

क्रम— ३x या ३०x

अशोक (Jenosia Asoka)

(१) रक्त प्रदर या बहुत अधिक रक्त स्राव।

(२) जरायु मे ताकत लाना।

(३) श्वेत प्रदर मे।

क्रम— १x ३x, ३०x, २००x

ऋतु सम्बन्धी रक्त विकारो में उच्च शक्ति का प्रयोग करना चाहिए।

नीम (Azadiracta Indica)

(१) क्विनाइन के अपव्यवहार के बाद के ज्वर।

(२) सविराम ज्वर या पुराना जीर्ण ज्वर।

(३) पित्त की अधिकता से होने वाला सिर दर्द।

(४) नाना प्रकार के चर्म रोग।

(५) जननेन्द्रिय की जीर्णता।

क्रम—६x, ३०x, २००x

कुकरौंधा (Blumia Odorata)

(१) एक तरह की खाँसी जिसमें कुत्ते की आवाज की तरह स्वर निकलना है।

(२) खूनी बवासीर का खून रोकना।

(३) रक्ततिसार और रक्तामाशय मे बहुत अधिक खून जाने पर।

(४) स्त्रियो का रक्त प्रदर, बहुत ज्यादा रक्त स्राव, बहुत ज्यादा रज स्राव गर्भस्राव आदि पर व्यवहृत होता है।

क्रम—Q, १x, ३x, ३०x

पुनर्नवा (Boerhavia Diffuza)

होम्योपैथी मे यह दवा सर दर्द—खासकर अधकपारी में तथा वात के दर्द और उनके उपसर्गों मे व्यवहृत होती है।

(२) शोथ और बेरी-बेरी मे भी इसका उपयोग किया जाता है।

क्रम—मूल अरिष्ट Q या १x।

इसका विशेष प्रूविंग अभी नही हो सका है। आयुर्वेदिक मत से पुनर्नवा शोथ, वायु, कफ पाण्डुरोग, व्रण और उदर रोग का नाश करता है। मूत्रकृच्छ्र के लिये भी आयुर्वेद मे यह सफलता के साथ प्रयुक्त होता है। चिकित्सक इसे अनुभव करे।

चिरायता (Gentiana Chirata)

१ नए और पुराने ज्वर की उत्कृष्ट दवा। सबेरे या दोपहर से जाडा लगकर आनेवाला बुखार। धीमा-धीमा तीसरे पहर मे आ जाने वाला ज्वर।

इसके ज्वर मे आँखो मे भयकर जलन। कनपटी और माथे मे धीमा-धीमा दर्द। पैरो मे कमजोरी। अगुलियो मे झुनझुनी।

क्रम—निम्नक्रम १x।

मदार (Calotropis Gigantia)

ज्वर—हेक्टिक ज्वर, पीव का बुखार, पित्तज्वर, अतिसार के साथ ज्वर गण्डमाला या उपदश के ज्वर, बच्चो के दात निकलने के समय आने वाला ज्वर आदि, शीत प्रधान ज्वर, शरीर ठडा माथा गरम।

मूत्र स्थली के रोग—खून का पेशाब और तलपेट में दर्द। बार-बार पेशाब की इच्छा होना।

छाती का दर्द—मानो कोई छुरी मार रहा है, पीव मिला बलगम निकलता है। कलेजे में दबाव। सुस्ती।

चर्मरोग—सडने वाला जख्म और ग्रेंग्रीन मे यह सफलता से व्यवहृत होता है। कुष्ट की जलन में विशेष लाभदायक। इसी प्रकार उपदश के जख्मो मे भी इससे बहुत उपकार होता है।

कुष्ट मे पैदा हुए नाना प्रकार के जख्म और लाल रग का दाग पडने वाला हार्पिस रोग इसके द्वारा ठीक हो जाते है।

उपदश जन्य विकार—उपदश जन्य गुटिका मे यह लाभप्रद है।

कृमि—फीता कृमि (Tape worm) की यह एक उत्कृष्ट दवा है।

उदर रोग—पेट और आँत मे तेज जलन। हैजा में जब रोगी की आँखें लाल हो, पेट में असह्य जलन, मूर्च्छा और सुस्ती।

शालपर्णी (Desmodium Gangetium)

१ सन्निपातिक ज्वर और सेरिब्रो स्पाइनल मेनिन्जाइटिस रोग जिसम समूचे शरीर मे दर्द होता है। हमेशा नींद का भाव और सर दर्द।

२ बच्चो के अविराम या स्वल्पविराम रोग मे जहाँ बालक को झपकी (तद्रा) आती हो और सर दद रहता हो वहाँ उपकारी है।

३ वातश्लेष्म ज्वर रेमीटेन्ट फीवर या सान्निपातिक ज्वर में जिनमें बदन मे और रीड की हड्डी मे दद होना है सर दर्द और तन्द्रा आती है।

४ सविराम और मलेरिया ज्वर मे जो सुबह जाडा देकर आता है और एक दो घण्टे बाद उतर जाता है।

क्रम--१x ३x ३०x।

बायविडग (Embelia Ribes)

१ बच्चो के कृमिरोग म कृमि से उत्पन्न अतिसार में यह व्यवहृत होता है।

२ अजीर्ण और पेट फूलना।

क्रम—१x ३x और ३०x ।

पीपल (Ficus Religiosa)

१ शरीर के किसी भी अग से रक्त स्राव होने पर इस दवा का स्मरण करना चाहिए। नाक से खून गिरना रक्तार्श खासी मे खून खून मिला पेशाब खून की कै स्त्रियो को चमकीला खूनी स्राव।

२ स्त्रियो को अति ऋतुस्राव।

३ रक्त प्रदर या जरायु से रक्त स्राव।

४ खूनी बवासीर जिसमे चमकीले लाल रग का खून गिरता हा।

बड (Ficus Indica)

१ किसी भी कारण मुह या गले से खून निकलना।

२ अधोगामी रक्तपित्त जिसमे पाखाने के पहिले रक्तस्राव होता हो।

३ स्त्रियो का रक्त प्रदर।

४ पुराना और नया आमाशय।

५ पेशाब में जलन और रक्तस्राव।

६ सुजाक की बीमारी।

७ शुक्रक्षय के कारण धातु दौर्बल्य।

क्रम—निम्न या १x

ब्राह्मी (Hydrocotyle Asiatica)

१ चमडे पर विशेष क्रिया होती है। खुजली और कुष्ट रोग म लाभ होता है।

२ मुहासे (Acne) की यह उत्कृष्ट दवा है।

३ श्लीपद रोग मे भी यह व्यवहृत होता है।

४ मूत्र और स्त्री रोगो मे काम आता है। मूत्रस्थली की उत्तेजना जननन्द्रिय की खुजली और जलन।

क्रम— १x ३x और ३०x

कूटच (कूडा)

(Holarrhena Antidysenterica)

जीण आमाशय और रक्तामाशय म विशष सफलता के साथ व्यवहृत होती है।

क्रम—निम्न १x से ६x तक।

देवदारु (बिदाली) (Luffa Bindal)

१ पित्त शूल ((Gall stone) और यकृत के नाना प्रकार के रोगो में।

२ बढी हुई प्लीहा यकृत और शोथ युक्त पुराना मलरिया।

३ अश म भी इसका व्यवहार होता है। मसो पर इसका लप भी लगाया जाता है।

४ सर्दी—जो साधारण ढग से होती है लेकिन सहज ही नही जाती।

क्रम—१x से ६x तक

द्रोणपुष्पी (Leucus Aspera)

१ जीणज्वर—बहुत दिनो से भोगने वाला।

२ दमा और हँफनी।

३ रक्तामाशय।

४ शरीर की खुजली।

५ प्लीहायुक्त पुराना मलेरिया।

६ सर्दी-खासी में।

६ साँप का विष दूर करने की इसमें सफल शक्ति है।

क्रम—१x से ६x तक।

रक्तकच्छाली (Menespernum)

१ स्त्रियो के ऋतु के समय या जरायु से जब बहुत अधिक रक्त स्राव हो।

२ श्वेत प्रदर के कारण स्त्री बहुत कमजोर हो गई हो।

क्रम—१x से ६x तक

तुलसी (Ocimus Sanctum)

स्त्रीरोग—(१) प्रसव के बाद के परिस्राव, स्राव बहुत बदबूदार बहुत दिनो तक रहने वाला। पीव या मछली के धोवन की तरह स्राव होता है।

(२) अनियमित ऋतुस्राव बहुत दिनो तक स्राव होते रहना।

(३) श्वेत प्रदर।

ज्वर—(१) न्यूमोनिया ब्राकाइटिस छाती का दर्द, रोगी स्थिर होकर नही सोता।

(२) तीसरे पहर से जाडा देकर आने वाला ज्वर।

(३) सन्निपातिक ज्वर जिसमे कभी दाह, कभी कम्प, कभी पसीना, कभी प्रलाप, कभी तन्द्रा आदि भाव रहे।

(४) ज्वर और सर्दी के साथ पेट की गडबडी।

(५) इन्फ्लुएञ्जा और साधारण सर्दी-खाँसी।

प्लीहा और यकृत—प्लीहा और यकृत का दर्द।

बालकों के रोग—(१) बच्चो के अविराम ज्वर दाँत निकलने के समय के बुखार अतिसार और कृमि उपद्रव।

(२) बच्चे का हमेशा रोते रहना, मिजाज मे चिड-चिडापन, बिछावन पर नही रहना चाहता।

(२) बच्चो को अनजान मे पाखाना होना, पेशाब करते समय नली मे जलन। बारबार पेशाब करने की इच्छा।

उदरामय

(१) अधिक परिमाण मे पानी सा पतला दस्त, पेट में फूलन जो पाखाना जाने पर घट जाती है पर मिटती नही।

(२) बरसात और शरद मे होनेवाला अतिसार।

(३) रक्त सचय की वजह से पाकस्थली मे गडबडी।

(४) पतला बदबूदार दस्त गध लिए हरा या पीला।

(५) पेट फूलना, डकारे आना, पेट का भारीपन।

सर दर्द

(१) सर दर्द, बाँधने पर अच्छा नही होना, माथे के ऊपरी भाग मे गरमी, ठडे पानी और हवा मे आराम।

आँख के रोग

(१) आँख उठना, आँखो का लाल होना और उनसे पानी निकलना।

(२) आँख मे खून का इकट्ठा होना।

(३) आँख मे दर्द रोशनी सहन नही होती।

(४) असलग्न दृष्टि—टकटकी लगाए देखते रहना।

कान का रोग

(१) कान मे टपका का दर्द।

(२) कान से पानी या पीव बहना।

(३) कान से कम सुनना।

नाक के रोग

(१) बारबार छीक के साथ नई सर्दी।

(२) नाक मे जखम।

(३) नाक से खून गिरना और बदबूदार पीव।

मुख रोग

(१) मुँह मे छाले।

(२) मुँह का स्वाद तीता या सडा।

(३) मसूडो के जखम।

(४) गले मे दर्द—घूँट लेने मे तकलीफ।

विशेष लक्षण

ओसिमस का विशेष लक्षण भूल (भ्राति) होना है। सभी कामो मे भूल होती है यहाँ तक कि बातो में भी भूल होती है।

क्रम—१x ३x, ६x ३०x और २००x.

पितपापड़ा (Oldenlandia Herbacia)

(१) नए और पुराने दोनो प्रकार के ज्वरो मे व्यवहार मे आता है। यह दवा पित्त ज्वर मे अधिक लाभप्रद है (होम्यो मत से भी)।

(२) ज्वर एक दिन ज्यादा, दूसरे दिन कम।

(३) जाडा लगकर बुखार, सिर में दर्द, प्यास।

(४) पित्त के कै और पित्त के दस्त।

जामुन (Syzygium fambolanum)

(१) बहुमूत्र रोग की यह एक उत्कृष्ट दवा है।

(२) अम्ल प्रधान धातु विशिष्ट रोगियो के लिए यह अधिक लाभप्रद है।

भटकटैया (Salanum Xanthocarpum)

इसकी प्रधान क्रिया कण्ठ रोगो पर होती है।

(१) बच्चो का न्यूमोनिया ब्रौंकाइटिस जिसमें गला घर्रघर्र करता हो।

(२) सूखा रोग के बाद की सूखी खाँसी।

(३) बच्चो का स्वर भग।

(४) किसी भी कारण से साधारण स्वर भग।

(५) नए बुखार मे जिसमें खाँसी और पसलियो का दर्द हो, प्यास, वमन, अरुचि और जलन हो।

(६) मूत्रकृच्छ्र में भी यह प्रयुक्त होती है।

क्रम—Q या १x, ३x, ६x

गुडूच (Tinospora Cordifolia)

(१) जीर्णज्वर में जिसमे शुक्रक्षय और प्रमेह भी साथ हो।

(२) कुनायन के अपव्यवहार से पैदा हुए रोग जिसमे प्लीहा बढ जाती है और आँखें पीली हो जाती है।

(३) नाना प्रकार के वमन।

क्रम—३०x।

लटजीरा (Achyvanthes Aspera)

(१) अत्यधिक परिमाणमें होने वाला अतिसार।

(२) वमन।

(३) सारे शरीर मे जलन।

(४) फोडा, कार्बंकुल और दूषित घावों में सफलता से व्यवहृत होता है। आक्रान्त अग मे जलन अवश्य होना चाहिए।

(५) किडनी की गडबडी के कारण उदरी और सारे शरीर में शोथ।

(६) गर्भस्रावक, शीघ्र प्रसव कारक।

क्रम—Q, १x, ३x, ६x

कूट (Saussurea Lappa)

(१) दमा विशेषकर वायुनली का दमा।

(२) दुर्दम्य हिचकी।

क्रम—Q या १x

चान्दर (Rauwolfia Serpentina)

(१) विषनाशक-साँप बिच्छू आदि के काटने पर।

(२) अनिद्रानाशक।

(३) उच्च रक्तचाप जिसमें अनिद्रा और स्नायु विधान की उग्रता रहती हो।

(४) प्रचण्ड उन्माद।

क्रम—Q या १x

बालमोंगरा (Gynocordia Odorata)

(१) अकौता, दाद और खसरा।

(२) कुष्ट रोग—श्वेत और गलित।

(३) गठिया वात।

क्रम—Q या १x, ३x

पत्थरचूर (Colieus Aromaticus)

(१) मूत्र सम्बन्धी प्राय सभी रोगो की उत्कृष्ट दवा है। मूत्रघात, मूत्रनाश, मूत्रकृच्छ्र, मूत्र पथरी, रक्तमूत्र।

क्रम—Q या १x।

बाकूची (Vernonia Anthelmintica)

(१) श्वेत रोग।

(२) विचर्चिका या सोरायसिस।

(३) अन्यान्य चर्म रोग।

(४) कृमिनाशक (Thread &r ound worm)।

(५) बच्चो का रात में बिस्तर पर पेशाब करना।

(६) बच्चो का सोते में दाँत किटकिटाना।

क्रम—Q, १x, ३x

हर्र (Terminalia chebula)

(१) पुराना उदरामय।

(२) रक्तामाशय।

(३) अर्श।

(४) चर्मरोग।

क्र —१ से ३० शक्ति तक।

उक्त प्रकरण से स्पष्ट है कि आयुर्वेदिक द्रव्यो के भैषज गुण होम्योकरण करने पर भी अधिकाश वैसे ही रहते हैं और होम्योपैथी में भी वह प्राय उन्ही रोगो के लिए व्यवहृत होते है जैसे कि आयुर्वेद में।

नेत्रहीनों की समस्या

(सकलित)

अनुमानत पूरे भारत मे नेत्रहीनो (अन्धो) की सख्या २१ लाख से कुछ अधिक ही होगी , किन्तु अन्धो के लिए देश भर में ऐसी केवल ६० सस्थाएँ ही है, जहां सिर्फ १८०० बच्चों और प्रौढो के प्रशिक्षण की सुविधाएँ प्राप्त हैं। परिणामस्वरूप देश के हजारो अन्धे व्यक्ति, प्रशिक्षण सम्बन्धी सुविधाओ के अभाव मे विपदग्रस्त रहते हैं और कष्ट की जिन्दगी बिताते हैं। यह तो जाहिर है कि बहुतो का अन्धापन दूर किया जा सकता है, क्योकि अन्धेपन का मुख्य कारण बचपन से ही बच्चे की आंखो की सफाई आदि की घोर उपेक्षा के साथ-साथ सन्तुलित भोजन का अभाव है। समय-समय पर स्कूल के बच्चो की मेडिकल परीक्षा करने और नियमित रूप से दूध दिए जाने के फलस्वरूप इस दिशा में कुछ सुधार अवश्य हुए और इससे इस विश्वास को पर्याप्त बल मिलता है कि भविष्य मे इससे हजारो बच्चे अन्धे होने से बचाए जा सकते है, बशर्ते कि लगभग सभी बच्चो को ये दोनो सुविधाएँ प्राप्य हो सके। इस सम्बन्ध मे अन्धता (Blindness) के अमेरिकी विशेषज्ञ डा० उल्मर (Dr Ulmer) के उन पत्रो का उल्लेख समीचीन होगा, जो उन्होने आल इण्डिया आफ्थेलमोलोजीकल सोसायटी (All India ophthalmological Society) को भेजा था। उन पत्रो में डा० उल्मर ने अन्धेपन (Blindness) को रोकने की दृष्टि से नेत्र-रोग-विज्ञान मे अ ुसन्धान करने का अनुरोध करते हुए अन्धेपन के कारणो की छान-बीन करने का आग्रह किया था। इस वर्ष बगलोर मे नेत्र-रोग-विज्ञानवेत्ताओ का जो सम्मेलन हुआ, उसमे डा० उल्मर के सुझावो पर भी विचार-विमर्श हुआ था—उक्त सोसायटी को चाहिए कि अन्धेपन की समस्या को अपने हाथ मे ले। साथ ही साथ राष्ट्रीय-प्रसार खण्डो और सामुदायिक कल्याण योजनाओ में सलग्न सामाजिक स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यकर्त्ताओ का भी इस क्षेत्र मे उपयोग किया जाना समीचीन होगा।

अन्धेपन को रोकने की दिशा मे सामाजिक कार्यकर्त्ताओ की सेवाएँ भी बडी कारगर साबित हो सकती हैं—यदि सामाजिक कार्यकर्त्ताओ की टोली घर-घर जाकर अशिक्षित ग्रामीण महिलाओ को, जिन कारणो से अन्धापन होता है, उनकी जानकारी उन्हे करावे—जैसे समुचित पोषण का अभाव, पढने-लिखने के समय शरीर की ठीक स्थिति न होना (Effects of wrong posture), समुचित प्रकाश की कमी, शिशु-जन्म के समय नीम-हकीमो द्वारा की जानेवाली गलत चिकित्सा और हानिप्रद औषधियो का प्रयोग।

ऊपर जिन कारणो का उल्लेख किया गया है, वे कारण बहुत हद तक प्रयत्न करने पर दूर किये जा सकते हैं और अन्धापन मिटाया जा सकता है। अतएव, अन्धता के कारणो का किस प्रकार निवारण किया जा सकता है, इसका अधिकाधिक प्रसार-प्रचार जहाँ एक ओर वाञ्छनीय है, वहाँ दूसरी ओर सर्वसाधारण जनता का जीवन-स्तर ऊँचा करना भी आवश्यक है। साथ ही साथ स्वास्थ्य- सम्बन्धी सेवाओ का अधिकाधिक प्रसार होना चाहिए।

भारत में अन्धो के पुनर्वास की समस्या का हल जितना इस समय आवश्यक है, उतना पहले कभी नही था। भारत सरकार भी इस समस्या के प्रति बडी सजग है, और पचवर्षीय योजना मे अन्धो के लिए एक राष्ट्रीय केन्द्र (National centre) की स्थापना करने की गुजायश निकाली गयी है। इस केन्द्रीय सस्था से सम्बद्ध अन्यान्य सहायक सस्थाएँ तथा एक ब्रेल प्रेस (उभरे हुए अक्षरो की छपाई जो अन्धो के लिए होती है, इसमे ६-६ बिन्दुओ के ६३ सकेत होते हैं) भी होगी। अन्धो को विभिन्न पेशो अथवा धन्धो मे लगाने के लिए एक राष्ट्रीय सगठन होगा। नेत्रहीनो की निराशा और आक्रोश—इन बुराइयो से अवश्य रक्षा करनी होगी—साथ ही उनके अन्दर विश्वास और सुरक्षा की भावना उत्पन्न करनी होगी। "अमेरिकन फाउण्डेशन फॉर द ओवरसीज ब्लाइण्ड" (American foundation for the oveseas rlind) के क्षेत्र निर्देशक श्री एरिक बाउल्टर (Eric Boulter) ने पूर्वीय देशो के

भ्रमण के सिलसिले मे जून के प्रारम्भ में मद्रास आने पर पूनामल्ली और टेनामपेट नामक स्कूलो का निरीक्षण किया था, जहाँ नेत्रहीनो के लिए बडी सरलता से कार्य हो रहा है। अम्बात्तुर स्थित टी० आई० सायकिल फैक्टरी का भी उन्होने निरीक्षण किया था, जहाँ पर ६ अन्धे कार्य कर रहे है और अच्छी तरह अपनी आजीविका का उपार्जन कर रहे है। श्री बाउल्टर इससे बडे प्रभावित हुए थे, किन्तु उन्होने ऐसा अनुभव किया कि अन्धो की बडी सख्या इससे लाभान्वित नही हो पा रही है—न उनकी जरूरते ही पूरी हो पा रही हैं, और नेत्रहीनो की भारी सख्या दर्दनाक गरीबी मे अपने दिन गुजार रही है। श्री बाउल्टर ने बताया था कि अन्धो के पुनर्वास का जहाँ तक प्रश्न है, अमेरिकी सस्थान (American foundation) इस दिशा मे कार्य करनेवाली विभिन्न सस्थाओ को सहायता देने के लिए इच्छुक है। न केवल अन्धो के ही, प्रत्युत शारीरिक दृष्टि से अन्य अपगो के पुनर्वास के लिए भी भारत में यह जरूरी है कि सरकार यहाँ के उद्योगपतियो की भी सहायता ले। उद्योगो के विकास के साथ-साथ नत्रहीनो में जो प्रशिक्षित हैं, उनको अधिकाधिक कार्य मे लगाया जा सकेगा। प्रशिक्षण के लिए जो सस्थाएँ है, उनकी सख्या सर्वथा असन्तोषजनक है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, कि अन्धो के लिए अभी सिर्फ ६० स्कूल ही है, इसलिए न केवल मद्रास राज्य मे ही बल्कि भारत के अन्य भागो मे भी कितने ही स्कूलो की जरूरत है। शारीरिक दृष्टि से अपग लोगो के लिए भारत में जो अधिक लोकप्रिय और विकासशील शिक्षण-सस्थाएँ है, उनमें से अधिकाश ऐसी सस्थाएँ है जिनका सचालन गैर-सरकारी सूत्रो खास कर धार्मिक सस्थाओ (जिनमे रुग्ण और अपग प्राणियो की सेवा करने की भावना से प्ररित होकर स्त्री-पुरुष अपना जीवनदान कर देते है)के द्वारा होता है। इन सस्थाओ की उपयोगिता को बढाने तथा स्थिर रखन के लिए अधिकाधिक राजकीय सहायता की आवश्यकता है। एसी सस्थाओ के पोषण-सवर्द्धन के लिए मद्रास राज्य मे प्राप्त राजकीय अनुदान की तिगुनी रकम मिशनरिया व्यय करती है। भारत तथा भारत के बाहरी देशो मे मिशनरिया, इस व्यय-भार का वहन सार्वजनिक चन्दे और जनता से दान मे प्राप्त रुपए के बल पर करती है।

राजकीय सस्थाओ को विकसित करना ही पर्याप्त नही है, हालाकि यह भी परमावश्यक है। अन्धो को सुचारुरूपेण शिक्षा देने तथा अपगो की समस्या के समाधान के लिए नए और उन्नत तरीके राज्य द्वारा अपनाए जान चाहिए।

शेषाश] आतशक मीमासा [७०७ पृष्ठ का

(घ) रसकर्पूर आधा तोला बहुत महीन चूर्ण करके एक छटाँक घी या दो औंस वेसलिन में मिला दें। यह आतशक के घाव के लिए सर्वोत्तम मलहम है।

यदि सहवास के पश्चात् इस मलहम को उपस्थेन्द्रिय पर भलीभाँति लगा दिया जावे तो आतशक होने का डर नही रहता है। आतशक के कीटाणु बडे सख्त होते है, सहज में नही मरते हैं। इसलिए मलहम अच्छी तरह लगाना चाहिए।

(ङ) रीठे के छिलके को सुखा कर बारीक चूर्ण करके चने के बराबर गोलियाँ बना और दही में मिला कर खाने से कठिन आतशक भी दूर हो जाता है। नमक, लालमिर्च नही खाना चाहिए।

(च) रक्तचन्दन, काली मिर्च, असली केसर, लौंग तथा रसकर्पूर इन सबको समान भाग ले जल द्वारा खरल में घोट एक-एक रत्ती की गोलियाँ बना उनमे से एक गोली प्रतिदिन मक्खन में लपेट कर प्रयोग करने से भीषण फिरग रोग भी नाश हो जाता है। गोली को मक्खन में इस प्रकार से रखें कि चारो ओर से मक्खन ही मक्खन हो जिससे गोली दाँतो में न लगने पावे अन्यथा दाँत गिर जायेंगे।

रक्तपित्त

डा० रामगोपाल गुप्त, ए० बी०, एम० ए० एस० एम०

रक्तपित्त-विकार तीन प्रकार का होता है, (१) उद्र्ध्व गत, (२) अधोगत और (३) उद्र्ध्वाधोगत। उद्र्ध्वगत में मुख से रक्त निकलता है या नासिका, कर्ण, चक्षु आदि सात द्वारो मे से अधोगत में गुदा और मूत्रन्द्रिय से रक्त निकलता है और उर्द्धाधोगत मे ऊपर और नीचे के दोनो ही मार्गो से रक्तपात होता है।

रक्तपित्त अन्य रक्तस्रावो से भिन्न है। उद्र्ध्वगत रक्त-पित्त उर क्षत, रक्त निष्ठिवन और कर्ण, मुख मसूढो आदि मे क्षत होन से या, इन स्थानो मे से किसी स्थान की धमनी या शिरा फटन से भी रक्त निकल सकता है। रक्तपित्त मे रक्त का मिश्रण होता है जब कि अन्य प्रकार के रक्तपात या रक्तास्राव मे पित्त का मिश्रण नही होता। इसी प्रकार गुदा से रक्तपात अर्श, अन्त्र मे क्षत इत्यादि होन से हो सकता है परन्तु उसमे पित्त का मिश्रण न होन के कारण वह रक्त-पित्त नही माना जाता, मूत्रन्द्रिय से रक्त पित्त भी वृक्क कुप्पी प्रदाह वृक्क क्षत, मूत्राशय मे शिरा-धमनियो के भद से या इन्द्रिय की कला के प्रस्फुटन आदि से तथा मूत्रमार्ग मे पथरी के अवरोध के कारण हो सकता है परन्तु इसमे पित्त का मिश्रण नही होता है, इसलिए इसे रक्तपित्त नही कह सकते।

रक्तपित्त के कारण—उष्ण, तीक्ष्ण, अम्ल, कटु और लवण रस प्रधान द्रव्यो का सतत या अति सेवन, गरमी में बहुत समय तक काम करना, सताप और अन्न-विदाह आदि रक्तपित्त के कारण होते है।

संप्राप्ति—*रक्त उष्ण है, पित्त भी उष्ण है। तीक्ष्ण,* उष्ण, विदाही-द्रव्य भी रक्तपित्त के समान गुण-धर्ममय होते है, इसलिए इस प्रकार के द्रव्यो के सेवन से रक्त तथा पित्त मे दाह की वृद्धि होती है और रक्त तथा पित्त दोनो ही दूषित हो कर यकृत और प्लीहा रक्त और पित्त प्रधान ग्रन्थियो मे क्षोभ उत्पन्न करते है। यकृत और प्लीहा के कोष अतिरक्तपरिभ्रमण तथा पित्त के ऊष्मा से प्रस्फुटन हो जाते है तथा प्रकुपित रक्त और पित्त की सतत बेकारी क्रिया से इन अगो के कोष मे क्षोभ उत्पन्न होता है। फिर य प्रकुपित रक्तपित्त रक्तवाही तथा पित्तवाही स्रोत मे प्रकाप उत्पन्न करते अपन सम्पूर्ण मार्ग मे ऊष्मा की वृद्धि कर देते है। परिणाम यह होता है कि शिराएँ धमनियाँ और अन्य स्रोत रक्त मिश्रित पित्त के प्रकुपित परिभ्रमण को सहन न कर दोषो की गति के अनुसार अधो या उद्धव मार्ग से या दोनो ही मार्गों से रक्तवाही स्रोतो से पित्त मिश्रित रक्त निकलन लगता है।

रक्तपित्त के अधिष्ठान—उपर्युक्त सम्प्राप्ति के अनुसार यकृत-प्लीहा और रक्तवाही स्रोत रक्तपित्त के अधिष्ठान होते है।

रक्तपित्त के भेद—वातिक, पैत्तिक कफज और सान्निपातिक य रक्तपित्त के चार भद है।

कफज रक्तपित्त के लक्षण—सान्द्र सस्नह पीताभयुक्त और पिच्छिल रक्तपात कफज रक्तपित्त कहा जाता है।

वातज रक्तपित्त के लक्षण—फनयुक्त श्यामवर्ण पतला और रूक्ष पित्त का पडना वातज रक्तपित्त कहा जाता है।

पैत्तिक रक्तपित्त के लक्षण—कषाय, आमयुक्त कृष्णवर्ण, गोमूत्र के समान, सधूम पित्त मिश्रित रक्तपात पित्त के कारण माना जाता है।

सान्निपातिक रक्तपित्त के लक्षण—तीनो दोषो के मिश्रित लक्षण वाला रक्तपित्त सान्निपातिक रक्तपित्त कहा जाता है।

साध्यासाध्य विचार—एक दोषज रक्तपित्त साध्य, *द्विदोषज याप्य और त्रिदोषज असाध्य होता है*—इसी प्रकार उद्र्ध्वगत साध्य, अधोगत याप्य और दोनो मार्ग से एक ही साथ होनेवाला रक्तपित्त असाध्य होता है। जिन रोगियो की अग्नि क्षीण होती है यदि उनको वेगपूर्वक रक्तपित्त का आक्रमण हो तो उसे भी असाध्य मानना चाहिए। इसी प्रकार अतिकृश, अतिव्याधित और अतिवृद्ध रोगियो में भी यह असाध्य ही माना जाता है। जब रक्तपित्त का प्रकोप सम्पूर्ण शरीरगत हो जाता है और वह शरीर के नवो मार्गों के अतिरिक्त सभी रोमकूपो से प्रवृत्त होने

लगता है तब उसकी गति अनावरुद्ध हो जाती है। ऐसी परिस्थिति मे तो यह विकार सर्वथा मारक ही सिद्ध होता है। उपद्रव युक्त रक्तपित्त जिसमे कफवात ससृष्ट हो तथा कण्ठ को अवरुद्ध कर देता हो—सम्पूर्णत मारक सिद्ध होता है। इसी प्रकार क्षीणकाय पीडित रोगी मे इसका वेग रोकना असम्भव हो जाता है।

द्विदोषज रक्तपित्त—जिसका प्रकोप मन्द हो तथा जो कभी उदर्ध्वगत हो जाता हो और कभी अधोगत वह याप्य होता है।

अल्प वेगवाला तथा एक मार्ग से होनेवाला रक्तपित्त-विकार यदि उपद्रव रहित हो तो सहजसाध्य मानना चाहिए।

रक्तपित्त के उपसर्ग—दुर्बलता, श्वास, कास, ज्वर वमन, मद, अरुचि, पाण्डु दाह मूर्च्छा, मुक्तविदाह, अधृति, हृदय व्यथा, तृष्णा, कण्ठभेद, शिर वेदना, दुष्ट छीक आना और अविपाक।

रक्तपित्त में पडनेवाले रक्त का स्वरूप—मास को धोने से जैसा मास धोवन हो वैसा अथवा क्वाथित मास के यूष जैसा, अथवा कमल को कीचड मे मिला कर मथा जाय उसका जैसा वर्ण हो वैसा, यदि यकृत-प्लीहा मे से ही रक्त आता हो तो मेद पूय और रक्त का मिश्रण जैसा अथवा पकी हुई जामुन के रस के सदृश। जो रक्तपित्त कृष्ण, नील, दुर्गन्धयुक्त और इन्द्रधनुष के समान वर्णवाला हो उसे असाध्य समझना चाहिए।

रक्तपित्त में वर्ज्य—क्रोध, शोक, भय, आयास, मैथुन तथा विरुद्धान्नपान, कटु अम्ल, लवण, क्षार, तीक्ष्ण, उष्ण, विदाही द्रव्यो का सेवन।

रक्तपित्त में पथ्य—शीतल जल, शृतशीत या मधु-शर्करा मिश्रित धारोष्णदूध जागाल रस, शाली चावल, षष्टि चावल, गोघृत वटाकुर स्वरस, इक्षु-रस तथा दूर्वा, स्वरस-पटोल, घीया तोरई आदि के घी मे तैयार किए हुए उष्ण-तीक्ष्ण मसालो रहित शाक। आमला दाडिम का मिश्रित स्वरस, घृत मिश्रित यवागु। कमलादि वर्ग, वटादि वर्ग और मधुकादि वर्ग के द्रव्यो से शोधित घृत, शीत और तथा मधुर विपाक द्रव्य आदि।

रक्तपित्त की चिकित्सा मे कठिनता—उर्द्धगत मे कफ प्रधान रक्तपित्त की तथा अधोगत में वात प्रधान रक्तपित्त की चिकित्सा करनी पडती है, इसलिए यदि वातनाशक कफ प्रधान चिकित्सा करते है तो उद्र्ध्वगत रक्तपित्त की वृद्धि होती है और यदि कफ नाशक वात प्रधान चिकित्सा करते है तो अधोगत रक्तपित्त का प्रवर्तन होता है।

चिकित्सा—रक्तपित्त की चिकित्सा मे उद्र्ध्वाधो का विचार करके उद्र्ध्वगत रक्तपित्त मे विरेचन योग दें और अधोगत मे वमन योग, इस प्रकार दोषो के क्रम बदलने से रोग की शान्ति होगी।

रक्तपित्त की चिकित्सा मे जिस विकार के कारण से इस रोग की उत्पत्ति हुई हो सर्वप्रथम उसकी चिकित्सा करनी चाहिए यथा गलग्रह के कारण होनेवाले मे गलग्रह की, पूतिनस्य मे पूतिनस्य की और ज्वर मे होनेवाले में ज्वर की इत्यादि।

चिकित्सा का प्रारम्भ करने से पूर्व दोषो की प्रधानता-अप्रधानता का निर्णय सर्वदा रोग के सशमन मे सहायक होता है।

यदि रक्तपित्त का कारण क्षीणाग्नि, अतिभोजन आदि है या कफ दोष प्रधान रक्तपित्त है तो वहाँ लघन कराना चाहिए। यदि शरीर-कृशता मे रूक्षता बढने से रोग का आक्रमण हुआ हो तो वहा वातनाशक अथवा शरीर तर्पक चिकित्सा करना हितावह है।

रक्तपित्त में पित्त सशमनार्थ साधारण प्रयोग—यष्टिमधु सुहाजन के फूल, कोविदार के फूल तथा प्रियगु के पुष्पो का चूर्ण करके मधु मिला कर घण्टे-घण्टे, दो-दो घण्टे के अन्तर से दें।

चिकित्सार्थ औषध प्रयोग—रक्तातिसार को रोकने के लिए प्रयोग मे लाये जानेवाले द्रव्यो का अधोगत रक्तपित्त मे प्रयोग करे।

एक नवीन मिट्टी के घडे मे ठण्डा जल भर कर उसमें इक्षुकाण्ड (ईख की गण्डेरियाँ) और उत्पल चूर्ण भर कर रात भर रखा रहने दे, प्रात काल इस को छान कर, मधु मिला कर पीवे। यह उद्र्ध्व, अधो और द्विमार्गगत तीनो ही प्रकार के रक्तपित्त मे हितकर है।

जामुन, आम और अर्जुन की त्वचा का शीत कषाय पीवे।

उदुम्बर के फल को पीस कर उसका रस निचोड कर पीवे। ककडी के मूल के कल्क में चावल का पानी और मधु मिला कर पीवे।

(शेषाश ७२४ पृष्ठ पर)

दिल्ली में विद्यापीठ का महाविद्यालय स्वीकृत

वैद्य रामनारायण शर्मा के वक्तव्य का व्यापक प्रभाव

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन की स्थायी-समिति तथा निखिल भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ की केन्द्रीय प्रबन्धक समिति के दिल्ली मे २७-२८ नवम्बर को हुए अधिवेशनो के पूर्व वैद्य रामनारायण जी ने १७ नवम्बर को 'आयुर्वेद महासम्मेलन सदस्यो से नम्र निवेदन' शीर्षक एक वक्तव्य प्रसारित किया था—जो सचित्र आयुर्वेद के गताक मे प्रकाशित हुआ है। इस वक्तव्य मे व्यक्तिगत विवादो से ऊपर उठकर और पारस्परिक मतभेदो को भूल कर रचनात्मक कार्यो मे सामूहिक सहयोग का आह्वान किया गया था और सदस्यो से उक्त समितियो के दिल्ली मे आयोजित अधिवेशनो मे पधार कर विद्यापीठ के महाविद्यालय की योजना को कार्यान्वित करने का निश्चय करने विषयक निवेदन किया गया था।

यह हर्ष की बात है कि आयुर्वेद जगत् मे सर्वत्र ही इस वक्तव्य का व्यापक प्रभाव पडा और विचारवान वैद्य समुदाय ने उसकी भावना का स्वागत किया। वैद्य जगत् मे उस वक्तव्य से रचनात्मक कार्यो पर बल देने वाले एक स्वस्थ और अभूतपूर्व वातावरण का निर्माण हुआ, यह दिल्ली के स्थायी-समिति तथा विद्यापीठ केन्द्रीय प्रबन्धक समिति के अधिवेशनो मे, दिल्ली मे ही महाविद्यालय स्थापित करने के भारी बहुमत द्वारा किये गए निर्णय से स्पष्ट प्रकट होता है। समितियो के अधिवेशनो मे उपस्थित होने का प्रगाढ उत्साह हमारे सदस्यो मे जैसा इस बार देखा गया, वैसा कभी देखने मे नही आया। दक्षिण मे हुए वार्षिक अधिवेशनो तक मे समिति के इतने अधिक सदस्यो की उपस्थिति नही हुई, स्थायी समिति के इसके पूर्व के दिल्ली अधिवेशनो में भी कदाचित् कभी ऐसा अवसर नही आया जबकि सदस्यो ने इतनी बडी सख्या में उत्साहपूर्वक आकर समिति मे भाग लिया हो। दिल्ली मे स्थायी समिति के अधिवेशन मे विभिन्न प्रान्तो के डेढ सौ से ऊपर सदस्यो ने उपस्थित होकर भाग लिया। कहना अनुचित न होगा कि वैद्य रामनारायण जी के वक्तव्य की विधायक भावना ने ही सदस्य बन्धुओ को इस प्रकार प्रेरित किया। इन अधिवेशनो में रचनात्मक कार्य करने पर बल देने के लिए अनेक विद्वान सदस्यो ने अपनी शुभकामना भरी प्रेरक सम्मतिया भी भेजी। जितनी अधिक सम्मतिया इस बार महाविद्यालय के सम्बन्ध मे लोगो ने भेजी, इससे पूर्व किसी प्रश्न पर एसा नही हुआ। श्री रामनारायण जी के वक्तव्य पर स्थायी समिति और विद्यापीठ प्रबन्ध समिति के सदस्यो के अतिरिक्त सम्मेलन के बहुत से मान्य सदस्यो और अन्य प्रमुख वैद्यजनो ने भी अपने विशेष उत्साहपूर्ण विचार व्यक्त किये है और प्रबल शब्दो मे यह आग्रह किया है कि महासम्मेलन तथा विद्यापीठ के पदाधिकारियो को रचनात्मक कार्यो की योजनाये कार्यान्वित करनी चाहिए। जिन सैकडो वैद्यो ने अपने विचार पत्र द्वारा व्यक्त किये है, उनमे निम्न कुछ के नाम उल्लेखनीय है —

आयुर्वेद पचानन प० जगन्नाथ प्रसाद जी, शुक्ल प्रयाग
राष्ट्रपति-चिकित्सक वैद्यराज श्री रामेश्वरजी शास्त्री शुक्ल, ग्वालियर
वैद्यभूषण प० ठाकुरदत्त जी शर्मा, अमृतधारा देहरादून (उ० प्र०)
कविराज श्री हनुमत्प्रसाद जी शास्त्री, जामनगर
वैद्यराज श्री सत्यनारायण जी मिश्र, कानपुर
आचार्य श्री मणिराम जी शर्मा, रतनगढ
राजवैद्य आयुर्वेद बृहस्पति श्री श्यामलीराम जी द्विवेदी, इन्दौर (म० प्र०)
वैद्य श्री दुर्गादत्त जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य, वाराणसी (उ० प्र०)
वैद्यराज स्वामी मगलदास जी, जयपुर (राजस्थान)
कविराज श्री आशुतोष मजमदार, दिल्ली
आचार्य श्री शिवदत्त जी शुक्ल, लखनऊ
वैद्य श्री गणेशदत्त जी सारस्वत आयुर्वेदाचार्य जामनगर (सौराष्ट्र)
वैद्यराज श्री धर्मदत्त जी वैद्य एम० एल० ए०, बरेली
वैद्य श्री जयरामदासजी स्वामी भिषागाचार्य, (जयपुर)
कविराज श्री कपिलदेव जी त्रिपाठी, बक्सीमहल्ला (बिहार)

वैद्यराज श्री ताराशंकर जी प्रधानाचार्य, वाराणसी
वैद्य श्री ओंकार प्रसाद जी शर्मा, देहली
वैद्य श्री बैद्यनाथ जी शर्मा आयुर्वेदाचार्य, बम्बई
वैद्यराज श्री रामगोपाल जी शास्त्री, मथुरा (उ० प्र०)
आचार्य श्री नित्यानन्द जी, बिडला कालिज, पिलानी (जयपुर)
आयुर्वेदवाचस्पति कविराज डा० त्रिलोकीनाथ शास्त्री, सियाना (उ० प्र०)
वैद्यराज श्री प० विश्वेश्वरदयालु जी, कुष्ठ चिकित्साश्रम, बरालोकपुर (इटावा)
वैद्यराज श्री अमृतलाल माणिकलाल जी, अमरोली (सौराष्ट्र)
वैद्य श्री महाबीर प्रसाद जी आयुर्वेदाचार्य, बम्बई
वैद्य प० ब्रजनन्दन जी मिश्र आयुर्वेदाचार्य, पानापुर (सारन बिहार)
डाक्टर श्री गयाप्रसाद जी शास्त्री, हैदराबाद (आ०प्र)
आयुर्वेदाचार्य श्री ऋषिदेव जी शर्मा शास्त्री, सुजानगढ (बीकानेर)
कविराज श्री छोट्टनलाल जी मिश्र, पटना (बिहार)
कविराज रुद्रनारायण सिंह जी, नयागांव सारन, (बिहार)
वैद्य श्री कैलाश प्रसाद जी गुप्त, पिरो (बिहार)
आयुर्वेदाचार्य श्री शम्भुनाथ जी शास्त्री, कानपुर
वैद्य श्री शिवकरणजी शर्मा आयुर्वेदाचार्य, (नागपुर)
वैद्य श्री पढरीनाथ जी, गोगावाँ (म० प्र०)
वैद्य श्री केशरीमल जी जैन आयुर्वेदाचार्य, कटनी
आयुर्वेदाचार्य श्री रामप्रकाश जी स्वामी आयुर्वेद-वाचस्पति, जयपुर
वैद्य श्री सीतारामदास जी गुरु वासुदेवदास जी पुनरा, (मेहसाना)
वैद्य श्री रामस्वरूप जी कौशिक, जीरा, (फिरोजपुर)
कविराज श्री घनश्याम पण्डित जमन काला (सयाल पराना)
वैद्यराज श्री रामादर्श सिह जी, सबरी बक्सी (बिहार)
श्री गिरिजाशकर जी पाठक वैद्य बरौनी (बिहार)
प० वीरलभाया वैद्योपाध्याय छत्तरपुर, महगैली
वैद्य श्री भवानीदत्त जी व्यास शास्त्री बादा
राजवैद्य डाक्टर अमरदत्त जी, आयुर्वेद बहस्पति, केकडी (अजमेर)
आयुर्वेद काग्रेस कमेटी अजमेर
वैद्य श्री पाण्डुरग शिवरामजी आयुर्वेदाचार्य, दमोह (म० प्र०)
वैद्यराज श्री नथमल जी जोशी कानपुर (उ० प्र०)
कविराज रमेशचन्द्र शर्मा ए० एम० एस० मत्री नगर वैद्य सभा अलीगढ
राजवैद्य श्री घासीराम गणपतराय जी, देवास जूनियर
वैद्यराज श्री हरदयालु जी वैद्य, अमृतसर (पजाब)
वैद्य श्री जोगन्द्र सिंह जी आयुर्वेदाचार्य भादसा (पजाब)
श्रीयुत मदनगोपाल जी वैद्य ए० एम० एस०, एम० एल० ए० फैजाबाद
वैद्यराज श्री पारसनाथ जी जैन, देशरक्षक औषधालय, कनखल उत्तर प्रदेश
कविराज श्री श्यामलाल जी पाठक, दमोह (म० प्र०)
राजवैद्य श्री ऋषिरामजी शर्मा अमृतसर (पजाब)
कविराज डा० प० रामगोपाल मिश्र आयुर्वेदाचार्य, गोदिया (म० प्र०)
वैद्य श्री चन्द्रकुमार द्विवेदी भिषगाचार्य शामली (उ० प्र०)
वैद्यराज श्री हीरालाल जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य, फर्रुखाबाद (उ० प्र०)
वैद्य श्री कन्हैयालाल जी भेडा, बम्बई

कई प्रमुख वैद्यो ने यह सम्मति व्यक्त की है कि वे महा-सम्मेलन की वर्तमान स्थिति से दुखी हैं और जब तक उसके द्वारा कुछ यथार्थ आयुर्वेदोन्नति के कार्य नही होने लगते—तब तक तटस्थ ही रहना चाहते हैं। उनका उल्लेख यहाँ व्यर्थ ही है। वक्तव्य के उत्तर मे कुछ भाइयो ने दिल्ली मे महाविद्यालय योजना मे अपनी ओर से सहयोग और सहायता देने की उत्कट इच्छा व्यक्त की है।

विगत धन्वन्तरि जयन्ती पर देश भर मे लगभग तीन सौ स्थानो पर वैद्य सभाओ में प्रस्ताव स्वीकार करके यह आग्रह किया गया था कि दिल्ली मे विद्यापीठ का विद्यालय स्थापित किया जाना चाहिए और विद्यापीठ के सचित कोष को उस महाविद्यालय मे लगाया जाना चाहिए। सम्पूर्ण आयुर्वेद जगत की इस माग से भी प्रकट है कि महाविद्यालय के हेतु लोगो मे उत्कट रुचि है।

यह बडे सन्तोष की बात है कि वैद्य जगत् में ऐसे अनुकूल वातावरण का निर्माण हुआ, और स्थायी समिति एव विद्या-

पीठ केन्द्रीय प्रबन्धक समिति के दिल्ली मे २७-२८ नवम्बर को हुए अधिवेशनो मे प्रबल बहुमत से दिल्ली में अष्टाग आयुर्वेद महाविद्यालय, विद्यापीठ की ओर से स्थापित करन की योजना को स्वीकार कर लिया गया है।

एक तदर्थ समिति की नियुक्ति भी कर दी गई है जो महाविद्यालय योजना को क्रियान्वित करन की दिशा में शीघ्र गति से कार्य करेगी। इस समय आयुर्वेद महाविद्यालय के लिए सर्वत्र ही अत्यन्त अनुकल वातावरण है और यह विश्वास किया जा सकता है कि यदि सम्मेलन और विद्यापीठ के अधिकारियो न कर्त्तव्यपरायणता और लगन के साथ कार्य किया तो आयुर्वेद जगत् की पचास वर्षो से निरन्तर चली आ रही गहरी आकाक्षा की पूर्ति की दिशा मे बडा भारी कार्य हो जायगा।

इस बार स्थायी समिति की बैठक मे दूसरा महत्त्वपूर्ण निर्णय यह भी हुआ कि महासम्मेलन का आगामी वार्षिक अधिवशन भी राजधानी दिल्ली मे किया जाय। यह निश्चय सब दृष्टियो से बहुत ही महत्त्वपूण हुआ है। इधर प्राय एक वर्ष से राजधानी मे विभिन्न प्रयत्नो द्वारा आयुर्वेद की गूंज होती आ रही है। ससद-सदस्य क्लब नार्थ एविन्यू मे बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० द्वारा सचालित आयुर्वेदिक औषधालय, ससद के माननीय सदस्यो का ध्यान निरन्तर आकर्षित कर रहा है। कई बार दिल्ली मे आयुर्वेद के विषय मे प्रभावशाली समारोह और प्रस सम्मेलन हो चुके हैं। इन सब प्रयत्नो द्वारा राजधानी के राजकीय क्षत्रो मे आयुर्वेद के हित मे जिस अनुकूल स्थिति का निर्माण हुआ है उसको बराबर बढाया जाना चाहिए। एसा करना आयुर्वेद के लिए बहुत हितकर होगा। केन्द्रीय सरकार के कर्णधारो पर आयुर्वेद के हित मे प्रभाव डालन के लिए दिल्ली मे किये गय कार्यो का बहुत बडा महत्त्व है। एसी दशा मे आगामी महासम्मेलन का दिल्ली मे होना—पिछल प्रयासो को तो आग बढायगा ही—केन्द्रीय राजकीय क्षत्र को आयुर्वेद की ओर आकर्षित करने का बहुत बडा साधन होगा। इस दृष्टि से इस निश्चय को भी सब प्रकार से कल्याणकर कहा जा सकता है। दिल्ली मे आगामी अधिवशन को आमन्त्रित करने के लिए इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा और दिल्ली के समस्त वैद्यगणो न जिस सामयिक उदारता, साहस और आयुर्वेदप्रेम का परिचय दिया है उसके लिए व सब धन्यवाद के पात्र हैं। समितियो के अधिवेशनो मे इन दोनो महत्त्वपूर्ण निर्णयो को स्वीकार करने वाले सदस्यो ने इस अवसर पर जो उत्साह प्रदर्शित किया है, उनसे यह आशा की जा सकती है कि व आग भी उसी उत्साह से इन कार्यों मे सक्रिय सहयोग देग। सहयोगपूर्ण और विधायक वातावरण मे किस प्रकार क्रियात्मक कार्य सम्पन्न हो सकते है, इसका अद्वितीय उदाहरण समितियो के गत अधिवशन मे स्पष्ट सामन आया है। वैद्य जगत् को इस ओर ध्यान देना चाहिए। वैद्य श्री रामनारायण जी अपन इस वक्तव्य के द्वारा महासम्मेलन क्षत्र मे जो मगलमय वातावरण बनाया और अपनी उदारता एव कार्यप्रियता की भावना के प्रसार से जो प्ररणा दी—आयुर्वेद जगत् का कर्त्तव्य है उस वातावरण को चिरस्थायी बनान मे आग भी सक्रिय रह।

खेदजनक स्थिति

इन पक्तियो को लिखते समय आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका का दिसम्बर अक हमारे सामन आया है। हम नही चाहते थ कि समितियो के दिल्ली अधिवशनो के अवसर पर कुछ व्यक्तियो द्वारा प्रदर्शित असहयोग की भावना और होते हुए रचनात्मक कार्य मे रोड अटकान क प्रसग की किचित भी चर्चा यहा भी की जाय। किन्तु पत्रिका के इस अक को देखकर यह दु ख के साथ अनुभव करना पडता है कि महासम्मेलन क्षत्र के कुछ अपन को विशिष्ट कहन वाल व्यक्ति आयुर्वेद के लिए ठोस कार्यों की योजना मे अच्छी और सहयोगपूर्ण भावना नही रखते। दिल्ली मे समिति के अधिवशन मे ही पण्डित शिवशर्मा जैस उत्तरदायी सज्जन न दिल्ली मे महाविद्यालय स्थापन योजना का भरसक विरोध किया और उसके लिए अन्यत्र स्थान और दूसरे विद्यालयो पर जोर दिया था। उनके और कुछ अन्य माननीय व्यक्तियो के दिल्ली मे विद्यालय करन के विरोध का आधार क्या है, यह बात समझ मे नही आती। उन्हे तो जनभावना और बहुमत का आदर करना चाहिए तथा रचनात्मक कार्यों मे उमग के साथ सहयोग दना चाहिए। महासम्मेलन के आगामी अधिवशन के विषय में भी दिल्ली के निमत्रण का इन महारथियो ने घोर विरोध किया और पुरी (उडीसा) में ही महासम्मेलन करन का हठ किया। हम नही समझते कि उनके इस हठ का भी क्या महत्त्व है। केवल इतनी बात कि पुरी का निमत्रण पुराना है और उसको विचाराधीन रखकर ही गत अधिवेशन बगलोर

में किया गया था—कोई बडा वजन नही रखती। पुरी का निमत्रग जैसे एक बार विचाराधीन रखा जा सकता है वैसे दूसरी बार भी पुरी के भाइयो को सन्तोष और प्रतीक्षा करन के लिए विनम्रतापूर्वक निवदन करके राजी किया जा सकता है। महत्त्व की बात तो यह है कि अधिवशन कहाँ किया जाय—इस प्रश्न पर उन पहलुओ से विचार करना चाहिए कि कहाँ करना सबसे अधिक उपयोगी होगा। यह निश्चित है कि पुरी जैसे दूरस्थ स्थान पर महासम्मेलन के ९९ प्रतिशत सदस्य अधिवशन मे भाग लन नही पहुँच सकते। जब कि समय एसा है और स्थितियाँ एसी है हमारे सामन समस्याये एसी है जिनपर अधिक से अधिक सख्या मे वैद्यो को एकत्र होकर विचार करना चाहिए। इधर कई वर्षो से महासम्मेलन के अधिवशन दक्षिण मे ही होते आ रह है। उनका अनुभव स्पष्ट सामन है कि अधिवशन जैसे अवसर पर महासम्मेलन के २५ ३० सदस्य एकत्र हुए। जब कई वर्षो से अधिवशन दक्षिण की ओर किया जा रहा है तो उत्तर भारत के वैद्यो का हक है कि अब एक अधिवशन उत्तर मे किया जाय और महासम्मेलन के शिथिल सगठन को फिर से दृढतर बनाया जाय। अपन विशाल और दृढ सगठन की शक्ति से केन्द्रीय सरकार को प्रभावित करन के लिए दिल्ली मे अधिवशन करना ही युक्तिसगत है—जिसकी आज सबसे अधिक आवश्यकता है। विद्यापीठ का महाविद्यालय स्थापित करन का जो निश्चय किया गया है उसके लिए अधिवशन के अवसर पर दिल्ली मे ही वैद्यजगत का विराट सहयोग मिल सकता है। यह सारी बाते समिति के अधिवशन मे निवदन की गई थी—फिर भी कुछ स्वयभू व्यक्तियो न दिल्ली मे अधिवशन करन का विरोध किया और यहाँ तक कि बहुमत के आधार पर किय गए इस महत्त्वपूर्ण निश्चय के विरोध मे माननीय सभापति द्वारा रिफरेण्डम (सम्पूर्ण सदस्यो का डाक द्वारा मत-सग्रह करन) की कार्यवाही करन की चर्चा उठाई गई। यह हर्ष की बात है कि सभापति महोदय न उस पर ध्यान नही दिया।

पत्रिका का दिसम्बर अक जब हम दखते है तो उसमे स्थायी समिति और विद्यापीठ केन्द्रीय प्रबन्धक समितियो के इन दिल्ली अधिवशनो की कार्यवाही प्रकाशित नही की गई। पत्रिका सम्मेलन के प्रचार के मूल उद्दश्य से प्रकाशित की जाती है, परन्तु उसमें महासम्मेलन की कार्यवाहियो का प्रकाशन भी अनपेक्षित विलम्ब से किया जाय—यह बात क्या अनुचित नही है? जहाँ समितियो के अधिवशनो का उल्लेख है वहाँ केवल दो दो पक्तियो मे यह लिखा जा सकता था कि 'दिल्ली में विद्यापीठ के महाविद्यालय स्थापन का निश्चय कर लिया गया और आगामी अधिवशन भी दिल्ली मे करन का निश्चय किया गया। परन्तु इतना तक लिखना पत्रिका-सम्पादक न उचित नही समझा। यदि इसी अक मे महाविद्यालय के निश्चय का समाचार, उसके लिए उत्कठित वैद्यजगत् को द दिया जाता तो महाविद्यालय के लिए चारो ओर से सहयोग और सहायता का वातावरण बनना आरम्भ हो जाता। दिल्ली मे आगामी अधिवशन हान के निश्चय की सूचना पाकर अभी से आसपास के लोग सक्रिय कार्य करन की ओर प्रवृत्त हो जाते। परन्तु पत्रिका मे केवल इतना लिखकर इन दोनो सूचनाओ को पूरे एक माह के लिए टाल दिया गया कि अधिवशनो का विवरण आगामी अक मे प्रकाशित किया जायगा। पत्रिका-सम्पादक अथवा सम्मेलन के महारथियो का एसा करन मे क्या उद्दश्य हो सकता है इस विषय मे हम कोई भी अनुमान करना नही चाहते। पत्रिका मे स्थानाभाव की कल्पना यदि की जाय तो कम उचित जँचती है। इसी अक मे पण्डित शिवशर्मा जी का ग्यारह पृष्ठो का वक्तव्य प्रकाशित हुआ है। हम समझते है आयुर्वेद जगत को स्थायी समिति की कायवाही का विवरण जानन की जितनी उत्कण्ठा हो सकती है, उतनी इस वक्तव्य के लिए नही हो सकती। वक्तव्य आगामी अक मे भी छप सकता था—परन्तु कायवाही का विवरण इसी अक मे प्रकाशित किया जाना अनक दृष्टियो से हितकर होता। सम्मेलन के सदस्य प्रादेशिक समितियाँ और हजारो वैद्य दिल्ली मे हुए स्थायी समिति के अधिवशन मे क्या हुआ, यह जानन की उत्कण्ठा से प्रतीक्षा कर रह होग! परन्तु पत्रिका मे उसका विवरण न पाकर लागो की उत्कठा को जो आघात पहुँचेगा—इसका विचार पत्रिका-सम्पादक न नही किया। यही हमे सोचना पडता है कि पत्रिका का वैद्य-जगत् और महासम्मेलन के हित मे कितना सदुपयोग हो रहा है।

बुद्धि की बलिहारी

पत्रिका के इसी अक मे दिल्ली मे हुए एक सद्भावना सम्मेलन की कार्यवाही का विवरण दिया गया है। उस सम्मेलन में कितनी सद्भावना के निर्माण का वास्तविक

प्रयास किया गया यह तो वैद्यजगत् उसकी कार्यवाही से समझ लेगा। इस कार्यवाही में महासम्मेलन के सभापति माननीय विद्वद्वर पण्डित अनन्त त्रिपाठी शर्मा के भाषण मे, दिल्ली मे विद्यापीठ के महाविद्यालय की स्थापना के विचार की चर्चा की गई है। विद्वान सभापति के भाषण का निम्न अंश दृष्टव्य है —

'किन्तु किसी व्यक्ति ने कुछ देने का वचन दिया तो उस पर किस प्रकार निर्भर रहा जा सकता है। श्री पण्डित रामनारायण जी ने जो ५००) रुपया प्रतिमास देन का वचन दिया है, यदि वे एक-दो मास यह सहायता देने के पश्चात् फिर बन्द कर दे तो हमारी क्या गति होगी ? ऐसे किसी का आश्रय लकर कार्य चलाना असम्भव है। हाँ, यदि वे विद्यालय के नाम से एक निश्चित धनराशि एक साथ निकालकर दे दे और उसके ब्याज से यह पाँच सौ रुपया प्रति मास मिलता रहे तो ही यह वास्तविक सहायता होगी और उस पर निर्भर रहना अधिक युक्तिसगत होगा।'

प्रथम तो यह उल्लखनीय है कि उक्त बात महासम्मेलन के सर्वोच्च अधिकारी न उस सभा मे कही जिसपर बिल्ला लगाया गया था 'सद्भावना सम्मेलन' का! अन्य कार्यवाही को जाने दीजिए, केवल एक इसी बात को लीजिये और देखिए कि उसमे कितनी सद्भावना और प्रेम भरा हुआ है।

यहाँ यह भी विचारणीय है कि महासम्मेलन के पदाधिकारीगण यथार्थ और रचनात्मक कार्य करने मे कितनी रुचि रखते है और सच्चे हृदय से अच्छे कार्यो मे मुक्त सहयोग करने वालो के प्रति क्या भावना और कैसा व्यवहार रखते है। एक सद्भावना तो यह होती है कि रचनात्मक कार्यो में सहयोग और सहायता देन वाले के प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करके अन्यो को उसी प्रकार सहयोग देने के लिए प्रोत्साहित करना और दूसरी वृत्ति यह होती है कि कृतघ्नतापूर्वक सहायता करने वाले के प्रति अविश्वास, उपेक्षा और अपमानजनक विचार सार्वजनिक रूप से व्यक्त करना। सद्भावना सम्मेलन मे व्यक्त किये गए उक्त विचारो मे किस प्रकार की सद्भावना है, यह बात वैद्य जगत् विचार कर सकता है।

वर्तमान मे प्रमुख बैंको की प्रचलित ब्याज-दर से देखा जाय तो पाँच सौ रुपया मासिक ब्याज प्राप्ति के लिये लगभग दो लाख रुपया चाहिए। एक ही व्यक्ति एक साथ दो लाख रुपये की थैली महासम्मेलनाधिकारियो को सम्हला दे—तब वे दिल्ली महाविद्यालय स्थापित करने की बात को युक्तिसगत समझेगे। यही बुद्धि की बलिहारी है। यदि ऐसा नही होता तो सम्मेलनाधिकारी क्यो यह सोचते है कि आगे 'हमारी क्या गति होगी ?'—हम पूछना चाहते है कि मान लीजिए वैसा ही होता है तो फिर आपकी गद्दियो का पुरुषार्थ कहाँ जायगा ? आपलोग क्या केवल भाषणो मे लम्बी-चौडी बात बघारन के लिए है ? महासम्मेलन की गद्दियो पर वर्षो से सुशोभित होन वाले इतना भी न कर सकेगे कि २।। लाख जनसख्या वाल वैद्य सम्प्रदाय से केवल दो लाख रुपया एकत्र कर सकें। अपने को सर्वाधिक प्रभावशाली नेता कहने वाले पण्डित शिवशर्मा जी तो पन्द्रह लाख रुपया जुटाने की बात करते रहे है। हमारे पूर्वाध्यक्ष माननीय पण्डित पार्थनारायण जी अकेले अपन प्रदेश से एक लाख रुपया देने की बात अभी छह माह पूर्व कह चुके है। ऐसे प्रभावशाली महारथियो के होते हुए आपको किस गति का डर है ? कितने क्षोभ और लज्जा की बात है कि तीस हजार रुपया वार्षिक, परीक्षाओ के नाम पर आयुर्वेद जगत् से प्राप्त करने वाली विद्यापीठ अपना एक महाविद्यालय नही चला सकती ? और जब उसके लिए उपयुक्त वातावरण बनता है, लोग सहायता करन को आग आते है तो अधिकारी वर्ग उन सहायताओ की उपेक्षा करके केवल पाँच सौ रुपयो के लिए यह सोचन लगता है कि हमारी क्या गति होगी ?

बात की बात है, इसलिए यहाँ कहना पडता है कि दूसरो पर सार्वजनिक रूप से अविश्वास व्यक्त करनवाले सम्मेलनाधिकारी स्वय के विश्वस्त होन का क्या प्रमाण रखते है ? कोई व्यक्ति किस आशा और विश्वास पर उनको दो लाख रुपया सौप दे ? इतनी बडी निधि देने वाले को किस आधार पर यह विश्वास हो जाय कि उसके द्रव्य का सदुपयोग ही किया जायगा ? जब कि पिछला इतिहास आइने की तरह यह दिखा रहा है कि महासम्मेलन मे निर्धन वैद्य समाज के चन्दे का कैसा उपयोग किया गया है। श्री चानना के कुछ दिनो पूर्व प्रकाशित वक्तव्य मे महासम्मेलन की आर्थिक व्यथा-कथा का जो चित्रण किया गया था वह देखने योग्य है।

हम नही समझते कि आयुर्वेद जगत् मे रचनात्मक कार्यों के लिए निर्माण होने वाले अनुकूल और उत्साहपूर्ण वाता-

वरण मे ऐसी सद्भावनाहीन बाते करने का अर्थ सिवा इसके और क्या हो सकता है कि कुछ लोग यथार्थ कार्य नही करना चाहते और अनुकल वातावरण को विवादो म विलीन करने की इच्छा रखते हैं। सम्पूर्ण आयुर्वेद जगत् को इस दुर्नीति से सावधान हो जाना चाहिए।

सद्भावना सम्मेलन की तथाकथित सभा मे उपर्युक्त विचार व्यक्त करन वाले माननीय सभापति विद्वद्वर पण्डित श्री अनन्त त्रिपाठी को कदाचित् यह नही मालूम कि पण्डित रामनारायणजी अभी भी प्राय एक हजार रुपया मासिक देश के विभिन्न आयुर्वेद विद्यालयो को सहायता तथा आयुर्वेद विद्यार्थियो को छात्रवृत्ति आदि देन मे व्यय करते हैं और वर्षो से करते आ रहे हैं। एक स्वतन्त्र सस्कृत और आयुर्वेद विद्यालय भी वे अपनी ओर से कई वर्ष से चला रहे हैं। विद्यापीठ महाविद्यालय के पक्ष मे वे दृढता के साथ इसलिये हैं कि इस अखिल भारतीय सस्था की यथार्थता बढे। प्रतिवर्ष हजारो आयुर्वेद विद्यार्थी जो धन और समय का व्यय करके विद्यापीठ की परीक्षाओ मे बैठते हैं उन्हे उत्तीर्ण हो जाने पर एक निराशा का ही अनुभव करना पडता है क्योकि महाविद्यालय के अभाव मे ही विद्यापीठ की परीक्षाओ की कोई मान्यता कही नही है। पण्डित रामनारायणजी आयुर्वेद की इस एकमात्र सस्था के इस कलक को मिटाना चाहते है। विद्यापीठ यदि अपना महाविद्यालय दिल्ली मे स्थापित करती है और सुव्यवस्थित रूप से उसका सचालन करती है तो प० रामनारायणजी की सहायता उसको पाने मे किसी प्रकार की शका की गुजायश नही है। और अन्य क्षेत्रो से भी उसको भारी सहायता मिलना निश्चित है।

हम कदापि उस स्थिति के उपस्थित होने की कल्पना नही करना चाहते जिसमे वर्तमान के बने हुए उत्साहपूर्ण वातावरण मे किंचित भी व्याघात उपस्थित हो। इस नाते हम सद्भावना सम्मेलन के इस प्रसग को भी उपेक्षित कर देना ही अधिक उचित समझते हैं। हम ऐसा ही समझे रहना चाहते है कि माननीय सभापति पण्डित अनन्त त्रिपाठी एक सुयोग्य विद्वान और व्यवहारकुशल व्यक्ति है और जो विचार उन्होने व्यक्त किये हैं, वे उनके अपने विचार नही हो सकते। उनकी स्वाभाविक सरलता का दुरुपयोग किया गया है और उन्हे पुराने कूटनीतिप्रवर किसी व्यक्ति ने भ्रमित करके ऐसे भाव व्यक्त कराकर स्वय को साफ रखन का यत्न किया है। साथ ही यह दुष्प्रयत्न भी किया है कि वैद्य जगत पण्डित त्रिपाठी जी को भी रचनात्मक कार्यों मे विवाद उठाकर अवरोध उत्पन्न करन वाले वर्ग मे गिनने लगे। यदि त्रिपाठी जी की सरलता का दुरुपयोग न किया गया होता और वस्तु स्थिति के सही अध्ययन करन का अवसर उन्हे मिला होता तो कदाचित् वे एसी बात न कहते।

आगामी अधिवेशन

महासमिति के अधिवेशन मे प्रबल बहुमत से दिल्ली का निमन्त्रण स्वीकार कर लिया गया है। पुरी, उडीसा मे अधिवशन करन के पक्ष मे केवल ६ मत आय इसलिए यह निश्चय कर लिया गया है कि आगामी महासम्मेलन दिल्ली मे ही किया जाय। तथापि दिल्ली के निमत्रण पर विचार होते समय कुछ विशिष्ट व्यक्तियो के हठपूर्वक विरोध करन और रिफरेन्डम की चर्चा करन से तथा इस पत्रिका मे स्थायी समिति की कार्यवाही प्रकाशित न करन से अनायास ही यह सन्देह होता है कि कुछ कटनीतिक विशिष्ट व्यक्ति दिल्ली मे हुए निर्णयो को किसी अन्य प्रकार से उलझा दन के उपक्रम मे रत हैं। यद्यपि महासम्मेलन के विधान की धारा ३२ (ग) के अनुसार किसी प्रकार के रिफरेण्डम की कार्यवाही की नियमित गुजायश नही रहती, क्योकि उसके लिए किसी प्रकार के प्रस्ताव की स्वीकृति के तुरन्त बाद ही घोषणा करन का विधान है। फिर भी एस लोग जिन्हे रचनात्मक कार्यो से अपना हठ ही अधिक प्रिय है अन्य प्रकार से महासम्मेलन कार्यालय पर अपन प्रभाव का दुरुपयोग करके निश्चयो को कार्यान्वित करने मे ढील और प्रकारान्तर से अवरोध उपस्थित कर सकते हैं। विशेष रूप से अपने सुयोग्य सम्मेलनाध्यक्ष महोदय से इस विषय मे हम यह निवदन करना चाहेग कि वे जन-भावना का आदर करके स्थायी समिति के निश्चयो को शीघ्र कार्यान्वित करने की दिशा मे आग बढाकर यश के भागी बने।

—श्री हजारीलाल शर्मा, दिल्ली

श्री पं० राजेश्वरदत्त शास्त्री आयुर्वेदशास्त्राचार्य

आचार्य रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की एग्जीक्युटिव काउन्सिल ने अपनी गत बैठक में १५ सितम्बर को आयुर्वेद कालेज के स्थानापन्न प्रिंसिपल तथा आयुर्वेद विभागाध्यक्ष श्री प० राजेश्वरदत्त शास्त्रीजी को विशषज्ञ समिति की सर्वमान्य सम्मति के अनुसार प्रोफसर आफ आयुर्वेद के सर्वोच्च पद पर प्रतिष्ठित किया है। इसके लिए कई विद्वज्जन देश के विभिन्न भागो से आमन्त्रित किए गए थे, जिन सब मे श्री शास्त्रीजी को सर्वश्रेष्ठ माना गया।



श्री राजेश्वरदत्त शास्त्री

आपने सन् १९२७ मे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की आयुर्वेद-शास्त्राचार्य - परीक्षा सर्वप्रथम रूप मे प्रथम श्रणी मे उत्तीर्ण की और तदर्थ उनको स्वर्णपदक भी प्राप्त हुआ। प्रात-स्मरणीय पूज्यचरण महामना मालवीयजी सदैव योग्य व्यक्तियो की खोज मे रहा करते थे। अतएव उन्होन शास्त्रीजी को सर सुन्दरलाल चिकित्सालय मे हाउस फिजीशियन पद पर नियुक्त किया तथा १९-८-१९२८ को रेजीडण्ट मेडीकल आफिसर पद पर भज दिया। इस पद पर वे १९४२ तक रहे तथा इसी काल मे आयुर्वेद फार्मेसी मे औषधि-निर्माण के साथ छात्रो को भैषज्य कल्पना का व्यावहारिक निर्देशन भी किया।

फिर आप क्लीनिकल आयुर्वेद मेडिसिन के लेक्चरर पद पर अपनी विद्वत्ता के कारण मालवीयजी महाराज द्वारा बैठा दिए गये। लगभग ६ वर्ष इस पद पर सफलतापूर्वक कार्य करने के बाद बिना किसी निर्वाचनकारिणी समिति के समक्ष भेजे आपकी प्रतिभा और विद्वत्ता पर मुग्ध हो कर विश्वविद्यालय अधिकारियो ने आपको सन् १९४८ मे असिस्टेण्ट प्रोफेसर आफ आयुर्वेद थेराप्यूटिक्स के पद पर नियुक्त कर दिया। पूज्यचरण कविराज प० सत्यनारायण शास्त्री जी के कालज-सेवा से विमुक्त होन पर उनके स्थान पर आपको वासनजी खमजी चेयर पर प्रोफसर आफ आयुर्वेद के पद पर ४००) से ७००) के ग्रड मे सीधा नियुक्त कर दिया गया। बाद मे विश्वविद्यालय ने एक विशष नियम के अनुसार इस पद को ५००) से ८००) के वतनक्रम मे रीडर आफ आयुर्वेद कर दिया। इस पद पर १९५१ से आप कार्य कर रहे हैं। इसी साल आपको आयुर्वेद विभाग के अध्यक्ष पद पर भी प्रतिष्ठापित कर दिया गया। सन् ५५ तक आप डीन आफ दी फैकल्टी आफ मेडीसिन एण्ड सर्जरी (आयुर्वेद) भी रह। सन् १९५६ मे जब सर सी० पी० रामस्वामी एयर महोदय के प्रयत्नो से केन्द्रीय सरकार ने यहाँ आयुर्वेद रिसर्च विभाग खोलना स्वीकार कर लिया तो उसमे आयुर्वेद डाइरेक्टर के गौरवास्पद पद पर नियुक्त किया गया। आप सन् १९४२ से ही सर सुन्दरलाल चिकित्सालय के चिकित्सक तथा प्रधान चिकित्सक के रूप में सम्बद्ध रहे है।

डाक्टर वर्मा महोदय के रिटायर होने पर जुलाई १९५७ से आप आयुर्वेद कालेज के प्रिन्सिपल, सर सुन्दरलाल चिकित्सालय के सुपरिण्टेण्डेण्ट तथा आयुर्वेद छात्रावास के चीफ वार्डन भी बना दिए गए हैं।

आयुर्वेद कालेज मे प्रोफेसर आफ आयुर्वेद का सर्वोच्च पद है। इसका वतनक्रम ८००-५०-१२५० है। सम्भवत

देश मे इतन अधिक वतनक्रम की आयर्वेदीय सेवाओ मे प्रथम पद है जिस पर पूज्य शास्त्रीजी की नियुक्ति परम शोभनीय तथा पूणतया उपयुक्त हुई है। शास्त्रीजी का पूरा जीवन आयुर्वेद के अध्ययन अध्यापन तथा शुद्ध आयुर्वेदीय चिकित्सा करन म व्यतीत हुआ है। २९–३० वष के इस प्रगाढ पाण्डित्यपूण अनुभव से ओत प्रोत कुछक विद्वान ही इस समय दिखलाई देते है।

आपन आयुर्वेदीय वाङ मय की भी ठोस सेवा की है। १९३० म आपन सवप्रथम सुप्रसिद्ध ग्रन्थ स्वस्थवत्त समुच्चय लिखा जिसम आयुर्वेदीय स्वास्थ्य साहित्य का अनूठा सकलन अपनी प्रतापकण्ठाभरण का हिन्दी अनवाद किया। तदनन्तर सुप्रसिद्ध भषज्यरत्नावली रूप परिमार्जित शुद्ध टीका से युक्त ग्रन्थ का सम्पादन किया तथा अपन अनुभव से एक सवथा नवीन अध्याय जोड कर अपन प्रखर पाण्डित्य का सफल परिचय दिया। अभी अभी आपकी लखनी से जो ग्रन्थ कृताथ हुआ है इसका नाम है चिकित्सादश जिसम उनके अनभव की पूरी पजी सजोई हुई भरी है। आयुर्वेदीय चिकित्सा का यह ग्र थ नवीनतम तथा अन्यतम है।

सावजनिक सेवा क्षत्र म भी श्री शास्त्रीजी किसी से पीछ नही रह। सवप्रथम १९३० म आपको अखिल य० पी० आयर्वेद कान्फ्रन्स झासी का अध्यक्ष नियुक्त किया गया। वहा आपके विद्वत्तापूण भाषण को श्रवण कर आयुर्वेदीय विद्वज्जन बहुत स तुष्ट हुए। बोड आफ इण्डियन मेडीसिन म १९३६ से १९४७ तक आप आयुर्वेदीय शिक्षको के निर्वाचन क्षत्र से सफलता पूवक विजय प्राप्त कर आय। १९४८ म वद्यो न आपको अपना प्रतिनिधि चन कर भजा तथा अब पुन विश्वविद्यालय न आपका उसकी सदस्यता के लिए नामजद किया है। चोपडा कमेटी की साइटिफिक मेमोरण्डा कमेटी के आप सरकार द्वारा मनोनीत सदस्य रह है। उत्तर प्रदेश की रिआगना इजशन कमेटी के १९५० म तथा राजस्थान सरकार द्वारा नियुक्त आयुर्वेदोत्थानकारिणी समिति के १९५५ में सदस्य बनाए गए है। आप आयुर्वेद तथा तिब्बी एकेडमी यू० पी० के भी सरकार द्वारा सदस्य बनाए गए है। आप वर्षो अखिल भारतवर्षीय महासम्मेलन म तथा विद्यापीठ म अच्छ स्थान प्राप्त कर चुके है।

शास्त्री जी का जीवन आयुर्वेद की सेवा म बीत रहा है। व हृदय से आयुर्वेद की शुद्ध धारा को माननवाल है पर व मिश्र-पद्धति को समयोचित बनान के लिए सवथा प्रयत्न शील रहते है। उनका अपना यह मत है कि जब तक विद्यार्थी मल आप्त प्रणीत ग्रन्थो को समझन की शक्ति नही रखता तब तक वह आयुर्वेद म निष्णात नही माना जा सकता।

शास्त्री जी का स्वभाव बहुत सरल है। व सदैव स्मित वदन प्रत्यक व्यक्ति की सहायताथ कुछ-न-कुछ करते ही रहते है। कभी-कभी उनसे एसे सज्जन भी लाभ उठा ल जाते है जिनको व अपना विरोधी रूप म काय करते पाते है। फिर भी उनके दया दाक्षिण्य म कोई कमी नही आया करती।

शास्त्रीजी अपनी पीढी के मान हुए विद्वान है। उनका आयुर्वेद-ज्ञान उनके वर्षो के अनुभव स परिपुष्ट हुआ है। उनके आयर्वेदीय भाषण जिन्ह व बहुधा रोगी शयाओ के किनारे खड हो कर विद्यार्थियो को प्रदान करते है अपूव और उनकी वदुषी के प्रसारक होते है।

परमात्मा से प्राथना है कि वह उन्ह आयर्वेद सेवा के लिए शतायु करे।

शेषाश] रक्त पित्त [७१६ पष्ठ का

च दन यष्टिमध लोध्र तीनो समान भाग ल कर शीतल जल के साथ पीव।

करज-बीज का चूण करके उसम मिश्री और मर्च मिलाकर सेवन कर।

आमल का चण या हरड का चूण घत और दूध म मिला कर उसका नाक से होनवाल रक्तपित्त म नस्य ल।

द्राक्षा उशीर पद्माख और मिश्री ४ ४ तोल ल कर जल म रात भर रखा रहन द प्रात काल इस जल को पीन से रक्तपित्त शा त होता है।

द्राक्षा मिश्री और कुटकी का चण यष्टिमधु के कषाय में मिला कर या शीतल ज न के साथ ल।

हरीतकी चण तथा हरिद्रा घत म मिला कर चाट।

नाक से प्रवृत्त होनवाल रक्तपित्त में—शकरा मिश्रित जल या दूध नाक से चढाव या नाक द्वारा पिला द अथवा द्राक्षा रस या दूध घृत अथवा शकरा मिश्रित इक्षु रस द।

रक्तपित्त म द्राक्षा घत मधु और शकरा को विदारी ग धादि क्वाथ म मिला कर इसकी अनुवासन बस्ति द अथवा दूध की बस्ति दें।

मधु घत शीतल जल और दूध की निरूहण वस्ति द।

जहाँ उपयुक्त साधारण योगो से रोग का अवरोध न हो वहा निम्नलिखित रस घृत आसवारिष्टादि का सेवन कराना चाहिए और जहाँ इनसे भी अवरोध न हो वहाँ शस्त्रक्रिया करनी चाहिए।

चन्दनादि लौह को साधारण रक्तपित्त म—जहाँ ज्वर या सताप के कारण रक्तपित्त हुआ हो—चावल के धोवन और मधु के साथ द। इसके सेवन से यकृत-प्लीहा के तन्तुओ मे उत्पन्न हुई उग्रता नष्ट होगी।

पाठकों के विचार

(इस स्तम्भ के अन्तर्गत व्यक्त विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है।)

आयुर्वेदीय सशोधन—एक सुझाव

यह सर्वज्ञात है कि आयुर्वेद आठ खण्डो मे विभक्त है यथा—शल्य तन्त्र, शालाक्य तन्त्र, काय चिकित्सा, भूत-विद्या, कुमार तन्त्र, अगद तन्त्र, रसायन तन्त्र और वाजीकरण तन्त्र। इसी अष्टविध चिकित्सा पद्धति का नाम ही आयुर्वेद है। किन्तु आजकल सचराचर देखने मे आता है कि प्राचीन पद्धति के चिकित्सक सिर्फ काय चिकित्सा को ही प्रधानता दे कर अपना काम चला रहे हैं। विशेषत प्राचीन पद्धति को अपनाने वाले चिकित्सको से कोई शल्य, शालाक्य एव कौमार इन तीन विषयो के माध्यम से चिकित्सा करवाना नही चाहता। यह कोई कमी करवाता है—ऐसा बिरला ही नजर आता है। इस दृष्टिकोण से मेरा अनुरोध है कि हम लोगो की निगाह इस ओर होनी चाहिये। "श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन" का आयुर्वेद की उन्नति के लिये पथ-प्रदर्शन करना प्रशसनीय है। उस दिन सचित्र आयुर्वेद पत्रिका मे बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के मैनेजिंग डायरेक्टर श्रीयुत रामनारायणजी ने वैद्यो की तरफ से एक आयुर्वेद महाविद्यालय दिल्ली मे खोलने के लिये, प्रस्ताव रख कर, उसमे मासिक ५००) के हिसाब से पाँच साल तक आर्थिक सहायता देने की स्वीकृति दी है। यह बडी ही खुशी की बात है। लेकिन मेरी राय मे यह बडा ही लाभदायक होता कि जो लोग स्नातक हो चुके है उनके लिये "रिफ्रेसर ट्रेनिंग कोर्स" या स्नातकोत्तर शिक्षा नामक कोई "पोस्ट ग्रेजुएट ट्रेनिंग" होनी चाहिये थी, जिसमे शल्य, शालाक्य और प्रसूति-तन्त्र की व्यावहारिक शिक्षा की व्यवस्था होती। जो स्नातक, शिक्षा ग्रहण करेग वे उसके लिये शिक्षा-शुल्क भी दे। फलत इससे महाविद्यालय को कुछ-न-कुछ आर्थिक लाभ होने के साथ-साथ, आयुर्वेद-आकाश से लुप्तप्राय उपर्युक्त विषयो की जानकारी मे चिकित्सको की अभिवृद्धि होगी। अगर हम काय चिकित्सा पर ही निर्भर करते रहे तो हमारी अवस्था अन्धकाराच्छन्न ही रहेगी—जैसी कि वर्त्तमान है। और भी आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा मे प्रतिष्ठित करवाने की हमारी जो महत् आशा है—वह केवल आशा ही बनी रहेगी। वर्त्तमान मे जो स्थिति है उससे जन-साधारण की यह धारणा बन गई है कि आयुर्वेद मे सिर्फ काय चिकित्सा ही है। इस प्रकार से राष्ट्रीय स्वास्थ्य समस्या का समाधान होना सदेहजनक है। इसलिये हम सब लोगो को एक हो कर अष्टाग आयुर्वेद को पृथक्-पृथक् तथा सब प्रकार से समालोचना करके इसको व्यावहारिक रूप देना होगा तथा जनता को समझाना होगा कि आयुर्वेद की सीमा सिर्फ काय चिकित्सा तक ही नही है। तदुपरान्त इस कार्य की सिद्धि के लिये अगर हमे पाश्चात्य चिकित्सा से कुछ लेना पडे तो उसको हम बिना हिचकिचाहट ले लेवे। ऐसा करना उचित भी है—क्योकि यह विज्ञान का दावा और समय का तकाजा है। इस तरह हम लुप्तप्राय पच-कर्म चिकित्सा को पुन प्रतिष्ठित करने मे समर्थ हो सकेगे।

सौराष्ट्र (जामनगर) मे, केन्द्रीय सरकार की तरफ से चलनेवाली 'पोस्ट ग्रेजुएट ट्रनिंग' से चिकित्सको की उन्नति का कोई साधन प्रतीत नही होता। यदि हम लोगो की तरफ से एक स्नातकोत्तर शिक्षण केन्द्र खोला जाता तथा उसमे व्यावहारिक शिक्षा का प्रबन्ध किया जाता तो नि सदेह भारत के लाखो चिकित्सको के ज्ञान को अष्टाग विधि मे परिमार्जित किया जा सकता।

मेरा निवेदन है कि देश के किसी भी एक महाविद्यालय के जरिये, उपयुक्त आर्थिक सहायता दे कर नया कॉलेज खोलने के सिवा इस काम को पहले किया जाता तो बडा ही कल्याणकर होता। इस विषय मे आयुर्वेद के सभी मान्य नेताओ से मेरा अनुरोध है कि विषय की गहराई व तात्पर्य की उपलब्धि कर आयुर्वेद के प्रत्येक अग को परिपुष्ट करने के लिये विहित प्रतिकार किया जाए।

शेष मे श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के मैनेजिंग डायरेक्टर तथा भारत के चिकित्सा विज्ञान के वरेण्य नेता श्रीयुत रामनारायणजी से नम्र निवेदन है कि

वे इस दिशा में हमारे पथ-प्रदर्शक हो कर लुप्त गौरव को पुन प्रतिष्ठित करायें। —कविराज श्री गोविन्दचन्द्र रथ, आयुर्वेदाचार्य, कल्याण फार्मेसी, पो० बरगढ, जि० सम्बलपुर।

ब्लेकवाटर फिवर की अमोघ औषध

बगला 'प्रक्टिस ऑफ मेडिसिन' जो डॉक्टर यतीन्द्रनाथ घोषाल एल० एम० एस० द्वारा बगला सवत् १३५४ मे लिखित है, उसका प्राप्तिस्थान है—लदन मेडिकल स्टोर, १६७, बहूबाजार स्ट्रीट, कलकत्ता। उक्त पुस्तक के प्रथम खण्ड के पृष्ट ५६ पर ब्लेकवाटर फिवर की चिकित्सा मे 'भाइटक्स-पिडाकुलारिस' को उत्तम लिखा है। इसके वर्णन मे लिखा है कि यह आसाम प्रदेश का बृहत् वृक्ष है जो उस देश मे 'आहइ आशइ' नाम से प्रख्यात है। वृक्ष बहुत बडा होता है। तना मोटा, मुलायम और सूक्ष्म छालयुक्त। पत्त प्राय त्रिपत्र व एक-दो फीट लम्ब होते है। फूल—सादा छोटे आकार का, उसके मध्य से गुच्छ हल्दी के रग का। फल इसके एक इञ्च प्रमाण होते हैं। गोआलपाडा, कामरूप, शिलाग, नवगाव, जारहाट, गारो पहाड यान आसाम प्रदेश मे सब जगह यह वृक्ष देखा जाता है। इस वृक्ष के पत्तो से सिद्ध किये हुए क्वाथ को उस प्रदेश मे ब्लक वाटर फिवर की चिकित्सा मे धन्वन्तरि औषध कहा जाता है। मुडा, भील, कोल, ओराव, सथाल सभी लोग ज्वर होते ही इसके पत्तो का रस सेवन करते है।

एक ऑफिसर लिखते है कि उनके भाई के सन् १९२६ में नवगाव मे ज्वर व रक्त पेशाब से ग्रसित होने पर अग्रज व देशी चिकित्सको ने जवाब दे दिया। इसके पत्तो के रस के सेवन से मृतप्राय रोगी ने आरोग्य लाभ किया। सथालो के एक पादरी पुरोहित ने सिविल सर्जन को इस औषधि का परिचय दिया। डॉ० हूर्नि ने सरक्यूलर द्वारा इसके क्वाथ का प्रचार किया।

क्वाथ तैयार करने की विधि—आधी छटाँक हरे पत्ते १० छटाँक जल मे २० मिनट उबालना चाहिए। जब गहरा हल्दी के रग का जल हो जाय तब उतार कर छान कर प्रति घण्टे एक आउन्स परिमाण से सेवन करावे। सूखे पत्त होन पर भी आधी छटाँक ले कर १० छटाँक उबलते हुए जल मे १० मिनट रख कर गहरा रग आने पर १ आउन्स मात्रा मे घण्टे-घण्टे देवे।

एक प्रतिष्ठान ने टिंचर व इजेक्शन 'पिडाकुलीन' निकाला है। मास मे सूचीवेध करने के बाद १२ से १८ घण्ट मे पेशाब का रग स्वाभाविक व परिमाण मे ज्यादा हो जाता है। रक्तकण अब नष्ट नही होते। हिमा-लिसिस की रुकावट होती है। इसकी कोई विष-क्रिया नही होती।

बगाल और आसाम प्रदेश के वैद्य-बन्धुओ को इस ओर पूरा लक्ष्य दे कर विशेष कर बगाल और आसाम प्रदेश के प्रान्तीय वैद्य सम्मेलनो को और अनुसन्धान-प्रिय वैद्यो को ध्यान दे कर रगीन चित्र, आयुर्वेदीय नाम, रस, गुण, वीर्य, विपाक, प्रभाव व दोषो पर अनुभव शीघ्र आयुर्वेदीय पत्र-पत्रिकाओ मे देवे, जिससे आगे बननेवाले निघण्टुओ में इस उपादेय वृक्ष का समावश हो जाय।

—वैद्याचार्य उदयलाल महात्मा,
देवगढ़ (राजस्थान)।

शास्त्रीय और शुद्ध **बैद्यनाथ रस-रसायन** जाड़े में सेवन करें
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० कलकत्ता पटना झाँसी नागपुर



आयुर्वेद-जगत्

चिकित्सा में मन का स्थान

उत्तरप्रदेश के मुख्यमत्री डाक्टर सम्पूर्णानन्द न लखनऊ म अनुष्ठित भारतीय चिकित्सा अनुसधान परिषद के वार्षिक अधिवशन म अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए शारीरिक चिकित्सा म मानव मस्तिष्क की अन्तभूत शक्तियो के उपयोग की सलाह दी और कहा कि किसा भी रोग या व्याधि का उपचार करन के लिय मानव के मन और मस्तिष्क की उन मूलभूत शक्तियो के अध्ययन की अपेक्षा है जो रोग शमन करन म सहायक होती है।

डाक्टर सम्पूर्णानन्द न उक्त कथन को और अधिक स्पष्ट करते हुए कहा—यह सिद्ध हो चुका है कि चिकित्सा विज्ञान म मन का एक विशष स्थान है। आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति म मन और शरीर का यह अन्यान्याश्रय सम्ब घ बहुत पहल से स्वीकार किया जा चुका है। वतमान औषधि विज्ञान न भी मन और मस्तिष्क को न केवल स्वास्थ्य के लिए एक आवश्यक चीज माना है वरन उसे एक चमत्कारपूण रोगोपचारक भी स्वीकार किया है।

मुख्यमत्री न कहा कि चिकित्सा विज्ञान वस्तुत अन्य प्रकार के ज्ञान विज्ञान से सवथा पृथक कोई विषय नही बल्कि भौतिक शास्त्र रसायन शास्त्र और मनोविज्ञान आदि से सम्ब घित उस ज्ञानराशि का ही एक अग है जो मानवता न कालक्रम से अर्जित किया है। हम यह आशा करते है कि ज्ञान विज्ञान की समस्त शाखाओ प्रशाखाओ के सहयोग से मानवता का कल्याण यथापूव होता रहगा। आयुर्वेद और वतमान चिकित्सा पद्धति का अन्तर बताते हुए डाक्टर सम्पूर्णानन्द न कहा कि आज की चिकित्सा पद्धति म जहाँ शरीर के रासायनिक परिवतनो और तज्जन्य दोषो को दूर करन की चेष्टा की जाती है वहाँ आयुर्वेद में उन मौलिक दशाओं में ही उ मूलन का प्रयत्न किया जाता है जिनके कारण शरीर म इस प्रकार के रासायनिक परिवतन हुआ करते है। एसी दशा म आगिक दोषो और दवाओ का अध्ययन करन के साथ ही आवश्यकता इस बात की है कि शरीर की उन विविध प्रक्रियाओ का भी भलाभाति अध्ययन किया जाय जिनका सतुलन बिगड जान से मनुष्य का शरीर रुग्ण हो जाता है।

आयुर्वेद का प्रमाणीकरण आवश्यक

श्री बैद्यनाथ आयर्वेद भवन प्राइवट लिमिटड के पटना स्थित कार्यालय म भवन के अध्यक्ष श्री रामदयाल जोशी द्वारा गत ३० अक्टबर को भारत सरकार के रेल मत्री श्री जगजीवन राम के सम्मान म एक चाय पार्टी दी गयी। भवन की ओर से श्री दुर्गा प्रसाद शर्मा आयर्वेदाचाय न रेल मत्री का स्वागत करते हुए भवन द्वारा आयुर्वेद के क्षत्र म की गयी सेवाओ का उल्लख किया। अपन स्वागत के उत्तर म रेलमत्री श्री जगजीवन राम न कहा कि आयुर्वेदिक औषधियो का प्रमाणीकरण आवश्यक है। आपन कहा कि जबतक आयर्वेदिक औषधियो का स्टण्डड निश्चित नही हो जाता तबतक गडबडी बनी रहगी। श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा आयुवदो यान के हित म की जान वाली सेवाओ के लिए भवन सचालको की भरि भरि प्रशसा करते हुए आपन भवन के उत्तरोत्तर अ युदय की शभकामना की। इस अवसर पर केद्रीय रेलव मत्री के अतिरिक्त विहार के राजस्व मत्री पण्डित विनोदानन्द झा और नगर के अनक विशिष्ट व्यक्ति उपस्थित थ।

कविराज प्रताप सिंह का भाषण

केद्रीय स्वास्थ्य मत्रालय के अधीनस्थ आयुर्वेदीय विभाग के परामशदाता वैद्यरत्न कविराज प्रताप सिंह ने आसाम के आयुर्वेदज्ञो के सम्मुख शिलाग म अपन विचार व्यक्त करते हुए कहा कि वैद्य समाज प्रकृति का पुजारी होता है इसी कारण वद्य को प्राकृतिक की सज्ञा दी गयी है। मनुष्य की प्रकृति और उनकी व्याधियो को भली भाति जान कर वैद्यगण पीडित मानवता की सेवा पूण दक्षता और शुद्धता के साथ कर सकते है। आसाम पर प्रकृति की महान कृपा रही है और यह राज्य प्राकृतिक साधनो यथा वनस्पतियो जडी-बटियो और खनिज सम्पत्ति से पूणतया सम्पन्न है। अतएव आयुर्वेदीय दृष्टि से आसाम महत्त्व रखता है।

यहाँ की जडी-बूटियो से विस्मयकारी औषधिया बनायी जा सकती है।

आपने खेद प्रकट करते हुए कहा कि हमलोगो ने अपने प्राचीन ऋषियो की महान परम्पराओ को भुला दिया है और सम्प्रत्ति हम सिर्फ व्यवसायी बन गये है। इसीसे हमलोग अपनी प्रतिष्ठा, अधिकार और वैद्यक वृत्ति—प्रैक्टिस सब खोते चल जा रह है। कविराज जी न जोरदार शब्दो में आयुर्वेद प्रमियो से प्रकृति और उसके साथ-साथ आयुर्वेद शास्त्र का गभीर अध्ययन करन की मार्मिक अपील की। आपने कहा कि प्रकृति और आयुर्वेद दोनो ही ईश्वरीय अवदान है—अतएव इनका मानव कल्याण के लिए अधिकाधिक अध्ययन कर उपयोग किया जाना समीचीन है।

कविराज जी ने कहा कि अब हमलोग विदेशी-दासता से मुक्त है और विश्व मे अपनी प्रतिष्ठा और मान-सम्मान बढाना चाहते है। हमारे प्रधान मत्री श्री नेहरू ने अन्तर्राष्ट्रीय जगत मे भारत का मान बढाया है। अतएव, हमलोगो को ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि भारत अपनी सभी आवश्यकताओ—जिनमे औषधिया भी है—की पूर्ति स्वय कर सके। किसी भी क्षत्र मे भारत का परमुखापेक्षी बना रहना अत्यन्त खेद का विषय है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हमे अविराम प्रयत्न करते रहना है। आपने विद्यार्थी वर्ग को सबोधित करते हुए कहा कि आज के छात्र ही कल इस देश के नागरिक बनेग और राष्ट्रोन्नति का सारा दायित्व उन पर ही आने वाला है। इसलिए, प्रधान मत्री प० जवाहरलाल नेहरू का दृष्टान्त अपने सम्मुख रखते हुए भारत को स्वस्थ, सुखी और समृद्धिशाली बनाने के लिए सतत् प्रयत्न करना चाहिए।

कविराज जी ने सरकार की ओर से अपनी गहरी आशावादिता प्रकट करते हुए कहा कि जहाँ तक वर्तमान राष्ट्रीय सरकार का प्रश्न है, आयुर्वेद के पुनरुत्थान की दिशा मे वह कदापि पीछे पॉव नही देगी और आयुर्वेद के सम्पूर्ण अग-उपाङ्ग को शोध द्वारा सम्पन्न बनाने के लिए आर्थिक योगदान भी करेगी। सरकार बम्बई, बिहार, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, केरल, कोचीन, मद्रास और आन्ध्रप्रदेश में पृथक आयुर्वेदिक विभागो की स्थापना कर चुकी है। साथ ही इन राज्यो मे इन विभागो के अन्तर्गत निर्देशक तथा उपनिर्देशक की भी नियुक्ति की गयी है, जिनके जिम्मे विभिन्न राज्यो में सरकार द्वारा सचालित आयुर्वेदिक कालेजो, स्कलो, अस्पतालो और औषधालयो की व्यवस्था का भार है।

आपने कहा कि उत्कल सरकार ने हाल ही मे इस आशय की घोषणा की है कि वह आयुर्वेदिक डिप्लोमा प्राप्त व्यक्तियो यथा आयुर्वेदाचार्य आदि का दर्जा (स्तर) आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के डिप्लोमा होल्डरो तथा स्नातको के समकक्ष करन जा रही है ताकि आयुर्वेदज्ञो को समकक्षता का दर्जा प्राप्त हो सक।

आपने आसाम सरकार की चर्चा करते हुए बताया कि आसाम की लोकप्रिय सरकार भी शीघ्र ही इस ओर कदम उठावगी। मुझ पूर्ण आशा है कि सरकार एक निर्देशक की नियुक्ति कर आयुर्वेद का एक सर्वथा पृथक विभाग स्थापित करते हुए आयुर्वेदिक स्नातको को यह अवसर प्रदान करेगी कि व लोग आसाम राज्य के प्रत्यक गाव की सेवा आयुर्वेद के माध्यम से कर सके।

जहाँ तक प्राकृतिक साधनो का प्रश्न है, यह राज्य प्राकृतिक साधनो से अत्यन्त सम्पन्न है और आयुर्वेदिक जडी-बूटिया भी प्रचुर परिमाण मे इस राज्य में प्राप्य है—फलत आयुर्वेद के विकास के लिए इस राज्य का बडा महत्त्व है। आपन एक सुझाव रखते हुए कहा कि यदि सरकार आयुर्वेदिक जडी-बटियो का उद्यान लगाने की दिशा मे प्रयत्नशील हो तो जनता को सच्ची आयुर्वेदिक औषधियाँ प्राप्त हो सके—साथ ही सरकार को भी राजस्व के रूप मे आर्थिक लाभ हो सके।

बिहार प्रान्तीय वैद्य-सम्मेलन

बिहार प्रान्तीय वैद्य-सम्मेलन का २१वाँ अधिवेशन ता० २६, २७ अक्टूबर १९५७ को पटना जिला अन्तर्गत विक्रम मे बिहार के ज्ञान वयोवृद्ध आयुर्वेद-सेवी आचार्य त्रिपाठी कमला प्रसाद मणि की अध्यक्षता मे ससमारोह सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर बिहार सरकार के जन-स्वास्थ्य मन्त्री श्री वीरचन्द पटेल, राजस्व मन्त्री प० विनोदानन्द झा, कानून मन्त्री श्री जगत नारायण लाल, उपशिक्षा-मन्त्री श्री कृष्णकान्त सिंह एव आयुर्वेद महामण्डल के भूतपूर्व अध्यक्ष आयुर्वेदपचानन प० जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल आदि विद्वानो ने भाषण दिये। जनतन्त्र के प्रथम राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद, उपराष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन, योजना मन्त्री श्री गुलजारीलाल नन्दा, वाणिज्य मन्त्री श्री मुरारजी

देसाई रेलवे मन्त्री श्री जगजीवन राम बिहार के शिक्षा मन्त्री श्री कुमार गगानन्द सिंह उत्पादन मन्त्री श्री भोला शास्त्री मध्यप्रदेश के राज्यपाल श्री पटास्कर एव अन्य प्रान्तीय एव केन्द्रीय मन्त्रियो साहित्यकारो के शुभ सदेश प्राप्त हुए।

बिहार के विभिन्न भागो से करीब ४०० प्रतिनिधि अधिवशन म सम्मिलित हुए थ। बिहार की सभी आयुर्वेदीय सस्थाओ सस्कृत विद्यालयो एव आयर्वेदिक कालजो के प्रतिनिधि अधिवशन म उपस्थित थ। विशष रूप से बिहार की जनता एव उसके प्रतिनिधियो पत्रकारो आकाश वाणी केन्द्र पटना पब्लिक रिलशन्स डिपाटमेन्ट बिहार न सम्मेलन को सफल बनान के लिए पूण सहयोग दिया।

२६ फरवरी को सुबह ९ बज प्रदशनी का उदघाटन बिहार सरकार के राजस्व मन्त्री माननीय प० विनोदानन्द झाजी द्वारा सम्पन्न हुआ। प्रदशनी का आयोजन सभा भवन के सामन आकषक पुस्तकालय भवन म किया गया था। प्रदशनी का उदघाटन करते हुए राजस्व मन्त्री न कहा कि पश्चिम के प्रभाव म आकर आत्मविस्मरण के फलस्वरूप हम अपनी ही सस्कृति से अश्रद्धा होन लगी। हमारा सस्कार बिगडता गया और उसी के परिणाम स्वरूप आयुर्वेद के प्रति हम उदासीन होते गय। आज लोग एलापथिक का ओर क्यो दौडते चल जा रह है। इसलिए कि उसका असर तात्कालिक होता है। बाद मे क्या परिणाम होगा इसे सोचन की फुसत आज किसे है। छात्र लोग भी अधिक पैसा कमान के फर म एलोपथी चिकित्सा का ज्ञान प्राप्त करना चाहते है। उन्होन वद्यो से भी अपील की कि व इस परीक्षा के युग म खरा उतरन के लिए प्रयत्न कर तथा आपस के भदभाव भुला कर आयुर्वेद की उन्नति के लिए सगठित प्रयास कर।

सम्मेलन का खुला अधिवशन २ बज दिन से सभा भवन म प्रारम्भ हुआ। सभा भवन प्रतिनिधियो और दशको से खचाखच भरा हुआ था। प० गणशदेव आय न मगल पाठ किया। तदनन्तर स्वास्थ्य मन्त्री श्री वीरचन्द पटल न सम्मेलन का उदघाटन किया। अपन उदघाटन भाषण म जनस्वास्थ्य मन्त्री न कहा कि प्राचीन काल आयुर्वेद के लिए स्वण युग था परन्तु केवल उसकी चर्चा करन से आज कोई लाभ नही। आयुर्वेद के भविष्य की चिन्ता करनवालो को चाहिए कि नय सिद्धान्तो को ग्रहण करते हुए व आयर्वेद के उन मौलिक सिद्धान्तो को न भूल जो इस चिकित्सा प्रणाली की आधारशिला है। उन्होन आयुर्वेद की उन्नति के लिए तीन बातो की आवश्यकता बतायी। उन्होन कहा कि रोगो के कारण कीटाणु है। आयुर्वेद के अनुसार रोग का कारण त्रिदोष होता है। अब प्रश्न उठता है कि नय सिद्धान्त की सत्यता को जान कर क्या हम



बिहार प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन मे स्वास्थ्य-मन्त्री श्री वीरचन्द पटल भाषण करते दिखायी दे रह है।

आयुर्वेद के आधार भूत सिद्धान्त को त्याग दे। किन्तु ऐसा करने से आयुर्वेद ही समाप्त हो जायगा। उन्होने आयुर्वेद उन्नति के लिए आयुर्वेद अनुसन्धान कार्य की आवश्यकता भी बतलायी। साथ ही उन्होने आयुर्वेद के अध्ययन के लिए सस्कृत का ज्ञान आवश्यक बताया। तत्पश्चात स्वागताध्यक्ष श्री खदेरन सिंह, अध्यक्ष जिला परिषद्, पटना ने अपना स्वागत भाषण किया। स्वागत भाषण के अनन्तर आपने अध्यक्ष पद का प्रस्ताव किया, जिसका सब जिलो की ओर से अनुमोदन किया गया। तदनन्तर अध्यक्ष आचार्य प० कमला प्रसाद मणि जी ने अध्यक्ष पद का आसन ग्रहण किया।

अध्यक्ष पद से बोलते हुए आचार्य जी ने आयुर्वेद के प्रति सरकार की उपेक्षापूर्ण नीति पर खेद प्रकट किया और दावे के साथ कहा कि ऐलोपैथी के लिए सरकार जितना ध्यान दे रही है, उसका दशमाश भी यदि वह आयुर्वेद के लिए देने की कृपा करे तो आयुर्वेद की महत्ता सिद्ध हो जा सकती है। आगे उन्होने कहा कि आधुनिक विज्ञान की ओर से यदि हम मुख मोडे तो हमारा विज्ञान समीचीन नही कहा जा सकता। कोई भी विज्ञान, चाहे वह कितना भी साधन-सम्पन्न क्यो न हो, बराबर अनुसन्धान एव उनका देश-काल-परिस्थितिवश उसमे सकलन कर उसमे सदा घुलना अपेक्षित है। यदि हम उसमे निरन्तर समीचीनता लाने मे उदासीन रहे तो एक दिन वह सार्वभौम विज्ञान निष्क्रिय हो जायगा। अत आयुर्वेद के छिन्न-भिन्न अगो को सुसकलित कर एव आधुनिक विज्ञान को अपने अनुसार सुव्यवस्थित कर उसे समयानुसार सम्पन्न करना होगा।

अगले दिन २७ अक्टबर के ९ बजे सबरे आयुर्वेद द्रव्य गुण परिषद्, औषध निर्माण परिषद् एव आयुर्वेद-दर्शन परिषद् के अधिवशन हुए, जिसका सभापतित्व क्रमश आचार्य प० उपेन्द्रनाथ झा, वैद्य प० दुर्गा प्रसाद शर्मा एव आचार्य प० उमेशचन्द मिश्र जी ने किया। अधिवेशन का उद्घाटन आयुर्बेद महामण्डल के भूतपूर्व अध्यक्ष आयुर्वेद-पचानन प० जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल ने किया। शुक्लजी का उद्घाटन भाषण अत्यन्त ही ओजपूर्ण और सामयिक था। उन्होने वैद्यो को एक हो कर रचनात्मक कार्य करने का सुझाव दिया।

पुन २ बजे दिन से सम्मेलन का खुला अधिवेशन आचार्य प० त्रिपाठी कमला प्रसाद मणि की अध्यक्षता में प्रारम्भ हुआ, जिसमे कई महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव पास हुए। खुले अधिवेशन मे एक प्रस्ताव द्वारा आसवारिष्ट पर लगाए गये प्रतिबन्ध का घोर विरोध किया गया और सरकार से निवेदन किया गया कि आसवारिष्ट पर लगाए गये प्रतिबन्ध को अविलम्ब उठा लिया जाय और उसके निर्माण में सरकार सहयोग प्रदान करे ताकि देशी चिकित्सा विज्ञान स्वतन्त्र भारत में पूर्ण रूप से फूल-फल सके।

उस दिन के अधिवेशन मे बिहार सरकार के कानून मन्त्री श्री जगत नारायण लाल, श्रीमती रामप्यारी देवी एव उपशिक्षा मन्त्री श्री कृष्णकान्त सिह के ओजस्वी भाषण हुए।

अन्त मे श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० के अध्यक्ष प० रामदयाल जोशीजी ने वैद्यो से निवेदन करते हुए कहा कि एकता और सद्भावना मे आयुर्वेद और आयुर्वेद-समाज का कल्याण सम्भव है। विवाद का युग समाप्त हो चुका। आज जो मिल कर काम करेगा वही आगे बढ सकेगा, जनता और सरकार का प्रिय होगा। अत वैद्यो को पारस्परिक मतभेद भूल कर रचनात्मक कार्य मे हाथ बँटाना चाहिए। खुले अधिवेशन मे एक प्रस्ताव द्वारा सवसम्मति से कार्य-कारी सभा गठित करने का भार सभापति महोदय को सौपा गया। इस तरह अधिवेशन का कार्य-क्रम २७ अक्टबर १९५७ के रात्रि सात बजे सुमधुर वातावरण मे समाप्त हुआ।

राजकीय आयुर्वेद यूनानी चिकित्सक संघ

राजकीय आयुर्वेद यूनानी चिकित्सक सघ, उत्तर प्रदेश की कार्यकारिणी की बैठक गत २२ नवम्बर को श्री हकीम ज्याउद्दीन अहमद नदवी के सभापतित्व मे लखनऊ मे हुई, जिसमे निम्नलिखित प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास हुए—

सर्वप्रथम स्वर्गीय श्री विज्ञानानन्द पाण्डेय भूतपूर्व वैद्य इन्चार्ज पौन नगला चि० (बरेली) की निर्मम हत्या पर शोक प्रस्ताव पास किया तथा उनके शोक सतप्त परिवार को समवेदनात्मक पत्र लिखा गया। साथ ही यह भी तय हुआ कि स्वर्गीय वैद्यजी के परिवार को उचित आर्थिक सहायता दिलाने के लिये सघ उचित कार्यवाही करे।

पौन नगला से राजकीय चिकित्सालय को अविलम्ब स्थानान्तर करने के लिये विभागीय उपसचालक महोदय से प्रार्थना की गई।

सरकार से प्रार्थना की गई कि हम चिकित्सको के कैडर एव Designation को क्रमश State Subordinate Medical Service (Ayurved) तथा चिकित्साधिकारी निश्चित किया जाय।

चिकित्सको की दवाओ की माग को आवश्यकता के अनुसार पूर्ति करने के निमित्त विभागीय उपसचालक महोदय से प्रार्थना की गई।

चिकित्सालय के साथ समीपस्थ रेलवे या बस स्टेशन सूचक लिस्ट बनवाने के निमित्त उपसचालक महोदय से प्रार्थना की गई।

चिकित्सको का Confirmation नियत अवधि के अन्दर-अन्दर अवश्य होने के लिये विभागीय उपसचालक महोदय से प्रार्थना की गई।

परस्पर (Mutual) ट्रान्सफर चाहनेवाले चिकित्सको को अवश्य Transfer करने के निमित्त उपसचालक महोदय से प्रार्थना की गई।

विभागीय चिकित्सालयो मे सलग्न कम्पौन्डर बन्धु कही-कही अपनी प्राइवेट प्रैक्टिस करते है। अत जनता व चिकित्सालय के हित-सरक्षण के लिये तथा नियम विरुद्ध होने के नाते उनके खिलाफ सख्त कायवाही करने के लिये विभागीय उपसचालक महोदय से प्रार्थना की गई।

आयुर्वेद व तिब्ब की सेवाओ की सूचना सवसाधारण तक पहुँचाने के लिये अपना एक पत्र निकालने के निमित्त विभागीय उपसचालक महोदय से स्वीकृति पदानार्थ प्रार्थना की गई।

सघ का वार्षिक अधिवेशन मार्च १९५८ ई० मे करना तय किया गया, जिसकी निश्चित तिथि की सूचना बाद मे दी जायेगी।

कार्यकारिणी के सदस्य माननीय विभागीय उपसचालक महोदय से उनके कार्यालय मे चिकित्सको के सामूहिक कष्टो के निराकरण के निमित्त मिले थे। श्रीमान् जी ने हमारे कष्टो को सहानुभूतिपूर्वक सुना तथा उनको नोट किया। आपने उनके निराकरण का पूर्ण आश्वासन दिया।

स्वर्गीय श्री विज्ञानानन्द पाण्डेय जी के केस मे विभाग अत्यधिक सहानुभूतिपूर्वक कार्य कर रहा है, यह जान कर सदस्यों को बडा सन्तोष हुआ।

आल इण्डिया यूनानी तिब्बी कानफरेन्स

कानफरेन्स के जनरल सेक्रेटरी ने उप-सचालक, आयुर्वेद, उत्तर प्रदेश, को सूचित किया है कि उनकी सस्था का वार्षिक अधिवेशन दिनाक २७, २८, २९, ३० दिसम्बर १९५७ को बुरहानपुर मध्य प्रदेश मे हो रहा है। इस अवसर पर एक तिब्बी नुमायश भी लगी है। प्रदेश मे आयुर्वेद एव तिब्ब विभाग मे कार्य करने वाले हकीमो को भी अधिवेशन मे भाग लेने के लिये आमन्त्रित किया गया है।

पारद-अनुसन्धान कार्यालय

पारद अनुसन्धान कार्यालय का स्थानान्तर देवप्रयाग (गढवाल) से कनखल (हरिद्वार) मे हो गया है। अतएव अब निम्नलिखित पते पर पत्र-व्यवहार करना चाहिए—

श्री नारायण स्वामी, पारद अनुसन्धान कार्यालय, विश्वज्ञान मन्दिर, कनखल, हरिद्वार (जिला सहारनपुर)।

वैद्यराज श्री सूर्यनारायण जोशी का अभिनवन

झासी विद्वत्परिषद् एव बुन्देलखण्ड वैद्य-हकीम परिषद् की ओर से इन्दौर निवासी सुख्यात आयुर्वेदीय विद्वान श्री प० सूर्यनारायण जी जोशी वैद्यराज का भव्य अभिनन्दन गत २८ नवम्बर को किया गया। समारोह की अध्यक्षता वयोवृद्ध वैद्यराज पडित परमानन्द जी व्यास ने की। समारोह मे स्थानीय सभी प्रमुख वैद्य-हकीम एव प्रतिष्ठित नागरिको ने भाग लिया। आरम्भ मे वैद्य श्री महावीरप्रसाद जी शर्मा बहड ने मुख्य अतिथि श्री जोशी जी का सक्षिप्त परिचय दिया। सस्कृताचार्य पण्डित लक्ष्मीकान्त जी झा शास्त्री, प्रधान सारस्वत सस्कृत विद्यालय ने झासीस्थ विद्वत्परिषद् की ओर से सस्कृत पद्यमय अभिनन्दन-पत्र पढा और श्रीयुत जोशी जी को समर्पित किया। बुन्देलखण्ड वैद्य-हकीम परिषद् झाँसी की ओर से प्रस्तुत अभिनन्दन पत्र को परिषद् के प्रधानमत्री वैद्य बाबू राजकिशोर जी ने श्री जोशी जी को अर्पित किया। आयुर्वेद विश्वविद्यालय के प्राध्यापक विद्वद्वर श्री राधाकृष्ण जी पाराशर ने श्रीयुत जोशी जी के जीवन पर बडा गभीर प्रकाश डाला और उन दिनो के सस्मरण सुनाये जब श्री जोशी जी ने इन्दौर के विख्यात सेठ हुकुमचन्द्र जी को आयुर्वेद के हित-कार्यों मे धन लगाने को प्रेरित किया था, इन्दौर मे राजकुमार सिंह आयुर्वेद विद्यालय को प्रारम्भिक अवस्था मे स्थापित किया था। अभिनन्दन पत्रो का उत्तर देते हुए वैद्यराज श्री सूर्यनारायण जी जोशी ने अपनी विस्तृत वक्तृता मे उपस्थित जनो और सस्थाओ के प्रति अपनी विनम्र कृतज्ञता प्रकट की और कहा कि मेरा तो जीवन ही आयुर्वेद के लिए है और जो

कुछ काय म कर सका—वह तो स्वाभाविक रूप म ही मेरे द्वारा हो गए या यो कहिए कि एसे सुयोग और साधन मिलते गए जिनसे कुछ काय मेरे द्वारा सम्पन्न हुए। आपन इच्छा व्यक्त की कि आयुवद के अधिकाधिक प्रचार के लिए प्र यक शहर म एक धन्वन्तरि मन्दिर की स्थापना की जानी चाहिए जिसम साधारण जनता को आयुवदीय चिकित्सा का सब प्रकार का लाभ दिया जा सके। अन्त म स्वल्पाहार के उपरान्त समारोह सानन्द सम्पन्न हुआ।

आन्ध्र प्रदश में आयुर्वेद

गत १ नवम्बर १९५६ को आन्ध्र प्रदेश का श्री गणश हुआ। उसी दिन से प्रान्त म स्वत त्र भारतीय चिकित्सा विभाग काय करन लगा। दिसम्बर १९५६ म मद्रास के सुप्रसिद्ध वद्यराज एव कालज आफ इ टग्रटिड मडिसन



श्री लक्ष्मीनारायण गुप्त स्वास्थ्य सचिव आ ध्र प्रदेश

के उपाचाय श्री एम० विश्वश्वर शास्त्री आयवदाचाय इस विभाग के प्रथम अध्यक्ष नियक्त हुए। आप आन्ध्र के सुप्रसिद्ध आयुर्वेद मनीषी श्री रामलिगय्या गारु शास्त्री के सुपुत्र है। आयवद कालज तथा बोड को वतमान रूप दन का बहुत कुछ श्रय आपको ही है। उसके अतिरिक्त आन्ध्र आयवद परिषद (१९४८) तथा अखिल हैदराबाद आयवद का फ स (१९५०) के सभापति तथा त्रावणकोर मसूर तथा काशी विश्वविद्यालय एव जामनगर आयुवद अनसधानशाला आदि की प्रब ध समिति तथा परीक्षा समिति के आप विशिष्ट सदस्य थ। कृषि अनस धान शाला की भारतीय द्रव्य अनसधान समिति के भी आप सदस्य ह। १९५५ म लका सरकार के विशष निमन्त्रण पद लका के राजकीय आयवद कालज की रजत जयन्ती के अवसर पर आप विशिष्ट प्रतिनिधि के रूप म उपस्थित थ।

अष्टागहृदय के शारीर स्थान का तेलगु भाषा में तथा वद्य योगरत्नावली का तेलगु से अग्रजी म आपन भाषा नुवाद किया है। इसके अतिरिक्त अ य भी कई ग्र थो का आपन सम्पादन व लखन किया है। इन सबसे स्पष्ट है कि आन्ध्र प्रदेश की सरकार न आयवद की बागडोर आपके सुयोग्य हाथो म सौप कर स ोकृष्ट चनाव किया है क्योकि आप जसी स तामस्वी योग्यता प्रतिभा विद्वत्ता तथा प्रशासकीय अनभव आदि गणो का एक ही व्यक्ति म समावश बहुत दुलभ होता है।



श्री एम० विश्वश्वर शास्त्री

इस समय प्रान्त के भारतीय चिकित्सा विभाग का बजट १६ लाख रुपए के लगभग है। इनमें ७ लाख के लगभग आयुवद पर तथा ६ लाख के लगभग यना ी पर व्यय होता है।

आन्ध्र प्रदेश तेलगाना (भू० पू० हैदराबाद राज्य का तेलगू भाषाभाषी क्षत्र) तथा आन्ध्र क्षत्र में बटा हुआ है।

तेलगाना में ३७ राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय तथा ३३ सहायता प्राप्त औषधालय हैं जिनपर प्रतिवर्ष ३ लाख रुपए के लगभग व्यय होता है। आंध्र क्षेत्र में ४६९ सहायता प्राप्त (पचायत बोर्ड, म्युनिसिपैलिटी, स्थानीय कोष, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड आदि सस्थाओ द्वारा सचालित) तथा १ राजकीय आयुर्वेद चिकित्सालय है।

राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय हैदराबाद प्रान्त का एकमात्र राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय है। इसमे इस वर्ष हिन्दी माध्यम के साथ तेलगु माध्यम से भी शिक्षा की व्यवस्था की गई है। इसके प्रिंसिपल श्री डा० मलिकार्जुन राव आयुर्वेद के सुप्रसिद्ध विद्वान हैं। इसके पूर्व आप मद्रास आयुर्वेद कालेज मे सीनियर प्रोफेसर थे। महाविद्यालय मे सलग्न आतुरालय मे ६० रुग्ण शय्याओ का प्रबन्ध है। इस वर्ष भारत सरकार ने अतिरिक्त ३० रुग्ण शय्याओ तथा वनस्पति उद्यान के लिए ७००००) रुपए तथा प्रान्तीय सरकार ने आयुर्वेदीय अनुसधान के लिए १००००) रुपए की स्वीकृति दी है।

तेलगाना क्षेत्र मे पहले से ही वैद्यो के रजिस्ट्रेशन के लिए बोर्ड आफ इण्डियन मैडिसन कायम है जिसके अध्यक्ष प्रान्त के स्वास्थ्य सचिव श्री लक्ष्मीनारायण गुप्त आई० ए० एम० हैं। हैदराबाद राज्य मे गैरसरकारी क्षेत्र मे भी आपकी गतिविधि बहुमुखी थी। राज्य की अनेक सस्थाए आपके ही सत्प्रयत्न से पनप सकी हैं। भारतीय सस्कृति व चिकित्सा पद्धति मे आपको विशेष अनुराग है। बोर्ड के मत्री, स्पेशल आफिसर श्री एम० विश्वेश्वर शास्त्री हैं। इसके अतिरिक्त ३ वैद्य (सर्व श्री रामानुज स्वामी, राजवद्य गया प्रसाद शास्त्री तथा श्री वैद्य पराकुशदास) तथा ३ हकीम मनोनीत सदस्य हैं।

आंध्र क्षेत्र के लिए हाल ही मे सितम्बर '५७ को राज्य के उपमत्री ने आंध्र आयुर्वेदिक बोर्ड का उद्घाटन किया है, जिसके अध्यक्ष डा० ए० लक्ष्मीपति है तथ २० वैद्य इसके सदस्य होगे। आंध्र क्षेत्र मे वैद्यो का रजिस्ट्रेशन इसी बोर्ड द्वारा होगा। बाद मे दोनो बोर्डो का विलीनीकरण कर एक ही बोर्ड कायम रहने का सरकार का विचार है, इस बोर्ड का उद्घाटन करते हुए माननीय मुख्य मत्री एव स्वास्थ्य मत्री श्री एन० सजीव रेड्डी ने कहा कि "आयुर्वेद का भविष्य वैद्यो के हाथ मे है। वे अपनी योग्यता व चिकित्सा पटुता से जनता में इसके प्रति आस्था व विश्वास पैदा करें। सरकार हर तरह से आयुर्वेद की प्रगति मे सहायक सिद्ध होगी।"

यह स्पष्ट है कि आंध्र प्रदेश की सरकार आयुर्वेद के पुनरुद्धार के लिए कटिबद्ध है। राज्य के माननीय मुख्य मत्री, स्वास्थ्य सचिव एव स्पेशल आफिसर साहिब के सुयोग्य नेतृत्व मे भारतीय चिकित्सा विभाग की १ वर्ष की प्रगति सराहनीय एव प्रशसनीय है। आशा है इस त्रिमूर्ति के सत्प्रयत्नो से आंध्रप्रदेश शीघ्र ही आयुर्वेद प्रसार व प्रचार मे दूसरे राज्यो का मार्गदर्शन करेगा।

मुजफ्फरपुर आयुर्वेद विज्ञान सम्मेलन

मुजफ्फरपुर जिला आयुर्वेद विज्ञान सम्मेलन के पदाधिकारियो का नये वर्ष (१९५७-५८) के लिये चुनाव हुआ जिसमे उत्तर विहार के ख्यातिलब्ध चिकित्सक श्रीयुत् प० ब्रह्मदत्त शर्मा वैद्यराज, आयुर्वेदाचार्य, सभापति, श्री प० सुरेन्द्र शर्मा वैद्य साहित्यायुर्वेदाचार्य, षड्शास्त्री,-उपसभापति, श्री प० सीताराम शास्त्री वैद्य आयुर्वेदाचार्य, प्रधान मत्री, कविराज श्री रामकिकर प्रसाद जी, जी० ए० एम० एस० (आयुर्वेदाचार्य) उप मत्री, चुने गये। साथ ही मुजफ्फरपुर नगर आयुर्वेद विज्ञान समिति के पदाधिकारियो का भी निर्वाचन हुआ जिसमे कविराज श्री गोस्वामी सुरेन्द्र गिरिजी आयुर्वेदाचार्य सभापति, श्री प० कन्हैयालाल जी शर्मा वैद्य आयुर्वेद शास्त्री तथा श्री हरिहर प्रसाद जी वैद्य उपसभापति, श्री प० ब्रजलाल शर्मा जी आयुर्वेदाचार्य प्रधानमत्री, श्री प० रामाकान्त जी ठाकुर आयुर्वेदाचार्य, उपमत्री चुने गये। इसके अतिरिक्त सात वैद्य प्रान्तीय प्रतिनिधि तथा ग्यारह वैद्य जिला प्रतिनिधि बनाये गये।

आयुर्वेद साहित्य समिति का वार्षिकोत्सव

पिलानी मे आयुर्वेद साहित्य समिति का तृतीय वार्षिकोत्सव श्री लोयलका आतुरालय मे विरला आयुर्वेद विभाग के मत्री श्री रामनिवास शाह की अध्यक्षता मे सम्पन्न हुआ। आयुर्वेदीय झडागायन से कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। इस अवसर पर श्री रघुनन्दनलाल दत्त ने आयुर्वेदीय सस्थाओ की उन्नति के उपायो पर प्रकाश डाला तथा श्री राजेन्द्रकुमार मिश्र ने भारतीय और पाश्चात्य चिकित्साप्रणालियो की तुलना की। राजस्थान के प्रसिद्ध कवि श्री द्विरेफ की रचना और सगीताचार्य श्री केलकर का गायन लोगो ने बहुत पसन्द

किया। समिति के प्रधानमंत्री श्री किशोरीलाल शर्मा किशोर ने सबका स्वागत किया।

श्री ब्रजमोहन दास लोयलका ने उत्सव का उद्घाटन करते हुए बताया कि आयुर्वेद दूसरी चिकित्सा प्रणालियो की तरह केवल एक चिकित्सा पद्धति मात्र नही है। आयुर्वेद में हमारे समग्र जीवन को आदर्श रूप से बिता कर मोक्ष-प्राप्ति के उपायो तक का निदर्शन है। यह जीवन विज्ञान है। इस का प्रसार करना हम सबका लक्ष्य होना चाहिए। डा० श्री एच० एल० शर्मा पी० एच० डी० न आयुर्वेदज्ञो को उद्बोधन करते हुए विस्तार से कहा कि आयुर्वेद को नव्यविज्ञान से घबराना नही चाहिए अपितु उसकी अच्छी बातो को आत्मसात् करना उचित है। आयुर्वेद मे कितनी ही बातो का सूक्ष्म रूप मे निर्देश है, उनके सम्बन्ध मे अन्वेषण होना चाहिए और वह अनुसन्धान पाश्चात्य चिकित्सको की कसौटी पर भी खरा उतरे, एसी व्यवस्था करे। एक पाश्चात्य चिकित्सक ने महर्षि सुश्रुत के बाजीकरण तंत्र मे वर्णित वृषभवृषणो के उल्लेख को पढ कर पुंसत्वशक्ति बढ़ाने की अपूर्व दवा खोज निकाली है। आयुर्वेद के छात्रो को भी अपना अध्ययन दिल और दिमाग दोनो खुले रख कर पाश्चात्य चिकित्सा और नव्य विज्ञान की अच्छी बातो का मनन करना चाहिए।

आचार्य नित्यानन्द ने समिति की प्रवृत्तियो की प्रशसा करते हुए सदस्यो को बताया कि आप लोग एक महान और आदर्श कार्य मे सलग्न है। चिकित्सा का कार्य सम्पूर्ण विश्व के लिए महत्वपूर्ण कार्य है। भारतीयो ने तो इसकी मुक्तकठ से प्रशसा करते हुए स्कन्दपुराण मे यहा तक कह डाला है कि रोग ग्रस्त व्यक्ति की सफल चिकित्सा से जितना पुण्य होता है वह महान यज्ञो के सम्पन्न करने से भी प्राप्त नही हो सकता।

अध्यक्ष-पद से भाषण करते हुए श्री शाह ने कहा कि पारद को सस्कृत किय जाने पर उसमे अचिन्त्य शक्ति का उदय होता है। इस लुप्त प्रक्रिया के उद्धार की जो चेष्टा यहाँ हो रही है उसे शीघ्रता से बढाया जाना चाहिय। मैं भी आयर्वेद की यथाशक्ति सेवा करता रहता हूँ, किन्तु आयुर्वेद का भविष्य आयुर्वेद के वर्तमान छात्रो के हाथो मे है। यदि वे उभयविद्याप्रवीण हो सके तो भविष्य मे आयुर्वेद की उन्नति अनिवार्य है।

दमोह में धन्वन्तरि महोत्सव

"हम आयुर्वेद की वास्तविक प्रगति का अनुभव उस दिन करेगे जिस दिन हमारे वैद्य राजकीय चिकित्सालयो, फौजी अस्पतालो व सरकारी पदो पर सफलतापूर्वक कार्य



दमोह में धन्वन्तरि जयन्ती उत्सव

करते हुए दिखाई देगे।' उक्त शब्द आयुर्वेद के धुरन्धर विद्वान् प्रयाग निवासी पण्डित जगन्नाथ प्रसाद जी शुक्ल ने यहाँ धन्वन्तरि महोत्सव के अध्यक्ष-पद से कहे। आयुर्वेदाचार्य पण्डित शेडये वैद्य जी के विशेष अनुरोध पर शुक्लजी यहाँ उक्त उत्सव के निमित्त पधारे थे। श्री शुक्लजी ने आगे कहा कि हम आयुर्वेद मे अन्वेषण के विरोधी नही, किन्तु हम ऐसा अन्वेषण चाहते है जो आयुर्वेद के सिद्धान्तो को दृष्टिगत रखते हुए आयुर्वेद विज्ञान के विकास मे सहायक हो। हम पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली एव डाक्टरो के विद्वेषी नही वरन् हम ऐसे डाक्टर चाहते है जो कि स्व० कविराज गणनाथ सेन एव स्व० यामिनीभूषण राय का आदर्श अपने समक्ष रखें, जिन्होनें पाश्चात्य शिक्षा पद्धति से अध्ययन करने के बाद भी अपनी भारतीय पद्धति को नही छोड़ा। बल्कि स्वत को डाक्टर कहलाने के स्थान पर कविराज कहना अधिक गौरवास्पद माना। जब यह स्थिति होगी तभी हम उन डाक्टर बन्धुओ की उस प्रकार वदना करेगे जैसे हम भगवान धन्वन्तरि की कर रहे है।

आयुर्वेद विज्ञान की प्राचीनता का उल्लेख करते हुए उन्होने कहा कि "जो लोग आयुर्वेद को दो हजार वर्ष पुराना मानते ह, उन्हे यह जानना चाहिए कि जिस दिवोदास के

पुत्र महाराज प्रतरदत्त का नाम सुश्रुत मे आया है वह भगवान राम के समकालीन थे। बाल्मीकि रामायण के उत्तरखड मे उनका उल्लेख आता है। आयुर्वेद तो वह ब्रह्म विद्या है जिसका पुन स्मरण प्रथम ब्रह्मा ने किया और उसके उपरान्त वह दक्ष प्रजापति, अश्विनी कुमार इन्द्र व भरद्वाज के द्वारा अनेकानेक ऋषियो को प्राप्त हुई तथा उसका सर्वत्र प्रसार हुआ। समुद्र-मथन के समय देव-दानवो के सामूहिक प्रयत्नों से मद्राचल पर्वत की सब प्रकार की जडी-बूटिया समुद्र मे डाली गयी जिससे प्रथम हलाहल प्रकट हुआ व तदनन्तर ही अमृत कुम्भयुक्त भगवान धन्वन्तरि लोक-कल्याणार्थ प्रकट हुए। प्रारम्भ मे पण्डित शेड्येजी वैद्य ने श्री शुक्लजी का स्वागत करते हुए धन्वन्तरि उत्सव के महत्व को समझाया तथा आरोग्य प्राप्ति के लिये आयुर्वेद मे बतलाये गये जीवनक्रम का पालन करते हुए मनुष्यमात्र किस प्रकार सुखी रह सकता है उस पर प्रकाश डाला तथा श्री शक्ल को श्री गणेश चिकित्सा भवन की ओर से मानपत्र भी समर्पित किया। स्थानीय नगरपालिका औषधालय के पण्डित शारदाप्रसादजी पाठक ने श्री शुक्लजी का परिचय कराते हुए उनके त्यागमय जीवन पर प्रकाश डाला। दमोह वैद्य परिषद् की ओर से पण्डित श्यामलालजी पाठक ने तथा दमोह आयुर्वेद विद्यालय की ओर से श्री शिवशकर दीक्षित ने भी शुक्लजी को मानपत्र समर्पित किये।

मध्याह्न मे दमोह वैद्य परिषद् की ओर से आयोजित विशेष सभा मे अनेक प्रस्ताव पारित किये गये थे जिन पर सायकाल की सभा मे अनेक विद्वानो के भाषण हुए।

वैद्यो के रजिस्ट्रेशन

जिन वैद्यो ने धारा ४ म रजिस्ट्री कराने के लिए उ० प्र० इण्डियन मेडिसन बोर्ड को प्रार्थना-पत्र भज थे, उनमे से सैकडो वैद्यो के प्रार्थना-पत्र खारिज हो गये है। ऐसे वैद्यो को प्रार्थना-पत्र खारिज होन के कारणो का पता लगा कर तुरन्त अपील दायर कर देनी चाहिए। यह अपील इण्डियन मेडिसन एक्ट १९३९ की धारा २७ के अन्तर्गत अध्यक्ष—उ० प्र० इण्डियन मेडिसिन बोर्ड लखनऊ के नाम करनी चाहिए। अपील करने की फीस ५) साथ मे भेजनी चाहिए तथा अपील के प्रार्थना-पत्र के साथ आयु सम्बन्धी प्रमाण-पत्र तथा एक मजिस्ट्रट का चिकित्सा-काल सम्बन्धी प्रमाण-पत्र एव ४-५ अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियो के प्रमाण-पत्र जैसे—सभापति ग्राम सभा, अदालत-सरपच, एम० एल० ए०, एम० एल० सी० अध्यक्ष जिला बोर्ड आदि साथ मे सलग्न करना चाहिए।

पिछला प्रार्थना-पत्र कब भेजा था उसकी सही निश्चित तिथि अवश्य लिखनी चाहिए साथ म यह भी ध्यान रखना चाहिए कि पिछले प्राथना-पत्र म जो चिकित्सा-काल या आयु लिखी थी वही इसम न लिख कर उस दिन से ले कर अपील के दिन तक की आयु व चिकित्सा-काल को उसमे जोड कर तब प्रमाण-पत्र लिखाना चाहिए अन्यथा दोनो मे गडबडी हो जाने से अपील भी खारिज हो सकती है। इसमे शीघ्रता करनी चाहिए। (आ० सदेश)

बोर्ड के नवनिर्वाचित सदस्य

उ० प्र० इण्डियन मेडिसन बोर्ड की सदस्यता के लिए अब तक निम्नलिखित विद्वान् वैद्य हकीम चुन कर गय है—रजिस्टर्ड वैद्यो की सीट से—सवश्री (१) वैद्य बाबू राम मिश्र, आयुर्वेदाचार्य, हापुड मेरठ, (२) वैद्य प्रयागदत्त जी शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य आगरा, (३) वैद्य धर्मदत्तजी शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य एम० एल० ए० बरेली (४) वैद्य ताराशकर मिश्र, आयुर्वेदाचार्य, वाराणसी (५) वैद्य गिरीशचन्द्रजी शर्मा, आयुर्वेदाचार्य, कानपुर, (६) वैद्य मधुसूदन दीक्षित, आयुर्वेदाचार्य, सीतापुर। अध्यापको की सीट से—(१) वैद्य लक्ष्मीनारायण मिश्र, आयुर्वेदाचार्य, मेरठ, (२) वैद्य के० डी० जोशी, आयुर्वेदाचार्य, पीलीभीत, (३) हकीम अब्दुल हम्माद साहब, इलाहाबाद, विश्व-विद्यालयो के आयुर्वेदिक -यूनानी फैकेल्टियो से—(१) वैद्य राजेश्वरदत्त शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य, हि० वि० विद्यालय–



पेन्ड्रारोड में धन्वन्तरि जयन्ती उत्सव का दृश्य

वाराणसी, (२) वैद्य शिवदत्त शुक्ल, आयुर्वेदाचार्य, स्टेट आयुर्वेदिक कालेज—लखनऊ, (३) हकीम अब्दुल लतीफ साहब, अलीगढ़।

बैद्यनाथ धर्मार्थ औषधालय पटना

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा सचालित बैद्यनाथ धर्मार्थ औषधालय में गत नवम्बर मे कुल ११८४ रोगियो की मुफ्त चिकित्सा की गई। इसमे ४३७ नये तथा ७४७ पुराने रोगी थे। इसमे पुरुष रोगियो की सख्या २६७, स्त्री रोगियो की सख्या ८१ तथा बालक रोगियो की सख्या ८९ थी। इस मास की दैनिक उपस्थिति का औसत ३९४ रहा। नये रोगियो की सख्या रोगानुसार नीच लिखे मुताबिक है —

ज्वर २८, विषमज्वर २, मथरज्वर २, श्वसनकज्वर ७, उत्फुल्लिका २, उदर ५७, आमातिसार २५, कृमि १०, प्रमेह ४, कास ५९, श्वास ९, अर्श १, कुष्ठ १, क्षुद्र कुष्ठ २९, रजोदोष ७, प्रदर ५, वातव्याधि २६, आमवात ?, शिरोरोग ३, नत्ररोग २२, कर्णरोग ६, मुखरोग ३०, प्रतिश्याय ५४, व्रण १२, वृद्धिरोग ६, श्लीपद ३, शोथ ३, वातरक्त ३, मूत्रघात १, रक्ताल्पता २, प्रसूताज्वर १, वातगुल्म १, हृच्छूल १।

बैद्यनाथ धर्मार्थ औषधालय, झांसी

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० झासी द्वारा सचालित श्री धर्मार्थ औषधालय तथा स्वास्थ्य रक्षा केन्द्र मे गत नवम्बर १९५७ मे २८४८ रोगियो का मुफ्त इलाज किया गया, जिसमे ६५२ नये रोगी आये। नये रोगियो का रोगानुसार विवरण निम्न प्रकार है —

प्रतिश्याय ७५, कास १०५, ज्वर २५, अतिसार २५, आमातिसार २०, श्वास १५, वातव्याधि २५, रक्तपित्त ४, क्षय ३, मलरिया २५, अर्श ११ अग्निमान्द्य १८, हिक्का १, सूर्यावर्त ९, क्रोष्टुशीर्ष १, भ्रम ११, विबन्ध २५, ज्वरातिसार ३, हृद्रोग ५, दौर्बल्य २८, प्रमेह ३७, स्वरभग ४, निमोनिया२, प्रदर ४०, उदर रोग २८ मुखपाक १८, कर्ण रोग १८, नेत्र रोग २०, व्रण ११, विद्रधी ५, पामा १०, विचर्चिका २, दद्रु ६, सिध्म २, यकृतिवृद्धि ४, अण्डवृद्धि २, श्लीपद १, शोथ २, पाण्डु ३।

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० झाँसी द्वारा सचालित श्री धर्मार्थ औषधालय तथा स्वास्थ्य रक्षा केन्द्र झाँसी मे गत अक्तूबर १९५७ मे १९९७ रोगियो की मुफ्त चिकित्सा की गई जिसमे ६४१ नये रोगी आये।

नये रोगियो का रोगानुसार विवरण निम्न प्रकार से है। विबन्ध १८, उदरशूल १४, ज्वर ४५, कास ५८, प्रतिश्याय ६५, निमोनिया ३, श्वास १७, अतिसार १०, आमातिसार ४, सग्रहणी २, अग्निमाद्य १२, प्रसूत रोग ६, प्रदर ३५, पाण्डू ३, यक्ष्मा १, फक्करोग २, विद्रधि ८, श्लीपद १, व्रण २८, नेत्ररोग ३०, कर्णस्राव १६, वातव्याधि २१, गुल्म १, गृध्रसी ३, मुखपाक १५, पामा ४८, रक्तप्रदर १०, मलेरिया ३८, हृद्रोग ४, दीर्घश्वस ९, अर्श १०, मन्थर ज्वर ३, रक्तपित्त ८, मुखपाक २९, शिरोरोग १५, स्नायु दौर्बल्य २२, कटिशूल १०, श्वित्र ३, विविध १६।

बैद्यनाथ धर्मार्थ औषधालय नागपुर

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० द्वारा सचालित धर्मार्थ औषधालय नागपुर मे गत नम्वम्बर १९५७ मे कुल रोगियो की किचित्सा की गई जिनमे ६०२ नये ३१८८ पुरातन रोगी आये। विवरण निम्न प्रकार है —

ज्वर ५०, जीर्णज्वर १६, विषमज्वर ३६, आन्त्रिक ज्वर ३, अम्लपित्त २६, अतिसार १२, आमातिसार १२, प्रवाहिका ७, सग्रहणी ३, अर्श ४, अजीर्ण १०, सग्रहणी १४, उदरशूल २०, यकृतविकार ३, पामा ३०, हृदयरोग ४, वात ३०, शिर शूल १८, दतपीडा ८, प्रदरविकार १०, प्रतिश्याय २८, कास ५०, श्वास ४, कृमिविकार १२, अम्लपित्त ६, दौर्बल्य ८, प्रमेह १२, मूत्रकृच्छ्र ३, उपदश २, रजोवरोध ५, कुष्ठरोग ३, मुखपाक १२, नत्रविकार १०, गलगड ३, कर्णविकार ७, भ्रम ३, शोथ ३, व्रण ५, पार्श्व-शूल ३, शीतपित्त २, सोमरोग ४, प्रसूतिविकार ३, विविध ७५, छर्दि ३।

बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० द्वारा सचालित धर्मार्थ औषधालय नागपुर मे गत अक्टूबर मास मे ३९६० रोगियो की चिकित्सा की गई, जिनमे ७१४ नये और ३२५४ पुरातन रोगी आये। विवरण निम्न प्रकार है— ज्वर ८५, जीर्णज्वर १८, विषमज्वर ५० आन्त्रिक ज्वर ३, अतिसार ४४, ज्वरातिसार १५, आमातिसार २५, प्रवाहिका ५, सग्रहणी ३, अर्श ४, अजीर्ण २२, मन्दाग्नि १५, उदर-शूल ३८, यकृतविकार ३, पामा २०, हृदयदौर्बल्य ६, वातविकार ३६, शिर शूल २२, दतपीडा ११, प्रदरविकार १२, प्रतिश्याय २५, कास ६०, श्वास ५, कृमिविकार ५, अम्लपित्त ९, दौर्बल्य १२, प्रमेह १३, मूत्रकृच्छ्र ३, उपदश ३, रजोवरोध ६, कष्टार्तव ४, मुखपाक १२, नेत्रविकार ११, गलगड ३, कर्णविकार ११, भ्रम ३, शोथ ४, पूय ३, पार्श्व-शूल ३, शीतपित्त ३, सोमरोग ४, प्रसूतिविकार ५, दतोद्भव ५, हृदयविकार ६, छर्दि २, हिस्टीरिया ३, दग्ध ४, विविध ४८।

उत्तर प्रदेश में आयुर्वेद की प्रगति

राजकीय चिकित्सालय भवनों का निर्माण—

द्वितीय पचवर्षीय आयोजना के अन्तर्गत २० नवीन स्थापित आयुर्वेदिक एव यूनानी चिकित्सालय भवनो का निर्माण कराने का कार्यक्रम है। आयोजना काल मे इस योजना को कार्यान्वित करने के लिये ४ ६३ लाख रुपये की धन-राशि सुरक्षित रखी गई है। तदनुसार आयोजना के प्रथम दो वर्षों मे पाँच चिकित्सालय भवनो का निर्माण करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। गत वर्ष प्रारम्भ मे पचेवरा (मिर्जापुर), टोचीगढ (अलीगढ), सखवानिया (देवरिया), चण्डायरवलीपुर (बलिया), चण्डेश्वर (आजमगढ) के पाँच नव स्थापित चिकित्सालयो के भवन बनाने का निश्चय किया गया था। तद्पश्चात् यह ज्ञात कर कि चण्डेश्वर (आजमगढ) का भवन-निर्माण स्थानीय जनता द्वारा होगा, अनुमोदित सूची से इसका नाम हटा कर सीतलाखेत (अल्मोडा) का नाम सम्मिलित किया गया। प्रारम्भिक कार्यवाहियाँ पूर्ण न हो सकने के कारण गत वर्ष निर्माण कार्य प्रारम्भ न हो सकेगा। शासन ने इस वित्तीय वर्ष के अन्तर्गत इन्ही ६स्थानोके नाम चिकित्सालय भवन-निर्माण-कार्य के हेतु अनुमोदित किये है। प्रत्येक चिकित्सालय भवन-निर्माण के सम्बन्ध मे १८८०८) रु० के प्रमाप मानचित्र एव आगणन शासन द्वारा अनुमोदित है। इस धनराशि मे चार रोगी शय्याओयुक्त चिकित्सालय भवन के लिये ११,८४४) रु० चिकित्सालय के निवास के लिये ६०२८) रु०, शौचालय के लिये २०६) रु० तथा भूमि व्यवस्था कूप अथवा चौहद्दी के लिये ६६०) रु० की धनराशि सम्मिलित है। इस वर्ष अब तक इन भवनो का निर्माण-कार्य सम्बन्धी की गई कार्यवाही का विवरण निम्नानुसार है।

पचेवरा (मिर्जापुर)—प्रारम्भिक आगणन एव मानचित्र अनुमोदित किये जा कर कार्य प्रारम्भ के हेतु प्रशासकीय अनुमोदन प्रदान किये जा चुके है। निर्माण कार्य के सम्बन्ध में सार्वजनिक निर्माण विभाग की प्रगति-विवरण की प्रतीक्षा की जा रही है।

टोचीगढ (अलीगढ)—प्रारम्भिक आगणन एव मानचित्र अनुमोदित किये जा कर प्रशासकीय अनुमोदन प्रदान किया गया। किन्तु भूमि-उपलब्धता का प्रश्न पुन विचाराधीन है। पूर्व उपलब्ध भूमि एक तो सिंचाई विभाग द्वारा ड्रेनेज बनाने के सम्बन्ध मे ले ली गई है। दूसरे वह भूमि काफी निचाई पर है। और वर्षा ऋतु में उसमे पानी भरा रहता है। अत सार्वजनिक निर्माण कार्य विभाग ने उसे चिकित्सालय भवन निर्माण के योग्य नही समझा है।

सखवानियाँ (देवरिया)—प्रारम्भिक आगणन व मानचित्र प्रशासकीय अनुमोदन प्रदानार्थ शासन के विचाराधीन है। जो शीघ्र ही दिये जाने वाले है। तत्पश्चात् निर्माण-कार्य प्रारम्भ किया जा सकेगा।

चण्डायरवलीपुर (बलिया)—इस चिकित्सालय के भी मानचित्र व आगणन शासन के विचाराधीन हैं। प्रशासकीय अनुमोदन दिये जाने के बाद निर्माण-कार्य प्रारम्भ किया जा सकेगा।

सीतलाखेत (अल्मोडा)—अभी सम्बन्धित अभियन्ताओ ने प्रारम्भिक आगणन व मानचित्र तैयार कर नही भेजे है। सम्बन्धित जिला स्वास्थ्य अधिकारी से वाञ्छित प्रतिवेदन की प्रतीक्षा की जा रही है। उन्हे शीघ्रता करने को लिखा गया है।

चण्डेश्वर (आजमगढ)—भवन निर्माण कार्य सूची में इस स्थान का नाम विशेष परिस्थितियो मे क्षेत्रीय जनता के आर्थिक सहयोग की भावना को दृष्टि मे रखते हुए सम्मिलित किया गया। शासन तथा क्षेत्रीय एम० एल० ए० श्री ब्रह्मचारीजी के बीच चलनेवाली बातो पर ही निर्माण-कार्य की प्रगति निर्भर है।

सम्बन्धित अधिकारीगण इस सम्बन्ध मे व्यक्तिगत ध्यान देते रह कर इस योजना को पूर्णरूपेण सफल बनाने का प्रयत्न करे।

टेहरी-गढ़वाल जिले में चिकित्सालय भवन

टेहरी-गढवाल जिले मे इस समय ४३ राजकीय आयुर्वेदीय एव यूनानी चिकित्सालय है। मुनि की रेती चिकित्सालय का कार्य स्थगित हो जाने से केवल ४२ चिकित्सालय भवन-व्यवस्था का ही प्रश्न सम्मुख रह जाता है। भवन व्यवस्था निम्नानुसार है—

राजकीय—(अ) १९४९ मे प्रदेश में राज्य के विलयन के पूर्व के भवन—(१) जाखनीधार बनगढ़, (२) अखोरी हिन्दाव, (३) नेलवाड फतेहपर्वत, (४) डागचौरा, (५)

खातीखरियागढ, (६) चेमियाला केमर, (७) पोखाल फेगुल, (८) चम्बा, (९) हिन्डोला खाल। (ब) श्रमदान द्वारा निर्मित—(१) सिद्धौड बडमा, (२) पोखरी, (३) भटवारी घनारी, (४) बुडकोटरमोली, (५) जाखाल भरखार, (६) क्लिडाग, (७) सौन्दी, (८) डुगड्डापालीगढ, (९) सदेगल सकलाना, (१०) जिम्पादसगी, (११) खर-सलीराजगढी, (१२) ज्ञानसूमखतोगी।

सशुल्क—(१) धुतमिलग, (२) भर्वान, (३) पवगाँवभारपुर, (४) म्याजी लबर, (५) थाती कठेड, (६) किलकिलेश्वर चौरास, (७) जाजल, (८) पाँवसिल-वाड, (९) कीर्तिनगर, (१०) मदननेगी, (११) जखोली-लस्या, (१२) हिसरियाखाल, (१३) गुडयातगाँव, (१४) नवागाँव मुगराशान्ति, (१५) कन्डारी गोडर।

नि शुल्क—(१) राजगढीखाई, (२) भटवारी-टकनौर, (३) काफलपानी जुम्मा, (४) सिराई, (५) लम्बगाँवबरमोली, (६) म्यार्णीलालूर।

मदननेगी क्लिडाग, जाजल, पावसिलवाड, काफल-पानीजुम्मा, म्याणीलालूर के ६ चिकित्सालय भवनो का निर्माण जनता के सहयोग से श्रमदान द्वारा हो रहा है। ये चिकित्सालय जैसा कि उक्त विवरण से ज्ञात होता है, अभी सशुल्क भवनो मे कार्य कर रहे है।

राजकीय औषधि निर्माण शाला

माह अक्तूबर १९५७से सम्बन्धित औषधि निर्माणशाला के कार्यों का प्रगति-विवरण निम्नानुसार है—

निर्माणशाला मे निर्मित औषधियो की सख्या—	४०
चिकित्सालयो की सख्या जहाँ औषधिया भेजी गई—	८३
निर्माणशाला द्वारा प्रेषित ग्राम औषधि पेटिकाओ की सख्या-	२
उन औषधियो की सख्या जिनका निर्माणशाला से सम्बद्ध प्रयोगशाला मे रासायनिक विश्लेषण हुआ—	६

गत फरवरी मास मे निर्माणशाला से सम्बद्ध एक बिक्री-केन्द्र भी हलवासिया मार्केट हजरतगज, लखनऊ में स्थापित किया गया था, जो दिनाक १८, १०, ५७ को एक शासकीय आदेश द्वारा बन्द कर दिया गया है।

क्षेत्रीय आयुर्वेदिक एव यूनानी अधिकारियों की बैठक

प्रदेश के समस्त क्षेत्रीय आयुर्वेदिक एव यूनानी अधि-कारियो की अर्धवार्षिक बैठक दिनाक ४, ५ और ६ नवम्बर १९५७ को लखनऊ में उप-सचालक, आयुर्वेद, के कार्यालय मे हुई, बैठक में बहुत-सी महत्त्वपूर्ण विभागीय समस्याओ पर विचार-विमर्श हुआ।

निजी वैद्य हकीम तथा सस्थाओ को राजकीय अनुदान

माह अक्तूबर १९५८ मे निजी वैद्य-हकीम तथा सस्थाओ को ७५०) रु० की राजकीय सहायता स्वास्थ्य-मन्त्री के विवेकाधीन अनुदान के मद से दी गई। चालू वित्तीय वर्ष में माह सितम्बर १९५७ के अन्त तक इस मद से ९६२५) रु० का अनुदान दिया जा चुका था। इस प्रकार माह अक्तूबर १९५७ के अन्त तक इस मद से १०,३७५) रु० का अनुदान प्रदान किया गया।

राजकीय चिकित्सालय के वैद्य की हत्या

दिनाक १३-९-५७ को राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय पौनगला, जिला बरेली के वैद्य श्री विज्ञानानन्द पाण्डे, समीपस्थ डाकघर बुधौली से कर्मचारियो का वेतन आदि उपलब्ध करने गये थे। डाकघर से प्राप्त १९९०) रु० की धनराशि लेकर जब वे उसी दिन शाम को पौनगला वापिस आ रहे थे, मार्ग मे उनकी निर्मम हत्या कर दी गई। इस सम्बन्ध मे बरेली जिले का पुलिस विभाग समुचित छानबीन कर रहा है। अबतक प्राप्त सूचना के अनुसार इस सम्बन्ध मे कोई विशेष जानकारी प्राप्त नही हो सकी है। पहले भी इस ग्राम मे कोई भी राजकीय कर्मचारी चैन से नही रहा। हत्या के कारण उत्पन्न क्षुब्ध वातावरण को दृष्टि मे रखते हुए जिला स्वास्थ्य अधिकारी को आदेश दिये गये है कि वे इस चिकित्सालय को अन्य स्थान पर स्थानान्तरित कर दे।

धन्वन्तरि जयन्ती समारोह

उप-सचालक, आयुर्वेद, उत्तर प्रदेश, लखनऊ के कार्यालय मे प्राप्त सूचना के अनुसार विभाग के निम्नाकित चिकित्सालयो में धन्वन्तरि जयन्ती-समारोह मनाया गया—

रानीपुर (झाँसी) मे दिनाक २१-१०-५७ को भगवान धन्वन्तरि जयन्ती समारोह उत्साह के साथ मनाया गया। श्री गौरीशकर त्रिपाठी कर्मकाण्डी द्वारा भगवान धन्वन्तरि का पूजन वेदमन्त्रो द्वारा किया गया। तद्पश्चात् स्थानीय वैद्य श्री ईश्वरी प्रसाद की अध्यक्षता में सर्वश्री अयोध्या प्रसाद शर्मा तथा सुखनन्दन के स्वास्थ्य विषय पर भाषण हुए।

राजकीय कर्मचारी तथा साधारण शिक्षा

गत दो-तीन वर्ष पूर्व शासन ने पूर्णकालिक राजकीय कर्मचारियो को एकेडेमिक (साधारण शिक्षा सम्बन्धी) कक्षाओ मे सम्मिलित होने अथवा परीक्षाओ के देने पर रोक लगा दी थी। अब शासन ने उस विषय पर पुन विचार कर यह निश्चय किया है कि राजकीय कर्मचारियो को साधारण शिक्षा सम्बन्धी परीक्षाओ में कार्यालय काल के पश्चात सम्मिलित होने तथा ऐसी परीक्षाओ को निजी प्रकार से देने की अनुमति सम्बन्धित विभागाध्यक्षो द्वारा निम्न प्रतिबन्धो को दृष्टि मे रखते हुए दी जाय कि किसी भी दशा मे सरकारी काम मे बाधा न पहुँचनी चाहिए।

(१) इस प्रकार अनुमति पाने वाले कर्मचारियो की सख्या कार्यालय मे काम करनेवाले कुल कर्मचारियो के १० प्रतिशत से अधिक न हो।

(२) इस प्रकार अनुमति पानेवाले कर्मचारियो को परीक्षाओ की तैयारी करने के सम्बन्ध मे नियुक्ति, स्थानान्तरण, अथवा अवकाश विषयक कोई भी विशेष सुविधा न दी जाय। अवकाश की स्वीकृति साधारणत दी जाय।

(३) यदि इन कर्मचारियो के सरकारी दैनिक कार्य मे कोई बाधा पहुँचती है तो अनुमति सम्बन्धी आदेश विभागाध्यक्षो द्वारा वापिस लिये जा सकते है।

(४) वर्ष तथा परीक्षा विशेष के लिये दी गई अनुमति किसी अन्य वर्ष अथवा परीक्षा पर लागू न होगी।

क्षेत्रीय आयुर्वेदिक एव यूनानी अधिकारी

अभी हाल ही मे प्रदेश के समस्त क्षेत्रीय आयुर्वेदिक एव यूनानी अधिकारियो के स्थानान्तरण एक स्थान से दूसरे स्थान को हो जाने से उनकी डाक के परिवर्तित पते सम्बन्धित सज्जनो के सूचनार्थ नीचे दिये जा रहे है। इन अधिकारियो के कार्यक्षेत्र के जिले भी इनके नाम के सम्मुख अकित किए जा रहे है—

क्षेत्रीय अधिकारियो के नाम व पते	कार्यक्षेत्र के जिले
(१) श्री नर्मदेश्वर पाण्डे, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी (केन्द्रस्थ) कार्यालय उप-सचालक, चिकित्सा एव स्वास्थ्य (आयुर्वेद), उत्तर प्रदेश, लखनऊ।	लखनऊ, खीरी, सीतापुर, हरदोई, उन्नाव, रायबरेली।
(२) श्री वजीर हसन तिरमिजी क्षेत्रीय यूनानी अधिकारी (केन्द्रस्थ), कार्यालय उप-सचालक, चिकित्सा एव स्वास्थ्य, (आयुर्वेद), उत्तर प्रदेश, लखनऊ।	लखनऊ, रायबरेली, बाराबकी, फैजाबाद, सीतापुर, खेरी, हरदोई, उन्नाव, कानपुर, फर्रुखाबाद, इटावा, बाँदा, झाँसी।
(३) श्री ज्ञानेन्द्रनाथ शुक्ल, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी २बी।२२३, मदौनी, बाराणसी।	वाराणसी, जौनपुर, गाजीपुर, मिर्जापुर, बलिया।
(४) श्री मोहम्मद यूसुफ सिद्दीकी, क्षेत्रीय यूनानी अधिकारी, छतारी कम्पाउण्ड, रसलगज, अलीगढ।	अलीगढ मेरठ, देहरादून, बुलन्दशहर, मुजफ्फरनगर सहारनपुर, मैनपुरी मथुरा, मुरादाबाद, आगरा, एटा, बिजनौर, बरेली, बदायूँ, पीलीभीत, रामपुर।
(५) श्री चन्द्रदत्त त्रिपाठी, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी, बनमालीदास औषधालय, अलीनगर, गोरखपुर।	गोरखपुर, आजमगढ, देवरिया, बस्ती।
(६) श्री रामसेवक मिश्र, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी, ४, सिविल लाइन, मेरठ।	मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, बुलन्दशहर, देहरादून।
(७) श्री शिवनाथ शास्त्री, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी (पश्चिमीक्षेत्र) द्वारा सहायक सचालक, जन-स्वास्थ्य, आगरा।	आगरा, मथुरा, अलीगढ, एटा, मैनपुरी।

(८) श्री बद्रीप्रसाद पुरोहित, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी, लक्ष्मी-भवन, रानीखेत, अल्मोड़ा।	अल्मोड़ा, गढ़वाल, नैनीताल।
(९) श्री सी० एम० पटवर्धन, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी, ४५ ए, जीरो रोड, इलाहाबाद।	इटावा, कानपुर, फतेहपुर, फर्रुखाबाद, इलाहाबाद।
(१०) श्री अनवार अहमद खाँ शेरवानी, क्षेत्रीय यूनानी अधिकारी, (पूर्वीक्षेत्र) मकान संख्या १३१, गोशाला के समीप, मोहल्ला पहाड़पुर, आजमगढ़।	आजमगढ़, वाराणसी, बलिया, बस्ती, देवरिया, गोन्डा, बहराइच, सुलतानपुर, प्रतापगढ, मिर्जापुर, गोरखपुर, जौनपुर, गाजीपुर, फतेहपुर, इलाहाबाद।
(११) श्री बिन्देश्वरी प्रसाद सक्सेना, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी, ७०८, रकाबगज, फैजाबाद।	फैजाबाद, बाराबकी, बहराइच, गोन्डा, सुल्तानपुर, प्रतापगढ।
(१२) श्री रामगोपाल शर्मा, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी, १७५, लक्ष्मीगज, झाँसी।	झाँसी हमीरपुर, बान्दा, जालौन।
(१३) श्री विपिन बिहारी शास्त्री, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी, १३१, नयाटोला, शिवाजी मार्ग, बरेली।	बरेली बदायूँ बिजनौर, पीलीभीत, मुराबाद, शाहजहापुर, रामपुर।
(१४) श्री रामादत्त उनियाल, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी, द्वारा जिला स्वास्थ्य अधिकारी (नरेन्द्रनगर) टेहरी-गढवाल।	टेहरी—गढवाल।

उत्तर प्रदेश में बोर्ड द्वारा सचालित चिकित्सालय

इस प्रदेश में राज्य द्वारा सचालित आयुर्वेदिक एव यूनानी चिकित्सालय तो जनता की पर्याप्त सेवा कर रही है। साथ ही विभिन्न जिला बोर्डों तथा नगरपालिकाओ द्वारा सचालित देशी चिकित्सालय भी जनता की पर्याप्त सेवा कर रहे है। निम्नाकित आँकडे इन सस्थाओ द्वारा किये जानेवाले कार्यों पर प्रकाश डालते है—

(अ) जिला बोर्ड द्वारा सचालित चिकित्सालय—

वर्ष	चिकित्सालयो की सख्या		कुल सख्या	उपचारित रोगी सख्या
	आयुर्वेदिक	यूनानी		
१९५०–५१	२४३	३४	२७७	१७,०२ ५७६
१९५१–५२	२४३	३४	२७७	१७,५०,३६८
१९५२–५३	२२८	३४	२६२	१५,८०,६७३
१९५३–५४	२४२	३५	२७७	१९,८२,०६४
१९५४–५५	२४४	२८	२७२	२६,३४,८८५
१९५५–५६	३७९	३२	४११	३६,३७,३०७
१९५६–५७	३७९	४४	४२३	३३,४९,११५

(ब) नगरपालिकाओ द्वारा सचालित चिकित्सालय—

वर्ष	चिकित्सालयो की सख्या		कुल संख्या	उपचारित रोगियो की सख्या
	आयुर्वेदिक	यूनानी		
१९५०–५१	२२	१५	३७	८,८७,४२०
१९५१–५२	२२	१५	३७	८,६७,७२९
१९५२–५३	३७	२१	५८	८,५९,९२८

वर्ष	चिकित्सालयो की सख्या आयुर्वेदिक	यूनानी	कुल सख्या	उपचारित रोगियों की सख्या
१९५३–५४	४४	१८	६२	९,५६,१८९
१९५४–५५	४४	२७	६५	१४,७६,०६८
१९५५–५६	५२	२१	७३	१८,७४,२१०
१९५६–५७	५४	१४	६८	३३,१५,३८३

प्रदेश में श्रम विभाग द्वारा सचालित चिकित्सालय

आयुर्वेदिक एव यूनानी चिकित्सा प्रणाली द्वारा श्रमिक वर्ग की चिकित्सा सेवा करने की दृष्टि से प्रदेशीय सरकार श्रम विभाग के अन्तर्गत कतिपय आयुर्वेदिक एव यूनानी चिकित्सालय चला रही है। १९५५–५६ के वर्ष मे इन चिकित्सालयो की सख्या ७ थी। गत वर्ष १९५६–५७ मे इन चिकित्सालयो की सख्या बढा कर १० कर दी गई। इन चिकित्सालयो मे योग्यता प्राप्त वैद्य एव हकीम तथा विभिन्न कार्यों मे सहायता प्रदान करने के हेतु सहायक वैद्य, सहायक हकीम, भृत्य एव मेहतर कार्य करते है। सहारनपुर श्रमहितकारी क्षेत्र मे एक मिडवाइफ भी कार्य करती है। गत वर्ष नये तथा पुराने मिल कर कुल ४,१२,३७२ रोगियो को चिकित्सा की सुविधा प्रदान की गई। इन आँकड़ो से स्पष्ट है कि इन श्रमहितकारी केन्द्रो का कार्य सन्तोषजनक रहा है और इनके द्वारा अधिक से अधिक जनसमुदाय मे सहायता प्राप्त की है। विभिन्न चिकित्सालयो के नाम तथा उनके द्वारा उपचारित रोगियो की सख्या का विवरण नीचे दिया जा रहा है—

चिकित्सालय का नाम (आयुर्वेदिक, यूनानी)	नये रोगी	पुराने रोगी	कुल सख्या
(१) मीरपुर (कानपुर) आ०	२१,११६	४२,२४९	६३,३६५
(२) रामनारायण बाजार (कानपुर) आ०	१२,००२	२८,२५४	४०,२५६
(३) जाजमऊ (कानपुर) आ०	७,३२०	२०,८९०	२८,२१०
(४) कर्नलगज (कानपुर) यू०	२०,५५२	४८,९८२	६९,५३४
(५) खलासी लाइन (सहारनपुर) आ०	२१,३५९	१८,५७७	३९,९३६
(६) मदार दरवाजा (अलीगढ) आ०	२०,६३४	२३,३८५	४४,०१९
(७) चौबे का बाग (सहारनपुर) आ०	२८,७४६	३१,६३३	६०,३७९
(८) धौरा (झाँसी) आयुर्वेदिक	२,४०७	४,३३३	६,७४०
(९) आगरा-आयुर्वेदिक	२१,६८१	२७,५२२	४९,२०३
(१०) हाथरस-आयुर्वेदिक	५,७२५	१६,००५	२१,७३०
कुल योग —	१,५१,५४२	२,६१,८३०	४,१३,३७२

नवीन राजकीय आयुर्वेदिक एव यूनानी चिकित्सालय

शासन ने शासकीय आदेश सख्या ४७३३ बी० आई० (५–११६७) १९५० दिनाक ११-११-५७ द्वारा द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना के अन्तर्गत चालू वित्तीय वर्ष मे निम्न लिखित स्थानो पर १० नवीन चिकित्सालय स्थापित करने के लिये स्वीकृति दी है। इन ग्रामो में भवन व्यवस्था का विवरण उनके नाम के सामने दिया जा रहा है —

क्र० सं०	ग्राम का नाम	जिला	भवन व्यवस्था
(१)	बैरासकुण्ड	गढवाल	चिकित्सालय भवन-निर्माण के हेतु जनता द्वारा चन्दे से एकत्रित १०,०००) रु० की धनराशि से भवन-निर्माण कराने के आदेश जिलाधीश गढवाल को शासन की ओर से दिये जा रहे हैं। तब तक चिकित्सालय स शुल्क भवन में कार्य करता रहेगा।
(२)	देवकलिया	सीतापुर	नि शुल्क भवन प्राप्त है।
(३)	शारदन	सुल्तानपुर	नि शुल्क भवन प्राप्त है।
(४)	सोहोगीवरवा	गोरखपुर	नि शुल्क भवन प्राप्त है।
(५)	बिहारीनगर	सहारनपुर	श्री रामानन्द शास्त्री द्वारा चन्दे के धन से निर्मित चिकित्सालय भवन।
(६)	बावनमऊ	हरदोई	नि शुल्क भवन प्राप्त है।
(७)	तारापुर	मैनपुरी	नि शुल्क भवन प्राप्त है।
(८)	मगोरा	मथुरा	नि शुल्क भवन प्राप्त है।
(९)	पारस	कानपुर	नि शुल्क भवन प्राप्त है।
(१०)	सोनेचा	बाराणसी	नि शुल्क भवन प्राप्त है।

लखनऊ विश्वविद्यालय का प्रथम आयुर्वेदिक स्नातक

वर्तमान आयुर्वेदिक कालेज की स्थापना अगस्त १९५४ में हुई थी। इससे पूर्व भी राज्य की ओर से लखनऊ मेडिकल कालज के अन्तर्गत बी० एम० बी० एस० की उपाधि प्रदान करने के हतु एक राजकीय आयुर्वेदिक कालेज की स्थापना की गई थी। कुछ कारणवश इस कार्य मे सफलता प्राप्त न हो सकी। २० सितम्बर १९५२ को एक सामयिक आदेश द्वारा इस कालेज के उन छात्रो को जो साइन्स लेकर इटर पास थे, एम० बी० बी० एस० मे विलीन कर दिया गया। उस समय १८९ बी० एम० बी० एस० पाठ्यक्रम के छात्रो का एम० बी० बी० एस० मे विलीनीकरण हुआ। केवल दिनकर गोविन्द थत्ते नामक एक ही छात्र का विलीनीकरण न हो सका। अब श्रीथत्ते ने अक्तूबर, १९५७ की अन्तिम परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है। वे लखनऊ विश्वविद्यालय के प्रथम आयुर्वेदिक स्नातक है।

माननीय स्वास्थ्य मन्त्री के दान-कोष से सहायता

राजकीय औषधि निर्माणशाला के चपरासी स्व० राम-आसरे सूर्य की अकालमृत्यु गत वर्ष हुई थी। वे अपने पीछे नव-विवाहित पत्नी व एक छोटा बालक छोड गये थे। उनके रोगोपचार के सम्बन्ध मे उनकी पत्नी ऋणी हो गई थी। अत उनकी प्रार्थना पर सरकार ने माननीय स्वास्थ्य मन्त्री के दान-कोष से उन्हे ऋण-मुक्त होने के लिये १००) रु० की राजकीय सहायता प्रदान की है।

विकास खण्डो में स्थित राजकीय चिकित्सालय

शासन की ओर से स्थापित होनेवाले विकास क्षेत्रो में केवल एलोपैथिक चिकित्सालय ही स्थापित करने की शासन की वर्तमान नीति के अनुसार किसी भी क्षेत्र मे विकास खण्ड स्थापित करते समय वहाँ पूर्व स्थित राजकीय आयुर्वेदिक एव यनानी चिकित्सालयो को स्थानान्तरित करने का प्रश्न सामने आ जाता था। कुछ देशी चिकित्सालयो के अपने निजी भवन आदि होने के कारण उन्हे स्थानान्तरित करने में बाधा उपस्थित होती थी। अत शासन के सम्मुख यह प्रश्न विचाराधीन था कि विकास खण्ड स्थापित करते समय वहाँ पर राजकीय देशी चिकित्सालयो को स्थानान्तरित किया जाय अथवा नही। शासन ने इस पर पूर्णरूपेण विचार-विमर्श के उपरान्त राजाज्ञा सख्या ४५७४बी।५।१४८६। १९५४ दिनाक १९-११-५७ ई० द्वारा आदेश दिया है कि

जिन क्षत्रो मे अब विकास खण्ड स्थापित किय जायेंग वहा से पूर्व स्थापित राजकीय देशी चिकित्सालय का स्थानान्तरण अन्यत्र न किया जायगा।

इसी तथ्य के आधार पर राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय चदवक जिला जौनपुर को जिसके स्थानान्तरण का प्रश्न नियोजन विभाग द्वारा उठाया जा रहा था अब पूववत चदवक मे रखन के लिय ही सचालक चिकित्सा एव स्वास्थ्य उत्तर प्रदेश लखनऊ न अपन आदेश दिय है।

इसी प्रकार गत दो मास पूव राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय अन्तू जिला प्रतापगढ को वहा से स्थानान्तरित करन का प्रश्न स्थगित कर दिया था।

आयुर्वेदिक एव यूनानी महाविद्यालयो को अनुदान

माह नवम्बर १९५७ म ललितहरि आयुर्वेदिक कालज पीलीभीत को १५ ०००) रु० का अनदान प्रदान किया गया। इसके पूव इस वित्तीय वष म प्रदेश के विभिन्न आयुर्वेदिक एव यूनानी महाविद्यालयो को १ ८४ ०००) रु० का अनुदान प्रदान किया जा चुका है। इस प्रकार अब तक इस मद से कुल १ ९९ ०००) रु० की धनराशि अनुदान के रूप मे चालू वित्तीय वष मे प्रदान की जा चुकी है।

निजी वैद्य-हकीम तथा सस्थाओं को राजकीय अनुदान

माह नवम्बर सन १९५७ को माननीय स्वास्थ्य मन्त्री के विवकाधीन मद से निजी वैद्य हकीम तथा सस्थाओ को ६००) रु० की राजकीय सहायता दी गई। माह अक्तूबर के अन्त तक इस मद से १०३७५) रु० की राजकीय सहायता दी जा चकी थी। फलत माह नवम्बर ५७ के अन्त तक कुल स्वीकृत अनुदान की धनराशि १०९७५) रु० हो जाती है।

राजकीय औषधि निर्माणशाला

माह न्वम्बर १९५७ से सम्बन्धित औषधि निर्माण शाला के कार्यो का प्रगति विवरण निम्नानुसार है—

निर्माणशाला म निर्मित औषधियो की सख्या	४८
उन चिकित्सालयो की सख्या जहा औषधिया भजी गइ	१०१
उन चिकित्सालयो की सख्या जहा साज-सज्जा तथा उपकरण भजा गया	२
उन औषधियो की सख्या जिनका निर्माणशाला से सम्बद्ध प्रयोगशाला म रासायनिक विश्लषण हुआ	३

सचित्र आयुर्वद के अबतक प्रकाशित सभी विशेषांकों से अधिक महत्वपूर्ण और उपयोगी विशेषांक

आयुर्वेद-यूनानी समन्वयांक

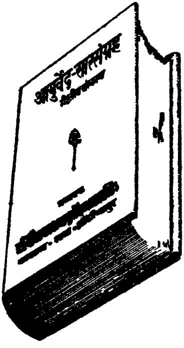
आगामी मई-जून १९५८ में प्रकाशित होने जा रहा है।

लेखकगण शीघ्र लेख भेजना प्रारम्भ करें

आरोग्य, स्वच्छता और चिकित्सा पर श्रेष्ठ ग्रन्थ

भारत प्रसिद्ध "श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०" के मैनेजिंग डायरेक्टर वैद्यराज पण्डित रामनारायण शर्मा आयुर्वेदोपाध्याय ने ५-६ वर्षों में बड़ी मिहनत से इस ग्रन्थ को स्वय लिखा है। ग्रन्थ का एक-एक वाक्य हजारो रुपये का काम देता है। इसके ११वें सस्करणो तक १,०८००० प्रतियाँ छपकर बिक चुकी है और १२वे सस्करण मे २० हजार प्रतियाँ फिर छापी जा रही हैं। इसीसे इसकी लोकप्रियता और उपयोगिता स्पष्ट मालूम होती है। प्रचार की दृष्टि से मूल्य भी बहुत कम रखा गया है। मूल्य २), डाकखर्च ।।=)





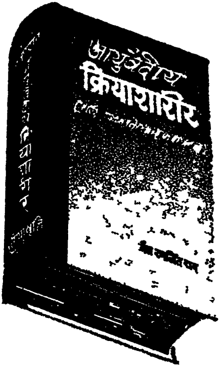
हिन्दी में ऐसी आयुर्वेदीय पुस्तको की बडी कमी थी, जिनमें रोग-विचार के साथ चिकित्सा, औषध निर्माण, अनुपान, पथ्यापथ्य आदि का विवरण समझा कर सरल भाषा में एकत्र दिया गया हो। इससे सर्वसाधारण पाठको के सामने बहुत दिक्कतें आती थी। प्रस्तुत पुस्तक में आयुर्वेद-साहित्य की इसी कमी को दूर करने का प्रयत्न किया गया है। "श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०" द्वारा बनाई जाने-वाली प्राय सभी दवाओ की निर्माण विधि तथा उनके गुण धर्म और प्रयोगविधि के साथ साथ वैद्योपयोगी बातो का वर्णन सरल हिन्दी भाषा में किया गया है। मूल्य—७) मात्र।

प्रकाशक

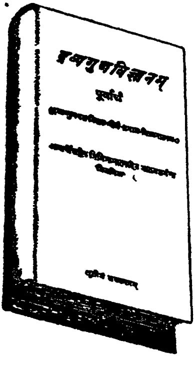
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

आयुर्वेद-विज्ञान के अनुपम ग्रन्थरत्न

शास्त्रीय विवेचन, सुग्राह्य शैली और प्रामाणिक सिद्धान्तो के एकत्रीकरण से गागर में सागर भरने की लोकोक्ति चरितार्थ हो गई है



आयुर्वेद-जगत के सुख्यात वैद्य श्री रणजितराय न इस ग्रन्थ के प्रणयन द्वारा आयुर्वेद-साहित्य के एक बहुत बड अभाव की पूर्ति की है। इसलिए मदनमोहन लाल आयुर्वेदीय रिसर्च इन्स्टीच्यूट न एक हजार रुपये पारितोषिक के रूप में देकर इस ग्रन्थ को समादृत किया है। शारीर शास्त्र सम्बन्धी प्राचीन और अर्वाचीन सिद्धान्तो का तुलनात्मक विवचन इस पुस्तक की विशषता है। इस एक ही पुस्तक में प्राचीन और अर्वाचीन उभय क्रियाशारीर-पद्धति को सामन रखन का पूण प्रयास किया गया है। साथ ही विषय को व्यावहारिक रूप देन के लिये स्थान-स्थान पर रोगों के निदान और चिकित्सा का भी उल्लेख है जिससे पुस्तक की उपयोगिता और बढ गई है। नयनाभिराम कवर सुन्दर गटअप और पक्की जिल्द युक्त ११०० पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य लागत मात्र ११)।



आयुर्वेदीय-साहित्य में द्रव्यगुण विवचन सूत्ररूप में यत्र-तत्र बिखरे हुए पाय जाते है। आयुर्वेद तत्त्ववत्ता पूज्यपाद स्व० आचाय यादवजी त्रिकमजी वैद्य न उन्ही सूत्रो का क्रमबद्ध सकलन करके रस-गुण-वीय विपाक और प्रभाव आदि पृथक-पृथक पाँच अध्यायो द्वारा सस्कृत हिन्दी उभय भाषाओ में एसा सरल सागोपाग विवचन किया है जो आयुर्वेद विज्ञान को समझन के लिए बहुत लाभदायक है। विशषकर आयुर्वेद के अध्यापको छात्रो तथा छात्रोपयोगी पाठय-ग्रन्थ निर्माणकर्त्ताओ को इस ग्रन्थ के द्वारा आयुर्वेद-विज्ञान की मूलभित्ति द्रव्य-गुण-शास्त्र का विस्तृत ज्ञान सरलता से प्राप्त हो सकेगा। स्नातको के शिक्षण के लिये भी यह ग्रन्थ अत्युपयोगी है। डबल डिमाई १६ पेजी ४०० पृष्ठो की पुस्तक का मूल्य लागतमात्र ४॥) है।

प्रकाशक

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

— १, गुप्ता लेन, कलकत्ता – ६ —

आयुर्वेदीय व्याधि-विज्ञान

(पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध)

किसी रोग की चिकित्सा के पूर्व रोग का निदान परमावश्यक है। रोग के सम्यक् निर्णय के बिना कदापि रोगी की सफल चिकित्सा नही हो सकती। इसलिये व्याधि-विज्ञान (रोग-निदान) आयुर्वेद का एक प्रधान विषय है। इस 'आयुर्वेदीय व्याधि विज्ञान' की रचना आयुर्वेद-मार्तण्ड वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य ने की है और व्याधि विज्ञान के साधनो और व्याधियो के सम्बन्ध मे सभी ज्ञातव्य बातो का बडे सुन्दर और सरल ढग से विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थ का पूर्वार्द्ध तो कई वर्ष पहले ही छप चुका था और सर्वत्र उसका यथेष्ठ समादर हुआ था, किन्तु इस ग्रन्थ के उत्तरार्द्ध के लिये वैद्य-समाज की ओर से जबर्दस्त माग की जा रही थी।

अब 'आयुर्वेदीय व्याधि-विज्ञान' का उत्तरार्द्ध खण्ड भी प्रकाशित हो गया है और इस प्रकार वैद्य-समाज की एक जबर्दस्त माग की पूर्ति हो गयी है। इसके प्रत्येक अध्याय मे विविध रोगो, यथा—ज्वर, महास्रोत रोग, उरोगत रोग, रक्तपित्त, पाण्डु, शोथ, व्रण, विसर्प, वृद्धि, भग्न-निदान, गलगण्ड, गण्डमाला, कुष्ठ आदि के लक्षण, निदान, चिकित्सा आदि पर सरल भाषा मे पाण्डित्यपूर्ण विवेचन किया गया है। आयुर्वेदीय अध्यापको और विद्यार्थियो के साथ-साथ वैद्यो के लिये भी यह ग्रन्थ अत्यन्त आवश्यक है।

मूल्य :—पूर्वार्द्ध का २।।) और उत्तरार्द्ध का ६), डाक-खर्च पृथक्

अपनी प्रति आज ही सुरक्षित करा लें

प्रकाशक

श्री बैद्यनाथ

आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

रजिस्ट्रेशन आफ न्यूजपेपस (सेण्ट्रल) रूल्स १९५६ के ८ व नियम के अन्तगत सचित्र आयर्वेद नामक मासिक पत्रिका के स्वामि व एव अन्य विषयो के सम्ब घ म विवरण ।

फार्म ४

१ प्रकाशन का स्थान	कलकत्ता
२ प्रकाशन का अवधिक्रम	प्रति मास
३ मुद्रक का नाम	प० समाकान्त झा शास्त्री निमित्त स्व वाधिकारी श्री बद्यनाथ आयवद भवन प्राइवट लिमिटड
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	३६ बाराणसी घोष स्टीट कलकत्ता ७
४ प्रकाशक का नाम	प० समाकान्त झा शास्त्री निमित्त स्वत्वाधिकारी श्री बद्यनाथ आयवद भवन प्राइवट लिमिटड
राष्टीयता	भारतीय
पता	३६ बाराणसी घोष स्ट्रीट कलकत्ता ७
५ सम्पादक का नाम	प० कामेश्वर शर्मा कमल
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	१ गप्ता लन कलकत्ता–६
६ उन शयर होल्डरो के नाम और पते जिनके पास कुल पजी के १ प्रतिशत से अधिक के शयर ह	प० रामदयाल जोशी ग्राम कासली पो० कोटपुतनी जयपुर । प० रामनारायण वद्य १ गप्ता लन कलकत्ता ६ । श्रीमती भूरी देवी ग्राम-श्यामपुरा पो० बानसुर अलवर । श्री बनवारी लाल शर्मा १५६-सी हरीसन रोड कलकत्ता–७ । प० शिवनारायण एग्लो-सस्कृत विद्यालय ग्र म कासली जयपुर । श्रीमती विमला देवी ४ कृष्णाश्रम मरादाबाद । श्रीमती सुशीला देवी पुरानीमण्डी नारनौल । श्री दुर्गाप्रसाद शर्मा बद्यनाथ भवन रोड पटना १ श्री रामावतार शर्मा ३६ बाराणसी घोष स्ट्रीट कलकत्ता ७ श्री रमाकान्त शर्मा कदमकुआ पटना श्रीमती कमला देवी ३६ बाराणसी घोष स्ट्रीट कलकत्ता । श्री हजारीलाल शर्मा च द्रगप्त पथ पटना । श्री विश्वनाथ शर्मा बस्ती (उत्तरप्रदेश) श्री वृज द्र कुमार शर्मा ग साइपुरा झासी । श्री शिवनाथ शर्मा महाल नागपुर । श्री रामकृष्ण शर्मा बद्यनाथ भवन रोड पटना–१ श्री सुरेश कुमार शर्मा गसाइपुरा झासी । श्री रमेश कुमार शर्मा गसाइपुरा झासी । श्रीमती स्नहलता देवी गसाइपुरा झाँसी । श्री राजश्वर प्रसाद शर्मा च द्रगुप्त पथ पटना ।

मै समाकान्त झा शास्त्री यह घोषित करता हू कि ऊपर दिए गय सभी विवरण जहाँ तक म जानता हूँ तथा मेरा विश्वास है सत्य है ।

१ मार्च १९५८ प्रकाशक का हस्ताक्षर (समाकान्त झा शास्त्री)



इन्हें रोकिये

ये शरीर के बड़े दुश्मन हैं। आप की थोड़ी-सी लापरवाही का नतीजा आप के लिए बहुत बुरा हो सकता है।

इन दुश्मनों से बचे रहने और शरीर को बलिष्ठ बनाये रखने के लिये कम से कम जाडे भर इस महारसायन का सेवन करें और पूरे वर्ष तक बलवीर्य से परिपूर्ण रहें।

बैद्यनाथ च्यवनप्राश

अष्टवर्गयुक्त

SHREE BAIDYANATH AYURVED BHAWAN LTD. CALCUTTA

बैद्यनाथ

देशी दवाओं का सब से बड़ा

और विश्वासी कारखाना

'सचित्र आयुर्वेद' के पाठकों को सूचना

भारत की निजस्व चिकित्सा-पद्धति—आयुर्वेद के विकास और प्रतिसस्कार के साथ-साथ राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति के गौरवपूर्ण आसन पर आयुर्वेद को पुन प्रतिष्ठित कराने की दिशा में "सचित्र आयुर्वेद" पिछले १८ वर्षों से पूरी सचाई, ईमानदारी तथा लगन के साथ सलग्न है। 'सचित्र आयुर्वेद' का एकमात्र लक्ष्य आयुर्वेद-पद्धति को राष्ट्रीय चिकित्सा के रूप मे मान्य कराना एव वैद्य समुदाय के सामाजिक और आर्थिक स्तर को समुन्नत बनाना है। इस लक्ष्य की पूर्ति की दिशा म 'सचित्र आयुर्वेद' शुरू से ही प्रयत्न करता आ रहा है और अपने कर्तव्य-पथ पर अविचलित रहने के लिए कृतसकल्प है। अब इस तथ्य को सर्वत्र स्वीकार किया जा चुका है कि आयुर्वेद और यूनानी चिकित्सा-पद्धति म विशेष पार्थक्य नही है और यूनानी पद्धति का मूल आयुर्वेद ही है। सरकार ने भी आयुर्वेद-यूनानी को एक ही भारतीय चिकित्सा-पद्धति स्वीकार की है। अतएव, इन दोनो पद्धतियो के सम्बन्ध म विशद विवेचन होना वाछनीय है।

आयुर्वेद-यूनानी पद्धतियो के पारस्परिक महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध को ध्यान मे रखकर **'सचित्र आयुर्वेद' का एक विशेषाक आगामी मई—जून '५८** में प्रकाशित किया जा रहा है, जिसमें उभय चिकित्सा-पद्धतियो के समन्वयात्मक स्वरूप के विषय पर देश के प्रमुख विद्वानो के विवेचनात्मक निबन्ध प्रकाशित किए जायेंगे। इस विशेषाक के सम्बन्ध मे विस्तृत सूचना इसी अक में प्रकाशित की जा रही है। 'सचित्र आयुर्वेद' के सभी ग्राहको को यह विशेषाक मुफ्त दिया जायगा। अतएव, जिन ग्राहको के चन्दे का रुपया अबतक कार्यालय मे नही आया है, वे अविलम्ब रुपया भेजकर ग्राहक बन जायें तथा इस महत्त्वपूर्ण विशेषाक की प्राप्ति को सुनिश्चित बना लें।

ग्राहकों से अनुरोध

'सचित्र आयुर्वेद' के सभी ग्राहकों के पास हम नये वर्ष का सुन्दर बहुरगा कैलेण्डर भेज चुके हैं। फिर भी ग्राहकों से आये दिन हमे इस बात की शिकायत मिलती रहती है कि उनके पास अब तक कैलेण्डर नही पहुँचा। अतएव, ग्राहकों से अनुरोध है कि वे हमारे पास शिकायती पत्र लिखने के पूर्व अपने इलाके के डाकघर मे कैलेण्डर की तलाश कर लिया करे। चूकि, हमारे पास अब कैलेण्डर नहीं रह गये हैं, अतएव ग्राहकों को दुबारा कैलेण्डर देने में हम असमर्थ हैं।

— व्यवस्थापक

आयुर्वेदीय व्याधि-विज्ञान

(पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध)

किसी रोग की चिकित्सा के पूर्व रोग का निदान परमावश्यक है। रोग के सम्यक् निर्णय के बिना कदापि रोगी की सफल चिकित्सा नही हो सकती। इसलिये व्याधि-विज्ञान (रोग-निदान) आयुर्वेद का एक प्रधान विषय है। इस 'आयुर्वेदीय व्याधि विज्ञान' की रचना आयुर्वेद-मार्तण्ड वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य ने की है और व्याधि विज्ञान के साधनो और व्याधियो के सम्बन्ध मे सभी ज्ञातव्य बातो का बडे सुन्दर और सरल ढग से विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थ का पूर्वार्द्ध तो कई वर्ष पहले ही छप चुका था और सर्वत्र उसका यथेष्ठ समादर हुआ था, किन्तु इस ग्रन्थ के उत्तरार्द्ध के लिये वैद्य-समाज की ओर से जबर्दस्त माग की जा रही थी।

अब 'आयुर्वेदीय व्याधि-विज्ञान' का उत्तरार्द्ध खण्ड भी प्रकाशित हो गया है और इस प्रकार वैद्य-समाज की एक जबर्दस्त माग की पूर्ति हो गयी है। इसके प्रत्येक अध्याय मे विविध रोगो, यथा—ज्वर, महास्रोत रोग, उरोगत रोग, रक्तपित्त, पाण्डु, शोथ, व्रण, विसर्प, वृद्धि, भग्न-निदान, गलगण्ड, गण्डमाला, कुष्ठ आदि के लक्षण, निदान, चिकित्सा आदि पर सरल भाषा मे पाण्डित्यपूर्ण विवेचन किया गया है। आयुर्वेदीय अध्यापको और विद्यार्थियो के साथ-साथ वैद्यो के लिये भी यह ग्रन्थ अत्यन्त आवश्यक है।

मूल्य :—पूर्वार्द्ध का २।।) और उत्तरार्द्ध का ६), डाक-खर्च पृथक्

अपनी प्रति आज ही सुरक्षित करा ले

प्रकाशक

श्री बैद्यनाथ

आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि॰

'सचित्र आयुर्वेद' के अबतक प्रकाशित सभी विशेषांकों की अपेक्षा अधिकतर महत्वपूर्ण, उपयोगी और सामयिक विशेषांक

आयुर्वेद-यूनानी समन्वयांक

सचित्र आयुर्वेद के आगामी महत्वपूर्ण विशेषांक—**आयुर्वेद-यूनानी समन्वयांक**—के प्रकाशन के सम्बन्ध मे हम आयुर्वेद-जगत् एव अपने पाठकों को गताकों मे ही सूचना दे चुके हैं। यह विशेषाक आगामी मई-जून १९५८ मे पूरे सजधज के साथ प्रकाशित होने जा रहा है। अतएव विद्वत्समाज से हमारा अनुरोध है कि निम्नलिखित विषय-तालिका मे से किसी एक विषय पर उच्चकोटि का निबन्ध लिख भेजने का प्रयत्न करे। एक विषय पर अनेक लेख और अनेक विषयों पर एक भी लेख नही, ऐसी स्थिति की उत्पत्ति को रोकने के लिए यह वाछनीय है कि जिस विषय पर लिखने की इच्छा हो, उसकी पूर्व सूचना हमे अविलम्ब प्रदान कर दी जाय ताकि किसी विषय का पिष्ट-पेषण होने की आशका नहीं रह जाय और विद्वानों द्वारा लिखित लेखों को उचित रूप मे प्रकाशित किया जा सके। हमे पूर्ण विश्वास है कि विद्वत्समाज के सहयोग से हम यह सामयिक विशेषाक भी अपनी परम्परा के अनुकूल ठोस एव महत्वपूर्ण सामग्रियों के साथ प्रकाशित करने मे सफल हो सकेगे। लेखको से प्रार्थना है कि वे अपनी रचनाएँ शीघ्रातिशीघ्र प्रेषित कर आयुर्वेद की उन्नति मे सक्रिय अश ग्रहण करे।

आयुर्वेद-यूनानी समन्वयाङ्क की विषय-सूची

१ समन्वय के विषय मे विवरण करने से पूर्व, 'यूनानी शब्द का वास्तविक भाव क्या है तथा यूनानी वैद्यक या तिब किसे कहते हैं' इस विषय का विवरण आवश्यक है।

२ यूनानी वैद्यक के क्रमविकास का सक्षिप्त इतिवृत्त और उस पर आर्यवैद्यक का प्रभाव।

३ यूनानी पद्धति से आधुनिक पाश्चात्य वैद्यक (डॉक्टरी) की उत्पत्ति एव परिबृहण अर्थात् यूनानी वैद्यक ही आधुनिक पाश्चात्य वैद्यक की आधारशिला है इसका निरूपण।

४ आज भारतवर्ष मे इन तीनो की स्थिति—उसका हेतु।

५ समन्वय का भाव—प्रमेयो मे भेद होने के कारण तथा यथार्थ समन्वय का स्वरूप एव विधि।

६. समन्वय का प्रयोजन या हेतु—आवश्यकता—समय की पुकार।

७ समन्वय का आधार—क्रियात्मक रूपमे एकता—समानशीलता, समशीलता—'समशीले व्यसनेषु सख्यम्'

(१) उत्पत्ति विषयक समानता—एक स्रोतकालोद्भूतता, प्राचीनता आदि विषयक समानता—दोनो की उत्पत्ति के दो भेद रूप समानता—(अ) अपौरुषेयत्व, अनादित्व या इलहाम। (ब) क्रमिकविकास।

(२) दोनो के सिद्धान्तो (प्रमेयो) की समानता—प्रमेयो का अभ्यास करते समय दोनो के प्रमेय समानशील—प्रमुख समानशील का निर्देश।

(क) दोनो ही हेतुव्याधि विपरीत (प्रत्यनीक) चिकित्सा पद्धति (एलाज बिज्जिद)।

(ख) दोनो के ज्ञान साधन (प्रमाण) समान—प्रत्यक्ष और अनुमान आदि। परिस्थिति और प्राप्त ज्ञान साधन-सामग्री की, जिनसे प्रमेयो मे भेद होता है, समानता।

(ग) दोनो ही पथ्यप्रधान चिकित्सा पद्धतियाँ हैं।

(घ) दोनो मे ससार की हर एक वस्तु को औषध रूप से प्रयोग करने का निर्देश है—इसमे भी यूनानी से आयुर्वेद का महत्त्व है।

(ङ) दोनो पद्धति मे आज के अनुभूत रासायनिक एव भौतिक परीक्षणो का उपयोग कम होता है। वनस्पति का अधिक होता है।

(च) दोनो में जीवमान प्राणी, विशेषत मनुष्य के ऊपर होनेवाले औषधियो के परिणामो का विचार करके चिकित्सा निश्चित की जाती है।

(छ) दोनो मे कायचिकित्सा मे और शल्य-शालाक्य आदि चिकित्सा मी हेतु, सम्प्राप्ति, लक्षण और चिकित्सा आदि के विषय मे समान प्रकार की कल्पनाएँ तैयार होती है अर्थात् दोनो मे इनकी समानता पायी जाती है। दोनो मे इन कल्पनाओ का आधार प्रत्यक्ष प्रत्ययो पर न कि जड उपकरण प्राप्त रासायनिक एव भौतिक प्रयोगो से प्राप्त प्रत्ययो पर होता है।

(ज) दोनो की उपयोगिता की समानता आदि।

(८) समन्वय का स्वरूप—रूपरेखा—

(क) चिकित्सा पद्धतियो मे भेद होने के मूलभूत कारण और यथार्थ समन्वय का स्वरूप तथा उसकी विधि—भाषाभेद, आवश्यकता भेद।

(ख) प्रथम समन्वय आयुर्वेद से आयुर्वेद का।

(ग) द्वितीय समन्वय यूनानी से यूनानी का।

(घ) अन्तिम समन्वय आयुर्वेद से यूनानी का—आयुर्वेद से आधुनिक पाश्चात्य वैद्यक का समन्वय करने के पूर्व आयुर्वेद से यूनानी का समन्वय अनिवार्य है। बिना इसके आयुर्वेद और एलोपैथी का समन्वय अपूर्ण होगा।

(९) समन्वय मे बाधा और उसके हेतु—

(क) भाषा की भिन्नता,

(ख) पृथक् रहकर विकास पाना,

(१०) समन्वय के विषय—

अष्टाङ्ग आयुर्वेद—आयुर्वेद के आठो अगो अर्थात् समस्त विषयो का विषय क्रमानुसार यूनानी के साथ समन्वय के विषय है। नीचे उनमें से कुछ का नामोल्लेख किया गया है—

आधारभूत सिद्धान्त—सामान्य और विशेष—

पदार्थ विज्ञान—(क) महाभूत आदि (वात, पित्त, कफ, रक्त)।

शारीर—(क) रचना शारीर या शारीर (तशरीह—एनाटॉमी), (ख) क्रिया शारीर—दोष (त्रिदोष या चतुर्दोष), धातु (और उपधातु) तथा मलविज्ञान (उमूर तबीइय्या—फिजियोलॉजी)।

रोग विज्ञान—विकृति विज्ञान (पैथोलॉजी)

निदान—हेतु रोग परीक्षा तथा इसके साधन।

लक्षण—

चिकित्सा—मुख्य दो भाग—

(१) कायचिकित्सा—औषध

उपभाग— अग— द्रव्यगुण विज्ञान (निघण्टु),
रसशास्त्र (रसायन)
उपाग—भैषज्य कल्पना

पञ्चकर्म—सशोधन (इस्तिफ़राग),
रक्तमोक्षण (फस्द)

(२) शल्य-शालाक्य—शवच्छेदन, शस्त्रकर्म आदि

प्रसूति तन्त्र (मिडवाइफ़री)

(११) दोनो मे यत्किञ्चित भिन्नता के हेतु—

(अ) देश-काल-प्रकृति आदि की भिन्नता,

(ब) पृथक् पृथक् या स्वतन्त्रतया विकास पाना,

(स) साधनो का अभाव।

(१२) पारस्परिक वैशिष्य

(अ) यूनानी से आयुर्वेद का वैशिष्य,

(ब) आयुर्वेद से यूनानी का वैशिष्य।

(१३) आयुर्वेद के प्रतिसस्कार, परिबृहण, आपूरण और समयोपयोगी पूर्ण कार्यक्षम बनाने के हेतु समन्वय-पूर्वक यूनानी विशेषताओ का आयुर्वेद मे ग्रहण—

ग्रहण के हेतु—

(अ) आयुर्वेद की अपूर्णता,

(ब) 'नानौषधिभूत' इस आयुर्वेद वचन के पालनार्थ,

(स) विद्या और विज्ञान किसी की बपौती नही—यूनानी वैद्यक मे समय-समय पर आयर्वेद का बहुलाश में ग्रहण हुआ है।

(१४) आयुर्वेद-यूनानी अर्थात देशी वैद्यक के अधिक उपयोगी एव आरोग्यकारी होने के प्रमाण।

१५ आयुर्वेद-यूनानी पद्धति से समन्वयात्मक पाठ्यग्रन्थ की रूप-रेखा जो एक-दूसरे की विशेषता जानने के लिए वैद्यो और हकीमो को समानरूप से लाभप्रद हो।

१६ आयुर्वेदीय और यूनानी निघण्टुओ की विशेषता।

१७ आयुर्वेदीय और यूनानी-पारिभाषिक संज्ञाओ की तुलनात्मक नाम-सूची।

१८ रोग विशेष मे वैद्यो और हकीमो द्वारा प्रयुक्त आयुर्वेद और यूनानी मिश्रित आनुभविक योग।

१९ आयुर्वेद और यूनानी चिकित्सा-पद्धति का चिरकालीन पारस्परिक सम्बन्ध के विषय मे ख्याति प्राप्त विद्वानो के विचार।

२० आयुर्वेद-यूनानी का समन्वयात्मक दृष्टिकोण रखते हुए इसकी उन्नति के लिए प्रयत्नशील वैद्यो-हकीमो (जैसे हकीम अजमल खाँ, आचार्य यादवजी आदि) के सचित्र सक्षिप्त परिचय, उनकी कृति तथा उनके द्वारा प्रयुक्त समन्वयात्मक सुप्रसिद्ध योग।

२१ आयुर्वेद मे तीन दोष (वात, पित्त, कफ) और यूनानी में चार दोष—(वात, पित्त, कफ और रक्त) होने का कारण।

२२ केन्द्रीय या प्रान्तीय सरकारो द्वारा साहाय्य प्राप्त आयुर्वेद और यूनानी बोर्डों के सक्षिप्त परिचय, प्रगति एव वर्तमान स्थिति।

द्रष्टव्य —

(१) पूरी तालिका का भली-भाँति मनन करने के बाद अपने विवेच्य विषय का चुनाव करे।

(२) उपर्युक्त सभी विषय पृथक्-पृथक् विवेचन की अपेक्षा रखते है। प्रत्येक विषय के अन्तर को समझते हुए अपनी रचना प्रस्तुत करे।

(३) जिस विषय का जितना क्षेत्र है, उसीमे सीमित रह कर अपने विचार व्यक्त करे।

(४) विषय-तालिका मे प्रदत्त विषयो के अलावा भी आयुर्वेद-यूनानी के समन्वय के विषय पर महत्वपूर्ण लेख स्वीकार किए जायँगे।

(५) सचित्र रचनाओ को सर्वाधिक महत्व दिया जायगा।

(६) हिन्दी या अंग्रेजी या सस्कृत भाषा मे अपना लेख भेजने की लेखको को पूरी स्वतन्त्रता है, लेकिन यदि कोई विद्वान उर्दू मे भी लिखना चाहे तो वे अपना लेख उर्दू भाषा मे भी लिख कर भेज सकते है।

(७) पेन्सिल से या अस्पष्ट अक्षरो मे लिखे गये लेख स्वीकार नही किए जायँगे।

(८) किस लेख का कितना क्षेत्र है, इसकी जानकारी पत्र लिख कर प्राप्त कर ले।

(९) रचनाएँ निम्नलिखित किसी भी पते पर भेजी जा सकती है —

पं० कामेश्वर शर्मा, 'कमल', सम्पादक,
सचित्र आयुर्वेद, १, गुप्ता लेन, कलकत्ता–६

हकीम ठाकुर बलजीत सिंहजी, विशेष सम्पादक,
आयुर्वेद-यूनानी समन्वयाक, सचित्र आयुर्वेद,
चुनार आयुर्वेद-यूनानी औषधालय, पो०–चुनार,
जिला–मिर्जापुर।

सम्पादक—पं० कामेश्वर शर्मा 'कमल'

विषय-सूची

वार्षिक मूल्य ५)

एक प्रति ।।) (५० नये पैसे)



प्राग्ज्योतिषपुर (गौहाटी) म अनष्ठित र ष्ट्रीय काग्रस के अधिवेशन के अवसर पर आयोजित खादी ग्रामोद्योग प्रदर्शिनी म श्री बद्यनाथ आयुवद भवन प्रा० लि० का भव्य प्रदशन कक्ष। (बाए) दर्शकों की टोलिया प्रदशन कक्ष देखकर जा रही ह और (दाए) काग्रस कायसमिति के सदस्य सेठ गोविन्ददास मालपाणी तथा मध्यप्रदेश के उपमत्री श्री जगमाहन दासजी प्रदशन कक्ष का निरीक्षण कर रहे ह।



बैद्यनाथ प्रदर्शन कक्ष म मद्रास के राज्यपाल श्री विष्णुराम मेधी तथा असम काग्रस के प्रमुख नता श्रा सिद्धिनाथ शर्मा।



भारत सरकार के वाणिज्य उद्याग मत्री श्री मुरारजी दसाई बैद्यनाथ प्रदशन कक्ष म बैद्यनाथ औषधियो की गणवता के विषय म अपन अभिमत प्रकट करते दिखायी दे रह है।

आयुर्वेद-जगत् में सर्वजन-समादृत और सर्वाधिक बिक्री होनेवाला आयुर्वेद-विज्ञान का प्रमुख-मासिक पत्र

सचित्र आयुर्वेद

आयुःकामयमानेन धर्मार्थसुखसाधनम् । आयुर्वेदोपदेशेषु विधेयः परमादरः ॥

वर्ष १०	कलकत्ता, मार्च, १९५८	अंक ९

चेचक का निरोध और चिकित्सा

आजकल बगाल-बिहार मे मसूरिका (चेचक) का प्रकोप यत्र-तत्र हो रहा है। ऐसी आशका है कि आगामी महीनो म इसका प्रकोप विशेष रूप से बढ सकता है। इस सम्बन्ध मे जैसा एलोपैथी वाले चेचक-निरोधक टीका लगाते है, उसी तरह आयुर्वेदिक मतानुसार चेचक-निरोधक औषधि तथा चेचक हो जाने पर चिकित्सा एव उपचार के सम्बन्ध मे निश्चित औषधि की व्यवस्था की जाये। विगत शीतज्वर-प्रकोप के समय बिहार के स्वास्थ्य-मन्त्री के परामर्श से हम लोगो ने आयुर्वेदिक पद्धति से शीतज्वर-निवारण के सम्बन्ध मे जैसा प्रयास किया, उससे आयुर्वेद को बहुत सफलता और श्रेय मिला। इसी तरह चेचक के सम्बन्ध मे बिहार के स्वास्थ्य मन्त्री की इच्छा है कि चेचक-निरोध के लिए भी आयुर्वेद का आश्रय लिया जाये। इसके लिए निकट भविष्य मे एक प्रेस-कान्फ्रेन्स बिहार सरकार की तरफ से होने जा रही है। अत वैद्य-बन्धुओं से अनुरोध है कि वे अपने अनुभव इस सम्बन्ध मे अविलम्ब भेजें, ताकि प्रेस कान्फ्रेन्स में उक्त विचार उपस्थित किये जा सके और तदनुसार चेचक-निरोधक कार्य आरम्भ कर दिया जाये। अगर हमारा यह अभियान सफल हुआ तो जन-कल्याण के साथ-साथ आयुर्वेद की भी बहुत बडी ख्याति होगी। आशा है, वैद्य-बन्धु आयुर्वेद की प्रतिष्ठा के लिये अति शीघ्र अपना अनुभव भेज कर हमें कृतार्थ करेंगे।

वैद्य दुर्गाप्रसाद शर्मा
श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लिमिटेड, पटना—१

डॉ० अनन्तानन्द आयुर्वेदालंकार का संक्षिप्त परिचय

'सचित्र आयुर्वेद' के नवम् वर्ष के दौरान मे प्रकाशित लेखो मे से गुरुकुल कागडी विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डा० अनन्तानन्द आयुर्वेदालकार द्वारा लिखित 'अस्थिरोग' विषयक लेखो को सर्वोत्तम लेख स्वीकार कर 'सचित्र आयुर्वेद पुरस्कार निर्णायक समिति' ने २५०) का वार्षिक पुरस्कार देने की घोषणा की है और तदनुसार 'सचित्र आयुर्वेद के प्रकाशक श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० की ओर से डा० अनन्तानन्द जी को उक्त २५०) का वार्षिक पुरस्कार प्रदान कर दिया गया है।

'सचित्र आयुर्वेद' मे प्रकाशित सर्वोत्तम लेखो के लिए प्रतिवर्ष पुरस्कार देने की परम्परा शुरू से ही कायम है। अबतक आयुर्वेद-जगत् के अनेक प्रौढ लेखको और विद्वानो को यह वार्षिक पुरस्कार प्राप्त हो चुका है, जिनमे सर्वश्री कविराज सतीन्द्रनाथ बसु भिषग्रत्न, आचार्य विश्वनाथ द्विवेदी आयुर्वेदशास्त्राचार्य, वैद्य बापालाल भाई, वैद्य रणजितराय देसाई, वैद्य प० रामरक्ष पाठक के नाम उल्लेखनीय है। इस प्रकार वार्षिक पुरस्कार देने से आयुर्वेद विषयक महत्त्वपूर्ण निबन्धो की रचना के लिए लेखको को प्रोत्साहन मिलता है और आयुर्वेद की उन्नति एव प्रगति मे सहायता पहुँचती है।



डॉ० अनन्तानन्द आयुर्वेदालकार

डा० अनन्तानन्द आयुर्वेदालकार, आर्य समाज के प्रसिद्ध नेता स्व० श्रीस्वामी श्रद्धानन्दजी के सुपुत्र है। आपका जन्म स्थान गुरुकुल कागडी (पुरानी भूमि) है। आपका जन्म २६ मार्च १६११ को हुआ था। १६३३ मे आपने गुरुकुल कागडी विश्वविद्यालय से आयुर्वेदालकार की परीक्षा प्रथम श्रेणी म पास की। स्नातक होकर निकलने के बाद आप पजाब चले गए और वहाँ के प्रसिद्ध नेत्ररोग विशेषज्ञ तथा शल्य चिकित्सक डा० बालकृष्ण के पास एक वर्ष रहे। १६४० म गान्धी चैरिटेबल हौस्पिटल बदरपुर (देहली) के अध्यक्ष नियुक्त हुए। १६४२ मे हौस्पिटल के बृटिश गवर्नमेण्ट द्वारा जब्त कर लिए जाने पर आप गुरुकुल बुला लिए गए और श्रद्धानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय म चिकित्सक का कार्य तथा आयुर्वेद-कॉलिज म शवच्छेदन का कार्य आपको सौपा गया। १६४६ म शारीर के प्राध्यापक तथा ऐक्सरे विभाग के अध्यक्ष नियुक्त हुए। १६५५ म उत्तरप्रदेशीय रेडिओलौजिकल ऐसोसिएशन के अवैतनिक ऑडिटर तथा ऑल इण्डिया रेडिओलॉजिकल ऐसोसिएशन के ऐसोशिएट मेम्बर बने। आजकल आयुर्वेदिक कॉलिज गुरुकुल कागडी म पूर्वोक्त पदो पर कार्य कर रहे है और एक अत्यन्त लोकप्रिय और सिद्धहस्त चिकित्सक है।

आयुर्वेद चिकित्सा क्षेत्र से शल्य-शालाक्य चिकित्सा का तो आजकल प्राय लोप-सा ही हो गया है। डा० अनन्तानन्द जैसे कुछ आयुर्वेद विद्वान इस ओर आयुर्वेदज्ञो का ध्यान आकृष्ट करने के साथ नवीन विज्ञान के सहयोग से आयुर्वेद के भण्डार को पूर्ण करने का जो प्रयत्न कर रहे हैं, उसकी हम सराहना करते है। हमें आशा है कि डा० अनन्तानन्द जी अपने प्रयासो को बराबर जारी रखेगे और इस प्रकार आयुर्वेद विज्ञान को सर्वांगपूर्ण बनाने में सहायक होंगे।

सम्पादकीय

आयुर्वेद का विधिवत् शिक्षण

जब किसी प्राचीन सस्कृति, कला, ज्ञान-विज्ञान और आचार-विचार को समाप्त करना हो तो उसकी शिक्षण-पद्धति पर प्रहार किया जाता है, यह तथ्य इतिहास विख्यात है। अग्रेजो ने जब अपनी तोड-फोड और भेद भाव को बढाने वाली कूटनीति के सबल से, भारत के विशाल भू-भाग पर अपना अधिकार किया, तब पहले तो अपने 'बन्दोबस्त' के बेलन से यहाँ की ग्राम-पचायतो और नागरिक व्यवस्था को चौरस किया, फिर अपने राज्य-शासन को स्थायी बनाने के लिए, उन्हे यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि यहा की जनता की प्राचीन सस्कृति और परम्पराओ मे पली हुई स्वतत्र भावनाओ को तिरोहित किया जाय और देशवासियो को जीवन के हर पहलू म परावलम्बी बना दिया जाय। इसके लिए उन्होने सबसे पहला और उपयुक्त साधन यही अपनाया था कि उस काल म प्रचलित भारतीय शिक्षण-पद्धति को समाप्त करके, अपने ढग की—'अदब-कायदे की—शिक्षा-प्रणाली का प्रसार किया। विषय, पाठ और पाठ्य-क्रम—सबके सब नये और अपने प्रकार के। उसका परिणाम अग्रेजो के लिए हितकर हुआ, और वे प्रताप एव शिवाजी के देश मे सौ वर्ष से ऊपर तक एकछत्र राज्य करते रहे। उनके द्वारा प्रचलित की गयी शिक्षा-प्रणाली ने देशी-विज्ञान और कलाओ को तो नष्ट किया ही—भारतीय जीवन, दर्शन, सस्कृति, विचार और ज्ञान-परम्पराओ को जिस साचे मे ढाल दिया, उसका ज्वलन्त स्वरूप हमारे सामने है—स्वावलवन तो जैसे हम भूल ही गये।

आयुर्वेद का ह्रास भी जितना शिक्षा मे पाश्चात्य चिकित्सा-पद्धतियो के प्रचार से हुआ, उतना अन्य किसी कारण से नही हुआ। यद्यपि समुचित प्रोत्साहन न मिलना भी आयुर्वेद के पतन का एक कारण है, परन्तु उसके स्थान पर अन्य पद्धति से शिक्षण का बाहुल्य ही आयुर्वेद के पिछडने का सबसे बडा और अति प्रभावकर कारण रहा है। जब तक देश मे मेडिकल कालिज नही खुले थे, तब तक भारत में चिकित्सा का सर्वाधिक श्रेय-प्राप्त साधन देशी चिकित्सा पद्धतियाँ और प्रधानत आयुर्वेद ही था। ज्यो-ज्यो मेडिकल कालिज खुलते गये, त्यो-त्यो आयुर्वेद के ज्ञान के प्रति लोग अनायास ही विमुख होते गये, और ज्यो-ज्यो उन कालिजो से पाश्चात्य-पद्धति के स्नातक निकले, त्यो-त्यो कम-से-कम शहरी और उच्च वर्ग की जनता की चिकित्सा का श्रेय आयुर्वेद की गाँठ से खिसकता गया। क्रमश इसी प्रकार जनप्रिय वैद्यो के विस्तृत यश पर डाक्टरो की चमत्कारपूर्ण कीर्ति ने पानी फेर दिया। बीसवी सदी के उदय तक, दो समूची पीढियो को डाक्टरी चिकित्सा पर ही आश्रित होने के लिए, अग्रेजो की नये प्रकार की शिक्षण-प्रणाली ने पहले ही तैयार कर दिया था। इस प्रकार लगे हाथ देशी चिकित्सा-पद्धतियाँ दब गयी, और पाश्चात्य चिकित्सा-विज्ञान हमारे देश मे चमक गया। भारतवर्ष मे विदेशी चिकित्सा-विज्ञान की उन्नति का सम्पूर्ण इतिहास यदि गौर से देखा जाय, तो वह वास्तव म मेडिकल कालिजो की उन्नति का इतिहास है। मेडिकल कालिजो और विदेशी चिकित्सा-पद्धति एव विदेशी औषधो की बढती पर, देश का कितना पुष्कल धन व्यय हुआ, और उससे जन-स्वास्थ्य एव चिकित्सा के क्षेत्र म देश को कितने अशो म लाभ हुआ, यह अब सवविदित है और इतना स्पष्ट है कि किसी प्रकार की टिप्पणी की अपेक्षा नही रखता। इतना तो निर्विवाद निश्चित है कि भारत की अपनी स्वास्थ्य-परम्पराओ के विघटन के साथ ही हमारी जनता की स्वास्थ्य-विषयक रुचि और विचारधारा म जो परिवर्तन आ गया है, उसने देश के स्वास्थ्य को इतना अधिक निर्बल कर दिया है कि वह गभीर चिन्ता का विषय बन गया है, और पाश्चात्य-चिकित्सा-विज्ञान का अनुसरण, असीमित धन-व्यय कराके भी उस चिन्ता के समाधान की दिशा मे कोई ठोस प्रगति नही कर सका है। फिर भी विचित्रता यह है कि हमारे भाग्य-विधाताजन प्रगति के मोह म उसी लीक पर चले जाना चाहते है।

जब हम देखते है कि करोडो रुपये की लागत वाले मेडिकल कालिजो की स्थापना मे हमारी सरकार, अब भी, पूर्ववर्ती शासको की अपेक्षा अधिक सक्रिय है तो आश्चर्य होता है। कदाचित् सरकार इस नीति का अनुसरण भोर कमेटी के सुझावो पर कर रही है, जिसका सर्वत्र विरोध

हुआ था। हम निःसकोच कह सकते हैं कि मेडिकल कालिजो की बढती, आयुर्वेद और वैद्यो की रही-सही स्थिति को भी समाप्त कर देने का कारण सिद्ध हो सकती है। एक समय कलकत्ता जैसा बडा नगर वैद्यो की कीर्ति का केन्द्र था, समूचे बग-प्रदेश में कविराजो का विशिष्ट स्थान था, परन्तु मेडिकल कालिजो के प्रसार ने उसी कलकत्ते मे आयुर्वेद और वैद्यो की जीविका को ऐसा चूस लिया जैसा अमरबेल किसी हरे-भरे पौधे के जीवन-रस को सोख लेती है। आयुर्वेद के विधिवत् अच्छे शिक्षण की व्यवस्था की ओर न तो सरकार का समुचित ध्यान है, और न ही आयुर्वेद के नाम पर प्रतिष्ठा पाने वाले महारथियो का। हमारे मत से आयुर्वेद का भविष्य एव स्थिति ही मात्र इस बात पर निर्भर है कि आयुर्वेद के विधिवत् शिक्षण का प्रसार किया जाय, जिसकी ओर किसी का ध्यान नही। इसके विपरीत जगह-जगह, नये-नये मेडिकल कालिजो के स्थापना की योजनाएँ चल रही हैं। द्वितीय पचवर्षीय योजना में एक बहुत बडी रकम मेडिकल कालिजो की स्थापना के लिए व्यय करने का राज्य का विचार है। यदि यही क्रम रहा तो स्पष्ट है कि देश मे पाश्चात्य चिकित्सा का जहाँ निःसीम विस्तार होगा, वहाँ आयुर्वेद का क्षेत्र सकुचित होता जायगा। फिर स्वभावतः ही वैद्यो की जीविका निर्बल होती जायगी। वैद्य-समाज को, विशेष कर, इस खतरे से सावधान होना चाहिए और मेडिकल कालिजो की इस बाढ को रोकने के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए। जनतन्त्रीय व्यवस्था मे होने-वाले अहितकर कार्यों को सबल विरोध के द्वारा रोका जा सकता है। खेद है कि अबतक वैद्य-समाज का ध्यान इस ओर नही गया। केवल आयुर्वेद के विकास के लिए सहायता की याचना करते रहने से ही उसकी रक्षा नही हो जायगी। एक ओर जहाँ उसके विकास के लिए यत्न होना चाहिए, दूसरी ओर वहाँ उसके विस्तार के अवरोधक व्यवहारो से बचाव के लिए प्रबल सघर्ष किया जाना चाहिए। हाल ही में एक बडा मेडिकल कालिज बीकानेर मे खोलने की योजना थी, फिर कहा जाता है कि वह योजना बीकानेर के स्थान पर जोधपुर के लिए स्थिर हुई है। वर्तमान मे अन्य प्रदेशो की अपेक्षा राजस्थान मे आयुर्वेद की स्थिति कुछ अच्छी है। वैद्यों का बडा समुदाय वहाँ है। अनेक जागरूक वैद्य हैं और अच्छे संगठनकर्ता हैं, फिर भी राजस्थान मे अपने यहाँ इस नये मेडिकल कालिज की योजना के विरोध मे वैद्यो की ओर से कोई स्वर नही उठाया गया। जोधपुर से प्रकाशित होने वाला सहयोगी 'जय आयुर्वेद' वैसे तो, अपने को, बडा स्पष्टवादी तथा तथ्यवादी तथा आयुर्वेद एव वैद्य-समाज के हितो का उन्नायक कहता है—परन्तु इस विषय मे उसने भी एक अक्षर नही लिखा। आयुर्वेद-क्षेत्र के पत्रो की इस विषय मे उपेक्षा और उदासीनता हमे अच्छी नही लगती। हमारे सहयोगियो को पाश्चात्य चिकित्सा-पद्धति की जड जमाने वाले और आयुर्वेद के रहे-सहे गौरव का अपहरण करने वाले प्रयत्नो का विरोधी वातावरण बनाने मे सक्रिय होना चाहिए। राजस्थान मे पहिले से ही मेडिकल कालिज विद्यमान है, अन्य की आवश्यकता नही, यह बात—राजस्थानवासी सरकार को समझावे। बटवृक्ष की एक अपनी विशेषता होती है कि जहाँ वह बढता है उस स्थल पर अपनी छाया तक के क्षेत्र मे वह किसी दूसरे पौधे को पनपने नही देता। यह मेडिकल कालिज भी बटवृक्ष के समान है, जहा एकबार जमे कि देखते-देखते अपनी विस्तृत काया बढायी और फिर क्या मजाल कि वहाँ दूसरी पद्धति का प्रभाव-क्षेत्र बना रह जाय। अबतक अनुभव यही बताता है। जहा-जहा मेडिकल कालिज बने वहाँ-वहाँ उन्होने आयुर्वेद का विघटन किया। आयुर्वेद-हितैषियो और वैद्य-समाज को इस दिशा म सतर्क विचार करना चाहिए।

हम कदापि प्रगतिशील शिक्षा के विरोधी नही हैं। शिक्षा म उपयोगिता को भी प्रधान महत्त्व दिया जाय, इसके पक्षपाती अवश्य हैं। मेडिकल कालिजो को भी शिक्षा की उपयोगिता के आधार पर विचारना चाहिए। डाक्टरो की सख्या-वृद्धि से यदि जन-स्वास्थ्य-समस्या का हल होने वाला हो, तो भी मेडिकल कालिजो के विस्तार को उचित मान लिया जाय। प्रसगवश यहाँ अपनी सरकार से भी इस विषय मे पुनर्विचार के लिए अनुरोध कर देना अनुचित न होगा। व्यावहारिक, आर्थिक और लाभाकन के दृष्टि-कोण से यह स्पष्ट सत्य है कि मेडिकल कालिजो की अपेक्षा देशी चिकित्सा-पद्धति के विद्यालयो का विस्तार अधिक सुगम हितकर हो सकता है। जहाँ एक ही मेडिकल कालिज की स्थापना मे प्राय एक-डेढ करोड रुपया लग जाता है, वहाँ उतने ही धन मे कम से कम बीस भारतीय चिकित्सा-प्रणाली के श्रेष्ठतम विद्यालयो की स्थापना और सचालन बडी सुविधा के साथ हो सकता है। सीधे-सादे अर्थशास्त्र

(शेषांश पृष्ठ ८४३ पर)

भूल-भुलैयाँ

श्री द्वारिकेश मिश्र

"सत्य की उपेक्षा क्यो ?"—इस शीर्षक से मैने दिल्ली की पत्रिका में प्रकाशित वक्तव्य-शृखला के प्रथम भाग पर, मुख्यत , विचार किया था। उस विचार से, अन्त मे यही प्रश्न सामने आया था कि सत्य की यह उपेक्षा क्यो ? एक ऐसी आर्थिक दशा वाली सस्था के निर्बल कोष से, जिसके सन्तुलन-पत्रो मे प्रति वर्ष आय से व्यय अधिक दिखाया जाता है,—लगभग डेढ हजार रुपयो का कल्याण करके प्रकाशित की गयी, एक सौ दस द्विभाषीय पृष्ठो वाली इस वक्तव्य-शृखला का दूसरा और तीसरा भाग मेरे सामने है। इन दोनो भागो को बहुत सावधानी और भरपूर सहानुभूति के साथ आद्योपान्त पढ लेने के बाद भी, वही प्रश्न—अपने उसी आकार में मेरे सामने खडा है, और मै अतिविनम्र भाव से अपनी कल्पनाओ मे चित्रित एव उद्वेगाच्छन्न वक्तव्य प्रकाशक के भव्य स्वरूप को सामने करके उसी प्रश्न का उत्तर चाहता हूँ।

धन्य हो चतुर कूटनीतिज्ञ ? जिस कमाल के साथ आप मूल प्रश्नो की मूल भावना को दूर फेकते हुए, समाज के व्यक्तियो को अपने बुद्धि कौशल से चमत्कृत करने का गभीर उपक्रम कर रहे हैं, उसके लिए तो आपको बेलौस बधाई। परन्तु विद्वान जी, यह प्रयत्न किस सीमा तक सफल होगा, इसमे जरा सन्देह हो जाता है। क्योकि जिनको समझाने के लिए आपने यह कलम घसीटन किया—यह तो आपने पूरे चातुर्य का काम किया कि गाँठ से पाई खर्च न करके प्रकाशन मे उनके ही धन का सदुपयोग कर डाला, लेकिन, वे कुछ बदले हुए जमाने की हवा पाकर, पहले जैसे नही रहे। पहले तो निश्चय ही आपकी वाणी के प्रसाद को पाकर वे गद्गद् हो जाया करते थे—परन्तु अब तो उन्हे भी यह पता लग गया है कि ऐसे स्वरो में गले के नीचे कुछ और होता है, और गले के ऊपर कुछ और। फिर भगवन् ! यह भी तो सोचिए कि जिनको आप अपनी सफाई मे यह कुतर्कों की चन्द्रकान्ता सुना रहे है, उनमें से जो अधिकाश वस्तुस्थिति की जानकारी रखते हैं—वे क्या सोचते और कहते होगे? हाँ, आपके अन्तरिक्ष मे छूमी हुई एक बात हम भी मानने को तैयार है धुरधर जी, कि आपका यह सम्पूर्ण प्रयत्न यदि आयुर्वेद-जगत के बाहर अपने को पाक-साफ बनाये रखने के लिए है, तो वह शायद कुछ असर कर जायगा, इस प्रकार पत्रिका के अतिरिक्त विस्तारित होने वाली सैकडो प्रतिया कुछ अशो मे तो सार्थक हो ही जायगी। और महामान्य, मूलत आपको चिन्ता भी आयुर्वेदेतर क्षेत्र की ही दिखायी देती है, क्योकि आपके श्रीकरकमलाकित वक्तव्यो मे यह बात बार-बार उभरकर ऊपर आयी है कि आपके सदा शान्त रहने वाले मस्तिष्क को, खलबली का उफान इसी कारण ने दिया है कि उस पैम्फलेट की प्रतिया कुछ ऐसे लोगो ने भी देख ली, जिनके सामने आप अपनी निर्द्वन्द्व नेतागिरी के, ऊपर से विनम्र पर असर म भारी प्रवचन किया करते होगे। अपने राम भी मान गए महात्मा ? उनके लिए तो आपका यह प्रयास प्रभावकर हो ही जायगा, जिन्हे इस सम्पूर्ण प्रसग की पूरी जानकारी नही है। परन्तु उसमे भी एक खटका अवश्य है कि जिस दिन उन सबको भी इन विविध कलाओ का परिचय मिल जायगा, उस दिन किरकिरी हो जायगी, सो आप सोच लीजिए।

दूसरो को प्रस्तुत विषय से बिदका कर इधर-उधर की बातो मे उलझा लेना और सामने वाले को इस बात के लिए कायल कर लेना कि हम कितना सतर्क न्याय और कितना बारीक विवेचन करते है यह भी एक गूढ कला है जो बीसवी सदी के सुधर-साधको को मिला करती है। सो पण्डित जी ? इस कलावन्ती का परिचय आपने जिस बुलन्दी के साथ इन वक्तव्यो मे दिया है उससे अपने राम तो मान गए कि आप अपने तौर-तरीको के आचार्य है। परन्तु क्या बताऊँ साहब ! यह वैद्य-समाज के कुछ लोग ऐसे है कि पहले की भाँति अब, आँख मीचकर, आपकी हाँ मे हाँ मिलाने तो तैयार ही नही होते। क्षमा कीजिएगा, मै अभी तक यह निश्चय नही कर पाया कि आपको पण्डित जी सम्बोधन करूँ या साहब ? क्योकि आप नाम के पण्डित और स्वरूप के साहब है। आचार-विचार और व्यवहार की दृष्टि से इस मामले मे तौल करने की हिम्मत नही पडती, क्योकि

एकाध बार उस महामायापुरी मे स्थित आपके बगले रूपी आश्रम पर जाने का साहस किया तो पहले तो चार-चार मुचण्ड महापशुओ के भीषण-भाषण की चपेट मे अपने राम चौकडी भूल गए। बाद को आसपास के भले-मानुसो ने बताया कि वे प्रत्येक एक-एक हजार मुद्रा से ऊपर मूल्य के विदेशी जीव है जिन्हे 'डॉग' कहते है। फिर महाराज? शुद्ध आयुर्वेद के उस सृजन-स्थल पर जो बहार बहती देखी, उसको अपने राम नही पहिचान पाये कि वह किस लोक की है। और जब महाराज, यह देखा कि बडे-बडो की बुद्धि मे शुद्ध आयुर्वेद की मेख ठोकने वाले आधुनिक महर्षि की आगामी पीढी—उसको क्या कहते है, भला-सा नाम है—विशुद्ध एलोपैथी मे दीक्षित है तो सच कहता हूँ महाराज, शुद्ध आयुर्वेद के परिशुद्ध भविष्य पर आत्मा गद्गद् हो गई। घिसी-पिटी सस्कृत के विषय को केवल फर्राटेदार अग्रेजी मे घोकने वाले आप महापण्डित को मै क्या सम्बोधन करूँ, यह फिर भी निश्चय न कर पाया। इस कारण यदि सम्बोधन मे कही अज्ञानतावश, कुछ उल्टा-सीधा हो जाय, तो क्षमा कीजिएगा।

हा, तो अपने दूसरे वक्तव्य मे आपने दूसरो की विस्मृतियो के मनमाने उदाहरण देकर स्वय के एक अशोभन आचरण को विस्मृतिजन्य कहकर और उस विस्मृति को भी सर्वथा अमहत्त्वपूर्ण और अविचार्य बताने का जो उपक्रम किया है, वह कुछ जँचा नही साहब! यह तो ऐसा ही रहा कि किसी बज्र झूठे से कहा जाय कि तुम झूठ क्यो बोले और वह उत्तर देने लगे कि फला-फला ने भी झूठ बोला। सच बात तो यह है कि पण्डित जी कि विस्मृति कुछ और होती है। उस २२००) रुपये की घटना के प्रसग म आपने न्यायालय मे सर्वथा सत्य एव निर्भ्रान्त भाषण करने की शपथ लेकर भी, जो असत्याधारित, आश्चर्यजनक और मनोरजक अभिनय किया, वह कुछ और है। विस्मृतिवश उसे नही कहा जायगा। एक विनम्र प्रार्थना यह भी है कि आपको पत्रिका के पन्द्रह हजार मुद्रित पृष्ठो को स्मृति-पथ में रखने की आवश्यकता ही क्या थी, उन पन्द्रह हजार पृष्ठो मे बहुत-से तो आपके स्वय के भाषणो की आवृत्तियो और आपके विरुद-बखानो मे ही रगे हुए होगे। और पण्डित जी, यह दोनो विषय आपको वैसे ही कण्ठाग्र रहते है। अवशिष्ट अधिकाश पृष्ठो में लेखादि छपे होगे, जिनको न कठाग्र करने की आवश्यकता थी और न आपको व्यस्त घडियो मे से कभी पढने का अवसर मिला होगा। अब स्मृतिपथ मे रखने के लिए वे थोडे-से ही पृष्ठ रह जाते है, जिनमे यदा-कदा महासम्मेलन की कार्यवाहियो का विवरण प्रकाशित हुआ होगा। उनसे ही मतलब था। इस प्रकार पन्द्रह हजार मुद्रित पृष्ठो को स्मृतिपथ में रखने की आपकी बात कुछ अमान्य ही समझ मे आती है। अब, यह बात लीजिए कि वह घटना विशेष भी क्या आपके स्मृतिपथ मे नही रहना चाहिए थी? सो पण्डित जी, जब आपको उन अठारह वर्षों की पुरानी से पुरानी बाते ऐसी याद थी कि आप पूरे पारगत-वेदान्ती की भाति सटासट उच्चारण करते गए, तो इस एक खास घटना को जो केवल लगभग एक वर्ष पूर्व की थी, आप भूल गए हो, इस बात को कोई समझदार कैसे माना जायगा?

आखिर कोई कैसे इसपर विश्वास कर ले कि २२००) रुपये की घटना के उस प्रसग को आप बिलकुल भूले हुए थे, जब उसकी समकालीन ऐसी बाते आज तक आपके स्मृति-पथ मे है जो कही लिखी-पढी नही। आपको यह तो याद है कि उस दिन आकाश मे बादल भरे थे, तूफान आया था और हवाई मार्ग खराब था, परन्तु यह याद नही रहा कि आप स्वय पृथिवी पर क्या कर रहे थे? आकाश की बाते तो याद रही और पृथिवी की बात भूल गए। उस दशा मे भी कि वह घटना ऐसी हुई जिसके बाद आपके एक सम्बन्धी—वह सौतेले सही—से सदा के लिए बोल-चाल बन्द हो गया। धन्य हो बीसवी सदी के शकराचार्य! आपकी यह भूल भी कमाल है। भूले भी तो केवल वही बात भूले जिसमें स्वय के प्रस्ताव द्वारा सस्था के कोष से तीन हजार से ऊपर की रकम खिसका दी, और वर्षों तक सदस्यो को उसका पता तक न होने दिया। यह बात नही कि आप केवल न्यायालय मे ही भूले हो। भाग्य की बात है कि इस एक ही प्रसग मे आप जैसे अनन्त-कला-विभूषित व्यक्ति आदि से अन्त तक भूलते चले गए। आश्चर्य है पण्डित जी! त्रिवेन्द्रम में जब विश्वविद्यालय का जिक्र आया तो उस विषय की अपनी घोषणाएँ भूल गए और योजना को स्थगित कराके ही माने। चन्दे की कुछ रकम वापिस करने की बात आई तो यह पूछना भूल गए कि क्या वास्तव मे वह निधि कोई जमीन खरीदने के लिए आयी थी। अधिवेशन मे जब सभापतित्व के चमकीले सिंहासन से रकम वापिस करने का प्रस्ताव स्वय श्रीमुख से फटकारा, तब यह बताना भूल गए कि रकम किसको लौटायी जायगी। रकम लौटा देने के बाद अन्य दान-दाताओ को

यह जताना भूल गए कि एकत्र चन्दे मे से अमुक का रुपया लौटा दिया गया है। तीन हजार से ऊपर की रकम केवल अपनी जिद रखने के लिए सस्था के कोष मे से चलायमान करके उसके सदस्यो को यह बताना भूल गए कि यह पुरुषार्थ उनके अमुक हित के लिए किया गया है। न्यायालय मे 'भगवान को हाजिर नाजिर' जानकर इस सम्पूर्ण प्रसग के अस्तित्व को ही भूल गए। और कहा तक बताऊँ पण्डित जी ? इन वक्तव्यो मे तो आप उस भूल को भूल स्वीकार करना ही भूल गए।

अब आप ही बतलाइये दयानिधान ! इस सारे प्रसग को कोई विस्मृति का कारण कैसे मान लेगा ? यदि कुपित न हो तो निवेदन करू ? थोडी देर के लिए इस कहावत को चरितार्थ करना छोड दीजिए कि 'पचो की बात सर माथे पर पर नाला यही से निकलेगा"। तथ्यो के साथ जबर्दस्ती की अड को त्यागकर सौजन्य और सत्य के धरातल पर खडे होकर ठडे दिल से जिस साधारण-सी बात के लिए आपने मुफ्त ही पत्रिका के इतने पृष्ठ रग डाले, उसको ही इस प्रकार विचारिए कि जब न्यायालय म आपके सामने यह प्रसग आया था, तब यदि आप किसी तथ्य को छिपाने का दुराग्रह नही करना चाहते थे तो ज्यो ही पत्रिका आपके सामने रख दी गयी तब आपको सम्पूर्ण घटना यदि भूले भी थे तो याद आ जानी चाहिए थी और एक वास्तविक सत्यवादी की भाति आपको सारा वृत्तान्त स्पष्ट सूचित करना था कि हाँ यह प्रस्ताव मैने प्रस्तुत किया, स्वीकृत हुआ और अमुक रकम, अमुक कारण से, अमुक सज्जन को लौटायी गई थी। बिना किसी लाग-लपेट के और बिना अधिक जिरह का अवसर दिए, जो कुछ हुआ, वह जैसा हुआ उसको वैसा ही मान लेने और बताने मे आपकी कोई हानि नही होती—और होती भी तो आप जैसे, अपने को सत्यप्रिय कहने वाले व्यक्ति के लिए वह हानि भी गौरवास्पद होती। इसके विपरीत माननीय पण्डित जी, आपने जो अभिनय न्यायालय मे किया, उसका वर्णन, उससे अच्छा तो मै कर नही सकता जैसा विद्वान न्यायाधीश ने किया है। इतना अवश्य कह सकता हूँ कि यदि आप वस्तुत सत्य पर आधारित होते, तो विवाद और निर्णय पर उसका कुछ भी प्रभाव पड़ता, परन्तु कम स कम, किसी को आपके सम्बन्ध में ऐसी बात कहने का साहस न होता, जिसको आप अब अपने आचरण की तीव्र और हानिकर निन्दा समझते है और अपनी चरित्रदृढता एव सत्यता की बहुत कडी आलोचना कहते है। न्यायालय मे तो महाराज, अपने साधारण से बचाव के मोह मे एक झूठ को सत्य बताने के लिए सौ झूठ बोले, चाहे वे परिस्थिति या अनवधानतावश ही बोले हो, फिर अब उन सौ झूठो के लिए डेढ सौ झठ बोलने से क्या लाभ ? यह साधारण-सी समझ का तकाजा है कि आप इस मौलिक बात पर विचार करे। आप सामान्य से कुछ अधिक अच्छे स्तर का व्यक्तित्व अर्जित कर लेने वाले व्यक्ति है, और आपके लिए इस प्रकार का दुराग्रह न केवल अशोभनीय है, प्रत्युत निन्दनीय भी है।

यह तो हुई आपकी वक्तव्य शृखला के द्वितीय भाग की समीक्षा। अब उसके तृतीय भाग को उठा लीजिए। तृतीय भाग मे उल्लिखित विषयाक १ की व्याख्या जिस प्रकार आप वक्तव्य न० २ म कर चुके है उसी प्रकार आपके इस सेवक द्वारा ऊपर हो चुकी है। अब विषयाक २ को लीजिए।

हरे शिव शिव शिव ! महामना पण्डित जी, इस दूसरे विषयाक को पढकर तो अपने राम धक से रह गए ! सौतेली मा तो हमने सुनी है यह सौतेला भाई क्या होता है ? एक ही पिता की दो नैतिक पत्नियो से उत्पन्न सन्तानो को हम तो भाई भाई ही सुनते आये है महाराज ! सौत की सज्ञा स्त्रीपक्ष मे ही लगती है। फिर जैसा आप कहते है, वैसा ही सही, तो सौतेली मा को मा न कहने की बात आप जैसे विचारवान पण्डित कहते है राम और कृष्ण के इस देश मे ! जिस देश मे सौतेली माँ कैकेयी को निज माता से भी बडी मानकर राम ने वह आदर्श उपस्थित किया, जो हजारो वर्ष से ससार को प्रकाश दे रहा है। यशोदा कृष्ण की न निज माता थी, न सौतेली पर कोई कह सकता है कि कृष्ण ने अपने को यशोदानन्दन नही माना ? कम से कम भारत का इतिहास और भारतीय सस्कृति तो सौतेली मा को भी वही प्रतिष्ठा देती है जो मा को देती है और उसको भी मा न कहा जायगा तो आपके विचार से क्या कहा जायगा ? इसी प्रकार उस पक्ष के सम्बन्धी को भी सम्बन्धी कहा जायगा। मूढो की बात दूसरी होती है, पडितराज ! परन्तु आप की कलम से मा सरीखे पवित्र शब्द के लिए यह व्यवधान निकला कैसे ? हम पढ़ते आये है कि साधारण रूप से ससार मे दो प्रकार के व्यक्ति होते है—पहले वे जो कामना के क्षेत्र मे सिद्धान्त का कोई प्रतिबन्ध नही मानते और

आवश्यकता देखकर सहज ही चाहे जैसे कर्म की व्यवस्था कर लेते है , दूसरे वे जो कामना के लिए उन साधनो और उपकरणो का अवलम्ब कभी ग्रहण नही करते जो हेय, असत्य और केवल अधिकारवाद पर आधारित रहा करते हैं। पहले प्रकार के व्यक्तियो के लिए साध्य के हेतु साधन कैसा भी हो, इसकी उन्हे चिन्ता नही , परन्तु दूसरे प्रकार के व्यक्ति उच्च साध्य के लिए उच्च साधन ही अपनाते है। आप जैसे पण्डितो को, मै जडबुद्धि क्या ज्ञान दूं ?

यहा एक साधारण-सी अनियमितता और ऐच्छिक कार्य का दोष ही तो सर पर आता था, परन्तु इतनी-सी बात के लिए पण्डित जी महाराज, आप सम्बन्धी को सम्बन्धी और मा को मा—भले ही वह सौतेली हो—मानने मे भी साफ बिदक जाने को तैयार है। लोग तो मुंह बोले भाई को भाई और मुंह बोली मा को मा मानकर जीवन का बडा से बडा त्याग करने म नही हिचकते। मेवाड की रानी कर्णावती क्या मुगल सम्राट हुमायू की निज बहिन थी, जिनकी राखी के दो धागो मात्र के बन्धन म बधकर उस परिस्थिति म भी जब कि शेरशाह उसके साम्राज्य की प्रत्येक ईंट हिला चुका था, वह अपने स्वार्थों पर लात मारकर कर्णावती की रक्षा के लिए गया था। इतना ही नही, भारत से भागते समय केवल एक रात जब उसको उदयपुर के जगलो मे बितानी पडी तो हुमायू ने मेवाड के महलो म उसी प्रकार भट भेजी थी, जिस प्रकार एक भारतीय भाई अपनी बहिन के घर जाने पर देता है, हालाकि कर्णावती मर चुकी थी। हिन्दू सस्कृति का यह जादू था जिसने विजातीय व्यक्ति को भी यह सबक दिया कि सम्बन्ध और सम्बन्धी किसे कहते है, लेकिन पण्डितराज। यहा एक न कुछ-सी बात पर आप यह लिखने मे न हिचके कि "एक सौतेले सम्बन्धी को सम्बन्धी कहना, एक सौतेली मा को मा कहने के बराबर है।" यह स्थल ऐसा है, जिसको मनन करके यदि कोई अपने गले को साफ और आंखो को सूखा रख सकता है, तो वह स्थितप्रज्ञ पाषाण ही कहा जायगा।

अब जिस विषय को लेकर आपने अपने वक्तव्य सख्या तीन मे पत्रिका के पूरे तेरह पृष्ठ काले किए हैं, मै उसी विषय को आपके आधारो के अनुसार ही विनम्रतापूर्वक आपकी सेवा मे इस प्रकार निवेदन करता हूँ। विवाद को बढाना कभी हितकर नही होता, इसलिए थोडी देर के लिए इस बात को मान लिया जाय कि २२०० रुपये की वापसी मे आपकी कोई पूर्व योजना नही थी, फिर भी आप यह कैसे सिद्ध करना चाहते है कि वह सम्पूर्ण घटना आपकी ऐच्छिक कार्यप्रणाली की परिचायक नही है। बुद्धिमान पण्डितजी, मै आपसे वैद्य-समाज के हित के नाम पर ही यह अपील करना चाहूँगा कि अब भी दुराग्रह की वृत्ति को छोड दीजिए तो आप रत्न से बढकर हीरा हो जायगे। इस प्रसग को भी सद्भावना के साथ, दुराग्रह त्याग कर, विचार कीजिए। मै वही से लेता हूँ, जहाँ से इस घटना का प्रारम्भ होता है। जुलाई, ५५ की पत्रिका मे मुद्रित कार्यवाही सामने रख लीजिए। आपकी दलील के भवन की वही पहली महत्त्वपूर्ण नीव है। त्रिवेन्द्रम मे उस दिन स्थायी समिति और विषय निर्धारिणी समिति की २२ तारीख की बैठक मे जब विश्वविद्यालय का विषय उपस्थित हुआ तो आरम्भ में सर्वप्रथम ही बिना सदस्यो की सम्मति जाने यह क्या आवश्यक था कि आपने सभापति के आसन से अपनी सम्मति ठोकना शुरू कर दी ? आप तो विधान-शास्त्री है महाराज ! परम्परा यह होती है कि सदस्यो की सम्मति के अनन्तर सभापति अपनी सम्मति देता है। यद्यपि आपने असीम उदारतापूर्वक हृषीकेश मे विद्यालय खोलने से अपनी असहमति व्यक्त करते हुए अन्त मे यह भी कहा कि "यह सदस्यो के विचार का विषय है। वे जैसा निर्णय करेगे, कार्य तो उसी के अनुसार किया जाना है।" आपके बाद आपकी कृपापूर्ण आज्ञा से विद्यापीठ मन्त्री स्वनामधन्य श्री श्रीदत्तजी ने अपने विचार सभा मे प्रस्तुत किए। उनके विचारो सहित उस दिन की शेष कार्यवाही को यहाँ ज्यो का त्यो उद्धृत करता हूँ।

"श्री प० श्रीदत्तजी ने अपने विचार सभा के सम्मुख प्रकट करते हुए कहा कि सम्मेलन की तथा विद्यापीठ की प्रतिष्ठा एव गौरव की रक्षा के लिए हृषीकेश में विश्वविद्यालय का स्थापित किया जाना परमावश्यक है। वे सब कठिनाइयों को समझते हुए आयुर्वेद की गौरव-वृद्धि के लिए अपनी आहुति दे कर भी विश्वविद्यालय की स्थापना हृषीकेश में करना चाहता हूँ। ४० वर्ष से विश्वविद्यालय की चर्चा हर समय और हर अधिवेशन में होती रही है, किन्तु आज तक इसकी स्थापना न हो सकी—यह वैद्य-समाज के लिए भारी कलङ्क है। मै इस कलङ्क को दूर करना चाहता हूँ। मै इस सम्मेलन को विश्वास दिलाता हूँ कि विद्यापीठ

के कोष से विश्वविद्यालय के निर्माण-कार्य में एक पैसा भी ले कर नहीं लगाऊँगा। वैद्य-बन्धुओं का एवं आयुर्वेद-प्रेमियों का सहयोग चाहिए—रुपये की कमी नहीं है। मैं जगल में रहता हूँ, जगल में खडे हुए वृक्षो के पत्ते भी भगवान धन्वन्तरि की कृपा से नोट बन जायेंगे। हृषीकेश में विश्वविद्यालय बनने की अवस्था में ही मै पूर्ण लगन और शक्ति से कार्य कर सकता हूँ क्योकि मै यह दिखा देना चाहता हूँ कि लखपतियो के सहयोग के बिना भी विश्वविद्यालय का कार्य रुक नहीं सकता। यदि आप विश्वविद्यालय नहीं बनाना चाहते तो मै विद्यापीठ का मन्त्री रहने के लिए तैयार नहीं हूँ—आपसे क्षमा चाहता हूँ।

इसके पश्चात् श्री डा० ए० लक्ष्मीपति मद्रास, श्री गोवर्धन शर्मा छांगाणी नागपुर, श्री कमलाप्रसाद मणि त्रिपाठी पटना, आचार्य श्री बद्रीविशाल त्रिपाठी कानपुर, श्री दुरे स्वामी आयगर मद्रास ने विश्वविद्यालय के हृषीकेश में बनाये जाने के पक्ष में अपना-अपना मत व्यक्त किया और कहा कि श्री विद्यापीठ—मन्त्री को इस कार्य के लिए एक वर्ष का समय और दिया जाय। प्राय सम्पूर्ण सभा ने इस मत का समर्थन किया। तदुपरान्त सभापतिजी ने कहा कि यदि सभी सदस्यों की ऐसी इच्छा है कि हृषीकेश में ही विश्वविद्यालय बनाने के प्रयत्नो को चालू रखा जाये तो ऐसा किया जाय, किन्तु मै स्वय इस विषय में तटस्थ हूँ। इस पर प्रधान मन्त्री श्री वामनराव दीनानाथजी तथा सयुक्त मन्त्री श्री स्वामी चेतनानन्दजी ने भी क्रमश अपने तटस्थ रहने की घोषणा की। अभी इस विषय पर अन्तिम निश्चय नहीं हो पाया था कि रात्रि अधिक व्यतीत हो जाने के कारण सभा का कार्य अगले दिन के लिए स्थगित कर दिया गया।"

अब महाराज आपसे थोडा नम्र निवेदन करता हूँ। ऊपर की कार्यवाही को एक बार फिर पढ लीजिए और बताइए कि जब आप स्वय अपने श्रीमुख से इसी सभा म यह कह चुके थे कि कार्य तो सदस्यो के निर्णय के अनुसार ही होना है फिर जब आपने प्रत्यक्ष देखा कि सदस्यो का बहुमत विश्वविद्यालय-योजना के लिए एक वर्ष का समय और देने के पक्ष म है तो फिर तुरन्त ही अपने वचन से मुकरकर आपने अपनी तटस्थता की धौंस का डण्डा क्यो चलाया कृपानिधान! बडे मिया तो बडे मिया छोटे मिया सुभान अल्लाह। आप तो आप, हमारे पचवर्षीय प्रधानमत्री जी और दूसरे महास्वामी जी भी तटस्थता का घूँसा तान बैठे। जैसे उनकी घोषणा से किसी राज्य का सिंहासन हिलने वाला हो! खैर जाने दीजिए।

पूरी सद्भावना के साथ हृदय पर हाथ रखकर यह बताइए कि उस दिन आप सदस्यो की बहुमत-सम्मति पर यदि अपनी तटस्थता का अस्त्र न चलाते और योजना को सदस्यो के मतानुसार एक वर्ष का समय हँसी-खुशी ही स्वीकृत हो जाने देते तो आप पर या महासम्मेलन पर, कौन-सी विपत्ति आनेवाली थी? एक बात और ध्यान मे रखिए पण्डित जी कि उस समय कम से कम आपको यह मालूम था कि उस रात्रि के ठीक ४८ घण्टो बाद आपको सभापति नही रहना है इसलिए यदि कोई विपत्ति आती भी तो वह आप पर नही आनी थी। फिर कौन-सा ऐसा कारण था कि जिसने आपको तटस्थ हो जाने के लिए बाध्य कर दिया और आपने ऐसी असहयोगपूर्ण घोषणा की जिसके कारण सदस्यो के हौंसले पस्त हो गए। जरा हमें भी बताइए सवशक्तिमान!

एक बार उस बूढे तपस्वी श्रीदत्त जी के विचार पढकर देखिए जिसने उसी स्थल पर महासम्मेलन और विद्यापीठ की प्रतिष्ठा के गौरव की रक्षा के लिए अपनी आहुति देकर भी विश्वविद्यालय स्थापित करने का हौसला दिखाया। उसने यह भी वचन दिया कि वह उसके लिए आपके कोष से एक पैसा नही लेगा। फिर भी आपकी नसो का जवान खून नही खौला। वैद्य-समाज का कलक मिटाने के लिए एक बूढा सन्यासी अपनी आहुति देने को तैयार होता है और उसका युवक कर्णधार बिना कारण बिना किसी विपत्ति क ही कायरतापूर्ण तटस्थता की बात करता है। अब आप ही बताइए आयुर्वेद जवाहर! इस शर्म को लेकर हम किस कुय म डूब मर?

आगे चलिए। दूसरे दिन जब पुन उसी प्रकार बैठक हुई तो फिर भी आपने बिना सदस्यो की सम्मति जाने सर्वप्रथम अपना ही विचार उनकी खोपडी पर थोप दिया। इतना ही नही बिना इस बात की प्रतीक्षा किए कि आपके विचारो की सदस्यो पर क्या प्रतिक्रिया हुई आपने स्वय अपनी ओर से लगे हाथ विश्वविद्यालय-योजना को स्थगित करने का एक प्रस्ताव भी एक ही सास म जड दिया। इन तथ्यो को पत्रिका मे जून '५५के पृष्ठ २८७पर देख लीजिए। उस कार्यवाही का एक-एक अक्षर यह बता रहा है कि उस

समय उस समिति की स्थिति वही थी जो एक उर्दू शायर के मर्म के फफोले की भांति किसी एकछत्राधिपति के दरबार के लिए इस प्रकार फूटी थी—

महफिल उनकी, साकी उनका।
आंखें अपनी, बाकी उनका।

उस कार्यवाही के विवरण को पढकर कोई भी समझदार यह कह देगा कि आपने अकारण ही सदस्यो की सम्मति पर अपने दुराग्रह का तुषारपात किया। माना कि आपका विचार उस विषय मे आगे प्रयास करना निरर्थक समझता था, परन्तु आपका ही विचार तो कोई वेदवाक्य था नही। आपने क्यो न सदस्यो की बहुमत-सम्मति का आदर किया ? यदि आप वास्तव मे सस्था के हितू थे तो आपको सस्था के कोष की रक्षा के लिए अपने विचार का दमन करना चाहिए था, जब कि उस विचार मे कोई विवेक नही था। साधारण-सी बात है कि यदि आप सदस्यो की बात मान जाते तो आपकी तो कोई हानि होती नही, सस्था का हित होता। इसके विपरीत आपने अपनी ही बात रखने का बचपने जैसा हठ करके ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी कि तीन हजार से ऊपर की रकम सस्था के कोष से चलायमान हुई और श्रीदत्त जी सरीखे परम उत्साही कार्यकर्ता को सस्था को तत्काल ही सदा के लिए खो देना पडा। आपका व्यक्तिगत विचार क्या इतना मूल्यवान था पण्डित जी कि उस पर आपने सस्था के हितो को इतनी दरियादिली से बलिदान हो जाने दिया। अब, हे विधान-पचानन ? आप ही बताइए, सस्था म इस प्रकार के आचरण को एकछत्राधिपति न कहा जायगा, तो कौन-सी सज्ञा दी जायगी और वह किस सुग्रत मे लिखी है।

इस सस्था के द्वारा विश्वविद्यालय स्थापित करने की इच्छा इसके सदस्यो की वर्षों पुरानी लालसा थी, यह तो आप भी मानगे। सदस्यो की इस लालसा के ही नाम पर यदि आप थोडी-सी उदारता कर देते, कम से कम यही न कहते कि मै तटस्थ हूँ, तो पहले तो वह आया हुआ चन्दा वापिस न करना पडता, फिर श्रीदत्त जी जैसा लगन का पक्का साधक कार्यकर्ता न खोना पडता और भगवान चाहता तो येन-केन-प्रकारेण वह विश्वविद्यालय स्थापित हो ही जाता। फिर चाहे बाद मे आप तटस्थ ही रहते और यही मान लीजिए कि वह कार्य कतई न होता, तो भी केवल एक वर्ष का समय दे देने से आप पर कौन-सा विपत्ति का पहाड टूट रहा था ? यह बात इस जडबुद्धि की समझ मे नही आ रही, पण्डितराज ! हा उस योजना को स्थगित करके यदि आप तत्काल ही कोई अन्य योजना विद्यालय के लिए प्रस्तुत करते और उस पर ऐसा हठ करते तो भी आपके हठ को न्यायपूर्ण मान लिया जाता। खैर यह भी जाने दीजिए !

उस बैठक मे जब आपने अपने ही विचार को मनवा लिया और जब सस्था के कोष से तीन हजार रुपया देने की नौबत आई तो सस्था का सच्चा हितू होने के नाते और सत्य पर अडिग रहने वाले एक न्यायपूर्ण व्यक्ति के नाते, आपका यह धर्म था कि आप पहला प्रयत्न सस्था के कोष को बचाने का करते। आप श्रीदत्तजी से विनय करते कि दिया हुआ चन्दा वापस न माँगिए और मै विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि श्रीदत्तजी जैसा परम उदार व्यक्ति कदापि आपकी ऐसी विनय को न ठुकराता क्योकि परिस्थिति बता रही है कि सस्था का हित आपसे अधिक उनके हृदय मे सुरक्षित था। वे आपकी बात को मानते, बशर्ते कि आपकी बात मे विनय का कोमल भाव होता। और, वे न भी मानते तो जिस प्रभाव का उपयोग करके, आपने अपना एक विचार मनवाया था, उसका ही उपयोग सस्था के हित मे करके आप चन्दा वापिस न करने का निश्चय भी करा सकते थे। उसको कोई भी अनैतिक, अनियमित या अव्यावहारिक न कहता। क्योकि ऐसा करना सस्था के हित मे था, बहुजन हिताय था। इसे भी जाने दीजिए !

जब चन्दा लौटाना ही निश्चय किया था, तो सस्था के सर्वश्रेष्ठ हितरक्षक होने के नाते, निष्ठावतार, इतना तो पूँछ ही लेते कि वह चन्दा किसको लौटाना है और वह वास्तव मे किस कार्य के लिए आया था ? जब कभी अपनी जेब से कोई चार पैसा निकाल कर देता है तो चार बार यह देखता है कि वह ठीक दे रहा है या नही। फिर यह तो २२००) की रकम थी, और यह कोई लाला जी का माल नही था, एक वैधानिक सस्था का चन्दे से एकत्र किया हुआ कोष था, जिसपर केवल आपका ही अधिकार नही था, उस पर डेढ हजार सदस्यो का अधिकार था। इसे भी जाने दीजिए !

जब चन्दा लौटा दिया गया तो जिस पत्रिका के हजारो पृष्ठ आपकी विरुदावली मे रगे गये, उसमे केवल चार पक्तियाँ लिखकर सदस्यो को तो बता देते कि अमुक

कोष मे से अमुक व्यक्तियो का, इतना चन्दा अमुक कारण से लौटा दिया गया। अब बताइए विधानवेत्ता पण्डितराज! इन सब बातो के उत्तर मे आप क्या कहते है?

इतना निवेदन करने के बाद, फिर आपके तीसरे वक्तव्य पर आता हूँ, और विनम्र प्रार्थना करता हूँ कि यदि कोई पूर्व-योजना नही थी, और आपने जानबूझ कर सस्था के कोष की कोई उपेक्षा नही की तो आपको उपर्युक्त बाते तो करना ही चाहिये थी। इनके अभाव मे कोई क्या सोच सकता है, इनका निर्णय आप ही कर लीजिए। जहाँतक कागजात देखने से पता चलता है, कोई रकम ऐसी नही थी, जो किसी शर्त विशेष पर आई हो। समस्त दानदाताओ की तरह आपके पूज्य पिताजी ने भी वह चन्दा, अधिवेशन मे विश्वविद्यालय के हेतु की गई धन देने की अपील के फल-स्वरूप दिया था, ऐसा पत्रिका मे लिखा है। सबने स्वेच्छा से विश्वविद्यालय के लिए धन दिया था, उसी प्रकार उन दो दानियो ने भी तदर्थ धन दिया था, और यदि आप ने अपनी मनमानी न की होती, तो पूर्ण विश्वासपूर्वक यह कहा जा सकता है कि आपके पूजनीय पिताजी और श्रीदत्तजी दोनो इतनी बात वाले है कि दिया हुआ दान वापस न लेते।

इस लेख के अधिक विस्तृत हो जाने का भय यदि न होता, तो मै आपके वक्तव्य सख्या ३ के प्रत्येक विषयाक को लेकर आपसे निवेदन करता। ऊपर का विवरण इसलिए देना पडा कि इस सारी फजीहत की जड वही घटना है। हर एक समझदार यह आसानी से समझ लेगा कि इस घटना म यदि आपने थोडी-सी भी उदारता और वास्तविक बुद्धिमानी से काम लिया होता तो, आजतक जो कुछ अप्रिय हुआ और अब भी हो रहा है, वह कुछ न होता और साथ ही यह भी विनय कर दूँ विद्वान जी, कि सत्यपरक उदारता और शोभन सन्तोष से यदि आप अब भी काम ले, तो समाज मे बढ़ता हुआ यह जहर जहाँ का तहाँ समाप्त हो जायगा, क्योकि, विश्वास कीजिए कि किसी को आपके विशाल व्यक्तित्व से चिढ नही। किसी को आपसे व्यक्तिगत द्वेष नही। आपके अद्भुत और अपने मे अनुपमेय विविध गुणो तथा आपकी प्रतिभा का जहाँतक ताल्लुक है, उससे किसी ने भी इन्कार नही किया। आपका व्यक्तित्व यहाँ विचार का विषय है ही नही। अपने व्यक्तित्व और चरित्रदृढता के विषय मे आप वृथा ही वर्तमान युग के बडे लोगो के वक्तव्य सकलित करने का श्रम कर रहे है। यहाँ तो प्रश्न आपके सस्थागत कार्य-कलापो का प्रस्तुत है भाग्यवान! उसपर ही एक बार ठण्डे दिल से विचार कर लीजिए और जहाँ जो भूल हो गयी है उसको, सारे समाज को कुतर्कों की भूल-भुलइयो मे घुमाने के बजाय साहसी सेनापति की भाँति स्वीकार कर लीजिए! और, हे प्रज्ञावतार जन्मजात नेता! सकटो के भवर म पडे हुए इस आयुर्वेद-सम्प्रदाय पर, अब तो कृपा ही कर दीजिए! या तो कुछ ऐसे कार्य कर डालिए जिनसे कुछ क्रियात्मक गति दिखायी दे और समाज का कल्याण हो। या फिर थोडा शान्त रहिए, उसमे भी क्या हानि है—छोड दीजिए वैद्यो को उनके भाग्य पर।

इतनी प्रार्थना कर लेने के बाद, वक्तव्य सख्या ३ के नवग्रही विषयाको पर कुछ और निवेदन करना आवश्यक प्रतीत नही होता। फिर भी आपकी और आपके सेनापतियो की इच्छा हुई तो आगे फिर सेवा मे उपस्थित हो जाऊँगा। और बिल्कुल अन्त मे एक निवेदन और कर दूँ पण्डितराज! यह सारी बात मै भरपूर सद्भावना के साथ, विनम्र भाव से शर्मदारो के लिए निवेदन कर रहा हूँ।

शेषाश] संपादकीय [८३६ पृष्ठ का

के अनुसार यह बात तो सुनिश्चित है ही कि जितनी सख्या मे एक मेडिकल कालिज चिकित्सक तैयार करेगा, देशी चिकित्सा के विद्यालय उससे बीस गुने चिकित्सक,कम से कम, प्रस्तुत कर देगे। यह अनुभव सिद्ध सत्य है कि मेडिकल कालिजो से तैयार हुए डाक्टर शहरी क्षेत्र मे ही अपना कार्य विस्तार करेगे, देश के सुविस्तृत ग्रामीण क्षेत्र की स्वास्थ्य-समस्या का तनिक भी समाधान उनके द्वारा नही हो सकेगा। शहरो में तो अब भी डाक्टरो की कमी नही है। देश की बहुसख्यक जनता को चिकित्सा-सुविधा पहुँचाने का प्रश्न है तो उसका हल भारतीय चिकित्सा-प्रणाली के चिकित्सको की वृद्धि से ही हो सकता है। पाश्चात्य-प्रणाली के स्वास्थ्य-रक्षण तरीको को अपनाने से कोई लाभ नही हुआ, पिछले सौ वर्ष का अनुभव इसका साक्षी है। इसके विपरीत भारतीय स्वास्थ्य-सिद्धान्त इतने पूर्ण और सुगम है कि उनको जनता के जीवन मे उतारने से देश का स्वास्थ्य निश्चित सबल हो सकता है हमारा हजारो वर्ष का इतिहास यह बताता है। भारतीय प्रणाली के अनुयायी वैद्य स्वाभाविक ही गरीब और ग्रामीण जनता के काम आवेगे। जनता के अधिक निकट होने के कारण वे जनसाधारण मे भारतीय स्वास्थ्य-सिद्धान्तो के प्रति सुरुचि जागृत करने मे अधिक सफल हो सकेगे। ऐसी दशा मे सरकार को जनस्वास्थ्य के विषय मे अपनी नीति पर पुर्नविचार करना चाहिए और अनावश्यक ही अधिक मेडिकल कालिजो मे पुष्कल द्रव्य-व्यय न करके आयुर्वेद की पद्धति के विकास के हेतु आधुनिक स्थिति के अनुरूप आयुर्वेदीय पाठ्यक्रम पर आधारित अधिक से अधिक आयुर्वेद विद्यालयो की स्थापना करनी चाहिए।

पित्तला योनिव्यापत्

वैद्य रणजितराय

वर्तमान आयुर्वेदीय पाठ्यक्रमो म स्त्रीरोग नाम से जो रोग अभिहित हैं उनमे गर्भयन्त्र-सबन्धी रोगो को प्राचीनो ने योनिव्यापत् नाम दिया है। योनि शब्द यहाँ केवल अपत्यपथ का वाचक नही, किन्तु सपूर्ण गर्भयन्त्र के लिए आया है। इस के रोगो को योनिव्यापत् यह सर्वग्राही नाम देकर आगे उत्कट दोष के भेद से योनिव्यापत्तियो के वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक तथा सान्निपातिक ये भेद किये गए है। इनमे पैत्तिक योनिव्यापदो के नीचे लिखे भेद सुश्रुत ने दिए हैं—**पित्तोत्था रुधिरक्षरा। वामिनी स्रंसिनी चापि पुत्रघ्नी पित्तला च या**—सु उ ३८।७—रुधिरक्षरा (असृक्क्षरा, लोहितक्षरा, लोहितक्षया या रक्तयोनि), वामिनी, स्रसनी या प्रस्रसिनी, पुत्रघ्नी तथा **पित्तला योनि**। यो तो इनमें प्रत्येक व्यापत्ति मे पित्तका प्राधान्य होता है (**वातस्वपि चाद्यासु पित्तलिङ्गोच्छ्रयो भवेत्**—सु उ ३८।१४) तथापि अन्तिम योनि को ही पित्तला योनि यह विशेष नाम दिया गया है।

सामान्यतया अध्यापक जन योनिव्यापत् रोगो के प्रकरण मे अन्य योनि रोगो के साथ और उनके सदृश पित्तला योनि का भी ग्रन्थोक्त निदानादि बता देते हैं। व्यवहार मे यह रुग्णा पित्तला योनिव्यापत्ति से ग्रस्त है, ऐसा निर्देश नही करते। तथापि पाश्चात्य विज्ञान मे इस व्यापत्ति का जो पर्यायभूत रोग है, उसका पृथक् विवरण नव्यविज्ञानानुसार किया जाता है। विचार करने से यह स्थिति टाली जा सकती है। यही रोग नही, अन्य रोगो के विषय मे भी इसी रीति से सुधार किया जा सकता है। नवीनोक्त यह रोग प्राचीनो ने इस नाम से दिया है, यह समझा दिया जाए तो प्राचीनोक्त निदान-लक्षण-चिकित्सा स्पष्टतर हो जाती है। अन्यथा वह '**श्रुतौ तस्करता स्थिता**' के समान केवल शास्त्र में बद्ध रह जाती है। उसके जानने की कोई क्रियात्मक उपयोगिता रह नही जाती। परिणामतया, परीक्षा के अनन्तर उस की उपेक्षा कर दी जाती है।

नवीनोक्त नाम से रोग-विशेष का परिचय देने की सलाह यहाँ इस लिए दी है कि शास्त्र मे कई रोगो को दृष्टान्त देकर स्पष्ट दर्शाना अभी सुगम नही है। कारण, मध्यकाल मे आयुर्वेद के अध्यापन की परम्परा छूट गयी, जिससे उसका बहुत-सा अश केवल अक्षरार्थमात्र के अध्ययन-अध्यापन की वस्तु रहा है। वर्तमान विज्ञान मे रोगो को प्रत्यक्ष दिखाने की सुविधा है। उस के अनुसार रोग-विशेष को जान कर यह प्रयत्न करना चाहिए कि प्राचीनोक्त कौन-सा रोग नवीनोक्त किस रोग से साम्य रखता है। इस समन्वय से यथा-कथचित् आयुर्वेद के शब्दो का अर्थ-निश्चय करना ही हमारा प्रयोजन नही है। आयुर्वेदोपदिष्ट कई रोगो को इस रीति से समझ लिया जाए तो आयुर्वेद हमारे सामने हस्तामलक होने का सतोष तो हमे प्राप्त होगा ही, साथ ही यह भी सभव है कि, हम प्राचीन सज्ञा से रोग को समझ कर उसके नवीनोक्त उपचार की अपेक्षा अधिक यशस्वी उपचार आयुर्वेद-मत से करने मे समर्थ हो सके।

कुछ यही दृष्टि प्रस्तुत लेख लिखने मे है। इसी कारण सहिता के शब्दो मे इसके लक्षण लिखने के पूर्व लिख देना चाहता हूँ कि—पाश्चात्य स्त्रीरोग-विज्ञान मे जिसे 'इरोझन' कहते है वह आयुर्वेद की पित्तला योनिव्यापत् है।

इरोझन शब्द का परिचय अग्रेजी के विद्यार्थी को प्रथम भूगोल मे होता है। नदी के प्रवाह से भूमि का धोया जाना इरोझन कहाता है। इसी से केवल शाब्दिक परिचय से नवीन विद्यार्थी यही समझता है कि गर्भाशय-ग्रीवा आदि मे व्रण होना यही इरोझन का अर्थ है। यत्सत्य, इन अवयवो मे पित्त का स्थानसश्रय होने से जो पाक, व्रण-शोथ या इन्फ्लेमेशन होता है वह तथा आगे उसका भेद होकर —व्रणशोथ फूट कर—जो व्रण बनता है वह सब इरोझन कहाता है। आयुर्वेद-मत से तो यह सर्वस्थिति पाक के ही अन्तर्गत है। देखिए।

सुश्रुत ने दोषो की वृद्धि या प्रकोप की जो छ अवस्थाएँ बताई हैं उनमे चतुर्थ अवस्था स्थानसश्रय या पूर्वरूपावस्था के अनन्तर पञ्चम अवस्था का निर्देश करते कहा है—**अत ऊर्ध्वं व्याधेर्दर्शनं वक्ष्याम.—शोफार्बुद ग्रन्थि विद्रधि विसर्प**

प्रभृतीनां प्रव्यक्तलक्षणता ज्वरातीसार प्रभृतीनां च—सु सू २१।३४। शोफ या शोथ का अर्थ स्पष्ट करते चक्रपाणि ने कहा है—शोथ का अर्थ यहाँ व्रणशोथ है। कारण अगली अवस्था मे इसके विदीर्ण होकर व्रणभाव को प्राप्त होने का उल्लेख तन्त्रकर्ता ने किया है—शोथश्चेह व्रणशोथ उच्यते, उत्तरकालमस्यावदीर्णताभिधानात्। मूल वचन का तात्पर्य यह है कि पूर्वरूपावस्था म रोगो के व्यक्त लक्षण, जिनके आधार पर रोग का निदान होता है वे प्रादुर्भूत नही होते। अपचार—मिथ्याहार-विहार—चालू रहे, रोग की उपेक्षा की जाय—उपचार न किया जाए, किवा मिथ्योपचार हो तो रोगारम्भक दोष की वृद्धि होती जाती है और शेष दो अवस्थाएँ क्रमश उपस्थित होती है। दोनो अवस्थाओ म शल्य-शालाक्यतन्त्रोक्त तथा कायचिकित्सोक्त रोगो मे कुछ भेद होता है। पञ्चमावस्था मे व्रणशोथ, अर्बुद, ग्रन्थि, विद्रधि, विसर्प प्रभृति शल्य-शालाक्योपदिष्ट रोगो के व्यक्त लक्षण प्रकट हो जाते है। इन्हे देखकर निर्णय करना सुगम हो जाता है कि विकृति अर्बुद है, ग्रन्थि है, विद्रधि है इत्यादि। इसके पूर्व लक्षण अस्पष्ट होने से केवल उत्सेध देखकर अनेक रोगो की सभावना मात्र की जा सकती थी। इस पञ्चमावस्था मे कायचिकित्सोक्त रोगो के व्यक्त लक्षण, जिन्हे प्रत्यात्म लक्षण या व्याधिलक्षण भी कहा जाता है, वे प्रकट हो जाते है। उन्हे देख कर रोग-विनिश्चय करना सरल हो जाता है। यथा-इस अवस्था मे ज्वर मे सताप (शरीरोष्मा की वृद्धि), अतिसार में अति सरण (अति एव द्रवमलप्रवृत्ति), उदर मे उदर का पूरण (चिरकारी उत्सेध) इत्यादि तत्-तत् रोग मे तत्-तत् विशिष्ट लक्षण का उदय हो जाता है और रोग की निश्चिति हो जाती है।

षष्ठ अवस्था का निर्देश करते सुश्रुत जी आगे लिखते है—अत ऊर्ध्वमेतेषामवदीर्णाना व्रणभावमापन्नानां षष्ठ क्रियाकाल, ज्वरातिसारप्रभृतीनां च दीर्घकालानुबन्ध। तत्राप्रतिक्रियमाणेऽसाध्यतामुपयान्ति—सु सू २१।३५। इसकी व्याख्या करते डल्हन कहते है—व्यक्तिमभिधाय भेद कथयन्नाह—अत ऊर्ध्वमित्यादि। एतेषा शोफादीनामित्यर्थ। अवदीर्णाना विदरण गताना भिन्नानामित्यर्थ। अवदीर्णत्वं च शोफादीनां विशेषलक्षणं, तच्च भेद। व्रणभावमापन्नानामिति यत एव विदीर्णा अत एव व्रणत्व गता इत्यर्थ। ज्वरातीसार प्रभृतीनां च दीर्घकालानुबन्ध इति यथा व्यक्तिप्रस्तावे ज्वरादीनां संताप-सरणपूरणादिक सामान्यलक्षणमुक्त, तथात्र भेदप्रस्तावाद् विशेषलक्षण दीर्घकालानुबन्धो ज्वरादिष्वातिषु भेद इति ज्ञातव्य—व्यक्ति नामक अवस्था के अनन्तर भेद-सज्ञक छठी अवस्था आती है। उक्त उभयतन्त्रोक्त रोगो के पक्ष मे भेद शब्द का अर्थ भिन्न-भिन्न होता है। व्रणशोथ, अर्बुद, विद्रधि आदि शल्यतन्त्रोक्त रोग इस अवस्था मे भिन्न हो जाते है—वे पक्व हो या अपक्व, फूट जाते है। इस कारण उनकी इस अवस्था को भेद कहते है। (भिन्न—फटा हुआ—तथा भेद दोनो शब्द 'भिद्' धातु से बने है)। काय चिकित्सोक्त ज्वर अतिसार, उदर आदि रोगो मे भेद शब्द का अर्थ प्रकार है। इस अर्थ मे भेद शब्द लोक म भी प्रसिद्ध है। इस अवस्था म प्रकार का अर्थ यह है कि रोग चिरकारिता (जीर्णता) एव असाध्यता को प्राप्त हो जाते है। सो, इन रोगो म भेद का अर्थ है रोगो का जीर्ण और असाध्य यह भेद[1]-विशेष, प्रकार-विशेष।

प्रस्तुत प्रकरण म इस विवेचन का तात्पर्य यह है कि गर्भाशय-ग्रीवा आदि म जो पाक या व्रणशोथ होता है वह फूट कर व्रणरूप मे परिणत हो जाए तो वह भी पाक की अवस्था ही है, पाक शब्द से उस का भी ग्रहण किया जा सकता है। इसी प्रकार अग्रेजी इरोझन शब्द से पाक या व्रणशोथ तथा उसकी व्रणरूपता दोनो गृहीत है।

विशदता के लिए पित्तला योनि का नवीन मत से पर्याय तथा उस की व्याप्ति दर्शाकर अब इस विकृति का सहितोक्त लक्षण देखते है—

अत्यर्थं पित्तला योनिर्दाहपाकज्वरान्विता
सु उ ३८।१३

व्यापत् कट्वम्ललवणक्षाराद्यै पित्तजा भवेत्।
दाहपाकज्वरोष्णार्ता नीलपीतासितार्तवा॥

१—भिन्न-भिन्न अर्थो का एक ही शब्द अनेक वस्तुओ के लिए व्यवहृत हुआ हो तो इन अनेक वस्तुओ को एक ही वर्ग मे स्थापित करने की यह शैली आयुर्वेद की विशिष्ट शैली है। यहाँ भेद शब्द के दो भिन्न अर्थ है तथापि उनका वाचक भेद शब्द एक ही होने के कारण एक ही अवस्था मे दोनो का सनिवेश किया है। एक अन्य उदाहरण लें। विषम शब्द का अर्थ दारुण तथा ऊष्मा आदि की विषमता (अन्तर अधिक होना) ये दोनो है। परन्तु विषम शब्द दोनो का समान रूप से वाचक होने के कारण तृतीयक आदि विषम ज्वर तथा सतत-सन्निपात ज्वरो को कभी विषम इस एक ही वर्ग मे रखा जाता है।

भृशोष्णकुणपस्रावा योनि' स्यात् पित्तदूषिता।
च चि ३०।११-१२

यथास्वैर्दूषणैर्दुष्ट पित्त योनिमुपाश्रितम्।
करोति दाहपाकोषापूतिगन्ध ज्वरान्विताम्॥
भृशोष्णभूरिकुणपनीलपीतासितार्तवाम्।
सा व्यापत् पैत्तिकी॥ अ हृ उ ३३।४२

हरी मिर्च आदि कटु, दही, टमाटर आदि अम्लरस या अम्ल विपाकी, लवण एव पापडखार, सोडा आदि क्षार एव अन्य पित्तप्रकोपक आहारादि के अतियोग से पित्त प्रकुपित होकर योनि (गर्भयन्त्र) मे स्थानसश्रय करता है। इसके कारण योनि मे पाक होता है। साथ ही, रुग्णा मे उष्णता, दाह, ज्वर ये प्रादेशिक तथा सार्वदहिक लक्षण होते है। अपत्यपथ से नित्य अति उष्ण एव दुर्गन्धयुक्त (शवगन्धी) स्राव हुआ करता है। ऋतुकाल मे जो आर्तव प्रवृत्त होता है वह भी अधिक, एव वर्ण मे नील (श्याम), पीत तथा श्वेत-मिश्र तथा दाहयुक्त होता है।

पित्तला योनि मे पाक मुख्यतया स्मरणीय लक्षण है। जैसे पित्त के प्रकोप से मुख, गुद, मेढ्र आदि मे पाक होता है वैसे योन्याश्रित पित्त से योनिपाक होता है। पाक अथवा व्रणशोथ बाहर हो तो जैसे उसमे वेदना होती है वैसे पैत्तिक योनि मे भी वेदना प्रमुख लक्षण के रूप मे होती है। यह वेदना गर्भाशय के स्थान पर—बस्तिप्रदेश या पेडू मे—(हायपोगेस्ट्रिक रीजन मे) होती है। बाह्य व्रणशोथ के सदृश ही इसमे पीडनाक्षमता या दबाने से वेदना मे वृद्धि होती है—पीडन सह्य नही होता।

दाह प्रादेशिक तो होता ही है, पित्त के प्रमाण के तारतम्य तथा स्थानसश्रय के भेद से मूत्र, मूत्रप्रसेक, नेत्र, मल, गुद, सर्वाङ्ग आदि मे भी दाह होता है। उष्ण का अर्थ है अवयव किंवा स्राव रोगी को उष्ण प्रतीत होना, किंवा परीक्षक को उसका स्पर्श उष्ण प्रतीत होना। यह उष्णता भी उक्त सर्व अवयवो मे होना सभव है। ज्वर प्राय मन्दवेगी तथा नित्य रहता है।

स्राव के रूप मे दुर्गन्धयुक्तता प्राय होती है। सिद्धान्त की दृष्टि से विचार करे तो पित्तप्रकोपक आहार सडा-गला कर बनाया हुआ किंवा पडा रहने से दुर्गन्धी स्वभाव का हो तो जो पित्त वृद्धि को प्राप्त होगा वह विस्र—दुर्गन्धवाला—होगा। इसमे उत्तरबस्ति के कषाय आदि प्रादेशिक उपचारो मे एव मुखादि मार्गो से दिए जानेवाले कल्पो मे जो पित्तहर द्रव्य पसन्द किए जाएँ वे सुगन्धी होने चाहिए—यथा चन्दन, उशीर इत्यादि। यह एक प्रस्ताव है। जिनके पास सुविधा है वे सुचिकित्सक प्रयोग-परीक्षण द्वारा इसकी परीक्षा करे तथा परिणाम प्रकाशित करने की कृपा करे।

लवण और क्षार द्रव्यो के अतियोग से पित्त की वृद्धि हुई हो तो अपत्यपथ से जो स्राव होता है उसमे द्रवत्व अधिक होने से उसका प्रमाण विशेष होता है। यही स्थिति पाण्डुरोग मे होती है। किं बहुना, केवल अपत्यपथ से स्राव का वृत्तान्त जान कर मन म 'ल्यूकोरीआ' की स्मृति कर या स्वतन्त्रतया श्वेत प्रदर का विचार न करना चाहिए। वैसे तो श्वेत प्रदर सज्ञा स्वय अशास्त्रीय है। श्लेष्मला योनि नाम शास्त्रशुद्ध है। परन्तु दोष-भेद से भिन्न-भिन्न प्रकार के स्राव अपत्यपथ से हुआ करते है। उनको प्रश्नादि परीक्षाओ द्वारा जान कर दोष विशेष का निदान कर चिकित्सा के तदनुरूप मार्ग का निर्धारण करना चाहिए। यही आयुर्वेद की पद्धति होगी।

प्रश्न-परीक्षा द्वारा निदान अर्थात् रोगकारण का भी ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। मिर्च आदि के अतियोग का वृत्तान्त उपलब्ध हो तो पित्तला योनि का निश्चय करना सुगम होता है। उपशयानुपशय की निश्चिति (पथ्यापथ्य) का भी निर्णय हो जाता है। परन्तु, पित्तप्रकोपक आहार के अतियोग के अतिरिक्त गर्भस्थिति जनित किंवा उदावर्त (कब्ज) के कारण प्रतिदिन मलमार्ग से पित्त का जितने प्रमाण मे निर्हरण होना चाहिए उतने प्रमाण मे निर्हरण होता नही। उसका सचय होकर वृद्धि होती है। वृद्ध हुए इस पित्त का स्थानसश्रय विशेषतया योनि मे हो तो पित्तला योनि की उत्पत्ति होती है। अधोवायु के वेगावरोध से हुए उदावर्त के लक्षणो मे सुश्रुत ने कहा है कि इससे कफ और पित्त का दारुण प्रसर होता है—**कफपित्तप्रसर च घोरम्**—सु उ ५५-७। सहज अर्श के प्रकरण में भी अधोमार्ग के अवरोध से इतर वायुओ, पित्त तथा कफ का अवरोधपूर्वक सचय एव प्रकोप होने का निर्देश सर्व सहिताकारो ने किया है। इन तथा अन्य प्रकरणो को मैं 'उदावर्त'—शीर्षक लेखमाला मे उद्धृत करूँगा। उससे इस विषय की अधिक स्पष्टता होगी।

पित्तला योनि में स्राव दुर्गन्धयुक्त हो और क्षत से रक्त की भी प्रवृत्ति हो, एव रुग्णा कदाचित् पूर्ववय पार कर

चुकी हो तो रक्तार्बुद (कैंसर) की शङ्का होती है। परन्तु उसम रक्तस्राव सतत हुआ करता है। यह उसका पैत्तिक योनि स भदक लक्षण है। पित्तला योनि म क्षत होकर रक्तस्राव हो तो उसम एक विशषता यह होती है कि इस पर शुद्ध या अशुद्ध धातु का आवरण आन पर रक्तस्रुति तब तक ब द रहती है जब तक शुद्ध धातु क्लिष्ट होकर झड न जाए। पुन शुद्ध धातु का प्रादुर्भाव होन पर रक्त स्राव ब द रहता है। इस प्रकार मध्य मध्य म रक्तस्रुति ब द होन का वृत्तान्त प्राप्त होता है। रक्तार्बुद म यह स्थिति होती नही।

दुर्गन्धयुक्त पित्तला योनि को पाश्चात्य स्त्रीरोग विज्ञान म बैंड इरोझना कहत हैं।

आयुर्वेद मत से पित्तला योनि निदान होन पर चिकित्सा का माग प्रशस्त हो जाता है। समव हो तो चिकित्सा के पूव प्रत्यक्ष परीक्षा करा ल। प्राय पुरुष चिकित्सको क लिए यह सभाव्य न होन से ऊपर दिए साव दहिक तथा प्रादशिक लक्षण एव निदान (कारण) रोग विनिश्चय म बहुत ही उपयोगी सिद्ध होत हैं। आयुर्वेद मत से इस रोग को समझ लिया जाना चिकित्सा की दष्टि से बहुत उपयक्त होता है। निदान परिवजन पथ्य का सवन एव पित्तानुसारी शोधन शमनात्मक चिकित्सा से इस रोग की चिकित्सा अधिक फलवती होती है। मिश्र चिकित्सा पद्धति क अध्ययन-अध्यापन तथा व्यवसाय की जिन्ह सुविधा हो व इस दिशा म अनुभवपूवक अधिक प्रकाश डाल सकत है।

चिकित्सा म जैसा कि ऊपर कहा निदान परिवजन प्रथमावश्यक है। निदान यदि कटु द्रव्यो क सवन का हो तो वह यथावश्यक अल्प कराएँ। अर्थापत्ति से निदान परिवजन का अथ है हित का सेवन। सो दूध घी सितो पला आदि का सवन सविशष कराना चाहिए। रोग निदान यदि उदावत हो तो उसक लिए विरचन का महत्व विशष है। कई वार पित्तला योनिव्यापत्ति गभस्थिति क कारण होती है। उसम भी उपयुक्त विरचन दन पर ध्यान द। आयुर्वेद म शमन की अपक्षया शोधन का अधिक महत्त्व माना गया है उसे इस रोग म स्मरण रख। उदा वत के स्पष्ट लक्षण न होन पर भी **विरेचन पित्तहराणाम** को स्मति म रख मदु विरचन दत रह। शमन औषध क रूप म गलकन्द आमला का अवलह आमलकी क रसायन चूण (गुडची गोक्षुर आमला का चूण) आदि कल्प उपयुक्त हैं। शतावरी बिदारी मधुयष्टी अनन्तमूल अश्वगन्धा वाकरी आदि शीत पित्तशामक द्रव्यो का उपयोग अति हितावह होता है। सुश्रुत न लिखा है—गर्भिणी की मासानुमासिक चिकित्सा म जो द्रव्य लिख है योनिव्यापत्तियो म उन का उपयोग करना चाहिए। वह सूत्र इस रोग पर सविशष घटित होता है। मधुयष्टी अनन्तमूल आदि द्रव्य प्राय प्रत्यक मास की चिकित्सा म निर्दिष्ट है। प्रादशिक उपचार म मुखरोगाधिकारोक्त—मखपाक (मुख के छाल) दन्तवष्टपाक (मसूडो म दद) आदि म उपयोगी—इरिमदादि तैल का पिचु (फोया) रखना अति हितावह है। अभाव म त्रिफला तथा मधुयष्टी का वस्त्रपूत सूक्ष्म चूण मलमल म भर पोटली बाध अपत्यपथ म प्रविष्ट कर द।

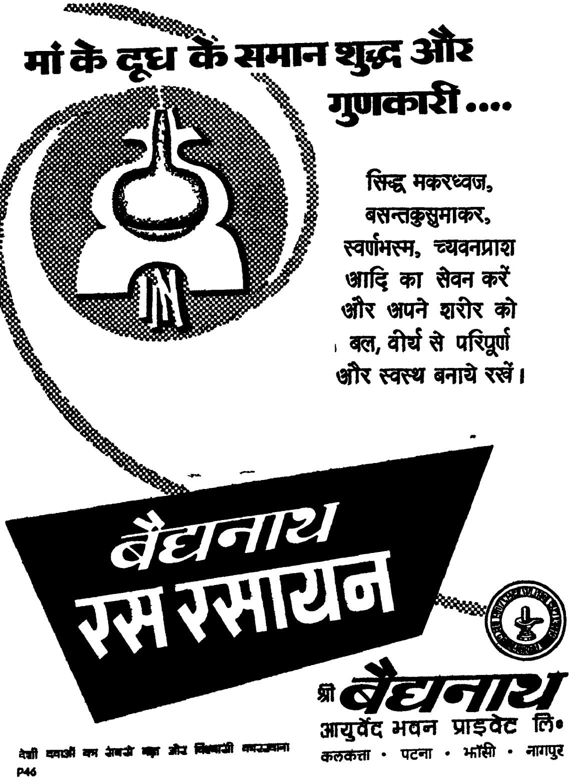
कुपित हुआ पित्त गर्भाशय के अतिरिक्त अपत्यपथ म स्थान सश्रय करे तो व्यवायकाल म वदना यह विशष लक्षण होता है। इसे परिप्लुता य नि यह नाम विशष दिया गया है।

बैद्यनाथ बंग भस्म

असयम से पैदा होनेवाले रोगो तथा दुर्बलता को दूर कर शरीर को ताकत देती है। विशेष जानकारी के लिए वैद्य से सलाह लें।

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लिमिटेड

कलकत्ता * पटना * झाँसी * नागपुर



मां के दूध के समान शुद्ध और गुणकारी....
सिद्ध मकरध्वज, बसन्तकुसुमाकर, स्वर्णभस्म, च्यवनप्राश आदि का सेवन करें और अपने शरीर को बल, वीर्य से परिपूर्ण और स्वस्थ बनाये रखें।
बैद्यनाथ
रस रसायन
श्री बैद्यनाथ
आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०
कलकत्ता • पटना • झाँसी • नागपुर
P46

जीवन की अनेकता और एकता—१

प्रो० जे० बी० एस० हाल्डेन

विख्यात जीव-शास्त्री, प्रो० जे० बी० एस० हाल्डेन ने स्व० सरदार पटेल स्मारक भाषणमाला के अन्तर्गत इस वर्ष 'जीवन की अनेकता और एकता' पर तीन भाषण किये हैं। प्रो० हाल्डेन का कैम्ब्रिज और लन्दन विश्वविद्यालय से अनेक वर्ष तक सम्बन्ध रहा है। उन्होंने "जन्तु जीव-शास्त्र", "विज्ञान और नीति-शास्त्र", "पित्रागति और राजनीति" "शान्ति और युद्ध में विज्ञान", "जीव रसायन-शास्त्र और प्रजनन विज्ञान", विषयक अनेक ग्रन्थों की रचना की है। प्रो० हाल्डेन अब भारत में ही बस गये हैं और इस समय वह भारतीय सांख्यिकी-संस्थान, कलकत्ता में काम करते हैं। प्रस्तुत लेख आल इण्डिया रेडियो द्वारा आयोजित इस भाषण-माला का पहला भाषण है। —संपादक

'जीवन की अनेकता' से मेरा क्या आशय है? इसके अनेक आशय हैं। पहला तो यह कि ससार मे विभिन्न प्रकार के प्राणी जैसे, गाय, कोयल, धान का पौधा और पीपल का वृक्ष मौजूद हैं। इन विभिन्न प्रकार के प्राणियो के बोध के लिए हम जाति शब्द का प्रयोग करते हैं। ऐसे प्राणियों की दस लाख से भी अधिक जातियाँ हैं। दूसरा यह कि इन जातियों मे भी अनेक सदस्य होते हैं और ये सब एक-दूसरे से थोड़े-बहुत भिन्न होते हैं। तीसरा यह कि प्रत्येक प्राणी का शरीर विभिन्न भागो, जैसे—बाल और हड्डिया, पत्ते और जड का बना होता है और अपना आचरण बदल भी सकता है। उदाहरणार्थ एक समय वह भागता है, तो दूसरे समय वह खाता है, एक समय उसमे फूल आते हैं, तो दूसरे समय उसमें फल लगते हैं।

एकता और अनेकता के विषय में भारतीय विचारको की दो हजार वर्ष से भी अधिक समय से रुचि रही है। आप सब इन तथ्यों को जानते हैं। पर शायद आपने जीवन की अनेकता के बारे मे गम्भीरता से विचार नही किया या इस बात पर विचार नही किया कि भारत से इनका क्या सम्बन्ध है। उदाहरण के रूप मे मै पूछ सकता हूँ कि फूल देनेवाले पौधों की कितनी जातिया हैं और उनमे से कितनी भारत की ही उपज है? इस प्रश्न के उत्तर से भारत की सम्पदा का कुछ अनुमान लग सकता है।

"जीवन की एकता" से मेरा क्या आशय है? मोटे तौर से मेरा आशय यह है कि एक नजर देखने पर जितनी विभिन्नता दीखती है, वह वास्तव मे उतनी नही है। पहली बात यह कि विकास के सिद्धान्त के अनुसार, जिसमे मेरा विश्वास है, गाय और साँप इतने भिन्न दीखने पर भी उनके पूर्वज एक ही थे। इस उदाहरण के विषय में हम एक कदम आगे बढकर यह भी कह सकते हैं कि ये पूर्वज उस युग मे रहते थे, जब ब्रिटेन के भूगर्भ मे कोयले की तहों का निर्माण हो रहा था। इस बात का प्रमाण मौजूद है कि पृथ्वी के सब प्राणियों के पूर्वज एक ही थे, हालाकि यह प्रमाण बहुत ठोस नही है। इस प्रमाण का कुछ अश मै आपके सामने रखूँगा। यह बताने की आवश्यकता नही कि भारतीय विचारकों ने इस बात पर जोर दिया है कि मनुष्यों और पशुओं में वशागत सबन्ध है और कुछ पशुओं में बुद्धि भी होती है।

किसी पौधे या जन्तु मे अपनी ही एक इयत्ता होती है। यह इयत्ता क्या किसी आत्मा के कारण होती है, जो काया से न्यूनाधिक रूप से मुक्त होती है या क्या वह काया के विभिन्न अगों के आचरण का परिणाम है, जैसे परिवार या राष्ट्र की इयत्ता उसके सदस्यों के आचरण के रूप में होती है? भारतीय विचारकों ने मानव बुद्धि या मन के रूप पर भी विचार किया है और उनके मत भिन्न हैं। बौद्ध विचारकों का मत है कि मन या बुद्धि क्षणिक तत्त्वों का समुदाय मात्र है। वैशेषिक दर्शन मे कहा गया है कि मन या बुद्धि अणुओं का सघटन है। इसी के साथ व्यक्ति की अलग सत्ता या अहकार का प्रश्न भी है। बौद्ध और अद्वैत दोनों दर्शनों मे यह प्रतिपादित है कि अहंकार एक भ्रम है। मै इस प्रश्न पर बौद्धिक नहीं, बल्कि जैविक दृष्टि से विचार करूँगा।

तीसरी बात यह है कि जन्तुओं के परिवार की एकता जैसी भी एक चीज होती है। यहाँ मेरा परम्परागत भारतीय विचारधारा से गहरा मतभेद है। आपके

विचारकों ने मात्स्य-न्याय की बात कही है। उन्होंने इस मत का प्रतिपादन किया है कि जन्तुओं का आपस में एक-दूसरे के प्रति कोई कर्तव्य नही है और सबल का दुर्बल को हड़प कर जाना न्यायोचित है, क्योकि मछलियाँ भी ऐसा ही करती है। मै मछलियो को इस कलक से बचाने और यह दिखाने का प्रयत्न करूँगा कि कम से कम कुछ मछलिया ऐसी हैं, जो पति या पत्नी के प्रति वफादारी, बच्चों की देखभाल और सामाजिक जीवन के मामले मे मनुष्य के लिए आदर्श हो सकती हैं।

मेरा पहला काम जातियों की विभिन्नता और उनके पूर्वजो के एक होने के प्रमाण के बारे मे कुछ बताना होगा। किसी जाति की हम कोई निश्चित व्याख्या नही कर सकते। मोटे तौर से हमारा आशय जन्तुओ अथवा पौधो के ऐसे वर्ग से होता है, जो अन्य सब वर्गों से कई प्रकार से भिन्न हो और जिसे दूसरो से मिलानेवाली कडी के रूप में बीच का कोई जन्तु वर्ग न हो। कई सौ उदाहरण ऐसे है, जिनके बारे में कहा जा सकता है कि वे दो अलग जातियो के इसलिए हैं, क्योंकि वे आपस मे मैथुन नही करते और यदि करते हैं तो उससे किसी सकर जाति का जन्म नही होता या खच्चरों की भाँति नपुसक सतति का जन्म होता है।

विभिन्न जातियो की सख्या का मोटा अनुमान लगा लेना चाहिए। जन्तुओ के जिन वर्गों से हमारा विशेष परिचय है, वे हैं स्तनपायी जन्तु और पक्षी। मनुष्य, गाय, कुत्ता, चूहा, चिमगादड, ह्वेल आदि सब स्तनपायी जन्तु हैं। स्तनपायी जन्तुओ की लगभग १० हजार और पक्षियों की ८ हजार जातिया है। इससे अधिक जातियो का पता चलने की सम्भावना कम है। मछलियो की लगभग २० हजार जातियाँ हैं और सर्प आदि तथा मेढक की भाँति जल और थल, दोनो पर रहनेवाले जन्तुओ की जातियो की सख्या कुछ कम है। कहना चाहिए, रीढ की हड्डी-वाले जन्तुओं की कुल मिलाकर ४० हजार जातियाँ है। इसके विपरीत कीडो की लगभग १० लाख ऐसी जातियाँ हैं, जिनके बारे मे हमे ज्ञान है। सम्भव है, कीडो की १० लाख जातिया और हो जिनकी जानकारी प्राप्त करना अभी बाकी है। बाकी जन्तुओ, जैसे घोघे, केंचुए आदि की सख्या शायद ५ लाख है।

यहाँ मैं रीढ की हड्डीवाले जानवरो का सक्षिप्त इतिहास आपके सामने रख दूँ। ऐसे जन्तु लगभग ४० करोड वर्ष पहले पानी मे रहा करते थे। वे बहुत कुछ मछली की तरह होते थे, परन्तु उनके न तो मछलियों की भाँति पक्ष होते थे और न ही निचला जबडा होता था। वे वर्तमान मछलियो की भाँति नही खाते थे, बल्कि कीचड को चूस लेते थे। यह कीचड उनके मुँह के पीछे बने अनेक छिद्रो से छन जाता था। उनकी आँखे होती थी, लेकिन उनका जीवन केचुओ से बहुत भिन्न नही था। इनके कुछ वशज, जो आज भी उन्ही जैसा जीवन बिताते है, अब तक शेष है।

इन जन्तुओ के मुँह मे छलनी को सहारा दिये हुए कोमल हड्डियो की सलाखो का एक ढाचा होता था। लगभग ३५ करोड वर्ष पहले या उससे भी पहले इस ढाचे की प्रथम सलाख जुड गयी और जुडने से इन जन्तुओ के दो जबडे बन गये। अब ये जन्तु पहले से बडी चीजे खा सकते थे। लगभग इसी समय मछलियो की भाँति इनके पक्ष भी उग आये और ये जन्तु मछलियो की ही भाँति तैरने लगे। कुछ करोड साल तक मछलियो की बहुत-सी भिन्न जातिया रही। इनमें से कुछ के तीन या चार पक्ष होते थे, लेकिन केवल दो पक्षोंवाली मछलिया ही जीवित बची। यही हमारे और वर्तमान मछलियो और पक्षियो तथा चौपायो के पूर्वज थे। यदि छ पक्षवाले जन्तु बने रहते तो आज शायद हमारे भी फरिश्तो की तरह पख और हाथ होते या दैत्यो की तरह बहुत से हाथ होते।

लगभग ३२ करोड वर्ष पहले बहुत सी छिछली खाडिया थी, जो समय-समय पर सूखती रही। इन खाडियों की जो मछलिया बाहर निकल आयी केवल वही बची रही। इनके पक्षो मे जोड हो गये, जो बाद मे पाव बन गये। मछलिया जमीन पर होनेवाले पौधो और कीडों को खाने लगी। हमारे पास ऐसी ठठरिया मौजूद है, जिनसे इस प्रकार के विकास का प्रमाण मिलता है। एक ऐसे जन्तु की ठठरी भी है, जिसके चार छोटे-छोटे पाव है और मछलियो जैसी पूछ है।

ये आदिम चौपाए जन्तु पानी और जमीन, दोनों पर रहते थे और इनकी शक्ल बहुत कुछ गोह या छिपकलियो की तरह थी। लेकिन, मेढको की भाति इन्हें भी अडे देने के लिए पानी मे जाना पडता था। लगभग ३० करोड वर्ष पहले इनमे से कुछ जन्तुओं ने जमीन पर भी खोलदार अंडे देने शुरू किये। यह क्रिया इन जन्तुओं के दो दलों में या तो स्वाधीन रूप से हुई या ये दो दल बाद मे अलग-अलग

हुए। इनमे से एक दल के जन्तु, जो बाद में स्तनपायी जन्तुओं के पूर्वज बने, लगभग १० लाख वर्ष तक स्थल पर रहनेवाले सब से विशाल जीव थे। फिर वे लगभग नष्ट हो गये और १ करोड वर्ष तक भूमि पर छिपकलियो या गोहों और पक्षियों की-सी शक्ल के जन्तुओ का आधिपत्य रहा। इनमे से कुछ हाथियो से भी बडे थे और कुछ चूहो से भी छोटे। बहुत से जन्तु पिछले पावो पर खडे होकर चलते या दौडते भी थे। जन्तुओ के दो दल ऐसे थे, जो हवा मे भी उडने लगे। इनमे से पहला दल उन विशालकाय जन्तुओ का था, जिनके पख चिमगादडो की तरह थे। बाद मे, पक्षी भी हवा में उडने लगे। जन्तुओ का एक दल जमीन खोद कर नीचे जाने और रहने लगा और कालान्तर मे उनके पाव नही रहे। जब वे दोबारा भूमि की सतह पर आये तो वे साप आदि बन चुके थे। कुछ जन्तुओं ने अपने को एक प्रकार के कवच से ढँक लिया और वे कछुआ आदि बने। जन्तुओ के कम से कम पाच दल फिर समुद्र को लौट गये, हालाकि उन्होंने हवा मे सास लेना जारी रखा। रीढ की हड्डीवाले और हवा मे सास लेनेवाले जन्तुओं मे आज जितनी जातिया है, १० करोड वर्ष पहले उससे शायद कही ज्यादा थी। इसी काल मे मछलियो का आकार और शरीर-रचना भी वर्तमान मछलियो की भाँति होती गयी।

लगभग ८ करोड वर्ष पहले एक ऐसी आश्चर्यजनक घटना घटी जिसका आजतक कोई कारण नही मालूम। लगभग २ करोड वर्ष की अवधि मे रेंगकर चलनेवाले जन्तुओ के अधिकाश वर्ग नष्ट हो गये। उनका स्थान स्तनपायी जन्तुओं, मछलियों और पक्षियों ने ले लिया। शुरू मे, स्तनपायी जन्तुओ मे बहुत विभिन्नता नही थी, लेकिन बाद मे ७ करोड वर्ष तक उनका भिन्न-भिन्न ढग से विकास हुआ। जहाँ तक आकार का प्रश्न है, उनमें इतना परिवर्तन नहीं हुआ, जितना रेंगनेवाले जन्तुओं मे। स्तनपायी जन्तुओं में कोई भी इतना विचित्र नही है, जितना साँप या कछुआ हालाकि, दक्षिण अमेरिका के कुछ जन्तुओ के शरीर पर कछुओ की भाँति कवच-सा उत्पन्न हो गया। ये जन्तु अब बाकी नहीं हैं। सबसे मौलिक जन्तु वर्ग शायद हाथियों का था, जो ५० लाख वर्ष पहले आस्ट्रेलिया, दक्षिण ध्रुव देश और अधिकाश द्वीपों को छोड बाकी सारे ससार मे फैल गये थे।

तीन दुखद घटनाओ के फलस्वरूप यह चमत्कारपूर्ण विविधता कम हो गयी। दक्षिण अमेरिका पहले एक द्वीप था। लगभग ५० लाख वर्ष पहले वह उत्तर अमेरिका से जुड गया और आज तक जुडा हुआ है। तब उत्तर के स्तनपायी जन्तुओ ने दक्षिण पर धावा बोला और अधिकाश दक्षिण देशी जन्तुओ को, जिनमे से कुछ बहुत सुन्दर थे, नष्ट कर डाला। १० लाख वर्ष या उससे कुछ कम पहले अनेक हिमयुग आये, जिन्होने जन्तुओ की अनेक जातियो को नष्ट कर दिया। अन्त मे, मनुष्य का विकास हुआ और उसने कम से कम २॥ लाख वर्ष तक मुख्यत जन्तुओ का ही शिकार करके जीवन बिताया। कुछ जन्तुओ को उसने पालतू भी बना लिया, लेकिन अन्य जन्तुओं को उसने नष्ट कर डाला। गोला-बारूद और बन्दूक आदि के बनने से जन्तुओ के नाश का क्रम और भी तेजी से चल पडा और उष्णदेशीय अफ्रीका को, जो हिमयुगो के आक्रमण से बचा रहा था, मनुष्यो ने करीब-करीब जन्तुहीन कर डाला। अब, आखिरकार हम यह महसूस करने लगे हैं कि जन्तुओ के रूप में सृष्टि मे जो विविधता शेष है, उसको बनाये रखना हमारा कर्तव्य है। भारत सरकार भी यहाँ सिंह और गैंडे को बचाने का पूरा प्रयत्न कर रही है।

हम देखते हैं कि जैसे-जैसे नयी-नयी शक्तियो का उदय हुआ, वैसे ही जीवधारियो मे विविधता बढती गयी, परन्तु मनुष्य के प्रादुर्भाव के बाद यह क्रम उलटा हो गया। जीवशास्त्री की नजर मे एक मनुष्य का दूसरे मनुष्य से कोई भेद नही, परन्तु अपने आचरण और बुद्धि में वे बहुत भिन्न होते है। यह एक नयी प्रकार की विभिन्नता है। मै यहाँ उसकी चर्चा नही करूगा। जब हम कीडो का, विशेषकर सामाजिक कीडो का इतिहास जान पाएगे, तो वह शायद रीढ की हड्डीवाले जन्तुओ के इतिहास से भी अधिक दिलचस्प साबित होगा।

कीडो मे इतनी विविधता क्यो है? आपको याद होगा कि कीडों की दस लाख या इससे भी अधिक जातिया है। मै एक उदाहरण दूँगा। कीडो मे बुद्धि होती है और मेरा मत है कि उनमें से कुछ की बुद्धि काफी विकसित होती है। पाश्चात्य प्राणिशास्त्री 'इस्टिक्ट' या पशु-बुद्धि की बात कहते है। किसी जाति के कीडे केवल एक ही जाति के पौधो या जन्तुओ का आहार करते है, इस बात को कहने के लिए 'स्वधर्म' भी उतना ही अच्छा शब्द है।

उदाहरणार्थ, जूओं की तीन जातियां ऐसी हैं, जो केवल मनुष्य के रक्त पर ही जिन्दा रहती हैं। अत आचरण की विभिन्नता के कारण भी अनेक जातियां पैदा हो जाती हैं।

फूलोंवाले पौधों की २, १०, ००० या २ लाख जातियाँ ज्ञात हैं। मेरा ख्याल है कि अब शायद ३० हजार जातियाँ बची हों, जिनका अभी पता नहीं चला है। यह दिलचस्प बात है कि उपर्युक्त जातियों में से १० प्रतिशत भारत में पायी जाती है। रूस जैसे अधिक बडे देशों में कम जातियां पायी जाती हैं। केवल ब्राजील ऐसा देश है, जहाँ फूलोंवाले पौधों की भारत से भी अधिक जातियाँ मिलती है। ब्रिटेन में तो केवल १ हजार ही जातियाँ मिलती हैं।

मुस्लिम और ईसाई वैज्ञानिकों का विश्वास था कि संसार की सृष्टि को १० हजार वर्ष से भी कम हुआ है। स्वभावत, उन्होंने सोचा कि प्रत्येक जाति का अलग-अलग निर्माण हुआ है। प्राचीन भारतीय विचारकों ने "परिणाम" या परिवर्तन का सिद्धान्त प्रतिपादित किया, परन्तु 'विकास' का आधुनिक सिद्धांत इससे भिन्न है। इस सिद्धांत का प्रतिपादन सब से पहले फ्रांस में लैमार्क ने किया। लेकिन, जीवशास्त्रियों को इस सिद्धांत की सच्चाई का विश्वास सब से पहले डारविन ने कराया। डारविन ने विकास के सिद्धांत को वैज्ञानिक ढंग से समझाया है और अब मैं समझता हूँ कि उसका मत अधिकांश में ठीक है यद्यपि इसे मानने की जरूरत नहीं है कि प्रकृति चुन-चुन कर दुर्बल जीवों को मारती रहती है। जैसे यह ठीक है कि अजातशत्रु ने लिच्छवियों को हराया पर हम यह नहीं मानते कि उसने देवताओं की मदद से ऐसा किया।

विकास की क्रिया के दो प्रकार के प्रमाण मिलते हैं। एक तो, प्रस्तरीभूत कंकालों से और दूसरा, प्रजनन विज्ञान से अर्थात, जीवित पौधों और जन्तुओं के वास्तविक प्रजनन से। जिन पुरातन चट्टानों में पर्याप्त सुरक्षित रूप में प्रस्तरित अस्थियां मिलती हैं, वे लगभग ५५ करोड वर्ष पुरानी हैं। वैसे इससे भी पुराने प्रस्तरित कंकाल मिले हैं और सम्भव है कि पृथ्वी पर जीव-सृष्टि की उम्र इससे दुगनी हो। पृथ्वी के बहुत से भू-भागों में कोई प्रस्तरीभूत कंकाल नहीं मिलते। उदाहरण के रूप में, दक्षिण का निर्माण ज्वालामुखियों के जमे हुए लावे से हुआ है। अन्य भू-भाग, जैसे गंगा के काठे पर इधर की कीचड मिट्टी जमा है। लखनऊ और कलकत्ते के बहुत नीचे जो चट्टानें हैं, उनमें पुराने पथराये कंकाल हो सकते हैं, लेकिन ये चट्टानें बहुत नीचे हैं।

यदि पिछले ५० करोड वर्ष में पृथ्वी के सभी युगों के अवशेष मिलते तो प्रत्येक १० लाख वर्ष की अवधि में बनी चट्टानें पृथ्वी के एक हजारवें भाग पर मिलतीं। पर कुछ युगों की चट्टानें या अवशेष तो अब मिलते ही नहीं। जितने पुराने अवशेष होते हैं, उनका मिलना उतना ही दुर्लभ होता है। बहुत से जन्तु और पौधे ऐसे होते है, जिनका कोई ठोस और सख्त अवयव नहीं होता। ऐसे जन्तुओं और पौधों की अस्थियां प्रस्तरीभूत रूप में नहीं पायी जातीं। कीडों आदि की तुलना में हड्डियोंवाले जन्तुओं के कंकाल बचे रहना अधिक सम्भव है।

जो भी हो, पिछले करोडों वर्षों में बनी मिट्टी या चट्टानों आदि की जो तहें पायी जाती हैं वे यह दिखाने के लिए काफी है कि कुछ जातियाँ धीरे-धीरे लेकिन निरन्तर रूप से बदलती रही और यह परिवर्तन इतना बडा था कि यदि एक ही जाति के विभिन्न युगों में जीवित नमूनों को लिया जाए तो वे अलग-अलग जाति के माने जाएंगे। जैसे भारत में पाये जानेवाले शालिग्राम जो पुरातन शंख जाति के जीवों का रूपान्तर है। कुछ वर्तमान जन्तुओं, जैसे घोडों और हाथियों के प्राचीन कंकाल काफी मात्रा में उपलब्ध हैं और इस प्रकार हम उनके वंश-क्रम के बारे में जान सकते हैं। जहाँ तक दूसरे प्राणियों, जैसे मनुष्य का प्रश्न है यह शृंखला बीच-बीच में काफी टूटी हुई मिलती है। तो भी, ऐसे बहुत से कंकाल मिलते हैं, जिनका सिर मनुष्य के सिर से छोटा, लेकिन अपने आकार के अन्य जन्तुओं से बडा है और जो वर्तमान मनुष्य का पूर्व रूप जान पडता है।

विकास की क्रिया के सम्बन्ध में प्रचलित धारणाएँ अनेक कारणों से भ्रामक हैं। एक कारण यह है कि इस क्रिया की अत्यन्त मंथर गति पर पूरा ध्यान नहीं दिया जाता। आप जानते हैं कि घोडों के दाँत विशेष प्रकार के होते हैं। ये दाँत घास चरने के काम आते हैं और चरने से घिसते भी जाते हैं। पिछले ५० करोड वर्षों में घोड़ों के जो पूर्वज रहे, उनके दाँत देखने पर पता चलता है कि इनमें सबसे पहले पूर्वजों के दाँत मनुष्यों और सूअरों की तरह छोटे-छोटे थे। बाद में उनके दाँत बडे होते चले गये। यह वृद्धि प्रति १० लाख वर्ष में औसतन ३ या ४ प्रतिशत के हिसाब से हुई।

दूसरी मिथ्या धारणा यह है कि विकास प्राय प्रगतिशील होता है और नयी सतति आकार तथा आचार मे अपने पूर्वजों से अधिक विकसित होती है। मेरा विचार है कि ऐसी प्रगति का यदि एक उदाहरण लिया जाय तो अवनति के दस उदाहरण मिल सकते हैं। उदाहरणार्थ, पक्षी शायद उस एक जाति के वशज हैं, जिसने पहले-पहल उडना सीखा, परन्तु बहुत से पक्षियों की उडने की सामर्थ्य नष्ट हो गयी है—जैसे शुतरमुर्ग। इसी तरह मछलियो की बहुत-सी जातियाँ समुद्र-गर्भ की चट्टानों में बनी गुफाओ में रहने लगी और अपनी दृष्टि खो बैठी। सब मिलाकर विकास की क्रिया इस दृष्टि से प्रगतिशील है कि एक जाति जिसने नयी सामर्थ्य पायी, उसकी अनेक सतति हो सकती है जो इस सामर्थ्य का विभिन्न प्रकार से लाभ उठाये। जो जाति सामर्थ्य खो दे, सभव है वह नयी जातियो को जन्म न दे सके।

५० वर्ष पहले यह समझा जाता था कि विभिन्न नस्लो के कुत्तो, मुर्गियों या मटरो मे बहुत भेद होते हुए भी यह भेद केवल ऊपरी है, क्योकि वे सब परस्पर मैथुन कर सकती है और ऐसी सतति को जन्म दे सकती है, जो दूसरी सतति पैदा कर सकती है। जबकि कुत्ते और लोमडिया ऐसा नही कर सकती। परन्तु अब एक जाति में ही नही, बल्कि किसी नयी जाति मे भी परस्पर मैथुन और सतति जन्म का अवरोध सम्भव हो गया है। विकासात्मक परिवर्तन बहुत शीघ्र होते भी देखा गया है। उदाहरणार्थ, इगलैंड के धुएँदार औद्योगिक क्षेत्रो मे पतगो की लगभग ७० जातिया काली हो गयी है। एक जाति के बारे में तो यह निश्चित रूप से प्रमाणित हो गया है कि यह परिवर्तन प्राकृतिक चुनाव के कारण हुआ है। अत, अधिकाश प्राणिशास्त्रियो का विश्वास है कि दो भिन्न जातियो मे उसी प्रकार का भेद होता है, जैसा एक ही जाति की दो शाखाओ मे।

रीढ की हड्डी वाले जानवरो के विकास का काफी इतिहास हमें ज्ञात है। कीडों के इतिहास का हमे इतना ज्ञान नही। जन्तुओ में ये दो श्रेणिया ही सबसे अधिक उन्नत हैं। ४० करोड वर्ष पहले जो कीडे और रीढ की हड्डी वाले जन्तु थे, वे दूसरी श्रेणियों के जन्तुओ से बहुत भिन्न नही थे। इसमें सन्देह नहीं कि इस समय कीडो या रीढ की हड्डी वाले जन्तुओं की जीवित जातियाँ उस समय की एक या थोडी सी जातियों की ही वशज है। जैसा कि प्रो० एम० आर० साहनी और दूसरो ने बताया है, भगवान विष्णु के विविध अवतारो से मोटे तौर पर इस बात का पता चलता है कि विभिन्न युगो मे रीढ की हड्डी वाले कौन से जन्तु सर्वाधिक विकसित थे। ३५ करोड वर्ष पहले रीढ की हड्डी वाले जन्तुओं मे मछलिया ही सबसे ज्यादा विकसित थी (मत्स्य अवतार)। २५ करोड वर्ष पहले उनका स्थान रेंग कर चलने वाले जन्तुओ ने ले लिया था। करीब ६ करोड वर्ष पहले स्तनपायी चौपाये, जो वाराहों की तरह रहे होगे, सबसे अधिक विकसित थे (वाराह अवतार)। १।। करोड वर्ष पहले उनमे मानवो जैसे कुछ गुण आ गये थे। नरसिंह अवतार से इसी बात का सकेत मिलता है। लगभग १० लाख वर्ष पहले सीधी खडी रहने वाली बौनो की जाति, जो मनुष्य तो नही थी परन्तु बन्दरो के मुकाबले मे मनुष्य से अधिक मिलती-जुलती थी, रीढ की हड्डी वाले जन्तुओं में सबसे अधिक विकसित थी। वामन अवतार इसका द्योतक है।

रीढ की हड्डी वाले जन्तुओ मे जिस प्रकार मछलियों की श्रेणी सबसे पुरानी है, उसी प्रकार पख वाले कीडो मे टिड्डियाँ और इसी प्रकार के कीडे सबसे पुरानी जाति के हैं। पौधो के विकास के बारे मे हमे कम मालूम है। फूलों वाले पौधो का तो जन्म ही केवल १५ करोड वर्ष पहले हुआ। मै यह तिथियाँ कुछ विश्वास के साथ पेश कर रहा हूँ, क्योकि चट्टानो मे रेडियो सक्रियता से उत्पन्न पदार्थों के जमा रहने के कारण अब इस बात का ठीक-ठीक पता लगाया जा सकता है कि वे चट्टाने कितनी पुरानी है। परन्तु समुद्री जन्तुओ की अनेक श्रेणिया ऐसी है, जो ५० करोड वर्ष पहले भी करीब-करीब इसी रूप मे थी। उनके उद्गम के विषय मे हम क्या कह सकते है?

जीव-विज्ञान की तीन शाखाएँ ऐसी है, जो ककालो द्वारा पता चलने वाले इतिहास की पुष्टि और पूर्ति करती है। इनमे से एक शरीर की भीतरी रचना के तुलनात्मक अध्ययन से सबधित है। अलग-अलग जाति के दो जन्तुओ के शरीर की भीतरी रचना जितनी ही समान होगी, उनके समान पूर्वज का अस्तित्व उतना ही कम पुराना होगा। उदाहरण के लिए घडियाल बाहरी तौर पर पक्षी की बजाय गाय से अधिक मिलता जुलता है। परन्तु, उसका हृदय और अन्य भीतरी अग बहुत कुछ पक्षियो से मिलते है। वास्तव

में घड़ियाल और पक्षियों के समान पूर्वज २० करोड़ वर्ष पहले रहते थे, जबकि गाय और घड़ियाल के समान पूर्वज लगभग ३० करोड़ वर्ष पहले थे। अत जब ककाल उपलब्ध न हो, तब हम शरीर की भीतरी रचना की तुलना करके विभिन्न जाति के जन्तुओ के परस्पर सम्बन्ध का पता चला सकते हैं। सादृश्य के रूप मे हिन्दी और इटालियन भाषा को ले तो उनमें बहुत थोड़ा साम्य है। परन्तु इन दोनो की पूर्वज भाषाओ—सस्कृत और लैटिन—मे कही अधिक साम्य है और, इसमें सन्देह नही कि सस्कृत और लैटिन का जन्म किसी एक ही भाषा से हुआ होगा। यदि हमे पुरानी भाषाओ के लेख आदि न मिलते तो भाषाओ के विकास का क्रम न बताया जा सकता। परन्तु, सस्कृत, लैटिन, हीब्रू और अन्य प्राचीन भाषाओ का हमे जो ज्ञान है, उसके आधार पर हम इन भाषाओ का अफ्रीकी भाषाओ से सबध ढूंढ निकाल सकते हैं। इसी प्रकार हम यह भी विश्वास के साथ कह सकते हैं कि कीड़ो, कनखजूरो, मकड़ियो और केकड़ो के पूर्वज एक ही थे और घोघो, सीपो आदि के पूर्वज भी इसी प्रकार एक थे।

तुलनात्मक भ्रूण विज्ञान से भी हमे इसी बात का पता चलता है। परस्पर सबधित जन्तुओ के विकास की प्रारभिक क्रिया प्राय एक जैसी होती है। अनेक जन्तु, जो वयस्क होने पर एक-दूसरे से नही मिलते, वे भी भ्रूण अवस्था मे परस्पर मिलते है।

सबसे साधारण शरीर रचना एककोशी जन्तुओ की होती है। इनमे से अनेक जमीन या पानी मे रहते हैं और उनसे कोई नुकसान नही पहुँचता, परन्तु कुछ एककोशी जन्तु परजीवी होते हैं और मलेरिया तथा आमातिसार जैसे गभीर रोगो को जन्म देते हैं। इन एककोशी जन्तुओ को बहुकोशी जन्तुओ का पूर्वज समझा जाता है।

स्पज, जिन्हें मुश्किल से ही जन्तु कहा जा सकता है, शायद इन एककोशी जन्तुओ के एक वश के प्रतिनिधि है और बाकी सब बहुकोशीय जन्तु दूसरे वश के। बहुकोशी जन्तुओ मे रचना की दृष्टि से सबसे सरल आन्तरगुही जन्तु, जैसे प्रवाल आदि है। इन जन्तुओ को प्राय आदिकालीन समझा जाता रहा है। परन्तु, यूगोस्लाविया के एक जीवशास्त्री, हाजी, ने यह मत प्रकट किया है कि आन्तरगुही जन्तु शुरू से ही ऐसे नहीं थे, बल्कि बिगड़कर ऐसे बने हैं।

मेरा विश्वास है कि इस प्रकार के जन्तुओं का निर्णय जीवशास्त्र की एक तीसरी शाखा—जीव-रसायन—द्वारा किया जा सकता है। जो जन्तु रचना की दृष्टि से एक जैसे होते हैं, वे जीव-रसायन की दृष्टि से भी एक समान होते हैं। आप यह जानते हैं, पर आपको शायद यह नही मालूम कि आपको यह ज्ञान है। आप शायद यह मानकर चलते हैं कि रीढ की हड्डी वाले जन्तुओ का रक्त लाल होता है और दूसरे जन्तुओ का लाल नही होता। वास्तव में, ध्रुव प्रदेश की कुछ मछलियो का रक्त पारदर्शक होता है, जबकि कुछ कीड़ो, घोघो और कुछ पौधो की जड़ो मे भी वह तत्त्व मिलता है, जिससे रक्त का रग लाल होता है। इसलिए, रक्त की अपेक्षा रीढ की हड्डी ही वर्गीकरण का श्रेष्ठ मापदण्ड है। परन्तु, रक्त के रग से परस्पर सम्बन्ध की अच्छी जानकारी मिलती है।

हमे रगहीन पदार्थों के विषय में ऐसी ही बात देखने को मिली है। उदाहरणार्थ, रीढ की हड्डी वाले जन्तुओ को मासपेशियाँ सिकोड़ने के लिए जिस तत्त्व से शक्ति मिलती है, वह तत्त्व बिना रीढ की हड्डी वाले कुछ जन्तुओ मे भी मिला है, लेकिन अन्यत्र नही मिलता। इससे तुलनात्मक शरीर रचना और भ्रूण विज्ञान द्वारा प्रकट इस बात की पुष्टि होती है कि ये जीव रीढ की हड्डी वाले जन्तुओ से सम्बन्धित है।

तुलनात्मक जीव रसायन से सबसे आश्चर्यजनक जानकारी यह मिली कि सब जन्तुओ और पौधो मे जो जीवित तत्त्व होते हैं, उनकी रचना एक-सी होती है और उनमे एक-से ही रासायनिक परिवर्तन होते है। प्राणियो के निर्जीव भाग, जैसे हड्डिया, लकड़ी, छिलके आदि एक दूसरे से बहुत भिन्न होते है। उदाहरणार्थ, मनुष्य के रक्त मे एक हजारवा भाग वह शक्कर होती है, जिसे ग्लूकोज कहते है। इस शक्कर का उपयोग हमारे शरीर का प्रत्येक अग करता है। बहुत से पौधों में भी ग्लूकोज मिलता है। अन्य पौधों में इक्षु-शर्करा होती है, यह ग्लूकोज और स्तनपायी जन्तुओ के वीर्य मे मिलने वाली शर्करा का योग होता है। जिन रासायनिक प्रक्रियाओ से प्राणी श्रम करने योग्य बनते हैं, वे प्रक्रियाएँ सभी प्राणियो मे एक-सी होती है। रहट के बैल को लीजिए, जो कुएँ से पानी खींचता है। उसके पास ही खड़े किसी ताड़ के वृक्ष को भी लीजिए। वृक्ष भी पानी खींचता है, हालाकि उसकी पानी खींचने की शक्ति प्रति घटा

कुछ फुट की होती है। यदि वह पानी खींचना बन्द कर दे, तो उसके पत्ते शीघ्र ही सूख जाएँगे। पशु और वृक्ष की शक्ति का स्रोत निश्चय ही एडेनोसाइन ट्राइफास्फेट नामक रासायनिक तत्त्व है। जुगनुओ मे प्रकाश भी इसी के कारण होता है। बैल और ताड, दोनो को जिस शक्ति की जरूरत होती है, उसे देने वाला तत्त्व एडेनोसाइन ट्राइफास्फेट अनेक रासायनिक प्रतिक्रियाओ के फलस्वरूप बनता है। इन प्रतिक्रियाओ मे बहुत थोडा-सा अन्तर होता है। श्री जगदीश चन्द्र बसु का यह विश्वास सत्य प्रमाणित हो चुका है कि पौधो और जन्तुओ मे एक-सा जीवन है।

वास्तव मे जन्तुओं और पौधो के कोशो मे जो प्रक्रियाएँ होती हैं, वे लगभग एक जैसी ही है, हालाकि वे कोश बहुत भिन्न-भिन्न कार्यों के लिए होते हैं। सभी प्राणियो के पूर्वज एक ही थे, यह मान लिया जाय तो यह समानता तुरत समझ मे आ जाती है।

जीवन की उत्पत्ति के विषय मे व्यक्तिगत रूप से मेरा विचार है कि सजीव और निर्जीव पदार्थों मे विभाजन की कोई निश्चित रेखा नही है। अपने मत के पक्ष मे मुझे उन विषाणुओ की चर्चा करने की आवश्यकता नही, जिनसे चेचक और इन्फ्लुएजा होता है और जिन्हे कुछ लोग सजीव मानते हैं और कुछ लोग निर्जीव। माडी के एक व्यङ्गाणु मे कार्बन का जो एक अणु होता है, जरा उसकी कल्पना कीजिए। जब आप चावल की माडी खाते हैं और जब वह आपके मुँह या पेट मे होता है तो कार्बन का अणु जीवित शरीर मे होने पर भी उसका अग नही बन जाता। जब वह रक्त मे मिलता है, तब भी वह आपका हिस्सा नही बनता। वहाँ से वह जिगर मे जाता है और फिर रक्त के द्वारा किसी मासपेशी तक पहुँचता है। यह क्रम इसी प्रकार चलता रहता है। हो सकता है कि कार्बन का यह अणु कुछ वर्ष तक हमारे शरीर मे बना रहे या आक्सीजन से मिलकर कार्बन डाइआक्साइड के रूप मे हमारी सास के रास्ते बाहर निकल आए। यह कोई नही कह सकता कि वास्तव मे वह कब हमारे जीवन का हिस्सा बना और कब उससे अलग हो गया। हालाकि इसमे सन्देह नही कि वह कुछ समय तक हमारे जीव का अग अवश्य रहा।

इसी प्रकार अतीत के बारे मे हमारा ज्ञान अब से बहुत अधिक भी हो जाए तब भी हम नही कह सकेगे कि कुछ प्रकार के पदार्थ ठीक किस समय सजीव हो उठे। हमारे सौरमडल के अन्य नक्षत्रो की हवा मे आक्सीजन, अलग रूप से, बहुत कम होती है। पृथ्वी पर भी वह मुख्य रूप से पेड़-पौधो से मिलती है, जो सूर्य की सहायता से हवा मे से कार्बन डाइआक्साइड खीच लेते हैं। अत पृथ्वी के आदिकालीन वातावरण मे आक्सीजन अलग रूप से शायद नहीं थी। यदि ऐसा था तो शक्ति देने वाले और सृजन करने वाले बहुत से रासायनिक तत्त्व हवा, पानी और मिट्टी मे मिले रहे होगे। बाद मे धीरे-धीरे वे अलग हुए होगे।

सचित रासायनिक शक्ति को ताप और गति मे बदलने की क्रिया जिस पद्धति के अनुसार होती है, वह इस क्रिया के कारण एक रूप धर लेती है, जो कुछ समय तक बना रहता है। आग की लपटे इसका उदाहरण हैं। इसी प्रकार कुछ परमाणु दूसरे परमाणुओ को खीच लेते है और उनसे मिलकर 'कण' का रूप लेते है। इस प्रश्न का अभी निश्चयपूर्वक उत्तर नही दिया जा सकता कि क्या भौतिक क्रियाओ की कोई आदिकालीन पद्धति इतनी विकसित हो गयी थी कि उसने जीवन का रूप धारण कर लिया।

मैंने हाल ही मे इस विषय पर विस्तृत रूप से विचार किया है और विशेष रूप से गणित और विज्ञान के कुछ ऐसे प्रश्न सामने रखे हैं, जिनका उत्तर देना बहुत कठिन नही होगा। इन प्रश्नो के उत्तर से उपर्युक्त सिद्धात के के सही या गलत होने का पता चल जायगा। यह सिद्धात गलत सिद्ध होने पर पृथ्वी के सब प्राणियो के एक पूर्वज से जन्म पाने के विषय मे दो ही सिद्धात और रखे जा सकते है। एक सिद्धात यह है कि पदार्थ और जीवन दोनो अनादि-अनन्त है, परन्तु क्योकि जीवन की उत्पत्ति केवल जीवन से ही हो सकती है, अत पहला जीवधारी किसी दूसरे नक्षत्र से यहाँ आया होगा। दूसरा सिद्धात, जिसे डार्विन ने सुझाया है, यह है कि जीवन की उत्पत्ति परमात्मा ने की और उसने एक बार ही समूचे जीवन का सृजन किया। परमात्मा ने प्राणियो की सृष्टि अलग-अलग नही की, जैसा कि बहुत से धर्मों मे माना जाता है। व्यक्तिगत रूप से मेरा मत यह है कि पृथ्वी पर जीवधारियों की सृष्टि एक प्राकृतिक प्रक्रिया के फलस्वरूप हुई।

इस विषय मे हाल ही मे मास्को मे एक सम्मेलन हुआ है। इस सम्मेलन मे मुख्यत भूमि, समुद्र और वायु की रचना, निर्जीव तत्त्वो से जीव तत्त्व का निर्माण, वर्तमान जीवधारियो की जीवन प्रक्रिया आदि के विषय मे विचार किया गया। इसमे सन्देह नही कि मनुष्य जीवन की सृष्टि करने का प्रयत्न करेगा। यदि यह सम्भव है तो उसके लिए स्पुतनिक छोडने के मुकाबले उतना ही अधिक शिल्पिक और बौद्धिक प्रयत्न करना पडेगा, जितना ५० गज दूर तीर छोडने वाला पहला धनुष बनाने की तुलना मे, स्पुतनिक बनाने के लिए करना पडा था।

उदावर्त—३

वैद्य रणजितराय

वर्त : वात-प्रकोप का एक परिणाम

वायु का कोप अपने प्रकोपक आहार, विहार, औषध, देश या काल के अतियोग से हो, किंवा अन्य दोष, धातु, उपधातु, मल आदि के सयोग से—उनके द्वारा हुए अवरोध या आवरण से—हो उसके प्रकोप के परिणामों मे एक वर्त होता है। च सू २०।१२ पर चरक ने तथा अ हृ सू १२।४९ मे वाग्भटाचार्य ने कुपित वात के कर्मों मे वर्त का निर्देश किया है। चक्रपाणि ने वर्त का अर्थ दिया है **वर्तुलीकरणं वर्त.**। अरुणदत्त ने अधिक स्पष्टता करते कहा है **वर्तनं वर्तं, पुरीषादीनां पिण्डीकरणम्**। किसी भी शारीर द्रव्य को—यथा पुरीषादि को पिण्ड-रूप बनाकर—उसका द्रवांश क्षीणकर—उसे वर्तुल बनाना—उसे गोलाकार बनाना वर्त कहाता है। यह कुपित वायु के कारण होता है।

वातकलाकलीय अध्याय (च सू १२) मे वायु के प्राकृत कर्मों का उल्लेख करते अत्रिपुत्र ने एक कर्म बताया है—**संशोषणो दोषाणाम्**। (यहाँ **दोषसंशोषण.** यह पाठान्तर है)। इसका अर्थ बताते दीपिकाकार कहते हैं—**दोषसंशोषण शरीरक्लेदसंशोषण**। नाम, शरीर के दोष, धातु, मल किंवा तद्घटित अवयवो मे जो क्लेद, आर्द्रता या द्रवत्व है उसके शोषण का कार्य वायु के प्राकृत कर्मों में एक है। दोषो के प्राकृत गुण-कर्मों के विषय मे एक स्मरणीय सत्य यह है कि ये प्राकृतावस्था में प्राय ज्ञात नही होते। दोषो का किसी कारण से प्रकोप हो—किंवा उनके विरोधी दोष का क्षय हो, तो ही इनके गुण-कर्म की प्रतीति हमे होती है। यथा, पुरीष को ही उदाहरण-तया लें। घृत-तैलादि स्नेहरहित आहार के अतियोग के रूप में रूक्ष अन्नपान का सेवन किया जाए, किंवा कटु द्रव्यों का प्रतिसेवन हो, अथवा वेगधारणादि वात-प्रकोप के कारण विद्यमान हो तो वायु का प्रकोप होकर उसके रूक्ष, शुष्क आदि गुणो की अभिव्यक्ति होती है। पुरीष को स्निग्ध और मृदु रखने वाले कारणो का अभिभव होता है—वे दब जाते है, तथा पुरीष शुष्क हो जाता है। किंवा कफ का क्षय हो, या पुरीष की स्निग्धता का कारणभूत मज्जा का स्नेह मज्जा धातु के क्षीण होने से क्षय को प्राप्त हो तो वायु के रूक्ष गुण का स्वय प्रकोप न होने पर भी उसको समावस्था मे रखने वाले इन द्रव्यो का स्नेहांश न्यून हो जाने से रूक्ष गुण जानो वृद्धि को प्राप्त हो जाता है और रूक्ष गुण का स्थानसंश्रय पुरीषादि जिस द्रव्य में हो वह शुष्क हो जाता है।

विरोधी दोष के गुण-विशेष की क्षीणता या वृद्धि के कारण इतर दोष के विरुद्ध गुण की वृद्धि या क्षय कैसे होता है इस बातको एक प्रसिद्ध कथा के दृष्टान्त से समझ सकते हैं। अकबर और बीरबल की यह कथा है। सभासदों की बुद्धि की परीक्षा के लिए सम्राट् ने एक दिन एक फट्टे पर एक रेखा खींच दी और कहा कि, इसे हाथ लगाए बिना—इसके किसी किनारे रेखा को लबाए बिना—बडा कर दो। सम्राट् की स्पष्ट शब्दो मे कही भी शर्त को समझे बिना कई सभ्यों ने खटिका से रेखा को लम्बी कर बढाने का मिथ्या प्रयत्न किया। परन्तु सम्राट् ने अपनी शर्त की स्मृति करा कर उन्हें वही रोक दिया। अन्त मे बीरबल उठा। उसने पहली रेखा के निकट ही एक अन्य रेखा खेंच दी, जो लबाई मे पूर्व रेखा से छोटी थी। पश्चात्, सम्राट् को सबोधित कर बीरबल ने पहले दूसरी रेखा के प्रति सकेत कर कहा—दोनो रेखाओ मे यह रेखा छोटी है या बडी ? सम्राट् ने कहा—छोटी। पश्चात् प्रथम रेखा के प्रति अंगुली कर बीरबल ने प्रश्न किया—और यह ? सम्राट् ने उत्तर दिया—बडी। बीरबल ने कहा—देखिए, पहली रेखा को हाथ लगाए बिना ही, आपकी शर्त का पालन करते हुए मैंने उसे बडा बना दिया। और सम्राट् ने सतोष व्यक्त किया।

किसी दोष के, किसी गुण-विशेष के क्षय-वृद्धि से इतर दोष के विपरीत गुण-विशेष की वृद्धि या क्षय होता है—होता-सा है—यह नियम इस दृष्टान्त से स्पष्ट समझा जा सकता है। दो विरोधी गुण तुल्यबल हों तो अपने परस्पर अभिभव करने के स्वभाव से वे एक-दूसरे को दबाए रखते हैं। दोनो में

किसी भी गुण की न वृद्धि होती है, न ह्रास। इस प्रकार तत्तत् दोष के गुरु-लघु, उष्ण-शीत, रूक्ष-स्निग्ध, मन्द-तीक्ष्ण, द्रव-सान्द्र, सर-स्थिर, खर-श्लक्ष्ण, सूक्ष्म-स्थूल, विशद-पिच्छिल तथा मृदु-कठिन इन प्रमुख तथा अन्य गौण गुणो का साम्य शरीर मे स्थिर रहता है—परिणामतया दोष भी शरीर मे समावस्था मे रहते है। कारण, इन गुणो का समुदाय ही तो दोष है। परन्तु इनमे किसी गुण की वृद्धि हो गयी तो जैसे छोटी रेखा की तुलना मे पहली रेखा बडी होती है वैसे क्षीण गुण के कारण उसका विरोधी गुण वस्तुत वृद्धि को प्राप्त न होते हुए भी उसका बल बढ जाता है। इसी प्रकार अपने वर्धक कारण के सेवन से किसी गुण की वृद्धि हुई हो तो विरोधी गुण-विशेष के क्षय के कारणो का सेवन न किया होने पर भी उसका बल न्यून होने से उसकी क्षीणता के लक्षण व्यक्त होते है। यथा, उक्त उदाहरण मे दूसरी रेखा बडी खेच दी जाए तो उसकी तुलना मे पूर्वाङ्कित रेखा वस्तुत छोटी न होने पर भी छोटी हो जायगी। गुण-विशेष की वृद्धि या क्षय के कारण कोई भी हो—उसका वृद्धि-क्षय अपने स्वतन्त्र कारणो से हो, किंवा विरोधी गुण का क्षय या वृद्धि होने से हुआ हो—परिणाम यह होता है कि उस गुण वाले दोष की वृद्धि या क्षय होता है।

इस प्रकरण से हम अन्य एक सिद्धान्त भी समझ सकते है। जैसे दोषो के कतिपय गुण परस्पर-विरोधी होते है, जिनके कारण उनके अपने-अपने प्राकृत कर्म तो हुआ ही करते है, साथ ही जैसा कि ऊपर कहा, विरोधी गुणो का साम्य बना रहता है, वैसे दोषो के कुछ गुण परस्पर-सदृश भी होते है। यथा, अम्ल गुण कफ का भी है, पित्त का भी, शीत गुण कफ का भी है वायु का भी। इन समान गुणो की वृद्धि या ह्रास करने वाले कारणो का अतियोग हो तो वृद्धि-क्षय किस दोष के होंगे यह प्रश्न है। इसका उत्तर यह है कि, जिस गुण-विशेष का अतियोग हुआ है उसके साथ अन्य भी कई गुणो का अतियोग होना सभव है। सब गुण मिलकर जिस दोष के गुणो के साथ अधिक साम्य रखनेवाले होंगे उस दोष का ही प्रकोप प्रधानतया होगा। यथा, अम्ल के साथ गुरु, स्निग्ध आदि गुणों का भी अति सेवन किया जायगा तो मुख्य प्रकोप ये गुण जिसमे अधिक है उस कफ का प्रकोप होगा। परन्तु, अम्ल गुण पित्त का भी है, किञ्चित् स्निग्धता भी पित्त मे होती है, इन कारणों से पित्त का भी प्रकोप होगा ही, परन्तु स्वल्प मात्रा मे। इसी प्रकार क्षयकारक कारण अनेक गुणो को क्षीण करने वाले होगे तो जिस दोष के अधिक सख्यक गुणो का क्षय होगा उसकी क्षीणता तथा तज्जनित रोग प्रधानतया शरीर मे में व्यक्त होगे। शेष, जिस दोष के अल्पसख्यक गुण क्षीण होगे उस दोष का भी क्षय तो अवश्य होगा, किन्तु प्रधान दोष से अल्प प्रमाण मे। उससे भी तत्तत् लक्षण और रोग उत्पन्न होगे, परन्तु वे उतने बलवान् न होगे।

वाचक समझ सकते है, दोषो के गुणपरक वृद्धि-क्षय की यह चर्चा करते हुए हम सप्राप्ति के प्रकरण मे पहुँच गए है। वृद्धि या क्षय करने वाले आहार-विहारादि कारणो के योग से जिस दोष के अधिकाश गुणो की वृद्धि (कोप) या क्षय होगा, उसीके कोप या क्षीणता के लक्षण अधिक सख्या मे रोगी मे उपलब्ध होगे। वही प्रधान दोष कहा जायगा। उसके द्वारा उत्पादित लक्षण-समुच्चय जिस रोग के होगे वही प्रधान रोग माना जायगा। शेष जिस दोष के लक्षण सख्या तथा बल मे न्यून होगे उस दोष को अप्रधान कहा जायगा। उससे उत्पादित लक्षण जिस रोग के होग वह रोग भी अप्रधान कहा जायगा। इसी अप्रधान रोग को उपद्रव भी कहा जाता है। यह प्राय प्रधान रोग के उत्पन्न होने के पश्चात् अभिव्यक्त होता है। हम जान चुके है कि, दोनो दोषो के वैषम्य तथा उनसे उत्पादित लक्षणो किंवा रोगो की उत्पत्ति का कारण तो एक ही था, यथा अम्ल द्रव्यो के विशेष सेवन से प्रधानतया कफ और अल्पतया पित्त का कोप हुआ हो तो अम्लगुण विशिष्ट द्रव्यो, देश तथा काल का अतियोग यह एक ही कारण दोनो दोषो के कोप तथा तज्जनित व्याधि का है। परिणामतया, यह भी समझा जा सकता है कि मूल कारण 'अम्लत्व' को लक्ष्य मे रखते हुए, साथ ही, कफ के प्रकोपक अन्य गुणो की भी निदान-परिवर्जन उपशय—सेवन, सशमन, सशोधन के रूप मे चिकित्सा करते हुए, जो क्रिया की जायगी वह कफ के साथ पित्त को भी समावस्था मे लाएगी ही। परिणाम में, मुख्यतया कफ को लक्ष्य मे रखकर किया गया यह उपचार कफज प्रधान रोग के साथ अप्रधान, अनुबन्ध या उपद्रवभूत पैत्तिक रोग का भी शमन करेगा ही। इसी से उपद्रव के लक्षणो मे एक लक्षण है कि उपद्रव की पृथक् चिकित्सा नही की जाती। प्रधान रोग की चिकित्सा से ही उसकी भी निवृत्ति हो जाती है। परन्तु यह नियम प्रायिक है। उपद्रव

बलवान् हो तो कभी उसकी पृथक् चिकित्सा भी करनी ही पडती है।

इस चर्चा से एक और छोटी-सी बात समझी जा सकती है। उपद्रव का अंग्रेजी पर्याय प्राय 'काम्प्लीकेशन' दिया जाता है। परन्तु काम्प्लीकेशन मे पश्चाद्भाविता को छोडकर उपद्रव के साथ कोई साधर्म्य नही होता। कॉम्प्लीकेशन का कारण और चिकित्सा भी मूल रोग से सर्वथा भिन्न होते है। यथा, टायफॉयड के पश्चात् मलेरिया हुआ हो तो दोनो के निदान एव चिकित्सा में कुछ सादृश्य नही होता। उसे 'कॉम्प्लीकेशन' कह सकते है, उपद्रव नही। आयुर्वेद के मत से वह एक रोग से अन्य रोग की उत्पत्ति का उदाहरण 'कथचित्' हो सकता है। परन्तु एक रोग से रोगान्तर की उत्पत्ति मे भी सप्राप्ति का सातत्य तो रहता ही है यथा ज्वर से रक्तपित्त की उत्पत्ति मे ज्वरारम्भक पित्त का कोप इत्यादि। किं बहुना, उपद्रव उपद्रव है, कॉम्प्लीकेशन कॉम्प्लीकेशन। दोनो का पर्यायतया व्यवहार उचित नही प्रतीत होता।

छात्रजनोपयुक्त इतना प्रासगिक विवेचन कर इसी प्रयोजन से एक अन्य अवान्तर विषय का विचार करता हूँ। ऊपर कहा है कि, पुरीष मे जो स्नेह होता है, जिसके कारण उसकी यथाकाल ससुख प्रवृत्ति होना सुगम होता है—उदावर्त की भीति नही रहती, वह—मज्जा धातु का मल है। विशेषतया, तरुणावस्था मे शुक्र का सचलन या प्रवृत्ति होती रहने से उसका क्षय होता रहता है। परिणामतया, रसधातु इतर धातुओ की अपेक्षया शुक्र के ही पूरण मे सविशेष व्यापृत होता है, जिससे उनकी (इतर धातुओ की) यथावत् पुष्टि नही होती। इसका प्रथम परिणाम मज्जा धातु पर होता है। धातु-विशेष के वृद्धि-क्षय का परिणाम सुश्रुत ने सू सु १५-१८ मे दर्शाया है। उसकी टीका मे डल्हनाचार्य ने स्पष्ट कहा है—**तथा परोऽपि क्षीण पूर्वं क्षपयति**—अर्थात् शुक्रादि पर धातु भी क्षीण होकर मज्जा आदि पूर्व धातु को क्षीण करता है। क्षयज राजयक्ष्मा मे इसी स्थिति को प्रतिलोम क्षय नाम दिया है। सो शुक्र का क्षय सुलभ होने से मज्जा का भी क्षय उक्त रीत्या तारुण्य मे होता है। किसी मूल धातु का क्षय होने से उस के उपधातु तथा मल का भी क्षय होता है यह आयुर्वेद का नियम है। कारण, रस धातु का जितना प्रमाण उस धातु की पुष्टि के लिए उपलब्ध होता है उसका सामान्य से अधिक प्रमाण उस धातु के क्षीण होने के कारण उसीके पोषण मे जाता है। शेष अशउ पधातु तथा मल की पुष्टि के लिए अपर्याप्त होने से उस धातु के उपधातु तथा मल का भी क्षय होता है। प्रस्तुत उदाहरण मे मज्जा की क्षीणता के कारण उसके मलभूत पुरीषगत स्नेह की भी क्षीणता स्वभावतया होती है। पुरीष का स्नेहाश क्षय को प्राप्त होने से वह रूक्ष होता है। रूक्षीभूत पुरीष मे रौक्ष्य के कारण वायु का अधिकतर प्रकोप होता है। कुपित वायु अपने शोषणात्मक स्वभाव से पुरीष को और भी शुष्क कर देता है। इस प्रकार उदावर्त (विबन्ध) या कब्ज की सप्राप्ति तारुण्य मे होती है। उसका यशस्वी उपचार शुक्रधातु की वृद्धि करनेवाले द्रव्यो के मात्रावत् सेवन से होता है या नही, इसका दर्शन कर सुचिकित्सक इस विषय को अधिक विशद कर सकते हैं।

मज्जा का मल जैसे पुरीष की स्निग्धता का कारण है वैसे उससे चक्षु और त्वचा की भी स्निग्धता रहती है। जैसे प्राय हम भूल जाते है कि मुख मे क्लेद या आर्द्रता रखनेवाला द्रव्य एक है तथा उसमे मृदुता तथा स्निग्धता का कारणभूत द्रव्य जो रसनेन्द्रिय को मृदु रखता हुआ रसो के ग्रहण का कारण है वह तद्भिन्न द्रव्यान्तर है, वैसे त्वचा के प्रकरण मे भी प्राय भुला दिया जाता है कि त्वचा की क्लिन्नता (भीनापन) का कारणभूत द्रव्य तथा उसमे स्नेह और मार्दव का निमित्तभूत द्रव्य पृथक्-पृथक् है। आधुनिक क्रियाशारीरविदो का मत है कि, चर्वणवश अणुभाव को प्राप्त द्रव्य लालारस-मिश्र हो जब रसनेन्द्रिय के (स्वादाकुरो के) सस्पर्श मे आते है तो रस का बोध होता है। इस मत के वशीभूत हो आयुर्वेद के व्याख्याता भी लाला को ही आयुर्वेद का बोधक कफ मान लेते है। परन्तु बोधक कफ लाला से भिन्न होता है। असा ताम्बूल का अतियोग हो तो उसके चूने और कत्थे सदृश कफ के लेखन द्रव्यो के कारण किंवा खदिरारि वटी आदि औषधो के अतिमात्र सेवनवश, अथवा उष्ण स्पर्श द्रव्यो के ससर्गवश जिह्वामूलगत कफ का लेखन या पचन हो कर क्षय हो जाता है उस काल भी लाला तो स्वमानावस्थित (सम-प्रमाण) होती ही है तथापि जिस पिच्छिल एव रस-बोध के यथार्थ कारणभूत द्रव्य के क्षय के कारण रसो का बोध नही होता, अच्छी से अच्छी वस्तु का भी कोई स्वाद ही नही प्रतीत होता वह द्रव्य आयुर्वेद का बोधक कफ है।

नव्य क्रियाशारीर में मुख की म्यूकस ग्लैण्ड्स से उत्पन्न होनेवाला 'म्यूकस', यत्सत्य, आयुर्वेद का बोधक कफ है तथा लाला-ग्रन्थियो (सेलीवरी ग्लैण्ड्स) द्वारा उदीरित लाला या सेलाइवा आयुर्वेद का मुखोदक या लाला है। लाला तथा कफ के प्रकोप का भी पृथक् नामाभिधान होता है, जो इन द्रव्यो के पार्थक्य का द्योतक है। लालास्राव का अतिरेक हृल्लास या प्रसेक कहाता है तथा कफ का अतिमात्र स्रवण कफष्ठीवन या कफप्रसेक कहाता है। दोनो में उपचार भी भिन्न है। अधिक विचार विज्ञ वाचक इसी दिशा से कर ही सकते हैं। मुख के सदृश त्वग्गत दो पृथक् द्रव्यो को भी एक मानने की भ्रमणा प्राय देखी जाती हैं। त्वचा मे क्लेद या आर्द्रता (भीनापन) जिस द्रव्य के कारण होती है वह एक द्रव्य है। यह स्वेद है तथा आयुर्वेद-मत से मेदोधातु का मल है। त्वचा में स्निग्धता जिसके कारण रहती है वह इतर द्रव्य है। यह एक मल है तथा मज्जा का मल माना जाता है—**मज्ज्ञ स्नेहोऽक्षिविट् त्वचाम्**। आधुनिक क्रियाशारीर मे भी एक प्रकार की ग्रन्थियो से स्वेद उत्पन्न होता है तथा अन्य ग्रन्थियो से स्निग्ध द्रव्य विशेष (सीबम) क्षरित होता है। प्रथम प्रकार की ग्रन्थियो के स्वेट ग्लैण्ड्स आदि नाम है तथा द्वितीय प्रकार की ग्रन्थियाँ सिबेशस ग्लैण्ड्स कही जाती है।

द्रव्यो की यह भिन्नता समझना सार्थक है। इसका एक उदाहरण इसी प्रकरण मे उपयोगी है। तरुण वय में मज्जा के क्षय से उसके मल का क्षय हो कर पुरीषगत स्नेह क्षीण होने से उदावर्त होता है, जो तरुण पुरुषो का प्रायोभावी रोग है यह हम ऊपर देख चुके है। तारुण्य मे ही प्राय देखा जानेवाला एक अन्य रोग यौवनपिडका (अंग्रेजी नाम—एक्नी वल्गेरिस या केवल एक्नी , मुखदूषिका) है। मज्जा के क्षय का ही परिणामभूत यह भी रोग है। होता यह है कि, मज्जा के क्षय से पुरीषगत स्नेह के सदृश त्वग्गत स्नेह भी क्षीण होता है। मलो के क्षय के लक्षणो मे एक लक्षण मलो का सग (अप्रवृत्ति) भी है। देखिए, मलो के वृद्धि-क्षय के ज्ञान के उपायभूत लक्षणो का निर्देश करते चरकाचार्य कहते है—

मलवृद्धिं गुरुतया लाघवान्मलसंक्षयम्।
मलायनानां बुध्येत सगोत्सर्गावतीव च॥

—च० सू० ७।४३

तात्पर्य—किसी मलद्वार मे गुरुता की प्रतीति (सेन्स ऑफ हेवीनेस) हो तो उस मल की वृद्धि हुई है यह समझना चाहिए। इसके विपरीत, किसी मलद्वार मे लघुता—हल्कापन—मालूम हो तो वह मल विशेष क्षय को प्राप्त हुआ है, ऐसा निदान करना चाहिए। मलो के क्षय-वृद्धि जानने का अन्य भी प्रकार है। किसी मल का अत्यधिक सग हो—उसकी प्रवृत्ति न हो तो उसका क्षय हुआ समझे, एव मल-विशेष की अत्यधिक प्रवृत्ति देखी जाए तो उसकी वृद्धि हुई है, यह निश्चय करे।—**सगोत्सर्गावतीव चेति अतीव सगादप्रवृत्तेर्मलक्षयम्, अतीवोत्सर्गान्मलवृद्धिं जानीयादित्यर्थ** —चक्रपाणि। इस नियम के अनुसार किसी मल की प्रवृत्ति न होती हो तो उसकी क्षीणता का अनुमान होता है। इसके विपरीत सुगमतया यह सिद्धान्त समझा जा सकता है कि, किसी मल का क्षय हुआ हो—उसका प्रमाण जितना चाहिए उतना न हो—तो उसकी प्रवृत्ति यथावत् होती नही। उदाहरणतया, पुरीष की पुष्टि जिन द्रव्यो से हो ऐसे द्रव्यो का हीनयोग हो तो पुरीष की उत्पत्ति सप्रमाण होती नही। परिणाम मे उसकी यथावत् प्रवृत्ति नही होती। पुरीष की यथावत् प्रवृत्ति न होने का ही नाम उदावर्त या कब्ज है। इस रोग का अनुशीलन जिन्होने किया है वे सम्यक् जानते हैं कि इसके कारणो में एक मलक्षय भी है। उदावर्त का यह कारण हो तो ऐसे द्रव्यो का यथेष्ट प्रमाण मे सेवन करने की सलाह दी जाती है जो पुरीष की मात्रा मे वृद्धि करे—जैसे चोकर, भाजी इत्यादि।

मल के क्षय का परिणाम मल के सचय आदि के रूप मे होता है। पुरीष का मलद्वार के समीप स्थित जो भाग पुरीष के क्षय के कारण प्रवृत्त नही होता वह वायु एव पुरीषाग्नि के शोषण और पाचन स्वभाव के कारण और भी शुष्क तथा पिण्डीभावापन्न होता है। यह स्थिरतर हो जाता है—शुष्कता के कारण ही इसकी प्रवृत्ति मे और भी रोध उत्पन्न होता है। रुद्ध हुआ यह पुरीषाग्र अपने पीछे स्थित पुरीष की गति को भी अवरुद्ध करता है। सुचिकित्सा से यह क्रम भङ्ग न हो जाए तब तक उदावर्त इस प्रकार मूलबद्ध होता जाता है। क्षीणता को प्राप्त पुरीष के कारण अनुगामी पुरीष के अवरोध के इस दृष्टान्त से हम अब प्रस्तुत विषय को समझने का प्रयास करते है।

त्वचा का स्नेह जो अपने द्वार-विशेष से त्वचा पर आता था, उस द्वार से इस स्नेह की प्रवृत्ति भी क्षीणता के कारण उसी प्रकार रुद्ध हो जाती है जैसे क्षीण हुए पुरीष के कारण पहले मलद्वार पर स्थित पुरीष की होती है। पश्चात् जैसे अनुगामी पुरीष भी पुरोगामी पुरीष द्वारा अवरुद्ध होता है वैसे त्वग्गत स्नेह के पुरोगामी शुष्कीभूत अंश द्वारा पीछे से आनेवाले स्नेह का भी अवरोध होता है। द्वार बन्द होने से इस प्रकार त्वग्गत स्नेह अपने स्रोत मे ही सचित होता है तथा शुष्कता को प्राप्त होता रहता है। इस प्रकार सचित एव शुष्कीभूत यह त्वग्गत स्नेह की गुटिका ही है जो यौवनपिडका (मुँहासे) आदि नामो से अभिहित होती है। नव्य प्रत्यक्षानुसार मुख पर स्नेह ग्रन्थियाँ सख्या में अधिक होती है, अत पिडकाएँ भी मुख पर ही प्राय होती है। यौवन पिडकाओ की उपरिनिर्दिष्ट सप्राप्ति में अन्त को इनका सबन्ध यौवन-सुलभ शुक्रस्खलन या शुक्र की स्वस्थानच्युति से हम देख आए है। शुक्र के इस प्रकार हुए क्षय के कारण ही अन्त मे तरुणो में उदावर्त या कब्ज का आविर्भाव किसी के लिए नवीन और विस्मयावह हो सकता है, परन्तु यौवन-पिडकाओ का शुक्र के साथ य कश्चित् सबन्ध सिद्ध वैद्य सदा से मानते आए है। कई आधुनिक विज्ञानवेत्ता भी यौवनपिडका मे शुक्रोत्पादक ग्रन्थियो के अन्त स्राव (पर ओज) इत्यादि का नाना प्रकार से उपयोग करते हुए मन में इसी धारणा को पुष्टि दे रहे देखे जाते है। विचारक चिकित्सक यौवनपिडका की इस सप्राप्ति को लक्ष्य मे रख कर सप्राप्तिभङ्गमूलक उपचार को अपनाते हुए उसके फलाफल का अनुभव प्राप्त करें, यही अभ्यर्थना है।

किसी भी कारण से पुरीष पक्वाशय मे स्थिर हो जाए तो पुरीषाग्नि के स्नेह और क्लेद के पाचक स्वभाव तथा वायु के क्लेद शोषक स्वभाव का प्रभाव पुरीष पर सामान्य अवस्था से अधिक मात्रा में होता है। परिणामतया, उसका द्रवत्व न्यूनतर होता जाता है। इससे उसमे क्रमश शुष्कत्व और स्थिरत्व उत्पन्न होते जाते है। थोडा रुक कर इस बात को विशद कर ले।

हमने ऊपर देखा है कि आयुर्वेद में गुणों का निर्देश गुरु-लघु, शीत-उष्ण आदि विरुद्ध गुण-धर्म वाले युग्मो के रूप में किया है। इसी प्रकार एक अन्य आधार पर भी गुणो के युग्म बनाए जा सकते है। देखते है कि, कई गुण परस्पर सहचारी होते है। अमुक एक गुण द्रव्य-विशेष मे हो तो दूसरा गुण-विशेष उस द्रव्य में होता ही है। यथा, द्रव के साथ सर (गमनकर्मा) गुण रहता ही है। इसके विपरीत शुष्क के साथ स्थिर गुण रहा करता है। गुरु के साथ सान्द्र (घन) गुण का साहचर्य होता है। लघु द्रव्य प्राय सुषिर (सच्छिद्र, न्यून घनत्ववाला) होता है। विशेषतया, कफ मे मन्द गुण के साथ पिच्छिल भी होता है। अतएव, हृदय तथा रस-रक्त की गति मन्द होने की दशा मे पैच्छिल्य गुण भी उद्रिक्त होता है, जिससे रस-रक्त स्त्यानीभूत (जम गया हुआ, कोएग्युलेटेड) हो कर स्थान भेद से हृच्छूल आदि रोग होते है।

सहचारी गुणो के निर्देश का इस प्रकरण मे कुछ प्रयोजन है। मल, मूत्र, शुक्र, रक्त आदि द्रव्यो मे द्रवत्व जितना हो उतना ही उसमे सरत्व या सरणशीलता होती है। मल मे द्रवत्व की वृद्धि हो जाए तो सरणशीलता भी वृद्धि को प्राप्त हो कर अतिसार, प्रवाहिका तथा ग्रहणी नामक विकार उत्पन्न होते है। मूत्र मे द्रवत्व की वृद्धि से उसका सरण अधिक होता है। प्रमेहो मे कफ कारणभूत होता है—पर वह बहुद्रव ही—**बहुद्रव: श्लेष्मा दोषविशेष**—च० नि० ४-६। इस द्रवत्व के कारण मूत्र मे सरत्व भी रहता है—मूत्र की मुहुर्मुहु प्रवृत्ति प्रमेहो मे लक्षणतया रहती है। शुक्र मे द्रवत्व हो (तरलता उसमे अधिक हो) तो सर या चल गुण अधिक होता है। उसमे स्तम्भन औषध दिए जाते है। यह स्थिति शुक्र के आधिक्य मे या शुक्र में पित्त का द्रव गुण बढ कर स्थानसश्रय कर ले तब देखी जाती है। दोनो स्थितियो का निदान कर पृथक् उपचार करना चाहिए। शुक्र के विषय मे स्मरण रखना चाहिए कि शुक्र मे वातकृत दुष्टि के कारण भी उसमे चलत्व आ जाता है। शुक्रगत वात के लक्षणो में इस दुष्टि का निरूपण इस रूप मे किया है कि—इस विकृति में कभी-कभी शुक्र की अतिप्रवृत्ति होती है। दिन में या स्वप्नावस्था मे किसी प्रकार के विचार हो या न हो शुक्र का स्खलन होता है। अथवा—व्यवाय काल मे समागम के पूर्व ही या सौमनस्य के पूर्व ही शुक्रच्युति हो जाती है। किंवा यह भी स्थिति होना सभव है कि शुक्र गर्भशय्या मे स्थित तो हो जाए, परन्तु न्यूनाधिक काल मे बाहर आ जाए। शुक्र जितने काल में बाहर आता है इसके आधार पर शय्या में अवस्थता, गर्भ का स्थित हो-हो कर स्राव या पात किंवा गर्भ प्रसव के अनन्तर

पुन-पुन मृत्यु को प्राप्त होना—यह वृत्तान्त उपलब्ध होता है। इन सब अवस्थाओं में यथावत् उपचार निदान-शुद्धिपूर्वक करना योग्य होता है। रक्त में द्रवत्व अधिक हो तो अवस्थाभेद से सरत्व दो-तीन रूपो मे व्यक्त होता है। रक्त मे द्रवत्व पाण्डुरोग मे होता है। रक्तज रोगो में इसे शोणित क्लेद (हाइड्रीमिग्रा) नाम दिया गया है। सरत्व के कारण अब्धातु त्वचा और मास के मध्य सचित होता है। यह अवस्था शोथ नाम से प्रसिद्ध है। द्रवत्व ऐसे किसी अवयव मे हो, जिस का सबन्ध बाह्य वायु-मण्डल से हो तो सर गुण उन अवयवों से स्राव-विशेष के रूप मे व्यक्त होता है। यथा, पाण्डु रोग मे अपत्यपथ से स्राव (श्वेत प्रदर का एक प्रकार) होता है। मुख मे—मुखगत कला मे—क्लेदाधिक्य हो तो सरत्व, हृल्लास या प्रतिलालास्राव के रूप मे व्यक्त होता है। रस-रक्त मे क्लेद का आधिक्य हो, साथ ही हृदय तथा अन्य रसवह स्रोत दुर्बल हो तो दोषो का हृदय की दिशा मे सिराओ द्वारा गमन प्राकृतवत् नही होता—क्लेद आदि दोष पाद आदि अध काय मे पादशोथ के रूप मे सचित हो जाते है। शोथ की यह सप्राप्ति प्रमेहपिडकाओ के प्रकरण मे सुश्रुताचार्य ने दी है। मूल वचन तथा उस पर डल्हन की टीका पादशोथ की सप्राप्ति को समझने की दृष्टि से विद्यार्थी के लिए अत्युप-युक्त हो सकती है। अत यहाँ दी जाती है।—

रसायनीनां च दौर्बल्यात् नोर्ध्वमुत्तिष्ठन्ति प्रमेहिणा दोषाः। ततो मधुमेहिनामध काये पिडका प्रादुर्भवन्ति।

सु० चि० १२-८।

कुतः पुनरधोदेहे एव पिडकासभव इत्याह-रसायनीना च दौर्बल्यादित्यादि। रसायनीनामित्यत्रादिशब्दो लुप्त-निर्दिष्टो द्रष्टव्य। तेन रसपित्तकफशोणितवहानां धमनी-नाम् इत्यर्थः। दौर्बल्यादिति सर्वशरीरगतस्य द्रवधातोः अपक्रम्यानाम्बाद्योऽनुलोम्यमागत्वाद् रसादि वहानामपि धमनीनामध एव बलवत्त्व, न तु ऊर्ध्वमित्यर्थ—डल्हन।

रसायनिओ की दुर्बलता अध काय मे पिडकाओ की उत्पत्ति मे हेतु होती है। मूलोक्त 'रसायनी' शब्द का अर्थ विशद करते डल्हन कहते है कि रस, पित्त, कफ और शोणित, इनका वहन करनेवाली धमनियाँ भी यहाँ रसायनी शब्द से ज्ञापित है। डल्हन ने इसके लिए रसायनी शब्द के आगे प्राकृत भाष्य की परपरा के अनुसार लुप्त हुए आदि शब्द का ग्रहण किया है। 'रसायन्यादीनाम्' इस शब्द के स्थान पर आदि शब्द का लोप कर तन्त्रकार ने 'रसायनी-नाम्' शब्द का व्यवहार किया है, यह डल्हन जी का मन्तव्य है। किंवा, जैसा कि, चक्रपाणि ने एक स्थान पर कहा है, रस शब्द गत्यर्थक रस धातु से बना है। अत शरीर में जो भी गतिशील रक्तादि द्रव्य है उसका रस शब्द से क्वचित् ग्रहण किया जा सकता है।—रसतीति रसो द्रवधातुरुच्यते। तेन रुधिरादीनामपि द्रवाणा ग्रहण भवति—च० चि० १५।३६ पर चक्रपाणि। रसायन शब्द में 'रस' शब्द इस व्यापक अर्थ मे ही ग्राह्य है। रसायन द्रव्य तत्तद् गतिशील शरीर द्रव्य या मन का वहन करनेवाले स्रोत में किसी भी कारणवश हुए रोध को दूर करते है। रोध के दूर होने से बाह्य द्रव्य का अयन समीचीनतया होता है। इस प्रकार रस-रक्तादि के वहन के सुधरने से शरीर की पुष्टि यथावत् होती है तथा, मलो के वहन (अयन) करनेवाले स्रोतो में मलो का अयन यथास्थित होने से शरीर मे दोषो का सचय और प्रकोप नही होने पाता। अतएव रसायन द्रव्य या उपचार व्याधि को नष्ट करते तथा आयु को दीर्घ बनाते है। मन का अयन सम्यक् होने से मन का अवसाद दूर हो कर जो सुखद परिणाम होता है उसकी विशेष व्याख्या की आवश्यकता ही नही। ऐसे प्रकरण में रसायनी शब्द भी वाहक स्रोतमात्र के लिए प्रयुक्त हुआ समझना चाहिए।

किं बहुना, ये रसायनियाँ, जिनमें रस के अयन का मूलभूत हृदय भी समाविष्ट है, प्रमेही पुरुषो मे दुर्बल हुई होती है। व्यान और अपान वायुओ की प्रेरक क्रिया हृदय-सहित सर्व रसायनियो पर हो कर रस, रक्त, स्वेद, मल, मूत्र आदि द्रव धातुओ का शरीर मे सर्वत्र विक्षेपण होता है तथा उन्ही की प्रेरणा से मलो की बहि प्रवृत्ति—निर्हरण होता रहता है। प्रमेह मे रसायनियाँ दुर्बल हुई होने से रस-रक्तादि द्रव धातु तथा उनके अन्तर्गत दोष ऊपर की दिशा में आ नहीं सकते। परिणामतया, प्रमेही पुरुषों के अध काय में पिडकाएँ होती है। इस प्रकरण से फलितार्थ यह निकलता है कि पाण्डु रोग आदि में भी रस-रक्तधातु-मांस के क्षय से हृदय तथा रसायनियाँ दुर्बल होती है। अतएव, पाण्डु रोग की पूर्वरूपावस्था में ही हृदय स्पन्दन के रूप मे हृदय की दुर्बलता अभिव्यक्त होती है तथा आगे पादशोथ, सर्वाङ्गशोथ आदि होते है। विद्वान् वाचको से इस वचन पर विचार करने की विनति करता हूँ।

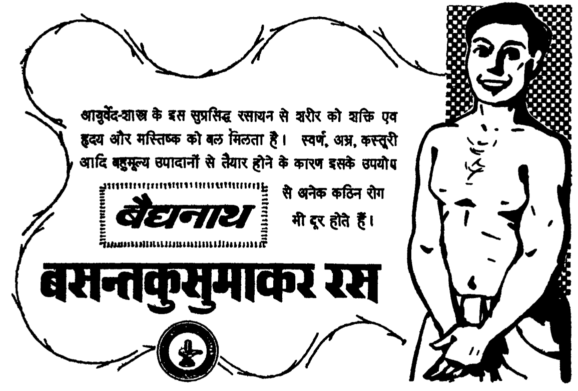
प्रस्तुत विषय यह है कि द्रवगुण के साथ सरगुण रहता है। अत पुरीष मे द्रवत्व तथा स्निग्धत्व रहे तो पुरीष-प्रवृत्ति ससुख होती है। अन्य द्रव द्रव्यो मे भी इसी प्रकार सरणशीलता रहती है। द्रव के विपरीत गुण का नाम शुष्क है। स्थिर गुण इसका सहचारी है। द्रव द्रव्य मे जैसे-जैसे द्रवत्व न्यून होता जाता है—जैसे-जैसे उसमे शुष्कत्व आता जाता है—वैसे-वैसे उसमे स्थिरत्व आता जाता है। किसी भी कारणवश पुरीष द्रव से सान्द्र, सान्द्र से शुष्क, शुष्क से ग्रथित और ग्रथित से वृत्त होता जाता है। इसी क्रम से उसमें स्थिरता भी आती है। वह प्राय मलद्वार से प्रवृत्त होने के स्वभाव का परित्याग कर देता है। पुरीष इस अवस्था को प्राप्त हो तो इसे उदावर्त कहा जाता है। पुरीष के समान मूत्र का वर्त हो तो सिकता, शर्करा या अश्मरी रोग शुष्क हो कर वर्तुलीभूत मूत्र अर्थात मूत्र के घन द्रव्यो के है। सिकता की भी पूर्वावस्था स्फटिको की प्रवृत्ति है। इसे अग्रेजी मे क्रिस्टल यूरिआ कहते है। ये स्फटिक केवल अणुवीक्षण यन्त्र से देखे जा सकते है। इनके द्वारा क्षणन होने से क्षत हो कर मूत्रमार्ग से रक्त की प्रवृत्ति होती है। मै समझता हूँ यह प्राचीनो का रक्तमेह है। क्रिस्टल यूरीआ मे उशीरासव, चन्दनासव आदि देने से रोग शान्ति होती देखी गयी है—दाह तथा रक्त प्रवृत्ति दूर होती है। सुविधा सपन्न वैद्य इस प्रस्ताव पर सक्रिय विचार करे। शेष, अश्मरी आदि में वात का स्थान विचारणीय है, इसके लिए गुदगत वात के लक्षण प्रस्तुत करता हूँ, इनमे अश्मरी और शर्करा की भी गणना है।—

ग्रहो विण्मूत्रवातानां शूलाध्मानाश्मशर्करा ।
जङ्घोरुत्रिकपात्पृष्ठरोगशोषौ(षौ) गुदस्थिते ।।

—च० चि० २८।२७

पुरीष, मूत्र और वायु का ग्रह, शूल, आध्मान, अश्मरी, एव पृष्ठ, त्रिक, ऊरु जङ्घा तथा पैर मे वेदना और शोथ (या शुष्कता) ये लक्षण गुदगत वात के है। अश्मरी के अतिरिक्त पृष्ठ से पाद पर्यन्त शूल पर भी मै वाचको का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ। एक या दोनो पैरो में मे शूल देख कर गृध्रसी की शका चिकित्सक को होती है। पर गृध्रसी नाडी के मार्ग पर यह वेदना प्राय नही होती। यह वेदना कभी गर्भिणी मे गर्भ के पीडनवश उदावत होने से भी होती देखी जाती है। शुद्ध निदान कर मल वातानुलोमन उपचार इसमे यशस्वी होता है। यथा यवानी, सौवर्चल, हिंगु, शतपुष्पा आदि के क्वाथ मे एरण्ड तैल दिया जाना किंवा आवश्यकता हो तो भेदनार्थ कटुकी देना चाहिए।

(सावशेष)



भारत में चिकित्सा-व्यवसाय के नैतिक-पतन पर कुछ मननीय विचार

मूल लेखक—डॉक्टर सुमन्त मेहता

अनुवादक—श्री शंकरदेव विद्यालंकार

(डॉक्टर सुमन्त मेहता गुजरात के लब्धप्रतिष्ठ समाजसेवक, देशभक्त और साहित्य-सेवक है। गुजरात के आधुनिक सास्कृतिक समुत्थान में उनका महत्त्वपूर्ण स्थान है। वे वर्षों तक बडौदा के प्रधान चिकित्सालय के अधिकारी और चिकित्सक रहे है। चिकित्सा-व्यवसाय और समाज-सेवा के अपने दीर्घकालीन अनुभव के आधार पर इस व्यवसाय के नैतिक-अध पतन पर उन्होने जो स्वस्थ, सुचिन्तित और मननीय विचार प्रस्तुत किये है, वे देश के समस्त चिकित्सको और समाज-सेवियो के लिए पथ-प्रदर्शक है।

—सम्पादक)

कुछ समय हुआ, बम्बई मे चिकित्सा-व्यवसाय करने-वाले कुछ-एक डॉक्टरो की एक सभा समवेत हुई थी। सभा मे महत्त्वपूर्ण चर्चाएँ हुई थी। सभा के अध्यक्ष स्थान पर अखिल भारतीय मेडिकल कौंसिल के सभापति डॉक्टर सी० एस्० पटेल विराज रहे थे। इस सभा का वृतान्त "टाइम्स ऑफ इण्डिया" पत्र मे प्रकट हुआ था।

डॉक्टर यू० बी० नारायणराव बबई में गत चालीस वर्ष से चिकित्सा-व्यवसाय कर रहे हैं। उन्होने उक्त सभा मे जरा कठोर भाषा मे निम्नलिखित पाँच बाते प्रस्तुत की थी।

(१) क्या डॉक्टरी व्यवसाय मे घोर स्पर्धा नही चल रही ?
(२) विविध चिकित्सा-विषयो के निष्णात (लुटेरो की मण्डली की तरह) टोली बना कर अपना धधा चला रहे है। यह प्रथा समाज के लिए तथा रोगियो के लिए क्या ठीक है ?
(३) हम लोग (डॉक्टर) अपनी अनुभवसिद्ध और ब्रिटिश मेडिकल कौन्सिल द्वारा प्रमाणित औषधियो (ब्रिटिश फार्मेकोपिया) का ज्ञान भूल कर क्या केवल इन्जेक्शन देने वाले नही बन गये ?
(४) विदेशी और स्वदेशी पेटेण्ट दवाएँ बनानेवाली फार्मेसियो के क्या हम लोग दलाल नही बन गये है ?
(५) अपने उच्च ध्येय और नैतिक दृष्टि को परे रख कर क्या हम केवल कमाई बढाने मे ही नही लग गये हैं ?

इन प्रश्नो के विषय में अनुभवी और वयोवृद्ध डॉ० नारायणराव ने निम्नलिखित विचार प्रकट किये—

(१) बबई के डॉक्टरो मे अवाछनीय प्रतियोगिता चल रही है।
(२) डॉक्टर लोग टोली बना कर अपने साथियो को काम खोज देते है, इस कारण रोगियो को व्यर्थ ही बडा भारी खर्च भोगना पडता है।
(३) सामान्य डॉक्टर लोग तथा विशेषज्ञ (स्पेशियलिस्ट) प्रमाणभूत ब्रिटिश फार्मेकोपिया की पर्वाह न करके प्राय कीमती पेटेण्ट दवाइयाँ लिख देते है। डॉक्टरो ने आधुनिक जनता को बिना कारण ही, औषध-सेवन-परायण बना डाला है, जिससे लोग डरपोक और अधीर (Hypochondriac) बन गये है।
(४) ब्रिटिश फार्माकोपिया मे अच्छी, सस्ती और सरल औषधियाँ है, तथापि डॉक्टर बहुत मँहगी और अधिकाश मे परदेशी दवाइयाँ ही सूचित करते है।

भारतीय डॉक्टर लोग अधिकतर जिन दवाइयो के नुस्खे सूचित करते है, उनकी सूची देख कर यूरोप और अमेरिका के डॉक्टर तो विस्मित हो जाय। आजकल नई-नई अमुक कृमिविनाशक (एन्टी-बायोटिक) औषधियाँ निकली है। अनेक बार ये दवाएँ खतरनाक परिमाण मे व्यवहार में लाई जाती है। पेनिसिलीन-सदृश दवाइयो का अनावश्यक उपयोग हो रहा है।

(५) चिकित्सा-व्यवसाय के नैतिक स्तर को ऊँचा करने की बहुत आवश्यकता है।

इस सभा मे बबई के कई प्रसिद्ध डॉक्टर उपस्थित थे। सभी ने ऊपर कथित बातो का पूर्णतया समर्थन किया था। किसी ने भी स्पष्ट प्रमाण देकर यह नही कहा कि ये आक्षेप खोटे है। सभी को ऐसा प्रतीत हो रहा था कि चिकित्सा व्यवसायी लोग अशुद्ध मार्ग पर जा रहे है।

× × ×

मेरे पिता बबई विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण हुए डॉक्टर थे। वे दस-एक बार विदेश भी हो आये थे। अत वे यूरोप के प्रख्यात डॉक्टरो के सम्पर्क में भी आये थे। बचपन से ही मेरे मन पर उन्होने यह प्रभाव डाला था कि चिकित्सा-व्यवसाय द्वारा अच्छी कमाई होती है और उसके द्वारा गरीब और अज्ञानी जनता की सेवा का बडा अवसर मिलता है। बबई के मेडिकल कॉलेज मे प्रविष्ट हो कर मैने तीन वर्ष के अन्दर, अन्तिम परीक्षा के सिवाय, सभी परीक्षाएँ उत्तीर्ण की थी। उसके पश्चात् इगलैण्ड जा कर वहाँ पर साढे तीन वर्ष अध्ययन करके सब परीक्षा उत्तीर्ण की। वहाँ के कॉलेज मे मुझे ऐसे प्रख्यात और अनुभवी प्राध्यापको के समीप तालीम पाने की सुविधा मिली, जिन प्राध्यापको के सहायको की पुस्तके इगलैण्ड तथा भारत मे पाठ्य-पुस्तक के रूप मे प्रचलित थी। उसके अनन्तर एक वर्ष तक मैने लन्दन में सार्वजनिक आरोग्यशास्त्र का अध्ययन किया। बडौदा के मुख्य चिकित्सालय मे मैने वर्षों तक काम किया। उसके साथ-साथ मैने भारतीय आयुर्वेदशास्त्र का भी अध्ययन प्रारम्भ किया। उसमे विशेष ज्ञान प्राप्त करने के लिए मैने अहमदाबाद, बबई, पूना, जयपुर, दिल्ली, लाहौर, बनारस और कलकत्ता आदि के विद्यालयो का अवलोकन किया और वहाँ के अध्यापको और कविराजो (वैद्यराजो) के साथ चर्चाएँ की। अनुकूल सयोगो के परिणामस्वरूप पाटन (उत्तर गुजरात) में आयुर्वेद कॉलेज स्थापित करने का तथा उसके सचालन का सौभाग्य भी मुझे बीस वर्ष तक मिला है।

परन्तु मुझे स्वीकार करना चाहिए कि सन् १९२१ के पश्चात् यूरोपीय चिकित्साशास्त्र के साथ मेरा सम्बन्ध कम हो गया, यद्यपि आयुर्वेद कॉलेज के सचालक के रूप मे उसका नवीनतम ज्ञान तो मुझे रखना ही पडता था। आयुर्वेद का मेरा अध्ययन सामान्य था तथापि त्रिधातु और त्रिदोष का वास्तविक अर्थ क्या है, रोग किस प्रकार उत्पन्न होते है, उनका निदान किस प्रकार करना चाहिए—इत्यादि विषयो में मुझे विशेष रुचि थी। इस लेख को लिखने के लिए अपने अधिकार के विषय मे ऊपर की पक्तियाँ मैंने लिखी है।

× × ×

ससार मे प्रचलित सभी प्रकार के चिकित्साशास्त्रो का मूल आशय एक ही है—अपने आयुष्य की किस प्रकार रक्षा की जाय तथा शरीर को किस प्रकार नीरोग रखा जाय। भारतवर्ष मे आज ऐसे भी थोडे से आयुर्वेदज्ञ वैद्य है जो यह मानते हैं कि चरक, सुश्रुत आदि प्राचीन ग्रन्थो मे से चिकित्सा-सम्बन्धी सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो सकता है। यूरोप मे की गई गवेषणाओ के द्वारा जो ज्ञान प्राप्त हुआ है, उसकी वैद्यो को परवाह नही है। "शुद्ध आयुर्वेद" ही सर्वोत्तम है और उसके साथ यूरोपीय विज्ञान को सम्मिलित करने से अलाभ होता है—इस चर्चा मे उतरने की यहाँ आवश्यकता नही है, क्योंकि यहाँ पर उसी चिकित्सा पद्धति के विषय मे विचार किया जायगा जो पद्धति आज सारे जगत् मे प्रचलित है।

वैज्ञानिक पद्धति मे प्रत्यक्ष ज्ञान को बहुत महत्व दिया जाता है और इसी कारण शारीर (एनेटोमी तथा फिजियो-लोजी) का गहरा अध्ययन करना पडता है। प्रयोगशाला मे प्रयोग भी करने पडते है। तथ्य भले ही सर्वमान्य हो और औषधियाँ एक हजार वर्ष से व्यवहार मे लाई जा रही हो—तथापि प्रयोगशालाओ मे उनकी पर्यालोचना और पुन परीक्षा होनी चाहिए—इस प्रकार की आधुनिक वैज्ञानिको की मान्यता है।

किसी मनुष्य को कोई रोग हुआ हो और उसके कारण उसकी मृत्यु हो गई हो तो उसके शरीर के दूषित अवयव की परीक्षा की जानी चाहिए—यह यूरोपीय चिकित्सा-शास्त्र की प्रथा है। और जब से सूक्ष्मवीक्षण यत्र का व्यवहार होने लगा है, तब से तो यह परीक्षा अधिकाधिक सुनिश्चित होने लगी है। दृष्टान्त के लिए किसी व्यक्ति को क्षयरोग हुआ हो और उसके फेफडे का अमुक भाग नष्ट हो गया हो तो उस रोगी के मर जाने पर शवच्छेद करके उसके फेफडे की परीक्षा की जाती है और इस बात का सुनिश्चित ज्ञान प्राप्त किया जाता है कि फेफडे मे किस प्रकार का विकार हुआ है तथा वह कितने अश मे हुआ है।

यूरोपीय चिकित्सक प्रत्येक रोगी की दैनिक स्थिति का ठीक-ठीक लेखा रखते है। छाती पर टकोर करके या छाती पर स्टेथस्कोप रखकर वे फेफडे की ध्वनियो का अवलोकन करते रहते है। आज से ५०० या १००० वर्ष पूर्व आयुर्वेदज्ञ वैद्य लोग इस प्रकार का लेखा रखते थे या नही, इस का कोई प्रमाण नही है।

शरीर के जो अवयव रोग से प्रभावित हुए हो, उनकी परीक्षा करते हुए जब सूक्ष्मवीक्षणयत्र का सहारा लिया जाने लगा तब ज्ञात हुआ कि कुछ-एक रोग कीटाणुओ से होते है। इस प्रकार कीटाणुविज्ञान का विकास हुआ। सभी रोग कीटाणुओ से नही होते। कुछ-एक रोग स्पर्शजन्य होते है, जैसे—शीतला, खसरा आदि। कदाचित् वे भी कीटाणुओ से होते है, परन्तु उनके कीटाणु ज्ञात नही हुए है। कुछ समय से एक नई खोज हुई है कि यदि ये कीटाणु अमुक मात्रा मे अमुक प्राणी के रक्त मे (शरीर मे) प्रविष्ट किये जाय तो एक ऐसा इन्जेक्शन उत्पन्न होता है, जिसके द्वारा उस रोग पर रोकथाम लगाई जा सकती है। अनुभव के आधार पर एक खोज तो हो चुकी थी कि यदि गाय के बछडे को शीतला हो जाय और उसके शरीर के चेप की सूक्ष्म मात्रा मनुष्य के शरीर म प्रविष्ट की जाय तो उस मनुष्य को शीतला नही होती, यदि हो जाय तो वह ठीक हो जाता है। इस खोज के आधार पर टाइफॉईड, हैजा आदि रोगो के भी इन्जेक्शन बनाये गए और प्रयोग मे आने लगे।

इन खोजो के आधार पर यूरोपीय डाक्टर लोग शीघ्रता मे ऐसा मानने लगे कि बहुत से रोग अब नष्ट किये जा सकेंगे, अटकाये जा सकेंगे, उन का प्रभाव कम किया जा सकेगा या वे घातक नही रहगे। इस प्रकार कष्टसाध्य रोगो को निर्बल बना दिया जा सकेगा। परन्तु रोग अटकाने या मिटाने के लिए इस प्रकार के इन्जेक्शन प्रत्येक सक्रमणशील रोग के नही बनाये जा सके।

इसके बाद एक खोज हुई कि मनुष्य के शरीर मे कुछ ग्रथियाँ ऐसी होती है, जिन्हे वाहिनी विहीन ग्रथि (Ductless gland) कहते है। इन ग्रथियो मे अमुक प्रकार का रस पैदा होता है। यह रस रक्त मे प्रविष्ट होकर अमुक अवयवो पर तथा सारे शरीर की क्रियाओ पर प्रभाव डालता है। उदाहरण के लिए गले मे थायरॉइड ग्रन्थि होती है। उसके द्वारा हृदय पर अमुक प्रभाव होता है। इस प्रकार की ग्रन्थियो के रस बकरी, गाय आदि प्राणियो की ग्रथियो से प्राप्त करके रोगियो पर प्रयुक्त किये जाने लगे और अमुक रोग अच्छे होने लगे। इस खोज के कारण डाक्टर पुन खूब उत्साहित हो गये और मानने लगे कि अमुक रोग अब अवश्य मिटाये जा सकेंगे। यह आशा कुछ अशो मे सफल हुई है, परन्तु धारणा के अनुकूल नही।

इसके बाद एक्स-रे का आविष्कार हुआ। उसके द्वारा भी बडा लाभ हुआ। कैन्सर, सार्कोमा आदि व्याधियों के परिज्ञान के लिए यह बहुत सहायक सिद्ध हुआ। इसी प्रकार रेडियम के आविष्कार से भी बहुत लाभ हुआ है। परन्तु दु ख की बात यह है कि नई-नई खोज होती है, नए-नए फैशन प्रचलित होते है और मामूली डाक्टर आँख मीच कर इन साधनो का भयकर गैर उपयोग करते है। दोष विज्ञान का नही, परन्तु अल्प शिक्षण वाले [illegible] प्रेक्टिशनरो (साधारण रोगो की चिकित्सा करनेवालो) का है। यही हाल पेनिसिलीन तथा नवीन एन्टीबायोटिक दवाइयो का हो रहा है। यह तो स्पष्ट है कि अमुक दवाइयो द्वारा मनुष्य जाति का बहुत लाभ हुआ है, परन्तु उन्ही औषधो के गैर उपयोग से हानि भी बहुत हो रही है। उस अशुद्ध व्यवहार की रोकथाम अवश्य होनी चाहिए।

आजकल यूरोप और अमेरिका आदि देशो मे जिस पद्धति से रोगो का निदान और चिकित्सा-कार्य किया जाता है, उसे वैज्ञानिक पद्धति कहा जाता है। क्योकि रोग की परीक्षा के लिए तथा औषधियो का जो प्रभाव शरीर पर होता है, उसकी परीक्षा के लिए बहुत से मनुष्य आधुनिक साधन-सामग्री से प्रयोग और खोज करते ही रहते है। यह बात ठीक है, परन्तु ये पश्चिमी डाक्टर ऐसा मानते है कि हमारी पद्धति वैज्ञानिक है तथा अन्य पद्धतियाँ परम्परागत मान्यताओ पर आश्रित है। उनकी इस धारणा मे अर्धसत्य भी नही है। दक्षिणी अमेरिका के जगलो मे रहनेवाले मूलनिवासी, मलेरिया ज्वर के होने पर एक वृक्ष की छाल का काढा पीकर ज्वर का निवारण करते थे। यह तथ्य पहले अमेरिकनो को ज्ञात हुआ। बाद को यही बात जब किसी डाक्टर को ज्ञात हुई, तब जगत् को पता चला कि सिन्कोना की छाल के उपयोग से ज्वर मिटता है। डाक्टरो द्वारा जब वह चिकित्सालयो मे व्यवहार में लाई गई तब उसे वैज्ञानिक कहा गया। आज तो वह सिन्कोना भी प्रयोग मे लाया जाता है और उसमे से निकलनेवाली क्विनाइन भी प्रयुक्त हो रही है। इसके

सिवाय सिन्कोना में से निकलनेवाले अन्य तत्त्व भी व्यवहार में लाये जा रहे है। यह सब ज्ञान कैसे प्राप्त हुआ? उत्तर स्पष्ट है और ठीक भी है कि रसायनशास्त्र द्वारा! मुझे तो अनुभव द्वारा पुराने मलेरिया के लिए क्विनाइन के स्थान पर सिन्कोना अधिक उपयोगी प्रतीत हुआ है। यहां पर मेरे मन मे विनोदभरी बात याद आ गई है। वैज्ञानिक कहे जानेवाले डाक्टर लोग इस ज्वर को मलेरिया कहते है क्योकि उनके मतानुसार यह (मेल=खराब,एयर=हवा) खराब हवा से उत्पन्न होनेवाला है। परन्तु यह बात अशुद्ध है। इसका अशुद्ध हवा से कोई सम्बन्ध नही है। यह ज्वर तो एक प्रकार के मच्छर के काटने से पैदा होता है। और इसकी खोज पश्चिमी पद्धति के डाक्टर रोनाल्ड रौस ने की थी।

यूरोप मे एक अन्य पद्धति भी है, जिससे रोग अच्छे किये जाते है। उसे होमियोपैथी कहते है। इस पद्धति का प्रसार भी अनेक देशो मे हो गया है। होमियोपैथी का आविष्कार जर्मनी के डाक्टर हनीमान द्वारा किया गया था। होमियोपैथी में औषधि बडी सूक्ष्म मात्रा मे दी जाती है। उसका सिद्धान्त यह है कि Like cures like—अर्थात् सम समेन प्रशाम्यति। जिस प्रकार चोर चोर को पकडता है उसी प्रकार पित्त करनेवाली दवा पित्त को मिटाती है—इस प्रकार की मान्यता इस पद्धति मे है। हजारो अमेरिकन लोग एक अन्य पद्धति का भी व्यवहार करते है, उसमे केवल प्रार्थना की जाती है।

आयुर्वेद के लिए तत्त्वज्ञान (दर्शन शास्त्र) का अध्ययन आवश्यक है। चरक और सुश्रुत म दार्शनिक तत्त्व का ठीक-ठीक विवेचन किया गया है। इसी प्रकार एक ग्रीक दार्शनिक और चिकित्सक का स्पष्ट कथन है—"जिस चिकित्सक ने तत्त्वज्ञान का अध्ययन नही किया, वह चिकित्सक ही नही।"

आज तो मनुष्य ने ज्ञान विज्ञान के इतने अधिक बाडे बना दिए है कि डाक्टरो को तत्त्वज्ञान और नीतिशास्त्र का जरा भी ज्ञान नही होता। डाक्टर भी अन्य कारीगरो की तरह अपने व्यवसाय को सीख कर और प्रमाणपत्र प्राप्त करके अपने धन्धे मे रचापचा रहता है। भिन्न भिन्न देशो में जब चिकित्सा शास्त्र का ज्ञान गुरुशिष्य की परम्परा द्वारा दिया जाता था, तब गुरु के पास अध्ययन करनेवाले छात्र प्रतिदिन गुरु से गाढ सपर्क में आते थे और उनको गुरु से नैतिक शिक्षाएँ मिला करती थी। उनको गुरु द्वारा इन बातो की भी शिक्षा मिला करती थी कि—रोगियो को क्या कहना चाहिए, कितना कहना चाहिए और उन्हे क्या नहीं कहना चाहिए। अन्य वैद्यो से कैसा व्यवहार रखना चाहिए, किस प्रकार के गरीबो को मुफ्त दवा देनी चाहिए धनवानो से किस प्रकार कीमती औषधियाँ प्राप्त करके गरीबो को देनी चाहिए, आदि आदि।

× × ×

अब डाक्टर नारायण राव द्वारा सूचित बातो पर जरा विस्तार से विचार किया जाता है—

(१) पहली बात डाक्टरी का व्यवसाय करनेवालो में प्रचलित अनुचित स्पर्धा की है। और अन्तिम बात यह है कि चिकित्सा व्यवसाय मे नीति का पालन अवश्य होना चाहिए।

यह सर्वविदित है कि आज से ढाई हजार वर्ष पूर्व भारतवर्ष मे तथा यूनान (ग्रीस) मे चिकित्सा-विद्या बडी उन्नत दशा म थी। ग्रीस के प्रसिद्ध वैद्य हिपोक्रेटिस् (बुकरात—उपक्रतु) के युग में प्रत्येक सुशिक्षित और नवदीक्षित वैद्य को यह प्रतिज्ञा करनी पडती थी कि वह नीतियुक्त और सयमी जीवन व्यतीत करेगा, अपनी कमाई के लिए विशेष लोभ नही करेगा, गरीबो की मुफ्त चिकित्सा करेगा, अपने व्यवसाय के निमित्त विविध कुटुम्बो से उसने जो गुप्त बाते की होगी, उन्हे वह किसी से नही कहेगा। इस प्रकार की प्रतिज्ञाएँ चरक और सुश्रुत के ग्रन्थो म भी विद्यमान है। पाश्चात्य चिकित्साशास्त्र के स्नातको को आज भी इस प्रकार की प्रतिज्ञा करनी पडती है, परन्तु वे इतनी अधिक यत्रवत् और जड हो गई हैं कि नवदीक्षितो पर उनका प्रभाव कायम नही रहता।

पाश्चात्य देशो मे प्रत्येक देश मे एक मेडिकल कौन्सिल होती है। वह कठोरता से ऊपर वर्णित प्रतिज्ञाओ तथा अन्य शर्तों का पालन करवाती है। प्रत्येक देश मे डाक्टरो को अपना नाम कौन्सिल में आवश्यक रूप मे अकित कराना पडता है। योग्य शिक्षाप्राप्त डाक्टर का नाम रजिस्टर मे अकित होता है। रजिस्टर्ड हुए बिना कोई भी व्यक्ति चिकित्सा कार्य नहीं कर सकता। यदि कोई व्यक्ति बिना रजिस्टर्ड हुए चिकित्सा करता है और उसके द्वारा रोगी को हानि पहुँचती है, तो उसे कठोर दंड मिलता है।

कोई भी डाक्टर अखबारो मे या अन्य प्रकार से अपना विज्ञापन, अपना गुणगान, नही कर सकता। अन्य व्यक्ति द्वारा भी अपना विज्ञापन नही करा सकता। चिकित्सा विषयक सदाचार (मेडिकल इथिक्स) का पालन न करने वाले को पहली बार सावधानी की सूचना दी जाती है। इस प्रबोधन का अनादर करने वाले का नाम रजिस्टर से निकाल दिया जाता है। रजिस्ट्रेशन के बिना किसी भी व्यक्ति को वैतनिक या अवैतनिक नौकरी नही मिल सकती। उसके प्रमाण-पत्रो को कोई पूछता नही। अपने उच्च व्यवसाय को लाञ्छन लगाने वाला कृत्य करने वाले को, अक्षम्य असावधानी के लिए दण्ड दिया जाता है। इस प्रकार के अनेक कठोर नियम है। दक्षिणा (फीस) कितनी लेनी चाहिए, इसके लिए भी नियम बना दिए गए हैं। परन्तु उच्च पदवीप्राप्तो और विशेषज्ञो की फीस की दर स्वाभाविक रूप में ऊँची होती है।

हमारे देश मे भी अब रजिस्ट्रेशन प्रारभ हो गया है और कौन्सिल चिकित्सा विषयक सदाचार को व्यवहार मे लाने का प्रयत्न कर रही है। परन्तु बुद्धिमान् लोग किसी भी नियम में से छटक जाने का उपाय खोज निकालते है।

अभी-अभी पिछले दिनो तक अपने देश में आयुर्वेदिक हकीमी (यूनानी), होमियोपैथी, बायोकेमिस्ट्री, निसर्गोपचार, आदि अनेक पद्धतियो द्वारा लोग स्वतन्त्रता से चिकित्सा कार्य कर सकते थे। पुराने जमाने में तो वैद्य का व्यवसाय करने वाले को सोठ आदि की थैली अपने पास रखनी होती होगी, परन्तु भारत मे बीसवी शती के प्रथम पचास वर्षो में तो सोठ की भी आवश्यकता नही रही।

मैने अपनी युवावस्था मे इस बात का खूब अनुभव किया था कि हमारे देश में परोक्ष रूप में डाक्टर अपना विज्ञापन कराते थे और दूसरो की निन्दा भी कराते थे। नवसारी (जिला सूरत—गुजरात) नगर के निवासियो मे पारसी तथा हिन्दू लोग, वहाँ की सीली हवा के कारण कुछ दुर्बल तथा कुछ भय में घबराने वाले स्वभाव से होते है। वे समय-समय पर डाक्टरो के पास आ धमकते थे। वहाँ पर डाक्टरो की सख्या भी अधिक थी, अत वहाँ प्रतिस्पर्धा भी विशेष थी। डाक्टर पैदल चलकर या अपने खर्च से रोगी के घर पर जाकर चिकित्सा करते थे, और इस कार्य की फीस केवल एक रुपया थी। इस प्रकार नवसारी म मैने यह प्रतिस्पर्धा अपने खराब से खराब रूप मे निहारी। बडौदा म भी डाक्टर अपनी खूब प्रशसा करते थे और अन्यो की निन्दा। मेरे लिए तो यह सब कुछ बाधारूप नही था। क्योकि मेरे पास इग्लैण्ड की उपाधि थी और मै ऊँचे पदाधिकार पर पहुँचा हुआ था। मेरे उपयोग के लिए बडे चिकित्सालय के साधन भी विद्यमान थे।

दूसरी लज्जाजनक स्पर्धा मैने बीमे के व्यवसाय में देखी। जिस व्यक्ति का बीमा करवाना होता था, उसकी पूरी परीक्षा करने के लिए जो फीस डाक्टरो को मिलती थी उससे वे प्रत्येक व्यक्ति के लिए २, ३ या ५ रुपये कमीशन के वापिस देते थे। एक बार एक एजेण्ट ने मुझे कमीशन की बात कही। मैने तुरत ही उसको दरवाजा दिखा दिया और बीमा कम्पनी को भी सूचना कर दी। बीमा कम्पनी ने एजेण्टो को आदेश किया कि सब केस अनुकूलता हो तो सिविल सर्जन को ही बताए जायें। परन्तु चालाक एजेण्टो को अनुकूलता प्रतीत नही हुई और मैने बीमा प्रेक्टिस् गँवा दी। तथापि मुझे कहना चाहिए कि इन स्पर्धाओ में मुझे विशेष हानि नही हुई। क्योकि मुझे पर्याप्त कार्य मिल जाता था। प्राइवेट डाक्टरो के विषय में ऐसी बातें सैकडो बार सुनी गई है कि उनके रोगी को जब आराम होने लगता है, तब वे दवाई की मात्रा कम करके रोग को लम्बा कर देते है। गाँव मे जाकर चिकित्सा करने के लिए डाक्टर लोग कई बार इतनी अधिक फीस माग लेते थे, जो रोगी के लिए देनी मुश्किल होती थी। प्रसूति के समय लोगो को मुँहमाँगी फीस देनी पडती थी। इस प्रकार भयकर प्रतिस्पर्धा और लालचपूर्ण घटनाओ का मुझे परिचय हुआ है। चिकित्सा विभाग के सहायक डाक्टरो के अतिशय लोभ पर तो सिविल सर्जन को अकुश रखना पडता था।

(सावशेष)

आयुर्वेदीय विकृतिविज्ञानम्-२

पूर्वतोऽनुवृत्त

वैद्यराज पुरुषोत्तम सखाराम हिर्लेकर

मेदोधातुरस्थ्ना पोषक । घनस्वरूपो मेदोधातु स्वोष्मणा विपक्व परिणमति कठिनसघातरूपेणास्थिधातुरय परिगण्यते । यदाह चरक —

स्वतेजोऽम्बुगुणस्निग्धोद्रिक्त मेदोऽभिजायते ।
पृथिव्यग्न्यनिलादीनां सघात स्वोष्मणा कृत ।
खरत्व प्रकरोत्यस्य जायतेऽस्थि ततो नृणाम् ॥

मज्जा शुक्र चेति धातुद्वय सर्वशरीरगत नाम साकारेष्ववयवेष्वनुप्रविष्ट सर्वावयवानामुत्पादक सघातसाधन प्रमुखमिति तस्मात् शरीरावयवा सर्वे ससत्त्वा शरान्विताश्च भवन्तीति जीवने प्रधान शुक्रम् तत्पूर्वावस्थो मज्जाधातु, परिणामस्त्वोज सज्ञ ।

रसरक्तयोरयथोत्पादनात् सर्वेषामेव धातूनामुत्पादनमभिवृद्धिश्च यथावन्न भवेत् । विकृते च रसरक्ते तत्पोष्येषु धातुष्वखिलेषु विकृतिर्जायेत । मेदसो यथावदुत्पादनाभावात् यथावदुत्पादनमस्थ्ना न भवेत् विकृते च मेदसि विकृतो भवेदस्थिधातु । मज्जा-शुक्र च अयथावत्सजात सन्ततिकर न स्यात्, विकृत च विकृतसन्ततिकर जायते । तथा शुक्रक्षयादोज क्षय, ओज क्षयाच्च सर्वेषा धात्ववयवाना क्षयो, विकृते च विकृता हीनसत्त्वा शरीरावयवा शीघ्र विनाशमायान्ति । यदुक्त सुश्रुतसहितायाम्,

"ओज सोमात्मक स्निग्ध शुक्ल शीत स्थिर सरम् ।
विविक्त मृदु मृत्स्न च प्राणायतनमुत्तमम् ॥
देह सावयवस्तेन व्याप्तो भवति देहिनाम् ।
तदभावाच्च शीर्यन्ते शरीराणि शरीरिणाम् ॥"

विकृताभ्या रसरक्ताभ्या सर्वे धातव अवयवाश्च विकृता भवन्ति । अपि तु रसरक्त शरीरे प्रथमावस्थावस्थित द्रव्यमिति तद्विकृतिर्नातिगम्भीरा गम्भीरा च तदपेक्षया मेदोविकृतिर्घनत्वात् परिणामावस्थावस्थित द्रव्यमिति परिणामावस्थावस्थितत्वाच्च मेदस मज्ज शुक्रस्य च विकृतिर्गम्भीरतरा विनाशकारणादिति ।

रसरक्त यथा देहे सर्वव्यापक तथा शुक्रमपि सर्वावयवव्यापित्वेनावतिष्ठते । यथा सुश्रुतसहितायामभिहितम्,

"यथा पयसि सर्पिस्तु गूढश्चेक्षुरसे यथा ।
शरीरेषु तथा शुक्र नृणा विद्यात् भिषग्वर ॥"

ततश्च रसरक्तयोस्तथा शुक्रस्यापि विकृतौ सर्वशरीरव्यापिनो विकारा जायन्त । किन्तु रसरक्ते विकृते धातुनामुत्पादनमभिवर्धन च विकृत भवति । शुक्रे मज्ज्ञि च पम्परया विकृतिमापन्ने सहनन जीवन नाम विकृत भवेत् । उत्पादनाभिवर्धन विहाय स्वाभाविक विनाशोन्मुखा भवन्त्यवयवा धातवो वा । ततश्च उत्पादनाभिवर्धनहानौ व्यतिरेको विनाशकर इति शुक्रविकृतेरभिव्यक्ति प्रथम हस्विशेषादिभिर्नातितीव्रा अपि परिणामत तीव्रतरा भवति । सक्षीणे जीवनाख्ये वा कर्मणि सम्यग्वर्तमानमुत्पादन नाल भवेत जीवनार्थं सपादयितुमिति ।

उत्पादनमभिवधन च सम्यक प्रवर्तमान जीवन नाम समासत । स्वभावविरुद्धो ह्रासो विनाशश्चोत्पद्यमानो विकृतिरिति । सारस्वरूपेण शुक्रेणौजसा वा सहनन धात्ववयवाना दृढीक्रियते । ततश्च आकृतिमतो धातव स्वावस्थानाभिरक्षिता भवन्ति । ततश्च रसरक्त धातूना सर्वेषामुत्पत्तिसाधन शुक्र च सरक्षकमिति तत्त्वार्थ प्रतिपद्यते ।

शारीराणामवयवानामाकृतिमतामुत्पादनाभिवर्धन रस आहारसभवे विलीनै पोषकाशैर्जायते । तदर्थं चैवविधस्य रसस्य सचार सर्वावयवेषु प्रवेशश्च भवतीत्यनुगतार्थं सुगमावबोध स्यात् । रसोऽय पोषक सर्वशरीरसचारी कैश्चित् रक्तसज्ञया परिगण्यते । रक्ताभिसरणाख्य च आयुर्वेदे नोपलभ्यत इति जीवनाख्यस्य कर्मणो यथावत्प्रशसने, पोषणस्य उत्पादनाभिवर्धनस्य वा विवेचनाभाव आयुर्वेदस्य इत्यभिव्यज्यमानोऽयमभिप्राय शास्त्रीयत्वमायुर्वेदस्याधिक्षिपति । तत एव चास्मिन् विशदीकरणमवश्यम् ।

शरीरस्य पोषणमुत्पादनमभिवर्धन वा यथावदुपवर्णित भवत्यायुर्वेदीयतन्त्रान्तरेषु । किन्तु न तद्रक्ताभिसरणसज्ञया उपवर्णितमस्ति । यत आयुर्वेदीयपरिभाषानुसार

पोषकद्रव्यमिद रसधातुसज्ञ न रक्तधातुसज्ञम्। रस इति सज्ञयैवास्य प्रसरणशीलत्वमधिगम्यते। एतदभिप्रायेणैव सुश्रुतसहितायाम्, "रस गतौ अहरहर्गच्छतीति रस" एव रसशब्दस्य निरुक्तिरुपदिष्टा, रसस्याऽभिसरण चाविरत जायते इत्याख्यातम्। यथा—"स शब्दार्चिर्जलसन्तानवदणुना विशेषेण अनुधावत्येव केवल शरीरम्। स खलु त्रीणि कलासहस्राणि च एकैकस्मिन् धातौ अवतिष्ठते एव मासेन रस शुक्रीभवति स्त्रीणा चार्तवम्।" तथा—

"रसाद्रक्त ततो मास मांसान्मेद प्रजायते।
मेदसोऽस्थि ततो मज्जा मज्जात शुक्रसभव ॥"

इति रसधातोर्धातुपोषण चरकसहितायामभिख्यातम्। अष्टाङ्गहृदयेऽपि एवमेव—

"रसाद्रक्त ततो मास मासान्मेदस्ततोऽस्थि च।
अस्थ्नो मज्जा तत शुक्र शुक्राद्गर्भ प्रजायते ॥"—

इति रसधातुनैव पोषण धातूनामभिहितम्। रसधातुप्रसारश्च विक्षेपसज्ञया प्रदर्शित। यथा—

"व्यानेन रसधातुर्हि विक्षेपोचितकर्मणा।
युगपत्सर्वतोऽजस्र देहे विक्षिप्यते सदा ॥
क्षिप्यमाण खवैगुण्यात् रस सज्जति यत्र स।
तस्मिन् विकार कुरुते खे वर्षमिव तोयद ॥"

विक्षेपशब्दश्च विशेषतो वास्तवार्थ। यत अभिसरण नाम प्रसरणमधस्तात् तिर्यक वा। प्रेरणस्थान रसस्य हृदय मध्यभागावस्थित देहस्य। तस्मात अधस्तिर्यक् च प्रापण स्वाभाविक द्रवद्रव्यस्याऽभिसरण नाम। किन्तु ऊर्ध्वभागे शिरसि प्रापण नभिसरणाज्जायते। उत्क्षेपणाख्य गमनमेवै तत्सपादयतीति अभिसरणात विक्षेपो वास्तवार्थाभिव्यञ्जक स्यात। ऊर्ध्वाधस्तीर्यकक्षेपण च रसस्य सुश्रुतसहितायामुपवर्णित यथा—

"स च हृदयात् चतुर्विंशतिधमनीरनुप्रविश्य ऊर्ध्वगा दश दश च अधोगामिन्य चतस्रश्च तिर्यग्गा कृत्स्न शरीरमहरहस्तर्पयति वर्धयति धारयति यापयति च।" इति।

विवेचने चैतस्मिन्नायुर्वेदीये विवक्षेपणमभिसरण वा यस्य, तत् द्रव्य रससज्ञयाऽख्यात सर्वत्र इत्यभिधातव्य स्याद्विशेषेणेति। रक्ताख्यो धातुरायुर्वेदपरिचितो न स्यादितिसन्देहासमवस्याप्रयोजकत्व "रसासृङ्मासमेदोऽस्थिमज्जशुक्राणि धातव" इति प्रधानद्रव्यस्वरूपसप्तधातुसख्यानदर्शनादुपदर्शित भवति। आयुर्वेदविद्भि कैश्चित् शरीरे रक्तधातो प्राधान्यमभिवीक्ष्य वाताद्या दोषा यथा देहकमकर्तार प्रधानास्तथा रक्तधातुरित्यभिप्रशसित दृश्यते। यथा सौश्रुतेतन्त्रे

"नर्ते देह कफादस्ति न पित्ता न च मारुतात्।
शोणितादपि वा नित्य देह एतैस्तु धार्यते ॥"

इति रक्तमपि वातादिवद् देहधारक भवेदित्यभिप्राय उपदर्शित।

पोषकद्रव्यप्रेरणस्थान हृदय रसवहस्रोतोमूलमाख्यातम्। यथा, "रसवहाना स्रोतसा हृदय मूलम्" इति। रक्तवहाना स्रोतसा मूल न हृदयम् किन्तु यकृत्प्लीहा च इत्याख्यातम् यथा, "रक्तवहाना स्रोतसा यकृन्मूल प्लीहा च" इत्यनुचिन्तनीयम्।

यकृत्प्लीन्हो पचनाद्रसो रक्तवर्णता यातीत्येतदप्यायुर्वेदेनाख्यातम। यथा सौश्रुते—"स खलु आप्यो रस यकृत्प्लीहानौ प्राप्य रागमुपैति।" एवमपि सति पोषक द्रव्यमिद रससज्ञ रक्ताद् भिन्नमित्यायुर्वेदाभिप्रायो निरपवाद। यथायत्व चाऽस्य आयुर्वेदीयस्वसज्ञापरिभाषानुसार विमर्शितव्य भवेत्।

आहारस्य सारांशे द्रवद्रव्यरूपे आहारादादृता पोषकाशा धातूना विलीनावस्थायामवतिष्ठन्ते। विलीनत्व निराकारत्वममूतत्व नाम। एवविधायामवस्थाया सन्निकर्षस्य सश्लेषस्य वा अभाव सर्वथा प्रतिपद्यते। विश्लेषण भावो यस्मिन् स रस। पदार्थविदभि प्राञ्चै स्यन्दनासमवायि कारण द्रवत्वम्" अभिधायि।

शरीरे पत्ररेखाप्रतानवत्सूक्ष्मानुसूक्ष्मै स्रोतोभि अभिवहनाय विलीनत्व विश्लेषणावस्थानमवश्यम्। ततश्चाऽभिवहनशीलस्य विश्लेषणावस्थावस्थितस्य द्रव्यस्य रससज्ञयाऽख्यान वास्तव वास्तवार्थाभिव्यञ्जक चेत्युपपद्यते।

धातुविवेचने प्रयुक्तस्य 'रक्तम्" इति शब्दस्य रक्तवर्णत्वमिति लौकिकव्यवहारे व्यवह्रियमाण अर्थ आयुर्वेदाभिप्रायसगतो न स्यात्। पदार्थविज्ञाने जीवनक्रियाविज्ञाने च अवस्थान्तरोत्पादकस्य भावस्याभिव्यञ्जक स्यात् शब्दो रक्तमिति। रञ्जनाद्रक्त रञ्जनावस्थावस्थित वा द्रव्य रक्तमिति। शरीरे सर्वत्र रसधातोरभिसरणे सजाते तद्गतैरशै पोषकै शरीरावयवसप्रविष्टै अभिवर्धन नवीनोत्पादन च भवति। उत्पादनाभिवर्धनार्थमेव रसाभिसरणस्यायोजन शारीरक्रियासु इत्यभिप्राय सुगमाववोध स्यात्। उत्पादनमभिव्यक्तिर्वा सश्लेषाद्भवति। विश्लेषणस्वभावेषु पोषकद्रव्याशेषु रसगतेषु सश्लेषकत्वोत्पादन रञ्जन नाम।

रसधातो सर्वशरीरमभिप्रपन्नस्य धात्वग्निना कायाग्निना वा विहितात् पाकात् सन्धीभावानुकूल रञ्जन जायते। एव रजितो विश्लेषणभाव विहाय सश्लेषणभावमापन्नो रसधातु रक्तधातुसज्ञया सख्यात स्यादायुर्वेदे। ततश्चाधिगत भवेत्, रक्तत्व नाम न रक्तवर्णत्व अपि तु सघावस्थानानुकूलो भाव इति। एवविधो रक्तधातु पुन पाकात् अव्यक्तरूपमाकारवन्मास जायते। अभिप्रायोऽय चरकसहिताया यथावद्विशदीकृतो यथा—

"तेजो रसाना सर्वेषा मनुजाना यदुच्यते।
पित्तोष्मण स रागेण रसो रक्तत्वमृच्छति॥"
वाय्वम्बुतेजसा रक्तमूष्मणा चाभिसयुतम्।
स्थिरतां प्राप्य मांसं स्यात् स्वोष्मणा पक्वमेव तत्॥"

सुश्रुतसहितायामप्येवमभिहितम्, यथा—

"रञ्जितास्तेजसा त्वाप शरीरस्थेन देहिनाम्
अव्यापन्ना प्रसन्नेन रक्तमित्यभिधीयते॥"

अस्मिन् वाक्ये तेजसा इत्यस्य यकृद्गतेन पित्तेन इत्यर्थ स्वीक्रियते कैश्चित्। ततश्च यकृति रागप्राप्तो रस रक्ताख्यो धातु, तस्य रक्तस्य नाम सग्रहप्रेरण स्थान हृदयम्, रक्ताभिसरणमेवमायुर्वेदे उपवर्णित इत्यभिसधीयते। तत् आयुर्वेदाभिसरणप्रायेण सगतार्थमिति न समीचीनम्।

विलीनत्व विश्लेषकत्व च विशेष स्यात् रसधातो, सहतीभावहेतु श्लेषकत्व च रक्तधातोर्विशेष। स च आयुर्वेदापेक्षित, स एव च रक्तसज्ञया ससूचित, रक्तोत्पत्तिवर्णने च विशदीकृत। विमर्शोऽय शारीरधातुनिर्माणक्रमाभिव्यञ्जको वास्तवार्थश्चेति आयुर्वेदाभिप्रायमधिगन्तुमिच्छद्भिरस्मिन् विपर्यासो न विधेय इति।

शारीराणा द्रव्यविशेषाणा धातूना वा स्वरूपमुत्पत्तिक्रम, परस्परसबन्धश्चेत्यादिके यथावदधिगते, क्रियाविशेषाश्चापि यथावदधिगता भवन्ति। आकृतिमत्व स्वरूप शारीरावयवाना सूक्ष्माणा, तत्सघातश्च रचनावस्थानविशेषैर्विशिष्टाकारा अवयवा स्थानानि च भवन्ति। तदनुरूपाणि च श्लिष्टानि तेषा कार्याणि भवन्ति। स्वभावानुबद्धमेव एतत्। द्रवस्वरूपाणि द्रव्याणि, साकाराश्चावयवा सूक्ष्मा, सघातरूपाण्यङ्गोपाङ्गानि स्थानानि चेति शारीरद्रव्याणि त्रिविधावस्थावस्थितानि सन्ति।

द्रवद्रव्येषु आकृतिमतामवयवाना पोषकाणा विलीनावस्थाया निवसन्ति, आकृतिमत्सु सूक्ष्मावयवेषु पोषकाणि द्रवद्रव्याणि, सघातस्वरूपेषु स्थानेष्वङ्गोपाङ्गेषु च सूक्ष्मावयवाना पोषकद्रव्यसहितानामवस्थितिरिति रचनाविशेषानुसारमवस्थितमङ्गमवयवो वा पूर्णता याति सघात इत्यधिगम्यते। सूक्ष्मावयवोऽपि सघातरूप, अपि तु द्रवद्रव्यावृताना सघात। द्रवेषु सघातस्याऽभाव एव, यतो द्रवत्वमसहृतत्व नाम।

आकृतिरहितान्यपि आकृतिमता कारणानि द्रवद्रव्याणि सुसूक्ष्मा अपि सघातरूपा अवयवा, तत्सघातरूपाण्यङ्गानि च धातुसज्ञयाऽख्यायन्ते। दृश्यत्वसामान्यात् सामान्यया सज्ञयाऽख्यान समीचिनमपि द्रव्यविशेषाणा विशेषावबुद्धये विशिष्ट सज्ञाभि सख्यानमवश्यमित्यत्र सख्याविद्भिर्विमर्शयितव्यम्। सविशेषसख्यानाभावे च क्रियाविशेषावबोधार्थं द्रव्यविशेषावबोधो नोपेक्ष्य इति।

चलनात्मक कर्म इत्याख्यात पदार्थविद्भि। उत्क्षेपणम्, अपक्षेपण, आकुञ्चनम् प्रसारणम्, गमनम् चेति भेदा पञ्च, कर्मण समाख्याता। दिग्भेदात् परिणामभेदेन भिन्नेषु उत्क्षेपणापक्षेपणप्रसारणेषु शरीरविप्रकृष्टसयोग सामान्य, तद्विपरीतश्च शरीरसन्निकृष्टसयोग इति आकर्षणमपकर्षण चेति द्वैविध्यमेव उत्क्षेपणापक्षेपणाकुञ्चनप्रसारणेषु तत्त्वतोऽधिगम्यते। चतुर्ष्वपि च शरीर नाम कश्चित् वस्तुविशेषो मध्यगत स्थायीभावावस्थितस्तमभिकृत्याकर्षणमपकर्षण च कर्म गमनविशेषस्वरूप जायत इत्यनुगतार्थं सुगमावबोध। ततश्च आकर्षणम्, अपकर्षणम्, आकुञ्चनम्, प्रसारण वा कर्मद्वयमिद सप्रतिबद्ध गमनमेवेति सिध्यति। गतिप्रतिबन्धश्चाय मध्यदेशावस्थितेन स्थिरद्रव्यविशेषेण विधीयते। आकर्षणम्, अपकर्षणम् आकुञ्चनम्, प्रसारणम्, च कर्मद्वय परस्परावलम्बित्वेन प्रतिनिर्वर्त्यते। एकदेशप्रवर्तितस्य गमनस्य प्रतिरोधो भवति तदा तद्विपरीतदेशगमनस्यारम्भो भवति। एव परस्परविरोधावर्तनै साध्यते कर्मद्वय प्रसारणाकुञ्चनाख्यम्। प्रतिबन्धकत्व चैतत् मध्यवर्तिनो द्रव्यस्य। स च निसर्गस्वभावोऽचिन्त्य इति।

गमनाख्य कर्म भिन्नस्वरूपमेतस्माद्भवति। नैतस्मिन् प्रतिबन्धो विधीयते केनचित्। ततश्च विप्रकृष्टदेशाभिसरण प्रसरण नाम स्वरूप तस्याधिगम्यते। प्रतिबन्धाभावात् पूर्वस्थानानुबन्धाभाव स्थलान्तर च परिणाम इति गमनस्वरूपम्। प्रतिबोधकस्याभावोऽपि स्वभाव एव।

रसाविसज्ञेषु धातुषु शारीरेषु रसो रक्तमिति द्रवत्वावस्थितौ विशेषेण। द्रवत्वस्तु द्रवत्व नाम रसत्वमिति

प्रागेव विषयीकृतमस्ति। द्रवरूपेषु धातुषु सम्प्रवर्त्यमानस्य कर्मण स्वरूप गमन भवति। गमनप्रतिबन्धकस्याभावात् आकुञ्चनप्रसारणरूप गमनमेतेषु न भवति। स्थानादेकस्मात् प्रसृता धातवो द्रवावस्थावस्थिता रससञ्ज्ञा पुनर्न प्रतिनिवर्तन्ते। "रसगतौ अहरहर्गच्छतीति रस" इति सुश्रुतसहिताया विहित व्याख्यान रसस्य गमनार्थाभिव्यञ्जकम्। रस एवावस्थाविशेषावस्थिते रक्ते, रसापेक्षया सान्द्रे, गमनाख्यमेव कर्म रसत्वात्। मेदो, मज्जा, शुक्र चेति धातवस्त्रय सान्द्रा पिच्छिलाश्चापि नाकृतिमन्त, तेषा स्वाश्रयेषु अवयवेषु प्रसारण गमनाख्य कर्म। सर्वशरीरसञ्चाराभावेऽप्येतेषा गमने–प्रसारणे–प्रसारणाकुञ्चनस्वरूपस्य भावो न भविता।

घन साकार च मासमस्थि चेति धातुद्वयम्। तस्मिन्नेव आकुञ्चनप्रसरणस्वरूप कर्म अभिव्यक्त भवति। साकारत्वसामान्येऽपि मासापेक्षया स्थिरसघातरूपमस्थि स्थिरतर कठिनतर च भवति। स्थिरत्वादस्थ्नि आकुञ्चन च नात्यभिव्यक्त भवति। स्थिरकठिनेन सघातेनैकेनान्यस्य प्रपीडन कर्म विशिष्टमस्थिषु जायते। आकुञ्चनप्रसारणस्वरूपस्य कर्मणो यथावत्वेनाऽऽविष्कारो मासे भवति। मासावयव सूक्ष्मोऽपि प्रत्येक आकुञ्चनप्रसारणाभ्या क्रमात् पोषकाशाना आकर्षण नि सारण च नि साराणा तथा धात्वन्तरोत्पादकानामशाना कुर्वन् जीवमानोऽवतिष्ठते। मासावयवसघातरूपाणा पेशीना पेशीविनिर्मिताना च अङ्गाना आकुञ्चन-प्रसारण नाम सान्धिक सचालनम्। सान्धिके सचालने सघस्थितानामवयवाना प्रत्येकशो व्यक्तिगत चलन भवत्येव। तदभावे सामुदायिकस्य चलनस्याप्यभाव । अपि तु प्रत्यङ्ग विभिन्नस्य समुदायस्य कर्म चलनस्वरूप विभिन्न भवति, व्यक्तिगत च समवेतानामवयवाना प्रत्येकशश्चलन सामान्यमिति जीवमानाना क्रियावता नाम अवयवाना जीवित-क्रियानुवर्तन नाम द्विविध भवति, व्यक्तिगत समुदायगत चेति।

शरीरान्तर्गता सूक्ष्मा अवयवा मासमया स्वीय जीवन वृद्धिक्षयात्मक आकुञ्चनप्रसारणाभ्या सपादयन्त सामुदायिक स्थानविशेषानुगत जीवन स्थानविशिष्टैराकुञ्चनप्रसारणविशेषरूपै कर्मभि सपादयन्ति। समुदायस्वरूपस्य शरीरस्य जीवन नाम सूक्ष्मावयवक्रियाणा अङ्गप्रत्यङ्गक्रियाणा च स्वभावप्रतिनियत समवाय ।

शारीराणा धातूना कर्मविशेषस्य चलनविशेषस्य वाऽधिगमादवगत भवेत् क्रियावैषम्य विकारो वा धातुषु जायते अनुभूयते च तथा च आकुञ्चनप्रसारणाख्य कर्म प्राधान्येन वृद्धिक्षयकारण भवेत् साकारेषु विशेषतश्च मासमयेष्ववयवेष्विति।

विशिष्टाकृतिमत शरीरस्यावस्थान नाम आकृतिमतामवयवानासमुदायावस्थानम्। ततश्चैवविधानामवयवानामुत्पादनसातत्य कर्म प्रधान जीवितव्यवहारस्येति। कर्माणि विविधानि विविधस्थानीयानि शारीराणि, शारीरावयवानामाकृतिमतामुत्पादने विपरिणमन्ति। विशिष्टाकारस्य समुदायस्वरूपस्य शरीरस्य धारका सूक्ष्मावयवा साकारा इति त एव धातव । तदुत्पादनक्रियावैषम्य नाम विकारो रोग इति।

स्वभावनियतेन स्वरूपेण क्रमेण चोत्पत्तिरभिवर्धन जीवनम् तद्विपर्ययश्च विकारो रोग इति।

पञ्चभूतविकारसमुदायात् चेतनाधिष्ठानात् सजातीया जीवसृष्टौ जीवाना यस्मात् बीजात् समुत्पत्तिस्तद्रूपेण बीजेन विपरिणमनमिति जीवनव्यापारस्याकाङ्क्षित परिसमाप्तिश्च स्यात्।

मनुष्यशरीरस्याद्योऽवयव सूक्ष्म शुक्रार्तवरूपाद्बीजाज्जायते। परिवृद्धश्चाय स्वसमानानवयवान् जनयति। सजातेभ्यश्च परिपाटयाऽन्यैवान्येषा समुद्भव । तेभ्यश्च समुदितेभ्य अगापाङ्गानि विविधानि जायन्ते। एवमुत्पादनमभिवर्धन च शरीरबाह्यसृष्टिगतै स्वसमानैर्द्रव्यै शरीरान्त कृष्टैर्भवन्ति। गर्भावस्थाया मातुराहाररसगतैराप्याय्यन्ते गर्भशरीरगतानि द्रव्याणि। जननानन्तर च बाह्यद्रव्याणामाहारेणाभिवर्धन भवति। आहार्यद्रव्याणा च समासतस्वरूप द्विविध स्थूलमन्नपानादिरूपमेक, तेजो वायुश्च सूक्ष्मस्वरूपमन्यदिति। आहरण सात्मीकरणमाहारो नाम। अन्नपानादिगताना पोषकाशाना सात्मीकरण पचनाभिसरणादिभि कर्मभिर्विधीयते, श्वसनकर्मणा वायो सयोगेन च तेजसश्चाहरण विधीयते।

एव समाहृताना पोषकद्रव्याणा साहाय्येन उत्पादनमभिवर्धनमुत्क्रमण चेति कर्मणा निर्वर्तनार्थमेव शरीरे कर्म सपादनानुकूला समुदायस्वरूपा अवयवा स्थानानि अङ्गोपाङ्गानि वा जायन्ते। तद्गतै क्रियाविशेषै सात्मीकृतादाहारात् समुत्पन्ना सवृद्धा क्रमेणोत्क्रान्ताश्च शरीरावयवा स्वसमानशरीरोत्पादकबीजरूपेण विपरिणमन्ति।

पुरुषशरीरान्तर्गत शुक्राख्य स्त्रीशरीरान्तर्गत च आर्तवाख्य इति मनुष्यशरीरारम्भक बीज द्विविधम्। ततश्च

परिणाममापद्यमानाना धातूना शारीराणा पुरुषबीजत्वेन स्त्रीबीजत्वेन च द्विविधो भवति परिणाम । विशेषतश्च पुरुषशरीरे पुरुषबीज शुक्रम् स्त्रीशरीरे स्त्रीबीजमार्तवमिति परिणाम कारणानुरूप स्यात् ।

शुक्रार्तवसयोगात् शरीर जायते। आद्यावयव शरीरस्य शुक्रार्तवयो सयोग । शुक्रमार्तव चैतत् पुरुष-शरीरज स्त्रीशरीरज चेति द्विविधम्, द्विविधे देहे पृथक्तया आविर्भवति। किन्तु शरीरावयवेषु अवयवान्तरोत्पादक बीज द्विविधमपि समवायस्वरूपमवतिष्ठते न पृथक्। अवयवाना सन्तति स्वसमानावयवोत्पादनम्। एव-मुत्पादनार्हत्व परिणाम स्यादवयवानाम्। अन्यावयवो-त्पादकश्चाशो बीजमिति।

समुत्पन्नो विशिष्टाकारेणाभिव्यक्त समुत्पादनक्षमश्च सूक्ष्मावयव सूक्ष्म शरीरम्। एवविधाना सूक्ष्मशरीर-रूपाणामवयवाना समुदाय स्थूलो विशिष्टाकारश्च मनुष्यशरीरमित्यभिधीयते। परिणते चैतस्मिन् स्थूल-शरीरे स्वसमानशरीरोत्पादकस्य बीजस्य सभव। अनेनैवाभिप्रायेण द्विविधस्य शुक्रस्य बीजस्य वा सख्यान-मायुर्वेद उपलक्ष्यते। तयोरेक सर्वशरीरगतम् सर्वेषु सूक्ष्मावयवेष्ववस्थितम्। यथा सुश्रुतसहितायाम्।

"यथा पयसि सर्पिस्तु गुडश्चेक्षुरसे यथा ।
शरीरेषु तथा नृणा शुक्र विद्यात् भिषग्वर ।।"

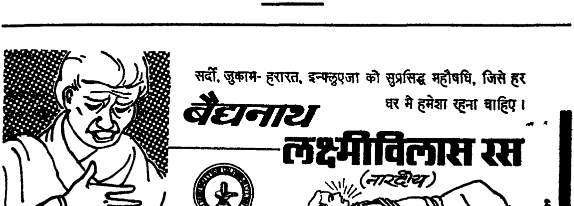
दुग्धस्यावयवे सुसूक्ष्मेऽपि यथा सूक्ष्माशन घृतम्, इक्षुरसस्यावयवे च गुडस्तथा मनुष्यशरीरे शुक्रमिति सूक्ष्मावयवोऽपि शरीरस्य शुक्रान्वितो बीजान्विता वा भवतीति सुविस्पष्ट स्यादभिप्राय । स एव च अवयवान्तरो-त्पादक इति। "शुक्रात् गर्भ प्रजायते" इत्याख्यानमनु-गतार्थ भवति। नो चेत् स्त्रीशरीरे क्लीवशरीरे च गर्भो-त्पादकस्य शुक्रस्याऽभावात् शरीरे रसासृङ्मासमेदो-ऽस्थिमज्जशुक्राणीति सप्त धातव सदा विद्यन्त इति सिद्धान्तो निरस्तो भवेत्।

शुक्र चान्यत्, यस्मिन् विविधस्वरूपाणामवस्थाना सर्वेषामङ्गोपङ्गाना च बीज समवायरूपेणावतिष्ठते, यच्च व्यवायादिना प्रहर्षणेनोदीरित प्रवर्तते, तत् शरीरो-त्पादक बीजम्। उपवर्णन चास्य सुश्रुतसहिताया यथा—

"कृत्स्नदेहाश्रित शुक्र प्रसन्नमनसस्तथा ।
स्त्रीषु व्यायच्छतश्चापि हर्षात् तत्सप्रजायते ।।"

प्रवर्तित शुक्र यथावदार्तवेन समन्वित सततिकर, निरर्थक चान्यथा भवति।

पुरुषशरीरे यथाक्रममुत्क्रान्ताना धातूना परिणाम-स्वरूपे शुक्र सर्वेषामवयवानामङ्गोपाङ्गाना च बीजाना समवायऽपि आर्तवसयोग विना गर्भोत्पादनक्षमत्व न भवति। यत शुक्र वियोजनोन्मुखम्। सघातावस्थान परित्यज्य बहिर्गमनाकाक्षा एव अस्य प्रस्रवणहेतुर्भवति। वियोगानुरागश्च सयोगमूलस्य सघातस्य विरुद्ध। आर्तवसयोगेन सयोजनानुकूलो भाव सघातसाधक-श्चास्मिन्सजायते इति शुक्रार्तवसयोगो गर्भहेतु । ततश्च शुक्रमेव बीज सर्वावयवाना सयोगहेतुश्चार्तवमित्यधिगम्यते। विचिन्त्यमस्मिन् विचक्षणैरिति।



VAIDYAS IN 1637 A. D.

Shri Pratapkumar Popatbhai Vaidya.

A couple of months back I placed before the readers of this Journal a not very pleasant picture of the position of Vaidyas in the year 1837 in the City and island of Bombay The picture emanated mainly from the pen of Shri Bal Gangadhar Jambhekar, a noted Scholar and Linguist of his time and the first Indian to be appointed on the tutorial staff of the then Elphinstone Institution

However, I have come across a manuscript which gives an extremely pleasing picture of the position of the Vaidyas in the year 1637 The manuscript, copy of which I received from my friend Vd Prabhashanker Narottam Raval, at present a Professor in the Ayurved Mahavidyalaya, Jamnagar, an institution affiliated to the Gujerat University, is entitled वैद्यक शास्त्र रत्नप्रकाश It is in Prakrit Gujerati and contains 1556 chopais (चौपाई) The original appears to have been drafted in the Samvat Year 1694 (1637 A D) and the author is Pandit Laksmikushal (लक्ष्मीकुशल), a pupil of Pandit Jayakushal (जयकुशल) It appears that this Pandit Jayakushal was in the retinue of a Jain Muni called Vishalsuri (विशालसुरी) During the year 1694 V S , Vishalsuri and his retinue passed their monsoon months at a place called Uda (उडा) near Idar (इदर) in Sabarkantha (साबरकाठा) I do not know if the place Uda is there or not, but the town of Idar is still there and one reaches there by meter gauge train from Ahmedabad

The 1556 chopais written by Lakshmikushal were later copied (after 50 years) by Vaidya Shanker Bhukhandas (शकर भूखणदास), a barber by caste, and by Bhai Shri Jivanji (जीवणजी)—the caste of Jivanji is not apparent in the manuscript—it could be the same as that of the copyist Shanker Bhukhandas The copy of the MSS is with me for the present and if anyone is interested in the same, I shall be happy to let him have a look at it

The Book if it could be so called, is described as the Nidana of Atreya and the Sara of Sushruta by the copyist who considers the effort as an Uddhar (उद्धार) of that Apara (अपार) Grantha Apart from such integral value that the MSS otherwise possesses, what has interested me is a picture of the position of the Vaidyas in those days I reproduce 5 chopais verbatim as in the original

The copyist enjoins that—

रसिक जन बाचो उल्लासे
मन उलटी भणीशु प्रकाशे ।
इह लोक वाधी जशे
ते तणो राजद्वारी महिमा घणो ।
वलि पामे नानाविधि भोग
पुरण लक्ष्मी तणो सयोग ।
पामे हस्ती तुरगम सार
ग्रथ तणो ज लेहेई विचार ।
वैद्य प्रति राजा दीई मान
वैद्यराज मोटुं अभिमान ।
खीर खाड नित भोजन करी
शालिदाली घृतशु वावरी ।
वैद्य तणी सारी सउ सेव
भूपति समवडी जाणे हव ।
दपती प्रजा तणु धन हरी
ते धन वैद्यराज वावरी ।
उत्तम वस्त्र आरोगे पान
नरनारी दीइ बहु मान ।
सार श्रुगार अलकृत देह
वैद्यराजनु मोटु गृह ।

A broad meaning of the above will be clear even to a superficial reader "The romantic is enjoined to read the chopais (चौपाई) with enthusiasm as the same will

enlighten the mind and increase the importance of the reader in the eyes of the State The reader will (ultimately) enjoy pleasures of various sorts and will be fully rich The reader who carefully follows the grantha (ग्रंथ) and makes use of its contents will have elephants and horses in his backyard The Vaidya is always given respect by the Raja and being a 'Vaidyaraja' is considered to be a matter of pride The Vaidya will daily have in his meals ksheera (क्षीर) and sugar, along with rice, dal and ghee The services of a Vaidya are always good and his habits are like that of a king (alternatively, it would be good thing to serve a Vaidya, because, by habit, he is just like a king) The Vaidya receives his money from the public and spends it on good food, clothes and drinks He is always respected by men and women The house of a Vaidya is a large one and his body is embellished with good ornaments"

Lakshmikushala very properly adds that having had in mind the (above) 'mahima' (महिमा) of a Vaidya he has written the 'hitkari' (हितकारी) chopais In the concluding lines, the writer introduces himself as a 'das (दास) of kavijana' (कविजन), who has brought to light such 'little' knowledge that he possesses and that he cannot describe it further or less' I will enjoin our influential friends to get this MSS published with the help of Vd Prabhashanker Raval, who can be contacted at Naganath Nake, Jamnagar, Kathiawad

To me, what is more interesting for the present, is the contemporary picture of the position of Vaidyas of those days as painted in the above lines It is a very flattering picture to us because the learned Vaidya was respected by the Rulers, enjoyed the material pleasures of the life and was fully (पूर्ण) rich He made himself an influence in the State and he had at his command horses, elephants, etc, which should go to prove that he had the usual cattle, the cart, the palakeen and a retinue of servants at his command As the Vaidya was always respected by the Raja, it was considered to be a matter of pride to become a Vaidyaraja The daily diet of a Vaidya had always the ksheera, (क्षीर), sugar, rice, dal and ghee and the Vaidya had regal habits

Vaidyas of those days must have been making a good income from the public apart from such emoluments that they might be receiving from the State and/or the King and it is a reflection on the fashions of the times that the body of a Vaidya was embellished with ornaments and that his income also enabled him to have a large commodious house

Notes by the Writer

Even if the picture reproduced above is an ideal one, it is apparently clear that the position and the circumstances of a Vaidya and his family were quite comfortable 220 years ago in a part of Gujerat and there is no reason to believe that his position could have been lesser elsewhere in India The fact that it was considered a matter of pride to become and be called a Vaidyaraja goes to prove the influence and importance of Vaidyas of those days

There are some other interesting considerations as well, which may come to us as we read the above First and foremost is the fact that the MSS is in old or Prakrit (प्राकृत) Gujerati language which may go to show that Gujerati had started to be a medium of instruction and exchange of thought over 300 years from now The more important aspect, here is not the emergence of Gujerati as such at the commencement of the eclipse of the Sanskrit language, even in a Book on Ayurvedic Diagnosis and Treatment The second fact that emerges is the incidence of the above, which could be called some sort of concise 'Notes' from the Shastreeya Granthas—even the MSS is called a 'sara' and it is likely that the original Granthas must have been scarce or that its' reading must have been considered rather difficult, if not impossible

The third interesting point is the specific information that Vaidyas used to charge get paid and grow rich and comfortable They lived in regal splendour and with royal lavish ness The State and the Ruler must have been equally helpful and deferential to the Vaidya

The Author of the MSS appears to be a 'Pandit which may mean that he was not a Vaidya The Author says the following about himself—

आचार्यजना गुण जटला
श्री विशालसुरीमा तेटला
प्रौढ परिवार तहनु सार
पडित तणो न लाभी पार
जयकुशल पडित तेहमा जाण
अहगुण माही दीसे भाण
लक्ष्मीकुशल तस केरो शिष्य
गुरुप्रसादी हुइ जगीस
राय देश माहि प्रसिद्ध
इडर नगर अछइ समृद्ध
तेहनी पासो उडा गाम
धम तणा जहा मोटा ठाम
जीनमदिर अभिनदन देय
प्रागवश सरू सारी सेव
गुरूतणो आदेशज लह्यो
लक्ष्मीकुशल चुमासु रह्यो
सवत सोलचुराणुआ जह
फागण सुदी तेरसी तेह
शुक्रवार सयोगी सही
लक्ष्मीकुशले चोपाइ कही ।

A free translation of the above would be as follows 'Shri Vishalsuri possesses all the qualities as should be possessed by an Acharya and his retinue of mature (praudhha प्रौढ) persons contains innumerable Pandits One of these Pandits is Jayakushal, who is like a Sun amongst others and Lakshmikushal is his Shishya, having been blessed by his Guru and God In the country of Rayadesha, the city of Idar is well prosperous and near Idar there is the town of Uda, where there are large establishments of religion and many Jain Mandirs At this place , being ordered (or, permitted) by his Guru Lakshmikushal stayed for the duration of the monsoon On Friday, Falgun Shudi 13 of the Vikrama Samvat year of 1694, Laksmikushal wrote these chopais"

This shows that both the Disciple and the Guru were not Vaidyas but Pandits , this is rather surprising, but one probable reason could be that the good Vaidyas were busy minting moneys (vide supra) and hence it fell to the Pandits to author and create these and other MSS I am told that all over India there are thousands of MSS on Ayurved and numberless other subjects which have been prepared and transcribed by Jain Pandits as a sheer labour of love and with the adage of 'Art for the sake of Art' and 'Knowledge for the sake of knowledge and for the purpose of the enlightenment of others'

The colophon which follows the MSS makes it clear that the original MSS was copied by 'Vaidya Shankerdas, a Barber by caste and Bhai Shri Jivanji' Of the two the first is a Vaidya and the latter is a layman To me it seems that Vd Shankerdas must have come across the MSS and may have engaged Jivanji to copy the same on his behalf in lieu of some remuneration or as a labour of love From the colophon it is clear that the work of copying was completed on 'Friday the 11th day of Vaishakh Shuklapaksha in the year of V S 1844' that is to say, in the year 1787 A D nearly 150 years after the original MSS was drafted by Lakshmikushal

The main colophon to the original MSS has been reproduced above and a reference is made there to 'Raydesha' This Raydesha must be the coastal country along the river साबरमती of Gujerat, in fact, the postal district is now known as Saberkantha (साबरकाठा) In his wellknown Historical Volume, the 'Ras Mala' ('रास माला') Forbes who very assiduously and meticulously collected his information from such authoritative sources as he came

(शेषाश पृष्ठ ८७६ पर)

पारद अनुसंधान कार्य

वैद्य श्री नारायण स्वामी

मेरा ऐसा विश्वास है कि हमारे पारद अनुसधान कार्यालय मे विगत अनेक वर्षों से समय-समय पर जो पारद प्रयत्न हो रहे हैं उसमे से कुछ प्राप्त अनुभव हठरस बनाने वाले जिज्ञासुओ के लिये मार्ग प्रदर्शन करेगे। यह समझ कर 'गोपनीय प्रयत्नत' ऐसे प्रयोगो को देश की आर्थिक दुर्व्यवस्था का विचार करते हुए छोड देना उचित नही होगा। इस सस्था द्वारा इस दिशा मे अति स्पष्ट मार्गदर्शन किया जायगा। इस सस्था मे चलने वाले अनुसधान कार्य के विषय मे वैद्य-समाज तथा विशेषत गुरुकुल कागडी के कुछ अध्यापक जिज्ञासापूर्वक ज्ञात किया करते है। अत मैंने अपने अनुभवो को समय-समय पर प्रकाशित करने का विचार किया है। आशा है आयुर्वेद प्रेमी इनसे लाभ उठा सकेगे। मेरी इच्छा किसी एक व्यक्ति या सस्था को अपने अनुभव बताने की नही है और न मै यह चाहता हूँ कि कोई व्यक्ति-विशेष इन अनुभवो से लाभ उठाकर आर्थिक लाभ प्राप्त करें। हमारे अनुसधान का उद्देश्य तो मानव कल्याण है।

शीगरफ, हडताल, सखिया और गन्धक को पूर्णतया अग्निस्थाई करने और गन्धक का अग्निस्थाई तेल बनाने का विधान वैद्यो को प्रत्यक्ष सिखाने की इच्छा है। कुष्ठ, दमा, नामर्दी, यक्ष्मा, पक्षाघात आदि मे और योगवाही सिद्धान्तानुसार अनेक महाव्याधियो मे उपर्युक्त वस्तुऐं अवश्य काम आयगी। वर्तमान समय मे मानवी शरीर पर इनकी मात्रा निश्चित करनी होगी। इस विषय पर अनुसन्धान के लिये कोई योजना बनानी होगी। मेरी ऐसी धारणा है कि रस विद्या, पुस्तके पढकर आनेवाली विद्या नही है।

जिन वस्तुओ का उल्लेख मैंने किया है वे वस्तुऐं आयुर्वेद रसशास्त्र की सार हैं। इन वस्तुओ द्वारा निर्मित औषधियों से यदि देश के अनेको निर्धनो का रोगोपचार हो सके और साथ ही उन औषधियो का विदेश से आना रुक सके जो भारत जैसे निर्धन देश का पैसा बाहर खीच ले जाती है, तो मैं समझूँगा कि इस अनुसधानशाला का उद्देश्य सफल हुआ है। वनस्पति घी और चाय-पान के इस युग मे जब तक देश की गरीबी नही मिटती तबतक देहसिद्धि की बात कहना कठिन है। किंतु ऐसी कोई योजना बन जानी चाहिये जिससे अनेक महाव्याधिनाशक औषधियों का निर्माण हो सके और कम-से-कम मूल्य पर वे जनसाधारण को सुलभ हो सके।

इस समय इस अनुसधान कार्यालय मे पारद बीज जारण हो रहा है। अभी हाल ही मे उत्तर प्रदेश वैद्य सम्मेलन के सभापति श्री बाबूरामजी मिश्र हापुड और प० अमरनाथजी शास्त्री देहरादून वाले हमारे अनुसधान कार्य को देखने पधारे थे। ये दोनो ही सज्जन यहा का कार्य देखकर अत्यन्त प्रसन्न और प्रभावित हुए। श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के सचालक प० रामनारायण शर्मा जी की भी हमारे अनुसधान कार्यालय पर विशेष कृपा रही है। वे अभी तक इस सस्था के लिये अनको वस्तुऐं अपने व्यय से भेजते रहे हैं। आशा है कि वे पुन यहाँ के कार्य के लिये १० सेर सखिया श्वेत का ढाई सेर श्वेत सखिये का जौहर निर्माण कराके यहाँ के कार्य के हेतु भेजन की कृपा करेग। श्वेत सखिये को पत्थर के खरल म बारह घण्टे नीबू स्वरस मे मर्दन कर छाया शुष्क करके ऊर्ध्वपातन यन्त्र म छ घण्टे तीव्र आँच देने से स्वत जौहर ऊपर को लगेगा। ऊपर की हाडी पर गीला ठडा कपडा रखना चाहिये। यहाँ क्रामण और रसबधक तरीको से फिटकरी और सखिया के तलस्थाई सत्व की आवश्यकता है। यदि बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के सचालक महोदय सावधानीपूर्वक श्वेत सखिये का जौहर बनाकर भेज सकेगे तो हमारा बहुत समय बच जायगा। हमे यह भी आशा है कि वे एक माह के अन्दर ही ढाई सेर पक्का सत्व बनाकर भेजने का भी कष्ट करेग। उत्तर प्रदेशीय शासन के आयुर्वद विभाग के उप-सचालक श्री कुलकर्णी जी ने भी हमारे कार्यों मे सदैव सक्रिय सहयोग दिया है। इस पुण्य कार्य मे हाथ बटाने वाले सज्जन सभी धन्यवाद के पात्र हैं। मैं उन्हे कोरे धन्यवाद के दो शब्दो के अतिरिक्त और दे भी क्या सकता हूँ। यदि मगलमय भगवान की कृपा से हमे इस अनुसधान कार्य मे सफलता मिली, तो भविष्य मे आयुर्वेद के इतिहास के इस अध्याय को लिखने वाले इतिहासकार उनका नाम भी स्वर्णाक्षरो मे लिखे, यही मेरी शुभकामना है।

पारद अनुसंधान में प्रगति

श्री रमेश बेदी

गत नवम्बर मास म देवप्रयाग की पारद अनुसन्धान शाला के श्री नारायण स्वामी जी न कनखल म अपना अन्वेषण काय आरम्भ किया है। सितम्बर म मुझ दवप्रयाग म ही स्वामी जी के दशन करन का सुअवसर हुआ था। पिछल महीनो म स्वामी जी ने अपन अन्वषण काय म जो प्रगति की है उसका सक्षिप्त परिचय रसशास्त्र के जिज्ञासुओ के लिय यहा दे रहा हूँ।



तप्त खल्व में बीज जारण (कोयले की भट्ठी)

आचाय श्री नित्यानन्द जी पिलानी का कुछ समय पूव 'सचित्र आयुर्वेद' म एक लेख प्रकट हुआ था। उसका शीर्षक था— क्या वैद्य सोना बनायग ?' इस लख के अन्दर गुरु गोरक्षनाथ जी की एक साखी थी जो इस प्रकार है—

गीध हस सुआ एक सग
खटाई त्रिफला अष्टग
कन्या रजनी गैल फिराना
अगनि पुटते दारिद जावा ।।

इस लेख म आचाय जी न इस साखी की व्याख्या करते हुए अपने तथा अन्य विद्वानो के मन्तव्यो को दर्शाया था। उस पर जब श्री नारायण स्वामी जी का ध्यान गया तो उन्होंने इन व्याख्याओ को अस्पष्ट पाया। अमृतनाथ योगी के मत का उल्लख करते हुए श्री नित्यानन्द जी ने दरशाया है कि इस प्रयोग म एक तोला उपयुक्त पारद से एक तोला कलई का रजत म रूपान्तर होने की सभावना है। इस पर श्री स्वामी जी का कथन है कि इतना श्रम करने के उपरान्त यदि यह परिणाम प्राप्त होता है तो यह कहावत चरितार्थ होती है कि खोदा पहाड निकला चूहा।

गुरु गोरक्षनाथ जी ने साखी के अन्त म दारिद जावा जो लिखा है य शब्द स्वामी जी की सम्मति म स्पष्ट रूप से यह ध्वनि दे रहे है कि इस विधि से बना हुआ पारद या तो ताम्रजारित पारद होते हुए पत्रवेध करेगा अथवा इस प्रयोग म जितना पारद लगे उसका डेढ गुना स्वर्ण बनेगा। इस विचार को लकर स्वामी जी ने अपनी प्रयोगशाला मे विस्तृत पैमान पर प्रयोग आरम्भ किया। स्वामी जी इस साखी की व्याख्या इस प्रकार करते है—गीध सवभक्षक प्राणी है इसलिय इस प्रयोग म पारद को सवभक्षक बनाने वाले गीध (बीड) के रूप म नरमूत्रक्षार लेना चाहिय। हस से शुद्ध पारद का ग्रहण होना चाहिये। सुआ से शुद्ध नीला थोथा। साथ ही यह तुत्थ रसरत्नसमुच्चय के पाठानुसार रक्त वर्ग के द्रव्यो से भावना देकर शुद्ध किया हुआ होना चाहिय। अपनी प्रयोगशाला म चालू किये गये परीक्षणो मे स्वामी जी ने उपर्युक्त द्रव्य ही लिये है। साखी के अनुसार स्वामी जी ने बीड (गीध) के रूप मे नरमूत्रक्षार लिया है। हसशुद्ध पारद सुआशुद्ध तुत्थ फिराना में अग्निस्थायी सुहागा ये चारो द्रव्य एक समान लिये। इन्हें पत्थर के खरल मे निम्बूस्वरस (खटाई) त्रिफला का अष्टमाश क्वाथ घृतकुमारी का गूदा (कन्या) हल्दी और दारुहल्दी के स्वरस तथा आमाहल्दी का अष्टमाश क्वाथ—इनमें

से प्रत्येक से अलग अलग सात-सात भावनाएँ दी। इस सारी प्रक्रिया मे एक श्रमिक को पूरे दस मास लगे, जब कि वह प्रतिदिन आठ नौ घण्टे कार्य करता था। छाया मे शुष्क करने मे इसे दो मास लगे थे। तब इसे डमरूयन्त्र म बारह घण्टे मृदु मध्यम और तीव्र आच दी। इसम ऊपर पौने ग्यारह तोले पारद पूर्ण रजित पीताभ प्राप्त हुआ। यह पारद अग्निस्थायी नही है। शेष द्रव्यो को भिन्न पाचक देकर स्वामी जी इस समय उन्हे क्रुसिबल (आधनिक वैज्ञानिक प्रयोगशालाओ म काम आने वाल मषा) म ब द करके सम्पुट को छाया मे सुखा कर अब अग्नि देना आरम्भ कर रहे है। स्वामी जी की प्रयोगशाला मे यह परीक्षण अभी चालू है और निश्चित परिणाम प्राप्त होने पर हम पुन रसशास्त्र के प्रेमियो को सूचित करेग।

पारद के अन्य दो प्रकार

पिछले लेख मे मैंने पारद के जिन प्रयोगो के विषय मे लिखा था उनके अतिरिक्त दो अन्य प्रकार भी स्वामी जी ने तैयार किये है। रसशास्त्र मे पारद जब रजित हो जाता है तब अग्निस्थायी बुभुक्षित और बेधक होता है। शास्त्रकारो ने रजन की परिभाषा मे भलीप्रकार बीज आदि के जारण से पारद मे रक्तपित्त वण के प्रादुर्भाव को रजन कहा है। पारद रजित होने से लाक्षा के सदृश रग का (लाक्षाभ जायते) उगते हुए सूर्य की प्रभा जैसा (बालार्क सदृश) और गलाये हुए स्वर्ण जैसा हो जाता है। रसशास्त्र म दिव्यौषधियो मे रक्त पीत श्वेत और कृष्ण वर्ण की औषधियाँ बताई है। उनमे से रक्त पीत्त वर्ग की औषधियो को लेकर कुछ औषधियो का स्वरस कुछ का क्वाथ और कुछ का चूर्ण लेकर स्वामी जी ने अलग अलग औषधियो मे शुद्ध पारद को पत्थर के खरल मे भावित किया। परिणामस्वरूप पारद सुवर्ण सदृश वर्ण का तथा अग्निस्थायी प्राप्त हुआ। इस पारद मे आपने अब बीज जारण आरम्भ कर दिया है।

पारद का दूसरा प्रकार—धरणीधर सहिता में कुछ तैलो के योग से पारद वेधकृत भवेत ऐसा सकेत मिलता है। इसके अनुसधान मे स्वामी जी ने अपनी प्रयोगशाला मे कुछ परीक्षण किये है। इसी ऋतु मे पैदा हुई पर्वतीय भाग के बीजो से स्वामी जी ने पाताल यन्त्र द्वारा तेल प्राप्त किया और उसे समान भाग शुद्ध पारद के साथ सिलिका बेसिन (स्फटिक पात्र) मे रखा। इसे बालुका यन्त्र के अन्दर प्रतिदिन बारह घण्टे लकडी के कोयले की अगीठी पर पकाया गया। मध्यम अग्नि पर मृदु तथा सम तापमान पर लगभग दो मास पकाया गया। तेल के शुष्क होने पर पारद और तेल के शुष्काश को डमरू यन्त्र मे रख कर तीन घण्टे मृदु मध्यम और तीव्र अग्नि दी गई जिससे पारद पूण अग्निस्थायी और रक्ताभ पाया गया। इसमे भी अब स्वामी जी ने बीज जारण करना शुरू कर दिया है।

तप्त खल्व में बीज जारण

१७ जून १९५७ को उत्तर प्रदेश में आयुर्वेद के उपसचालक श्री दत्तात्रेय अनन्त कुलकर्णी एम० एस-सी०



तप्त खल्व में बीज जारण (बिजली की भटठी)

आयुर्वेदाचार्य देवप्रयाग मे पारद अनुसन्धान कार्य की प्रगति को देखने आये थे। विविध प्रयोगो प्रक्रियाओ तथा उपलब्धियो को समझने और प्रत्यक्ष करने मे आपने अपने अमूल्य समय मे से तीन दिन निकाल कर प्रयोगशाला मे ही निवास करने की कृपा की थी। श्री कुलकर्णी जी को पारद अनुसन्धान मे वस्तुत गहरी अभिरुचि है। प्राचीन आयुर्वेद के साथ साथ उन्होन नवीन विज्ञान का तथा नव्य रसायनशास्त्र का उच्च अध्ययन किया है। इसलिय, वे आयुर्वेद के रसशास्त्र के विलुप्त प्रकरणो तथा प्रक्रियाओ को सुलझाने के लिये योग्यतम व्यक्ति हो सकते है। उनके यहाँ पधारने पर श्री स्वामी जी की प्रार्थना पर उन्होने सुवर्ण जारण का शुभ आरम्भ किया था। तप्त खल्व के अन्दर

बीज जारण करने के लिये प्रयोगशाला में विशेष प्रकार की भट्ठी बनाई गई है जिसमे सुविधापूर्वक बैठ कर निश्चित तापमान पर घण्टो सतत कार्य किया जा सकता है। देवप्रयाग मे स्वामी जी ने इसे इस प्रकार बनाया था। ईंटो की चिनाई से लगभग एक हाथ ऊँची और लगभग एक फुट व्यास की इस भटठी मे चार इच की गहराई मे जाली लगाई गई थी जिसमें कोयले भरे जाते थे। उस पर जलेबी तलने वाली चपटी पेदी की कड़ाही टिकाते थे जिस पर बालू बिछी रहती थी। चपटी पेदी की कड़ाही मे यह लाभ है कि तापमान सर्वत्र एक समान फैलता है। बालुका के ऊपर पोर्सलन का खरल रख कर सुगमता से जारण का कार्य सम्पन्न होता है। इस अगीठी के पीछे उतनी ही ऊँचाई का चबूतरा बनाया था जिस पर कार्यकर्त्ता आसानी से बैठकर बिना कष्ट के और बिना थकान के निरन्तर प्रयोग जारी रख सकता था। इस समय अनुसन्धानशाला मे सुवर्ण, ताम्र नाग, यशद और रस बीज (माया बीज) का जारण चल रहा है। अपने कनखल के नये स्थान पर स्वामी जी ने विद्युत शक्ति का लाभ उठा लिया है। यहाँ तप्त खल्व के जारण का कार्य विद्युत भट्ठियो पर किया जा रहा है। दोनो प्रकार की भट्ठियो के फोटो अनुसन्धानप्रेमियो के पथप्रदर्शन के लिये यहा दिये जा रहे है। अपने अनुसन्धान कार्य को अधिक सूक्ष्मतया चलाने के निमित्त स्वामी जी ने हाल ही मे बारह सौ डिग्री तक ताप को मापने के लिये कैमिकल थर्मामीटर भी मगा लिया है।

स्फटिका सत्व

एक मन श्वेत स्फटिका तथा एक मन सैन्धव लवण को कूट पीस कर रसशास्त्र के अनुसार अग्नि के सयोग से स्वामी जी ने फिटकरी का सत्व निकाल लिया है। यह सत्व पारद मे क्रामण के रूप मे काम देगा। इस सत्व के साथ श्वेत मल्ल के सयोग से दोनो चीजे तलस्थायी होने के बाद इस योग से पारद को बद्ध तथा अग्निस्थायी करके पतरा बनाने की क्षमता आ जायगी। मल्ल और स्फटिका सत्व दोनो को तलस्थायी करने का यह कार्य इस समय रसायनशाला मे चल रहा है।

शेषाश १६३७ ई० के बाद [८७५ पृष्ठ का

across, when he was posted in Ahmedabad, nearly 100 years ago, states, that "the land of Idar was considered to be a dish of gold, where there is a lot of water, mangoes and sugar canes" This was round about the time, when the above MSS appears to have been written The ruler, then, must have been Rao Jagannath, whose maternal grandmother was a sister of Rana Pratap of Udaypur The prefix 'Rao' must be an apabhranhsa (अपभ्रश,) of 'Raya' Incidentally, as the crow flies, Udaypur is nearer Idar than, say, Ahmedabad

It is my belief that some non-controversial but influential body should make it a point of collecting MSS touching Ayurved and applied Arts before they are destroyed by times and white ants Much could be gained from such collections As far as the above copy MSS is concerned those interested can see the same at my place (92 Atmaram Rd , Bhuleshwar Bombay 2) for the present.

पारद पर नवीन अनुसंधान

(बन्धनयुक्ति व मुक्ति)

श्री कृष्णकुमार एम० ए० आयुर्वेदालंकार

पाठक श्री नारायण स्वामीजी से सम्भवत परिचित ही होंगे। आप रसशास्त्र के विलक्षण विद्वान् हैं। इस ७२ वर्ष की आयु मे भी आप जिस लगन तथा अनथक परिश्रम से आयुर्वेदीय रसशास्त्र मे शोधन कार्य कर रहे हैं, उसके लिये आयुर्वेद जगत् की ओर से बधाई के पात्र हैं। आपने अब से ६ वर्ष पूर्व गढवाल के देवप्रयाग नामक स्थान पर पारद पर अनुसन्धान-कार्य प्रारम्भ किया था। परन्तु कतिपय कारणो से आपको वह स्थान छोडना पडा। अब आप गंगा के किनारे कमण्डल नामक स्थान पर अनुसधान-कार्य कर रहे हैं। प्राचीन काल मे रसविद्या उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर पहुँच चुकी थी। रस प्रयोग के अद्भुत चमत्कार प्राचीन रसशास्त्र के ग्रन्थो मे उपलब्ध होते हैं। परन्तु इन ग्रथो की भाषा इतनी गूढ व रहस्यमय है कि उनका भाव ठीक प्रकार से समझ मे नही आता तथा प्रयोग किये जाने पर उनका फल प्राप्त नही होता। इन रहस्यो को न समझने के कारण अनेक विद्वान् इन उपयोगो को कपोल-कल्पित ही समझते हैं।

श्री नारायण स्वामी जी इन प्रयोगो की सत्यता को सिद्ध करने के लिये अनेक वर्षो से प्रयत्न कर रहे हैं। इस कार्य मे लगभग ६० सहस्र रुपया वे व्यय कर चुके हैं। पर्याप्त सीमा तक स्वामी जी को इस कार्य मे सफलता भी प्राप्त हुई है। स्वामी जी को पूर्ण विश्वास है कि इस कार्य में सफलता अवश्यभावी है। आयुर्वेद के प्रेमी किसी समय स्वामी जी द्वारा किये गये अनुसन्धान-कार्यो से अवश्य परिचित होंगे।

मैं स्वामी जी के पास पारद-अनुसन्धान कार्यालय मे अनेक बार गया हूँ तथा स्वामी जी से प्रार्थना की है कि वे आयुर्वेद-प्रेमियो के हितार्थ उनकी ज्ञानपिपासा की शांति के लिये कुछ प्रयोग बताने की कृपा करे। स्वामी जी ने अत्यन्त कृपा करके पारद को अग्निस्थायी करने के लिये स्वय अनुभूत कुछ प्रयोगो को बताने की कृपा की है। यह अग्निस्थायी व रजित पारद धातुवाद (लोहवेध) के लिये उपयुक्त होता है। मैं उन प्रयोगो को आयुर्वेद जगत् के सम्मुख उपस्थित कर रहा हूँ। कुछ समय पश्चात् अन्य प्रयोगो को भी पाठको के सम्मुख रखने का प्रयत्न करूँगा।

आयुर्वेदीय रसशास्त्र मे पारद के २५ बन्ध बताये गये हैं। पारद अनुसधान कार्य करते हुए श्री नारायण स्वामी जी ने समय-समय पर पारद को अग्निस्थायी व रजित करने के लिये जो अनुभव किये हैं, उनमे से सरलता से प्राप्त होने वाली वस्तुओ से पारद को अग्नि स्थायी व रजित करने के लिये जो अनुभव स्वामी जी ने अपनी रसायनशाला मे किये हैं, उनको मै आयुर्वेद प्रेमियो के सामने रख रहा हूँ।

१—विल्वपत्र स्वरस से पारद को रजित व अग्नि-स्थायी करने की विधि—कोमल विल्वपत्रो को प्रात काल धूप निकलने से पहिले तोड कर लावे। निर्धूम उपलो की अग्नि मे पाक करके पुटपाकविधि से स्वच्छतापूर्वक इनका स्वरस निकाले। एक मृत्तिका पात्र ले। मृत्तिका पात्र इस प्रकार तैयार करे—

मिट्टी का कूण्डा कच्चा (आवे मे पकाने से पहिले) ले। सुहागा तथा रसरत्नसमुच्चय के रक्तवर्ग की भावना देने की विधि के अनुसार शोधित तुत्थ समान भाग लेकर पानी मे बारीक पीस ले तथा कूण्डे के भीतर और बाहर लेप कर दे। इस कूण्डे को आवे मे पकवा ले। इस लेख मे पारद के बन्धन के लिये जितने भी मृत्तिका पात्र लिये जायेंगे उन सब मे इसी प्रकार के मृत्तिका-पात्रो का व्यवहार होगा। साधारण मृत्तिका-पात्र से बिना निगड पारद बाहर निकल आता है। ऐसे पात्र बनाने मे जिन्हे कष्ट मालूम हो और जिनके पास आर्थिक साधन हो उन लोगो को पोर्सिलेन या सिलिका के पात्रो मे यह कार्य करना चाहिये।

एक सेर पारद के लिये १० सेर विल्वपत्र स्वरस कूण्डे मे डाल कर बालुका यन्त्र या बिजली के हीटर पर ४० दिन-रात रस डाल-डाल कर पकावे। यदि कूण्डे छोटे हो तो दूसरी बार रस डाल कर पकावे। दूसरी बार रस डालने से पहिले पारद को तीक्ष्ण चाकू से खुरच कर कूण्डे

से पृथक् कर ले। बाद मे फिर पकावे। ४० दिन-रात स्वरस मे पकाने के बाद पारद का ऊर्ध्वपातन यन्त्र मे परीक्षण करे कि यह अग्निस्थायी हुआ है या नही। नव्य विज्ञान के अनुसार पारद ६३५° स० पर अग्निस्थायी रहना चाहिये। पूर्ण अग्निस्थायी होने तक पारद का विल्वपत्र स्वरस मे पाक करे। इस प्रक्रिया से पारद अपने मूल स्वरूप जैसा तरल एव लाख के रग के समान रक्ताभ और पूर्ण अग्निस्थायी तथा बुभुक्षित होता है।

२—जयपाल के बीजो से पारद को रजित व अग्निस्थायी करने की विधि—देशी जमालगोटा के बीजो को शुद्ध करके उनको मशीन मे डाल कर तेल निकलवा ले। इस तेल मे पहिले कही गई विधि के अनुसार मृत्तिका-पात्र मे पारद को ४० दिन तक पकावे। बाद मे ऊर्ध्वपातन यन्त्र द्वारा पारद के अग्निस्थायित्व का परीक्षण करे। यदि कोई कमी हो तो पुन जयपाल के तेल मे पाक करे। इस प्रकार से सिद्ध किया हुआ पारद तरल तथा पीताभ रजित होता है और अग्निस्थायी तथा बुभुक्षित होता है।

३—कुसुम्भ के बीजो से पारद को रजित व अग्निस्थायी करने की विधि—ऊपर कही गई विधि से कुसुम्भ के बीजो के तेल से पारद का मृत्तिकापात्र मे ४० दिन तक पाक करे। इस विधि से सिद्ध पारद तरल तथा पीताभ रजित और अग्निस्थायी तथा बुभुक्षित होता है।

४—अलसी के तेल से पारद को रजित व अग्निस्थायी करने की विधि—ऊपर कही कही गई विधि से अलसी के तेल मे पारद का मृत्तिकापात्र मे ४० दिन तक अग्निस्थायी होने तक पाक करे। इस विधि से सिद्ध पारद माखन जैसा गाढा तथा पीताभ और अग्निस्थायी तथा बुभुक्षित होता है।

५—भिलावे के तेल से पारद को रजित तथा अग्निस्थायी करने की विधि—शुद्ध भिलावो का पातालयन्त्र मे तेल निकलवा ले। इस तेल मे पारद का मृत्तिका पात्र मे ४० दिन तक पाक करे तथा उसके अग्निस्थायित्व की परीक्षा करे। इस विधि से सिद्ध पारद तरल तथा पीताभ रजित और अग्निस्थायी तथा बुभुक्षित होता है।

नोट—भिलावे के तेल व जमालगोटे के तेल मे पारद को पकाते समय इनके धुएँ से बचना चाहिये, अन्यथा शरीर पर सूजन आ जाती है। इनका धुआ आख, नाक व मुख पर बिलकुल नही लगना चाहिये। जहाँ तक हो सके यह कार्य खुली वायु मे करना चाहिये। पित्त प्रकृति वाले को विशेषरूप से इन तेलो मे पाक नही करना चाहिये।

६—गन्धबिरोजा 'श्रीवेष्टक' द्वारा पारद को रजित व अग्निस्थायी करने की विधि—सर्वप्रथम गन्धविरोजे को साफ करने का कार्य करे। एक चौडे मुख के पात्र में ३ हिस्से पानी भर कर इसके ऊपर स्वच्छ कपडा बाध दे। इस कपडे पर उसी वर्ष का ताजा निकला हुआ बिरोजा बिछा दें। बर्तन को चूल्हे पर रख कर आँच दें। इससे बिरोजा छन कर नीचे के पात्र मे आ जायेगा तथा कपडे पर मैल व लकडी बच जायेगी। इस विधि से साफ किया हुआ बिरोजा पारद को रजित व अग्निस्थायी करने के कार्य म आता है।

शुद्ध बिरोजे को १ सेर पारद के लिये १० सेर ले। सुहागा व तुत्थ से लिप्त पूर्वोक्त मृत्तिकापात्र म इस बिरोजे के साथ पारद का ४० दिन तक पाक कर। जब पात्र मे बिरोजा पकते-पकते सूख जावे और उसमें दरार पड जावे तब कूण्डे को फोड कर पारद अलग कर ले तथा दूसरे कूण्डे मे पारद और बिरोजा डाल कर पाक करे। इस प्रकार ४० दिन तक पाक करने के बाद पारद के अग्निस्थायित्व का परीक्षण करे। इस विधि से सिद्ध पारद तरल तथा पीताभ रजित और पूर्ण अग्निस्थायी तथा बुभुक्षित होता है।

धरणीधर सहिता मे कुछ श्लोक हैं जिनमे पारद के वेध का विधान बताया गया है—

> अथ वेध विधान हि कथयामि सुविस्तरम्।
> यस्य विज्ञान मात्रेण वेधज्ञो जायते नर ॥
> धूर्त्ततैलमहे फेन कगुणीतैलमेव च।
> भृगतैल विष चैव तैल जातीफलोद्भवम् ॥
> हयमारशिखातैलमब्धिशोषक तैलकम्।
> एतान्यन्यानि तैलानि व्यवाय करणानि च ॥
> सस्कारै सस्कृत सूत समस्त तैलव्यवायिना।
> यामैक मर्दित सम्यक् पारदो वेधकृद्भवेत् ॥

ऊपर के श्लोको मे पारद के वेध की विधि बतलाई गयी है। स्वामी जी ने अपनी प्रयोगशाला मे इस विधि का प्रयोग करके अनुभव प्राप्त किया है। स्वामी जी ने इसमे दो प्रकार के अनुभव प्राप्त किये। बीजजारित पारद को उपर्युक्त तैलो से एक-एक प्रहर तप्त खल्व में घोटने से उपर्युक्त सारे तैल अलग-अलग क्रामण करके काम देते हैं। इसके अतिरिक्त स्वामी जी ने अपनी रसायनशाला मे साधारण शुद्ध पारद पर इन तैलो का क्या प्रभाव होता है इसकी भी जाँच की। इनको अनुभव हुआ कि उपर्युक्त रसबन्ध के लिये बताये तैलो मे पारद को द्विगुण तैल मे पकाने से पारद अग्निस्थायी, रजित व बुभुक्षित होता है। स्वामी जी ने अनुभव किया कि ऊपर की रसबन्ध की विधि से जो पारद अग्निस्थायी व रजित होता है वह स्वय क्रामण, बन्धन तथा वग स्तम्भन करता है। स्वामी जी का यह भी अनुभव है कि ऐसे जो हठरस बनाये जाते हैं, उनके अभ्रक या गन्धक का जारण न करने पर भी रसशास्त्र के सिद्धान्त के अनुसार पारद को आहिस्ता-आहिस्ता ग्रास देने से उसमे बीज जारण करने से उपर्युक्त सारे पारद दशवेधी होते हैं।

ऊपर के लेख से आयुर्वेद रसशास्त्र के अनुसन्धान-कार्य को एक नयी दिशा मिलती है। आशा है आयुर्वेद-प्रेमी इस दिशा मे विचार करेगे तथा अनुसन्धानकार्य को आगे बढाने का प्रयत्न करेगे।

गोरक्षसंहिता

(षष्ठ. पटल)

(पूर्वतोऽनुवृत्त)

त्रिकूट लेपयेत्तेन क्रामणेन तु मर्दितम् ।
तारारिष्टारविन्दा वा तार वा स्थापयेत्क्षितौ ॥२०४॥
त्रिदिन तद्गुरुष्मात शताशाद्धेममुत्तमम् ।
तदोपयोग कर्तव्य फलोक्तमधिक भवेत् ॥२०५॥
उत्तरोत्तरयोगेन लेपात्क्षेपेण सूतक ।
त्रिकूट वेधयेदेष एकैक च महारस ॥२०६॥
उरग वाऽथ सद्रव्ये क्रामणेन समायुतम् ।
धमकम (?) बल ज्ञात्वा सत्त (प्त) सप्ताहवेधक ॥२०७॥
जाम्बूनद भवेद्द्रव्य तारे वेधा भ्रवेधक ।
रसायनोपयोगेन उत्तरोत्तर (?) फलप्रद ॥२०८॥
उक्ताङ्गुलीयक श्रेष्ठ तन्मध्येत्वसित घनम् ।
रसेरसायने चैव उक्त श्रेष्ठ गुणावहम् ॥२०९॥
शोध्य सस्कृत्य विधिवत्क्षाराम्लस्नेहभावित ।
तेनैव वाहयेद्धेम सम वाचार्यसूतके ॥२१०॥
उक्तकर्मविधानेन विशेषो उदाहृत ।
तद्धेम पादतो दद्यात्सूतकस्याम्लमर्दनात् ॥२११॥
पूर्वशुद्धस्य दीप्तस्य पासितस्य[1] नियोजयेत् ।
शुल्वारनागवङ्गानि तीक्ष्णहेमपुटे पचेत् ॥२१२॥
माक्षिकेन (ण) कृतेनैव तच्चूर्णमम्लभावितम् ।
शिलाजितु (तु) वति (?) कासी क्षारा पटूनि च ॥२१३॥
समभागानि सर्वाणि माक्षिकाद्ध (र्ध) गुण भवेत् ।
क्षाराम्लपेषित सम्यक् सितमाठरयोजितम् ॥२१४॥
कृत्रिमानि सुपिष्टानि वध्या (न्ध्या) वज्र च कञ्चुकी ।
सुरदालीरस दद्यान्मोदयित्वा तु शोषितम् ॥२१५॥
क्षाराम्लयोजितपश्चात्कान्तग्रावापुटे क्षिपेत् ।
पिधाय तेन तद्वह्नौ व धौ वा क्षितौ न्यसेत् ॥२१६॥
उद्धरेत्सप्तसप्ताहात्पूजयित्वा शिव तथा ।
उद्घाटयेद्रूप पश्चादिन्द्रायुधसमप्रभम् ॥२१७॥
गुञ्जत्यर्चि सहस्राणि सूर्यांशुस्पर्शने रस ।
मार्ग शतो विधे त भवेज्जाम्बूनद शुभम् ॥२१८॥

तेन तार शताशेन रुक्म भवति शोभनम् ।
खरकरे वा शताशेन स रसस्य तु द्रुतस्य ॥२१९॥
मासमेक च मध्वाज्येन तु लेपयेत् ।
पद्मगर्भोपमो देही महाकल्पान्तजीवित ॥२२०॥
जराव्याधिविनिर्मुक्तो महाबलपराक्रम ।
कुमारसदृश सिद्धो रसेनाने (न) जायते ॥२२१॥
कदम्बमो (गो)लक पीत कारवेल्लमथापि वा ।
भ्रथागुलीयक श्रेष्ठ शुद्ध क्षाराम्लभावितम् ॥२२२॥
स्नेहित निर्वपेद्भागे शुद्ध तु त्रिगुण बुध ।
तद्वाहयेत्सम शुल्वे तारारैर्वात्रुटिक्रमात् ॥२२३॥
रक्तस्नेहे निषेकेण धातुशेष क्षय गत ।
षोडशाशादिबीज तु तदद्यात्स्व (स्व) र्णमुत्तमम् ॥२२४॥
कृष्णतारस्य हेमस्तु भवेन्मातृसम शुभम् ।
उत्तरोत्तरकालेन षण्मासावधिसस्थितम् ॥२२५॥
काली (लि) क (का) रहित हेम मातृकोत्तरता व्रजेत् ।
माक्षिकस्य रज शुद्ध सप्ताह तु बलारसे ॥२२६॥
महारक्तेऽथवा स्थाप्य शोष्याम्लस्नेहनेन तु ।
शुल्वपत्र पुट पक्व मध्वाज्येन तु तद्रज ॥२२७॥
क्रामणेन भवेदव्यत (?) प्यात स्वर्णमुत्तमम् ।
भ्रद्धे (र्धे)न मातृकातुल्य कृष्णतार विधीयते ॥२२८॥
उत्तारे तु हिम व्यूढ द्वादशार्द्ध (र्ध) गुणोदयम् ।
षोडशार्द्ध (र्ध) विधा त्रय त्रिधा द्वादशवर्णकम् ॥२२९॥
ज्ञात्वा सयोजयद्धम तद्धम तु यथा तथा ।
रजादिभि कृतशुद्ध (–) तारारेन्दीवरे भवेत् ॥२३०॥
तारारेन्दीवरे तत्र धातुदोषविनिर्गतम् ।
रक्तस्नेह निषिक्त तु हेमार्द्धार्द्धे (र्धा र्धे)न उत्तमम् ॥२३१॥
य नाग वापित तेन त्वम्लस्नेहेन वापितम् ।
तारारेन्दीवर व्यूढ पृथक् पृथक् नियोग्गे (ग) त ॥२३२॥
रक्तस्नेहे निषिक्त तु हेमार्द्धार्द्धे (र्धा र्धे)न उत्तमम् ।
पीतसाराणि भवन्ति हेमार्द्धार्द्धे (र्धा र्धे)न ता व्रजेत् ॥२३३॥

(शेषाश ८८७ पृष्ठ पर)

१ पाशनमित्यत्र तालव्य पठ्यते रसोपनिषदि १-७३ ।

सर्पगंधा व प्राचीन साहित्य

आचार्य विश्वनाथ द्विवेदी बी० ए०, आयुर्वेदशास्त्राचार्य

'सर्पगन्धा' के नाम से आज प्रत्येक चिकित्सक व साधारण जन भी परिचित है। इस औषधि ने अपने गुण और कर्म के आधार पर सारे ससार के चिकित्सको का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लिया है। सन् १९२३ म जब 'रक्तभार' का ज्ञान प्राप्त हुआ और इसकी उचित औषधि की खोज की जाने लगी तब चिकित्सको का ध्यान इस की तरफ गया। सन् १९३० म महामहोपाध्याय गणनाथ सेन सरस्वती और उनके सहयोगी डा० कार्तिकचन्द्रबसु का ध्यान इस की तरफ विशेष रूप से आकर्षित हुआ और इसका विश्लेषण किया गया। सन् १९३१-३३ तक डा० सिद्दिकी ने इस मे तीन उपक्षार तत्त्व विश्लेषित किये और पायलपन के समुचित वस्तुतत्त्व का खोज किया। इसके रक्तभार-ह्रासक गुण के ज्ञात होते ही चारो तरफ इस पर अनुसधान प्रारभ हुए। देहरादून की हिमालय ड्रग कम्पनी ने इसकी टिकिया बना डाक्टरो के समक्ष उपस्थित कर तहलका मचा दिया। अखिल भारतीय ड्रग-रिसर्च इन्स्टीस्यूट लखनऊ ने इस पर विशेष अनुसधान प्रारम्भ कर दिया है और अबतक गवेषणा जारी है।

विशेषता—यह औषधि भारतीय है और भारतवर्ष मे चिरकाल से पागलपन की जडी के नाम से प्रसिद्ध है और प्रयुक्त हो रही है। फिर भी बिहार और उत्तर प्रदेश के कुछ वैद्यसमुदाय को छोड कर सर्व सामान्य म इसका समुचित प्रचार नही था। यह औषधि अपने प्राकृतिक मूल चूर्ण के प्रयोग से रक्त भार का ह्रास करती है। यह इसकी बहुत बडी विशेषता है। इसके अतिरिक्त यह निद्राकर, वल्य व मेध्य भी है। इसी कारण और विशेषकर इस कारण कि इसके उपक्षारो को आधुनिक केमिष्ट अबतक सियेटिक उपक्षार न बना सके है, इसका प्रयोग अब अधिक बढ गया है। गत दस वर्षो मे इसका प्रयोग नवीन होने से और यूरोप एव अमेरिका के आमिषभोजी व्यक्तियो म 'रक्तभार' की बीमारी अधिक होने के कारण इसकी माग भारतवर्ष से अधिक हुई और बहुत बडी मात्रा मे यह भेजी गई। अत: पाश्चात्य देशो के चिकित्सक इसके निवास-स्थान की फिक्र मे अधिक लगे और विभिन्न देशो के पर्यवेक्षण के बाद यह पता चला कि यह औषधि न केवल बिहार व उत्तरप्रदेश मे होती है बल्कि भारतवर्ष के बिहार, उत्तर प्रदेश, पहाडी तराई के प्रदेश, सिगापुर, मलाया, लका, कोकन देहरादून व ४००० फीट की ऊँचाई तक के प्रदेशो मे भी पाई जाती है। भारतवर्ष के अलावा बर्मा, फिलीपाइन, उष्णकटिबधीय अफ्रीका के प्रदेश आदि मे भी यह प्राप्त होती है। अत इसकी कई जातियो एव उपजातियो का भी पता चला। कुछ पाश्चात्य उद्भिज्ज शास्त्रियो व कुछ भारतीय चिकित्सको का भी यह विचार था कि यद्यपि इस का ज्ञान भारतवर्ष से हुआ है किन्तु भारतीय चिकित्सा पद्धति के ग्रन्थो—आयुर्वेद के सहिता ग्रन्थो मे इस का कोई स्पष्ट उल्लेख नही है। यह अपरिज्ञात और भारतीयायुर्वेद के निघटुओ से परे की औषधि है। श्री घोष ने भी अपनी मेटेरिया मेडिका मे इस की टिप्पणी मे ऐसा ही मिलता-जुलता विचार दिया है। अत विचारणीय विषय यह है कि 'सर्पगन्धा' का ज्ञान प्राचीन चिकित्सको को था या नही और यदि था तो किस रूप मे और कहा-कहा इस का प्रयोग किया गया? सर्पगन्धा पर कई बार आयुर्वेदिक पत्रो मे लेख निकल चुके है, किन्तु आधुनिक इगलिश के विवरणो के अनुवाद के अतिरिक्त इन पर किसी ने विचार नही किया है। अस्तु, प्रस्तुत विवरण इस प्रकार का है जिस से इस सबन्ध का ज्ञान हो सके। अत प्रथम स्थल निर्देश करेंगे।

सर्पगन्धा का प्रयोग आज से ३००० वर्ष पूर्व भी चिकित्सा के लिये हुआ था। चरक और सुश्रुत तथा वाग्भट मे यह कई नामो से उल्लिखित है।

आयुर्वेद की सर्वप्राचीन सहिता सुश्रुतसहिता व अन्य मे इस का प्रयोग इन नामो से हुआ है—सर्पगन्धा, सुगधा, सुगधिका, महासुगधा, नाकुली, गधनाकुली, सर्पाक्षी, सुरसा इत्यादि। अत क्रमश हम इसके स्थान का निर्देश करेंगे—

सुश्रुत—(१) सर्पगन्धा, कल्प. अ. ५-८४ श्लोक एकसरगण।

डल्हन ने इसे सर्पगन्धा-नाकुली आदि लिखा है।

(२) सर्पगन्धा—उत्तर अ० ६० श्लो० ४७–अपराजिता-दिगण। वर्षासु छत्राकारा इति –डल्हन

(३) सर्पगन्धा—क० अ० ७-२९–सर्पछत्रिका इति डल्हन

(४) सुगन्धा—क० अ० ५-७६–सर्वसुगन्धा नाकुली इति यावत्–डल्हन।

(५) सुगन्धिका—क० अ० ५-६६–सर्पगन्धिका इति डल्हन

(६) सुगन्धिका—क० अ० ६-१५–सर्पसुगन्धा इति डल्हन

(७) सुगन्धिका—चि० १७ (८-२२ श्लोक) उत्पल-सारिवा इति डल्हन

(८) गन्धनाकुली—क० ६-२२–सुगन्धमूला रास्ना

(९) गन्धनाकुली—क० ८-११७–सुगन्धि रास्ना

(१०) गन्धनाकुली—क० अ० ३८-१७–सुगन्धि रास्ना

(११) नाकुली—सु० क० अ० ८-१०८

(१२) महासुगन्धा—क० अ० ८-११७

(१३) सर्पाक्षी—क० अ० ६-२२—रक्तपुष्पा शरपुष्पी पूर्व देशे प्रसिद्ध–डल्हन

(१४) सर्पाक्षी—क० अ० ८-१७

चरक—(१) गन्धनाकुली—च० चि० अ० ३-२६–अगुर्वादि तैल

(२) नाकुली— ,,

(३) नाकुली—च० चि० अ० २५-२५ च० चि० अ० २३-२१२

(४) नाकुलीद्वय—च० चि० १४-५६, च० चि० अ० ९-४६, महापैशाचिक घृत च० चि० २३-७९–महाअगद हस्ती

वाग्भट—(१) सर्पगन्ध—उ० ५-३ सर्पगन्धाख्या नाकुली —अरुणदत्त

(२) सपसुगन्धा—चि० अ० १४-१०३–नाकुली

(३) नाकुली—वा० उ० ३०-१५

(४) नाकुलीद्वय—व० उ० ६-३६

इस प्रकार ढूंढने पर ये उद्धरण विषचिकित्सा, अपस्मार, उन्माद और दूषित रक्त रोगो मे मिलते है। मद-मूर्च्छा-सन्यास-अपस्मार-उन्माद के प्रकरण या विष चिकित्सा मे यह उद्धरण पाये गये है। सम्भव है कतिपय और स्थानो में भी नाम हो, क्योकि सर्पगन्धा के पर्याय मे सर्वनिघटुकार निम्न विचार व सज्ञाएँ प्रदान करते है।

यथा—(१) नाकुली सर्पगन्धा च सुगन्धा भोजिगन्धिका।
स च सर्पसुगन्धा च तथा वारिजपत्रिका।
—धन्व० नि०

(२) नाकुली सर्पगन्धा च सुगन्धा रक्त पत्रिका।

प्रधानभेद—ईश्वरी भाग गन्धा चाप्यहिभुक् सुरसा तथा।
सर्पादनी व्याल गन्धा ज्ञेयाचेति दशाह्वया।
रा० निघटु

द्वितीयभेद—अन्यामहासुगन्धा च सुवहा गन्धनाकुली।
सर्पाक्षि फणिहन्त्री च नकुलाढ्याहिभुक् परा।
बिष मर्द्दनिका चाहि-र्मदिनी विष र्मदिनी।
महाहिगन्धाहि लता, ज्ञेयास्य द्वादशाह्वया।
रा० नि०

(३) नाकुली सुरसा नाग सुगन्धा गन्धनाकुली।
नकुलेष्ण भुजगाक्षी सर्पाक्षी विषनाशिनी।
भा० प्र०

(४) नकुलेष्ण महातीर्था विषघ्नी सुवहा च सा।
सुनन्दा विषदंष्ट्री च तथैव चिरपत्रिका।
—कैयदेव

ऊपर की सज्ञाओ का विश्लेषण करे तो ज्ञात होगा कि उनके रूप परिचायक कई सज्ञाएँ है जो पत्र-पुष्प-काण्डादि का ज्ञान कराती हैं।

मूलपरिचायक—सुगन्धा, सर्वगन्धा, नागगन्धा, नाग-सुगन्धा, गन्धनाकुली, व्यालगन्धा सर्पाक्षी।

पत्र—रक्त पत्रिका, वारिज पत्रिका, सुरसा, स्वरसा।

पुष्प—सर्पाक्षि।

गण-परिचायक—सर्पादनी, अहिभुक्, फणिहत्री, अहिर्मर्द्दिनी, विषमर्द्दनिका, विषमर्द्दनी, विषनाशिका।

जीव-कीटप्रिय—नाकुली, नकुलेष्ठा, नकुलाढ्या।

आकार-परिचायक—सर्पांगी।

काल—वारिज पत्रिका, चिरपत्रिका।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि सर्पगन्धा या नाकुली एक प्रकार की बहुवर्षायु (चिरपत्रिका) वनौषधि है, जिसके मूल मे सुगन्ध होती है। मूल की आकृति सर्पाकार टेढी-मेढी सर्पवत् होती है। ऊपर मोटी, नीचे पतली, पत्र लाल वर्ण के सुन्दर व मृदु होते है और वारिपात (वर्षा) मे नये पत्ते लगते है। पत्र चिरस्थायी होते है। पुष्प रक्त-श्वेत वर्ण का व सर्प की आँख के वर्ण का होता है। नये पत्रो का वर्ण रक्त (नवपत्र) व रसदार होते है। नकुल

इसे अधिक पसन्द करते है और यह विषनाशक है। इसकी जड मे सुगन्ध होती है। पत्र स्वरस मे सर्प की गन्ध आती है। फल-पुष्प सबो मे सर्प की गन्ध आती है।

इसका अहिलता एक पर्याय राजनिघटु ने दिया है, जिससे कोई-कोई इसे लता जाति की मानते हैं और कहते है कि यह नाकुली कोई लता जातीय और द्रव्य है, वर्तमान सर्पगन्धा Rauwolfia serpentina नही है। किन्तु किसी और निघटुकार ने इसे लता नही माना है। अहिलता पर्याय राजनिघटु से पूर्व का धन्वन्तरि निघटु लता नही मानता। केवल गन्धनाकुली या महा-सुगन्धा के लिए आया है। अत उसे 'लता' मानना उचित नही समझा जाता (इसका निराकरण आगे देखिए)। दूसरा भेद गन्धनाकुली का है। यह पूर्व की अपेक्षा बडे क्षुप के रूप मे ३-४ फीट तक ऊँची होती है। मूल मोटी और अधिक सुगन्धित होती है। नाकुली या सर्पगन्धा जहाँ एक फीट तक ऊँची होती है, यह इससे दो-तीन गुना ऊँची होती है। मूल भी पर्याप्त मोटी होती है। अत महा-सुगन्धा, गन्धनाकुली दिया है। यह सामान्य विवरण ऊपर के पर्याय बतलाते है।

सर्पगन्धा के गुण—

(१) नाकुली युगल तिक्त, कटूष्ण च त्रिदोषजित्।
अनेक विषविध्वसी, किंचिच्छ्रेष्ठद्वितीयकम्।
रा० नि०

(२) नाकुली कटुका तिक्ता तयोष्णा क्रिमिरोगहृत्।
वृश्चिकोन्दुरसर्पारि, विष नाशयतिक्षणात्।
गदनिग्रह

(३) नाकुली तुवरातिक्ता, कटुकोष्णा नियच्छति।
भोगिलूता वृश्चिकाखु-विष ज्वर क्रिमिव्रणान्।
भाव०

(४) नाकुली कटुरूष्णस्यात्, तिक्ताविपरिकीर्तिता।
मूषकस्यविष हृति, क्रुमिदोष विनाशिनी।
धन्व०

अर्थात्—ऊपर के विवरण से स्पष्ट ज्ञात होता है कि सर्पगन्धा या नाकुली स्वाद मे तिक्त व कटु, वीर्य मे उष्ण होती है। यह वृश्चिक, सर्प, लूता व मूषक विष को तथा अन्य विषो का नाशक है। क्रिमि रोग व व्रण व विषम ज्वर नाशक है।

अत इसीके आधार पर सर्पगन्धा-नाकुली-गन्धनाकुली का प्रयोग सदा अगद-सर्पविष-लूताविष-वृश्चिकविष-इदुर-विष इन सब म मिलता है।

विशेष—ऊपर के पर्याय व गुण के विवरण से यह नाकुली या सर्पगन्धा एक वनौषधि है, जो क्षुप जातीय व वर्षा मे अधिक पल्लवित होती है, ऐसा ज्ञात होता है। नाकुली के पर्याय म किसी निघटुकार ने लता का प्रयोग नही किया है। नाकुली के द्वितीय भेद महासुगन्धा व गन्धनाकुली के लिए 'अहिलता" शब्द आता है। इस आधार पर कतिपय वनस्पति शास्त्री इसे "रावोल्फिया सर्पेटाइना" या सर्पगन्धा' नही मानते। उनका कहना है कि "ईश्वरी" नाकुली का पर्याय है, अत "ईश्वरमूल" (Aristolochia Indica) यह लता जाति की औषधि व विषहारक है इसका ग्रहण होना चाहिए। किन्तु यह भ्रम है। ईश्वरमूलम् का पाठ प्रत्येक निघटु पृथक् करते है। ईश्वरी पर्याय यदि सर्पगन्धा का है तो सर्पगन्धा न मानना और ईश्वरी से ईश्वरमूल मानना ही क्यो अभिप्रेत है? सर्पगन्धा का वर्ग प्राकृतिक वर्ग मे एपोसाइनेसी (Apocinaceae) है और ईश्वरमूलम् का एरिस्टोलोचि-एसी (Aristolochiaceae) वर्ग है। यह लता जातीय है। "ईश्वरमूल" रुद्रजटा का पर्याय है। यथा—रौद्रीजटा रुद्रजटा च रुद्रा सौम्यासुगन्धा सुवहावना च। स्यादीश्वरी रुद्रलता सुपत्रा, सुगन्धपत्रा सुरभि शिवाह्वा पत्रवल्ली-जटावल्ली रुद्राणीनेत्र पुष्करा। महाजटा जटारुद्रा नाम्नाविंशतिरीरिता।

इस प्रकार राजनिघटु ने ईश्वरी पर्याय दिया है। अत एक नाम साम्य से शेष नाम का ध्यान नही रखा जाय, यह न्याय सगत नही है। राज निघटु के अतिरिक्त अन्य निघटु 'ईश्वरमूल' का विवरण नही देते। इसमे सर्प की-सी गन्ध या अन्य सुगन्ध नही होती।

गुण—निघटुशिरोमणि ने इसके गुणो मे निम्न बाते दी है —

रसे कटुस्त्वीश्वरी च श्वासकासहरा 'नृपे'।
हृद्रोग भूत विद्रावी, राक्षसाना निर्वर्हिणी।

तो वे गुण जो सर्पगन्धा मे है, नही पाये जाते। साथ ही 'ईश्वरमूल' पृथक् द्रव्य है। अत ईश्वरमूल लता है और नाकुली को 'अहिलता' लिखा है। अत लता होने से सर्पगन्धा के नाम पर ईश्वरमूल लिया जाय, यह तर्कसगत बात नही है। वास्तव में 'सर्पगन्धा' शास्त्रीय नाकुली ही

है और इसे बिहार व उत्तर प्रदेश मे 'धवल बरुआ', 'धनमरवा', 'धवरमरवा' नाम से पागलपन की बूटी कहते है।

प्रश्न यह उठता है कि यदि अहिलता लिखा है तो लता जाति का क्यो न माना जाय ? और नाकुली को लता जाति का मान तो फिर निघटु मे "सर्पगन्धा" का विवरण किस नाम से है। इसका उत्तर यह है कि लता लिखने से सब जगह लता का ग्रहण नही होता। यदि लता अर्थ माना जाय तो प्रियगु-स्पृक्का को क्या कहगे ? यथा—

प्रियगु फलिनी कान्ता-लता च महिलाह्वया।

किन्तु 'लता' पर्याय प्रियगु का होने से क्या यह लता है ? नही, यह क्षुप जातीय २–३॥ फीट ऊँची बहुशाखा क्षुप है। स्पृक्का का पर्याय लता है, किन्तु यह क्षुप व शाक वर्ग की औषधि है। अमरकोष ने इस पर्याय म इतना लिखा है—

मरुन्मालातु पिशुना स्पृक्का देवी लता लघु।
समुद्रान्ता, वधू कोटि वर्षा लकोपिकेत्यपि।
—अमर०

अत जहाँ-जहाँ लता हो उसे लता मानना हानिकारक है। यद्यपि राजनिघटु ने भी नाकुली को 'लता' पर्याय नही दिया है, फिर भी सदेह करने के लिए 'नाकुली' भेद मे "अहिलता" आने से लता मानने का आग्रह किंचित्मात्र भी ले तो फिर लता के अर्थ मे निघटु का विचार देखिए—

"स्कधप्रमाणस्य लता तु शाखा"—राजनिघटु०

अर्थात्—जिसके काण्ड स्कधप्रमाण होते हैं, उन्ह लता और शाखा कहते है। अत स्कध तक के नीचे के पौधो में सदा प्राय लता शब्द का प्रयोग मिलता है। अत यह क्षुप भी स्कधप्रमाण से छोटा होता है और अधिक से अधिक ३–३॥ फीट तक ऊँचा पाया जाता है। धवल-वरुआ' श्वेत रग का बोआ हुआ पाया गया है। अत लता शब्द एक स्कधीय क्षुप के अर्थ मे आ सकता है।

लता के पर्याय में—ज्योतिष्मती-दूर्वा, शाखा, वल्ली, प्रियगु, स्पृक्का, माधवी, कस्तूरी इत्यादि आते है। इन सब मे कौन लता है यह विचारिए। अत 'लता' शब्द के प्रयोग से 'अहिलता' के अर्थ मे ईश्वरमूलम् का प्रयोग लाभकर नही प्रतीत होता। अत गुण कर्म के आधार पर यह सर्पगन्धा ही मानना चाहिए।

थोडी देर के लिए यदि ऐसा ही मान ले तो यह सर्पगन्धा क्या निघटु में वर्णित औषधि नही है ? इसके उत्तर मे निवेदन है कि ऐसा ही प्रश्न आज से २० वर्ष पहले भी उठा था। स्व० आचार्य यादवजी इत्यादि ने इस पर विचार किया था। स्वर्गीय रूपलाल वैश्य 'बूटीदर्पण' के सम्पादक ने एक और विचार प्रस्तुत किया था। उनका कहना था कि निघटु की जाम्बवती-जम्बू, यह 'क्षुप जातीय' सर्पगन्धा है और इसमे 'मदघ्नी' गुण होने से यह रक्तभार ह्रासक अर्थ भी रखती है। "रक्तभार" को चरक ने शोणित विज्ञानीय अध्याय म रक्त रोगो मे 'मद-मूर्च्छा-सन्यास' का विवरण दिया है जो 'मद' नाम से 'रक्तभार' का परिचायक है, अत इसम स्पष्ट गुण यह भी है। यथा—

जम्बू जाम्बवती वृत्ता, वृत्तपुष्पा च जाम्बवी।
मदघ्नी नाग दमनी दुर्घर्षा दुस्सहा नव। रा० नि०
ज्ञेया जम्बू त्रिदोषघ्नी तीक्ष्णोष्णा कटु तिक्तका।
उदराध्मान विषघ्नी च, कोष्ठ शोधन कारिणी।

ऊपर के विवरण से स्पष्ट है कि जम्बू एक प्रकार की वनौषधि है जिसके पत्र जामुन के पत्र की तरह होते है। मूल व काण्ड वृत्ताकार होते हैं पुष्प वृत्ताकार (वृत्तपुष्पा) जम्बू के वर्ग के होते है। यह मद (रक्तभार) की नाशिनी, सर्प-विषनाशक, तीव्र क्रिया करनेवाली (दुर्घर्षा) व विषनाशक है। कोष्ठशोधन करनेवाली और उदराध्मान को दूर करनेवाली है। स्वाद मे बहुतिक्त और तीक्ष्ण व उष्ण है तथा त्रिदोष-नाशक है। अत श्री रूपलालजी का विचार था कि "मदघ्नी" का गुण स्पष्टतया रक्तभार ह्रासक होने की वजह से इसे 'सर्पगन्धा' मानना चाहिए। यह लता जाति की नही है, क्षुप भी है और इसे सर्पगन्धा या धनमरवा मानना चाहिए। विचार कर तो ज्ञात होगा कि 'सर्पगन्धा' के सार्थक नाम पर्यायो मे कोई नही आये। 'नागदमनी' शब्द एकमात्र है जिसका अर्थ सर्पगन्धा-नाकुली के सम्बन्ध मे जोड सकते हैं। जम्बू या जाम्बवती का सर्पगन्धा से कोई सार्थक साम्य नही मिलता। गुणो मे विषघ्न होने से कई द्रव्य विषघ्न हो सकते है, अत अपनी आत्मा की तुष्टि मे यह विचार मेल खाता दृष्टिगोचर नही होता। जहाँ तक "सर्पगन्धा" मूल शब्द व पत्रादि की सज्ञाएँ भी साम्यकर होती है, अत सर्पगन्धा "रावोल्फिया सर्पेटाइना" ही है, ईश्वरमूल पृथक् द्रव्य है, जम्बू पृथक् द्रव्य है।

आखिर भ्रम क्यो ?

यह भ्रम मूल ग्रन्थ लेखको की नहीं अपितु टीकाकार श्री डल्हन की फैलाई हुई है। क्योकि कल्पस्थान (अ० ७

श्लोक २६ मे व उ० अ० ६०-४७ श्लोक–सुश्रुत) मे टीका करते समय डल्हन ने पर्याय "वर्षासु छत्राकारा" व "सर्प-छत्रिका" यह पर्याय दो स्थानो पर दिये है। कुछ स्थान पर "सुगन्धमूला" दिया है। इससे नाकुली व सर्पगन्धा के अर्थ मे भ्रम हो गया है।

जो लोग सर्पगन्धा "रावोल्फिया सर्पेण्टाइना" को मानते है उनका कथन है कि 'वर्षासु छत्राकारा' मशरूम या 'फफूँद' के किस्म का द्रव्य जिसे साँप की छतरी कहते है, यह 'सर्पगन्धा' नही हो सकता। जहाँ सर्पगन्धा नाकुली कन्द के नामसे लिखा है वही सर्पगन्धा होना चाहिए। कही 'नाकुली' को "सुगन्धमूला रास्ना" लिखा है। इस प्रकार डल्हन ने भ्रम फैलाने का कार्य भिन्न-भिन्न नामो को दे कर किया है।

वास्तव मे जो लोग डल्हन के भाष्य के शब्दो के प्रयोग के शिकार बनते है वे डल्हन के उस विचार को नही समझते जो कि रोग की स्थिति देख कर दिया हुआ है। अत डल्हन का प्रयोग भिन्न-भिन्न क्यो न हुआ हो 'सर्पगन्धा' 'नाकुली' ही है और न तो ईश्वरमूल है,न वर्षा मे होनेवाली 'छत्रिका'—साप की छतरी है। डल्हन जैसे विद्वान् से त्रुटि होना सभव नही क्योकि वह 'छत्रिका' 'सर्पगन्धा', गन्ध-नाकुली','नाग सुगन्धा' और 'रास्ना' सब का नाम लेते है। इन सब का ज्ञान उन्ह था, यह स्पष्ट है, किन्तु 'सर्पगन्धा' को जो विषशामक के लिए तथा अपस्मार व उन्माद मे प्रयोग लेते है—चिकित्सा मे 'सर्पगन्धा' से 'छत्रिका' का प्रयोग क्यो किया गया, इसका कोई सन्तोषजनक उत्तर नही मिलता। हमारी सम्मति मे नाकुली ही सर्पगन्धा है और यही रावोल्फिया सर्पेटाइना है, कोई भेद नही है। जो विद्वान् इस विषय मे विशेष विचार रखते हो, वे कृपा कर अपना विचार उपस्थित करे।

शेषांश] गोरक्षसंहिता [८८२ पृष्ठ का

अथवा निक्षिपेत्तारे रक्तस्नेहे निषेचनात्।
कूष्माण्डपुष्पसदृश तद्भवेत्पादयोजितम् ॥२३४॥
हेम्ना तु हेमता याति कर्तव्य भूतिसाधन।
कदम्बगोलकाकार पि (पी) त्वाकारमथापि वा ॥२३५॥
सित सिते तु वर्गेण सस्कृत वाय (पये) द्विधा।
चूर्णयित्वाम्लवर्गेण यथालाभेन भावयेत् ॥२३६॥
शुक्लवर्गेण तद्भाव्य दशाशाद्वेधयेद्वङ्गम्।
त्रीन्वाराश्च निषेक्तव्य शुल्वसन्धानतोम्लिते ॥२३७॥
सित सिताद्वा भवति शशकुन्देन्दुसप्रभम्।
पटुक्षाराम्लयुक्तास्तु तेनादौ क्षालयेद्वगम् ॥२३८॥
अथ तै सयुत कल्क वधकाले नियोजयेत्।
एव शुद्धिमुपायाति सिते पीते च कर्मणि ॥२३९॥
अथ वङ्गे तु निर्वाह्यशैलयुक्त त्रिधाबुध।
पटुक्षाराम्लयुक्त तु दशाशाद्वेधयेद्वगम् ॥२४०॥
त्रिधानिषेचयेच्छुल्व सधाने धातुवर्जित।
सिद्धार्थाज्जायते तार दधिसारसमप्रभम् ॥२४१॥
ताराद्विज तथा वङ्ग सितमाक्षिकपायितम्।
पटुक्षारसितैश्चैव अम्लवर्गेण सयुतै ॥२४२॥
त्रिगुण वापयित्वा तु तद्रसश्चाम्लभावितम् (त)।
चारयेत्सूतके त तु सम तारावशेषितम् ॥२४३॥
सारयेत्तेन तत्सूत चतु षष्टिगुणे क्षमम्।
आराद्योष तथा वङ्ग तारता नयति क्षणात् ॥२४४॥
शतवेधीद्विधा चार्यं पञ्चधा तु सहस्रक।
दशधा लक्षबेधी स्याद्विशधा कोटिवेधक ॥२४५॥
वङ्गहीनो यदावद्धस्तदा श्रेष्ठो रसायने।
मासक तु शतादूर्ध्व निशा च तु सहस्रके ॥२४६॥
रक्तिका लक्षके खादेत्सर्षप कोटि वेधिनी।
अव्यदिव्यमवाप्नोतिजरामृत्युविवर्जित ॥२४७॥
सोमवर्णास्सिद्धो[1] महाकल्पायुरुज्वल।
उक्तक्रमेण विधिवच्चारयेदुत्तरोत्तरम् ॥२४८॥
रसे रसायने चैवाधिकाधिका (क) फल भवेत्।
भूतिरायुर्बल चैव खेचरत्वादिमाक्षिमान् (णिमादिकान्) ॥२४९॥
गुणान्सप्राप्य विधिवज्ज्ञानमासाद्य मुक्तिभाक्।
रसकस्याथ वक्ष्यामि यथा कर्म विधि शृणु ॥२५०॥
(सावशेष)

१—अक्षरद्वय त्रुटितम्।

पंचामृत पर्पटी-निर्माण

वैद्य मिलापचन्द जैन, बी० ए०, भिषगाचार्य

पर्पटी का उपयोग साधारणतया दोनो रूप (कल्प व साधारण) मे होता है, पर इसका महत्व कल्प दृष्टि से अधिक है, अत इसे कल्प का भेद स्वीकार किया है। कुछ भी हो, जहाँ यह स्पष्ट है कि पर्पटी एव पचामृत पर्पटी आयुर्वेद का एक सूक्ष्मतम अश है, फिर भी इसमे अनेक गुणो का समूह है जो मुर्झाये हुए रोगी-परिवार व रोगियो म न नवजीवन सचार कर सकता है।

इतना कहने के साथ इसके निर्माण पर भी विशेष ध्यान आवश्यक है। अत मैं इसके निर्माण पर पूर्ण प्रकाश डालने का प्रयास कर रहा हूँ।

निर्माण विधि—

इसके प्रधानतया दो योग प्रचलित है।

प्रथम योग—

अष्टौ गन्धकतोलका रसदल लौह तदर्द्ध शुभ।
लौहार्द्ध च वराभ्रक सुविमल ताम्रतदाभ्राद्धिकम्।
पात्रे लोहमये च मर्दनविधौ चूर्णीकृतञ्चैकतो,
दर्व्याबादरवह्निनाऽति मृदुना पाक विदित्वादले ।।
रम्भायालघु ढालयेत् पटुरिय **पञ्चामृता पर्पटी**।
स्याताक्षौद्रघृतान्विता प्रतिदिन गुञ्जाद्वय वृद्धित ।

—भैषज्य-रत्नावली, ग्रहणीचिकित्सा

द्वितीय योग—

रसलोहाभ्रताम्राणि समभागानि कारयेत्,
गन्धक सर्वतुल्य तु दत्वा कुर्याद्धि कज्जलीम्।
तत पर्पटिका कृत्वा दद्याद्योग्यानुपानत,
पचामृता पर्पटिका स्मृता वह्नि दीपनी।
ग्रहणीमतिसार च पाण्डुरोगमथारूचिम,
श्वास मन्दानल हन्ति शूल चैवाम्लपित्तक।

—सिद्धयोगसग्रह द्वितीयाधिकार

इन दोनो योगो का अन्तर निम्न प्रकार है—

द्रव्य नाम	भैषज्यरत्नावली	सिद्धयोगसग्रह
गन्धक	८ तोला	८ तोला
शु० पारद	४ ,,	२ ,,
लौह भस्म	२ तोला	२ तोला
अभ्रभस्म	१ ,,	२ ,,
ताम्र भस्म	½ ,,	२ ,,

उपर्युक्त अकन से स्पष्ट है कि दोनो ग्रन्थो मे द्रव्य एक ही है और इन्ही पाँचो औषधियो के सयोग से अमृत-रूप पचामृत पर्पटी बनती है। अन्तर केवल मान के ग्रहण म है अत जसा चाह चिकित्सक ग्रहण कर सकते है। दोनो ग्रन्थ पूर्ण प्रमाणभूत है।

आचार्य यादवजी इसी सिद्धयोगसग्रह वाले योग मे वग भस्म २ तोला, यशद भस्म २ तोला मिला कर **सप्तामृत पर्पटी** बनाने का विधान देते है। साथ ही प्रयोग द्वारा उसे अधिक गुणकारक दर्शाते है। अन्त्र क्षय म सप्तामृत पर्पटी स्वतत्र व स्वर्ण पर्पटी के साथ देने को कहते है। यह भी अच्छी लाभ करती है, क्योकि इसमे यशद व्रण का शीघ्र रोपण करता है। अब द्रव्य किस प्रकार के ग्रहण करना चाहिए। यह विचारणीय है।

योग में द्रव्य कैसे लें—

पर्पटी के लिए पारदादि को विशेष शोधन के पश्चात् ग्रहण करना चाहिए। इसके लिए भैषज्यरत्नावलीकार ने रस पर्पटी के प्रकरण मे इसका पूर्ण विवरण दिया है। इस प्रकार पर्पटी म विशेष शुद्धि के द्रव्य ले कर ही निर्माण करना चाहिए, जिससे योग अपना उचित प्रभाव दिखला सके, और चिकित्सक गर्व के साथ निश्चित फल के लिए कह सके।

पारद—

पारद के सर्वप्रथम शोधन मे 'नैसर्गिक दोषभय" नष्ट करना चाहिए। उसके लिए भैषज्यरत्नावली ने आवश्यकता बताई है—

मलशिखिविषनामनो रसस्य नैसर्गिकादोषा।
मूर्च्छा मलेन कुरुते शिखिना दाह विषेण हिक्काश्च ।।

(भैषज्यरत्नावली ८।४४२)

इसके लिए विधि है—

गृहकन्या हरति मल त्रिफला वह्नि चित्रकञ्च विषम्।
तस्मादेभिर्वारान् सम्मूर्च्छयेत् सप्त सप्तैव।।
(भैषज्यरत्नावली ८।४४३)

इस प्रकार घृतकुमारी, त्रिफला व चित्रक मे तीन दोषो को नष्ट करे। फिर उसे जयन्ती, एरण्ड, म्रार्द्रकरस, काकमाची (मकोय) पत्र मे मर्दन कर शुष्क कर पारद को ग्रहण करे। इसीको सिद्धयोगसग्रह मे भी निम्न द्रव्य बताये हैं।

जयैरण्डभृगराजककाकमाची रसै क्रमात्।
रस सशोष्य यत्नेन ।।
(सिद्धयोगसग्रह, २)

इस प्रकार से पारद की शुद्धि करनी चाहिए। पारद का जितना शोधन होगा उतना ही दोष निर्हरण व गुण-वृद्धि होगी।

गन्धक—

गन्धक की भृङ्गराज मे शुद्धि करने का प्रबल समर्थन सभी ग्रन्थकारो ने किया है। भैषज्यरत्नावली, रसामृतम्, सिद्धयोगसग्रह सभी इसीके पक्ष में है। इसके लिए—

गन्धक क्षुद्रित कृत्वा भाव्य भृङ्गरसेन तु।
सप्तधा वा त्रिधावाऽपि पश्चाच्छुष्क विचूर्णितम्।

इसका समर्थन करते डा० वा० ग० देसाई ने भृङ्गराज के गुण बताए है—

इसकी मुख्य क्रिया यकृत पर होती है। इससे यकृत् की नियमितता सुधरती है, पित्तस्राव ठीक होता है, ग्रामाशय ग्रौर पक्वाशय की पचन क्रिया सुधरती है। इससे (तीनो मुख्य स्थानो की क्रिया सुधरने से) सर्वशरीर को शक्ति मालूम होती है। इसके साथ ही इसमे ग्रामजन्य विकारो को भी नाश करने की शक्ति है।

इससे स्पष्ट है कि भृङ्गराज का पाचन-सस्थान पर प्रभाव होता है। साथ ही पर्पटी का कार्य भी पाचन, दीपन व ग्रहणी रोगहर है। ग्रत भृङ्गराज शोधक गन्धक का प्रयोग ही करना चाहिए। गन्धक का शोधन ताम्रपात्र मे करे। इससे उसमे ताम्र के गुणो का सस्काराधान होता है। इस प्रकार के गन्धक से ही पर्पटी मे लाभ सम्भव है।

भस्में—

सभी भस्मे प्रमाणित ढग से उचित प्रकार बनी हुई हो। उनमे भृगराज, चित्रक, घृतकुमारी, ग्रर्कदुग्ध, वटजटा, नागरमोथा, इत्यादि सभी दीपन-पाचन द्रव्यो का पुट देना चाहिए।

निर्माण-प्रकार—

इस प्रकार के द्रव्यो को ग्रहण करना चाहिए। उपर्युक्त प्रकार का शुद्ध पारद व गन्धक लेकर लौह खरल मे कज्जली निर्माण करे। इसमे लोह खरल का विधान गुणान्तराधान के लिए है। कज्जली को ग्रति मसृण व स्निग्ध बनाना चाहिए। इसके बाद उसमे भस्मे मिलाकर मर्दन करे। इस प्रकार कम से कम तीन दिन तक मर्दन करे। ग्रधिक दिन तक मर्दन मे कोई हानि नही—"मर्दन गुणवर्धनम्" लिखा है।

इस कज्जली को घृत लगी हुई लौह चम्मच मे पिघला कर गर्म करे। कुछ विद्वान् इसे पात्र (तवे) मे रेत गर्मकर उसमे पिघलाते है। साधरणतया इस प्रकार रेत मे गर्म करने (Sandbath) मे ग्राँच व्यवस्थित लगती है। यह सामान्य रूप म २०० डिग्री सेटिग्रेट (शताक) पर पिघलती है। ग्रायुर्वेदिक ग्रन्थकार इसे बदराग्नि देने का पोषण करते है। सम्भवत बदराग्नि भी इतनी ही ग्राँच (Heat) देती है।

इसके बाद गोबर के ऊपर कदली पत्र पर यह द्रव डाल दे ग्रौर दूसरे कदली पत्र को ऊपर से ढक कर गोबर की पोटली से दबाकर फैलावे। ऐसा करने से वह द्रव्य पर्पटी के समान पतला तैयार हो जायगा। बाद मे शीतल होने पर हटावे ग्रौर चिकित्सा के उपयोग मे ले।

उपर्युक्त क्रम है—गोबर की पोटली से दबाना, ग्राच्छादनीय कदली पत्र-द्रव द्रव्य-पर्पटी के ग्राकार बनाने काकदली पत्र-गोबर का स्तर-पृथ्वी।

१—पर्पटी एक बार ग्रधिक मात्रा मे नही बनानी चाहिए। साधारणतया दो या तीन तोला तक एक साथ लेकर बना सकते है। ग्रधिक लेने पर ग्रच्छी पर्पटी बनने में ग्रसुविधा होती है।

२—इसको (द्रव को) डालना, फैलाना, पत्र से ढकना, दबाना ग्रादि क्रियाएँ शीघ्र करनी चाहिए, जिससे वह ग्रच्छा तैयार हो।

३—साधरणतया १६ तोला मे १ से २ तोला वजन गधक के उडने से कम हो जाता है।

परीक्षा—

पर्पटी का वर्ण श्याम व पतलापन लिए हुए होना चाहिए। इसके साथ उसमे स्निग्धता व एकरूपता प्रतीत होना चाहिए।

पाक-परीक्षा—

इसके तीन पाक है—(१) मृदु पाक (२) मध्य-पाक और (३) खर पाक।

१—मृदुपाक मे पर्पटी प्लास्टिक के समान होती है। द्रव व स्निग्ध अधिक होती है और तोडी नही जाती। अत उसको पुन पाक कर बनाना चाहिए।

२—मध्यपाक मे पर्पटी ठीक व व्यवस्थित होती है। सुविधा से टूटती है और टूटने पर आवाज (कट्कट्) करती है।

३—खरपाक इसमे गन्धक अधिक जल जाता है। इससे पर्पटी शीघ्र बिखर जाती है और उसका आकार रूक्ष व अव्यवस्थित प्रतीत होता है। इसका पुन गन्धक मिला कर मध्यमपाक करना चाहिए। इस प्रकार की मध्यमपाक वाली पर्पटी का ही ग्रहण करना चाहिए।

पर्पटी का आविष्कार व उपयोग

यह हर व्यक्ति के मस्तिष्क मे प्रश्न हो सकता है कि जब चूर्ण, पाक, अवलेह, आसव, अरिष्ट वटी, इत्यादि अनेक प्रकार चल रहे थे तब पर्पटी के उपयोग की क्या आवश्यकता हुई?

उत्तर स्पष्ट है कि रसशास्त्रियो ने पारदादि को व्यवस्थित रूप मे सग्रहीत करने और उसके बाद उसका प्रयोग करने के हेतु ही ऐसा किया है।

पारद म गन्धक का जारण करते हुए रसशास्त्रियो ने देखा कि जब द्रव रूप मे पारद, गन्धक, आँच न लगने पर जम जाता है तो उन्होने निश्चय किया कि यह गर्मी पर पिघलता और शीतलता पर जमता है। अत उन्होने कदली-पत्र आदि पर जमाने की व्यवस्था की। इससे जब वह पर्पटाकार हो गया तो पर्पटी सज्ञा दी। इसके उद्देश्य थे—

१—औषध को व्यवस्थित सुरक्षित रखना।

२—गन्धक, पारद आदि मे अग्निसस्कार से गुणान्तराधान।

३—औषधि की एक नवीन कल्पना का जन्म।

इस उद्देश्य से पर्पटी का आविष्कार हुआ। ग्रन्थकारो ने कदली पत्र का महत्त्व उसके सग्राही गुण के कारण तथा पर्याप्त विस्तृत होने के कारण ही स्वीकार किया है।

पर इसका प्रथम आविष्कारक कौन है। इसके विषय विषय म ग्रन्थो मे दो मत प्राप्त है—

"रस पर्पटिका ख्याता निबद्धा चक्रपाणिना" (चक्रदत्त ४।६१)

श्री वत्साङ्क विनिर्मितसम्यग्रसपर्पटी श्रेष्ठा ॥
—भैषज्य रत्नावली (६।४३६)।

इसमे वत्साङ्क कौन है इसका जबतक ज्ञान न होगा, तबतक निर्णय नही किया जा सकता। फिर भी भैषज्य रत्नावली ने चक्रदत्त के अनेको योगो का ग्रहण किया है तो इसमे वत्साङ्क का क्यो स्मरण करता है। इसका समाधान भी सम्भव है कि जब वत्साङ्क के सेवाएँ आयुर्वेद-जगत् के सामने आव।

भैषज्य रत्नावली के समय मे रस पर्पटी के अनेक योग प्रचलित होगे जो स्पष्ट है कि चक्रदत्त व भैषज्य रत्नावली दोनो मे पारद-गन्धक शुद्धि मे अन्तर है। अत रत्नावलीकार ने कई प्रकार के योगो का प्रयोग कर 'वत्साङ्क' के प्रयोग को ही ठीक माना हो। इसमे इसीलिए-वत्साङ्क की रस पर्पटी श्रेष्ठ है, यह लिखा है।

कुछ भी हो, यह निर्विवाद सत्य है कि लगभग एक हजार वर्ष पूर्व से आजतक इस योग का प्रचार है। यही इसकी उपयोगिता का प्रमाण है।

इस प्रकार आयुर्वेद के योगो को शुद्ध विधि से बना कर प्रयोग करना चाहिए जिससे आयुर्वेद की अधिक उन्नति, रोगियो की सच्ची सेवा, चिकित्सक को उचित यश व धन आदि प्राप्त हो सके।

सचित्र आयुर्वेद के अबतक प्रकाशित सभी विशेषांकों से महत्वपूर्ण

आयुर्वेद-यूनानी समन्वयांक

आगामी मई-जून में प्रकाशित होने जा रहा है

जन-स्वास्थ्य की समस्या

(संकलित)

शिक्षा और स्वास्थ्य किसी भी राष्ट्र की समृद्धि के प्रमुख अंग है, क्योकि शिक्षा से जहाँ एक ओर मानसिक विकास होता है, वहाँ स्वास्थ्य से शरीर का विकास और पोषण-संवर्द्धन होता है। इसलिए सर्वतोभावेन किसी भी राष्ट्र को समुन्नत बनाए रखने के लिए शिक्षा और स्वास्थ्य का अधिकाधिक विकास परमावश्यक है। स्वास्थ्य का महत्त्व इस दृष्टि से और भी बढ जाता है कि उसके अभाव मे मनुष्य की सारी उन्नति रुक जाती है और जीवन ही भार बन जाता है। अतएव, प्रमुखता स्वास्थ्य-सरक्षण को ही दी जानी चाहिए। समुचित आहार और पोषक तत्त्वो का स्वास्थ्य-सरक्षण मे जितना महत्त्व है, रोगाक्रात होनेपर उचित औषधोपचार भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है। किसी भी स्वतत्र और सभ्य देश की सरकार का प्रथम कर्त्तव्य नागरिको के स्वास्थ्य की रक्षा और समुचित चिकित्सा की व्यवस्था करना है। समुचित चिकित्सा के अभाव मे कोई नागरिक मौत के मुँह न जा सके—इस बात की ओर से नागरिको को आश्वस्त करना सरकार का नैतिक दायित्व होता है। विश्व के प्राय सभी आधुनिक सभ्य देशो की सरकारे जन-स्वास्थ्य-सरक्षण की दिशा मे प्राण-पण से सचेष्ट रहती है और इसके लिए बडी धनराशि व्यय करती है। इगलैण्ड, अमेरिका, रूस आदि देशो मे सभी नागरिको को चिकित्सा सम्बन्धी सर्वोत्तम सुविधाएँ नि शुल्क प्राप्त है। उन देशो मे कोई नागरिक चिकित्सा के अभाव मे तडप-तडप कर दम नही तोड सकता। पर, मानना होगा कि हमारे देश की हालत सर्वथा विपरीत है। आकडे बताते है कि समुचित चिकित्सा के अभाव मे लाखो व्यक्ति प्रतिवर्ष इस देश मे रोगाक्रात हो यमपुर सिधारते है और उन अभागोकी जीवन-लीला असमय ही समाप्त हो जाती है। इस देश की विशाल जन-सख्या को देखते हुए चिकित्सा सम्बन्धी जो सुविधाएँ सम्प्रति यहाँ प्राप्त है—ये सर्वथा अपर्याप्त है। इतना ही नही, गरीबी और फटेहाली अलग अपना पाँव तोडे बैठी है। गरीबी दूर कर सुन्दर स्वास्थ्य के सरक्षण द्वारा इस देश का राष्ट्रीय स्वास्थ्य उन्नत बनाया जा सकता है।

केन्द्रीय स्वास्थ्य मत्री श्रीयुत करमरकर ने अखिल भारतीय पोषक आहार सम्मेलन मे उद्घाटन भाषण करते हुए इस पर बात पर बडा जोर दिया था कि लोगो को अधिक पोषक आहार मिलना चाहिए, क्योकि राष्ट्र के समृद्ध होने से पहले उसका स्वस्थ होना जरूरी है। पिछले १० वर्षो के दौरान म जो सर्वेक्षण हुए उनसे ऐसे रोगो का पता लगा है, जो पोषक आहार न मिलने के कारण उत्पन्न होते है। ऐसे रोग देहाती क्षेत्रो म अधिक होते है, और इसके शिकार अधिकाधिक गर्भवती स्त्रियाँ और बच्चे ही होते है। स्वास्थ्य मत्री ने खानपान की आदत बदलने की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा कि स्थानीय रूप से जो आहार उपलब्ध होता है, उसका उपयोग इस प्रकार होना चाहिए जिससे शरीर पुष्ट हो सके।

स्वास्थ्य-सरक्षण की दिशा मे पोषक तत्त्वो की अनिवार्यता को प्राथमिकता देते हुए भी इस बात से इन्कार नही किया जा सकता कि समुचित चिकित्सा का भी प्रमुख हाथ स्वास्थ्य-रक्षा मे होता है। जहाँतक चिकित्सा का प्रश्न है, इसकी अधिक सुविधाएँ नगरो मे ही हैं। ग्रामीण अचल मे चिकित्सा की सुविधाएँ नाम मात्र है, जब कि देश की विशाल जनसख्या का ८०-६० प्रतिशत भाग ग्रामीण अचलो में ही रहता है।

सार्वजनिक स्वास्थ्य और स्वच्छता के लिए स्थापित इन्स्टीच्यूट ऑफ हाइजिन एण्ड पब्लिक हेल्थ के २५वे वार्षिकोत्सव मे पश्चिम बगाल के मुख्य मत्री और अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिलब्ध चिकित्सक डा० विधानचन्द्र राय ने जो विचार व्यक्त किए, वे हर दृष्टि से मननीय है। आपने कहा कि उपाधि पत्र प्राप्त करने के पूर्व डाक्टरो को चाहिए कि वे भारत के गाँवो मे जाकर ग्रामीण अचलो की स्थिति का अध्ययन करे। डाक्टर राय का यह परामर्श इस देश मे चिकित्सा करने वाले सभी व्यक्तियो के लिए आदर्श होना चाहिए। चिकित्सको का दृष्टिकोण अधिक से अधिक मानवीय और यथार्थवादी होना चाहिए। रोग की जड पर ही प्रहार करना सर्वोत्तम होगा। केवल अस्पतालो और शय्याओ की संख्या-वृद्धि

से जन-स्वास्थ्य की मूल समस्या का हल नही निकलता। इससे रोग-प्रसार मे भी कमी नही आती। रोग-प्रसार मे कमी लाने के लिए जनता का आर्थिक स्तर ऊँचा होना तथा उत्तम आहार की सुव्यवस्था परम अनिवार्य है।

आज इस देश में रोग-व्याधियाँ जिस व्यापक रूप मे तेजी से प्रसार पाती जा रही है कि उन्हे देखकर कोई भी सजग और प्रबुद्ध नागरिक चिन्तित हो उठेगा। सरकार का इसके लिए चिन्तित होना अस्वाभाविक नही। उसे तो इसकी चिन्ता होनी ही चाहिए, क्योकि जन-स्वास्थ्य सम्बन्धी सुरक्षा के नैतिक दायित्व अन्तत सरकार पर ही आते है। जन-स्वास्थ्य की जिम्मेवारियो से कोई भी लोकतत्री सरकार भाग नही सकती। जहाँ तक भारत का प्रश्न है, स्वीकार करना होगा कि स्वतत्रता-प्राप्ति के बाद राष्ट्रीय सरकार का ध्यान जन-स्वास्थ्य-सुरक्षा की ओर अवश्य गया है, और सरकारी स्तर पर इस दिशामे कुछ कार्य हुए और आज भी हो रहे हैं, फिर भी इस विशाल भू-खण्ड की विशाल-जनसख्या को देखते हुए यह पर्याप्त नही कहा जा सकता। विचारणीय प्रश्न यह है कि इन दायित्वो की रक्षा सरकार कहाँ तक कर पा रही है। इधर पिछले कुछ वर्षों मे यक्ष्मा, प्लेग, विसूचिका, मलेरिया, कुष्ठ आदि व्याधियो का अधिकाधिक प्रसार हुआ और इन व्याधियो से मरनेवालो की सख्या भी अपेक्षाकृत अधिक ही रही है। जहाँतक ग्रामीण क्षेत्रो का सम्बन्ध है, इन व्याधियो से अधिक लोग गाँवो मे ही मरते हैं। इसलिए यदि चिकित्सको का सम्पर्क सदैव गाँवो से बना रहे तो ग्रामीण अचलो मे रहने वाले अभागे मानवो को बडी राहत मिले और उनके जीवन की सुरक्षा की सभावना भी अधिक दृढ हो।

एक बात और द्रष्टव्य है। साधारण तौर पर यह देखा गया है कि सरकारी तथा गैरसरकारी अस्पतालो तथा औषधालयो मे कार्य करने वाले चिकित्सक कर्मचारी प्राय समुचित पारिश्रमिक न मिलने के कारण रोगियो के प्रति अपने कर्तव्यो की उपेक्षा करते है और अपनी निजी आमदनी बढाने के लिए अपने अनुभव और ज्ञान का उपयोग करते हैं और निजी आय की वृद्धि के लिए ही प्रयत्नशील रहते हैं। अतएव, जन-स्वास्थ्य को इससे अपार हानि उठानी पडती है। निजी व्यवसाय चलाने का प्रलोभन कुछ ऐसा होता है कि जन-स्वास्थ्य की उपेक्षा अनिवार्यत हो जाती है। स्वराज्य मिलने के बाद चिकित्सा-क्षेत्र मे निजी व्यवसाय फैलाने की प्रवृत्ति और भी बढ गयी है, जो दुखद है। मानव-सेवा के क्षेत्र मे स्वार्थपरता के कारण जो लक्ष-लक्ष नर-नारियो के जीवन के साथ खेलवाड किया जाता है, वह सर्वथा गर्हित है। जन-स्वास्थ्य को इस मनोवृत्ति से बड़ी हानि पहुँच रही है, इससे जितना शीघ्र इस दुखद स्थिति का अत हो उतना ही अच्छा। पश्चिम बगाल की सरकार ने इस दिशा मे कदम उठाया है। चिकित्सा-सेवा के पुनर्गठन के बारे मे पश्चिम बगाल की सरकार ने एक योजना तैयार की है, जिसके अनुसार सरकारी डाक्टरो को चिकित्सा-क्षेत्र मे निजी व्यवसाय चलाने की अनुमति नही दी जायगी और अपेक्षाकृत डाक्टरो के वेतन म वृद्धि होगी, जिससे कि वे लोभ के शिकार न होकर अपनी सारी विद्या-बुद्धि का उपयोग मरीजो की चिकित्सा तथा सेवा म ही करे—निजी व्यवसाय के चक्कर मे वे न पड। योजना विस्तृत रूप मे सामने नही आ सकी है, फिर भी जो अश प्रकाश मे आया है, उसकी सफलता के बारे मे एक प्रश्नवाचक चिह्न स्वाभाविक तौर पर लगता है। मूल प्रश्न यह है कि जबतक डाक्टरो का वेतन-स्तर प्रशासन-सेवा मे सलग्न कर्मचारियो के बराबर उन्नत नही कर दिया जाता तबतक उनसे अवैध धनोपार्जन की प्रवृत्ति के त्याग की आशा करना दुराशामात्र ही है।

इस दिशा मे केरल की साम्यवादी सरकार ने सराहनीय कार्य किया है। वहाँ की सरकार ने एक ओर जहाँ प्रशासन मे सलग्न कर्मचारियोका वेतन-स्तर घटा दिया है, वहाँ चिकित्सा और प्राविधिक सेवा मे सलग्न व्यक्तियो का वेतन-स्तर बढा दिया है। कुछ ऐसी ही व्यवस्था अन्य राज्यो मे भी होनी चाहिए। अस्पतालो मे काम करने वाले अल्प वेतन भोगी कर्मचारियो का वेतन-मान भी निश्चित स्तर तक बढना चाहिए।

सबसे आवश्यक और विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या जन-स्वास्थ्य की समस्या का हल केवल डाक्टरो की सख्या बढाने से ही सभव है? जन स्वास्थ्य की समस्या को हल करने के लिए सरकार मोर कमेटी द्वारा किये गए प्रतिवेदन के अनुसार मेडिकल कालेज स्थापित करने की दिशा में प्रयत्नशील है—किन्तु यह कार्य जितना व्यय साध्य है उतना अव्यावहारिक भी प्रतीत होता है। मेडिकल कालेजों की स्थापना नगरो मे ही होगी और नगर की अपेक्षा गाँव स्वास्थ्य और चिकित्सा की दृष्टि से आज कही अधिक उपेक्षित हैं।

इसलिए, द्वितीय पचवर्षीय योजना मे स्वास्थ्य सेवाम्रो के निमित्त जो बडी धनराशि निर्धारित की गयी है, उसका अधिकाश डाक्टरो को तैयार करने मे ही व्यय हो जायगा। माननीय राष्ट्रपतिने भी कुछ दिनो पूर्व इस आशय के विचार व्यक्त किए थे कि जन-स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याम्रो का हल केवल बडी सख्या मे डाक्टर उत्पन्न करने से नही हो सकता। मूल बात स्वास्थ्य रक्षा के नियमो का पालन और पौष्टिक आहार का सेवन ही है। स्वास्थ्य के नियमो की रक्षा के प्रति प्राय जन-साधारण की उपेक्षा देखी जाती है—और जब मर्ज आ दबोचता है तब लोग चिकित्सको की शरण मे जाते है। यह प्रवृत्ति घातक है। सरकारी स्तर पर जनता म स्वास्थ्य-रक्षा सम्बन्धी नियमो का अधिकाधिक प्रचार तथा तत्सम्बन्धी साहित्य का वितरण इस दिशा मे बहुत हद तक कारगर सिद्ध हो सकता है। भारतीय जनता जैसे-तैसे जीवनयापन करने मे ही सन्तोष लाभ करती है और खान-पान, रहन-सहन आदि के तौर तरीके स्वास्थ्य की दृष्टि से बडे हानिकारक है। शिक्षा का अभाव तो इसके लिए एक बडा कारण है ही, किन्तु इससे भी इन्कार नही किया जा सकता कि स्वास्थ्य रक्षा सम्बन्धी नियमो का पालन जिस नियमबद्धता तथा नियमितता से होना चाहिए, वह हो नही पाता।

दरअसल स्वास्थ्य है क्या? विश्व स्वास्थ्य सगठन का जो विधान बना है, उसमे इसकी सुन्दर व्याख्या दी गयी है। उस व्याख्या के अनुसार केवल रोग या निर्बलता का निवारण ही स्वास्थ्य नही, बल्कि इसका अर्थ है शरीर, मन और समाज की पूर्ण सन्तुलित अवस्था। आदिकाल से ही मनुष्य व्याधिरूपी दानव से लडता आ रहा है और व्याधियो के विरुद्ध मानव का यह सघर्ष अद्यावधि जारी है। विश्व स्वास्थ्य सगठन जैसी सस्थाम्रो से निश्चय ही सुसगठित रूप मे इस दानव के विरुद्ध प्रहारात्मक प्रयोग होते रहे हैं और मानव जीवन से रोग-शोक-परिताप की दुखद छाया को दूर भगाने की दिशा मे एक-से-एक बढकर अनुसधान तथा प्रयोग मानव बुद्धि ने किए है और इससे इन्कार नही किया जा सकता कि कुछ हदतक व्याधियो के प्रसार को नियन्त्रित कर सकने में मनुष्य सफल भी हुआ है।

विश्व-स्वास्थ्य सघ जब से अस्तित्व मे आया तभी से इसका जोर चिकित्सा की अपेक्षा रोगो से बचने के उपायो पर ही अधिक रहा। मलेरिया, तपेदिक और यौन रोगो को रोकने के लिये जो विश्व-व्यापी कार्रवाई की गयी है, उसमे प्राप्त सफलता से इस विचार की पुष्टि होती है। मलेरिया वाले क्षेत्रो मे सारी दुनिया की लगभग एक चौथाई आबादी रहती है। मलेरिया को नियन्त्रित रखने के लिए मच्छरो को नष्ट करना जरूरी है। इसी प्रकार प्रतिवर्ष कम-से-कम पचास लाख व्यक्ति तपेदिक से मरते हैं और करोडो की सख्या मे लोग इससे कष्ट पाते है। विश्व स्वास्थ्य सगठन के तत्वावधान में तपेदिक की रोकथाम के लिए तीस देशो को सहायता दी गयी है और क्षय रोग निवारणार्थ कतिपय केन्द्र खोले गए है। विश्व स्वास्थ्य-सघ ऐसी औषधियो की खोज मे सहायता भी करता है, जो तपेदिक के रोगियो को घर पर दी जा सके और उन्हे अस्पतालो मे भर्त्ती करने की जरूरत न हो।

जैसा कि पहले कहा गया है, केवल रोग न होना ही स्वास्थ्य नही—स्वास्थ्य तो एक सामाजिक समस्या है। इसलिए लोगो म सफाई की आदत डालने और स्वास्थ्य-रक्षा विषयक जागृति पैदा करने की अधिक जरूरत है। साथ ही प्रसूती तथा बच्चो की देखभाल, स्कूलो के बालको के स्वास्थ्य, पौष्टिक आहार उपलब्ध करने की समस्या आदि भी जन स्वास्थ्य को समुन्नत करने की दृष्टि से विचारणीय है।

जन-स्वास्थ्य को उन्नत बनाने के सम्बन्ध मे कुछ लोग राष्ट्रीयकरण का सुझाव प्रस्तुत करते है। राष्ट्रीयकरण का अर्थ जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह होगा कि व्यक्तिगत तौर पर निजी आय बढाने की दृष्टि से चिकित्सको को सशुल्क सेवा करने की अनुमति नही रहेगी। चिकित्सा के क्षेत्र मे व्याप्त अनाचार निश्चय ही इससे अपेक्षाकृत घटेगा और स्वास्थ्य के मद मे अधिकाधिक धनराशि खर्च करने से जन-स्वास्थ्य की वर्तमान अवस्था में सुधार हो सकेगा। जिस तरह राष्ट्रीय आधार पर गरीबी और बेकारी के विरुद्ध अभियान जारी है—उसी तरह जन-स्वास्थ्य को उन्नत बनाने की दिशा में भी सरकारी तथा गैर सरकारी आधार पर हमारे प्रयत्न जारी रहने चाहिए।

यव—जौ

वैद्य चन्द्रभानु शास्त्री

हमारे खाद्य अन्नो मे जौ अति प्रसिद्ध है। इसके स्वरूप परिचय के लिए लिखना पिष्टपेषण है। इससे इसके गुणो पर कुछ कहना युक्तिसङ्गत होगा।

राजस्थान प्रान्त मे बहुत से स्थान ऐसे है जहाँ के निवासी—निर्धन हो या धनवान्—प्रतिदिन के भोजन मे केवल जौ अथवा जौ का प्रधानत सम्मिश्रण रखते है। आहार ही प्राणी के शरीर का मूल आधार है। बल-बृद्धि और रस-रक्त आदि धातुओ का निर्माण आहार से होता है। सन्तान-परम्परा की गति-विधि बहुत कुछ आहार पर निर्भर करती है। आहार मे सबसे बडा महत्त्व द्रव्य का है।

"यादृश भक्ष्यते अन्न प्रजा भवति तादृशी।"

"अन्न मय हि सौम्य मन ।"

"जैसा खावे अन्न वैसा बने मन।"

"अन्न वै प्राणिना प्राणा ।"

"अन्न लोकोऽभिधावति।"

"देहोह्याहार सम्भव ।"

ऊपर लिखे गये वाक्यो से अन्न का महत्त्व कितना है—परिज्ञात होता है। अन्नो मे जौ प्रधान है, क्योकि प्राचीन संहिताओ मे जौ को ले कर जितना विचार-विमर्श हुआ है उतना गेहूँ आदि दूसरे अन्नो को ले कर नही।

आयुर्वेद शास्त्र में जहाँ द्रव्यो के गुणो का विचार किया है, वहा जौ को मधुर रस प्रधान अन्न कहा है।

"यव कषायो मधुरो हिमश्च।" (सु० सू० ४६।४१)

"रूक्ष शीतोऽगुरु स्वादु ।" (च० सू० २७।१६)

"रूक्ष शीतोऽगुरु स्वादु ।" (वाग्भट सू० ६।१३)

सुश्रुत मे 'मधुर' कहा है, उसीके लिए चरक में तथा वाग्भट में 'स्वादु' शब्द का प्रयोग किया है। चरक के सर्वमान्य टीकाकार चक्रपाणि ऊपर उद्धृत सूत्र की व्याख्या में 'अस्य च शीत मधुर कषायत्वेन अनुक्तमपि पित्तहन्तृत्व लभ्यत एव, तेन सुश्रुते कफपित्तहन्ता इत्युक्तमुपपन्नम्। अर्थात् चरक ने जौ को यद्यपि पित्तनाशक नही कहा[1] तथापि उसे शीत, मधुर, कषाय, कहा है। इसीसे उसका पित्त नाशक होना प्रकारान्तर से कह दिया गया है, यह समझ लेना चाहिए।

चक्रपाणि ने 'स्वादु' से 'मधुर' अर्थ लिया है। 'स्वादु' से मधुर अर्थ लिए विना 'अस्य शीत मधुर कषायत्वेन' मे 'मधुर' कहना सङ्गत नही होता और कोई दूसरा रस लेगे तो अनुभव विरुद्ध होगा, सुश्रुत और चरक मे विरोध भी अपरिहरणीय होगा। इससे 'स्वादु' से यहाँ मधुर अर्थ लेना ही युक्ति प्रमाण सङ्गत होगा यह च० पा० का अभिमत है। यो चरक, चरकानुसारी वाग्भट और सुश्रुत तीनो संहिताओ के आधार पर तथा प्रत्यक्ष प्रमाण के बल से—जौ मधुर रस प्रधान अन्न है, यह कहने मे सङ्कोच नही होता।

मधुर रस शरीर के लिए कैसा है इसे यदि चरक की दृष्टि से देखे तो—"तत्र मधुरो रस' इत्यादि च० सू० २६।४२ से आगे कोष्टक (१) मे पढने से स्पष्ट होगा कि—रस, रक्त, मांस, मेदा, अस्थि, मज्जा, ओज और शुक्र की वृद्धि करना, छहो इन्द्रियो को निर्मल करना, आयु बढाना, बल की वृद्धि करना, शरीर का रग निखारना, पित्त, वायु और विष को नष्ट करना, प्यास और जलन को शान्त करना, त्वचा के दोष दूर करना, बालो को गिरने और सफेद होने से बचाना, कण्ठ दोष नष्ट करना, तृप्ति करना, किसी भारी आघात से मूर्च्छित (बेहोश) को सचेत करना, कृशता दूर करना, बल और आयु को स्थिर करना, टूटे को जोडना,

---

[1]—अनुक्तमपि का रहस्य यह है कि आचार्य की शैली ऐसी है 'जो बात एक स्थान पर सहेतुक कह दी उसे आचार्य आशा करते है कि दूसरे स्थान पर समान न्याय के आधार पर समझ लेना चाहिए, सब जगह शब्दो को दोहराने की प्रतीक्षा नही करनी चाहिए। मधुर, शीत और मन्द द्रव्य अपने विरोधी गुण वाले दोष का नाशक होता है, यह बात घी का गुण वर्णन करते समय आचार्य कह चुके है—

"सर्पि खल्वेवमेव पित्त जयति-माधुर्यात्, शैत्याद्, उष्णत्वाच्च, पित्त हि अमधुरम्, उष्ण, तीक्ष्णञ्च।"
च० विमान १।१५

"यच्चान्यदपि किञ्चिद्द्रव्यमेव वातपित्तकफेभ्यो गुणतो विपरीत स्यात्तच्चैतान् जयति अभ्यस्यमानम्।"
चरक विमान १।१७

धातुक्षय से क्षीण मनुष्य में धातुओं को उपचित करना, घ्राणेन्द्रिय, जिह्वा (रसना), कण्ठ, और ओठो को सुख देना, दाह (जलन), मूर्च्छा (बेहोशी) को नष्ट करना, यह सब मधुर रस के कार्य है। इसके अतिरिक्त मधुर रस स्निग्ध, ठढा और भारी है। —चरक सू० स्था० २६(१)

इस सन्दर्भ को देखने से ऐसा लगता है कि मधुर के कार्यों मे जिन चीजो का ऊपर वर्णन किया है, जौ मे वे सब होनी चाहिए—मधुर रस के कारण। किन्तु ऐसा नही है, प्रत्युत जौ में कई गुण विरुद्ध है। जौ मधुर होकर भी स्निग्ध और भारी नहीं, उलटा रूक्ष और लघु है। यह कफ, मास और मेद की वृद्धि नही करता जैसा मधुर रस युक्त द्रव्य को करना चाहिए। जौ तो कफनाशक है, मास और मेद को कम करता है। जिनके शरीर मे मेद (चरबी) बढ गया है और उसके कारण पेट, छाती का स्तन भाग और नितम्ब चलने मे थलथलाते है उन्हे छाछ के साथ जौ की रोटी खानी चाहिए। लगातार ऐसा अभ्यास करने से शरीर मे मेद (चरबी) का हिस्सा कम हो जायगा और बेडौल शरीर धीरे-धीरे सुडौल हो जायगा, आलस्य दूर होगा—चलने-फिरने मे उत्साह बढेगा। भाव यह है कि जौ मधुर अवश्य है किन्तु अन्य मधुर द्रव्य गेहूँ आदि से बहुत अशो मे विपरीत है। गेहूँ अति स्थूलो के लिए अहितकर है तो जौ हितकर है। गेहूँ मास-मेद आदि की वृद्धि करता है तो जौ उनको कम करता है। मधुर रस कफ को बढाता है, वायु को शान्त करता है, परन्तु जौ कफ को शान्त करता है, वायु को बढाता है, मधुर रस सृष्टविण्मूत्र—पाखाना-पेशाब साफ लाता है, जौ मूत्र को कम करता है, इस प्रकार जौ बहुत विचित्र अन्न है। इसलिए जौ के विषय मे शास्त्रकारो ने बडी सावधानी से विचार किया है—इसके विशेष तत्त्वो का विशेष रूप से यत्नपूर्वक अन्वेषण करके लोक हित के लिए जिज्ञासुओ के सामने उपस्थित किया है।

सुश्रुत-मत से—

यव कषायो मधुरो हिमश्च,
कटुर्विपाके कफपित्त हारी
व्रणेषु पथ्यस्तिलवच्च नित्य,
प्रबद्ध मूत्रो बहुवात वर्चा ।४१।
स्थैर्याग्निमेधा स्वर वर्ण कृच्च,
सपिच्छिल स्थूल विलेखनश्च,
मेदो मरुत्तृड्हरणोऽति रूक्ष,
प्रसादन शोणितपित्तयोश्च ।४२।

सु० सू० ४६।४१, ४२।

चरक के मत से—

रूक्ष शीतोऽगुरु स्वादुर्बहुवातशकृद्यव ।
स्थैर्यकृत् सकषायश्च बल्य श्लेष्मविकारनुत् ।

चरक सू० २७।१९

वाग्भट्ट के मत से—

रूक्ष शीतो गुरु स्वादु सरो विड्वातकृद्यव
वृष्य स्थैर्यकरो मूत्रमेद पित्तकफान् जयेत्।
पीनस श्वासकासोरुस्तम्भ कण्ठत्वगामयान्।

वाग्भट सू० ६।१३, १४।

भावमिश्र के मत से—

यव कषायो मधुर शीतलो लेखनो मृदु ।
व्रणेषु तिलवत्पथ्यो रूक्षो मेधाग्निवर्द्धन ।
कटुपाकोऽनभिष्यन्दी स्वर्योबलकरो गुरु ।
बहुवात मलो वर्ण स्थैर्यकारी च पिच्छिल ।
कण्ठत्वगामय श्लेष्म पित्तमेद प्रणाशन ।
पीनस श्वास कासोरुस्तम्भलोहित तृट् प्रणुत्।

भाव प्रकाश पूर्व ख० धान्य वर्ग—२८,२९,३०

यहाँ कई ग्रन्थो से जौ के गुण उद्धृत किये है। इनमे जिन्होने एक दूसरे के वचनो का सग्रह नही किया, जिनके अपने स्वतन्त्र अनुभव है, उनके विषय मे कुछ विचार उपस्थित करते है।

चरक सुश्रुत दो ही सहिता है जिनमे अपने अपने स्वतत्र विचार उपनिबद्ध है। शेष प्राय सग्रह है। उनमे जो विशेषताएँ है उनकी भी चर्चा करेंगे। इससे जौ के विषय में कुछ विशेष जानकारी बढेगी।

जौ के विषय मे उक्त ऋषियो के अनुभव देख कर यह तो सिद्ध हो ही जाता है कि जौ एक 'विचित्र प्रत्ययारब्ध' अन्न है, अर्थात् जौ के निर्माण मे ईश्वर ने जिन कारण द्रव्यो का ग्रहण किया है उनमे ईश्वरीय सामान्य नियमो से कुछ विचित्रता है। जैसे मधुर रस वातशामक होता है, यह ईश्वरीय सामान्य नियम है परन्तु यवगत (जौ का) मधुर रस वातशामक नही, उलटा वातवर्द्धक है। यह उस रस की विचित्रता है। इससे कहना पडता है जौ विचित्र प्रत्ययारब्ध द्रव्य(अन्न)है, सामान्य प्रत्ययारब्ध नही है अथवा विषम-समवायारब्ध है, समसमवायारब्ध नही है।

मधुर रस 'सृष्टविण्मूत्र' होता है अर्थात् मधुर रस से पाखाना और पेशाब साफ उतरते है, किन्तु जौ में जो मधुर रस है वह इससे विचित्र है, पेशाब को साफ लाने का काम

नहीं करता किन्तु पेशाब को रोकने का काम करता है। इससे भी यह सिद्ध होता है, जौ ईश्वरीय साधारण नियमो के या द्रव्यो के अनुसार नही बना अपितु विचित्र द्रव्यो से या नियमो से बना है।

मधुर रस स्निग्ध (चिकना या गीला) होता है, किन्तु जौ मधुर रस वाला होकर भी स्निग्ध नही है—रूक्ष है। इससे भी यही सिद्ध होता है कि जौ ईश्वरीय सामान्य नियमो के अनुसार नही। जौ के बनाने मे ईश्वर ने विचित्र नियमो अथवा विचित्र द्रव्यो का उपयोग किया है। इससे भी जौ का विचित्र प्रत्ययारब्ध होना सिद्ध होता है।

मधुर रस का विपाक मधुर होता किन्तु जौ मे यह नियम लागू नही है। जौ रस में मधुर किन्तु विपाक मे कटु (मिर्च के स्वाद का) है। यह भी जौ की विचित्रता का बोधक है।

यहाँ एक बात और ज्ञातव्य है और वह थोड़े हेरफेर की है। उसकी ओर भी विद्वान् पाठको की दृष्टि आकृष्ट करते है। चरक ने जौ के लिए—"रूक्ष शीतोऽगुरु स्वादु" लिखा है। चरक के प्रति प्रसिद्ध विद्वान् टीकाकार श्री चक्रपाणि लिखते है—"सुश्रुते यवो लघु पठित, तेन अत्रापि 'अगुरु' इति मन्तव्यम्।" अर्थात् 'शीतो गुरु' इन दोनो पदो के बीच मे अकार है, और उसका पूर्वरूप हो रहा है। ऐसा मानने से—जौ हल्का है—अर्थ निकल आयगा और चरक-सुश्रुत का विरोध हट जायगा। यहाँ श्री यादव जी आचार्य ने एक अन्य टीकाकार 'शिवदास सेन' का मत टिप्पणी मे दिया है। उन्होने भी अकार प्रश्लेष से 'अगुरु' पाठ ही स्वीकार किया है। वह पाठ चक्रपाणि से प्राय मिलता है—"कि वा सुश्रुते यवो लघु, पठित तेन अकार प्रश्लेषेण 'अगुरु' इति पाठो मन्तव्य।" यहाँ एक नयी बात उठाकर खराद उतारी गयी है, उसे जान लेना चाहिए। शङ्का उठायी गयी है कि 'गुरु' पद लिखकर 'अगुरु' मानना यदि अभीष्ट था तो उसकी जगह 'लघु' शब्द का उपयोग क्यो नही कर लिया। इससे यह 'द्रविड प्राणायाम' न करना पडता और असन्दिग्ध भी रहता। फिर यह झझट किस प्रयोजन से किया?

उत्तर—"ईषद् गुरुत्व प्रतिज्ञानार्थम् ईषदर्थे नञ् प्रश्लेषयन्ति अतएव 'लघु' इति असन्दिग्धमपि न पठितम्।" तात्पर्य यह है कि मधुर-शीत होने से जौ भारी होना चाहिए था, किन्तु 'विचित्र प्रत्ययारब्ध' होने के कारण गुरुत्व उसमे न्यून है, यह प्रकट करने के लिए अकार प्रश्लेष ही करना पड़ा। यह न्यूनता 'लघु' पद से कथमपि प्रकट नही हो सकती थी अकार प्रश्लेष ही से यह अर्थ लब्ध हो सकता है। नञ् के ६ अर्थ है उनमे एक ईषद् (न्यून) अर्थ भी है। 'अनुदरा' कन्या आदि नञ् के न्यून (अल्प) अर्थ के उदाहरण प्रसिद्ध है। सुश्रुत ने जौ को मधुर रस वाला होने पर भी विपाक मे कटु माना है—"कटुर्विपाके" (सुश्रुत सू० ४६।४१) इसका कारण भी जौ की 'विचित्र प्रत्ययारब्धता' है। साधारण नियम यह है कि मधुर और लवण का विपाक मधुर होता है। 'स्वादु पटुश्च मधुरम्' (वाग्भट सू० ९।२१) अर्थात् मधुर और लवण द्रव्य का विपाक मधुर होता है।" "स्वादुर्मधुर लवणस्तथा।" चरक सू० स्था० २६।५८) अर्थात् मधुर और लवण द्रव्य का विपाक मधुर होता है। जौ यद्यपि मधुर है किन्तु इसका विपाक कटु होता है इसका कारण ऊपर कह दिया है—विचित्र प्रत्ययारब्धता।

"स्वादुर्गुरुश्च गोधूमो वातजिद् वातकृद्यव।"
अ० हृ० सू० ६।२८

इसकी व्याख्या करते हुए सर्वाङ्गसुन्दरा टीकाकारने जौ के विषय मे एव गेहूँ के विषय मे विचित्र प्रत्ययारब्धता एव समान प्रत्ययारब्धता का खुलासा किया है। पाठक विशेष जिज्ञासा वही से शान्त करें।

प्रमेह मे शास्त्रकारो ने यव भोजन के अनेक प्रयोग लिखे है, जैसे—

मासानि शूल्यानि मृगद्विजाना
खादेद् यवाना विविधाश्च भक्ष्यान्
च० चि० ६।४७

भृष्टान् यवान् भक्षयत प्रयोगान्
शुष्काश्च सक्तून् न भवन्ति मेहा।
च० चि० ६।४८

इन वाक्यो से शास्त्रकार प्रमेह मे जौ खाने का उपदेश करते है। मेरा अपना अनुभव भी प्रमेह मे विशेष कर इक्षुमेह मे (पेशाब मे शक्कर आने की बीमारी में) और उसके साथ बहुमूत्र (कई बार—२४ घटे मे १८ बार या २० बार तक पेशाब होने की बीमारी मे) जौ की रोटी खाने से अति लाभ होने का है। जिन रोगियो को, या जिन वैद्यो की चिकित्सा मे ऐसे रोगी विद्यमान हो जिन्हे पेशाब अधिक आता हो—जो प्रमेह का सामान्य लक्षण माना जाता है अर्थात् सभी प्रमेहो मे होता है, जौ की रोटी या जौ के अन्य कल्प बना कर प्रयोग करके देखें यह मेरी विनीत प्रार्थना है।

पायोरिया (Pyorrhoea) एवं दन्तवेष्ट

वद्य जाह्नवीप्रसाद जोशी ए० बी० एम० एस०

नत्र रोगो की भाति आजकल दन्त रोग विशषत पायोरिया की शिकायत आमतोर से दखन को मिलती है। दस-बीस वष पहल आखो की शिकायत आख के रोग दष्टि सम्बन्धी विकार बहुत कम दखन को मिलते थ परन्तु आजकल तो नत्र रोग साधारण सी बात हो गई है दष्टि दौबल्य या दष्टिपात तो दिनानदिन की समस्या बन बठी है। इसी प्रकार दात की खराबी भी प्रतिदिन बढती ग्नी है। पायोरिया से आज पढी लिखी जनता ही नही नगर म रहनवाल ही नही वरन ग्रामीण अपठित लोग भी परिचित हो गए ह। बाजारो म सकडो प्रकार के मजन चल रह ह और प्राय सभी पायारिया को अच्छा कर दन का ठका लिए बठ ह। पायोरिया दात की साधारण बीमारी नही है। दातो क लिए यह कालस्वरूप है। पायोरिया का अथ है दातो से मवाद निकलन का रोग। डा० टोरलण्ड पायोरिया का अथ इस प्रकार करत ह— दात और हड्डी के मध्यवना भाग म सूजन आ जाती है। दात क नीच का अस्थि भाग नष्ट होन लगता है। दात ढील पडन लगते है। इस प्रकार क रोग को पायोरिया कहत ह। जिसको यह बीमारी हो जाती है उसक दात तो शीघ्र जवाब द ही दत है अनक एसी भयकर बीमारिया हो जाती ह कि जीवन ही कठिन हो जाता है। आयवद म दन्तमलगत शीताद दन्तपुप्पुट दन्तवष्ट आदि रोग जो बताय गए ह उनम दन्तवष्ट के लक्षण पायोरिया (Pyorrhoea) से मिलत जलते ह। पायोरिया ग्रीक भाषा का एक शब्द है जिसका अथ छोट से छोट छद म से पूय का स्राव होना है। डाक्टर वदिक क कथनानुसार रक्त म अम्लता के बढ जान से यह राग होता है।

रक्तान्तगत अम्लता का कारण यकृत विकृति है। यकृत विकार मासादि प्रकृति विरुद्ध एव चटपटदार आहार गम-गम चाय क अति सवन रात्रि जागरण अनियमित आहार विहार क कारण होता है। इसके अलावा मुख शुद्धि न करना पान सुपारी-तम्बाकू का अधिक सवन बिना समझ-बूझ मजनो का अधिक प्रयोग विषाक्त औषधियो का प्रयोग दन्तमास को आलपीन आदि से खोदन की आदत से मसूडो म सडन पदा होती है और दातो का जड हिल जाती है। पट का विकृति खब चबा चबा कर न खान से तथा मख द्वारा श्वास लन से मसूड कमजोर हो जात ह और इस रोग को बल न के कारण होन ह प्रारम्भ म दातो म दरार पडत ह और थोड दबाव स मसूडो से रक्त आन लगता है। मसूड सूज जात ह। धीर धीर उनका क्षय होन लगता है और उनम पीप तथा भोजन आदि के कण जम जात ह जरा सा दबाव पडन पर पीप आ जाता है। मह गन्दा रहता है और सोन के पश्चात तकिया तथा विस्तर पर रक्त और पीप क दाग मिलते ह। पश्चात थक और पीप क साथ पायोरिया क कीटाणु आमाशय म प्रविष्ट होकर वातरक्त आमवात अतिसार ग्रहणी आमाशय शोथ आमाशयिक व्रण सधिवात ज्वर कण्डू पामा अजीण शल उपान्त्र शोथ नत्र रोग हृद रोग गलका दाह परो म पीडा झनझनाहट मलवध भ्रमादि अनक रोग उत्पन्न हो जात ह पाश्चात्य विद्वान भी इसी निष्कष पर पहुच रह ह कि आजकल अजीण अम्लपित्त ग्रहणी विकारादि क कारण प्राय पायोरिया ही होता है। यही नही पायोरिया क कारण अनक नत्र विकार भी उत्पन्न हो जात है। यकृत दोष तथा दातो क बीच म पड हुए सडत अन्न आदि दूषित पदाथ क करण यह अवस्था उत्पन्न होती है। इतन स ही पिड नही छटता बल्कि इसक कारण सधियो का प्रदाह अतिशय रक्ताल्पता होन के कारण जीवनी शक्ति का अभाव हो जाता है। परिमाणत पायोरिया के रोगी कालान्तर म यक्ष्मा से पीडित हो जात ह। यक्ष्मा के साथ-साथ जब यह विकार रहता है तो रोगी क अच्छा होन की बहुत कम सम्भावना रहती है। यदि स्त्री की प्रसूतावस्था म पायोरिया की बीमारी रहती है तो उसके स्तनो म दूध की कमी हो जाती है और दाँतो के दूषित पदार्थो के कारण उत्पन्न दोष से शिशु अस्वस्थ रहत है। वस्तुतः यह पायोरिया अत्यन्त कष्टसाध्य रोग है। जब दाँत हिल जात ह और उनसे पूय रक्त मिश्रित स्राव होने लगता

है तो उसके अच्छा होने की सभावना बहुत कम हो जाती है। बिना दांत के उखाड़े व्रणो का भरना, पूय मय रक्त का स्राव होना बन्द नही होता, निरन्तर भोजन के साथ विष उदर मे जाता रहता है। दांतो के हिलने से चर्वण क्रिया ठीक नही हो पाती। परिणामत अनेक विकार उत्पन्न होते है। ऐसी स्थिति मे दांतो को निकलवा देना चाहिए।

आजकल बाजार मे "पायोरिया" के लिए अनेक राम-बाण मजन मिलते है। सब यह दावा करते है कि ये मजन इस रोग मे अव्यर्थ सिद्ध होगे, परन्तु यह सब व्यर्थ है। अज्ञान जनता इन मजनो की ओर दौड पडती है। उन्हे यह पता नही कि केवल मजन से ही कार्य नही चलता है। आधुनिक दन्तकार (Dentist) भी जी-जान से दांतो की सफाई और मजन पर ही जोर देते है पर उन्हे यह मालूम नही कि बिना औषधि, आहार-विहार आदि के नियोजन एव पथ्यापथ्य का विचार किए केवल मुख शुद्धि से काम नही चल सकता। रक्तान्तर्गत और उदरान्तर्गत विकारो के शमनाथ लघनादि, शोधनादि का उपचार आवश्यक है। धैर्य के साथ और बिना घबडाए चिकित्सा करने से प्राय लाभ हो जाता है। गर्म पानी म नमक डालकर प्रात साय और रात्रि म कुल्ला करना चाहिए। अगुलियो से पीप और रक्त को धीरे-धीरे दबाकर निकाल देना चाहिए और शुद्ध कडुवा तेल मे बारीक नमक मिलाकर धीरे-धीरे मसूडो को मलना चाहिए। मौलसिरी की छाल और फलो को चबाने से भी लाभ होता है।



स्वप्न

आयुर्वेदाचार्य डा० मो० रा० यादव ए० एम० एस०

यदातु मनसिक्लान्ते कर्मात्मन कलमान्विता ।
विषयेभ्यो निवतन्ते तदा स्वपिति मानव ।।

जब इन्द्रिय तथा मन क्लान्त होकर बाह्य विषयो से निवृत्त हो जाते है तब निद्रा उत्पन्न होती है। निद्रावस्था मे ही व्यक्ति को स्वप्न उत्पन्न होता है। लेकिन वह भी उसी दशा म जब इन्द्रिया तो इन्द्रियार्थो से निवृत्त रहती है, किन्तु मन अनिवृत्त होता है। उस समय मन के कार्यकर गेने के कारण नाना प्रकार के स्वप्न होते है।

नाति प्रसुप्त पुरुष सफलान फलानपि।
इन्द्रियेशेन मनसा स्वप्नान्पश्यतनेकधा ।। च ई अ ५

आगे चलकर आचाय ने कहा है कि जब वातादि दोष बलवान होकर मन का वहन करनेवाली नाडियो म प्राप्त हो जाते है तब उस समय म वह मनुष्य शुभाशुभ स्वप्नो को देखता है।

मनोवहाना पूर्णत्वाद्दोषैरति बलैस्मिभि ।
स्रोतसा दारुणान्स्वप्नान्काले पश्यति दारुणे ।।

जब हम निद्रावस्था म होते है हमारी त्वचा या कान अपने अपने उद्दीपको को ग्रहण अवश्य करते है किन्तु उनकी ऐन्द्रिय उत्तेजनाए इतनी दुर्बल होती है कि मस्तिष्क म ऐसी केन्द्रिय क्रियाओ को प्रभावित नही कर सक्ती जैसी कि चेतना अनुभव की सहचारी क्रिया से होती है। परन्तु जैसे हमारे विश्राम का समय बढता है या व्यतीत होता जाता है मस्तिष्क केन्द्रो की धीरे धीरे ऐसी अवस्था हो जाती है कि वह हल्की उत्तेजनाओ से भी प्रभावित होती है और हम सहचारी चेतना क्रियाओ को प्राप्त करते है। किन्तु ये चेतना क्रियाए किसी विशेष क्रमानुसार अधिक समय तक नही चलती। इनके भिन्न अशो म जो पहले या पीछे आते है, कोई युक्तिसगत व्यवस्था या नियम नही रहता। ऐसी अवस्था म हमारी निद्रा प्रगाढ (पक्की) नही होती वरन कच्ची सी होती है। इस अवस्था को कच्ची निद्रा (Light sleep) कहना उचित होगा और इन कच्ची निद्रा के चेतनानुभवो को स्वप्न कहा जाता है।

फ्रायड के विचार से स्वप्न (Dream) एक उपाय है जिसके द्वारा व्यक्ति की अतृप्त दबी हुई इच्छाएँ सोते समय प्रकट होती है। उनका कथन है कि इच्छा पूर्ण हो गई तब तो ठीक है अन्यथा वह अपनी क्रियाशक्ति को भिन्न तौर पर प्रकट करती है। इच्छापूर्ति न होने का प्रधान कारण द्वार के प्रतिरोधक (Censor) का वर्तमान होना ही है। जब प्रतिरोधक शिथिल पडता है तब इच्छा स्वप्न के रूप मे बाहर निकल पडती है। अतएव इन स्वप्नो के आधार पर अतृप्त इच्छाओ के विषय मे अच्छा प्रकाश पडता है। स्वप्नो म भिन्न भिन्न प्रकार से भिन्न-भिन्न शक्लो को धारण करके ये इच्छाएँ प्रकट होती है। किस शक्ल का क्या अर्थ होगा, उसके पीछे कौन सी इच्छा कम करती है—इस पर आगे फ्रायड ने बहुत ही गम्भीर विचार किये है।

दृष्ट श्रुतानुभूञ्च प्रार्थित कल्पित तथा।
भाविक दोषजञ्चैव स्वप्न सप्त विध विदु ।। च इ अ ५

इस प्रकार स्वप्न के ये सात भेद माने गये है।

(१) देखे हुए
(२) सुने हुए
(३) अनुभव किये हुए
(४) इच्छा ,,
(५) कल्पना ,
(६) भावी काय को करनेवाले
(७) तीनो दोषो से होनेवाले

उपर्युक्त पर विचार करते हुए आगे बढना ठीक होगा।

(१) **दृष्ट (देखा हुआ)**—जाग्रतावस्था मे जिस किसी वस्तु को नेत्रो द्वारा देखे रहते है उसी को सोते समय स्वप्न म देखना।

(२) **श्रुत (सुना हुआ)**—श्रवणेन्द्रिय द्वारा सुनकर ही जिसके बारे म ज्ञान प्राप्त किया गया हो, फिर उसी को स्वप्नगत देखना।

(३) **अनुभूत (अनुभव)**— जिसका ज्ञान इन्द्रियो द्वारा यथोचित ढग से जाग्रतावस्था मे हुआ था, पुन उसी को सोते समय उसी रूप मे स्वप्न मे अनुभव करना।

(४) **प्रार्थित (प्रार्थना)**—जिसम दखा हुआ सुना हुआ या अनुमव किया होव या जागरणकाल म मनुष्य न अपन मन क द्वारा जिस की अम्यथना की हो। उसी को स्वप्न म उसी रूप म दखना अर्थात इच्छा क अनुरूप स्वप्न दखना।

(५) **कल्पित (कल्पना)**—जो न प्रयक्ष न अनुमान न देखा न सुना या इनक अनुसार न अनुभूत किया गया होव या मन क द्वारा न जिसक लिय प्राथना की गई हो एव न जिसका कोई रूप भी हो। सिफ व्यक्ति न जिसको अपन कल्पना जगत म कल्पित किया हो। सोन पर उसी क अनुसार स्वप्न दखना।

(६) **भाविक (आनवाली बातो का)**—जो कि पूव क अय सभी स विलक्षण होव एव जिस स्वप्न म भविष्य म होन वाली घटनाओ का दशन व्यक्ति कर। अर्थात इस स्वप्न म व्यक्ति को भविष्य क फलाफल का ज्ञान होता है।

(७) **दोषज**—दोष (वात पित्त कफ) की प्रवलता के अनुरूप जो स्वप्न दिखलाई पड उस दोषज स्वप्न कहत ह।

इसक अतिरिक्त जब हम व्यक्तिगत प्रकृतियो क अनुसार विचार करत ह तब हम शास्त्र म मिलता है कि—

विपति च गच्छति सभ्रमण सुप्त ।। सु शा अ ४ ।।

(ब) सुप्त सन कनक पलाश कर्णिकारान
सपश्यदपिच हुताग्न विद्युदुल्का ।। सु शा अ ५

(स) सुप्त सन स कमल हस चक्रवाकान
सपश्यदपि च जलाशयानमनोज्ञान ।।

सु शा अ ४

यहाँ पर आचाय न क्रमपूवक वातज पित्तज एव कफज प्रकृति का विवचन करते हुए बतलाया है कि वातज प्रकृति का व्यक्ति सोन पर नीद ठीक न आन के कारण आकाश म सचार करन के स्वप्न देखता है। जब पित्तज प्रकृति के गुणो का उन्होन वणन शुरू किया तब व कहते है कि पित्तज प्रकृति का व्यक्ति स्वण पलाश कर्णिकार अग्नि बिजली उल्कापात आदि को देखता है। जो लोग कफज प्रकृति के होते है व स्वप्न-काल म कमल हस एव चक्रवाक युक्त सुदर सरोबरो को देखते है।

इन्ही स्वप्नो का वर्गीकरण फलाफल दष्टया जब किया जाता है तब (१) फलयुक्त (अ) शुभ (ब) अशुम और (२) निष्फल म वर्गीकरण किय जाते है।

निष्फल स्वप्न की व्याख्या अत्यन्त सक्षिप्त और सरल है। इसका वर्गीकरण अनक बातो को दृष्टिगत करते हुए किया गया है जो आग चल कर साथ-साथ ज्ञात होता जावगा।

तत्र पञ्चविध पूवम फल भिषगादिमशत।
दिवा स्वप्नमति ह्रस्वमति दीघञ्च बुद्धिमान ।।

—च० र० अ० ५

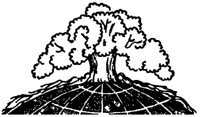
प्रथम पाच प्रकार के स्वप्न (दष्ट श्रत अनुभूत च प्रार्थित कल्पित) दिन म देखा गया स्वप्न अतिह्रस्व अथवा बहुत ही दीघ स्वप्न आचार्य न निष्फल माना है।

रात्रि के प्रथम पहर म दिखलाई पडनवाला स्वप्न अल्प फल करनवाला होता है। जिस स्वप्न को देखन के बाद पुन निद्रा न आव वह महाफल को देनवाला होता है। अशभ स्वप्नो के उदाहरणाथ हम लाल पुष्पो के वन या पाप कम का होना अधकारयक्त गुफा म प्रवश बदर भगवा वस्त्र धारण किय विकराल रूप वाल नग्न भयानक मनष्य शरीर पर तलमदन करना सिर पर बाँस गल्म बल आदि का प्रकट होना सिर का मडन देखना कौवा गद्ध उल्ल कत्त आदि का देखा जाना मानते है। इनके देखन से स्वस्थ व्यक्ति का रोगी होना और रोगी की मय तक सम्भव मानते ह।

फिर भी कहा गया है कि अशुभ के बाद यदि शुभ स्वप्न देखा जाव तो फल शुभ ही होगा।

अकल्याणमपि स्वप्न दृष्टवा तत्रैवय पुन ।
पश्यत्सौम्य शुभाकार तस्य विद्याच्छुभफलम ।।

—च० इ० अ० ५



आयुर्वेद-जगत्

आयुर्वेद को सरकारी प्रोत्साहन

लोकसभा म एक प्रश्न के उत्तर म गत २५ फरवरी को केन्द्रीय स्वास्थ्य मत्री श्री डी० पी० करमरकर जी न अपना विचार व्यक्त करते हुए कहा कि जहा तक सरकार का प्रश्न है उसकी नीति आयवद तथा उसके साथ साथ अन्य देशी चिकित्सा पद्धतियो को प्रोत्साहन देन की रही है। आपन बताया कि केन्द्रीय सरकार आयवद और अन्य देशी चिकित्सा पद्धतियो के सम्बन्ध म अनसधान करन वाली सस्थाओ को आवश्यकतानसार आर्थिक सहायता भी देती रही है। किन्तु सखद कहना पडता है कि सरकार का नीति से अपेक्षित लाभ नही उठाया जाता। आपन पुन कहा कि सरकार की भी अपनी सीमा है और वह उस सीमा म रहते हुए ही अनदान दे सकती है। निश्चय ही आयवद तथा अन्य चिकित्सा पद्धतियो के लिए हम उतना व्यय नहा कर सके जितना हमलोग चाहते थ।

दव समिति द्वारा किए गए प्रतिवदन की चर्चा करते हुए केन्द्रीय स्वास्थ्य मत्री न कहा कि केन्द्रीय स्वास्थ्य परिषद न उक्त समिति के प्रतिवदन पर विचार किया और परिषद इस निष्कष पर पहुची कि वतमान स्थिति म देशी चिकित्सा पद्धति के विकास के बारे म सभी राज्यो के लिए एक समान नीति निर्धारित करना कठिन है। आपन आग कहा कि फिर भी विभिन्न राज्यो से सिफारिश की गयी कि व अपन अपन राज्यो म आयवदिक चिकित्सा प्रणाली तथा अन्य देशी चिकित्सा पद्धति के विकास की दिशा म कदम उठावे। श्री करमरकर जी न कहा कि परिषद न इस आशय की सिफारिश की है कि केन्द्रीय सरकार को आयर्वेद यूनानी होम्योपैथी तथा अन्य चिकित्सा पद्धति म अनसधान-काय करन के लिए सक्रिय रूप म प्रोत्साहन मिलना चाहिए।

मधुमह की चिकित्सा के लिए दशी औषधिया

लखनऊ की औषधि गवषणाशाला न बहुत से प्रयोग करके जामन की गठली को मधमह रोग म बहुत प्रभावकारी पाया है। पाश्चात्य चिकित्सक अभी तक मधमेह को जड से मिटान की कोई दवा नही निकाल सके ह। जामन की गठली के आसव से रोगिया की रक्त शकरा (ब्लड शगर) काफी कम हो गयी। राग जस्ते और लोह के साथ अभ्रक भस्म और बहुत थोडी मात्रा म ताबा तथा कोबल्ट देन से भी मधमेह दूर हो जाता है। बीजा के सत से खरगोशो और मनष्यो की रक्त शकरा म काफी कमा होती देखी गयी है। भारत म मधमेह रोग म कई प्रकार की जडी-बटियो का काफी समय से प्रयोग होता आया है और आयवदिक ग्रथो म इस रोग और इसकी चिकित्सा का सविस्तार उल्लख है। प्याज के रस से भी कुत्तो और खरगाशो की रक्त शकरा काफी कम हो गयी। रतनजोत का स्वरस देन से मधमह म ग्लकोज म तो खास कमी नही पाई गयी लकिन इस रोग के अन्य सब लक्षणो म काफी कमा होती देखी गयी।

राजस्थान के वैद्यो को सूचना

देशाय चिकित्सा पद्धति के समभ्यासियो एव देशीय धात्री विद्या की समभ्यासिकाओ को इस विज्ञप्ति द्वारा सूचित किया जाता है कि राजस्थान इण्डियन मेडिसिन बोड द्वारा अनभव के आधार पर राजस्थान देशीय चिकित्सा अधिनियम सन १९५३ के अतगत रजिस्ट्रेशन तथा नामाकन की अवधि दिनाक १३ २ ५८ से छ माम के लिय पुन खोल दी गई है। अत उक्त पद्धतियो के समभ्यासियो को चाहिय कि व अपन अपन आवदन पत्र सब पूर्तियो एव शल्क के साथ निम्न हस्ताक्षरकर्ता के कार्यालय म उक्त अवधि म भज द।

(१) आवदनपत्र मजिस्ट्रट का प्रमाणपत्र जिला सभा की प्रामाणिकता तथा शल्क के १० रुपय का पोस्टल आडर एक साथ म भज। इनको अलग अलग न भजा जाव।

(२) अवधि के बाद प्राप्त आवदन पत्रो पर कोई विचार नही किया जावगा।

(३) आवदन पत्र आवश्यक पूर्ति के अभाव म अस्वीकृत कर दिया जावगा।

(४) प्रार्थी प्रायना पत्र देन से पूव अपनी योग्यता का निणय करे। इस प्रकार अस्वीकृत आवदन पत्रो का प्राप्त शुल्क किसी भी दशा म वापस नही किया जावगा।

नोट —(१) आवदनपत्र व मजिस्ट्रट प्रमाणपत्र कार्यालय से प्रार्थी अपना पता दिया हुआ १५ न० प० का लिफाफा भज कर प्राप्त कर प्राप्त कर सकते ह।

(२) राजस्थान दशीय चिकित्सा अधिनियम १९५३ आनियम व नियम प्रत्यक २५ न० प० एव आवश्यक पोस्टज भज कर प्राप्त कर सकते ह।

—वद्य रामप्रकाश स्वामी रजिस्टार बोड आफ इण्डियन मेडिसिन राजस्थान जयपुर।

उत्तर प्रदश आयुर्वेद यूनानी चिकित्सक सघ

राजकीय आयवदिक एव यनानी चिकित्सालयो के इन्चाज समस्त वद्य हकीम बन्धुओ के सूचनाथ निवदन है कि राजकीय आयवद व यनानी चिकित्सक सघ उत्तर प्रदेश के ग्यारहव अधिवशन की प्रबन्धकारिणी समिति न विभागीय उपसचालक महोदय के परामश के बाद निणय किया है कि सघ का ग्यारहवा अधिवशन लखनऊ नगर म मई १९५८ म किया जाय निश्चित तिथियो की सूचना बाद म यथासमय भजी जावगी।

सघ के प्रधान महोदय न अपन अधिकार से निम्न लिखित पदो की पूर्ति इस प्रकार की है—उपप्रधान—(१) श्री रामानन्द वमा जा वद्य बाराणसी (२) श्री वसी अहमद अन्सारी जी हकीम मरादाबाद।

उपमन्त्री (१) कुन्दन लाल आयवद्य बाराबकी (२) श्री बदरुल हसन हकीम हरदोई।

आयुर्वेद तिब्बी कालज जयपुर

राजपूताना आयवदिक व यनानी तिब्बी कालज के ३१व वष के दीक्षान्त समारोह पर श्रा देवीशकर जी तिवाडी न अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए आयवद व यनानी चिकित्सा प्रणालियो के प्रति श्रद्धा प्रकट की तथा छात्रो को सम्बोधित करते हुए कहा कि भारतीय चिकित्सा की प्रगति सत्य एव लगन से ही पूण हो सकती है। भाषण म आपन बताया कि किसी सस्था की प्रगति उसकी आर्थिक दशा की अपेक्षा उसके कायकर्त्ताओ पर निभर है। अन्त म आपन अपनी उपाधियो के अनरूप योग्यता दिखान के लिय पूण श्रम एव तत्परता से काय करन का अनरोध किया। इस समारोह म ४२ छात्रो को आयवद म तथा ११ छात्रो को यनानी म उपाधियाँ दी गई। अन्त म सस्था के रजिस्ट्रार न धन्यबाद भाषण दिया तथा जन-गण-मन राष्ट्रीय गीत के साथ समारोह समाप्त हुआ। इसी अवसर एक आयुवदिक व तिब्बी प्रदशनी का भी आयोजन किया गया था जिसे देख कर सब न उन्नति की शुभकामना प्रकट की।

आयुर्वेद सवा सदन का उदघाटन

कानपुर की समाजसेवी सस्था श्री अग्रसेन व्यायामशाला न नागरिक वद्य सभा का सहयोग प्राप्त कर अपन व्यायाम शाला भवन म आयवद सवा सदन की स्थापना की है जिसका विधिवत उदघाटन उत्तरप्रदेश के समाज कल्याण मन्त्री आचाय जगलकिशोर जी न हाल म ही किया है। आयुर्वेद सेवा सदन का उद्दश्य निशल्क चिकित्सा करना है। इस उद्दश्य की पूर्ति हतु नगर के ५ वद्यशास्त्रियो न अपनी ओर से अभी बिना मल्य औषधिया सेवा सदन को दी है। सेवा सदन म रोगियो के लटन तथा रहन की पूरी व्यवस्था है। अग्रसेन व्यायामशाला न इसके लिए ५ कमरे बनवा दिय ह और आतुरालय के लिए पृथक एक बडा स्थान बनवा दिया है।

समारोह म नागरिक वद्य सभा के सभी प्रमख वैद्य उपस्थित थ। समाज सवा विभाग मन्त्री आचाय जगल किशोर के पधारन पर प० रामेश्वर जी मिश्र वद्य न उनका हार्दिक स्वागत करते हुए कहा कि आयवद के प्रवतक तथा प्रधानाचाय इसी राज्य म उत्पन्न हुए ह। धन्वन्तरि भरद्वाज चरक आत्रय आदि न इसी राज्य म जन्म ग्रहण किया। आयवद का प्रथम उपदेश भी यही हुआ। आयवद ही जनता की चिकित्सा पद्धति है। सरकार न पहल भी आयवद के उत्थान के लिय अनेक काय किय ह। इण्डियन मेडिसन बोड की स्थापना ही इस बात का एक प्रमाण है।

समाज कल्याण मन्त्री आचाय जुगलकिशोर न अपने भाषण म इस सस्था का उदघाटन करन पर प्रसन्नता प्रकट की। आपन कहा कि यह शभ काय है। मेरा भी हाथ इस सवाकाय म लग रहा है इसका मझ हर्ष है। जहाँ तक आयवद का सम्बन्ध है इसकी महत्ता सभी मानते हैं। ८० फीसदी जनता आयर्वेद से लाभ पाती है। सरकार भी आयर्वेद के लिय काफी प्रयास कर रही है। आज यदि आयर्वेद की ओर लोगो का ध्यान कम है तो इसका उत्तर दायित्व वैद्यो पर भी है जो वैद्य-काय की ओर से उदासीन

रहते हैं। आवश्यकता है कि वैद्य-समाज आयुर्विज्ञान मे अधिकाधिक शोध करे और जनता का विचारशील वर्ग समाज सेवा मे प्रवृत्त हो और चिकित्सा की सस्थाओ को जन्म दे और उनके सचालन मे सभी अपना-अपना योग द। जनता के कार्यो मे सरकार का हाथ बटाना उचित ही है। पर हमे अपनी शक्ति पर ही भरोसा करना चाहिये।

नागरिक वैद्य सभा के अध्यक्ष प० सत्यनारायण मिश्र वैद्य ने अन्त मे मन्त्री महोदय को धन्यवाद दिया।

शिवपुरी औषधालय का वार्षिक चुनाव

शिवपुरी जनता तथा नगरपालिका सर्व हितैषी आयुर्वेदिक औषधालय शिवपुरी का वार्षिक चुनाव गतवर्षानुसार इस वर्ष भी सेठ श्री किशनदास जी गोयल की अध्यक्षता मे बडे शान्तिपूर्ण वातावरण म सम्पन्न हुआ। औषधालय के मत्री श्री हरनारायण जी जैन ने औषधालय का लेखा-जोखा प्रस्तुत करते हुए प्रसन्नता व्यक्त की कि इस वर्ष जनता तथा नगरपालिका के सक्रिय सहयोग एव श्री जानकी प्रसाद जी मिश्र वैद्यशास्त्री के अकथनीय परिश्रम के कारण नगर के विभिन्न मोहल्लो तथा समीपवर्ती ग्रामो के अधिकाशत ज्वर, मलेरिया, वातकफज्वर (फ़िल्यू) रक्तविकार आदि रोगो से ग्रसित होकर २२२३२ रोगियो ने नि शुल्क चिकित्सा से लाभ उठाया। इस वर्ष के लिए श्री सेठ किशनदास जी गोयल अध्यक्ष, बाबू श्रीलालजी मगल उपाध्यक्ष तथा श्री हरनारायण जी जैन मत्री सर्वसम्मति से निर्वाचित हुए।

बड़ौदा जिला वैद्यमडल

बड़ौदा जिला वैद्य मडल की साधारण सभा मे निम्न लिखित पदाधिकारी १९५८ साल के लिये नियुक्त किये गये हैं —

वैद्य मोहनलाल न० चोक्सी अध्यक्ष, वैद्य धीरजलाल था० शाह एव वैद्य अम्बालाल म० पटेल उपाध्यक्ष, वैद्य जगदीश चन्द्र मु० पड्या प्रधान मत्री, वैद्य कनुभाई गि० त्रिवेदी प्रचार मत्री, वैद्य विष्णु प्रसाद बोरसदवाला सहमत्री, वैद्य रविशकर पुरोहित कोषाध्यक्ष, वैद्य तोलाशकर जे० भट्ट हिसाब परीक्षक।

राजस्थान वैद्य सम्मेलन

राजस्थान प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन की कार्यकारिणी समिति का अधिवेशन गत २ फरवरी को जोधपुर मे सम्पन्न हुआ। कविराज श्री माधव प्रसाद शास्त्री ने अधिवेशन का सभापतित्व किया। राजस्थान मे आयुर्वेद की विभिन्न समस्याओ पर विचार करने के साथ-साथ अधिवेशन मे



राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलन की कार्यसमिति की वैठक का दृश्य

आयुर्वेद की प्रगति के सम्बन्ध मे अनेक योजनाओ पर विचार विमर्श और निर्णय किया गया।

धर्मार्थ आयुर्वेदिक चिकित्सालय

प्रतापगढ शहर म सेठ बाबूलाल फूलचन्द धर्मार्थ आयुर्वेदिक चिकित्सालय का उदघाटन उन्ही की धर्मशाला मे १५ जनवरी को धार्मिक कृत्यो के साथ सपन्न हुआ, जिसमे पहले गणेशादि तथा धन्वन्तरि पूजन के अनन्तर चरक सहिता का पारायण एव सुश्रुत सहिता का पाठ, हवन, भिषक् पूजन, ब्राह्मण भोजन आदि कृत्य सपन्न हुए। कृत्य के समय देहात तथा शहर के प्रतिष्ठित अनेक वैद्य विद्वान समिलित रहे। चिकित्सालय के आयोजक बी० एन० मेहता सस्कृत आदर्श महाविद्यालय के भूतपूर्व प्रधानाचार्य श्री हरिनारायण शर्मा वैद्य आयुर्वेदाचार्य और सस्थापक सेठ जी के पुत्र श्री बद्रीप्रसाद बी०ए०एल० एल० बी० एव श्री ईश्वर प्रसाद का मनोयोग प्रशसनीय है, जो शहर के लिये कल्याणकारी एक नया कार्य है। चिकित्सालय म चिकित्सक श्री सत्यदेव आयुर्वेदाचार्य की नियुक्ति हुई है।

आयुर्वेद-यूनानी कम्पाउण्डर संघ

राजकीय आयुर्वेद-यूनानी कम्पाउण्डर सघ, उत्तरप्रदेश का वार्षिकोत्सव आगामी २८-२९ अप्रेल को कन्दरावा जिला रायबरेली मे होने जा रहा है। सभी राजकीय कम्पाउण्डरो को इसमे योगदान करने के लिए अनुरोध किया गया है।

राजकीय कम्पाउण्डरो को ट्रेण्ड घोषित करने के प्रश्न पर सरकार विचार कर रही है और ऐसी आशा है कि शीघ्र ही सरकारी निर्णय की सूचना कम्पाउण्डरो को दी जा सकेगी।

आयुर्वेद-यूनानी चिकित्सा सघ

राजकीय आयुर्वेद-यूनानी चिकित्सक सघ, मथुरा का चुनाव जिला स्वास्थ्य अधिकारी के कार्यालय मे सपन्न हुआ। सर्वसमिति से श्री बुद्धिसागर आयुर्वेदाचार्य को सभापति, श्री उदयवीर सिह शास्त्री को मत्री तथा श्री बनारसी दास को कोषाध्यक्ष चुना गया।

रसशास्त्र विषयक प्रश्न

पारद अनुसन्धान कार्यालय, विश्वज्ञान मन्दिर, कनखल (हरिद्वार) के सेक्रेटरी ने एक विज्ञप्ति द्वारा श्री नारायण स्वामी से मुलाकात करने की इच्छा रखनेवाले सज्जनो को सूचित किया है कि पारद अनुसन्धान कार्य मे अत्यधिक व्यस्त रहने के कारण आगामी छ मास तक श्री नारायण स्वामी जी किसी से मुलाकात करने मे असमर्थ है। रस-शास्त्र के विषय मे स्वामी जी के पास तीन प्रश्न लिखकर अपने पूरे नाम-पते के साथ भेजने पर स्वामी जी उसका उत्तर दे दगे अथवा जरूरत पडने पर मुलाकात करने के लिए पत्र द्वारा सूचना देगे। धातुवाद के विषय मे स्वामी जी किसी प्रश्न का उत्तर नही देगे और इस विषय पर कोई बात-चीत भी नही करगे।

वयोवृद्ध वैद्य का निधन

रमेश औषधालय नादेड के वैद्य रामेश्वर चतुर्वेदी के पिताजी वैद्य किशनलाल चतुर्वेदी का ९० वर्ष की उम्र मे देहावसान हो गया। आप अपने पीछे तीन पुत्र, एक पुत्री तथा प्रपौत्र-प्रपौत्रियो का वृहद् परिवार छोड गये है।

श्री नटराज शास्त्री को मातृशोक

आयुर्वेद-विद्यापीठ के अध्यक्ष वैद्य प० बा० वा० नटराज शास्त्री की माताजी का हाल मे ही परिपक्व आयु मे देहावसान हो गया। हम श्री शास्त्री जी के प्रति आन्तरिक समवेदना प्रकट करते है।

वैद्य पं० सीताराम मिश्र को शोक

आयुर्वेद-विद्यापीठ के प्रधान मत्री वैद्य प० सीताराम जी मिश्र की माताजी का देहावसान हाल मे ही हो गया। हम दिवगत आत्मा की शान्ति के लिए कामना करते हुए श्री मिश्र जी के प्रति अपनी समवेदना प्रकट करते है।

वैद्यराज प्रो० चतुर्भुज चौधरी का देहावसान

अयोध्या शिवकुमारी आयुर्वेद महाविद्यालय बेगूसराय, के द्रव्यगुण विभाग के अध्यक्ष प्रोफेसर चतुर्भुज चौधरी का हृदयावसाद के कारण शुक्रवार ता० १४-२-१९५८ को दरभगा मेडिकल कालेज अस्पताल मे स्वर्गवास हो गया। वे लगभग १ वर्ष से हृदयावसाद रोग से पीडित थे। कष्ट बहुत बढ जाने के कारण ता० ९-२-१९५८ को चिकित्सा के लिए दरभगा मेडिकल कालेज अस्पताल मे उन्हे प्रविष्ट कराया गया था। वहाँ हृदयरोग विशेषज्ञ डा० बी० मुखर्जी की चिकित्सा चल रही थी। परन्तु रोग असाध्य था और स्थिति बहुत चिन्तनीय थी। अत डा० मुखर्जी के अथक प्रयत्नो के बावजूद प० चौधरी जी की प्राणरक्षा नही हो सकी। उनके स्वर्गवास का समाचार बेगूसराय पहुँचते ही अयोध्या शिवकुमारी आयुर्वेद महाविद्यालय मे गहरा शोक छा गया। महाविद्यालय के सब विभाग उनके सम्मान मे बन्द रहे तथा सब प्राध्यापको, छात्रो एव कार्यकर्त्ताओ की शोक सभा मे शोक प्रस्ताव स्वीकार किया गया। सब ने आर्थिक सहायता कोष बना कर उनके श्राद्ध आदि क्रियाकर्म के लिए तात्कालिक तथा परिवार के भरण-पोषण के लिए नियमित मासिक आर्थिक सहायता देने का निश्चय किया।

श्री बैद्यनाथ धर्मार्थ औषधालय

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा सचालित बैद्यनाथ धर्मार्थ औषधालय मे गत जनवरी मास मे कुल ९२१ रोगियो की मुफ्त चिकित्सा की गई। इसमे ३९४ नये और ५२७ पुराने रोगी थे। इसमे पुरुष रोगियो की सख्या २३८, स्त्री रोगियो की सख्या ६१ और बाल रोगियो की सख्या ९५ थी। इस मास की दैनिक उपस्थिति का औसत २९ ७ रहा। नये रोगियो की सख्या रोगानुसार नीचे लिखे मुताबिक है —

ज्वर २९, श्वसनकज्वर ७, मन्थर ज्वर १, उत्फुल्लिका ६, उदर रोग ५३, आमातिसार १६, कास ७६, श्वास १५, प्रमेह ४, कृमि ७, वातव्याधि ४४, आमवात ५, श्लीपद ५, रजोदोष २, प्रदर २, वृद्धिरोग २, शिरोरोग ४, नेत्र ३, नासा रोग (प्रतिश्याय) ४२, कर्ण ७, मुख १६, व्रण, ६, अम्लपित्त २, क्षुद्र कुष्ट २०, कुष्ट १ पाण्डु ३ सन्निपात १, मूत्रकृच्छ १, उपदश १, अक्षिस्राव २, प्लुष्ट १, हृदय शूल १, विसर्प २।

बैद्यनाथ रस-रसायन की श्रेष्ठता

आयुर्वेदीय चिकित्सा म रसो का अति श्रेष्ठ स्थान है। हमारे वैद्यो के पास यदि रस चिकित्सा न होती तो वर्तमान डाक्टरी चिकित्सा के सामन उनका ठहरना कठिन था। यदि वैद्यो के पास प्रधान प्रधान रस न हो तो उन्ह शस्त्रहीन योद्धा ही समझना चाहिए। हमारे देश म रस-वैद्यो को श्रष्ठ स्थान दिया गया है। रस अल्प-मात्रा (एक-दो रत्ती) म ही तत्काल लाभ दिखलाते है और इससे अरुचि भी नही होती। बैद्यनाथ रसो की विशेषता यह है कि उत्तम और प्रामाणिक वस्तु डालकर ही हमारे यहाँ रस बनाय जाते है। हम निरन्तर इस बात का प्रयत्न करते है कि आयुर्वेद की औषध डाक्टरी दवाओ के सामन विशष गुणप्रद साबित हो। उचित मूल्य म प्रामाणिक रस चाहनवाले सज्जन निश्चय ही हमारी चीजो से सन्तुष्ट होग।

अगस्तिसूतराज रस—अतिसार सग्रहणी आमाश शूल मन्दाग्नि आदि म यह बहुत उपयोगी है। कीमत—१ तोला ७।।) आठ आना भर ३।।।-) चार आना भर १।।।≡) दो आना भर १)

अग्निकुमार रस—अजीर्ण मन्दाग्नि एव पेट-दर्द म उपयोगी है। कीमत—१ तोला ।।।) आठ आना भर ।≡) चार आना भर ।)

अग्निसदीपन रस—अधिक भोजन के कारण अजीर्ण होने पर इसस शीघ्र पाचन होता है। कीमत—१ तोला ।।।=) आठ आना भर ।।) चार आना भर ।)।।

अजीर्णकटक रस—अजीर्ण और हैज की पहली दशा में इसका प्रयोग करना चाहिए। कीमत—१ तोला ।।।=) आठ आना भर ।।) चार आना भर ।)।।

अजीर्णारि रस—यह दीपन पाचन और दस्तावर है। मन्दाग्नि अजीर्ण कब्जियत आदि को दूरकर अग्नि की वृद्धि करता है। कीमत—१ तोला ।।।=) आठ आना भर ।।) चार आना भर ।)।।

अर्द्धनारीनटेश्वर रस—सन्निपात तन्द्रा अनिद्रा आदि म नस्य रूप म प्रयुक्त होने से यह शीघ्र गुण दिखलाता है। कीमत—१ तोला २।=) आठ आना भर १।) चार आना भर ।।=)।।

अमरसुन्दरी (बटी) रस—सभी प्रकार के वात रोगो म इससे लाभ होता है। सन्निपात ज्वर के प्रलाप एव पेट म वायु भर जाने से पेट फूल जाने पर इसका सेवन श्रेष्ठ है। कीमत—१ तोला ।।।) आठ आना भर ।≡) चार आना भर ।)

अमीर रस—इसका व्यवहार वैद्य के परामर्श से करना चाहिए। कीमत—१ तोला ६) आठ आना भर ४।।-) चार आना भर २।-) दो आना भर १≡)

अमृतार्णव रस—यह अतिसार सग्रहणी बवासीर अम्लपित्त आदि म बहुत लाभदायक है। कीमत—१ तोला ।।।=) आठ आना भर ।।) चार आना भर ।)।।

अर्शकुठार रस—बवासीर म कब्जियत रहन से बडी तकलीफ होती है। इम दवा के सेवन से दस्त साफ आकर मस्से सूख जाते हैं। कीमत—१ तोला १।।=) आठ आना भर ।।।=) चार आना भर ।≡)।।

अश्वकचुकी रस—जीर्णज्वर अजीर्ण गुल्म आदि रोगो म इसका जुलाब लना अच्छा है। कीमत—१ तोला ।।।=) आठ आना भर ।।) चार आना भर ।)।।

अश्विनीकुमार रस—पेट की वायु बिगड जाने से होनवाल उदर रोगो म और जाडा लगकर आनवाल ज्वर म इस रस का उपयोग किया जाता है। कीमत—१ तोला २) आठ आना भर १-) चार आना भर ।।-)

आनन्दभैरव रस (कास)—कास (खाँसी) श्वास और कफ के विकारो म इसस अच्छा लाभ होता है। सन्निपात ज्वर और अतिसार म भी इसका उपयोग होता है। कीमत—१ तोला १) आठ आना भर ।।-), चार आना भर ।-)

आनन्दभैरव रस (ज्वर)—बुखार को पकाकर नष्ट करता है। सभी तरह के ज्वरो म इससे फायदा होता है। बुखार के तीव्र वेग को शीघ्र घटाता है। कीमत—१ तोला ।।।≡) आठ आना भर ।।)।। चार आना भर ।)।।।

आमवातारि रस—आमवात रोग से जिस समय सम्पूर्ण शरीर म दद हो उस समय इसके उपयोग से अच्छा लाभ होता है। कीमत—१ तोला ।।।=) आठ आना भर ।।) चार आना भर ।)।।

आरोग्यवर्द्धिनी बटी—अजीण मलावरोध रक्त विकार ज्वर और शोथ म बहुत लाभकारी है। यकृत रोगो (Liver complaints) की बहुत उपयोगी दवा है। कीमत—१ तोला ।।।-) आठ आना भर ।।)।। चार आना भर ।)।।।

इच्छाभदी रस—यह तीव्र विरेचक है और ५ ७ दस्त लाकर पेट को साफ कर देता है। कीमत—१ तोला १=) आठ आना भर ।।=) चार आना भर ।-)।।

उन्मत्त रस—सन्निपात ज्वर तथा त द्रा (आखो म झँपझपी) होन पर इसका नस्य देन से होश आ जाता है। कीमत—१ तोला १।।) आठ आना भर ।।।-) चार आना भर ।≡)

उन्मादगजाकुश रस—यह वात आदि त्रिदोषजन्य विकारो की श्रेष्ठ दवा है। इससे निद्रा आकर रोगी को शान्ति मिलती है। कीमत—१ ताला २।) आठ आना भर १≡) चार आना भर ।।=)

एकागवीर रस—इसके सेवन से गध्रसी विकलागता आदि तीव्र वात विकारो म लाभ होता है। अगो म आई हुई अशक्तता को दूर करन म यह विशष फलदायक है। कीमत—१ तोला ५।) आठ आना भर २।।-) चार आना भर १।=) दो आना भर ।।≡)।।

कनकसुन्दर रस—अतिसार और सग्रहणी म यदि आँव-दोष न हो तो इसका उपयोग अति श्रेष्ठ है। यह वदनाशामक अग्निदीपक तथा सग्राहक है। ज्वरातिसार म भी लाभ करता है। कीमत—१ तोला १।-) आठ आना भर ।।=)।। चार आना भर ।=)।

कफकसरी—दमा-खासी म जम हुए कफ को बाहर निकालकर रोगी को आराम पहुँचान म अत्युत्तम है। कीमत—१ तोला १।।=) आठ आना भर ।।।=) चार आना भर ।≡)।।

कफकुठार रस—कफ के अधिक गिरन तथा खाँसी और दमा म इसका व्यवहार करन से आशाजनक लाभ होता है। कीमत—१ तोला २।।।) आठ आना भर १।≡), चार आना भर ।।।)

कफकेतु रस—कफजन्य बुखार खाँसी, श्वास और जुकाम म इस दवा से लाभ होता है। कीमत—१ तोला ।।।=) आठ आना भर ।।) चार आना भर ।)।।

कफचिन्तामणि रस—इसके सेवन से सब प्रकार के कफ और वात रोग नष्ट होते है। कीमत—१ तोला ५।।) आठ आना भर २।।।-) चार आना भर १।≡) दो आना भर ।।।)

कर्पूर रस—यह पतल दस्त सग्रहणी आदि म तत्काल फायदा दिखलाता है। यह सग्राहक है। कीमत—१ तोला ४।।) आठ आना भर २।-) चार आना भर १=)

कल्पतरु रस—कफ और वातज्वर म बहुत ही लाभ करता है। कास शीत अग्निमाद्य आदि म लाभकारी है। नस्य भी लिया जाता है। कीमत—१ तोला ।।।) आठ आना भर ।-) चार आना भर ।)

कस्तूरीभूषण रस—सन्निपात ज्वर म जिस समय हाथ-पैर ठडा पडकर नाडी की गति क्षीण होती जा रही हो उस समय यह बहुत काम करता है। शरीर म शीघ्र ही गर्मी लाकर रोगी को चैतन्य कर देता है। कीमत—१ तोला २४) चार आना भर ६-) दो आना भर ३-) एक आना भर १।।-)

कस्तूरीभैरव रस—सन्निपात सावधि ज्वर और प्रलाप म विशष लाभकारी है। कीमत—१ नोला २२।।) चार आना भर ५।।-) दो आना भर २।।।-) एक आना भर १।=)।।

कामदुधा रस—रक्तपित्त अम्लपित्त भ्रम आदि पित्त विकारो म लाभकारी है। कीमत—१ तोला २।।=) आठ आना भर १।=) चार आना भर ।।≡)।।

कामदुधा रस (मोती-युक्त)—पित्तजन्य समस्त रोगो की यह श्रेष्ठ दवा है। रक्तपित्त अम्लपित्त भ्रम गर्भावस्था के वमन एव रक्तस्राव आदि म उपयोगी साबित होता है। कीमत—१ तोला १०) चार आना भर २।।-) दो आना भर १।-)

कामधेनु रस—इसके सेवन से मूत्र विकार आदि दोष दूर होकर शरीर म बल बुद्धि और पौरुष की वृद्धि होती है। कीमत—१ तोला ३) आठ आना भर १।।-) चार आना भर ।।।-)

कालकूट रस—सन्निपात ज्वर ग्रन्थिक सन्निपात (प्लग) और शीतज्वर म इसका उपयोग करना चाहिए। कीमत—१ तोला २॥=) आठ आना भर १।=) चार आना भर ।।≡)।।

कालारि रस—यह सब प्रकार के वात कफ और सन्निपात ज्वरो म लाभ करता है। कीमत—१ तोला १।।), आठ आना भर ।।।-) चार आना भर ।≡)

क्रव्याद रस—मदाग्निमूलक रोगो की श्रेष्ठ दवा है। यह दीपन और पाचन है। कीमत—१ तोला १।।।) आठ आना भर ।।।≡) चार आना भर ।।)

कृमिकुठार रस—पेट के कीडो को नष्ट करता है। कीमत—१ तोला १।।) आठ आना भर ।।।-) चार आना भर ।≡)

खजनिकारि रस—इसके सेवन से वात व्याधि दूर होती है और यह अशक्त अगो को सशक्त बनाता है। कीमत—१ तोला ५।।) आठ आना भर २।।।-) चार आना भर १।-) दो आना भर ।।।)

गगाधर रस—अतिसार और सग्रहणी की बीमारी म यह अच्छा काम करता है। कीमत—१ तोला १।=) आठ आना भर ।।।) चार आना भर ।=)।।

गधक रसायन—सब प्रकार के रक्त विकार अशुद्ध पारे के सेवन से उत्पन्न विकार खाज-खुजली फोडा फुन्सी चकत्ता आदि रक्त एव चम रोगो को दूर कर बल-बुद्धि और पाचकाग्नि बढान म उपयोगी है। कीमत—१ तोला १।।।=) आठ आना भर १) चार आना भर ।।)।।

गभपाल रस—गभ के कारण पैदा होनवाल वमन अरुचि आदि की अच्छी दवा है। कीमत—१ तोला ३) आठ आना भर १।।-) चार आना भर ।।।-)

ग्रहणी कपाट रस—पुरान अतिसार और सग्रहणी म इस रस का उपयोग शीघ्र लाभदायक है। इसके सेवन से आम के विकार मिटते है तथा अग्नि प्रदीप्त होती है। कीमत—१ तोला २।।।) आठ आना भर १।=) चार आना भर ।।।)

गुल्मकालानल रस—सब प्रकार के गुल्म विशेषकर वायुगोले की अच्छी दवा है। कीमत—१ तोला १।।=) आाठ आना भर ।।।=) चार आना भर ।≡)।।

चन्द्रकला रस—रक्तपित्त रक्तस्राव दाह वमन जीर्णज्वर एव अन्यान्य पित्त विकारो म लाभकारी है। कीमत—१ तोला ७।।) आठ आना भर ३।।।-) चार आना भर १।।।=) दो आना भर १)

चन्द्रकान्त रस—सब प्रकार के शिरोरोग की अच्छी दवा है। कीमत—१ तोला ५) आठ आना भर २।।-) चार आना भर १।-)

चन्द्रांशु रस—आयुर्वेद शास्त्र म इसके अनक गुण वर्णित है। यह स्त्रियो के लिए बहुत लाभदायक है। चिकित्सक की राय से व्यवहार करना चाहिए। कीमत—१ तोला ४।।।) आठ आना भर २।≡) चार आना भर १।)

चन्द्रशखर रस—जीणज्वर रक्तपित्त कास-श्वास आदि रोगो म लाभदायक है। बच्चो के तीव्र वात विकार और डब्बारोग म उपकारी है। कीमत—१ तोला १२) आठ आना भर ६-) चार आना भर ३-) दो आना भर १।।-)

चन्द्रामृत रस—खासी (कास) म उपयोगी है। जकाम और गल की खराबी से खासी होन पर मिश्री के साथ चूसन से शीघ्र फायदा करता है। कीमत—१ तोला १) आठ आना भर ।।-) चार आना भर ।-)

जलोदरारि रस—यह दवा जलोदर रोग म सचित जल को सुखाती तथा बाहर निकालती और फिर जल-सचय नही होन देती है। यह रेचक भी है। कीमत—१ तोला २।।) आठ आना भर १।-) चार आना भर ।।≡)

ज्वरमुरारि रस—ज्वर म अजीण अनपच और दस्त की कब्जियत होन पर इस दवा के उपयोग से उत्तम विरेचन होकर ज्वर उतर जाता है। कीमत—१ तोला ।।।≡), आठ आना भर ।।)।। चार आना भर ।)।।।

ज्वरसहार रस—सब प्रकार के ज्वरो म विशेषत वात कफ प्रधान ज्वरो म लाभ पहुँचाता है। नय ज्वर म इसका विशष उपयोग होता है। कीमत—१ तोला १।।।), आठ आना भर ।।।≡) चार आना भर ।।)

ज्वरशूलहर रस—यह इन्फ्लुएजा मलरिया एकतरा तिजारी चौथिया आदि विभिन्न प्रकार के बुखारो म लाभ दायक है। कीमत—१ तोला ४।।) आठ आना भर २।-) चार आना भर १≡)

ज्वराकुश रस—मलरिया बुखार की अत्यन्त प्रसिद्ध दवा है। कीमत—१ तोला ।।।=), आठ आना भर ।।) चार आना भर ।)।।

ज्वरारि अभ्र—पुराना ज्वर धातुगत ज्वर और विषमज्वर म इसके उपयोग से विशष लाभ होता है। कीमत—१ तोला १।।) आठ आना भर ।।।~) चार आना भर ।=)

तारकेश्वर रस—बार बार पेशाब लगन अथवा पेशाब के साथ विभिन्न दूषित पदार्थो के निकलन की अवस्था म रस रक्तादि धातुओ को बढाकर शरीर को पुष्ट करता है। कीमत—१ तोला ४।।) आठ आना भर २।~) चार आना भर १≡)

तालकेश्वर रस—नियमित रूप से कुछ दिन तक पथ्यपूवक इस दवा के सेवन से खाज-खुजली आदि कठिन-से कठिन चम रोग और रक्त रोग दूर होते हैं। कीमत—१ तोला २।) आठ आना भर १-) चार आना भर ।।=)

त्रिविक्रम रस—पथरी हो जान के कारण पेशाब करते समय तकलीफ होती है तथा गुर्दे म दद होन लगता है। इस हालत म यह बहुत लाभदायक है। कीमत—१ तोला ६।।) आठ आना भर ३।~) चार आना भर १।।≡) दो आना भर ।।।=)

त्रिभुवनकीर्ति रस—ज्वर सर्दी जुकाम इन्फ्लुएजा निमोनिया और सन्निपात म यह बहुत प्रचलित औषधि है। कीमत—१ तोला ।।।=) आठ आना भर ।।) चार आना भर ।)।।

दन्तोद्भवगदान्तक रस—बच्चो के दात निकलन के समय हरे-पीले और पतल दस्त होन दूध गिरन ज्यादा रोन चिल्लान पेट म दद अपच ज्वर आदि की शिकायत होती है जिनके लिय यह बहुत फायदेमन्द है। इसे खिलाना एव दात उठन की जगह पर लगाना चाहिए। कीमत—१ तोला १।) आठ आना भर ।।=) चार आना भर ।=)

दुजलजता रस—दूषित जल वायुवाल स्थान के जल पान से उत्पन्न रोगो म या नई जगह जान पर पानी लग जान से अथवा ऋतु परिवतन के समय उत्पन्न विकारो म इस रस का उपयोग किया जाता है। कीमत—१ तोला १।) आठ आना भर ।।≡) चार आना भर ।=)

नवज्वरेभसिंह रस—ज्वर की प्रारम्भिक अवस्था म इसका सवन करना चाहिए। कीमत—१ तोला २।।=) आठ आना भर १।=) चार आना भर ।।≡)।।

नष्टपुष्पान्तक रस—स्त्रियो के लिए उपयोगी है। गुण धम की जानकारी वैद्य से प्राप्त कर। कीमत—१ तोला ४।) आठ आना २≡), चार आना भर १=)

नागार्जुनाभ्र रस—अनिद्रा भ्रम आदि की सुप्रसिद्ध दवा है। कीमत—१ तोला ४।) आठ आना भर २≡) चार आना भर १=)

नाराच रस—यह तीव्र विरेचन है। गुल्म कब्जियत प्लीहा यकृत-वृद्धि आदि रोगो म यह दवा पेट साफ करती है। कीमत—१ तोला १।।=) आठ आना भर ।।।=) चार आना भर ।≡)।।

नित्यानन्द रस—यह श्लीपद (फीलपाव) की शास्त्रोक्त दवा है। कीमत—१ तोला १।) आठ आना भर ।।=) चार आना भर ।-)

नृपतिवल्लभ रस—मन्दाग्नि से पैदा होनवाल रोगो म बहुत उपयोगा है। कीमत—१ तोला १।।-) आठ आना भर ।।।-) चार आना भर ।-)।।

पञ्चवक्त्र रस—वात कफ प्रधान ज्वर जीणज्वर सन्निपात ज्वर इन्फ्लुएजा सर्वाङ्ग म दद तन्द्रा आलस्य आदि रोगो म इसस लाभ होता है। कीमत—१ तोला १।।) आठ आना भर ।।।~) चार आना भर ।≡)

पाशुपत रस—यह रस मन्दाग्नि शूल सग्रहणी अतिसार बवासीर अजीण आदि रोगो को दूर कर अग्नि दीप्त करता है और पाचन शक्ति बढाता है। कीमत—१ तोला १।) आठ आना भर ।।≡) चार आना भर ।=)

पाण्डुपञ्चानन रस—पाण्डु कामला यकृत तथा प्लीहा वृद्धि विकार म लाभदायक है। कीमत—१ तोला १।=), आठ आना भर ।।।) चार आना भर ।=)।।

पीयूषवल्ली रस—सग्रहणी अतिसार आमशूल आदि उदर विकारो म अत्यन्त गुणकारी है। कीमत—१ तोला २।=) आठ आना भर १।) चार आना भर ।।=)।।

पुष्पधन्वा रस—गुण धम की जानकारी वैद्य से प्राप्त कर। कीमत—१ तोला ६) आठ आना भर ३~) चार आना भर १।।~) दो आना भर ।।।~)

पूणचन्द्र रस—यह अत्यन्त बल वद्धक शास्त्रोक्त रसायन है। इसके नियमित सेवन से शरीर पुष्ट और स्नायु मण्डल मजबूत होते है। कीमत—१ तोला ६) आठ आना भर ३~) चार आना भर १।।~) दो आना भर ।।।~)

प्रतापलकेश्वर रस—प्रसव के बाद होनवाली खाँसी ज्वर अतिसार वायुविकार मन्दाग्नि आदि की बहुत अच्छी दवा है। कीमत—१ तोला २।।), आठ आना भर १।~), चार आना भर ।।≡)

प्रदरान्तक रस—चिकित्सक की सलाह के अनुसार प्रयोग करना चाहिए। कीमत—१ तोला ३।।=), आठ आना भर १।।।=), चार आना भर ।।।≡)।।

प्रदररिपु रस—चिकित्सक से जानकारी प्राप्त कर। कीमत—१ तोला १।), आठ आना भर ।।≡), चार आना भर ।=)

प्रवाल पचामृत—इससे उदर-रोग, अम्लपित्त, गुल्म, यकृत्, प्लीहा-वृद्धि, मन्दाग्नि, मूत्रविकार अश्मरी, अजीर्ण, श्वास आदि रोग दूर होते हैं। कीमत—१ तोला १४।।), चार आना भर ३।।≡), दो आना भर १।।।=), एक आना भर ।।।≡)।।

बड़वानल रस—यह अजीर्ण, मन्दाग्नि, गुल्म आदि के लिए उत्तम है। इसके सेवन से पाचन शक्ति भी ठीक होती है। कीमत—१ तोला २।=), आठ आना भर १।), चार आना भर ।।=)।।

बगेश्वर रस—इससे बल-पौरुष की वृद्धि होती है और असयम-जनित विभिन्न रोग दूर होते हैं। कीमत—१ तोला ८), आठ आना भर ४⁻), चार आना भर २⁻), दो आना भर १⁻)

बहुमूत्रान्तक रस—रक्त की कमी और दुर्बलता मे विशेष लाभदायक है। कीमत—१ तोला १२), आठ आना भर ६⁻), चार आना भर ३⁻), दो आना भर १।।⁻)

बालरोगान्तक रस—इससे बच्चो के सब तरह के ज्वर, आमदोष, पेट की खराबी से होनेवाले दस्त, खाँसी, सर्दी, जुकाम, पसली चलना तथा दाँत निकलने के समय के उपद्रव दूर होते है। कीमत—१ तोला ३), आठ आना भर १।।⁻), चार आना भर ।।।⁻)

बालार्क रस—यह बालको के वात और कफ के विकार तथा पतले दस्त, उल्टी, ज्वर आदि म फायदेमन्द है। कीमत—१ तोला १४), आठ आना भर ७⁻), चार आना भर ३।।⁻), दो आना भर १।।।⁻)

बेताल रस—विषमज्वर और घोर सन्निपात ज्वर मे इसका प्रयोग किया जाता है। कीमत—१ तोला २।।), आठ आना भर १।⁻), चार आना भर ।।≡)

बोलबद्ध रस—बवासीर, खाँसी, दस्त आदि किसी भी रोग मे शरीर के किसी भी भाग से खून क्यो न आता हो यह दवा उस मे लाभकारी है। कीमत—१ तोला १।।=), आठ आना भर ।।।=), चार आना भर ।≡)।।

भुवनेश्वर रस—सब प्रकार के आँव, पेचिश, अतिसार, सग्रहणी, मन्दाग्नि, म लाभकारी है। कीमत—१ तोला ।।⁻), आठ आना भर ।⁻)।।, चार आना भर ≡)।।

मन्मथ रस—यह शरीर की दुर्बलता नष्टकर बल-विक्रम को बढाता है। इसके विशेष गुण चिकित्सक से जानने चाहिए। कीमत—१ तोला १।।), आठ आना भर ।।।⁻), चार आना भर ।≡)

महागन्धक रस—इसके व्यवहार से अतिसार, पतले दस्त, सग्रहणी, बच्चो के हरे-पीले दस्त आदि रोग अच्छे होते हैं। यह पुराने आँव की अनुभूत दवा है। कीमत—१ तोला २), आठ आना भर १⁻), चार आना भर ।।⁻)

महाज्वराकुश रस—विषमज्वर, पारी से आनेवाला ज्वर, जीर्णज्वर आदि म इसका प्रयोग करना चाहिए। कीमत—१ तोला १), आठ आना भर ।।⁻), चार आना भर ।⁻)

महामृत्युञ्जय रस—कफ प्रधान एव कीटाणु-जनित मलेरिया ज्वरो म इसका प्रयोग किया जाता है। इसके प्रयोग से मल मूत्रावरोध दूर होता है और पसीना आकर बुखार उतर जाता है। ग्रन्थिक सन्निपात (प्लेग) म भी यह अति गुणकारी है। कीमत—१ तोला १।।=), आठ आना भर ।।।=), चार आना भर ।≡)।।

महावात-विध्वसन रस—कठिन वात-रोग, अगो मे आई हुई अशक्तता, ग्रन्थिक-सन्निपात (प्लेग), आमवात आदि रोगो की सफल महौषधि है। कीमत—१ तोला ६), आठ आना भर ३⁻), चार आना भर १।।⁻)

मुक्तापचामृत रस—यह कास-श्वास, पुराना बुखार, फेफडे की कमजोरी और क्षीणता-जन्य उपद्रवो म गुणकारी है। शरीर म कैल्शियम की कमी की पूर्ति इससे बडी उत्तमता से होती है। कीमत—१ तोला ३६), चार आना भर ६⁻), दो आना भर ४।।⁻), एक आना भर २।⁻)

मृत्युजय रस—बुखार म उपयोगी है। यह ज्वर को पकाकर दूर करता है। कीमत—१ तोला ।।।=), आठ आना भर ।।), चार आना भर ।)।।

योगेन्द्र रस—यह पुराने और जटिल वातविकारो की श्रेष्ठ दवा है। शरीर मे वायु की विकृति होने से अनिद्रा, बेचैनी, शरीर का वजन कम हो जाना, अगो की अशक्तता, घबडाहट आदि होने लगते है। इन सबो मे वैद्यनाथ योगेन्द्र रस का उपयोग अति लाभदायक होता है।

कीमत—१ तोला ५८) दो ग्राना भर ७।~) एक ग्राना भर ३॥=) ग्राध ग्राना भर १॥=)

रत्नगिरि रस—ज्वर एव ग्रम्लपित्त म गुणकारी है। कीमत—१ तोला १०) चार ग्राना भर २॥~) दो ग्राना भर १।~) एक ग्राना भर ॥=)

रसपीपरी—बाल रोगो की प्रसिद्ध दवा है। यह ज्वर खासी सर्दी जुकाम उल्टी पतल दस्त एव दात उठन की तकलीफ को दूरकर माता की तरह बच्चो की रक्षा करती है। कीमत—१ तोला २॥।) ग्राठ ग्राना भर १।=) चार ग्राना भर ॥।) दो ग्राना भर ।=)॥

रस माणिक्य—सब प्रकार के रक्त एव चम रोग नाश करन म प्रसिद्ध है। रक्तविकार म बहुत ही ग्रधिक फायदा करता है। कीमत—१ तोला २॥) ग्राठ ग्राना भर १।~) चार ग्राना भर ॥≡)

रसादि रस—ज्वर की गर्मी विशष बढ जान से प्यास दाह चक्कर वमन ग्रादि दोष जब उत्पन्न होते है तब इसका प्रयोग किया जाता है। यह पित्तशामक है। कीमत—१ तोला १॥=) ग्राठ ग्राना भर ॥।=) चार ग्राना भर ।≡)॥

रामबाण रस—बदहजमी म बहुत उपयोगी साबित होता है। यह मन्दाग्निमूलक रोगो की ग्रच्छी ग्रौषध है। कीमत—१ तोला १) ग्राठ ग्राना भर ॥~) चार ग्राना भर ।~)

लघुमालिनी वसन्त रस—सुवणमालिनी वसत के गुण ग्रल्पमात्रा म इसम है। कीमत—१ तोला ३), ग्राठ ग्राना भर १॥~) चार ग्राना भर ॥।~)

लक्ष्म्यानन्द रस—यह वातरोग भ्रम पाण्डु ग्ररुचि मन्दाग्नि ग्रहणी ज्वर तथा वातश्लष्म रोगो की उत्तम दवा है। कीमत—१ तोला २॥=) ग्राठ ग्राना भर १।=), चार ग्राना भर ॥≡)॥

लवगाभ्रक योग—सब प्रकार के ग्रतिसार सग्रहणी ग्रम्लपित्त ग्रादि रोगो म फायदेमन्द है। कीमत—१ तोला १=) ग्राठ ग्राना भर ॥=) चार ग्राना भर ।~)॥

लक्ष्मीनारायण रस—बालको का कमेडा (हाथ-पैरो की एठन) दस्त बालरोग ज्वर तथा वदनायुक्त कठिन रोगो की श्रेष्ठ दवा है। कीमत—१ तोला ३।) ग्राठ ग्राना भर १॥≡) चार ग्राना भर ॥।=)

लक्ष्मीविलास रस (रसेन्द्र० कास०)—सर्दी खाँसी श्वास जुकाम ग्रादि म विशष लाभकारी है। कीमत—१ तोला ३॥।=) ग्राठ ग्राना भर २) चार ग्राना भर १)॥

लक्ष्मीविलास रस (नारदीय)—निमोनिया ग्रौर मियादी बुखार म जिसे दोषी बुखार भी कहा जाता है इसके प्रयोग से ज्वर पाचन होकर मियाद के ग्रनुसार उतर जाता है। सर्दी जुकाम हरारत इन्फ्लुएजा ग्रादि म भी फायदा करता है। कीमत—१ तोला १॥=) ग्राठ ग्राना भर ॥।=) चार ग्राना भर ।≡)॥

लीलाविलास रस—यह प्यास वमन पेट ग्रौर छाती की जलन ग्रौर नत्र दाह के लिए उत्तम दवा है। कीमत—१ तोला ४) ग्राठ ग्राना भर २~) चार ग्राना भर १~)

लोकनाथ रस—इसस पुरान खासी-बुखार ग्रतिसार सग्रहणी ग्रादि म फायदा होता है। कीमत—१ तोला २।) ग्राठ ग्राना भर १≡) चार ग्राना भर ॥=)

लोकनाथ रस (बृ०)—यकृत ग्रौर तिल्ली के विकारो को नष्ट करन म उपयोगी है। कीमत—१ तोला २॥) ग्राठ ग्राना भर १।~) चार ग्राना भर ॥=)

लौहरसायन—यह पाण्डु मन्दाग्नि श्वास कास वात कफज य रोग सग्रहणी बवासीर ग्रादि को नष्ट कर शरीर को हृष्ट पुष्ट बनाता है। कीमत—१ तोला १३) ग्राठ ग्राना भर ६॥~) चार ग्राना भर १॥≡)

वातकुलान्तक रस—सभी प्रकार के वातरोगो की श्रेष्ठ दवा है। कीमत—१ तोला २०) चार ग्राना भर ५~) दो ग्राना भर २॥~) एक ग्राना भर १।~)

वातरक्तान्तक रस—वातरक्त पुराना या नया जैसा भी हो सब ग्रवस्थाग्रो म इसस लाभ होता है। इसके ग्रतिरिक्त रक्तविकार खाज-खुजली फोड फुन्सी ग्रादि रोगो को भी यह दूर करता है। कीमत—१ तोला २॥) ग्राठ ग्राना भर १।~) चार ग्राना भर ॥≡)

वातगजाकुश रस—मोट-ताज ग्रादमियो को होनेवाले वात रोगो के लिए यह बहुत गुणदायक दवा है। कीमत—१ तोला २।) ग्राठ ग्राना भर १≡) चार ग्राना भर ॥=)

वातविध्वसन रस—इसके सेवन से सन्निपात वायु ग्रौर कफ के विकार सर्दी लग जाने से होन वाले विकार तथा मन्दाग्नि श्वास कास ग्रादि रोग दूर होते है। कीमत—१ तोला २॥) ग्राठ ग्राना भर १।~), चार ग्राना भर ॥≡)

वातारि रस—सभी प्रकार के वात विकारो म इसका उपयोग करना चाहिए। कीमत—१ तोला १।) आठ आना भर ।।≡) चार आना भर ।=)

विद्याधराभ्र रस—इसके सेवन से परिणामशूल (भोजन करने के बाद होनवाला दद) पेट का साधारण दद पुरानी मन्दाग्नि अम्लपित्त सग्रहणी आदि रोग आराम होते है। कीमत—१ तोला २) आठ आना भर १-) चार आना भर ।।-)

विश्वतापहरण रस—यह साधारण ज्वर नवीन ज्वर वातज्वर और कब्जियत के कारण होनवाले ज्वर तथा उदर रोगो म विरेचन के लिए उत्तम है। कीमत—१ तोला २) आठ आना भर १-) चार आना भर ।।-)

शशिशखर रस—इसके विषय म जानकारी वैद्य से प्राप्त कर। कीमत—१ तोला ४।।) आठ आना भर २।-) चार आना भर १≡)

शखोदर रस—यह अतिसार आमातिसार (दस्तो के साथ आव आन म) तथा आमजनित शूल म बहुत फायदा करता है। कीमत—१ तोला ३।।) आठ आना भर १।।।-) चार आना भर ।।।≡)

शिर शूलाविवज्र रस—सब प्रकार के सिर-दद की निर्दोष और लाभकारी दवा है। किसी भी कारण से सिर-दद होता हो और किसी दवा से लाभ नही हो तो इसका प्रयोग करना चाहिए। कीमत—१ तोला १।) आठ आना भर ।।≡) चार आना भर ।=)

शीतभजी रस—इसके सेवन से जाडा देकर आनवाला तथा पारी का मलरिया बुखार शीघ्र नष्ट हो जाता है। कीमत—१ तोला २।।) आठ आना भर १।-) चार आना भर ।।≡)

शूलकुठार रस—वायु के कारण होनवाल अजीण अथवा अन्य किसी कारण से उत्पन्न पेट दद के लिए यह उत्तम दवा है। कीमत—१ तोला २) आठ आना भर १-) चार आना भर ।।-)

शूलगजकेशरी रस—उदरशूल अनक तरह के होते है। यह दवा सभी म गुणकारी है। पेट दद के रोगी इससे जरूर फायदा उठाव। कीमत—१ तोला ४।।) आठ आना भर २।-) चार आना भर १≡)

शृगाराभ्र रस—सूखी और कफयुक्त खाँसी म यह समान रूप से गुणकारी है। कीमत—१ तोला १।।=), आठ आना भर ।।।=) चार आना भर ।≡)।।

श्वासकुठार रस—यह दवा खान और सूंघने दोनो, काम म आती है। खासी श्वास म खान से तत्काल लाभ होता है। कीमत—१ तोला १।) आठ आना भर ।।≡), चार आना भर ।=)

श्लेष्मकालानल रस—सब प्रकार के कफ जन्य रोगो की उत्तम दवा है। कीमत—१ तोला १।=) आठ आना भर ।।।) चार आना भर ।=)।।

सन्निपातभैरव रस—सन्निपात के तीव्र वात विकारो म विशष लाभदायक है। कीमत—१ तोला १।।=), आठ आना भर ।।।=) चार आना भर ।≡)।।

सर्वतोभद्र रस—यह अजीण आमदोष हैजा अरुचि मूत्रकृच्छ सग्रहणी वमन अम्लपित्त आदि म लाभकारी है। कीमत—१ तोला ३) आठ आना भर १।।-), चार आना भर ।।।-)

स्मृतिसागर रस—स्मरण शक्ति को बढाता और ठीक रखता है। कीमत—१ तोला ३।) आठ आना भर १।।≡) चार आना भर ।।।=)

सिद्धप्राणेश्वर रस—बुखार के साथ दस्त होन पर इससे विशष फायदा होता है। कीमत—१ तोला १।) आठ आना भर ।।≡) चार आना भर ।=)

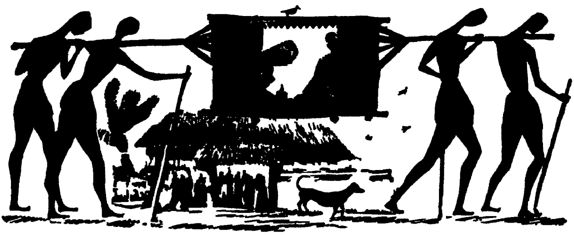
सुधानिधि रस (रक्तपित्त)—रक्तपित्त आदि के लिए रक्तावरोध दवा है। कीमत—१ तोला ३) आठ आना भर १।।-) चार आना भर ।।।-)

सुधानिधि रस (शोथ)—सब प्रकार के शोथ रोगो के लिए अति उपयोगी औषध है। कीमत—१ तोला १।।।), आठ आना भर ।।।≡) चार आना भर ।।)

सुवण भूपति रस—यह आमवात उरुस्तम्भ कम्पवात, कमर का दद गुल्म शूल सग्रहणी उदर रोग पथरी कब्ज विष विकार आदि रोगो म उपयोगी है। कीमत—१ तोला ५०) दो आना भर ६।-) एक आना भर ३≡), आध आना भर १।।=)

श्री बैद्यनाथ
आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

नववधू का शुभागमन .....



विवाह—अनुष्ठान का भारतीय समाज मे विशेष महत्व है। नववधू के आगमन के समय पारिवारिक जन एव अडौसी-पडौसियो के उल्लास-दीप्त चेहरो से बिखरता है—एक अवर्णनीय आनन्द। सभी हो उठते हैं आनन्द-विभोर। घर में बहू आई है, भावी जननी। छोटो की श्रद्धास्पद, बडो की आशीर्वाद-अधिकारिणी।

स्नेह, आदर और सम्मान में विभोर वधू अपना नया घर अपनाती है। किन्तु, इस उत्साह का शताश भी नही प्राप्त होता है स्वास्थ्य-रक्षा को। स्वास्थ्य के प्रति रहती है हमारी शोचनीय उपेक्षा। प्राय देखा जाता है कि स्त्रियाँ नाना रोगो से ग्रस्त हो उठती हैं। हाथ, पाँव और तलुवो में जलन, पेडू, पेट तथा सिर में दर्द, पित्तदाह आदि व्याधियाँ उनके स्वास्थ्य पर अपना बुरा प्रभाव डालने लगती हैं। शरीर की शक्ति घट जाती है और चेहरे की कान्ति क्षीण होने लगती है। उपर्युक्त अवस्थाओ मे अत्यन्त लाभदायक होती है -----

बैद्यनाथ
अशोकारिष्ट

P 20

आयुर्वेदीय एवं पेटेन्ट
औषधियों के सबसे बड़े निर्माता

श्री **बैद्यनाथ**
आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि॰
कलकत्ता पटना झाँसी नागपुर

आयुर्वेदीय औषधों के निर्माण, गुणधर्म, उपयोग आदि का

विशद विवेचनपूर्ण महान ग्रन्थ

आयुर्वेद सारसंग्रह

(तृतीय संस्करण)

सम्पूर्ण आयुर्वेद-शास्त्र का मथन कर यह महान् ग्रन्थ—आयुर्वेद सार-संग्रह—अनेक वर्षों के घोर परिश्रम से तैयार किया गया है। इसमें रोगों के अवस्थानुसार औषधो का गुण-धर्म और प्रयोग तथा औषध-निर्माण, औषध-अनुपान, पथ्यापथ्य आदि का पूरा विवरण सरल भाषा में समझा कर लिखा गया है। आयुर्वेद के महर्षियो द्वारा अतिप्राचीन काल से जिन प्रसिद्ध योगो का प्रयोग होता आया है और जिन प्रयोगो का चिकित्सको द्वारा सफल परीक्षण असख्य बार कर लिया जा चुका है, ऐसे ही सफल प्रयोगो का इस ग्रन्थ में सग्रह किया गया है। इस ग्रन्थ मे परिभाषा प्रकरण के अन्तर्गत औषध-निर्माण परिभाषा, मान-परिभाषा, साकेतिक परिभाषा, रासायनिक परिभाषा, यन्त्र-पुट-खरल परिभाषा, औषध-प्रयोग विधान, पथ्यापथ्य, पारद-गधक-हिंगुल परिभाषा, शोधन-मारण प्रकरण के अन्तर्गत धातुओ का शोधन, भस्म-निर्माण और उनका गुण-धर्म विवेचन, कूपीपक्व रसायन, रस-रसायन, गुटिका-वटी, पर्पटी, लौह मण्डूर, गुग्गुलु, अवलेह-पाक, चूर्ण, आसवारिष्ट, तैल, कषाय (क्वाथ), मल्हम आदि प्रकरणो में विविध प्रकार की औषधियो की निर्माण, विधि-प्रयोग, गुण-धर्म, पथ्यापथ्य आदि सभी वैद्योपयोगी बातो का सविस्तार वर्णन किया गया है। इसके साथ ही रस-रसायन, अर्क आदि बनाने के यन्त्रो के चित्र भी दिए गये है, जिनसे औषधि-निर्माताओ को काफी सुविधा होगी। राष्ट्रभाषा हिन्दी में इस ढग की यह एक ही पुस्तक है। इस पुस्तक की लोकप्रियता का सब से बडा प्रमाण यह है कि कुछ ही वर्षों में इसके तीन सस्करण निकल चुके हैं। सर्वसाधारण तथा चिकित्सकमात्र के लिए सर्वाधिक उपयोगी ११०० पृष्ठ के इस विशाल ग्रन्थ का मूल्य मात्र—७)

प्रकाशक

वैद्यनाथ



ओज·बलदायक
आयुर्वेदीय
ओषधियाँ
बैद्यनाथ
अभ्रक भस्म सहस्रपुटी
बैद्यनाथ
लौह भस्म सहस्रपुटी
बैद्यनाथ
मुक्ता (मोती) भस्म
बैद्यनाथ
स्वर्ण भस्म
बैद्यनाथ
वैक्रान्त भस्म
बैद्यनाथ
प्रवाल भस्म
TRADE MARK

सचित्र

वर्ष १०   कलकत्ता, अप्रैल, १९५८   अंक १०



आयुर्वेद में अनुसन्धान की आवश्यकता

सरकार इस बात के लिए बहुत उत्सुक है कि औषधि के मामले में भारत स्वावलम्बी हो। लेकिन यह कहना गलत है कि देशी चिकित्सा प्रणाली के साथ सरकार का व्यवहार विमाता जैसा हो रहा है। सभी चिकित्सा प्रणालियों को सहायता देने के लिए सरकार उत्सुक है। चिकित्सा के विषय पर खुले दिल से विचार कर सब से अच्छी वस्तु ही हमें ग्रहण करनी चाहिए। आयुर्वेद में अनुसन्धान कर उसकी उत्कृष्टता को सिद्ध करना चाहिए। अनुसन्धान के बाद आयुर्वेद की जिन औषधियों को अच्छा पाया जायगा, उनका सरकार व्यापक उपयोग करेगी।

श्री डी० पी० करमरकर
केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री

प्रकाशक
श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०


गर्मी के दिनों में
दिल और दिमाग की
तरोताज़गी के लिए
बैद्यनाथ
शरबत
व्यवहार कीजिये। गर्मी के कुप्रभाव से
बचानेवाली गुणकारी जड़ी-बूटियों द्वारा यह
तैयार किया गया है। इस शरबत का एक ही
गिलास आपके दाह प्यास और बेचैनी को दूर
करने के लिए काफी है। इसके
नियमित सेवन से आपके
शरीर की रक्षा और लूसे
बचाव होता है।
श्री बैद्यनाथ
आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

सचित्र आयुर्वेद के ग्राहकों से निवेदन

सचित्र आयुर्वेद आगामी जन १९५८ म अपने जीवन के १० वष पूरे कर ११ व वष म पदापण करने जा रहा है। इन १० वर्षों के दौरान म सचित्र आयुर्वेद ने भारत की प्राचीन चिकित्सा-पद्धति के पुनरुद्धार और विकास के प्रयत्नो म उपयुक्त अश ग्रहण करने के साथ साथ वैद्य समाज की सेवा पूरी ईमानदारी और सचाई के साथ की है। अपनी ईमानदारी और सचाई के कारण ही विरोधियो द्वारा किय गय मानहानि मामल म एतिहासिक विजय प्राप्त कर दूध का-दूध और पानी का पानी की तरह मिथ्या और सत्य को सिद्ध कर दिया है। चूकि इस मामल म सचित्र आयुर्वेद के जीवन मरण का प्रश्न था अतएव इसके सचालको को एक लाख रुपय की धनराशि व्यय के साथ साथ शारीरिक और मानसिक परिश्रम भी अत्यधिक करना पड़ा। एसी भीषण परिस्थिति म भी सचित्र आयुर्वेद एक सच्चे और ईमानदार सेवाव्रती के रूप म आयुर्वेद की सेवा बराबर करते हुए अपनी सच्ची सेवा म सफल रहा। सचित्र आयुर्वेद के प्रमी ग्राहको को हम विश्वास दिलाना चाहते है कि इनके सहयोग से आगामी वर्षो म भी आयुर्वेद विज्ञान के विकास के साथ वैद्य-समाज को भी समुन्नत बनान के लिए सचित्र आयुर्वेद बराबर प्रयत्नशील रहगा। अतएव वैद्यबन्धुओ से हमारा अनुरोध है कि व सचित्र आयुर्वेद का स्थायी ग्राहक बन कर नियमित रूप से अध्ययन करके अपन ज्ञान को अधिकाधिक विकसित करते रह।

सचित्र आयुर्वे द का १० वा अक आपके हाथ म है। आगामी मई और जून अक मिल जान के बाद चालू वष का जिनका चन्दा जुलाई १९५ से जून १९५८ तक के लिए जमा था पूरा हो जायगा। अतएव जिन ग्राहको का चन्दा जून १९५८ म पूरा हो जाय उनसे प्रायना है कि व अभी से नोट कर ल और आगामी जून ५८ के अन्तिम सप्ताह तक ५) मनाआडर से भज द।

आयुर्वेद-यूनानी समन्वयांक

सचित्र आयुर्वेद के अब तक प्रकाशित महत्वपूण विशषाक—स्वाथ्य अक आयुर्वेद शास्त्रचर्चा परिषद अक राजयक्ष्मा अक और आयुर्वेद-योजना अक आदि विशषाक अति ख्याति प्राप्त कर चुके है। जिन्होन एक बार उपयक्त विशषाको म से एक भी विशषाक देखा-पढ़ा व सदा के लिए सचित्र आयुर्वेद के प्रमी बन गय। प्रस्तुत विशषाक उक्त समस्त विशषाको से विशष व्यावहारिक एव वैद्य हकीमोपयोगी होगा। इस विशषाक म आयुर्वेद और यूनानी के मूलभूत सिद्धान्त रोग निदान चिकित्सा औषध निर्माण गुण-धम और उपयोग आदि के विषय म भारत के ख्याति-प्राप्त विद्वान वद्य हकीमो के विद्वत्तापूण विवचनात्मक लखो के अतिरिक्त अनक आनुभविक औषधो के उपयोग जो वैद्य हकीम समान रूप से चिकित्सा काय म लाते है वर्णित रहग तथा अत्युपयोगी जडी बूटियो के सादे तथा रगीन चित्रो से सुसज्जित यह विशषाक होगा।

इस विशषाक की विषय सूची माच अक म प्रकाशित हो चुकी है और पृथक से भी छपा कर भारत के अनेक लब्धप्रतिष्ठ विद्वान वैद्य हकीमो के पास भजी गयी है। विषय सूची के अनुसार शीघ्रातिशीघ्र लख भजन की स्वीकृति सूचना अधिकारी वैद्य हकीमो द्वारा प्राप्त हो रही है। कहना न होगा कि यह विशषाक भारतीय चिकित्सा क्षेत्र म एक सौहादपूण सामञ्जस्य के साथ आयुर्वेद को सर्वांगपूण चिकित्सा बना कर आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा के आसन पर बिठान म अवश्य सफल होगा।

भारतीय चिकित्सा पद्धति के प्रसार प्रचार के हितैषी वैद्य-हकीमो से सविनय निवेदन है कि ऐसे महत्त्वपूर्ण विशेषाक की एक-एक प्रति अपने पास सुरक्षित रखने के लिए वे सचित्र आयुर्वेद के अभी से ग्राहक बन जायें क्योंकि सचित्र आयुर्वेद के ग्राहको को यह विशेषाक मुफ्त दिया जायगा।

—व्यवस्थापक

आयुर्वेदीय व्याधि-विज्ञान

(पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध)

किसी रोग की चिकित्सा के पूर्व रोग का निदान परमावश्यक है। रोग के सम्यक् निर्णय के बिना कदापि रोगी की सफल चिकित्सा नही हो सकती। इसलिये व्याधि-विज्ञान (रोग-निदान) आयुर्वेद का एक प्रधान विषय है। इस 'आयुर्वेदीय व्याधि विज्ञान' की रचना आयुर्वेद-मार्तण्ड वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य ने की है और व्याधि विज्ञान के साधनो और व्याधियो के सम्बन्ध मे सभी ज्ञातव्य बातो का बडे सुन्दर और सरल ढग से विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थ का पूर्वार्द्ध तो कई वर्ष पहले ही छप चुका था और सर्वत्र उसका यथेष्ठ समादर हुआ था, किन्तु इस ग्रन्थ के उत्तरार्द्ध के लिये वैद्य-समाज की ओर से जबर्दस्त माग की जा रही थी।

अब 'आयुर्वेदीय व्याधि-विज्ञान' का उत्तरार्द्ध खण्ड भी प्रकाशित हो गया है और इस प्रकार वैद्य-समाज की एक जबर्दस्त माग की पूर्ति हो गयी है। इमके प्रत्येक अध्याय मे विविध रोगो, यथा—ज्वर, महास्रोत रोग, उरोगत रोग, रक्तपित्त, पाण्डु, शोथ, व्रण, विसर्प, वृद्धि, भग्न-निदान, गलगण्ड, गण्डमाला, कुष्ठ आदि के लक्षण, निदान, चिकित्सा आदि पर सरल भाषा मे पाण्डित्यपूर्ण विवेचन किया गया है। आयुर्वेदीय अध्यापको और विद्यार्थियो के साथ-साथ वैद्यो के लिये भी यह ग्रन्थ अत्यन्त आवश्यक है।

मूल्य :—पूर्वार्द्ध का २॥) और उत्तरार्द्ध का ६), डाक-खर्च पृथक्

अपनी प्रति आज ही सुरक्षित करा लें

प्रकाशक

आयुर्वेदीय एवं पेटेन्ट औषधियों के सबसे बड़े निर्माता

श्री बैद्यनाथ
आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

आयुर्वेदीय औषधों के निर्माण, गुणधर्म, उपयोग आदि पर

विशद विवेचनपूर्ण महान ग्रन्थ

आयुर्वेद सारसंग्रह

(तृतीय संस्करण)

सम्पूर्ण आयुर्वेद-शास्त्र का मथन कर यह महान् ग्रन्थ—**आयुर्वेद सार-संग्रह**—अनेक वर्षो के घोर परिश्रम से तैयार किया गया है। इसमे रोगो के अवस्थानुसार औषधो का गुण-धर्म और प्रयोग तथा औषध-निर्माण, औषध-अनुपान, पथ्यापथ्य आदि का पूरा विवरण सरल भाषा मे समझा कर लिखा गया है। आयुर्वेद के महर्षियो द्वारा अतिप्राचीन काल से जिन प्रसिद्ध योगो का प्रयोग होता आया है और जिन प्रयोगो का चिकित्सको द्वारा सफल परीक्षण असख्य बार कर लिया जा चुका है, ऐसे ही सफल प्रयोगो का इस ग्रन्थ मे सग्रह किया गया है। इस ग्रन्थ मे परिभाषा प्रकरण के अन्तर्गत औषध-निर्माण परिभाषा, मान-परिभाषा, साकेतिक परिभाषा, रासायनिक परिभाषा, यन्त्र-पुट-खरल परिभाषा, औषध-प्रयोग विधान, पथ्यापथ्य, पारद-गधक-हिगुल परिभाषा, शोधन-मारण प्रकरण के अन्तर्गत धातुओ का शोधन, भस्म-निर्माण और उनका गुण-धर्म विवेचन, कूपीपक्व रसायन, रस-रसायन, गुटिका-वटी, पर्पटी, लौह मण्डूर, गुग्गुलु, अवलेह-पाक, चूर्ण, आसवारिष्ट, तैल, कषाय (क्वाथ), मल्हम आदि प्रकरणो मे विविध प्रकार की औषधियो की निर्माण, विधि-प्रयोग, गुण-धर्म, पथ्यापथ्य आदि सभी वैद्योपयोगी बातो का सविस्तार वर्णन किया गया है। इसके साथ ही रस-रसायन, अर्क आदि बनाने के यन्त्रो के चित्र भी दिए गये है, जिनसे औषधि-निर्माताओ को काफी सुविधा होगी। राष्ट्रभाषा हिन्दी मे इस ढग की यह एक ही पुस्तक है। इस पुस्तक की लोकप्रियता का सब से बडा प्रमाण यह है कि कुछ ही वर्षो मे इसके तीन सस्करण निकल चुके है। सर्वसाधारण तथा चिकित्सकमात्र के लिए सर्वाधिक उपयोगी ११०० पृष्ठ के इस विशाल ग्रन्थ का मूल्य मात्र—७)

प्रकाशक

श्री बैद्यनाथ

आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

सम्पादक—प० कामेश्वर शर्मा 'कमल'

विषय-सूची

वार्षिक मूल्य ५)

एक प्रति ।।) (५० नये पैसे)



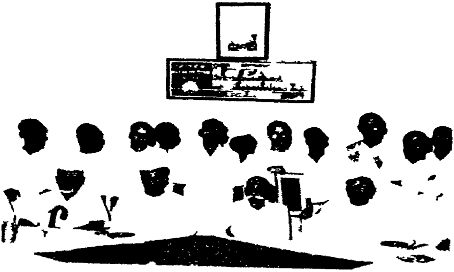
श्री बद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्रा० लि० के पटना निर्माणकेन्द्र में राष्ट्रपति चिकित्सक पद्मविभूषण आचार्य
प० सत्यनारायण शास्त्री का भवन के मैनेजिंग डायरेक्टर प० रामदयालजी जोशी स्वागत कर रहे हैं।
बायी ओर बिहार के स्वास्थ्य मंत्री श्री वीरचन्द पटेल बैठे दिख रहे हैं।



पद्मविभूषण प० सत्यनारायण शास्त्री स्वागत का उत्तर दे रहे है



आचाय प० म यनारायण शास्त्री का प० रामन्याल्जा जाग्ी अभिनन्दनपत्र समर्पित करत न्खायी द ग्ह ह ।



श्रा बैद्यनाथ आयवद भवन प्राइवट लि० क पटना निर्माण केद्र म पद्मविभषण आचाय प० सत्यनारायण शास्त्री क स्वागत समारोह क अवसर पर उपस्थित महानभावो का समूहचित्र ।

आयुर्वेद-जगत् में सर्वजन-समादृत और सर्वाधिक बिकी होनेवाला आयुर्वेद-विज्ञान का प्रमुख-मासिक पत्र

सचित्र आयुर्वेद

आयुःकामयमानेन धर्मार्थसुखसाधनम् । आयुर्वेदोपदेशेषु विधेयः परमादरः ॥

वर्ष १०	कलकत्ता, अप्रैल, १९५८	अंक १०

सचित्र आयुर्वेद का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण, उपयोगी और सामयिक विशेषांक

आयुर्वेद-यूनानी-समन्वयांक

सचित्र आयुर्वेद का प्रारम्भ से ही यह मूल उद्देश्य रहा है कि आयुर्वेद स्वतन्त्र भारत की राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति के रूप म जनता-जनार्दन की सेवा करते हुए राष्ट्रीय स्वास्थ्य निर्माण मे अधिकाधिक भाग ले। इसी उद्देश्य से समन्वय का सिद्धान्त अपनाते हुए—आयुर्वेद म कालक्रमानुसार जहा जो कुछ त्रुटिया हो उसे अन्य चिकित्सा पद्धतियो से लेकर उसे आयुर्वेदानुरूप बना कर आयुर्वेद म आत्मसात करके उस अग की पूर्ति करने का प्रयत्न यह बराबर करता रहा। अबतक के अनुभव से यह सिद्ध हो चुका है कि यूनानी चिकित्सा-पद्धति से इसका समन्वय सरलतया हो सकता है।

वास्तव मे आयुर्वेद-यूनानी एक दूसरे से पृथक् नही है—इस तथ्य को सभी स्वीकार करते है। वैद्य-हकीम भी चिकित्सा कार्य मे दोनो से भरपूर सहयोग लेते है। अन्तर सिर्फ इतना है कि यूनानी चिकित्सा-शास्त्र फारसी, अरबी आदि भाषाओ मे है तथा आयुर्वेद सस्कृत वाड्मय म। किन्तु अब समय आया है कि इस भाषामात्र के अन्तर को दूर कर राष्ट्रभाषा हिन्दी म हम वैद्य-हकीम एक दूसरे के सिद्धान्तो को समझ तथा पारस्परिक सद्भावना और सौहार्द से युक्त हो कर मात्र भारतीय चिकित्सा-पद्धति की उन्नति और उसके विकास, प्रसार प्रचार म दत्तचित्त हो।

इसी उद्देश्य को ले कर 'सचित्र आयुर्वेद' का विशेषाक—**"आयुर्वेद-यूनानी-समन्वयांक"** निकालने का विचार किया गया है। हमे प्रसन्नता है कि इस विशेषाक की घोषणा करते ही भारत के सुप्रसिद्ध वैद्य-हकीमो ने एक स्वर से इस विशेषाक को सामयिक बताते हुए अपने-अपने लेख भेजने के स्वीकृति-पत्र भेजने प्रारम्भ कर दिये है। विशेषाक प्रकाशित होने पर **'सचित्र आयुर्वेद' के ग्राहको की सेवा में शीघ्र प्रेषित कर दिया जायगा।**

—**सम्पादक**

सम्पादकीय

आयुर्वेद-छात्रों की हडताल

लखनऊ के राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय के छात्रो ने विगत २५ फरवरी से हडताल कर रखी है, परिणामत तब से ही विद्यालय बन्द पडा है। इस आयुर्वेद महाविद्यालय में छात्रो की हडताल का यह पहला अवसर नही है। पहले भी कई बार हडताल हो चुकी है और प्राय प्रतिवर्ष होती है। यह दु खद स्थिति है। इस बार और पिछली बार भी जिन मागो को लेकर छात्रो ने हडताल की है, उनको देखते हुए यह बहुत आवश्यक हो गया है कि वैद्य जगत् के उत्तरदायी जन आयुर्वेदीय शिक्षण और आयुर्वेद के भविष्य पर गभीरता के साथ विचार करे।

ऐसी हडतालो के प्रत्यक्ष कारण कुछ भी हो, उनके अन्तर मे कुछ मुख्य बाते हुआ करती है छात्रो की अनुशासनहीनता, अधिकारियो की उपेक्षावृत्ति तथा विद्यालय का कुप्रबन्ध, और किसी उद्देश्य विशेष को लेकर किसी के द्वारा छात्रो को भ्रान्त करके उभाडना। लखनऊ के विद्यालय की इस हडताल मे यह तीनो बाते घुलीमिली हो सकती है। छात्रो मे अनुशासनप्रियता का घोर अभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। विद्यालय का प्रबन्ध खराब न भी हो, परन्तु उसकी स्थिति निश्चय ही त्रिशकु के समान है। इतने वर्ष चलते रहने के अनन्तर भी राज्य ने इसके स्थायी होने की घोषणा नही की है। जिस विद्यालय की योजना ही स्थायी नही है, उसके प्रति छात्रो और अन्य लोगो में सुरुचि जाग्रत हो नही सकती। ऐसा जान पडता है कि जानबूझ कर ऐसी परिस्थितियो को उत्पन्न किया जाता है जिनसे छात्रो मे असन्तोष बना रहे, उनमे आयुर्वेद के शिक्षण के प्रति रुचि का अभाव प्रकट होता रहे और विद्यालय की उपादेयता क्षीणतर बनती जावे। फिर राज्य को विवशता दिखाकर, विद्यालय के विकास का प्रश्न तो दूर की बात है, उसको समाप्त कर देने का निश्चय करने तक की सुविधा मिल जावे।

पहिले ऐसा क्रम था कि मेडिकल कालिज में ही प्रारभ के तीन वर्षों तक छात्रो को पाश्चात्य विज्ञान के विषयो का अध्ययन कराया जाता था, फिर अन्तिम दो वर्षों मे आयुर्वेद पढाया जाता था। प्रारभिक तीन वर्ष तक पाश्चात्य विज्ञान पढने वाले छात्रो के सामने जब आयुर्वेद पढने का प्रश्न आता था तो वे बिदक जाया करते थे। एक-दो बार तो हडताल इसी प्रश्न को लेकर हुई और छात्रो ने तीन वर्ष बाद आयुर्वेद पढने से इन्कार करके अपने को आगामी दो वर्षों मे एलोपैथी पढाकर ही एम० बी० बी० एस० बना देने का आग्रह किया। इस स्थिति के निवारण के लिए उत्तर प्रदेश के तत्कालीन स्वास्थ्य मन्त्री श्री चन्द्रभानुजी गुप्त ने आयुर्वेद के लिए पृथक ही विद्यालय की व्यवस्था कर दी थी। लखनऊ का राजकीय विद्यालय उसी का परिणाम है। पृथक विद्यालय बन जाने पर भी छात्रो की मनोवृत्ति फिर वैसी ही दिखाई देती है। उसी मनोवृत्ति का परिणाम यह हडताल है। यद्यपि छात्रो के लिए स्थिति पहले जैसी नही है। पृथक विद्यालय मे पाठ्यक्रम भी सुधरा हुआ है। जहा तक हमे पता है, लखनऊ का आयुर्वेद विद्यालय बहुत अच्छे स्तर का विद्यालय है। फिर भी उसमे जो छात्र वतमान है, उन पर उन पुराने छात्रो की परम्परा की छाया जान पडती है, जिन्होने गत बार आयुर्वेद मे दीक्षित होने से इनकार करके, अपने को डाक्टर बनाने का आग्रह लिया था। यह दु खान्त और अकल्याणकर वृत्ति है।

हमे खेद है कि आयुर्वेद विद्यालय के छात्रगण क्योकर ऐसी दुष्ट प्रवृत्तियो के शिकार हो जाया करते है। जिन मागो को लेकर छात्रो ने हडताल की है, वे निश्चय ही आद्यन्त विचारपूर्ण नही है। जहा तक ज्ञानार्जन के साधनो की सुविधा और विकास का प्रश्न है, या छात्रो के उचित अधिकारो की बात है, हम छात्रो की तत्सम्बन्धित मागो का समर्थन करते है। परन्तु छात्रो की उन मागो को कैसे न्यायोचित बताया जा सकता है जिनके द्वारा छात्र यह चाहते है कि पाठ्यक्रम मे आयुर्वेद के केवल वे ही विषय रखे जावे जिनको वे पढना चाहे। यह एक अजीब-सी बात है कि छात्र चाहते है कि जिन आयुर्वेदीय विषयो को छात्रगण अनुपयुक्त समझते है वे सब के सब पाठ्यक्रम से निकाल दिये जावे। अपनी मागो के अन्त मे छात्रो ने एक ऐसी बात कही है, जिससे सम्पूर्ण आयुर्वेद-

जगत् को दुख तो होगा ही, वह छात्रो की विवेकशीलता पर भी सन्देह उत्पन्न करती है। छात्रो का कहना है कि सरकार यदि उनकी मागे स्वीकार न कर सके तो इस विद्यालय के अस्तित्व को ही समाप्त करके उसे कानपुर के मेडिकल कालिज मे मिला दिया जाय। यह माग प्रस्तुत करके छात्रो ने निश्चय ही अपनी सीमा का खेदपूर्ण उल्लघन किया है। जो छात्र आयुर्वेद के नाम पर चलने वाले विद्यालय के अस्तित्व को ही समाप्त करने की आकाक्षा रखते हो, उनसे भविष्य मे आयुर्वेद की उन्नति की क्या आशा की जा सकती है। और ऐसी भावना के कारण उन छात्रो के प्रति आयुर्वेद जगत् की सहानुभूति भी कैसे हो सकती है।

बहुत दिनो से सर्वत्र ही यह बात खटकती रही है कि राजकीय आयुर्वेदिक कालिजो से निकलने वाले छात्र अपने को डाक्टर कहलाना पसन्द करते है और वैद्य कहे जाने से उन्हे झेप या अरुचि होती है। निश्चय ही ऐसी प्रवृत्ति से आयुर्वेद का अपमान और ह्रास होता है। यो तो, जहा तक डाक्टर कहलाने का प्रश्न है सबसे अधिक सख्या ऐसे छद्मवेशियो की मिलेगी जो अपने नाम के साथ डाक्टर लगाते है और भोली-भाली जनता के विश्वास के साथ खिलवाड करते हैं। पाच वर्ष तक विधिवत् आयुर्वेद पढने वाले छात्रो के लिए यह कोई गौरवास्पद बात नही है कि वे अपने को डाक्टर कहलाने की इच्छा रखे। वैद्य या कविराज कहला कर ही अपने लिए डाक्टरो के समान अधिकार समाज, व्यवसाय और सरकारी क्षेत्र मे प्राप्त करने की भावना का तो हम आदर करते है। विधिवत् आयुर्वेद का शिक्षण पाने वाला कोई भी चिकित्साभ्यासी वैद्य किसी डाक्टर से कम नही कहा जा सकता। ऐसी दशा मे वैद्य को भी डाक्टर के समान ही वेतन आदि का अधिकार सरकार को देना चाहिए—एक दिन देना ही पडेगा। उस अधिकार के लिए छात्र यदि प्रयत्न करते है तो वह श्लाघनीय कहा जायगा, परन्तु समानाधिकार की माग के साथ अपने को वैद्य के स्थान पर डाक्टर कहलाने की इच्छा खेदजनक है। हडताल के सम्बन्ध मे उत्तर-प्रदेशीय सरकार की जो विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है उसमे कहा गया है कि 'छात्रो का एक वर्ग आयुर्वेद मे आस्था नही रखता और चाहता है कि विद्यालय से निकले हुए छात्र डाक्टर कहलावे, वैद्य नही। यदि आयुर्वेद को जीवित रखना है तो उसके समर्थको और छात्रो दोनो को ही इस प्रकार की हीनता की भावना से ऊपर उठना होगा।' सरकार की विज्ञप्ति का यह अश इस प्रसग मे बहुत महत्वपूर्ण है।

हम छात्रो से निवेदन करना चाहेगे कि वे अपनी मागो पर पुनर्विचार करे। विद्यालय को सर्वसाधन-सम्पन्न मेडिकल कालिज के रूप मे विकसित करने की माग के स्थान पर यदि वे उसको अधिक विकसित आयुर्वेदीय महाविद्यालय के रूप मे बढाने की माग करते तो हम उनका हृदय से समर्थन करते, परन्तु वैसा न करके छात्रो ने जैसी अनुदारतापूर्ण मागे की है उनसे हमारा क्या, सम्पूर्ण आयुर्वेद जगत का मस्तक नीचा हुआ है। हम सरकार के साथ विनम्र सघर्ष कर रहे है कि आयुर्वेद का विकास किया जाय, उसको प्रश्रय दिया जाय, उसको मान्यता दी जाय और देश मे अधिक सख्या में साधन-सम्पन्न आयुर्वेद विद्यालय सरकार की ओर से स्थापित किये जावे, ताकि अधिकाधिक सख्या मे अच्छे एव प्रशिक्षित वैद्यो का निर्माण हो और आयुर्वेदीय व्यवसाय का समुचित विकास हो। एक ओर सम्पूर्ण आयुर्वेद जगत् सरकार से इन मागो के लिए आग्रह कर रहा है, दूसरी ओर आयुर्वेद के छात्र इससे विपरीत अर्थ वाली मागो को लेकर हडताल करे—यह स्थिति कितनी हास्यास्पद है, हमारे छात्रो को इस पर गभीरता के साथ विचार करना चाहिए।

आयुर्वेद वैज्ञानिक विषय है। वैज्ञानिक विषय के छात्रो को राजनैतिक ऊहापोह से दूर रहकर अनुशासन मे रहते हुए मननप्रिय और अध्ययनशील रहना चाहिए। आयुर्वेद विद्यालय के छात्रो ने जिस ज्ञानार्जन के मूल उद्देश्य को लेकर विद्यालय मे प्रवेश किया है, उस पर ही अधिक दृढ रहना चाहिए। जब तक उनका अध्ययन-काल है, तबतक उन्हे अपनी शक्तियो और प्रतिभा का उपयोग उस कार्य मे ही करना चाहिए। अधिकार का प्रश्न तब उठता है जब वे अपना अध्ययन समाप्त करके चिकित्सक के रूप मे समाज मे आते है। उस समय ही किसी अधिकार के लिए सघर्ष करना उनके लिए शोभाजनक होगा। इसके अतिरिक्त उन्हे यह विश्वास रखना चाहिए कि उनके अधिकारो के प्रति लाखो की सख्या वाला वैद्य-समाज निरुद्योग नही है। वैद्य-समाज वैद्यो के अधिकार और आयुर्वेद की श्रीवृद्धि के लिए आज भी प्रयत्नरत है और

मार्गो की रहेगा। उस प्रयत्न का जो फल होगा वह वर्तमान और भविष्य के समग्र वैद्यो के लिए समान हितकारी होगा। हमारी सम्मति मे छात्रो को किसी प्रकार की आन्दोलनबाजी मे कदापि नही पडना चाहिए। निश्चय ही, किन्ही मागो को मनवाने के लिए, चाहे वे न्यायसगत ही हो, हडताल का साधन शैक्षणिक क्षेत्र मे कदापि उचित नही, प्रत्युत वह बहुत अहितकर है, उसमे छात्रो की ही हानि अधिक है। अत हम छात्रो से अपील करेगे कि वे तुरन्त अपनी हडताल को समाप्त करके विद्यालय को सुसचालित होने का अवसर दे।

सरकारी विज्ञप्ति मे यह आश्वासन दिया गया है कि आयुर्वेद प्रशिक्षण के पुनर्गठन का प्रश्न सरकार के विचाराधीन है और इस सम्बन्ध मे भावी नीति निर्धारित करते समय भारत सरकार द्वारा नियुक्त उच्चस्तरीय समिति के सुझाव तथा उस विषय मे केन्द्रीय स्वास्थ्य परिषद द्वारा पारित प्रस्ताव का पूरा-पूरा ध्यान रखा जायगा। जहा तक हमे पता है केन्द्रीय स्वास्थ्य परिषद ने इस विषय मे राज्यो को नीति-निर्धारण की स्वतत्रता दी है। प्रदेशीय सरकार का सकेत जिस उच्चस्तरीय समिति से है, वह दवे समिति के सुझाव ही हो सकते है। यदि उत्तर प्रदेशीय सरकार आयुर्वेद के प्रशिक्षण की नीति दवे समिति के सुझावो के अनुसार निर्धारित करती है, तो वह वर्तमान परिस्थिति मे कोई असतोष का कारण नही बनेगी। हमे किसी न किसी निश्चय को स्वीकार करके ही आगे बढने मे सुविधा होगी, इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए। बहुत मागते रहने और कुछ न लेने की नीति पर यदि हम अडे रहेगे तो हम अपने हाथो अपना विनाश कर लेगे।

आयुर्वेद के लिए यह सघर्ष का समय है। ऐसे समय मे हमारे छात्रो को उदारता और कर्तव्यप्रियता का ठोस उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए न कि अकारण ही गत्यवरोध की स्थिति उत्पन्न करनी चाहिए। हमे विश्वास है कि छात्रगण गभीरता के साथ विचार कर तुरन्त कल्याणकर मार्ग का अनुकरण करेगे।

इस प्रसग मे सरकार से भी कुछ निवेदन कर देना अनुचित नही होगा। उत्तर प्रदेशीय स्वास्थ्य मत्री माननीय श्री हुकुम सिहजी ने हाल ही मे एक भाषण मे कहा था कि छात्रो मे आयुर्वेद पढ़ने के प्रति कोई रुचि नही है। हडताल के विषय मे विधान सभा मे किये गये प्रश्नो के उत्तर मे भी माननीय स्वास्थ्य मत्री ने छात्रों पर यही आरोप लगाया है। सरकारी विज्ञप्ति मे प्राय इसी प्रकार की बात दुहराई गई है, जिसका हम ऊपर उल्लेख कर चुके है। यदि हम माननीय स्वास्थ्य मत्री महोदय के आरोप को ही सत्य मानकर चलें तो यह प्रश्न उठता है कि आखिर आयुर्वेद पढने के प्रति छात्रो मे कोई रुचि क्यो नही है? उन मूल कारणो पर सरकार को विचार करना चाहिए जिनके रहते छात्रो मे यह अरुचि उत्पन्न होती है और वह यहा तक बढ जाती है कि आयुर्वेद जैसे स्वय सतुलनशील वैज्ञानिक विषय के छात्र अनुशासन के नियम-सयमो का बाना फेक कर हडताल के सबल का आश्रय पकड बैठते है? केवल छात्रो की अनुदारता ही इसका कारण नही हो सकती। कम से कम लखनऊ के राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय के विषय मे तो दो-तीन कारण स्पष्ट है जिनमे पहला और गभीर कारण यही है कि सरकार ने इस कालेज-योजना को अबतक स्थायित्व प्रदान नही किया। जो योजना स्थायी नही है उसके समाप्त करने या बदल देने के लिए स्वर उठाने या आन्दोलन कराने की सुविधा सदा बनी रहती है। सरकार यदि इस विद्यालय को सर्वथा स्थायी घोषित कर दे तो फिर ऐसा प्रश्न उठने की गुजायश समाप्त हो जाती है। दूसरी बात, यद्यपि कालिज के प्रबन्ध के विषय मे किसी न्यूनता का कोई समाचार हमे नही मिला, तथापि उसमे किसी सुयोग्य प्रिसिपल का अभाव भी विवादास्पद एव भ्रमात्मक वातावरण की सृष्टि का स्वाभाविक कारण हो सकता है। सुयोग्य और स्थायी प्रिसिपल का न होना छात्रो मे अनुशासनहीनता की भावना को बढाने का कारण होना ही चाहिए। यद्यपि वर्तमान समय मे मान्य श्री कुलकर्णी जी ने बडी योग्यता से, अपने विभागीय कार्यों के अतिरिक्त (कदाचित् बिना पृथक पारिश्रमिक लिये ही) कालेज के प्रिसिपल पद के उत्तरदायित्व का निर्वाह किया है, तथापि विभागीय कार्यों को करते हुए, वे क्या कोई भी व्यक्ति स्थायी प्रिसिपल की ही भाति विद्यालय की व्यवस्था को अनुशासनपूर्ण कैसे रख सकता है, विशेषकर ऐसी दशा मे जब कि छात्रो मे रोष उत्पन्न करने की स्थिति निरन्तर विद्यमान रहती हो। तीसरी बात, पाठ्यक्रम मे जितना विषय पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान का रखा गया है, उसके लिए विद्यालय मे समुचित साधन न होना नितान्त अनुचित

बात है। यह कहा तक न्यायसगत है कि अपन पाठ्यक्रम के कुछ अश को पढन के लिए छात्रो को दूसरे कालिज की भाग-दौड करना पड और एसे स्थान पर जाना पड जहा पहुँचकर आयुर्वेदीय छात्र होन के नाते उनको नीचे स्तर का समझा जाय। स्वाभाविक है कि जब यहा के छात्र मेडिकल कालिज या बलरामपुर हास्पीटल म अपन पाठ्य क्रम के कुछ अश का प्रशिक्षण लन जाते ह तो उनम आद्यन्त एलोपैथी का अध्ययन करन वाल छात्र उन्ह ठीक उस तरह देखते ह जैसे कोई बम्बई का पढा लिखा फैशनबुल बाबू किसी गाव के मुडासे वाल ग्रामीण को देखता है। बहुत सभव है कि आयुर्वेदीय छात्रो को यदा-कदा उपहास का पात्र बनना पडता हो। नवयुवक विद्यार्थियो को एसी कोई उपहास की स्थिति अनायास ही उत्तजना देन का कारण बन सकती है। हम कभी यह नही कहना चाहते कि आयुर्वेद विद्यालय को पूर्वापिर मेडिकल कालिज जैसा बना दिया जाय परन्तु निश्चय ही पाठ्यक्रम के अनुसार विषय ज्ञान के लिए आवश्यक साधन-सामग्री तो विद्यालय म जुटाई ही जानी चाहिए। अधूरी रसायन शाला को शीघ्र पूण बनान के लिए सरकार को सक्रिय कदम उठाना चाहिए। पाठ्यक्रम के सम्पूण विषयो का प्रशिक्षण इसी विद्यालय म दिय जान की स्थायी व्यवस्था अविलम्ब होनी चाहिए।

छात्रो म आयुर्वेद पढन के प्रति रुचि न होन का आरोप बहुत गभीर है। यह आयुर्वेद के भविष्य को ही चिन्तास्पद बनान वाली बात है। हम इस बात को मानन को तैयार नही कि छात्रो म रुचि का सवथा अभाव है। यदि एसा होता तो व छात्र आयुर्वेद कालज म प्रविष्ट ही क्यो होते ? फिर भी कुछ कारण ऐसे अवश्य ह जो छात्रो म स्वाभाविक ही अरुचि नही तो एक निराशा अवश्य उत्पन्न करते ह। व कारण एसे नही जिनका सम्बन्ध केवल लखनऊ के आयुर्वेद विद्यालय से हो प्रत्युत सम्पूण भारत म हर प्रदेश म विद्यमान है। केन्द्रीय और प्रादेशिक सरकार जब तक सयुक्त रूप से उन कारणो के निवारण का प्रयत्न नही करती, तब तक छात्रो म आयुर्वेद के अध्ययन के प्रति सहज ही उत्पन्न होनवाली उस निराशा का अन्त नही हो सकता। एक दोष तो हमारे देश की शिक्षा पद्धति म बीज रूप म विद्यमान है और वह यह कि किसी भी विषय का छात्र पढ-लिखकर आत्मावलवन से इतना हीन बन जाता है कि उसकी सम्पूण महत्वाकाक्षाए और पुरुषाथ नौकरी करन की इच्छा तक सीमित रह जाते है। जब वह अपन भविष्य के विषय म सोचता है तो उसकी विचार शक्ति यही आकर टकरा जाती है कि कालिज से निकल कर अमुक अमुक नौकरी करूगा। यह दोष सव सामान्य म विद्यमान है। बचपन से जो शिक्षा मिलती है वह इतना ही सोचन की भूमिका बनाती चली जाती है। बहुत ही कम अशो म हमारे विद्यार्थी एसे निकलते ह जो नौकरी के अतिरिक्त कोई स्वावलम्बी उद्योग करते ह और उसम सफल होते है। देश म पढ लिख युवको की भीषण बकारी इसका ज्वलन्त प्रमाण है। तो आयुर्वेद विषय के विद्यार्थी किसी दूसरी दुनिया के तो ह नही। जब व विद्यालय म पढते ह तो कभी कभी अपन भविष्य के विषय म विचार करते ही होग। अन्यो की तरह उनकी भी विचार परम्परा नौकरी पर जा अटकती होगी और जब व वैद्यो की नौकरी की स्थिति को सोचते होग तो स्वाभाविक है कि उन्ह निराशा की झाइ स्पष्ट दिखाई देती होगी। क्योकि सरकार डाक्टरो और वद्यो की नौकरी म नियुक्ति और वतन इत्यादि म साफ भद बनाय हुए है। वह भद आयुर्वेद के छात्रो के मानस पर पत्थर का आघात करता है और फिर यदि उनम आयुर्वेद पढन के प्रति निराशा उत्पन्न होती है तो यह कहा अस्वाभाविक है ? इस विषय म सरकार की घोर अनुदारता निश्चय ही अत्यन्त खद का विषय है। सरकार के ही पाठ्यक्रम के आधार पर विधिवत् पाच वष तक शिक्षा पानवाला कोई आयुर्वेद का विद्यार्थी आखिर किसी डाक्टर से किस मानी म कम है जो उसके साथ हीनता का व्यवहार किया जाता है। डाक्टरी पढन वाल छात्र को तो हौसला रहता है कि यहा कालिज से निकला और वहा नियुक्ति मिल जायगी। सरकारी अधिकारीवग डाक्टरो की सख्या की कमी और तीव्र आवश्यकता की घोषणाए यदा-कदा किया करते है व घोषणाए डाक्टरी पढन वाल छात्र को चौगुना साहस देती है। परन्तु आयुर्वेद पढन वाल छात्र का हौसला कैसे बढ ? कहा उसके लिए गुजायश है ? स्वास्थ्य सेवाओ म उसको जगह नही! चिकित्सा सेवाओ म उसके लिए स्थान नही। प्रादेशिक सरकारो और स्वायत्त शासन विभागो न यत्र-तत्र जो थोडी-थोडी देशी दवाओ की डिस्पसरिया खोल रखी है उनम भी यदि भाग्य से आयुर्वेद

छात्र को जगह मिल गई तो वेतन डाक्टर के कम्पाउण्डर से भी कम ! इस पर भी आयुर्वेद कालेज के छात्र को सरकार की ओर से कोई ऐसा आश्वासन नही कि पढने के बाद उसको किसी एलोपैथी डिस्पेसरी मे न सही, आयुर्वेदिक दवाखाने मे ही नियुक्ति निश्चित मिल जायगी। अब विचार कीजिए कि आयुर्वेद के छात्र को निराशा न हो तो क्या हो ? और यदि उस निराशा के कारण उसम आयुर्वेद पढन के प्रति रुचि का अभाव उत्पन्न हो जाय तो यह कैसे अन्यायपूर्ण है।

आयुर्वेद का छात्र जब सर्वत्र सरकार द्वारा पोषित डाक्टरी का चमत्कार देखता है, तो भी उसके मन म निराशा उत्पन्न होना स्वाभाविक है। आयुर्वेद के सरकारी विद्यालयो मे जो पढाई होती है और उससे जिन छात्रो का निर्माण होता है, वे कुछ भिन्न प्रकार के चिकित्सक बनते है। समय का प्रवाह, शिक्षण-पद्धति और विद्यालयो का वातावरण इन्टर साइन्स करके प्रविष्ट हुए छात्रो को अनायास ही, भावना से न पूरा वैद्य रहने देता है और न पूरा डाक्टर ! उपाधि मिलती है उनको अग्रजी की छाप लगाने वाली बी० आई० एम० एस० या बी० एम० बी० एस० इत्यादि। फिर वे अनायास ही अपने को वैद्य से कुछ भिन्न समझने लगते है। डाक्टरो म खपते नही, वैद्यो मे जमते नही। त्रिशकु होकर रह जाते है। यह स्थिति भी छात्रो म आयुर्वेद पढने और वैद्य कहलाने के प्रति सुरुचि का अभाव उत्पन्न करनेवाली है। आयुर्वेद को जीवित रखने के लिए छात्रो और आयुर्वेद समर्थको को हीनता की भावना से ऊपर उठने का उपदेश देने वाल राज्यामात्यो को इन बातो पर विचार करना चाहिए। हम कहेगे कि सरकार हमे हीनता की भावना से ऊपर उठने का अवसर तो दे ! उसके अनुरूप कुछ करे तो ! स्पष्ट ही सरकार को आयुर्वेद की चिकित्सा पद्धति को प्रोत्साहन देने की अपनी नीति मे वास्तविकता का समावेश करना चाहिए। केवल आश्वासनो से आयुर्वेद का विकास नही हो सकेगा। छात्रो मे यदि सरकार यथार्थ ही आयुर्वेद-शिक्षण के प्रति सुरुचि जाग्रत करना चाहती है तो अविलम्ब उसे इतना तो करना ही चाहिए कि आयुर्वेद विद्यालयो को व्यवस्थित रूप दिया जाय, पाठ्यक्रम मे सुधार किया जाय और उत्तीर्ण छात्रो को उपाधिया अग्रेजी की न देकर हिन्दी और आयुर्वेद शब्द युक्त दी जावें। अधिक सख्या मे आयुर्वेद विद्यालय स्थापित किये जावे और उनम आयुर्वेद सम्मत वैज्ञानिक वातावरण सुरक्षित रखा जाय। आयुर्वेद पढने वाले छात्रो को उनके भविष्य के विषय मे कोई निश्चित आश्वासन दिया जाय। प्रशिक्षित वैद्यो और डाक्टरो के अधिकार सर्वथा समान घोषित किये जाय। ग्रामीण क्षेत्रो तक मे सर्वथा अनावश्यक, अनुपयोगी और महगी डिस्पेसरियो की बाढ को रोककर आयुर्वेदिक चिकित्सालयो को बढाने की परम्परा अपनाई जाय। सबसे अधिक आवश्यक यह है कि केन्द्रीय सरकार अपनी राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति का निर्धारण करे और उसमे देशी चिकित्सा पद्धति का स्थान सुस्पष्ट रूप से घोषित करे। सरकार अविलम्ब अपने ऐसे प्रयासो को रोके जिनसे जनता पर अनिच्छित ही पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति का प्रभाव बढ रहा है। जब यह कार्य वास्तविक सक्रियता के साथ किये जावग तो आयुर्वेद पढन वालो म रुचि की कमी की शिकायत सरकार को नही होगी। तब यह शिकायत होगी कि आयुर्वेद पढन वाल इतने अधिक है कि उनके लिए शिक्षण व्यवस्था कैसे की जाय ?

लखनऊ आयुर्वेद विद्यालय की हडताल का यह प्रसग, हम समझते है, सम्पूर्ण आयुर्वेद-जगत् के लिए विचारणीय है। छात्रो की मागे, सरकार का वक्तव्य और स्वास्थ्य मत्री की टिप्पणी—सबकी सब आयुर्वेद के महारथियो के लिए एक चुनौती है। हम किस आधार पर आयुर्वेद के सद्भविष्य के लिए आशाए बाध रह है। हमारे भविष्य के कर्णधार आयुर्वेद के विद्यार्थियो मे यदि आयुर्वेद के प्रति अरुचि है तो क्या आयुर्वेद के भविष्य को अच्छा कहा जा सकता है। आयुर्वेद के महारथियो को गभीरता के साथ इस प्रश्न पर विचार करना चाहिए। अपने छात्रो मे यदि ऐसी हीन भावना है तो उसके परिमार्जन के लिए सक्रिय प्रयत्न किया जाना चाहिए अन्यथा आयुर्वेद आगे एक-दो पीढी तक चलने वाली परम्परा रह जायगा।

आयुर्वेद के छात्रो मे उत्साह की कमी के एक कारण के लिए आयुर्वेद महारथी स्वय जिम्मेवार है, वह है आयुर्वेद के पाठ्यक्रम मे एकरूपता का अभाव। हमारे महारथीगण अपनी वाहवाही और परस्पर के विवादो मे उलझे रहकर इस महत्वपूर्ण विषय को दृष्टि से ओझल करते आ रहे है। डाक्टरी के शिक्षण मे ससार के किसी भाग में

(शेषाश पृष्ठ ६०६ पर)

मन्त्रियों की सम्मति

श्री ह्वारिकेश मिश्र

विज्ञापन कला का जो लोग अध्ययन करते रहे है, वे जानते हैं कि इस कला का विकास कहा से कहा तक हो गया है। एक जमाना था कि लोग अपने और अपनी चीज के प्रचार के लिए गुण-दोषो का ठोस और मनोवैज्ञानिक प्रभाव करने वाला यथातथ्य विवरण प्रस्तुत किया करते थे। फिर उस विवरण मे गप्पो की प्रधानता बढी। उसके बाद कालान्तर मे रिवाज यह हुआ कि लोग अपनी चीज के पक्ष मे नेताओ और प्रमुख व्यक्तियो की सम्मतिया प्रकाशित करने लगे। ऐसी सम्मतिया बडी सरलता के साथ मिल जाया करती थी। किसी नेता को अपने यहा बुलाया, चाय-पानी किया, अभिनन्दन-पत्र दे दिया और फिर नेताजी से मुक्तकण्ठ प्रशसा की सम्मति लिखवा ली। राजनीति मे प्रतिष्ठा का उतार-चढाव कभी-कभी विचित्र हो जाया करता है, इसलिए राजनैतिक लोगो को अपनी स्थिति सुरक्षित रखने के लिए बहुत लोगो को प्रसन्न रखना पडता था। इस फेर मे भी कुछ नेता लोग प्रशसात्मक सम्मति देने मे उदार रहा करते थे। विषय का ज्ञान हो या न हो, सम्मति मे प्रशसा के पुल बाध दिया करते थे। जिन्हे कविता का एक अक्षर नही आता, हमने देखा कि कविता-पुस्तक पर उनकी सम्मति पहले ही पृष्ठ पर चमक रही है। पुस्तको, दवाओ और व्यक्तियो के प्रचार मे तो ऐसी प्रशसात्मक सम्मतियो की परम्परा कुछ दिनो ऐसी चली कि हद हो गयी। सम्मति-प्राप्तकर्ताके साथ सम्मति देने वाले का प्रचार भी तो होता था, इस कारण कुछ नेताओ को तो सम्मतिया फटकारने का मर्ज हो गया था। इस प्रकार किसी भी वस्तु या व्यक्ति के प्रचार के लिए किसी नेता की सम्मति एक समय मे इतनी सस्ती हो गई कि अब उसका कोई महत्व नही रहा। धनघोर विज्ञापनबाजो ने अब नयी परम्परा अपनायी है। नेताओ और मन्त्रियो की सस्ती सम्मतियो को छोडकर अब रिवाज यह चल पडा है कि लोग अपनी चीज के प्रचार के लिए किसी सिनेमा की तारिका की सम्मति प्राप्त करने का यत्न करते है, वह न मिली तो सिने-अभिनेता की ही सही। आप देख लीजिए, साबुन, तेल, कघा, कपडा, दवा इत्यादि जीवनोपयोगी चीजो, यहा तक कि कलमो के विज्ञापन तक मे अब किसी सिने-तारिका की तस्वीर छपी मिलेगी और साथ मे उसकी सम्मति। विज्ञापन करने वाले रेडियो के पूरे कार्यक्रम तक सिने-तारिकाओ की मुलाकातो के नाम से चलते है। कहने का अभिप्राय यह कि नेताओ और मन्त्रियो की सम्मतियो का विज्ञापन मे अब महत्व नही रहा, क्योकि वे इतनी सहज सुलभ और सस्ती हो गई है कि किसी बहाने जरा सा सपर्क किसी नेता या मत्री से बना लीजिए, फिर चाहे जैसी सम्मति उनसे लिखा लेना मामूली बात है। यदि किसी नेता या मत्री से कोई राजनैतिक या अन्य प्रकार की साठगाठ फस जाय तो, फिर उनसे तो अपने लिए मनचाहा लिखा लेना बाये हाथ का खेल है। कम से कम हमारे देश मे प्रकृतिवश उदार नेताओ और मन्त्रियो की सरलता का दुरुपयोग करने की वृत्ति बहुत बढी हुई है।

कई वर्ष हुए, एक मित्र के यहा लडके का विवाह था। दो-चार बहुत अतरग मित्र जब बैठे तो बात करने लगे कि विवाह के अमुक अवसर पर आनेवालो पर अपनी धाक जमाने के लिए क्या कार्यक्रम रखा जाय। किसी ने नाच गान की सलाह दी, किसी ने कविता-मुशायरे की। किसी ने कहा—सगीत क्लब का कार्यक्रम कराया जाय, कोई बोला—एकाध एकाकी नाटक करा डालो, बढिया रहेगा। लडके वाल ने एक न मानी। मित्रो ने कहा गजब का कजूस है। लोग क्या कहेगे? भाईजान चाहते तो है कि शहर के बडे से बडे लोग बुलावे, पर उन्हे बुलाकर करेगे क्या? लडके वाले ने अपनी सूझ-बूझ से काम लिया। बहुत बढिया निमत्रण छपाया और साथ मे शुभकामना की याचना के पत्र के साथ तमाम नेताओ और मन्त्रियो को निमत्रण ठोक दिए। विशेष समारोह के दिन खचाखच भरे हुए पण्डाल मे जब वर-वधू के लिए आये हुए कई वरिष्ठ नेताओ और मन्त्रियो के शुभकामना सन्देश पढे गये तो सुनने वाले चकाचौध मे पड गए।

लोगो पर वह धाक जमी कि क्या कहन। आगतो न समझ लिया कि इस व्यक्ति के सम्पक तो बड बड नताओ से ह। स्थानीय अधिकारियो पर एसा प्रभाव पडा कि सलाम करन लग। इस घटना के बाद हमन देखा कि उन सज्जन को नगर की हर सभा समारोह के विशष निमत्रण पहुँचन लग। कई समितियो म सदस्य चुन लिए गए और थोड ही दिनो म उनकी गणना नगर के प्रमुखतम व्यक्तियो म होन लगी। कहिए नताओ और मन्त्रियो की उदारता का कितना बढिया उपयोग हुआ ? आजकल यह प्राय देखा जाता है कि कुछ प्रमुख जन-नता और मत्री गण किसी सूत्र से प्रभावित होकर स्वाभाविक उदारतावश किसी भी विषय म चाह उस विषय से उनका कभी कोई सपक न रहा हो प्रशसात्मक अभिमत व्यक्त कर देते ह। यही कारण हुआ कि नताओ और मन्त्रियो की सम्मति म सस्तापन आ गया सा प्रतीत होता है। लोग व्यक्तिगत मामलो तक म उनका उपयोग करन लग।

हाल ही म पण्डित शिवशर्मा न आयुर्वेद जगत म अपनी समाप्तप्राय प्रतिष्ठा को पुन बनान के लिए एसे ही साधन का उपयोग किया है। दिल्ली की एक पत्रिका म प्रकाशित अपनी वक्तव्य श्रृखला म उन्होन अपन व्यक्तित्व और चरित्र-दढता के विषय म दो प्रमुख मन्त्रियो की सम्मतियो को उद्धृत किया है और यह प्रयत्न किया है कि वैद्य समुदाय माननीय मत्रियो की राय से प्रभावित होकर उन मुख्य बातो को भूल जाय जिनका सम्बन्ध पण्डित शिवशर्मा के महासम्मेलन म किय काय कलापो से है। कई बार यह कहा जा चुका है कि पण्डित शिवशर्मा की व्यक्तिगत योग्यता चरित्र और काय अथवा उनकी ऊचाई नीचाई यहा विचार का विषय है ही नही। विशष कर वैद्य समाज को उनके व्यक्तिगत उत्थान पतन से प्रयोजन क्या ? भगवान करे व सरकारी क्षत्र म गवनर बन जाय या देवताओ म इन्द्रासन प्राप्त कर ल इसम किसी को क्या आपत्ति हो सकती है ? विचारणीय प्रश्न तो यह है कि महासम्मेलन म रहकर पण्डित शिवशर्मा न सस्था और सगठन के हितो के लिए क्या काय किया ? कितना अच्छा किया और कितना बुरा किया ? आलोचको की आपत्ति तो केवल इतनी रही है कि पण्डित शिवशर्मा न आयुर्वेद महासम्मेलन मे रहकर सस्था और वैद्य समाज के हितो की परवाह न करके व्यक्तिगत प्रतिष्ठा बढान के प्रयत्न ही अधिक किय। जो सम्मतिया पण्डित शिवशर्मा ने माननीय मत्रियो की प्रकाशित की है उनम ही एक माननीय न यह स्पष्टीकरण किया है कि पण्डित शिवशर्मा की माननीय नहरू से भट का जो यत्न किया गया था उसम किसी सस्था या दल का कोई उद्दश्य नही था प्रत्युत् प्रयत्न माननीय नहरू जी से व्यक्तिगत भट का किया गया था जबकि हम स्मरण है कि इस भट के विषय म उन दिनो वैद्यजगत म समाचार यह प्रचारित किया गया था कि महासम्मेलन के प्रतिनिधि पण्डित नहरू से गुप्त भेट करन जा रह ह।

एक माननीय मत्री जी न अपनी सम्मति म व्यक्त किया है कि त्रिवन्द्रम की स्वागत समिति का एक पत्र पण्डित शिवशर्मा न उन्ह दिखाया था जिसम उनके और दो अन्य नताओ को अधिवशन म लान का आग्रह किया गया था। सम्मति का अश स्वय स्पष्ट करता है कि मत्री महोदय को स्वागत समिति न सीधा निमत्रित नही किया। न स्वागत समिति न मत्री महोदय को कोई पत्र लिखा। हुआ यह होगा कि पण्डित शिवशर्मा न स्वागत समिति पर प्रभाव जमाया होगा कि मेरा व्यक्तिगत असर अमुक मुख्य मत्रा पर है म उनको अधिवशन म ला सकता हूँ। स्वागत समिति न उत्तर म लिख दिया होगा कि ल आइए। पण्डित शिवशर्मा को यह सुविधा थी कि एक प्रदेश के मुख्य मत्री के साथ होन से दूसरे प्रदेश के मुख्य मत्री पर भी प्रभाव हो जायगा। इसीलिय यह प्रयत्न किया गया और केवल तीन दिन की अध्यक्षता की गयी। पण्डित शिवशर्मा अदालत म मन्त्री महोदय की गवाही से यह सिद्ध करना चाहते थ कि माननीय मत्री जी उनके कहन से नही अपितु स्वागत समिति के आग्रह से अधिवशन म गय! उन्ही माननीय मत्री की सम्मति स्पष्ट कहती है कि स्वागत समिति का पत्र मत्री जी को नही शिवशर्मा जी को था। और वही पत्र लकर पण्डित शिवशर्मा न मत्री जी से अधिवशन म जान की प्राथना की। अब, कौन अक्ल का बुद्धू इस बात को मान जायगा कि मत्री जी अधिवशन म पण्डित शिवशर्मा के आग्रह से नही गय। पण्डित शिवशर्मा जी के ही सिद्धान्त के अनुसार निमत्रित करन वाला वह होता है जो व्यक्तिगत रूप से किसी के पास जाव। मत्री जी के विशुद्ध आयुर्वेद प्रम की उत्कटता वैद्य समाज तब मान लता जब उसका उपयोग अधिवेशन-

उद्घाटन के अतिरिक्त केन्द्र में आयुर्वेद को कुछ दिलाने में हुआ होता। मत्री जी का कहना है कि हवाई यात्रा का बिल भी पण्डित शिवशर्मा को भेजा गया क्योकि सरकार को यह पता नही था कि बिल स्वागत-समिति को जायगा या महासम्मेलन के मत्री को। जब निमन्त्रित स्वागत-समिति ने किया था तो ऐसी अज्ञानता क्यो रही?

मत्री जी अपनी सम्मति मे मानते है कि जिस भाषा का प्रयोग पण्डित शिवशर्मा स्वास्थ्य मत्राणी राजकुमारी अमृतकौर के लिए किया करते थे, वह उनके लिए अरुचिकर था। यहा तक कि उसके कारण सरकार को आयुर्वेद की समस्याओ पर शिवशर्मा जी की सम्मति लेने तक म झिझक होती थी। फिर मैजिस्ट्रेट ने यदि इसी बात को निर्णय मे कहा तो वह कैसे भ्रान्त है?

जिन दो मत्री महोदयो की सम्मति पण्डित शिवशर्मा ने प्रस्तुत की है वे दोनो ही माननीय यह प्रकट करते है कि उनकी पण्डित शिवशर्मा से घनिष्ट मित्रता है। इतनी मित्रता है कि उनसे पडित शिवशर्माजी अपने त्यागपत्र आदि व्यक्तिगत प्रश्नो पर भी सलाह करते रहे है, ऐसा एक सम्मति मे ही लिखा गया है। पण्डित शिवशर्मा को अच्छा मित्र कहने वाले एक मत्री महोदय उस प्रदेश के मुख्य मन्त्री रहे है, जहा पण्डित शिवशर्माजी आयुर्वेद फैकल्टी के चेयरमैन हुए और मेडिसिन बोर्ड के भी। दूसरे मत्री महोदय यूनिवर्सल हैल्थ इन्स्टीटयूट के चेयरमैन है, जिसम पण्डित शिवशर्मा प्रधान चिकित्सक के स्थान पर नियुक्त है। यह पहले ही निवेदन किया जा चुका है कि दोनो मन्त्रियो ने पत्रिका मे प्रकाशित अपने वक्तव्यो मे पण्डित शिवशर्मा को अपना मित्र बताया है। इन मित्रताओ का कितना बढिया उपयोग पण्डित शिवशर्माजी ने किया, यह उनक पद और उनके पक्ष मे मत्रियो की सम्मतिया प्रकट करती है। यद्यपि वह उपयोग किसी अन्य कारण से नही कहा जा सकता। ससार मे ऐसा होता ही है कि एक मित्र दूसरे मित्र की भलाई करता है, सकारण भी और अकारण भी। पण्डित शिवशर्मा जी के सम्बन्ध मे जो सम्मतियाँ प्रकाशित हुई है, स्पष्ट है कि उनमें मित्रता का भाव सर्वत्र छाया हुआ है, स्वस्थ मूल्याकन की परम्परा नही है। और हो भी तो वे सम्मतियाँ पण्डित शिवशर्माजी के व्यक्तिगत चरित्र, व्यवहार और योग्यता के विषय मे दी गयी है। व्यक्ति के रूप मे पण्डित शिवशर्माजी क्या है, इसका विश्लेषण करना न उस मानहानि विवाद का काम था और न मैजिस्ट्रेट के निर्णय का, ऐसी दशा मे इन सम्मतियो की गवाही का अदालत में कदापि औचित्य नही था, क्योकि अदालत मे विचारणीय विषय था वह लेख, जिसमे पण्डित शिवशर्माजी के महासम्मेलन सम्बन्धी कार्य-कलापो की समालोचना की गयी थी।

पण्डित शिवशर्मा ने अदालत के निर्णय के विषय मे अपने जो पाच वक्तव्य प्रकाशित किये है उनमे पूरा ज़ोर अपने व्यक्तित्व को प्रकाशित करने पर ही दिया है। और सर्वत्र यह सिद्ध करने का असफल प्रयत्न किया है कि निर्णय मे विद्वान् न्यायाधीश ने भूले की है। यद्यपि यह सभी जानते है कि निर्णय प्रस्तुत प्रमाणो और श्री शिवशर्मा के स्वय के बयानो पर ही आधारित है। उन आरोपो का कोई खण्डन प्रस्तुत करने का साहस पण्डित शिवशर्मा ने नही किया जो महासम्मेलन मे उनके कार्यों के विषय मे स्थिर हुए है। वैद्य-समाज जिन बातो का जवाब पण्डित शिवशर्मा से चाहता है, उनके विषय मे वे चुप है और इधर-उधर का भ्रमजाल फैलाकर वैद्य-जगत को चमत्कृत करना चाहते है। निश्चय ही इस निर्णय के बाद जो प्रतिक्रिया स्पष्ट देखने मे आई, उससे प्रकट है कि आज आयुर्वेद जगत् मे पण्डित शिवशर्मा का स्थान नगण्य हो गया है। पण्डित शिवशर्माजी स्वय इस वस्तुस्थिति को अनुभव कर चुके है, इसलिए पत्रिका द्वारा पुन अपने धुआधार प्रचार पर जुटे पडे है। उनक इस अतिशयोक्तिपूर्ण आत्मश्लाघा भरे प्रचार का कोई प्रभाव वैद्य-समाज पर नही पड रहा है।

श्री शिवशर्मा ने अपने अन्तिम वक्तव्य मे यह प्रकट किया है कि उनका विवाद एक बहुत बडे धनपति के साथ था, जिसने लाखो रुपया मुकदमे पर व्यय किया। पण्डित शिवशर्मा ने इस कथन के द्वारा अव्यक्त रूप से जो बात कहनी चाही है, वह इतनी निन्दनीय है कि उसको स्पष्ट कहते हुए स्वय शिवशर्माजी को भी शर्म आई है। जिस प्रकार इधर-उधर के बहाने बताकर, तथ्यो की तोड-मरोड करके शिवशर्मा जी ने कुछ बातो के चित्र को ही बदलने का दु ष्प्रयत्न किया है, उसी प्रकार सबसे अधिक बल वे इस बात पर देने पर तुले हुए है कि इस निर्णय और आयुर्वेद जगत मे उठे हुए उनके विरुद्ध आन्दोलन का उन पर कोई प्रभाव ही नही है। परन्तु सत्य से कोई कहा तक आँख मूँद सकता है। सारा आयुर्वेद जगत् यह देख रहा है और अनुभव कर रहा

है कि सदा छठ आसमान पर रहनवाल पण्डित शिवशर्मा आज पृथ्वी पर दौड लगा रह हृ। जो कहा करत थ कि विरोधी प्रचार का कोई उत्तर दकर विरोधियो को वह अनपक्षित महत्त्व नही दना चाहत जो उन्ह कभी मिलन वाला नही—व ही शिवशर्माजी आज वक्तव्य पत्रक और भेट मुलाकातो क दौरा म घर छोड भाग रह ह। मर्यादा सम्पन्नता के अवतार इतन निम्नस्तर पर उतर आय ह कि विगत विद्यापीठ क निर्वाचनो म उन्होन स्वय जो पत्रक निकाला है वह उनक मानसिक पतन का ज्वलन्त प्रमाण है यह बात हम नही कह रह ह वद्य-समाज म सवत्र ही यही चर्चा है।

इस बीच म पण्डित शिवशर्माजी न आयुवद जगत को यह दिखान का घोरतर प्रयास किया है कि अब भी उनकी मान्यता पहल स अधिक है। अपन मुह मिया मिठठ बनन का इसस बडा उदाहरण कदाचित ही कही दखन को मिलगा कि अपन प्रभाव और प्रतिष्ठा का बखान स्वय क पत्रक म किया गया हो। हाल क महासम्मलन चुनावो का उल्लख करक पण्डित शिवशर्माजी न दिखाया है कि सभापतित्व क लिए बारह प्रादशिक सभाओ स उनका नाम प्रस्तावित किया गया जो इस बात का प्रमाण है कि आयुवद जगत म पण्डित शिवशर्मा की मान्यता पहल जसी ही है। नाम वापिस न लकर और सदस्यो स मतदान म पण्डित शिवशर्मा विजयी होकर दिखा दत तब तो हम वास्तव म मान लत। प्रादशिक सभाओ से उनक नाम के प्रस्ताव किस कला से आ गय ह यह बात आयुवद जगत से छिपी नही है। अधिकाश प्रादशिक सभाए वधानिक रूप स पूर्ण नही ह और पण्डित शिवशर्मा क कठपुतली व्यक्तियो क दल को ही प्रादशिक सभाओ का नाम दिया हुआ है। इसी कला क द्वारा पिछल पाच वर्षों स निर्वाचन का नाटक होता आ रहा है और सदस्यो को मतदान का अवसर ही नही आता। इस बार भी वही नाटक करन की योजना थी और सभापति उत्तर प्रदश क एक सज्जन को बनान का विचार था। प्रयत्न म थोडी भूल हो गई इसलिए निश्चित तिथि क तीन दिन बाद उन सज्जन को भी नाम वापस लना पडा। प्रादशिक सभाओ से सकत किय हुए नाम ही प्रस्तावित किय जात ह इस बार तो पण्डित शिवशर्मा श्री पाथनारायण जी भाई वामनराव दीनानाथ जी तथा श्री बाबूराम जी इन नामो के प्रस्ताव अधिकाश सभाओ क नाम से एक स ही क्रम म आय ह क्यो कि वह सध हुए कायक्रम के आधार पर थ। एसी प्रादशिक सभाओ से अध्यक्षता क लिए नाम प्रस्तावित करा लन के पैतरो क आधार पर यह सिद्ध करन का प्रयास नितान्त हास्यास्पद है कि हमारा प्रभाव अब भी ज्यो का त्यो है। वद्य समाज को भ्रम म डालन क लिए पत्रको म कसी-कसी सरासर झूठी बातो को गढा गया इस पर अभी हम कोई टिप्पणी नही करना चाहत। उन विषयो की वास्तविक जाच करक वद्य समाज क समक्ष यथाथ तथ्यो को प्रस्तुत किया जायगा।

साधारण-सी स्वाथसिद्धि और अधिकार लिप्सा क लिए आज क जमान म अपन को सत्यप्रिय और दढचरित्र कहन वाल लोग किस निर्भीकता क साथ सत्य की हत्या करन पर उतारू हो जात ह इसका परिचय आयुवद जगत को मिलकर रहगा।

शषाश] सम्पादकीय [पृष्ठ ६ का

भिन्नता नही है परन्तु आयुवद के शिक्षण म भारत के प्रदेशो और विद्यालयो तक म भिन्नता है। कही के विद्यार्थी कुछ पढते ह कही के कुछ। शद्ध और मिश्र आयुवद का भ्रमपूण विवाद सरकार के बहान का कारण बना हुआ है। कुछ तो एसा प्रतीत होता है जसे राजकीय क्षत्र के कुछ वरिष्ठ नतागण अपन को आयवद जगत का महारथी कहन वाल एक सज्जन को इसी कारण मह लगाय हुए ह और सब प्रकार का प्रोत्साहन देते रहते ह कि व आयुवद के शुद्ध अशुद्ध पाठ्यक्रम का झगडा बनाय रह ताकि सरकार को सदा बहाना मिलता रह। देखन म आता है कि सरकारी पक्ष प्राय ही आयुर्वेद के विषय को यह कह कर टाल देता है कि सरकार तो आयुवद को प्रोत्साहन देना चाहती है परन्तु आयुर्वेद के किस रूप को प्रश्रय दिया जाय इस विषय म वैद्यगण एकमत नही ह। हाल ही म प्रधान मत्री नहरू जी न ससद म कहा है कि केवल उसी चिकित्सक को चिकित्सा करन दी जायगी जिसको शरीर रचना और क्रिया विज्ञान का पूरा ज्ञान हो चाह वह किसी भी पद्धति का हो। नहरू जी का यह सकेत स्पष्ट इगित करता है कि आयुवदानुयायियो को किस प्रकार का पाठ्यक्रम स्वीकार करना चाहिए।

आयुवद विषय के छात्रो म उसके प्रति रुचि का अभाव मिटान के लिए और आयुवद के प्रति अधिकाधिक मात्रा म सुरुचि जाग्रत करन के लिए यह अब नितान्त अकाट्य आवश्यकता है कि वद्य समुदाय को गभीरता के साथ विचार करके आयुवद का समयानुकूल और सवसम्मत पाठ्यक्रम निर्धारित कर लना चाहिए तथा उस स्वय स्वीकृत पाठ्यक्रम के प्रचलन को अपन बल पर विद्यालय सचालित करके व्यावहारिक सिद्ध कर दिखाना चाहिए। सरकार के सामन जब तक कोई क्रियात्मक आदश वद्य समाज उपस्थित नही करेगा तब तक सरकार से आयुर्वेद के लिए कुछ करा लना कदापि सभव नही। स्वय के पाठ्यक्रम पर आधारित स्वय का विद्यालय चला कर ही छात्रो म आयुर्वेद के अध्ययन एव वद्य रहन के लिए वास्तविक सुरुचि का सचार किया जा सकता है।

क्या हम आशा करे कि आयुर्वेद जगत् के महारथी इस विषय म सक्रियता दिखायग ?

महासम्मेलन के सदस्यों से अपील

दिल्ली म आयोजित अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के ४३व अधिवशन के लिए सम्मेलनाध्यक्ष का निर्वाचन तो निर्विरोध सम्पन्न हो चुका है विद्यापीठ अध्यक्ष पद के हतु माननीय सदस्यो को मतदान करना है। वैद्य-समाज एव आयुर्वेद जगत की वतमान समस्याओ को देखते हुए यह अ यात ही आवश्यक है कि हम अध्यक्ष निर्वाचन जैसे महत्वपूण प्रश्न पर बहुत गम्भीरता एव सावधानी से विचार कर। यह हष एव सन्तोष की बात है कि आयुर्वेद के तपस्वी विद्वान कविराज श्री उपेन्द्रनाथदास महोदय प्रमुखतम वैद्यो के आग्रह पर इस बार विद्यापीठाध्यक्षता के निर्वाचन म प्र याशी रहन के लिए प्रस्तुत हुए है। आयुर्वेद जगत म सवत्र इस बार उन्ह ही विद्यापीठाध्यक्ष बनान की प्रवल इच्छा व्याप्त है।

कविराज श्री उपे द्रनाथदास की योग्यता विद्वत्ता कत्तव्यनिष्ठा एव ठोस आयर्वेद सेवा से सम्पूण वद्य समाज भली-प्रकार परिचित है। महासम्मेलन के सदस्यगण प्राय तास वर्षो स कविराज उपे द्रनाथदासजी की कायकुशलता का प्र यक्ष अनुभव रखते है। वर्षों कविराजजी विद्यापीठ के म त्री एव उपाध्यक्ष रह हैं वतमान म भी उपाध्यक्ष है। इस नाते कविराजजी को विद्यापीठ-काय-सचालन का निकट से गम्भार अनुभव है। ि्ल्ली म स्थायी निवास होन से महासम्मेलन एव विद्यापीठ कार्यालय पर कविराजजी जसे अनुभवी व्यक्ति का प्र यक्ष नियत्रण सब प्रकार से हितकर सिद्ध होगा।

महासम्मेलन के माननीय सदस्यगण यह बात भली प्रकार से जानते हैं कि विद्यापीठ जैसी प्राचान सस्था जिसके द्वारा हजारो योग्य वैद्यो का अबतक निमाण हुआ है अमा य अवस्था म चल रही है। विद्यापीठ का निज का विद्यालय न होन के कारण उसकी परीक्षाओ कों राजकीय मा यता नही है। विद्यालय का अभाव प्राय चालीस वर्षो से वैद्य जगत को खटक रहा है और अब तो विद्यापीठ का सुव्यवस्थित विद्यालय न होना हमार लिए बड हा कलक का विषय बन गया है। इस कलक को मिटान की सामथ्य कविराज उपे द्रनाथदासजी म स्पष्ट परिलक्षित होती है। तीन चार माह पूव उन्होन राजधानी दिल्ली म विद्यापीठ का अष्टाग आयुर्वेद महाविद्यालय स्थापित करन की एक एसी योजना प्रस्तुत की है जिसके लिए भरपूर सहयोग देन का उत्साह वैद्यजगत म दिखाई दे रहा है। यह कविराजजी के व्यक्तित्व एव प्रभाव का ज्वल त उदाहरण है कि उनकी योजना को एसे विशाल वग का समथन प्राप्त है जिसके द्वारा आयर्वेद महाविद्यालय की प्रस्तुत योजना के लिए वैद्यो द्वारा ही आर्थिक एव बौद्धिक सहयोग मिलन की स्थिति है। सक्षप म हम यहा उन सहायताओ का उल्लख करते हैं जो कविराजजी द्वारा प्रस्तुत महाविद्यालय योजना के निमित्त हमारी जानकारी म सुलभ है।

दिल्ली म विद्यापीठ के महाविद्यालय के लिए निम्न सज्जन एक एक बडा कमरा (हाल) बनवा देन को तैयार हैं —
१—श्री भारत आयुर्वेद भवन मेरठ २—वैद्य श्री महादेव प्रसाद जी आरा ३—वैद्य श्रा कन्हैयालाल भडा बम्बई।

विद्यापीठ के विद्यालय के लिए नियमित मासिक सहायताय —१—श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवट लि० ५००) मासिक २—श्री बनवारीलाल आयुर्वेद विद्यालय दिल्ली ३५०) मासिक ३—विभिन्न १५ सज्जनो के मासिक सहायता के आश्वासन १७०) मासिक।

आयुर्वेदीय पत्रो म से निम्न पत्र विद्यापीठ के महाविद्यालय के हतु धनसचय करन के निमित्त दान-कोष स्थापित करके अपने पाठको से धन-सग्रह करन को प्रस्तुत है —(१) सचित्र आयर्वेद मासिक कलकत्ता (२) आयुर्वेद मासिक नागपुर (३) आयुर्वेद जगत बम्बई (४) आयुर्वेद स देश लखनऊ (५) सुधानिधि मासिक प्रयाग।

विद्यापीठ के महाविद्यालय के सचालन म निम्न विद्वान अध्ययन अध्यापन की सेवाए बिना पारिश्रमिक के देन को प्रस्तुत हैं —१—कविराज श्री उपेन्द्रनाथदासजी २—वैद्यराज श्री मनोहरलालजी आयुर्वेदाचाय ३—आचाय श्री घनानन्दजी पन्त।

कविराज श्री उपेन्द्रनाथदास द्वारा प्रस्तुत महाविद्यालय योजना को सफल बनान हतु प्राय सभी प्रभावशाली विद्वान द्रव्य-सग्रह करके देन के लिए प्रस्तुत हैं जिनम निम्न कुछ सज्जनो के नाम विशष उल्लखनीय है —वैद्य श्री बैद्यनाथ सरकार,

देहली, वैद्य श्री ओंकार प्रसाद जी, देहली, वैद्य श्री जयरामदास जी, जयपुर, वैद्य श्री मणिराम जी आचार्य, रतनगढ, वैद्य श्री रामेश्वर जी शुक्ल शास्त्री, ग्वालियर, वैद्य श्री दुर्गादत्त जी शास्त्री, वाराणसी, वैद्य श्री कविराज प्रतापसिंह जी, दिल्ली, वैद्य श्री हरिबक्ष जी जोशी, कलकत्ता, वैद्य श्री शिवकरण शर्मा छागाणी, नागपुर, वैद्य श्री ख्यालीराम जी द्विवेदी, इन्दौर, वैद्य श्री बा० वा० नटराज शास्त्री, चिरुचिरापल्ली, वैद्य श्री बैद्यनाथ शर्मा, बम्बई, वैद्य श्री धर्मदत्त जी एम० एल० ए०, बरेली।

इसके अतिरिक्त अनेक सज्जन अपने प्रान्तो से धन-सग्रह करके देने का आश्वासन देते है। इन सब साधनो का उपयोग तभी हो सकेगा जबकि विद्यापीठ का नेतृत्व सुयोग्य और कर्मठ व्यक्तियो के हाथ म हो और विद्यालय का सयोजन विश्वस्त एव प्रभावशाली व्यक्तियो की समिति द्वारा आरम्भ हो।

अपने अष्टाग आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थापना आयुर्वेद की रक्षा के लिये अब नितान्त आवश्यक है। हम नये पाठ्यक्रम से शिक्षित चिकित्सक वैद्यो की समालोचना तो करते है परन्तु एक भी आदर्श विद्यालय का सचालन नही करते। जब हमारा आदर्श विद्यालय नही है तो शिक्षार्थी नये पाठ्यक्रम को न अपनावे तो क्या करे? मैने स्वय अपने प्रिय पुत्र को नये पाठ्यक्रम से आयुर्वेद इसीलिये पढाया कि सर्वांगपूर्ण और व्यवस्थित अष्टाग आयुर्वेद विद्यालय सुलभ नही है। अपनी सन्तान को अच्छी और उच्चतम शिक्षा देने की इच्छा किसको नही होती। आज हजारो वैद्य चाहते है कि उनकी सन्ताने विधिवत् अष्टाग आयुर्वेद का शिक्षण ग्रहण करके आयुर्वेद की शक्ति बढावे परन्तु जहा यथोचित रूप से शिक्षण की व्यवस्था ही नही और केवल केन्द्रो म बैठकर परीक्षा लेने और प्रमाणपत्र देने का क्रम चल रहा है, वह भी मान्यता प्राप्त नही, तो फिर आयुर्वेद का व्यवसाय कैसे प्रगति करेगा? यह एक अत्यन्त गभीर प्रश्न है।

अतीत मे हमारे निजी महाविद्यालय की कई योजनाए बनकर बिगड चुकी है, इसलिये इस बार हमे इस विषय मे सावधानी और दूरदेशी के साथ काम लेना चाहिये। महाविद्यालय के लिये वर्तमान मे जो अनुकूल वातावरण उपस्थित है उसका सदुपयोग तभी हो सकता है जब विद्यापीठ का नेतृत्व ऐसे विद्वान के हाथ मे आवे जो स्वय महाविद्यालय के विषय मे रुचि रखते हो और जिनको वैद्य-जगत के सभी वर्गो का खुला समर्थन एव विश्वास प्राप्त हो। कविराज श्री उपेन्द्रनाथ दासजी इस दृष्टि से निश्चय ही सर्वोपरि हैं। हम कह सकते है कि कविराज जी की अध्यक्षता मे विद्यापीठ की उल्लेखनीय प्रगति तो होगी ही, उनके नेतृत्व मे चिरप्रतीक्षित महाविद्यालय बन कर ही रहेगा।

इसके विपरीत वर्तमान स्थिति और आयुर्वेद जगत का वातावरण ऐसा साफ दिखाई देता है कि यदि इस बार कविराज उपेन्द्रनाथ दासजी जैसे सर्वप्रिय विद्वान को आप विद्यापीठाध्यक्ष न बना सके तो पिछले इतिहास की भाति महाविद्यालय स्थापन का कार्य फिर लम्बी-चौडी बातो के बाद स्थगित हा जायगा। विद्यापीठ का विद्यालय तो तभी उच्चस्तर पर सचालित हो सकता है जबकि स्वय विद्यापीठ व्यवस्थित हो। हम नही कह सकते कि कविराज जी के अतिरिक्त अन्य सज्जन के हाथो म विद्यापीठ की बागडोर आने पर इस योजना का क्या स्वरूप होगा और जिन लोगो ने कविराज उपेन्द्रनाथ दास जी की योजना के नाम पर ही महाविद्यालय के हेतु सहायता देने और दिलाने म उत्साह प्रदर्शित किया है, उनका उत्साह भग होगा। इस बात म कोई सशय नही है कि कविराज उपेन्द्रनाथ दास जी योग्यता, ज्ञान, अनुभव, कुशलता, कार्य-कर्मठता, लगन, उत्साह एव व्यक्तित्व के प्रभाव की दृष्टि से—विद्यापीठाध्यक्षता के लिये सर्वाधिक उपयुक्त विद्वान है।

आयुर्वेद की उन्नति और विकास के प्रति कविराज जी म कितनी लगन है और उसके लिये वे कितना यथार्थ त्याग कर सकते है इसका अनुमान हमारे अनुभव म आये हुये कविराज जी के एक त्याग से लगाया जा सकता है। आयुर्वेद मे शारीर विषय पर एक ऐसे श्रेष्ठतम ग्रन्थ की आवश्यकता अकाट्य है जो आयुर्वेद के शारीर ज्ञान पर सर्वोत्तम एव सर्वांगपूर्ण पाठ्यग्रन्थ हो सके। हमने इस कार्य के लिये कविराज जी से प्रार्थना की। कविराज जी ने तीन वर्ष के निरन्तर परिश्रम के बाद सस्कृत मे आयुर्वेद शारीर नामक अद्वितीय ग्रन्थ प्रस्तुत किया। इस कार्य की विशालता का अनुमान इस बात से हो सकता है कि इसमे केवल सहायको को तेरह हजार रुपया पारिश्रमिक दिया गया। परन्तु कविराज उपेन्द्रनाथ दास जी ने हमारे भरपूर आग्रह के अनन्तर भी एक पैसा स्वय पारिश्रमिक रूप मे स्वीकार नही किया। ऐसे त्यागी कदाचित्

[शेषाश पृष्ठ ११२ पर]

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के माननीय सदस्यों की सेवा में

पुनः नम्र निवेदन

आयुर्वेद महासम्मेलन के सम्माननीय सदस्य महानुभावो की सेवा म एक निवदन पत्र मैंन माच के मध्य म प्रेषित किया था जिसम सदस्य बन्धुग्रो से विनय की थी कि व विद्यापीठाध्यक्षता के लिए अपना अमूल्य मत देश के सर्वोत्कृष्ट सक्रिय आयुर्वेदीय विद्वान कविराज श्री उपेद्र नाथ दास जी के पक्ष म प्रदान कर। कविराज श्री उपेद्र नाथ दास जी को ही विद्यापीठाध्यक्ष क्यो बनाया जाना चाहिए इस विषय पर अपन निवदन पत्र मै मैंन विस्तत प्रकाश डाला था। मै इस बात के लिए निश्चय ही हृदय से बहुत कृतज्ञ हूँ कि माननीय सदस्य बधुग्रो न अभूतपूव सख्या म मेरे निवदन म वर्णित वस्तुस्थिति पर ध्यान दिया। सदस्य बधुग्रो के जो सैकडो पत्र मेरे निवदन के उत्तर म आय हैं उनसे स्पष्ट है कि सदस्यो के विशाल बहुमत न विद्यापीठाध्यक्षता के लिए कविराज श्री उपेद्र नाथ दास जी का समथन किया है। महासम्मेलन के इतिहास म निर्विवाद रूप से यह एकमात्र एसा अवसर देखन म आया है जबकि विद्यापीठाध्यक्षता के निर्वाचन म अस्सी प्रतिशत सदस्यो न उत्साहपूवक मतुदान किया है। यह इसका ज्वलन्त प्रमाण है कि महासम्मेलन के सदस्यगण शीघ्र विद्यालय चाहते हैं और-उनम सगठन एव सस्था के प्रति अपूव जाग्रति का उदय हुआ है। आयुर्वेद और वैद्य समाज के हित म यह अत्यन्त शुभ एव कल्याणकर लक्षण है। सदस्य महानुभावो की महती कृपा एव उदारता के लिए उनके कृपापूण पत्रो का पथक्-पथक उत्तर न देकर इस वक्तव्य के द्वारा मै सब माननीय सदस्यो के प्रति विनीत कृतज्ञता अर्पित करता हूँ।

कुछ भाई पहल की भाति यह भ्रान्त प्रचार न करन लग कि इसका कोई श्रय मै ल रहा हूँ इसलिए यहा मै विनम्रता के साथ यह बहुत स्पष्ट कह देना चाहता हूँ कि कविराज श्री उपेन्द्रनाथ दास जी के लिए माननीय सदस्यो का जो विशाल समथन दृष्टिगोचर हुआ निश्चय ही वह मेरे किसी प्रयत्न का फल नही है। सदस्यो का वह विशाल समथन सबसे पहले तो सदस्यो की ही उदारता का फल है। दूसरे वह वास्तव म विद्यापीठ की विद्यालय-योजना का समथन है। तीसरे कविराज श्री उपेन्द्रनाथ दास जी की प्रकाण्ड विद्वत्ता प्रतिष्ठा ख्याति एव तीस वर्षों की सेवाओ का ही मुख्यत यह फल हुआ कि सदस्यो न उनका विशाल समथन किया। इस निर्वाचन न यह सिद्ध कर दिया कि महासम्मेलन सदस्य यथाथ क्रियात्मक कार्यो के लिए जागरूक हैं और उनकी हार्दिक इच्छा है कि विद्यापीठ का केद्रीय विद्यालय शीघ्र सचालित किया ही जाना चाहिए।

परन्तु महासम्मेलन सदस्यो को यह जानकर हार्दिक परिताप होगा कि विद्यापीठाध्यक्षता के लिए उनके इस प्रबल मतदान को मत गणना किय बिना ही बम्बई म २५ माच को स्थायी समिति की बैठक म अवैध घोषित कर दिया गया है। अभा मैं इस मतदान को अवैध घोषित करन की घटना पर कोई विशष टिप्पणी नही करना चाहता। यह बात वैद्य जगत आसानी से समझ सकेगा कि विवादी वग न जानबूझकर स्थायी समिति की बैठक को दिल्ली के स्थान पर बम्बई म रखवाया और वहा दलगत बहुमत के बल पर इस मतदान को अवैध कर दिया क्योकि सवत्र व्याप्त वातावरण से और कार्यालय की कृपा से कुछ स्वयभू महापुरुषो को यह आभास मिल गया था कि मतदान म कविराज श्री उपेद्रनाथ दास जी का समथन सदस्य बधुग्रो न प्रबल बहुमत से किया है। यद्यपि बम्बई की स्थायी समिति के विचाय विषयो म मतदान के सम्बन्ध म कोई विषय विचारणीय नही था। इस मतदान को अवैध घोषित करन के लिए किन बातो को आधार बनाया गया है और व किस सीमा तक न्यायपूण एव वैधानिक हैं इस विषय पर मै क्या कहूँ? जिनका कार्यालय पर अधिकार है व काला सफद करके कुछ भी कह सकते हैं। कार्यालय की ओर से सदस्यो की सेवा म यदि कोई विवरण आये तो व ही विवकपूण तथ्यातथ्य पर विचार करने की कृपा कर।

स्पष्ट है कि विद्यापीठाध्यक्षता के लिए अब फिर से मतदान होगा। कई वष बाद सदस्य बन्धुओ को अपने

मतदान के अधिकार का उपयोग करने का अवसर मिला है। मेरा सदस्यो से विनम्र निवेदन है कि वे इस पुन मतदान मे भी दूने उत्साह के साथ अपने अधिकार का उपयोग करे। सदस्य बन्धु और भी अधिक सख्या म मतदान करे और अपने कुछ भ्रान्त अभिमान मे भूले हुए भाइयो को दिखा दे कि अब सस्था मे वास्तविक विचार-पूर्वक काम करने वालो का ही बहुमत है, और सदस्यो को भ्रमजाल म नही उलझाया जा सकता।

माननीय सदस्य बन्धुओ से मेरा पुन विनम्र आग्रह है कि वे दोबारा मतदान मे भी अपना अमूल्य मत अधि-काधिक सख्या म विद्वद्वर आयुर्वेदवृहस्पति कविराज श्री उपेन्द्रनाथ दास जी साख्य-दर्शन-काव्यतीर्थ डी० एस० सी० ए० को ही प्रदान करके यह पुन सिद्ध कर द कि वे विद्या-पीठ का केन्द्रीय विद्यालय शीघ्र सचालित करने के प्रबल समर्थक है।

मुझे बडा खेद है कि प्रथम बार मतदान के अवसर पर कुछ भाइयो ने धुआधार पत्रकबाजी करके बहुत-सी नितान्त झूठी बातो का प्रचार किया है और विवादग्रस्त स्थिति उत्पन्न करने के लिए इधर-उधर का भ्रमजाल फैलाकर विद्वान सदस्य बन्धुओ को मुख्य और मूल विषय से हटाने का असफल प्रयत्न किया है। यह हमारे लिए कलक की बात है कि आयुर्वेद जगत् मे भी निर्वाचन के प्रसग म अत्यन्त ही निम्न स्तर पर उतर कर प्रचार किया गया है जैसा कि आजकल राजनीति म देखा जाता है। कविराज उपेन्द्रनाथ दास जी जैसे निर्लेप एव पुराने यथार्थ आयुर्वेदसेवी, सीधे-सरल ऋषिकल्प विद्वान पर इस पत्रक-बाजी मे जो निराधार और निन्दनीय आक्षेप किये गये है, उनको देखकर हृदय द्रवित हो जाता है, और लगता है कि हम अपनी सास्कृतिक परम्पराओ एव नैतिक स्तर से साधारण-सी पद-प्राप्ति के लिए कितने विचलित हो गये है। किसी भी वैज्ञानिक सम्प्रदाय मे ऐसी ओछी बाते होती नही देखी। महासम्मेलन विद्वानो की सस्था है, उसके सब कार्य उसकी प्रतिष्ठा के अनुकूल होने चाहिए, किसी एक उम्मेदवार के पक्ष म दूसरे उम्मेदवार के प्रति गाली-गलौज करना क्या उचित और क्षम्य कहा जा सकता है? यद्यपि जिस पक्ष ने यह निम्न कोटि का प्रचार किया है, उसने अपने समर्थित उम्मीदवार की योग्यता, कार्य और परिचय के विषय मे अनेक नितान्त झूठी बाते लिखी है, परन्तु सदस्यगण जानते है कि कविराज उपेन्द्रनाथ दास जी के समर्थको ने दूसरे सज्जन के विषय मे एक भी असम्मान-जनक वाक्य नही लिखा। यहा तक कि स्वस्थ वातावरण बनाये रखने के लिए असत्य एव भ्रामक बातो का खण्डन तक नही किया। दूसरे पक्ष के भाइयो को इस भावना का आदर करना चाहिए था। अपनी स्वतन्त्र इच्छा से यदि कोई योग्य विद्वान का समर्थन करता है और उसको मत देता है तो वह पैसो पर बिका हुआ है, ऐसी नीचता की बात कह देना और विज्ञ सदस्यो को अपनी नेतागिरी की लाठी से हाकने का दुष्प्रयत्न करना, सदस्यो के व्यक्ति स्वातत्र्य एव उनकी योग्यता का खुला अपमान करना है।

मेरी सभी भाइयो से करबद्ध प्रार्थना है कि निर्वाचन सर्वथा स्वस्थ वातावरण मे ही सम्पन्न होने का अवसर द। माननीय सदस्यो के विवेक पर विश्वास रखे। शिष्टता-पूर्वक अपनी बात कहे और निर्णय को सर्वथा सदस्यो की इच्छा पर छोड दे। विशेषकर उन भाइयो से जो किन्ही विशेष कारणोवश विद्यापीठ मे क्रियात्मक स्थिति नही आने देना चाहते, मेरी बार-बार प्रार्थना है कि अपने प्रचार के स्तर को, आगे अधिक गिरावे नही। जिसका उन्हे समर्थन करना है, करे, परन्तु अकारण ही दूसरो पर आक्षेप न करे। आयुर्वेद के इस सकट के काल म भी यदि सौहार्दपूर्ण एकता का प्रदर्शन नही कर सकते तो कम-से-कम इतनी कृपा तो करे ही कि वैद्य-जगत का वातावरण स्वस्थ बना रहे और बाहरी समाज हमारे निम्न स्तर का तमाशा न देख सके।

विद्यापीठ निर्वाचन के प्रसग मे भाई शिवशर्माजी का एक पत्रक देख कर मुझे आश्चर्य हुआ। निश्चय ही मै उस विषय मे चुप ही रहना चाहता था, यही कारण है कि वृथा विवाद से बचने की दृष्टि से कोई टिप्पणी नही की गयी। मुझ दुख है कि भाई शिवशर्माजी ने इस पत्रक मे भी अपने मुँह अपनी प्रशसा के पुल बाँधते हुए उस मुकद्दमे के कलुष को आगे रख कर प्रचार का साधन बनाया है। मै नही समझता कि निर्वाचन से उस विवाद का क्या सम्बन्ध है? उनके पत्रक के विषय मे मै इससे अधिक और कुछ नही कहना चाहता कि वे अब अधिक फजीहत न करावे, हाथ कगन के लिये आरसी की जरूरत नही होती।

कविराज उपेन्द्रनाथ दास जी जैसे पूजनीय विद्वान् पर मेरी आड ले कर पत्रको मे जो घृणास्पद आक्षेप किये

गम है उनसे मेरा अन्तमन पीडित हुआ है। जिस महा पुरुष न आयुर्वेद म शारीर जैसे अत्यावश्यक विषय पर विशाल मौलिक ग्रन्थ रचना के काय म आग्रहपूण प्राथना करन पर भी एक पाई नही ली और जो विद्यापीठ के विद्यालय म नि शुल्क अध्यापन-सेवा करन को तयार हैं उनको धनक्रीत कह देना मनुष्यता से गिर जान के समान पाप है। यह निता त हास्यास्पद और सफद झूठ है कि कविराज जी के पुत्र किसा की फम म नौकरी करते ह। कविराज जी को इसलिए विद्यापीठाध्यक्ष बनान का समथन किया जा रहा है कि उस पर अधिकार कर के पुस्तक विक्रय का प्रय न किया जायगा एसा कहना बिल्कुल ही भ्रा त है। यही नही जिन जिन न कविराज श्री उपे द्रनाथ दास जी का समथन किया उन सब पर आक्षपो की बौछार की गयी। हमारे वत्तमान विद्यापीठाध्यक्ष स्वनाम ध य वद्यराज श्री वी० बी० नटराज शास्त्री के लिए भी मनमान ढग से अनगल बात कह दी गयी। सभी उच्चतम विद्वानो को धनक्रीत कह कर विद्या और विद्वत्ता का घोर अपमान किया गया है।

कविराज श्री उपे द्रनाथ दास जी का चुनाव अभियान किसी के हजारो रुपयो की सहायता से चला इसके विषय म एक ज्वलन्त तथ्य विद्वान सदस्यो के सामन आ चुका है वह है दूसरे पक्ष का घनघोर चुनाव प्रचार। सदस्यो न इस सचाई को प्रत्यक्ष देखा है कि दूसरे पक्ष न केवल धुआधार पत्रकबाजी म ही कितना धन बहाया है जब कि कविराज उपे द्रनाथ दास जी के पक्ष म केवल दो ही पत्रक सदस्यो की सेवा म पहुचे ह एक दिल्ली से एक झासी से वहाँ विरोधी सज्जन के गिन कर बारह पत्रक तो केवल कलकत्ता से प्रषित किय गय हैं। सदस्यब धु इस छोटी-सी बात से इसका निणय कर सकते ह कि धन के आश्रय का आरोप किस पर आता है।

मुझ क्लश है कि इच्छा न रहते हुए भी मुझ प्रसगवश ही यहा इन बातो का उल्लख करना पडा। जो कुछ भी हो जो हो चुका वह हो चुका। अब भी हम विवक से काम लना चाहिए। पहल मतदान के ज्वल त उदाहरण से और वैद्य-समाज म व्याप्त वातावरण से सबक लिया जाना चाहिए।

मै तो हृदय से केवल सक्रिय और विधायक कार्यों का समथक हूँ। वैद्य-समाज और आयुर्वेद के हित मे यथाथ क्रियात्मक कार्यों के लिए मै बड-से-बडा त्याग करन को हर वैद्य के लिए सौभाग्य समझता हूँ और अपन को भी उसम ही कृतकाय मानता हू। कविराज उपे द्रनाथ दास जी का समथन मै केवल इस कारण कर रहा हू कि व विद्यापीठ का के द्रीय विद्यालय इस वष स्थापित करन के लिए दृढप्रतिज्ञ ह। आयुवद जगत जानता है कि मेरा वह विख्यात और इतना बडा विवाद केवल विश्व विद्यालय-योजना की असफलता के कारण ही चला था। आज भी वद्य जगत म जो झगड ह उनका एकमात्र कारण विद्यापीठ का विद्यालय न होना है। म विश्वासपूवक कह सकता हू कि कविराज उपे द्रनाथ दास के विद्यापीठाध्यक्ष बनन से विद्यापीठ का के द्रीय विद्यालय निश्चित रूप से स्थापित हो जायगा। कविराज जी की स्वीकृत योजना नुसार ही आज एसी स्थिति है कि आनन फानन विद्यालय स्थापित हो सकता है। जमीन मिल रही है रुपया मिल रहा है भवन बनवा देन वाल मिल रह ह नि शुल्क अध्यापक मिल रह ह जरूरत केवल लगन के साथ योजना सम्पादित करनवाल व्यक्ति की है और विद्यालय योजना के लिए वह लगन एव अध्यवसाय वतमान स्थिति म केवल कविराज उपे द्रनाथ दास म दिखाई दे रहा है उनके ही नाम पर विद्यालय के लिए सहयोग देन को लोग मुक्तहस्त तयार हैं। केवल यही कारण है कि मै और आयुवद जगत के सभी प्रमुख सेवक कविराज उपे द्र नाथ दास को विद्यापीठाध्यक्ष के रूप म देखना चाहते हैं। यदि दूसरे उम्मीदवार विद्वान यह विश्वास दिलाते ह कि व विद्यापीठ का विद्यालय इस वष बना दग तो उनका भी हृदय से समथन करन म मुझ रचमात्र आपत्ति न होती और म ही क्या सभी विद्वान कविराजजी को चुनाव से हटन का आग्रह करते। पर तु सदस्यो को इगित है कि दूसरे उम्मीदवार सज्जन न अपन चुनाव घोषणा पत्र म भी विद्यालय का जिक्र तक नही किया। प्रत्युत उनके चुनाव-प्रचार म विद्यालय-योजना का उपहास किया गया।

आज के समय म विद्यापीठ की साथकता ही केवल निज के विद्यालय पर निभर है। आयुर्वेद जगत को मालूम है कि सरकारी पक्ष न हाल ही म यह घोषणा की है कि आयुर्वेद के छात्र आयुर्वेद पढना नही चाहते। इसी प्रश्न पर लखनऊ के राजकीय आयुर्वेद विद्यालय म एक माह से हडताल चल रही है। सरकार के इस आरोप का उत्तर

निज का विद्यालय खोल कर ही दिया जा सकता है। आयुर्वेद का भविष्य अब केवल इस आधार पर निर्भर है कि व्यवस्थित अपने विद्यालय के द्वारा सरकार को दिखाया जाय कि योग्यतम चिकित्सक किस प्रकार तैयार किये जा सकते हैं।

सदस्यगण विचार करें कि कुछ भाई जो विद्यापीठ के द्वारा निर्धन छात्रों के हजारों रुपयों का मनचाहा उपयोग कर रहे हैं केवल इसी कारण कविराज उपेन्द्रनाथ दास जी का विरोध करते हैं कि वे वास्तव में नहीं चाहते कि विद्यापीठ का विद्यालय स्थापित हो। स्पष्ट है कि वही दल कविराज जी का विरोध कर रहा है जो पिछले बीस वर्षों से निरन्तर यन केन प्रकारेण विद्यालय की योजना को टालता आ रहा है। उस वर्ग को भय है कि विद्यालय स्थापित होते ही विद्यापीठ की जागीर हाथ से निकल जायगी और वह सुविधा हाथ में नहीं रहेगी जो विद्यापीठ की परीक्षाओं में मनमानी करके प्राप्त कर ली जाती है। विद्यापीठ की परीक्षाओं का क्या प्रबन्ध है इसका एक ज्वलन्त प्रमाण यह है कि आजकल विद्यापीठ की परीक्षाएं चल रही हैं परन्तु विद्यापीठ मन्त्री दौरे पर हैं और कार्यालय के प्रधान क्लर्क जो अब अपने को अपनी ही इच्छा से विधान के प्रतिकूल कार्यालय मन्त्री की उपाधि से विभूषित करने लगे हैं वे स्थायी समिति की बैठक में बम्बई पधारे हैं। परीक्षा काल में कार्यालय में उनके प्रति कौन उत्तरदायी है और प्रश्न पत्रों और उत्तर-पुस्तकों की भी गोपनीयता को कौन सुरक्षित रखे यह भगवान जानें। स्वयं का विद्यालय न होने के कारण हमारी इस पचास वर्ष पुरानी संस्था की परीक्षाओं की यह दुर्दशा है कि उन्हें कहीं मान्यता नहीं। अब सदस्यगण ही विचार करें कि विद्यालय की स्थापना क्यों और कैसे नितान्त आवश्यक है।

इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए मैं सम्मेलन के सभी माननीय सदस्यों से पुनः पुनः आग्रह करूंगा कि वे आगामी मतदान में अपना मत कविराज उपेन्द्रनाथ दास जी को ही प्रदान करें।

कविराज उपेन्द्रनाथ दास की विजय यथार्थ में विद्यालय योजना की विजय होगी। महासम्मेलन में क्रियात्मक प्रवृत्ति की विजय होगी। और सही अर्थों में वह महासम्मेलन के सक्रिय सदस्यों की ही विजय होगी।

जिस प्रकार पहली बार मतदान करके बहुसंख्यक सदस्यों ने कृपा करके मुझे पत्र द्वारा सूचित किया है मेरी प्रार्थना है कि दूसरी बार भी वे अपने अपने अभिमत की सूचना पत्र द्वारा मुझे प्रदान करके उपकृत करें।

आपके कृपापूर्ण सत्परामर्श एवं सूचनाओं की प्रतीक्षा में रहूंगा।

—वैद्य रामनारायण शर्मा आयुर्वेदोपाध्याय
संचालक सचित्र आयुर्वेद कलकत्ता।

शेषांश] **महासम्मेलन के सदस्यों से अपील** [पृष्ठ ९०८ का

ढूंढने पर भी सुलभ न होंगे। आयुर्वेद के लिये कविराज जी के मन में अनन्त त्याग की भावनाएं हैं जिन्हें हमने निकट से अनुभव किया है। विद्यापीठाध्यक्ष के रूप में ऐसे यथार्थ त्यागी को पाकर हम निश्चय ही अभूतपूर्व प्रगति कर सकेंगे और हमारी संस्था का विस्तार भी होगा।

अतः हमारा महासम्मेलन के माननीय सदस्यों से विनम्र आग्रह है कि वे विद्यापीठाध्यक्षता के लिये अपना अमूल्य मत कविराज श्री उपेन्द्रनाथ दास जी को ही प्रदान करके आयुर्वेद की रक्षा में सक्रिय योग दें।

वर्तमान संघर्षपूर्ण परिस्थितियों में आयुर्वेद के हितों की रक्षा के लिये अपनी प्रतिनिधि संस्था को बलवान और प्रगतिशील बनाने में योग देना बहुत महत्वपूर्ण कार्य है। संस्था के लिये योग्यतम नेता के निर्वाचन में उत्साहपूर्वक और निर्भय एवं निर्लेप होकर मतदान करने को हम पवित्र कर्तव्य मानते हैं। अतः आपसे प्रार्थना है कि आप अपना मत कविराज उपेन्द्रनाथदासजी के ही पक्ष में देवें और एक पोस्टकार्ड द्वारा उसकी सूचना कृपया हमें भी प्रदान करें।

वैद्य पं० रामनारायण शर्मा, आयुर्वेदोपाध्याय

विद्यापीठ का विद्यालय कैसे बन सकता है ?

आचार्य मनिराम शर्मा भिषगाचार्य

आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका में सपादक महोदय ने सपादकीय लेख मे लिखा है, कि "आयुर्वेद विश्वविद्यालय बनाने के आज तक सभी प्रयत्न निष्फल रहे। अब नई स्कीम यह है, कि दो लाख रुपया जमा हो जाने पर विश्वविद्यालय का श्रीगणेश किया जाय, जिससे अर्थ सकट मे किसी का मुँह ताकना न पडे और विद्यालय आसानी से चलता रहे।" ऐसा होना हम भी अति प्रशस्त समझते है, परन्तु सपादक महोदय भी थोडा-सा विचार करे कि दो लाख रुपये की थैली आपको कौन किस बूते पर भेट करेगा। स्कीमो से रुपया मिल सकेगा इसमे बहुत भारी सदेह है। हाँ, मिल सकता है, तब जब आप निष्पक्ष भाव से धूनीरमा कर बैठ जाये, स्वार्थ-त्याग करे, अनन्यचेता होकर "उद्धरेदात्मनात्मान नात्मानमवसादयेत्" का सिद्धान्त स्वीकार करे। आपके पीछे कोई परिवार का झगडा तो है नही। आप सन्त-महन्त प्रभावशाली व्यक्ति है, धनी है, अत आप स्वय पहिले २५-३० हजार रुपये महाविद्यालय के निमित्त प्रदान करे। ५०-६० हजार रुपया अपने सिन्धी चेलो से ले। पाकिस्तान होने से सिन्धी क्या देंगे ऐसा विचार न करे। अब भी बहुत-से सिन्धी लक्षाधीश है। आप उन्हे कहे तो दे सकते है। जोधपुर प्रस्तावानुसार वे लाख रुपया देना चाहते ही थे ऐसा आपने स्वय लिखा है। अब वे पूरा नही तो ५०-६० हजार दे सकते है। इस तरह करीब लाख रुपया आपके पास जमा हो जावेगा, फिर श्री शिवशर्मा जी से कहे कि मैने इतना रुपया इकट्ठा कर लिया है तथा आप एक-दो लाख रुपया इकट्ठा करके और दे। श्री शिवशर्म्मा जी प्रभावशाली व्यक्ति है, बम्बई मे आपकी खासी धाक है ऐसा वे स्वय मानते है। वे अपने परिचित सौ धनी व्यक्तियो से हजार-हजार रुपया भी लें तो लाख रुपया सहसा ही एकत्रित हो सकता है। इतना होने पर फिर हमारे सम्मिलित उद्योग से राष्ट्रपति जी श्री मुरारजी देसाई, एव श्री नदाजी भाई आदि से कहे। ये महानुभाव स्वय नही दे तो सरकार से दिला सकते है, ऐसा मेरा विश्वास है। इस तरह करीब २ लाख रुपया आपके पास जमा हो जावेगा, करीब एक लाख रुपया विद्यापीठ के पास जमा है, सब मिलाकर चार लाख रुपये की धनराशि एकत्रित हो जावेगी। फिर श्री रामनारायणजी से एक लाख रुपया ले, पाच लाख रुपया होने से सुदर आयुर्वेद विश्वविद्यालय का निर्माण-कार्य आरम्भ हो सकता है। ऐसा होने पर लाखो रुपाया आपके चरणो मे और बरसेगा। केवल स्कीमे बनाने से रुपया नही मिलता। ऐसा मेरा अनुभव है।

आप तो बहुत योग्य व्यक्ति है। अनपढ, उजड्ड, गँवार भी स्कीमे तैयार कर सकता है। धन मिलता है प्रेम से, प्रभाव से, दबाव मे, तथा स्वार्थ-त्याग से। आप आये हुए धन को भी ठोकर लगाते है और थोथी स्कीमे बनाते है, कैसे पार पडेगी। जैसे श्री रामनारायणजी ने दिल्ली-आयुर्वेद महाविद्यालय के लिए पाच साल तक पाँच सौ रुपया प्रतिमास देने का वचन दिया तो आप लोगो ने स्वीकार नही किया। श्री रामनारायण जी धन्यवाद के पात्र है जिन्होने प्रारम्भ मे ही ऐसा वचन दिया। आपको यह धन सहर्ष लेना चाहिए था, जो करीब २ लाख रुपये का व्याज होता है। कार्यारम्भ होने पर धीरे-धीरे और धन आता रहता। श्रीमान् जी ? धनदाता पहिले परीक्षा लेते है। ठोस कार्य होने पर धन देते है। सुनिये—मै जब दिल्ली विद्यापीठ कासभापति बना तो मन मे विचार किया कि हमारे विद्यापीठ का आयुर्वेद महाविद्यालय कैसे बनें, क्योकि मैने अपने भाषण मे महाविद्यालय के ऊपर ही अधिक जोर दिया था। मैने वैद्य महानुभावो से, धनीमानी प्रतिष्ठित व्यक्तियो से, तथा साथियो से, महाविद्यालय के विषय मे परामर्श किया, परन्तु किसी ने भी सहयोग नही दिया। हा, मुझसे पढे हुए स्नातको ने परम सहयोग दिया जिससे दो लाख की सपत्ति श्री धन्वन्तरि मदिर रतनगढ मे जमा हो गई।

मैने एक प्रज्ञापराध जरूर किया है। वह यह है कि श्री रामनारायण जी के बडे भाई श्री रामदयालुजी ने कहा था कि देहली जैसे केन्द्रो मे मदिर बनावे तो हम ५०

हजार रुपया था इससे अधिक देंगे यह मैंने स्वीकार नहीं किया, अगर कर लेता तो इस मन्दिर की उपयोगिता अधिक बढ जाती। मै इस गलती को महसूस करता हूँ। परन्तु अब क्या होगा। देहली आयुर्वेद महासम्मेलन मे मेरे एवं स्वर्गीय पूज्य श्री यादवजी महाराज के उपलक्ष्य मे श्री रामनारायणजी ने सारे सम्मेलन के लिए भोजन का सुन्दर प्रबन्ध किया। प्रात श्री रामनारायणजी मेरे पास आये और कहा कि आज प्रीति भोज में आपको सम्मिलित होना है। मैंने कहा मैं बिना दक्षिणा के सम्मिलित नही हो सकता, तब श्री रामनारायणजी ने श्री धन्वन्तरि मन्दिर के लिए ५ हजार रुपये की धनराशि दान देने का वचन दिया। साढे बारह सौ रुपया मेरे पास भेज दिया और कहा कि रचनात्मक कार्यारम्भ करे। मैं साढे बारह सौ से क्या कार्यारम्भ करता, एक फूस की टापरी बनायें तो पांच सौ रुपया चाहिए। एक कर्मचारी रखे तो ४०-५० रु० मासिक चाहिए। ५-६ मास मे रुपया साढे बारह सौ खतम हो जाये, और फूस की टापरी टूट जाये। फिर रुपया गुरु खा गया ऐसा सदेह हो जाय। रुपया देने वाले के मन मे सदेह बहुत जल्दी होता है। दे कि नही दे? मेरा रुपया अमुक कार्य मे लगेगा कि नही? लेनेवाला व्यक्ति खा तो नही जावेगा इत्यादि। ऐसा होना स्वाभाविक है। सभव है श्री रामनारायणजी ने ऐसा ही सोचा हो कि गुरु ने रुपया कमाने का एक किस्म का फिरका रचा है। अत जो भेज दिया सो भेज दिया और नही देना चाहिए। ऐसा मेरा अनुमान है।

खैर, मै आयुर्वेदशास्त्रचर्चा-परिषद पटना मे गया और श्री रामनारायणजी से कहा कि रुपया नही पहुँचा। उन्होने उत्तर दिया कि मैंने भेज दिया है। मैने कहा कि साढे बारह सौ ही भेजा है। शेष साढे सैंतीस सौ रुपया और भेजे। तो कहा कि रुपया मैंने नही कमाया है मेरे भाईजी ने कमाया हैं इत्यादि। श्री रामनारायणजी अति बुद्धिमान व्यक्ति हैं। करोडपति होने पर भी अपने धन का प्राय दुरुपयोग देखना नही चाहते—सदुपयोग चाहते है। सभव है श्री रामनारायणजी ने मेरी परीक्षार्थ ऐसा किया हो, उनके पास धन की कमी नही है, कार्य करनेवाला व्यक्ति चाहिए। भरपूर देते है। श्री रामनारायणजी मेरी अनुपस्थिति मे रतनगढ आये और मदिर के निर्माण-कार्य को देखकर बहुत ही प्रभावित एव प्रसन्न हुए, और शेष रुपया शीघ्र भेज दिया। और इसके चलाने की कोई स्कीम भी विचार रहे है। कहने का तात्पर्य यह है कि मेरा और श्री रामनारायणजी का पिता-पुत्रवत्वनिष्ठ सम्बन्ध है। फिर भी मेरी परीक्षा ली। और आपको तो बिना ही परीक्षा के इतनी धनराशि दे रहे थे जो आपने स्वीकार नही की। खैर, अब मैंने जो स्कीम रुपया एकत्रित करने की ऊपर बतलाई है उसको कार्य मे परिणत करे।

ऐसा करने मे यदि आप असमर्थ हैं तो आदरणीय श्री धुलेकरजी का झासी आयुर्वेद विश्व विद्यालय लेने का विचार करे। अगर श्री धुलेकरजी हमारे विद्यापीठ के नाम रजिष्ट्री करा दें तो सहर्ष स्वीकार करें। झासी ऐतिहासिक नगरी है। श्री धुलेकरजी ने अपने प्रभाव से लाखो रुपया इसमें लगाया है। मैंने इसे श्री रामनारायणजी के साथ देखा है। यह प्रतिष्ठान अनोखा है। इसमे प्रायः आयुर्वेदज्ञ योग्य व्यक्ति भी है। एक आयुर्वेद कोष का निर्माण भी हो रहा है। इसमे कुछ प्रदर्शन अधिक है। ठोस कार्य होना चाहिए। विद्यापीठ इसे सुधारेगा। परन्तु श्री धुलेकरजी सभव है मन मे यह विचार करे कि इतने बडे प्रतिष्ठान को विद्यापीठ चला नही सकेगा। वैद्य महानुभाव कर्मठ दिखाई नही देते। इस कारण न दे तो श्री धन्वन्तरि मदिर रतनगढ को ले लेवे। इसमे डेढ लाख का निर्माण कार्य हो चुका है। ५० हजार की भूमि है। यह २ लाख की स्थावर सपत्ति अवश्य स्वीकार करे। मदिर के नक्शे के अनुसार निर्माण-कार्य पूरा करे और विद्यापीठ का कार्यालय स्थापित करे। भारत विख्यात कविराज श्री प्रतापसिह जी का अहमदाबाद सम्मेलन मे या किसी अन्य सम्मेलन मे प्रस्ताव था कि जो व्यक्ति ५०) हजार रुपये भवन बनाकर महासम्मेलन को प्रदान करे, कार्यालय वही स्थापित किया जाय। जोधपुर सम्मेलन में भी प्रस्ताव पास हुआ कि जिस स्थान से एक लाख रुपया मिले वहा विद्यापीठ का महाविद्यालय खोला जाय। अब धन्वन्तरि मन्दिर की करीब दो लाख की सम्पत्ति महासम्मेलन को मिलती है। फिर ननु-नच क्यो? मदिर स्वीकार किया जाय और जो दो लाख की स्कीम है वह इसीमे व्यय की जाय। जिससे सर्वाङ्गपूर्ण सस्था बन जावे। यह भी स्वीकार न करे तो श्री भाई दयानिधि जी का भवन ले लेवे, ऐसी मेरी राय है। आयुर्वेद विश्वविद्यालय अवश्य बनावे। श्री सपादकजी महोदय, मैंने आपकी समालोचना नही की है। सही-सही लिखकर धनसग्रह करने का मार्ग बताया है। मेरा केवल सुझाव है। हमारे योग्य जो कार्य हो हमे कहे, करने को हम सहर्ष तैयार हैं। जैसे भी हो, आयुर्वेद विश्वविद्यालय अवश्य बने, जिससे हमारे वैद्य समाज की प्रतिष्ठा हो और सरकार हमारी विद्यापीठ-परीक्षा को मान्यता प्रदान करे। ऐसी मेरी अभिलाषा है।

सत्यान्वेषण

वैद्यरत्न कविराज प्रतापसिंह, रसायनाचार्य

आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका के प्रधान सम्पादक श्री स्वामी चेतनानन्द चिदाकाशी का २० नवम्बर '५७ का एक गश्ती पत्र देखने का मुझे अवसर मिला। पहले तो मेरा यह विचार रहा कि ऐसे अनर्गल और निम्नस्तर के प्रचार पर कोई टीका-टिप्पणी करके उसको अनपेक्षित महत्त्व नही देना चाहिये और एक यथार्थ महत्त्वपूर्ण कार्य को वृथा ही विवाद का विषय नही बनाना चाहिये, परन्तु उक्त गश्ती पत्र के सम्बन्ध मे मुझे अनेक मित्रो के पत्र मिले, जिनसे मै इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिये बाध्य हो गया कि उससे मेरे मित्र दु खी और भ्रमपूर्ण हुए है। निश्चय ही मुझे अत्यन्त खेद है कि आयुर्वेद महासम्मेलन कार्यालय का एक अधिकार-सम्पन्न व्यक्ति ऐसी असत्य बाते लिख कर वैद्य-समाज को भ्रमित करने का दुष्प्रयत्न क्यो करता है ?

उक्त परिपत्र का भावार्थ यह है कि ससद सदस्यो को आयुर्वेद के निकट लाने के हेतु नार्थ एवेन्यू एम० पी० क्लब मे जो आयुर्वेदिक औषधालय स्थापित किया गया है—उसके इस रूप में आयोजन से आयुर्वेद महासम्मेलन की प्रतिष्ठा पर आक्षेप हुआ है और उसके लिए मै तथा वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के सचालक उत्तरदायी है।

प्रथम तो मै वैद्य-समाज से यह विनम्र प्रार्थना करना चाहूँगा कि जो सज्जन भी इस प्रसङ्ग मे जाँच और जानकारी करना चाहे वे कृपा कर एम० पी० क्लब के अधिकारियो से वार्तालाप कर ले ताकि उन्हे वास्तविक सत्य का ज्ञान हो जाय। इसके अतिरिक्त इस विषय मे थोडा-सा स्पष्टीकरण मै करता हूँ।

अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन की प्रतिष्ठा की रक्षा करना और उसका गौरव बढाना वैद्यमात्र का कर्त्तव्य है। परन्तु मिथ्या प्रचार के आधार पर गौरव कैसे बढेगा, यह मै नही समझ पाता। इस औषधालय-स्थापन के प्रसङ्ग में यह निवेदन है कि महासम्मेलन ने प्रस्ताव स्वीकृत किया और जो कमेटी बनाई उसमे मेरा नाम बिना मेरी स्वीकृति के रखा गया। गश्ती पत्र मे लिखा गया है कि मेरी उपस्थिति में प्रस्ताव स्वीकृत हुआ, परन्तु सत्य यह है कि मुझसे किसी ने नही पूछा कि तुम्हारा नाम होगा, इसीलिये मैने उस कमेटी से त्याग-पत्र दिया।

ससद के माननीय सदस्यो को आयुर्वेद के विषय में व्यापक रूप से प्रभावित करने के लिये ससदीय क्षेत्र मे एक सुव्यवस्थित आयुर्वेदिक औषधालय स्थापित करन के हेतु मै बहुत दिनो से चेष्टा मे था। समय-समय पर मित्रो से चर्चा करता रहता था। मेरा स्वय का यही प्रयत्न था कि सभी आयुर्वेद औषधि-निर्माताओ के सहयोग से इस औषधालय का सचालन किया जाय। महासम्मेलन के तत्वावधान मे यह आयोजन हो जाता तो मुझे हर्ष ही होता, परन्तु इस आशय के पत्र जब औषध-निर्माताओ को लिखे गये तो मुझे खेद है कि रसशाला औषधाश्रम गोडल एव ऊँझा फार्मसी के अतिरिक्त किसी ने सहयोग की रुचि न दिखाई। जो पत्रोत्तर आये उनमे कुछ ने लिखा कि हम एक बार औषध आदि की सहायता कर सकते है। इस सम्बन्ध मे एक फार्मेसी वाले बन्धु का जो उत्तर मुझे मिला उसका कुछ अश यहाँ ज्यो-का-त्यो उद्धृत करता हूँ।

"आपकी योजना बहुत सुन्दर है। ससद-क्षेत्र मे औषधालय के प्रबन्ध से हमारे लोकप्रिय ससद-सदस्यो पर आयुर्वेद का प्रत्यक्ष प्रभाव पडेगा और राजकीय क्षेत्र मे आयुर्वेद का पक्ष प्रबल होगा। यह औषधालय बहुत साधन-सम्पन्न और विशाल पैमाने पर चलाया जाय तभी उसका अपेक्षित प्रभाव होगा। परन्तु महासम्मेलन के तत्वावधान मे इस आयोजन का सफल होना सभव नही जान पडता। क्यो कि महासम्मेलन मे निश्चय तो बडे-बडे होते है, परन्तु न जाने क्या बात है, कार्य यथार्थ हो नही पाते। ऐसे ही कई वर्ष पूर्व एक बार काग्रेस क्षेत्र को आयुर्वेद के पक्ष मे प्रभावित करने के लिए वर्धा मे एक औषधालय सचालित करने का निश्चय महासम्मेलन मे किया गया था। उस विषय मे दो उद्धरण यहाँ उल्लेखनीय है। एक तो यह कि अपनी बङ्गाल-आसाम यात्रा का विवरण देते हुए पण्डित शिवशर्मा जी ने जनवरी '४१ की पत्रिका मे पृष्ठ १७ पर

लिखा था 'सबसे बडी और महत्त्वपूर्ण भेंट की, श्रीयुत रामनारायण शर्मा, अध्यक्ष बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन ने पत्रिका के पाठको को याद होगा कि हम लोग वर्धा मे गाधी जी के सिर के ऊपर एक महामण्डल का शाखा कार्यालय स्थायी रूप से इसलिए खोलना चाहते थे कि कुछ जोर काग्रेस पर बराबर पडता रहे। कार्यकारिणी ने इसे पसन्द तो किया परन्तु खर्च का अन्दाज मँगवा कर कुछ इच्छा रह गई। खर्च के अन्दाज मे एक भवन-निर्माण के लिए १३००) रुपया के लगभग और काम चलाने के लिए ७०) रुपये प्रतिमास के लगभग व्यय की आवश्यकता थी। हम लोगो की प्रार्थना और अपनी उदारता के फलस्वरूप श्री रामनारायणजी ने यह बोझ अपने सिर पर लेने की प्रतिज्ञा की। इस प्रतिज्ञा के फलस्वरूप १५००) रुपये केवल भवन-निर्माण के लिए उन्होने डा० लक्ष्मीपति को भेज दिया है। राष्ट्रीय परिस्थिति सुधरते ही कार्य आरम्भ हो जायगा। अभी रुपया अलग बैंक मे जमा करा दिया गया है। इस रुपये के अतिरिक्त कार्यालय और आयुर्वेदिक नि शुल्क औषधालय चलाने के लिए १२५) रुपये से १५०) रुपये माहवार तक निरन्तर कुछ वर्षो तक देने की प्रतिज्ञा भी श्री रामनारायण जी ने कर ली है। मै इतना ही कहना चाहता हूँ कि इनकी प्रतिज्ञा भी एक बैंक ड्राफ्ट है, जब चाहे रुपया ले ले और इन्होने जो कार्य किया है, वह इनकी योग्यता और स्वभाव के अनुरूप ही है।" फिर ३० व अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन लखनऊ मे प्रस्ताव सख्या ३ डाक्टर श्री लक्ष्मीपति जी द्वारा प्रस्तावित एव कविराज मदनमोहन चोपडा द्वारा समर्थित हो कर निम्न प्रकार स्वीकार हुआ जो अप्रैल '४१ की महासम्मेलन पत्रिका मे पृष्ठ २४४ पर मुद्रित है। 'वर्धा मे महामण्डल का उप-कार्यालय-निर्माण करने के लिए तथा वही एक नि शुल्क आयुर्वेदीय औषधालय चलाने के लिए श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन कलकत्ता के अध्यक्ष श्रीयुत प० रामनारायण जी वैद्यराज ने १५००) रुपये एक बार मे दिया है तथा कुछ वर्षों तक १२५) रुपये से १५०) रुपये तक मासिक सहायता देने का वचन दिया है। अत यह सम्मेलन आवश्यक समझता है कि इस कार्य को महामण्डल के अधीन कर दिया जाय।" अब आप ही विचार कीजिए कि अनुमान से अधिक धन जब एक आयुर्वेद-प्रेमी ने महासम्मेलन को दिया फिर भी महासम्मेलन वह कार्य न कर सका। आज तक वर्धा मे वह प्रतिज्ञात औषधालय न खुला। ऐसी दशा मे इस योजना को भी यदि वास्तव मे सफलता के साथ चलाना है तो महासम्मेलन के चक्कर मे मत डालिए। बल्कि कुछ औषध-निर्माताओ के सहयोग से स्वतन्त्र प्रबन्ध म ही उसके सचालन की व्यवस्था कीजिए।"

इस पत्र मे जिस तथ्य की ओर सकेत किया गया है, उसकी चर्चा मैंने किसी से नहीं की और अपने प्रयत्न को जारी रखा। परन्तु पाठक विचार करें कि हमारे कार्य-कर्त्ताओ की दु खान्त अकर्मण्यता का यह कितना बडा ज्वलन्त उदाहरण है। एक व्यक्ति अपनी उदारता से हमे हमारे स्वय के अनुमान से अधिक धन देता है, इस पर भी हम अपने महासम्मेलन द्वारा प्रतिज्ञात कार्य नही करते। जो भी सुनेगा, वह हमारे लिए क्या कहेगा? फिर भी हम अपने कार्यों पर मिथ्याभिमान करे तो यह हमारे लिए हठधर्मी की बात है। नार्थ एवेन्यू के इस औषधालय का कार्य महासम्मेलन के कार्यकर्त्ताओ द्वारा किस सीमा तक सफलता प्राप्त करता, यह मै नही कह सकता, परन्तु जब उस ओर से सफलता के कोई लक्षण नही दिखाई दिए तो इस महत्त्वपूर्ण कार्य को लम्बी प्रतीक्षा के फेर मे डालना मुझे उचित प्रतीत नही हुआ।

महासम्मेलन ने जो प्रस्ताव स्वीकार किया उसके लिए केवल सौ रुपया व्यय करना निश्चय किया। इतने मे न तो औषधालय का फरनीचर बन सकता था, न कोई सामान आ सकता था। कुछ फार्मेसीवाले जो एक बार औषध देकर सहायता करना चाहते थे, उससे भी कितने दिनो यह औषधालय चल सकता था, यह बात विचारणीय है। जब मैने श्री चिदाकाशी जी से कहा कि वे औषधालय के लिए एक सुयोग्य चिकित्सक का प्रबन्ध कर दें तो जिन सज्जन को उन्होने नियुक्त किया उनकी आर्थिक स्थिति इतनी अनुकूल नही थी कि वे औषधालय मे प्रात काल का भी समय नि शुल्क दे सके। ऐसी दशा मे पर्याप्त औषधें नही, फर िचर नही, सामान नही, चिकित्सक नही, कम्पाउण्डर नही—फिर कैसे औषधालय का सचालन हो जायगा? इस चिंता ने मुझे घोर असमजस मे डाल दिया। इधर नार्थ एवेन्यू एम० पी० क्लब वालो ने आग्रह किया कि आप औषधालय का आयोजन शीघ्रातिशीघ्र कर लें अन्यथा स्थान के उपयोग के विषय मे अन्य मत उठ सकता है।

स्वनामधन्य श्री वार्रालिगे जी से, श्री के० दासप्पा और क्लब के अन्य अधिकारियो ने कहा कि जो फार्मेसीवाले इस कार्य को करना चाहे उनका लिखित आश्वासन मिलना चाहिये। परन्तु जहाँ तक मुझे पता है कोई लिखित आश्वासन नही मिला। इस विषम स्थिति मे मै क्या कर सकता था वैद्यगण स्वय विचार करे। इसी समय अनेक ससद सदस्यो ने यह भी राय दी कि भिन्न-भिन्न फार्मेसी की औषधो और प्रबन्ध से अच्छा प्रभाव नही पडेगा, इसलिए एक की ही व्यवस्था होना उपयुक्त होगा। कार्य की आवश्यकता एव महत्त्व को अनुभव करते हुए मैने श्री वैद्य रामनारायण जी से इस विषय मे सहायता करने का निवेदन किया और उनसे आग्रह किया कि आयुर्वेद के व्यापक प्रचार तथा ससद-सदस्यो की सेवा के द्वारा क्लब म आयुर्वेद का प्रवेश कराने के लिए यह अति उपयुक्त समय है, आप इस कार्य मे मेरी सहायता कीजिये। श्री वैद्य रामनारायण जी ने कृपा करके हमारे आग्रह को स्वीकार किया और तुरन्त ही लगभग ६०००) रुपये फरनीचर, सामान एव उद्घाटन आदि में व्यय करके बहुत ही सुव्यवस्थित और स्थान के अनुकूल औषधालय का आयोजन कर दिया। तब से निरन्तर औषधि, उपकरणो, चिकित्सक, कम्पाउण्डरो आदि के वेतन के रूप मे प्राय ६००) रुपये मासिक इस औषधालय पर श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० व्यय कर रहा है। श्री रामनारायण जी की इस सहायता के लिए मैं अत्यधिक आभारी हूँ और यह निस्सन्देह कह सकता हूँ कि यदि वे ऐन मौके पर सहायता न करते तो आयुर्वेद की प्रतिष्ठा को बडा धक्का लगता। मे यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि विशुद्ध आयुर्वेद-हित की भावना से किये गये इस उदार परोपकार के कार्य के लिये यदि वैद्य-समाज श्री रामनारायण जी का धन्यवाद नही करता तो प्रत्येक बुद्धिमान व्यक्ति इसे हमारी अक्षम्य कृतघ्नता ही कहेगा। कृतज्ञता के विपरीत यदि हमारे कुछ लोग इस विषय मे अनर्गल प्रचार का अभद्र आचरण करते हैं तो वह उनकी कलुषित भावना का प्रतीक तो है ही, देखने वालो के लिये हमारा वह कलक है कि अच्छे कार्यों में भी वैद्यगण योग देने के स्थान पर लडना ही जानते है। समाज के अन्य प्रतिष्ठित लोग जब हमारी इस वृत्ति को देखते है तो हमे कितना लाञ्छित करते हैं, इस बात की कल्पना विचारवान कर सकते हैं।

यह नासमझी की बात है कि उस औषधालय के द्वारा किसी फार्मेसी का कोई प्रचार होता है। औषधालय का सम्पूर्ण प्रकार का व्यय वैद्य रामनारायण जी उठा रहे हैं, परन्तु उसका प्रबन्ध और व्यवस्था एक सुगठित समिति के अधिकार मे है जिसके आठ सदस्यो मे बैद्यनाथ के केवल एक प्रतिनिधि है। ऐसी दशा में किसी के एकाधिपत्य का लाञ्छन करना अदूरदर्शिता की बात है। जब से यह औषधालय चला है तब से ससद-क्षेत्र मे आयुर्वेद के प्रति कुछ वातावरण का निर्माण हुआ है। जो सज्जन चाहें वे वस्तुस्थिति की जाँच करके देखे कि इस प्रयत्न से किसी व्यक्ति या सस्थान का प्रचार हो रहा है या आयुर्वेद का। औषधालय निरन्तर प्रगति कर रहा है, सुयोग्य कार्यकर्त्ताओ एव श्रेष्ठ औषधो से लोग लाभान्वित हो रहे हैं। श्री रामनारायण जी बडी सुरुचि के साथ औषधालय के उत्तरोत्तर विकास करन की इच्छा रखते है। उनके इस यथार्थ क्रियात्मक आयुर्वेद सेवा-कार्य को विवेक दृष्टि से देखा जाना चाहिए।

अधिक न लिख कर मैं वैद्य-समाज से विनम्र निवेदन करूँगा कि वह इस प्रकार के अनर्गल प्रचार से भ्रान्त न हो और समाज मे ऐसी घातक वृत्तियो के दमन मे सचेष्ट हो। सच्चे कार्य करनेवालो के प्रति यदि दुर्भावनावश ऐसा उपेक्षा और लाञ्छनापूर्ण व्यवहार किया जाता है तो हमारे समाज मे कृतघ्नता का विष बढ़ेगा और कोई भी सभ्य व्यक्ति क्रियात्मक कार्य करने को आगे बढने में सकोच करने लगेगा। यह दुर्गति आयुर्वेद के लिये महान घातक है। वैद्य-जगत् को सतर्क हो कर विचार करना चाहिये। साथ ही मेरा यह भी निवेदन है कि आयुर्वेद महासम्मेलन और स्वामी चेतनानन्द जी यदि आयुर्वेदिक औषधालय वास्तव मे सचालित करना चाहते है तो ससद-सदस्यो के निवास क्षेत्र मे ही साउथ एवेन्यू मे एक ही प्रकार का औषधालय खोल कर दिखा दें। मैं प्रयत्न कर रहा हूँ कि कोई तैयार हो जावे तो वहाँ भी एक आयुर्वेदिक औषधालय खोल दिया जाय। भगवान करे उसका श्रेय भी श्री चेतनानन्द जी को मिले। स्वामी चेतनानन्द जी अपेक्षाकृत अधिक चतुर व्यक्ति है, उनके बहुत चेलाचेली समर्थ हैं। मेरी कामना है कि भगवान उन्हे बल दे और वे अपने शिष्यो से, आयुर्वेद जगत् से एव अपने लक्ष्मी औषधालय से धन-साधन जुटा कर साउथ एवेन्यू मे महासम्मेलन की ओर से एक औषधालय का श्रीगणेश कर दें तो मैं उनका हृदय से कृतज्ञ हो जाऊँगा। स्वामीजी आगे आवें, अन्य फार्मेसीवाले भी सहयोग दे, इससे भी अच्छा एक औषधालय सचालित हो जाय तो मुझे प्रसन्नता होगी। मेरा खुला सहयोग रहेगा, क्योंकि उससे आयुर्वेद के गौरव-प्रचार में सहायता होगी।

अनीति चरम सीमा पर पहुँच गयी

वैद्य समाज के सम्मुख एक गम्भीर विचारणीय प्रश्न

अन्याय, अनीति, भ्रष्टाचार और सकीर्णता की हद हो गयी। सारा वैद्य-समाज यह सुनकर अवाक् रह गया कि अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन की स्थायी समिति व कार्यकारिणी समिति का सम्मिलिताधिवेशन गत् २५ मार्च को दिल्ली के बदले बम्बई म हुआ और उसने विद्यापीठ प्रधान के चुनाव सम्बन्धी सम्मेलन कार्यालय म आये हुए मतपत्र की गणना के पूर्व ही चुनाव को अवैध घोषित कर दिया। वैद्य-समाज को इस बात से और भी आश्चर्य हुआ कि इतने बडे महत्वपूर्ण प्रश्न पर इतना बडा निश्चय तब कर लिया गया जब कि यह विषय विचार्य विषयो की सूची तक म नही था। इतना ही नही, ४, ५ और ६ मई को दिल्ली मे होने वाले महासम्मेलन के वार्षिक अधिवेशन को आगामी सितम्बर-अक्टूबर तक के लिये स्थगित भी कर दिया गया। विधान, सामान्य शिष्टाचार, सस्था की प्रतिष्ठा और साधारण विवेक (Common Sense) को ताक पर रखकर ऐसा निर्णय इतनी शीघ्रता मे क्यो कर लिया गया? इस प्रश्न पर विज्ञ वैद्य-समाज को विचार ही नही करना होगा, इसका ठोस उत्तर भी देना होगा।

बम्बई मे स्थायी समिति के अधिवेशन को बुलाने का क्या अर्थ हो सकता है? न तो बम्बई भारतवर्ष का केन्द्र स्थल है, न वहा आगामी अधिवेशन होने जा रहा है और न ही सम्मेलनाध्यक्ष या स्वागत-मन्त्री का वहा निवास स्थान है। बम्बई म स्थायी समिति के अधिवेशन को बुलाने का अर्थ तो यही हो सकता है कि सम्मेलन के पदाधिकारियो की धाधलियो से ऊबकर वैद्य-समाज मे जो नवीन चेतना और जागरण का महास्रोत फूट निकला है, उसे बलपूर्वक दबा दिया जाय। विद्यापीठ के अध्यक्ष के चुनाव में इस बार अभूतपूर्व उत्साह और अद्भुत लगन देखी गयी। ८० प्रतिशत से भी अधिक मतदाताओ ने मतदान में भाग लिया। यह महासम्मेलन के इतिहास मे एक नयी घटना थी जो इस बात का स्पष्ट सकेत था कि भविष्य में क्या होने जा रहा है। फलत वर्तमान पदाधिकारियो में घबराहट, बेचैनी और विवेकशून्यता का उत्पन्न होना बिल्कुल स्वाभाविक था। अत स्वार्थपरायणता और अनियमितता का जो नग्न नृत्य उन्होने बम्बई मे किया है, वह सारे वैद्य-समाज की विद्या-बुद्धि को खुली चुनौती है। महासम्मेलन के ५० वर्ष के लम्बे इतिहास मे आजतक कभी भी वैद्यसमाज को इतना मूर्ख और बेवकूफ समझने की धृष्टता किसी पदाधिकारी वर्ग ने नही की थी। हम इसका उत्तर क्या दें, कैसे दे?

हम सब मतदाताओ को मालूम है कि ८० प्रतिशत जो मतदान हुए थे, उनम ७० प्रतिशत से भी अधिक मत विद्वत्ता, प्रतिष्ठा, ख्याति एव सेवाओ मे सर्वोत्कृष्ट, आयुर्वेद-जगत के सक्रिय एव कर्मठ नेता, कविराज श्री उपेन्द्रनाथ दासजी को प्राप्त हुए थे। अधिकारी वर्ग की बौखलाहट और घबराहट का यही कारण है। तो हमे एक बार फिर यह दिखला देना है कि वैद्यसमाज की आखो म धूल झोककर अपना उल्लू सीधा करने के दिन अब बीत गये। अब वैद्य-समाज जागरूक और सचेत होगया है और वह अब इन धाधलियो, स्वार्थपरताओ और अनीतियो का अन्त करने के लिये बद्धपरिकर है। अब पाप का घडा भर गया है और वह फूटने ही वाला है। हम मतदाताओ को यह पुनीत सकल्प कर लेना चाहिए कि हम पुन अपना मत कविराज श्री उपेन्द्रनाथ दास जी को ही देंग। कविराज उपेन्द्रनाथ दास जी को दिया गया हमारा मत धाधली के मुह पर कडा तमाचा होगा, अनीति के क्रूर दांत पर निर्मम घूसा होगा और होगा २० वर्ष से अवैधानिकतावाद की उपजी हुई लतिका पर तुषारपात।

हमारे सामने अभी जो सबसे बडा प्रश्न है, वह है, विद्यापीठ के केन्द्रीय विद्यालय की स्थापना। इस प्रश्न को महासम्मेलन के स्वार्थी पदाधिकारी वर्षो से टालते आ रहे है और विद्यापीठ की रकम का दुरुपयोग करते जा रहे है। महासम्मेलन और विद्यापीठ के गत् कई वर्षों के आय-व्यय के ब्यौरा का यदि आप ध्यानपूर्वक अध्ययन करें तो देखेंगे कि ११ हजार से भी अधिक रुपये विद्यापीठ के खाते से बिना स्वीकृति के ही ये पदाधिकारी निकालकर दूसरे फजूल के कामो में खर्च कर चुके हैं। इसको यदि रोका नही गया तो विद्यापीठ का सारा का सारा कोष ही समाप्त हो जायेगा। हमलोगो को इस बात से प्रसन्नता है कि **कविराज उपेन्द्रनाथ दासजी विद्यापीठ के विद्यालय की स्थापना के लिये कृत-सकल्प हैं और उन सरीखा निस्स्वार्थी** समाज-सेवक ही इस काम को पूरा कर सकता है। हमारे सामने जो विद्यापीठ की अध्यक्षता के लिये दूसरे उम्मीदवार सज्जन हैं, उनके घोषणा-पत्र में विद्यालय की स्थापना की चर्चा तक नही है। साथ ही उनके प्रमुख समर्थक, जो महासम्मेलन के पदाधिकारी भी हैं, इतने नीचे उतर आये है कि वे अपने उम्मीदवार के विषय में कितनी भ्रामक सूचना वैद्य-समाज को देते हैं।

कहा गया है कि विद्यापीठ के लिये उनके जो उम्मीदवार हैं, वह कलकत्ता आयुर्वेदिक कालेज के प्रिंसपल हैं। भला

इससे बढ़कर झूठी बात और क्या हो सकती है। कलकत्ता में किसी ने नहीं सुना कि इस नाम का कोई आयुर्वेद कालेज है। इस सम्बन्ध में 'जेनरल कौन्सिल आफ स्टेट फैकल्टी आफ आयुर्वेदिक मेडिसिन्स, पश्चिम बंगाल" से जो पत्र 'सचित्र आयुर्वेद'-सम्पादक को मिला है, वह इस मिथ्या प्रचार का भंडाफोड़ कर देता है। वह पत्र इस प्रकार है —

GENERAL COUNCIL & STATE FACULTY OF AYURVEDIC MEDICINE : West Bengal.
8, Lyons Range (2nd floor) CALCUTTA-1

To The Editor,
Sachitra Ayurved, 1, Gupta Lane, Calcutta

Dear Sir,

With reference to your verbal enquiry regarding affiliated Ayurvedic Institutions (College & Tols) in West Bengal, this is to inform you that the number of such institutions are six in West Bengal These are

COLLEGES	PRINCIPALS
1 Jamini Bhusan Ashtang Ayurved Vidyalaya, 170, Raja Dinendra St, Calcutta	Kj Manindra Lal Das Gupta, M A, M B, Kaviratna
2 Shyamadas Vaidyashastrapith, 294/3/1, Upper Circular Rd Calcutta	Kj Vijoykali Bhattacharji, M A
3 Vishwanath Ayurved Mahavidyalaya, 94, Grey Street, Calcutta	Kj Sachindranath Gupta, M A
TOLS	**PRINCIPAL TEACHERS**
4 Ayurvediya Pratisthan, 123, Harish Mukherji Rd, Calcutta	Kj Shib Ranjan Sen, Vaidyashiromani
5 Vaidyak Pathshala, P O Contai, Dist Midnapore	Kj Raghunath Maity
6, Nabadwip Ayurved Mahavidyalaya, P O Nabadwip, Dist Nadia	Kj Sukumar Bhattacharji

This Faculty is not aware of the existence of any other College and Tol in West Bengal

Yours faithfully,
J. C. Basu
REGISTRAR

यामिनीभूषण अष्टाग आयुर्वेद विद्यालय एव आयुर्वेदीय आरोग्यशाला के प्रिन्सिपल श्री मणिन्द्रलाल दास गुप्ता से जब पूछा गया तो उन्होंने भी इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया। श्री गुप्ता ने ३-४-५८ को जो पत्र लिखा है उसका फोटो हम यहाँ इसलिए दे रहे है ताकि वैद्य समाज सत्यासत्य का निर्णय स्वयम् कर ले।

ऐसी एक नही अनेक अनर्गल बाते अपने उम्मीदवार के विषय मे कहकर स्वयम्भू नेतागण वैद्यसमाज की आखो मे धूल झोकने की चेष्टा कर रहे हैं। यह भी कहा गया है, कहा क्या गया है लिखकर पर्चे बाटे गये है कि दूसरे उम्मीदवार श्री प्रभाकर चटर्जी, परम श्रद्धास्पद योगीराज रामकृष्ण परमहस के प्रपौत्र है। सभी जानते हैं कि रामकृष्ण परमहस को कोई सन्तान नही थी, फिर ये प्रपौत्र कहा से निकल आये ? चुनाव-प्रचार इससे अधिक गन्दा और क्या हो सकता है ? किन्तु अब हमारी आख खुल चुकी हैं। हम अब अपना मार्ग साफ-साफ देख रहे है। हमे अब उस पथ पर निर्भय होकर आगे बढने से ससार की कोई भी माथाविनी शक्ति नही रोक सकती। हम विद्यापीठ का एव महासम्मेलन का कायाकल्प करेंगे। हम महासम्मेलन मे स्वस्थ वातावरण उत्पन्न करने के लिये निरन्तर प्रयत्न करेंगे और

JAMINIBHUSHAN
ASHTANGA AYURVEDA VIDYALAYA
AND
AYURVEDIYA AROGYASALA
Established 1322 B S

TELEPHONE { GENERAL HOSP B. B 2327 / COLLEGE B B. 5268 / T B HOSP DUM-DUM 201 }

170 172 RAJA DINENDRA STREET

Ref. Col-0458/

Calcutta, 5th April, *195* 8.

The Editor,
Sachitra Ayurveda ,
1 Gupta Lane,
Calcutta-6.

Dear Sir,

I am in receipt of your letter dated 3.4.58 enquiring about the existence of Calcutta Ayurvedic College in Calcutta. So far as I am aware, there is no such College in Calcutta as mentioned in your letter nor is the College affiliated to the General Council & State Faculty of Ayurvedic Medicine, West Bengal, where the Kaviraj Pravakar Chatterjee is the Principal of the said College. At present there are three Ayurvedic Colleges in Calcutta viz:-

(1) Jaminibhushan Ashtanga Ayurved Vidyalaya
(2) Shyamadas Vaidya Sashtrapith
(3) Viswanath Ayurveda Mahavidyalaya.

Hope the above information will enlighten yo you about your querry in the letter addressed to me.

Yours faithfully,

Principal.

तब तक हम नही लेगे, जब तक कि महासम्मेलन से स्वार्थियो, स्वयम्भू नेताओ और कुचक्रियो का पूर्णतया अन्त न हो जाय। हम अपने इस निश्चय में, इस संकल्प में कितने दृढ़ और अडिग हैं, इसका सबूत आप अपना मत श्री उपेन्द्रनाथ दास जी को देकर दें, यही आपसे नम्र निवेदन है।

निवेदक

मणिराम शर्मा (रतनगढ़), मणीन्द्रलाल दास गुप्त, प्रिंसिपल, अष्टाङ्ग आयुर्वेदिक कालेज, कलकत्ता, अमरभूषण राय, कलकत्ता, रामचन्द्र मल्लिक, कलकत्ता, कविराज सुखराम प्रसाद, पटना, त्रिपाठी कमलाप्रसादमणि, पटना, दुर्गादत्त शास्त्री, वाराणसी।

द्रव्यगुणशास्त्र में अनुसन्धान : एक विचारणा

वैद्य रणजित राय

सचित्र आयुर्वेद मे कुछ मास पूर्व मैने लिखा था कि द्रव्यगुण-रसशास्त्र विषय आयुर्वेद के आठ अङ्गो मे मुख्यतया **कायचिकित्सा का उपाङ्गभूत है**। वही यह भी कहा गया था कि इस अङ्ग का एक अन्य उपाङ्ग **भैषज्य-कल्प** नाम से इन दिनो प्रवृत्त हुआ है। वस्तुत द्रव्यगुण-रसशास्त्र के पाठ्यक्रम मे आरम्भ मे ही '**आयुर्वेद में द्रव्यगुण-विज्ञान तथा रसशास्त्र का स्थान**' इस शीर्षक के नीचे इस वस्तु का भी उल्लेख किया जाना चाहिए कि यह प्रधानतया कायचिकित्सा का अङ्ग है। आज इसी विषय से सबद्ध एक अन्य वस्तु पर नम्रमति से विचार प्रस्तुत करता हूँ।

विचारणा आरम्भ हुई

बडौदा की महाराजा सयाजीराव युनिर्वासिटी के मेडीकल कॉलेज के अन्तर्गत आयुर्वेद-विषयक अन्वेषण करने के लिए **सेठ उजमशी पीताम्बरदास आयुर्वेदिक रिसर्च यूनिट** नामक एक सस्था है। युनिर्वासिटी के अतिरिक्त बम्बई राज्य भी इसे पर्याप्त आर्थिक सहाय्य देता है। इस सस्था के अध्यक्ष है इसी मेडीकल कॉलेज के फार्मेकॉलॉजी विभाग के प्रोफेसर **डॉ० गोपाल के० करन्दीकर** एम बी बी एस (बबई), एम एस, पी-एच डी (येल)। सचित्र आयुर्वेद के सुविदित **वैद्य नागरदास पाठक** आयुर्वेदाचार्य इस सस्था मे सीनीअर वैद्य है। सस्था को सलाह देने के लिए प्रतिष्ठित वैद्यो, डॉक्टरो और व्यवस्था-कुशलो की एक समिति है। हाल मे ही सस्था के बाह्य रुग्णालय का उद्घाटन बबई राज्य के स्वास्थ्य-मन्त्री **माननीय कन्नमवार जी** ने किया था। इस अवसर पर एक सभाषा रखी गयी थी—जिस मे विचारणीय विषय था आयुर्वेद मे अनिर्दिष्ट द्रव्यो के रस-गुण-वीर्य-विपाक-प्रभाव का विनिश्चय आयुर्वेदीय तथा अर्वाचीन पद्धति से कैसे किया जा सकता है। आयुर्वेद के अन्य क्षेत्रो मे भी इस विषय पर विचार होता ही है। एतद्विषयक कुछ मन्तव्य यहाँ उपनिबद्ध करता हूँ।

द्रव्य मात्र की औषध-रूपता

सभी सहिताओ मे द्रव्यगुण विज्ञान के प्रकरण मे यह सिद्धान्त स्थापित किया गया है कि **द्रव्यमात्र पञ्चभूतमय है**। उधर, **शारीर द्रव्य भी पञ्चमहाभूतमय है**। परिणामतया, जिस महाभूत के आधिक्य वाले शारीर द्रव्य का कभी क्षय हो तो बाह्य सृष्टि से उसी महाभूत के आधिक्य वाले द्रव्य का यथावत् उपयोग कर उस शारीर द्रव्य को समावस्था मे लाया जा सकता है तथा उससे उत्पन्न हुए रोग का निर्मूलन किया जा सकता है। इसी प्रकार किसी शारीर द्रव्य की वृद्धि हुई तो ऐसे द्रव्यो का सेवन युक्तिसगत होता है जिसमे उस महाभूत का अश अल्प हो जिसकी अधिकता वृद्धि को प्राप्त हुए शारीर दोष आदि मे है। स्थिति यह होने से सृष्टिगत **द्रव्यमात्र अपनी पाञ्चभौतिक रचना के कारण शारीर की किसी न किसी विकृति में औषधतया उपयोग में आ ही सकता है**। अन्त मे वृद्धत्रयी मे यह सूत्र दिया गया है कि जगत् मे कोई द्रव्य ऐसा नही जो अनौषध हो—जिसका औषधतया उपयोग न हो सके। गुरुकुल छोडने के पूर्व आचार्य ने **जीवक की परीक्षा** जिस पद्धति से ली थी, वह भी इस मन्तव्य की पोषक है। आचार्य ने कहा था, जाओ, कुल के चारो ओर चार-चार (या ऐसा ही कुछ) योजन भूमि मे घूम आओ। इस भूमि मे कोई द्रव्य ऐसा दीखे जिसका उपयोग तुमको विदित न हो तो वह ले आओ। जीवक पर्यटन कर आया और उसने निवेदन किया, आचार्यदेव, कोई द्रव्य नही मिला जिसका उपयोग मुझे विदित न हो। आचार्य ने कहा, बस तो तुम्हारी विद्या समाप्त हो गयी। अब घर जाकर व्यवसाय आरम्भ करो।

द्रव्यमात्र का ज्ञान और उपयोग—प्राचीन प्रथा

इस कथा से यह तो विदित होता ही है कि, प्राचीन काल मे यह प्रवृत्ति रही होगी कि जो भी द्रव्य उपलब्ध हो उस का उपयोग जानना ही चाहिए और यह उपयोग आयुर्वद के सिद्धान्तानुसार रस-गुण-वीर्य-विपाक-ज्ञान पुर सर ही होता होगा, इसमे सशय को अवकाश नहीं। किं बहुना,

आज हमारे समक्ष इस प्रकार के प्रश्न उपस्थित होते हैं कि किसी प्रथमोपलब्ध द्रव्य के रस-गुण-वीर्य विपाक का ज्ञान कैसे हो। पुराकाल में यह स्थिति न रही होगी। जैसा कि हम आगे देखेंगे आज भी थोड़ा विचार करें तो वैद्यों और वैद्यतरों के समक्ष **यह प्रश्न उत्तरित प्राय पड़ा है।** आज भी हम कई नवीन द्रव्यों को आत्मसात कर चुके हैं पर उस ओर हमारा ध्यान किसी ने आकृष्ट नहीं किया जिससे हम इस प्रश्न को साध्य मानने को तथा ज्ञातपूर्व इन नवीन द्रव्यों के समान ही अन्य द्रव्यों का भी विचार करने की दिशा में प्रवृत्त हों तथापि यह प्रश्न उपस्थित ही है तो इस पर विचार करना भी आपतित है।

जीवक के काल में अध्यापन की जो परिपाटी थी उसका स्वरूप निश्चित ही यह रहा होगा कि आचार्य मल स्थान से वन्य औषध को ला लाकर उसके उपयोगादि का ज्ञान कराते होंगे किंवा पर्यटनपूर्वक अध्यापन कराते होंगे। **पश्चात् काल में** यह पद्धति लुप्त हो गयी होगी और केवल **परिगणित द्रव्यों का परिज्ञान ही आवश्यक माना जाता होगा।** अतएव धन्वन्तरि निघण्टकार ने द्वितीय ही पद्यमें कहा है—**नास्ति सख्या द्रव्याभिधानस्य तथौषधीषु** द्रव्यों की गणना ही शक्य नहीं है। जैसे कूप से जिसे जितने जल की आवश्यकता होती है उतना ही ले लेता है और अपना कार्य सम्पादन करता है वैसे द्रव्यगुणशास्त्र तो समुद्र है उसमें से कुछ ही औषध लेकर उनका गुण धर्म बताया जाता है —

प्रयोजनं यस्य तु यावदेव तावत् स गृह्णाति यथाऽम्बु कूपात्।
तथा निघण्टाम्बुनिधेरनन्तात् गृह्णाम्यहं किंचिदिहैकदेशम्।

प्राणियों से औषध ज्ञान

यह एकांश से काम चलाने की नीति आज किस कक्षा तक पहुंच चुकी है और उसका क्या परिणाम हुआ है यह सर्वविदित है। अच्छे से अच्छे वैद्यों और अध्यापकों का भी **औषध ज्ञान अत्यन्त परिमित** होता है। अपने घर के चारों ओर दो चार फुट पर लगी औषधियों का भी नाम तथा उपयोग हम नहीं जानते। जीवक के काल की स्थिति से इसकी तुलना कीजिए। ज्ञान की कक्षा हीनता को पहुंच गयी है। इतना ही नहीं हमारी जिज्ञासा और उत्कण्ठा भी नष्ट हो चुकी है अधिक खेद की बात तो यह है। जीवक के समय और उससे पूर्व वैदिक काल में स्थिति **इससे सर्वथा भिन्न रही होगी।** गुरु वैशम्पायन ने पशु पक्षियों से भी ज्ञान उपार्जन किया। **वैदकालिक वैद्य भी प्राणियों की चर्या का अनुसरण कर औषधियों का उपयोग जानते थे।** पशु-पक्षी किस वनौषधि का उपयोग किस रोग में करते हैं यह जानने से उस की क्रिया (उपयोग) तो ज्ञात हो ही जाती थी साथ ही यह ज्ञात होने से कि वह औषध सविष नहीं हो सकती उसके रस-गुण-वीर्य विपाक के ज्ञान के लिए तथा उसके द्वारा उसकी क्रिया का प्रकार जानने के लिए मार्ग निर्भय हो जाता। अथर्ववेद के नीचे दिए मन्त्रों में शूकर नकुल (नवला) सर्प गन्धर्व (पर्वत वासी मलजाति विशेष) अङ्गरस (प्रोटोप्लाज्म) को पुष्ट और अदृष्ट करनेवाली दिव्य औषधों का ज्ञान रखनेवाले गरुड रघट (?) पक्षी हंस पतङ्ग मृग गाय बकरी मेष इन सब को जिन जिन औषधों का ज्ञान हो उसके ज्ञान तथा उपयोग की बात कही है—

वराहो वेद वीरुधं नकुलो वेद भेषजीम्।
सर्पा गन्धर्वा या विदुस्ता अस्मा अवसे हुवे॥
याः सुपर्णा आङ्गिरसीर्दिव्या या रघटो विदुः।
वयांसि हंसा या विदुर्याश्च सर्वे पतत्रिणः।
मृगा या विदुरोषधीस्ता अस्मा अवसे हुवे॥
यावतीनामोषधीनां गावः प्राश्नन्त्यघ्न्या यावतीनामजावयः तावतीस्तुभ्यमोषधीः शर्म यच्छन्त्वाभृताः॥

अथर्ववेद काण्ड ८। सू ७

इसी औदार्य का अनुसरण करते हुए चरक ने **विश्वमात्र को गुरु मान कर शत्रु से भी हितकर वस्तु ग्रहण करने का उपदेश किया है** (देखिए च वि ८ १४)। इस वचन में आया **कृत्स्नो हि लोको बुद्धिमतामाचार्य** यह वाक्यांश वैद्य ही नहीं पुरुषमात्र के हृदय में खचित रहना चाहिए।

औषध ज्ञान का अनुक्रम

धन्वन्तरि निघण्टु में वन्य अपरिज्ञात औषधों के अनुशीलन की सामान्य पद्धति यह बताई है कि प्रथम किरात (भील) गोपाल अजपाल अविपाल तपस्वी आदि वनचरों मल जाति (आदिवासी) किंवा अन्य जानकारों से वनौषधियों का प्रमाण (ऊंचाई वह पौधा होता है या पेड़ इत्यादि के रूप में) वर्ण आकृति नाम तथा जाति (?) जानना चाहिए। पश्चात् वैद्य को शास्त्र की सहायता तथा अपनी बुद्धि के द्वारा और जो सब से अधिक महत्त्व की बात है वह यह कि उन वनौषधियों का **प्रयोग करके द्रव्य रस, गुण विपाक वीर्य और प्रभाव की निश्चिति करें। देखिए**

किरात गोपालक तापसाद्या
वनेचरास्तत्कुशलास्तथाऽन्य ।
विदन्ति नानाविधभषजाना
प्रमाणवर्णाकृतिनामजाती ।।
तम्य सकाशादुपलभ्य वैद्य
पश्चाच्च शास्त्रषु विमृश्य बुद्धया ।
विकल्पयद द्रव्यरसप्रभावान्
विपाकवीर्याणि तथा प्रयोगात ।।
गोपालास्तापसा व्याधा य चान्य वनचारिण ।
मूलजातिश्च य तेभ्यो भषजव्यक्तिरिष्यत ।।

राजनिघण्टुकार न आभीर (अहीर) गोपाल आदि से रसादि क ज्ञान का भी उपदश किया है।—

आभीर गोपाल पुलिन्दतापसा
पान्थास्तथाऽन्यऽपि च वन्यपारगा ।
प्रतीत्य तेऽभ्यो विविधौषधाभिधा-
रसादि लक्ष्माणि तत प्रचक्ष्मह ।।

निघण्टुकार यहा स्पष्ट कह रह है कि हमन नाम रस आदि लक्षणो का ज्ञान आभीर गोपाल आदि से प्राप्त किया है। उनस ज्ञान उपलब्ध करक हम यह ग्रन्थ बना रहे है। पाठान्तर म वैद्यो को इन व्यक्तियो से औषध के गुणो का ज्ञान प्राप्त कर प्रयोग करन का उपदश किया गया है। च सू १।१२० म चरक न भी औषधो क नाम रूप का ज्ञान आभीर (अजप) आदि स प्राप्त करन का उपदेश दिया है।

वनेचरो से औषधज्ञान की ऐतिहासिकता

वनेचरो से वनौषधियो क नाम रूप तथा योग (प्रयोग) के ज्ञान की परिपाटी इतिहास सिद्ध है। **सिनकोना** का परिचय वनेचरो से ही सस्कृत समाज को हुआ जिससे अन्त म क्वीनाइन निकाली गयी। **तमाखू** का भी यही इतिहास है। उदर विकृतियो म इसका उपयोग पीछ से हो गया। **सप्तपर्ण** किरातो से ही विदशो म जाना गया। चिरायते का **किराततिक्त** नाम कदाचित इसका ज्ञान किरातो से होने का ही द्योतक है।

औषधज्ञान में बॉटेनी का स्थान

प्राय सभी प्राचीन ग्रन्थो म वनौषधियो की व्यक्ति (आइडेण्टिफिकेशन) वनचरो से करने का विधान है। **वस्तुत वनौषधियो के ज्ञान का यही उपाय है।** इस ओर आयुर्वेद क शिक्षणकारो का लक्ष्य मै सविशेष आकृष्ट करना चाहता हूँ। चतन अचतन किसी भी **वस्तु के परिज्ञान का सर्वोत्तम प्रकार उसका भूयोदशन** (वार-वार देखना) ही है। हम अपन स्वजन परिजन अपनी गाय अपन कुत्ते आदि को पहचानत है। उसम उसका जीवविद्या-सम्बन्धी ज्ञान कारणभूत नही है। परोक्ष म किसी को उनका परिचय कराना हो तो कोई लक्षण बताना भी दुष्कर होता है। तथापि सामन आत ही हम उन्ह पहिचान सकत है। इसका कारण यही है कि भूयोदशन स उनकी आकृति हमारे मन म बैठ गयी है। इसी प्रकार वनौषधियो का परिज्ञान भी भूयोदशन की पद्धति से ही करना कराना चाहिए। कई विद्वान इसक लिए वतमान उद्भिदविद्या (बाटनी) का आयुर्वेद महाविद्यालयो म पढाया जाना अनिवाय बतात है। निघण्टु के ग्रन्था म भल वनौषधियो का वैज्ञानिक वणन रह परन्तु उसका विधिवत अध्ययन अध्यापन और परीक्षा का भार भी विद्यार्थी पर रह यह मुझ बलात्कार लगता है। जैस हम आम कला टमाटर मिर्ची, जामुन आदि से भूयोदशन क कारण ही परिचित है वनौषधियो का परिचय भी हम उसी माग से प्राप्त करना तथा कराना चाहिए।

औषधो का वर्गीकरण आयुर्वेदिक हो

प्रसगवश और एक वस्तु लिख द। वनौषधियो का वर्गीकरण भी कई महानुभाव आधुनिक उद्भिदविद्या के अनुसार करना योग्य समझत है। मुझ वह भी अयुक्त-सा लगता है। द्रव्यगुण रसशास्त्र एव अन्य **सभी विषयो का उपयोग अन्त में रोगो की चिकित्सा** म होनवाला है। अत यह अब ठीक समझा जान लगा है कि द्रव्यगुण रसशास्त्रोक्त किसी द्रव्य क रूक्ष शीत आदि गुण एव स्तम्भक ह्लादक आदि कम बताकर ही सतोष नही मानना चाहिए किन्तु प्रारम्भ से ही बताना चाहिए कि जिस दोष या रोग पर अमुक द्रव्य कोई क्रिया करता है उसन क्या विकृति किस प्रकार शरीर म उत्पन्न की थी (सप्राप्ति) और उस विकृति पर किस गुणक द्वारा क्रिया कर क्या परिवतन शरीर म या शरीरावय म किए जिसस विकृति की मूलभूत सप्राति का भङ्ग होन से या रोगारम्भक दोष पर अमुक प्रकार की क्रिया होन से वह रोग निमूल हो गया। इस **उपयोगितामूलक (एप्लाइड) अध्यापन-शली** से ही आयुर्वेद के अधिक निकट

हम विद्यार्थी को ल जा सकत है जिसस वह स्वय भी आयुर्वेद के मूल को समझन म समथ हो सकता है।

इस दष्टि से द्रव्यगुणविज्ञान को भी अधिक उपयोगी बनान क लिए उसका वर्गीकरण उद्भिदविद्या क अनसार न रखकर बोध-सञ्ञमन आदि दृष्टियो से प्राचीनो न जसा विभाजन किया है वैसा ही रखना श्रयस्कर है। विद्वज्जन विचार कर योग्य निणय कर।

आयुर्वेद के पुनरुज्जीवन में आदिवासियो का उपयोग

इस स्थल पर थोडा अधिक रुक कर अ य एक वस्तु का उल्लख करना उचित समझता हू। धन्व तरि निघण्टु के ऊपर धत वचनो म जिन जनो से वनौषधियो का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए उनम एक मूलजाति है। मै समझता हू यह नाम आज जिन्ह आदिवासी कहत है उनक लिए है। सो स्वीकार हो तो आदिवासी शब्द के स्थान पर प्राचीन मूलजाति शब्द को प्रचार म लाना चाहिए।

दूसरी बात। आयर्वेद के पुनरुज्जीवन क लिए पूर्वोक्त निघण्टुकारो द्वारा दर्शित माग से फिर जान की आवश्यकता एक प्रकार से है। परम्परा विच्छिन्न हो जान से आयुर्वेद सपूण स्वरूप में हमार पास आया नहीं है। वश-विदश में यत्र-तत्र विकीण ज्ञान को गुम्फित कर पुन विराट आयुर्वेद-पुरुष क शरीर का निर्माण हमें करना होगा। इस पद्धति का अनुसरण करत हुए जिन जनो क पास हम पहुचना है उनम मूलजाति भी एक है। मूलजाति अथवा आदिवासी चिरकाल से तत-तत वनौषधि का उपयोग तत-तत रोग म करत आ रह है। इन म कई वनौषधिया वैद्यो को विदित है परन्तु उन का कुछ भिन्न प्रयोग मूलजातियो म होता है। कई वनौषधियाँ तथा उनका उपयोग वद्यो म भी प्रचलित नही है। इन सब वनौषधियो क प्राकृत नाम रूप उपयोग आदि का सकलन होना रोगपीडित मानवकुल क हित की दृष्टि स बहुत ही कायसाधक हो सकता है।

उद्यानो को आयुर्वेदीय स्वरूप-दान

एक और दष्टि स भी औषधभूत या औषधरूपण अज्ञात व य उद्भिदो क परिज्ञान का उपयोग हो सकता है। उद्यान (गाडन) तथा उपवन (नशनल पाक) की कला भारत म पहल भी थी। अब उस का सविशष विकास हो रहा है। प्राय भारतीय और वदशिक द्रव्यो का इस कला म उपयोग किया जाता है। मै समझता हूँ वन उपवन मे हमारी सुविदित अल्पविदित अविदित औषध तथा ज्ञात अज्ञात नाना उद्भिद द्रव्य (वनस्पतियाँ) एसी हो सकती है—है—जिन को उद्यान-कला क परिवधन क काय म हम अपना सकत है। शष हमार इस कला क निष्णात अभी तो विदश की वनस्पतियो से ही अपनी कला की उपासना कर रह है। कौन नही जानता इन वनस्पतियो म प्राय ग ध नही होती—वातावरण की शुद्धि का कोई काय इन से होता नही साथ ही इन का औषधीय उपयोग भी कुछ होता नही। इनकी अपक्षया सुन्दर एव उपयोगी आयवदीय तथा भारतीय वनस्पतियो को घर माग उद्यान तथा उपवन की शोभा व लिए लगाना उपयोगिता की दृष्टि भी अधिक उपादय हो सकता है। भारत-सरकार के भारतीय चिकि सापद्धति विषयक सलाहकार आदरणीय कविराज प्रतापसिहजी न इस दिशाम प्रयत्न जारी किए है। एसा एक प्रयत्न कुछ ही दिन पूव उनक द्वारा किया गया मझ विदित होन से उदाहरणतया प्रस्तुत कर सकता हूँ। जिला सूरत की बलसाड तहसील म अतुल प्रोडक्टस नाम स अर्वाचीन औषध द्रव्य बनान का बडा कारखाना है। उसक समीप ही दो अ य भी कारखान है। इनक पास लगभग एक हजार एकड जमीन है। चाहन पर समीप वर्ती पहाडियो का भी उपयोग य कर सकत है। अतुल के कमठ व्यवस्थापक श्री बी के मजमूदार तथा प्रमुख कमिस्ट डा० अमुल नायक चिरकाल से बोटनिकल गाडन बनान का विचार कर रह थ। कविराज जी भी भारत म यत्र-तत्र एसे उद्यान खड करन की महत्त्वाकाक्षा रखत थ। मालूम होन पर अवसर निकाल कर कविराज जी दिल्ली से बलसाड गए और दोनो महानुभावो क सपक म आए। कविराज जी शीघ्र ही उपयुक्त वनस्पतियो की सूची आदि भजन वाल है। अ य महानभाव भी इस दिशा म बन इतन प्रमाण म उद्योग कर सकत है।

आदिवासियो का औषध प्रयोग—मध्यप्रदेश सरकार का सत्प्रयत्न

ऊपर मूलजतियो द्वारा प्रयुक्त की जानवाली वनौषधियो क सकलन की ओर मैन निर्देश किया है। इस दिशा म हुआ एक प्रयत्न भी मुझ विदित है। मध्यप्रदश सरकार की ओर स सार प्रदश की मूलजातियो (आदिवासियो) क विषय म काय करन के लिए दो सस्थाएँ छिंदवाडा म स्थापित है।

एक का कार्य मूलजातियो का कल्याण करना है तथा दूसरी इनके विषय मे अनुसधान का कार्य ही विशेषतया करती है। इस दूसरी सस्था के डाइरेक्टर हैं—मौलिक क्रियात्मक प्रतिमा के धनी, एव कार्यदक्ष विद्वान् **डॉक्टर टी० बी० नायक** एम ए, पी-एच डी। डॉक्टर नायक कुछ काल लदन युनिवर्सिटी मे प्राध्यापक भी रह चुके है। आपने अपने कार्य-कलाप की विभिन्न दिशाओ मे एक दिशा मूलजातियो द्वारा प्रयोग मे लाई जानेवाली औषधियो का अन्वेषण करना, यह भी रखी है। इस कार्य मे उन्हे अनुभवी और अपने कार्य को समझने वाले दक्ष सहकारी भी प्राप्त हो सके है। आपने इन वनस्पतियो के शुष्क नमूने उनके कार्य के निर्देश के साथ एकत्र किए है, कई वनौषधिया अपने उद्यान मे लगाई है तथा उपयुक्त पत्र-पत्रिकाओ मे इस विषय पर लेख भी लिखे है। इस विभाग को आप बहुत ही अधिक विकसित करना चाहते हैं। **कविराज प्रतापसिह जी** डॉक्टर साहब के सपर्क मे भी आए है।

वृद्धों का सम्पर्क आयुर्वेद की परम्परा की प्राप्ति के लिए

कहने का तात्पर्य यह कि आयुर्वेद के पुनरुज्जीवन के लिए कार्य करने की ऐसी नाना दिशाएँ तथा क्षेत्र है। अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार प्रत्येक आयुर्वेद-प्रेमी इस मे भाग ले सकता है। परपरा विच्छिन्न होने के कारण टूटी हुई शृखला को फिर से जोडने के लिए मूल जाति के समान ही ग्रामीण, नागरिक, वैद्य, वैद्येतर विशेषतया वृद्ध ऐसे जनो के सम्पर्क मे आना उपयोगी है जिन्हे वैद्यो को भी अज्ञात किसी द्रव्य का उपयोग विदित हो, अथवा वैद्यो को ज्ञात किसी द्रव्य का ऐसा उपयोग विदित हो जिसे सामान्यतया वैद्य न जानते हो। इन वृद्धो के पास जा कर हम कई ऐसी बाते भी जान सकते है जिनके ज्ञान द्वारा आयुर्वेदीय सहिताओ मे लिखित कई कर्मो, उपयोगो आदि को समझने मे हमे सहायता प्राप्त हो सकती है। यह प्रस्ताव रखते हुए मेरे ध्यान मे किसी प्रयत्नपूर्वक गोपित औषधकल्प को उसके जानकार के पास से निकलवाने की बात नही है। हमारे बाग-बगीचे मे या आसपास वन-उपवन मे पाई जानेवाली या पन्सारियो के यहाँ से मिलनेवाली वनस्पतियो का ही विचार इस समय मेरे मन मे है। साथ ही, कई लुप्त क्रियाएँ करनेवाले भी वैद्य, वैद्येतर मिल सकते है, जिनके सानिध्य से उन क्रियाओ को अधिकतर प्रकाश मे लाया जा सकता है। दक्षिणापथ मे आज भी प्रचलित पञ्चकर्म तथा स्नेहन-स्वेदन को भी इस प्रसग मे पुन स्मरण किया जा सकता है।

शास्त्रीय जानकारी का सदोहन

द्रव्यगुण विज्ञान मे अनुसधान के प्रसग से इतना आनुषगिक विवेचन कर पुन मूल विषय पर आता हूँ। **औषधो** के रस, गुण, वीर्य, विपाक तथा प्रभाव के ज्ञान के पूर्व स्वय भारत मे उगनेवाली असख्यात औषधो का परिचय हमे प्राप्त करना चाहिए, यह **अबतक के वक्तव्य का अभितार्थ** है। इसके साथ कुछ विद्वान् **शास्त्रीय जानकारी एकत्र करने आदि के कार्य में** भी नियुक्त होने चाहिए। यद्यपि स्वर्गवासी पूज्यचरण आचार्य यादवजी भाई ने द्रव्यगुण-विषयक जानकारी लगभग सभी दोहित कर ग्रन्थाकार निबद्ध कर दी है तथापि इस सदोह मे अभी और भी वृद्धि करने का पूर्ण अवकाश है। हम वेद आदि से लेकर ब्रिटिश युग के पूर्व तक की सर्व शास्त्रीय सामग्री का सकलन करना आयुर्वेद के समग्र ज्ञान के लिए आवश्यक है यह उद्घोषणा प्राय करते है। इस दिशा मे प्रयत्न भी हो ही रहे है। परन्तु सम्पूर्ण आयुर्वेद-विषयक पूर्ण जानकारी (माहिती) के दोहन और सदोहन का आदर्श हमारे सामने रहे तो कार्य का नाम ही इतना आतङ्कजनक है कि उसमे हाथ लगाने की हिम्मत ही कोई नही कर पाता। परन्तु, छोटे-छोटे विषय प्रसगवश लेकर उनके सम्बन्ध मे सामग्री सकलित करने का आदर्श अपनी दृष्टि के सामने हो तो वह सुखसाध्य प्रतीत होने से अल्पशक्ति और अल्प धैर्यवाले व्यक्ति भी उसे करने को उद्यत हो सकते है। यथा, यही द्रव्यगुण विज्ञान विषयक रस-वीर्य विपाकादि सम्बन्धी सामग्री लीजिए। प्रत्येक प्रयास मे थोडी-थोडी भी जानकारी जुडती जाए तो स्वल्पकाल मे बडा पुञ्ज हो सकता है, जिसका उपयोग बहुत ही हितावह होने मे कोई सशय नही किया जा सकता।

वचनों का अर्थ-विनिश्चय

पुञ्जित सामग्री जितनी आज है उतनी के विषय मे कुछ कर्तव्य कार्य शेष होने की सभावना हो सकती है। यथा, **तत्-तत् वचन के अर्थ विनिश्चय का प्रश्न** इस प्रसग मे उपस्थित किया जा सकता है। उदाहरणतया, **अवस्था-**

पाक का अर्थ आज भी कोई विज्ञ एलोपेथी मे वर्णित पाक-क्रिया की तीन अवस्थाएँ करते है। **विपाक** का अर्थ धात्वग्निजन्य पाक करनेवाले भी बहुत विद्वान् है। **पञ्च-महाभूत** का अर्थ द्रव्यमात्र की सॉलिड लिक्विड आदि अवस्थाएँ भी कतिपय विद्वान् करते है। चरक का समन्वयात्मक वचन स्पष्ट होते हुए भी विपाक के विषय म पूर्वाचार्यों मे कोई मत-भिन्नता है ऐसा हम अब भी सिखाते है। वीर्य के विषय मे भी न मतभेद होते हुए भी मतभेद हम देखते है। इसके अतिरिक्त पृथक्-पृथक् द्रव्यो के रस-गुण वीर्य आदि के विषय म ग्रन्थो म कुछ तात्विक मतभेद है। उसका विचार भी किया जा सकता है। परन्तु प्रथम तो **एकत्र सामग्री में और वृद्धि कर, उस पर लघु सभाषाओं की योजना कर विवाद्य विषयो की निश्चिति कर देनी चाहिए**। यह कार्य भी कम महत्व का नही है। इस का एक परिणाम कमसे कम यह तो होगा ही कि अध्यापको और वैद्यो के मन मे आयुर्वेद के मूल सिद्धान्तो का निश्चित रूप जम जाएगा और आयुर्वेद के शिक्षण के आरम्भ म ही अनिश्चित सिद्धान्तो के कारण विद्यार्थी के चित्त को जो खेद रहता है वह भी न रहेगा। आयुर्वेद की चर्चाविचारणा के लिए केन्द्रीय तथा प्रादेशिक शासनो, धनपतियो विभिन्न सस्थाओ एव जनता की ओर से कुछ अनुकूलता अब हो चली है। आयुर्वेद के शास्त्रीय पक्ष के क्षेत्र म कार्य करनेवाले सज्जन इसका उपयोग कर एक एक छोटा-छोटा विषय लेकर उस पर सपूर्ण सामग्री एकत्र करते जाएँ तो कालान्तर मे समस्त आयुर्वेद-सबन्धी विपुल सामग्री अनायास एकत्र हो जाएगी।

द्रव्य-विषयक सामग्री का क्षेत्र

किं बहुना, आरम्भ मे शास्त्रीय पक्ष मे कार्य करनेवाले विद्वान् इस प्रकार रस-गुण-वीर्यादि सबन्धी सम्पूर्ण सामग्री एकत्र कर उस पर प्रादेशिक या माण्डलिक सभाषाएँ रच कर अर्थ-निश्चिति का कार्य करे। पश्चात् अथवा साथ ही एक-एक द्रव्य पर सपूर्ण सामग्री एकत्र की जाए। मै समझता हूँ, पृथक् द्रव्यो पर केवल आयुर्वेदीय दृष्टि से ही सामग्री एकत्र करने से सतोष न मानना चाहिए। अन्य प्रकार से भी जो सामग्री प्राप्त हो उसका भी सकलन करना चाहिए। जैसे, **खदिर** पर सामग्री एकत्र करते हुए कत्थे की निर्माण-विधि तथा उसके उद्योग-सम्बन्धी जानकारी भी एकत्र करनी चाहिए। **हरीतकी** पर सामग्री का सदोहन करते हुए उसका रग बनाने मे जो उपयोग होता है उसकी भी शास्त्रीय जानकारी हरीतकी के प्रकरण मे एकत्र करनी चाहिए। **शहतूत** या **एरण्ड** के वर्णन मे रेशम के उत्पादन का भी विचार किया जा सकता है। **बबरी** आदि के अधिकार मे **लाक्षा** को भी लेना चाहिए। इससे जो सपूर्णता विषय मे आएगी उससे चिकित्सक का ज्ञान बहु-क्षेत्रीय हो उसे लोकप्रिय बनाने मे भी उपयोगी हो सकता है। यह सपूर्ण सामग्री विषय को रोचक बना कर विद्यार्थी को भी उसके प्रति प्रवृत्त करने मे सहायभूत होगी। परीक्षा म इन अवान्तर विषयो को महत्व न दिया जाए, यह और बात है।

द्रव्यो की क्रिया का स्पष्टीकरण

प्राचीन सहिताओ या निघण्टुओ मे वर्णित द्रव्यो के सबन्ध मे प्राप्त सपूर्ण सामग्री के सकलन के साथ, जैसा कि ऊपर कहा गया है, उस सामग्री का उपयोग कर ग्रन्थ निर्माण करनेवाले नये लेखक यह अवश्य स्पष्ट करते जाएँ कि कोई द्रव्य किस प्रकार किसी **रोग-विशेष की सप्राप्ति का भङ्ग** कर उसे शान्त करता है। केवल सस्कृतोक्त गुणो और कर्मों का पुनरुल्लेखन हमे अब सतोष नही दे सकता। हमारी बुद्धि मे द्रव्य-विशेष की उपयोगिता और उपादेयता केवल इतने उल्लेख से स्थान नही पा सकती। अब तो **विपुल विस्तारवाले व्याख्या-ग्रन्थो की आवश्यकता है**। पुस्तक-प्रकाशक प्रकाशन का उत्साह रखते है। उन्हे उपयुक्त ग्रन्थ उपयुक्त स्वरूप और सख्या मे मिल नही रहे।

असंसृष्ट द्रव्यो का उपयोग

निश्चित ही, द्रव्यो के प्राचीनोक्त किवा किसी वर्तमान आप्त द्वारा निर्दिष्ट गुण-कर्मो पर केवल कथनमात्र से उन्हे उद्धृत करनेवाला द्रव्यगुण-विज्ञान का नवीन लेखक भी विश्वास न करेगा। उसकी प्रत्यक्ष प्रयोग द्वारा पुन पुष्टि करना आवश्यक है। इसके लिए द्रव्य का शास्त्र मे या आप्त द्वारा कथित रोग-विशेष मे उपयोग करना होगा। कोई भी यह मानने को तैयार न होगा कि प्राचीन लोग भाग पीकर ग्रन्थ लिखने को बैठते थे और अण्ट-सट लिखे जाते थे। आवश्यकता केवल प्रयोग द्वारा वर्णित गुण-कर्मों के पुन अनुशीलन की है। कुछ ही काल पूर्व **कविराज प्रतापसिंह जी** ने कहा था कि, **वासा** जिन रक्तपित्तादि रोगो

में उपयुक्त कहा गया है उनम अल्प मात्रा म कार्य नही करती। प्राय चिकित्सक छोटी-छोटी मात्रा में उसका उपयोग कर फलश्रुति के अनुसार परिणाम न प्राप्त कर शास्त्र क प्रति शङ्कित दृष्टि से दखन लगत ह। वासा का कामुक वीय बडी मात्रा म ही यथा एक छटाक स्वरस म ही पर्याप्त अश म आता है। कविराजजी न ही सखद यह भी कहा कि प्रयोग करन की हममें वृत्ति ही नहीं रही है। सहदवी शिर मे बाधन से ज्वर दूर करती है यह हम अनादिकाल से पढात ही आ रह ह। कभी प्रयोग करन का विचार ही हम म किसी को आता नही। कितनी वनौषधिया शिर या कटि म बाधन से मूढगभ को प्रवृत्त करती ह। कई विश्वास करन योग्य व्यक्ति आज भी कहत सुन जात ह कि स्वय अनक रुग्णाओ म यह प्रयोग सिद्ध हुआ व दख चुक ह या स्वय प्रयोग कर चुक ह। परन्तु हमार प्रसूतितन्त्र के अध्यापक तथा सूतिकागारो क अध्यक्ष ह कि पढा तो दग कि अमुक अमुक औषध के बाधन से मूढगभ की प्रवत्ति ससुख होती है पर कभी गर्भाशय की सुप्ति (यूटराइन इनशिआ) म किसी औषध का उपयोग करन का विचार ही मन म नही लाते। काञ्चनार त्वक किवा युग्मपत्र (आसोतरा) त्वक गण्डमाला व्रणापह कह गए ह। उनका श्रद्धा से उपयोग करन का विचार हम म कितन अध्यापक करत है। पढान को पढात तो अवश्य ह।

सपादकाचाय श्री रघुवीर प्रसादजी त्रिवदी न अभी बताया था कि वातिक हृद्रोग (हृदय स्पन्दन) म अर्जुन क पत्र का स्वरस उपयोगी होता है यह उन्ह उनक अनुचर की छोटी-सी भूल से विदित हुआ। बहुत ही पिच्छिल (तन्तुमान) होता है यह पत्र रस। उधर अजुन की हृद्रोगो म उपयोगिता क प्रकरण म हमार कायाचिकित्सा ध्यापक प्राय यह कहत ह कि अजुन के प्रसिद्ध उपयोगी अग काण्डत्वक म कषायरस होता है। अत उसका कफज हृद्रोग म ही उपयोग हितावह होना चाहिए। पूर्वाचार्यो न कफज हृद्रोग म ही अन्य कषाय रसवाले द्रव्यो क साथ उसका विधान भी किया है। परन्तु त्रिवेदी जी इस अनुभव के पश्चात कहत ह—ग्रन्थस्थ वाङ्मय को अपूण ही समझना चाहिए। उपदशक्रम म गुरुजन इसस अनक गुणी अधिक जानकारी शिष्यो को कराते होग। इसी प्रकार श्री त्रिवदी जी न इस बात का भी भार दकर उल्लख किया था कि मूत्रमाधुय में जम्बू के बीज की अपेक्षया पत्र हा अधिक कार्मुक होता है। अनक अनुभवी भी वस्तुत इस बात का समथन करत ह। सुचिकित्सक अनुभव कर दख।

यह तो शास्त्र म निर्दिष्ट वनौषधियो की बात है। अनक विज्ञजन जिनम आदिवासी (मूलजाति) भी ह कई वनौषधियो की भिन्न भिन्न रोगो म उपयोगिता बतात ह। अनुभव से प्रमाणित भी होता है कि शास्त्र म निर्दिष्ट तत्त द्रोगहर द्रव्यो की अपक्षया इन द्रव्यो की कायसाधकता अधिक होती है। इह भी उपयोग म लाकर उनकी उपयोगिता का प्रयक्ष दशन कर इह प्रचार म लाना चाहिए। ऊपर धत पद्यो म धन्वन्तरि हमार लिए स्पष्ट माग दशन कर गय ह—नई वनस्पतिया नाम और रूप से विदित हो तो साक्षात प्रयोग द्वारा उनक रस गुण वीय विपाक और प्रभाव का परिज्ञान करना चाहिए। इतना स्पष्ट निर्दिष्ट माग होन पर भी हम आज विचार करत ह—नवीनोपलब्ध द्रव्यो के रस गुण-वीय विपाक के ज्ञान की क्या पद्धति होनी चाहिए।

प्रयोग द्वारा शास्त्रोक्त तथा आप्तोक्त किवा सवथा अपरिज्ञात औषधो क रस गुण वीय विपाक प्रभाव का ज्ञान प्राप्त करना हो तो हम अपनी आज की उपचार पद्धति म आमूलचूल परिवतन करना होगा। जो चिकित्सक व्यवसाय म लग्न ह उनसे तो सामान्यतया इस प्रकार प्रयोग द्वारा किसी औषध क रस गुण वीयादि के ज्ञान की आशा नही की जा सकती। अगली पक्तिया उनक लिए प्रस्तुत नही की जा रही ह। किन्तु जो विज्ञ जन अन्वषण (रीसच) क काय म व्यापत या नियोजित ह निर्दिष्ट प्रस्ताव उनक लिए ही नम्रतया प्रस्तुत किय जा रह ह।

सामान्यतया प्राय प्रत्यक पद्धति क व्यवसायी चिकित्सक व्यवसाय करत हुए किसी एक कल्प पर निश्चित विश्वास कर उसी का उपयोग नही करत। परन्तु एक ही काय करनवाल अनक कल्पो की योजना करत ह। नाना कल्पो का यह उपयोग कभी पथक पृथक होता है और कभी एक ही पुडिया म। पन्द्रह-बीस पच्चीस तक एक ही रोग पर काय करनवाल कल्प कभी कभी तो उपयोग म लाए जात दखन म आत ह। इससे चिकित्सक को सिद्धि और यश तो मिलता है परन्तु यह परिणाम निकालना दुष्कर होता है कि रोग क किस लक्षण पर किस विशिष्ट कल्प या द्रव्य न किस प्रकार काय किया? चिकित्सा यशस्विनी होने पर विद्यार्थी कैसे समझ कि किस द्रव्य या कल्प का

किस रोग की किस अवस्था म किस प्रकार काय होता है। और वह समझ ही नही तो उसकी उन कल्पो या द्रव्यो क उपयोग म प्रवत्ति कस हो ? फिर वह निश्चित ही एलो पथी के द्रव्यो का उपयोग करन की दिशा म प्रवत्त क्यो न हो जिनका चमत्कारी और विश्वासपूण भाषा म उल्लख ग्रन्थो और तदाश्रित भाषणो और लखो म होता है तथा जिस प्राय प्रत्यक्ष दर्शाया जाता है। आयुवद को बोधगम्य बनान क लिय इस पद्धति म हम परिवतन करना ही होगा। और इस परिवतन क प्रयोग स्थान होग अनु सधान क स्थान तथा आयुर्वेद महाविद्यालयो स सलग्न रुग्णा-लय। प्रयोग का अथ कदापि रोगी को हानि पहुचाना नही है। रोगी को अधिक आर्थिक व्यय म डाल विना उसक रोग को निष्प्रयोजन अधिकतर दिन रहन न दत हुए कि बहुना सव प्रकार से सुरक्षित स्थिति म रोगी को रख कर भी प्रयोग परीक्षण किए जा सकत ह। जो महा नुभाव इस दिशा म काय कर रह ह उन का अनुभव मरी इस स्थापना का समथन करगा। जिन्होन इस दिशा म काय करन की ओर पाद-न्यास ही नही किया है व अनुभव क विना केवल मर कथन से इस बात पर प्रत्यय नही कर सकत। अत उभय दष्टियो से इस विषय म अधिक कहना व्यथ है। जो पद्धति प्रयोग द्वारा अन्वषण म हम अपनानी होगी उसका स्वरूप नीच दिया है।

रुग्णचिकित्सात्मक अन्वषण का प्रकार

एक-दो अथवा अधिक जितन भी रोग लिए जाए उनकी भिन्न भिन्न अवस्थाओ म प्रत्यक रोगी को जो औषध देना हो उसका निश्चय पहल से ही सभाषा द्वारा कर लिया जाना चाहिए। पूव सभाषा से इस बात की तो निश्चिति हो ही जाएगी कि जो औषध रोगी को दिया जानवाला है वह उत्कृष्टतम कायकारी होगा। एक ही औषधक्रम या उपचारक्रम पच्चीस पचास सौ या अधिक रोगियो को द कर हम किसी निश्चित परिणाम पर पहुच सकत ह।

दूसरी बात। विचारणीय अन्वषण द्रव्यगुण का है। प्रत्येक पृथक द्रव्यक गुण धम का इस प्रयत्न द्वारा हम निणय करना है। इस का एक मात्र प्रकार यही होगा कि अनक कल्प एक अहोरात्र म किवा एक साथ दन की बात तो दूर एक साथ असंसष्ट द्रव्य ही द—और उन की सख्या भी परिगणित ही रख। पृथक-पृथक असंयुक्तद्रव्य दन से ही तो हम जान सकेंग कि किस द्रव्य का क्या विशिष्टपरिणाम होता है। और मैंन तो दखा है कई अनुभवी वैद्यो के यहा कटरोहिणी (कटुकी) वासा यष्टी मधु विदारी अश्वगन्धा शतावरी अशोक पुननवा किराततिक्ता इत्यादि असंसष्ट ही द्रव्य उपयोग म आते हैं और यश का उपाजन भी व करते ह। यही पद्धति द्रव्यो के शास्त्रोक्त किवा आप्त जनोक्त गण कर्मों के निरीक्षण क लिए सर्वात्तम और वज्ञानिक कहना हो तो वह है।

मानवो पर प्रयोग की प्राथमिकता

द्रव्यो क गण कर्मो का अनसधान प्राणियो पर करन की प्रवत्ति आजकल है। इसस बहुत-कुछ जानन को मिलता है इसम सशय नही। परन्तु मरी तुच्छ बद्धि क अनुसार परीक्षण की इस पद्धति को प्राथमिकता नही दनी चाहिए। कारण दो ह। एक तो शासन या खानगी व्यक्तियो की ओर से इन दिनो आयुवद क लिए जो व्यय हो रहा है वह अत्यल्प है। इस का व्यय पुरुषो पर होगा तो उनको जो लाभ होगा उसक कारण आयुवद का वातावरण जनता म उत्पन्न होन का काय इस प्रकार शीघ्रतर सपन्न होगा। व्यय करन को धन पुष्कल हो तो साथ साथ प्राणियो पर भी कोई व्यय कर इसम विप्रतिपत्ति न होनी चाहिए। विष आदि की परीक्षा प्राणियो पर करन का विधान आयुवद म पहल से हा विद्यमान है। तथापि प्राणियो पर प्रयोग को प्राथ मिकता न देन का अन्य कारण यह है कि प्राणियो पर प्रयोग करन क पश्चात भी मानवो पर तो प्रयोग करना शष ही रहगा। कारण मानवो म मन का प्रभाव शारीर दोष और शरीर पर अत्यधिक पडता है। भारतीय दशन और आयुवद तो इस सत्य को कब स स्वीकारते ही आए हैं आधु निको न भी अब इसका प्रत्यक्ष किया है। रोग की अप क्षया रोगी को और उसक भी एक रुग्ण अवयव को केवल चित्त म न लाकर समस्त अवयवो और मन को रोग परीक्षा तथा चिकित्सा का विषय बनाना अब आवश्यक माना जान लगा है। मानव म विकसित मन वातावरण क प्रति उसकी प्रतिक्रिया औषध क प्रति उसकी चित्तवृत्ति आदि अनक बात उस प्राणी से भिन्न कोटि म रखनवाली है जिनको दृष्टि म रखकर प्राणियो और पुरुषो म एक ही द्रव्य क भिन्न परिणाम आन की कल्पना सहज म की जा सकती है।

रुग्णचिकित्सात्मक अन्वेषण का महत्व

आयुर्वेद का वातावरण उत्पन्न करन क लिए सार दश म आयुर्वेदीय औषधालयो और रुग्णालयो का जाल-सा बिछा दन की माँग हम प्रायश करत है। इसी कारण प्रयोग-परीक्षण क लिए हम जो पद्धति अपनानी चाहिए वह भी रुग्णचिकित्सा म उपयोगिनी हो और अतएव प्रजा म आयुर्वेद क वातावरण की सष्टि म सहायक हो इस प्रयोजन से प्रयोग परीक्षण क लिए जो द्रव्य हमार कायकर्ताओ को प्राप्त हो उसका अधिकाश मानवो पर प्रयोग क रूप म हो यह प्रस्ताव मैन ऊपर रखा है। इसी दष्टि से मै यह भी प्रस्ताव रखना चाहता हू कि—**द्रव्यो पर अन्वषण करन की एक दिशा प्राय उनक रासायनिक विश्लषण की बताई जाती है उस भी हमें प्राथमिकता (प्रायोरिटी) न दनी चाहिए।** किन्तु उपलब्ध द्रव्य का अधिकाधिक उपयोग रुग्णचिकि सा मक अन्वषण (क्लिनिकल रीसच) म ही हो यही हमारा लक्ष्य रहना चाहिए। आल्कलायड आदि कामुक अश (एक्टिव प्रिंसिपल) प्राप्त करन के प्रय न से प्रथम तो हमारी मानव शक्ति और धन का व्यय रुग्णचिकि सा मक अन्वषण पर नही होता जिसस हम उसक पूर्वोक्त लाभ से वञ्चित रह जात ह। दूसर प्राय महान श्रम राशि का व्यय करक भी प्र यक द्रव्य म पथक ही कामुक अश की विद्यमानता की प्रतीति परिणामरूप म होती है और उसका वही उपयोग शक्ति और धन के इतन व्यय के पश्चात विज्ञात होता है जिसका उल्लख आयर्वेद क ग्र थो म बताया जाता है। पुनश्च अब तो इस दिशा म काय करन वाल आप्तो का यह भी मत होन लगता है कि पथक-पथक कामुक अश की अपक्षया आश्रयभत सपूण औषध (होल ड्रग) का ही उपयोग अधिक उत्तम है। इन सब दष्टियो से द्रव्य क विश्लषणा मक अन्वषण की अपक्षया **मानवो पर रुग्णचिकित्सात्मक अन्वषण ही अधिक उपयोगी और उपादय है।** प्र यक द्रव्य म द्रव्यान्तरो स पथक ही कामुक (क्रियाशील) अश प्राप्त होता है। मूल द्रव्य के नाम म आइन या इन प्रत्यय लगा कर उस अश को नयी सज्ञा दन की वतमान पद्धति है। प्राचीनो न प्रभाव की परिभाषा बतात हुए यही कहा है कि पुननवा विदारी आदि म पुनन वात्व विदारीत्व आदि त्व और ता प्र ययो से प्रतिपाद्य जो धम विशष है वही उसका प्रभाव है। आइन या इन प्रत्यय द्वारा आज क अन्वेषक वही बात तो कह रह है।

रस गुण वीय विपाक ज्ञान की आवश्यकता

अबतक शास्त्रोक्त या आप्तोक्त द्रव्यो क कम की परीक्षा क प्रकार का ही हमन विवचन किया। परन्तु तत द्रव्य की तत-तत रोग पर क्रिया होती है इतना ही अन्वषण करक हम छोड द तब तो उसम आयुर्वेदीय व कुछ रहता नही। आयवदीय द्रव्यो का उपयोगिता है उन्ह ही हम समानित करत हुए एलोपथी क निघण्टु म समाविष्ट कर लना चाहिए शष रस-गण-वीय विपाक या वात पित्त कफ को एतिहासिक म्यूज़ियम म स्थान द छोडना चाहिए एसा मत रखनवाल तथा उस की पुष्टि और प्रचार कर आयवद को नाम शष करनवाल विरोधियो क ही हाथ हम मजबत कर रह होग यदि हमन द्रव्यो क कम दखकर इस बात की उपपत्ति न बठाई कि द्रव्य का उपलब्ध कम उसक रस गण आदि किस स होता है। यह कम हमार ध्यान तथा शक्ति को सविशष आकृष्ट कर यह आवश्यक है।

विचारशील सज्जन इतन वक्तव्य स ही द्रव्यो की क्रिया क कारणभत रस गण वीय विपाक क अनशीलन के प्रश्न का महत्त्व भलीभाति समझ जाएग। तथापि अब तक यह भीति अच्छ अच्छ विद्वानो क चित्त को भी विकल विह्वल करती पाई जाती है कि नवीन द्रव्य—दशी या विदशी पहल स विद्यमान या नवाविष्कृत—के रस-गण-वीय विपाक का ज्ञान कस प्राप्त किया जाए? ध वन्तरि न स्पष्ट माग दिखा दिया है कि द्रव्यो क रस-गण-वीय विपाक का परिज्ञान प्रयोग द्वारा करना चाहिए। इस पद्धति को प्रय नपूवक अपनान की ओर हमारा ध्यान जाता नही परन्तु आपको जान कर आश्चय होगा कि कई नवीन द्रव्यो को अज्ञाततया हम इस रीति स अपना चक है। इनम कुछ का नामोल्लख कर द तो इस दिशाम काय करन का हमम उत्साह उदित होना स्वाभाविक है।

नवीन द्रव्यो के रसादि ज्ञान का प्रकार प्रचलित

टमाटर नवोपलब्ध द्रव्य है। इसम हजार विटामीन और खनिज द्रव्य हो तथापि सुचिकि सक इस पित्त-कफ प्रकृति पुरुष को एव शोथ उदर कास श्वास आदि रोगो से पीडित पु रुषो को सेवम करन की सलाह कदापि न दग विशषतया आनूप दश म। परपरागत चिकि सक प्राय अपन रोगियो को यही कहते सुन जाते है कि टमाटर अच्छ से अच्छ हो खूब पैस दकर पाए हो किवा मुफ्त मिल तो

भी खाना नही। कारण इनका विपाक अम्ल—अतएव कफपित्तप्रकोपक—होता है। अच्छ से अच्छ मधुर रसात्मक प्रतीत होनवाल टमाटर को राधिए—उस का रस अम्ल हो जाता है। यही स्थिति उसका जठराग्नि द्वारा पाक होन के अनन्तर होती है।

टमाटर क सदश ही आलू हमार दश म नया आया है। अनभव स इसका वातप्रकोपक स्वभाव हमन निश्चित कर लिया है। चाय तो उसक भी पीछ आई होन पर भी उसक गण-दोष का परिज्ञान हम हो चका है। मिच की भी यही दशा है। हरी और लाल मिच का भद भी वद्यजन जान चक ह। क्वीनाईन तिक्त होन पर भी उष्णवाय और रूक्ष है यह हम प्रयोग स निश्चित कर जान चक ह और उसको हठात उपयोग करत हुए स्निग्धशीत दुग्ध क सप्रमाण उपयोग की सलाह रुग्णो को दत ह। इन द्रव्या को अपन समक्ष आप रखग तो अन्य भी पश्चात काल म भारत म आए सत्यानाशी चोपचीनी आदि द्रव्या की स्वय स्मति आपको हो जाएगी। और उसक आधार पर इतना स्पष्टता से अपरिज्ञात द्रव्या के रस-गण-वीय विपाक के परिज्ञान का माग आपके सामन प्रशस्त हो ही जाएगा।

नव्यमत से रसादि का विचार

रस गण-वायादि का अथ नव्य मत से क्या है? एव किसी द्रव्य क रस गण-वीर्यादि नव्यमत से कम निधारित किए जा सकत ह यह प्रश्न भी अन्वषक विद्वाना की सभाषा म उपस्थित होता है। इस विषय म भी मरा नम्र मत ऊपर निर्दिष्ट तक क्रम से यही है कि आयवद क अन्वषण क लिए जितना भी द्रव्य सुलभ हो उसका अधिकाधिक उपयोग रुग्णचिकित्सात्मक अन्वषण काय म हो यही हमारा प्रयत्न होना चाहिए। **प्रत्यक्षप्रिय जनता तथा अधिकारियो को आयुर्वेद की उपयोगिता दर्शानवाला इसस अधिक उत्तम उपाय अन्य नहीं।** इसक द्वारा आयुर्वेदकी उपयोगिता और उपादयता का प्रत्यय (विश्वास) होन पर ही धनपति किवा शासन आयर्वेद को हस्तावलम्बन दन क लिए अभिमख हो सकत ह। अन्यथा नही। तथापि किसी को नव्य मत से रस-गुण-वीय विपाक के ज्ञान का आग्रह हो ही तो उसकी भी पद्धति प्राचीन आचाय दशा गए है। सुश्रुत न कहा है—**गुणो का ज्ञान उनक कर्मों से होता है।** धन्वन्तरि निघण्टुकार न रस गुण-वीय विपाक सभी का ज्ञान कर्मो स होता हुआ बताया है। चरक न भी **विपाक की निश्चिति कम स ही होती हुई कही है।** रस क अनुसार जो कम द्रव्य विशष का होना चाहिए वह न हो—साथ ही अन्य भी लक्षण विशष दृष्टिगोचर हो तो विपाक रस से भिन्न और अमक है यह कल्पना की जा सकती है। वीय और गण म भद इतना ही है कि गुरु लघु उष्ण शीत आदि धम स्वल्प प्रमाण म हो तो उन्ह गुण कहत है। व ही अधिक शक्तिशाली (इटन्स) हो तो उन्ह गुण न कहकर वीय कहा जाता है। (वीय शब्द यहा सामान्य धम क अथ म नही है धम विशष के अथ म है)। जहा चरक न मधुर स्कन्द आदि क रूप म रस भद से द्रव्यो क वग दिए है वहा उसन स्पष्ट कहा है कि मधर रस क सदश जिस द्रव्य के कम हो उसका रस मधर होता है यह समझना चाहिए। **खनिजो क रस का निणय** भी प्राचीनो न उनक कम दख कर ही किया था यह निणय इस वचन से अनायास किया जा सकता है। **खनिजो क मधुरादि रस होने का यह भी अथ है कि** जिन द्रव्यो म अमक शकरा हो-या जो पाकान्तर शकराक रूप म परिवर्तित होन का स्वभाव रखत हो व ही द्रव्य मधर नही मान जान चहिए। यह भी समझना चाहिए कि शरीर का माधय अमुक द्रव्यो क सवन से शरीर म रक्षित रहता है या उसकी उत्पत्ति सविशष होती है। इसस यह भी समझा जा सकता है कि प्राचीन मतको नवीन मतक ढाच म बिठान क पूव कई आधारभूत बात हम खब अच्छी तरह से समझ लनी चाहिए। विशष तया अपन शास्त्र के मत का स्वरूप सम्यक बुद्धिस्थ कर लना चाहिए। कवल शब्दा का भाषान्तर जान लना पर्याप्त न समझ लना चाहिए।

विपाक का ज्ञान प्राणिशरीर म करना हो तो पाक की तत-तत अवस्था म आमाशय पच्यमानाशय तथा पक्वाशय म स्थित द्रव्यो को बाहर निकालकर उसकी परीक्षा की जा सकती है। इसक लिए जिस द्रव्य की परीक्षा करनी हो उसी को आहार रूप म दना आवश्यक होगा। प्राणिशरीर क बाहर विपाक की परीक्षा करनी हो तो जिन जिन रसो का सयोग आमाशय आदि म होता है उन को जितन काल द्रव्य पृथक पथक आशय म रहत है उतन काल उस उस रस से युक्त परीक्षा नली आदि पात्र म रख कर परिणाम रूप म प्राप्त द्रव्य का निरीक्षण करना सभव होगा। कह नही सकत जैस ग्रहणीगत बुद्धितत्त्व की क्रिया से मुक्त

आहार या औषध द्रव्य विवचित हो कर उसका उपयोगी अश रस का अङ्ग बन जाता है तथा शष अनुपयुक्त किट्ट क रूप म पक्वाशय म पहुँचा दिया जाता है वैसा विवचन (सार किट्ट विभजन) प्रयोगशाला म परिपाक क अनन्तर होगा या नही और होगा तो कितन अशम ?

रस का निश्चय तदगत शकरा लवण अम्ल आदि की अवस्थिति से किया जा सकता है।

गुणो तथा वीर्यों का विनिश्चय तत्तत उपकरण से करना कदाचित् सभव होगा। जिन द्रव्यो को हम उष्ण कहत है व शरीर म उष्णता की उत्पत्ति को उद्दीपित करत ह। शीत द्रव्य उसी क्रिया को क्षीण करत है। आधुनिक प्रयोगशाला म शरीर की आभ्यन्तर उष्णता को जाचन का जो साधन हो उसका विनियोग इस काय म किया जा सकता है। शायद **बी० एम० आर०** (बसिक मटाबालिक रट) जाचन की क्रिया इसम सहायक हो सकती है। उष्ण द्रव्य स्वद की बद्धि करत है। शरीर क महास्रोत रस रक्तवह स्रोत आदि की गति को भी बढात है। ब्लडप्रशर कार्डीओग्राम आदि क ज्ञान क साधन इसम उपयोगी होन सभव है। मन्दगुण तथा उसके विरोधी अथ म आया तीक्ष्ण गुण स्रोतो म वाह्य द्रव्य की गति को क्रमश मन्द तथा तीव्र करत है। तत तत स्रोत क वाह्य द्रव्य की गति जाचना कदाचित सुगम है। पाककर अथ म आया तीक्ष्ण गण अग्नि की बद्धि करता है। आमाशय आदि म पाचक रसो की स्रुति अधिक प्रमाण म हो तो द्रव्य उतन अश म तीक्ष्ण कहा जा सकता है। धात्वग्नियो की क्रिया पर द्रव्य का परिणाम मटाबालिज़म क रट की बद्धि स जाना जा सकता है। किसी गुण की कितनी इयत्ता (इटसिटी) होन पर उस गुण कहना तथा कितना प्रमाण हो तो उसी को वीय कहना—इस की कोई मर्यादा प्राचीनो न भी कही नही है। वह प्राचीन और नव्य उभय मत से विद्वानो को निर्धारित करनी चाहिए।

नव्यमत से सामान्य तथा विशष रूप स रस गण वीय विपाक का निणय कैस करना उसकी दिशा ही ऊपर की पक्तियो म दर्शायी है। इस विषय क निष्णात इस काय म स्वभावत ही अधिक विचार स्वय करक वास्तव म सहाय भूत हो सकत ह। अत एसे ही किन्ही विद्वान् से इस दिशा म माग विनिश्चय करन की प्राथना पुन पुन करता हू।

पेनिसिलिन आदि का विचार

द्रव्यगणविज्ञान क अन्वषण म पनिसिलिन आदि का भी विचार प्राप्त है। कई विद्वान इनक रस-गुण-वीय विपाक का निश्चय करक तथा इनका तत-तत दोष पर परिणाम निर्धारित कर इन्ह आयर्वेदीय निघण्ट तथा चिकित्सा म समाविष्ट कर नन का मत दर्शाते है। इसक लिए **तदव युक्त भवज्य और स एव भिषजा श्रष्ठ** इयादि वचन भी प्रस्तुत किए जात ह। परन्तु म समझता हूँ अभी इन द्रव्यो पर **अन्तिम निणय अर्वाचीनो न भी घोषित नहीं कर दिया है।** कई चितक तो कहत है **औषध निर्माता व्यवसायी न होत तो आज एँलोपथी क स्थान पर निसर्गोपचार प्रतिष्ठित होता।** मझ कुछ-कुछ एसी प्रतीति होती है कि प्राचीनो न किसी काल क्षत्रभूत शरीर की दृष्टि के साथ बीजभूत जतुओ का भी उपचार अपनी पद्धति म शामिल किया था। परन्तु पीछ के अनुभव से व शरीर की दोषकृत दृष्टि को ही अधिक महत्व देन लग। यही आयुर्वेद की परम्परा है। जो द्रव्य जन्तुओ पर क्रिया करत ह उनका उपयोग आयर्वेदाभिमत नही है। इसी प्रकार **इजक्शन द्वारा औषध प्रयोग भी हमारे औषध-निर्माण की परम्परा नही है।** तथापि पनिसिलिन आदि का विचार करना ही हो तो इसक लिए **दो दृष्टिया** रखी जा सकती है। एक तो विषो का औषधतया उपयोग प्राचीनो न किया ही है। पनिसिलिन आदि को भी विष गिन कर विषतन्त्र म दर्शित प्रकार से इनका निरूपण करना चाहिए। दूसर आयुर्वेद म **शुद्ध चिकित्सा** उसी को कहा है जो मूल रोग को नष्ट कर साथ ही अन्य रोग को उत्पन्न न कर। पनिसिलिन आदि शद्ध चिकित्सा की इस परिभाषा पर कहा तक खर सिद्ध होत ह यह दखना चाहिए। नव्य औषधो क विषय म सक्षप म निर्दशित इन मुद्दो क अनुसार अधिक विस्तृत विचार विज्ञ वैद्य कर सकत है।

गर्भ-स्थिति भ्रम

डा० अनन्तानन्द आयुर्वेदालंकार

गभ स्थिति स्त्री के जीवन की एक अ यन्त महवत्त्पूण घटना है। यदि यह वाञ्छनीय है तो वरदान और अवा ञ्छनीय है तो अभिशाप। इक्ष्वाकु कुल की सुदक्षिणा क लिय यदि यह गौरव की वस्तु है तो महाभारत की अवि वाहिता कुन्ती क लिय लज्जा की वस्तु इसी क निणय करन का भार कभी-कभा चिकित्सक के क धो पर एसे समय आ पडता है जहा उसक द्वारा दिए गए निणय पर एक नही अनक व्यक्तियो का भाग्य निभर करता है मझ स्मरण आता है कि एक बार एक वद्ध एक ३२ वष की स्त्री को एक्सर क लिए ल आए। व बड परशान नजर आत थ। कहन लग डाक्टर जी यह मरी विधवा पुत्र वध है। लोग कहत ह कि यह गर्भिणी है पर यह कहती है कि म बीमार हू। अब आप ही निणय कीजिए कि कौन सच्चा है। यदि यह बीमार है तो मझ से जो कुछ बन पडगा म इसकी चिकि सा क लिए करन को तय्यार हू पर यदि यह कुलटा है तो मरे घर म इसक लिए कोई स्थान नही। परीक्षा करन पर उसके उदर म एक बहुत बडा गर्भाशय मासाबद (Myomata) मिला जिससे कि गभ स्थिति का भ्रम होता था। कौन जान कितनी ही हतभाग्य स्त्रियो के सम्बन्धियो न चिकित्सको की सम्मतिया लिए बिना ही उनके साथ इस तरह क काण्ड कर डाल हो जिन की क पना से भी सिहरन होती है विशषत तब जब कि इस तरह क अनक उदाहरण विद्यमान ह कि अनचित गभस्थिति होन पर सम्बन्धियो न उस अभागी स्त्री को मार डाला है या बचारी न स्वय आ महया कर ली है

गभ स्थिति का भ्रम किन किन अवस्थाओ म हो सकता है इस पर विचार करन से पूव उचित होगा कि हम गभ स्थिति के सामान्य लक्षणो पर पहिल विचार कर ल जिसस आसानी से उसे समझा जा सक।

गभस्थिति (Pregnancy) **क लक्षण—** तस्य गर्भापत्त द्वहृदयस्य च विज्ञानाथ लिङ्गानि समासेनोपदक्ष्याम —। आतवादशनमास्यसस्रवणमनन्नाभिलाषश्छर्दिररोचकोऽम्लका मता च विशषण श्रद्धा प्रणयन चोच्चा वचषु भावष गरुगात्र व चक्षषोर्ग्लानि स्तनयो स्त यमोष्ठयो स्तनमण्डलयोऽश्च काष्ण्यम यथ श्वयथु पादयोरीषल्लोम राज्यदगमो योन्याश्चारल वमिति गभ पर्यागते रूपाणि भवन्ति। च शा

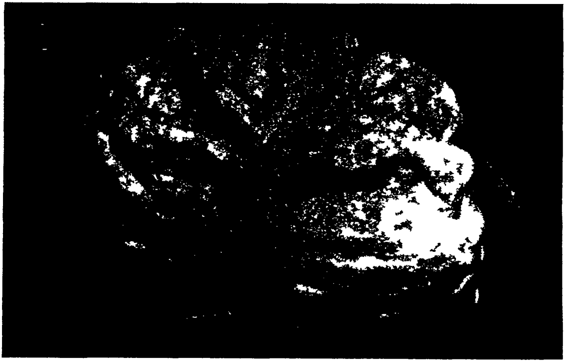
अर्थात्—गभस्थिति क लक्षण हम सक्षप म कहत है। जब गभ आ जाता है तो मासिक स्राव ब द हो जाता है लार आती है (अपच से) भोजन से रुचि जाती रहती है वमन होता है जी मिचलाता है खट्टा खान की इच्छा होती है विशषत ऊटपटाग वस्तुओ की (जसे ठीकरा कोयला मोमबत्ती आदि) शरीर भारी हो जाता है आख मिच मिचाती ह स्तनो म दुग्धोत्पत्ति हो जाती है होठो क किनार तथा स्तनो के गोलचक्र (A ola) अधिक काल पड जात ह परो पर हलकी सूजन आ जाती है रोगट खड होन लगत ह तथा योनि चौडी और शिथिल हो जाती है।

दखा जाए तो उपयु क्त लक्षणो म गभस्थिति के सभी सामा य चि ह आ गए ह जिन्ह गर्भिणी स्वय अनुभव कर सकती है या एक सामा य व्यक्ति देखकर बता सकता है। अब हम इन्ही पर कुछ अधिक विस्तार से विचार करग तथा नवीन उपायो पर प्रकाश डालग जिनसे गभस्थिति के विषय म हम ठीक निणय पर पहुचन म समथ हो सक।

गभस्थिति या दौहृ द के लक्षणो को हम दो समूहो म बाट सकत ह एक प्रारम्भिक और दूसरा स्पष्ट लक्षण (अथनार्या सद्योगृहीत गर्भायाश्चलिङ्ग क्रमण तु व्यक्त गर्भाया। अष्टाग हृदय।)। प्रारम्भिक (सद्योगृहीत गर्भा के) लक्षणो से तो हम गभस्थिति का केवल अनमान लगा सकत ह परन्तु स्पष्ट लक्षणो (व्यक्तगर्भा के) से हम इसक बारे म निश्चित रूप से बता सकते ह। वतमान वर्गीकरण म प्रारम्भिक लक्षणो को पुन दो भागो म बाट दिया गया है। इस तरह से हम इन लक्षणो को ३ समूहो म रख सकत ह स दहकारक (Presumptive) सन्दह पोषक (Probable) और सुनिश्चित (Positive)।



एक गर्भवती की श्रोणि-गुहा (Pelvic Cavity) का चित्र। ६ मास के एक भ्रूण के कपाल की छाया स्पष्ट देखी जा सकती है।



३० पौण्ड बोझ का बीजकोषजन्य जलार्बुद (Ovarian Cyst)



सीमित गर्भाशय मासाबद (Myomata ntramural)। गर्भाशय की दीवारो म बहुत से मासाबद दिखाई दे रह ह।



एक गभवती के उदर का चित्र। ८ मास के एक भ्रूण की छाया उदर म स्पष्ट देखी जा सकती है। बच्चे का सिर श्रोणिगुहा (Pelvic Cav ty) म और पर ऊपर की ओर

सन्देहकारक लक्षण (Presumptive Signs)

ये लक्षण समागम के २-३ दिन बाद से स्त्री को अनुभव होने प्रारम्भ हो जाते है, जैसे ग्लानि, प्यास, टागो मे पीडा आदि। (तत्र सद्योगृहीत गर्भाया लिङ्गानि श्रमो ग्लानि पिपासा सक्थिसदनम् । सु शा ।)

परन्तु वास्तविक सन्देहकारक चिन्ह बाद म प्रगट होते है। ये निम्न है—

(१) **मासिकधर्म का न होना** (Suppression of menstruation)—स्त्री को सब से पहिले इसी चिह्न से कुछ-कुछ विश्वास हो जाता है कि वह गर्भिणी हो गयी है। यदि स्त्री को मासिक धर्म नियमपूर्वक होते हो और समागम के बाद ये सहसा रुक जाए तो स्वभावत गर्भस्थिति का सन्देह होता है। (आर्तवादर्शनम । च शा ।) (शुक्र शोणितयोरवबन्ध स्फुरण च योने । सु शा ।) इस सम्बन्ध म यह स्मरण रखना चाहिए कि मासिकधर्म अन्य भी कई कारणो से बन्द हो सकता है जैसे पाण्डु (Anaemia) या वृद्धावस्था का आगमन (Menopause)। स्त्रियो म मासिकधर्म बन्द होने की स्वाभाविक आयु ४० से ५० वर्ष तक मानी जाती है। परन्तु ऐसे भी उदाहरण विद्यमान हैं जिनम ७७ वष की आयु तक मासिकधर्म होता रहता है और एमी भी स्त्रिया हैं जिनमे २३ वर्ष की आयु म ही यह बन्द हो गया है। बहुत बार सन्तान की तीव्र इच्छा से तथा कई बार अवाञ्छनीय गर्भस्थिति न हो गई हो इस डर से भी, मासिकधर्म बन्द हो जाता है, जिनके विषय म हम आगे विचार करगे।

कभी-कभी ऐसा भी देखा गया है कि गर्भस्थिति होने पर भी मासिक स्राव होता रहता है। विशेषत प्रथम ३ मास म जब कि अभी गर्भ के छोटा होने से गर्भाशय-मुख ठीक प्रकार से इसके द्वारा बन्द नही होता। किन्तु यदि इस अवधि के बाद भी रक्त आ जाता है तो निश्चित रूप से वह गर्भ के लिए घातक है। कभी-कभी हजारो म एक ऐसी स्त्री भी मिल सकती है जिसम जन्म से ही २ गर्भाशय हो, एक मे गर्भस्थिति हो जाए और दूसरे से मासिक स्राव होता रहे।

साधारणत ऐसा समझा जाता है कि स्त्री को यदि अभी मासिक धर्म होना प्रारम्भ न हुआ हो अर्थात् अभी वह किशोरी ही हो या वृद्धावस्था के कारण आर्तव बन्द हो चुका हो तो गर्भस्थिति नही होनीप, रन्तु ऐसे कई उदाहरण विद्यमान है जिनमे मासिक धर्म बन्द होने के १ वर्ष बाद भी गर्भस्थिति हो गई है या अभी मासिक धर्म होना प्रारम्भ नही हुआ और गर्भ आ गया है। ८ तथा ९ वर्ष की आयु म भी गर्भस्थिति होने की घटनाएँ मिलती है।

(२) **प्रात काल जी मिचलाना** (Morning sickness)—यह लक्षण प्राय सभी स्त्रियो को होता है जो कि दूसरे मास से प्रारम्भ होकर चौथे मास तक रहता है। गर्भिणी प्रात काल उठकर जैसे ही मुह-हाथ धोने लगती है उसका जी मिचलाने लगता है और कई बार वमन भी हो जाता है। अच्छी वस्तुओ की भी गन्ध मन को प्रिय नही लगती तथा मुह म पानी भर-भर आता है (अकामतश्छ- दयति गन्धादुद्विजते शुभात। प्रसेक सदन चापि गर्भिण्या लिङ्ग मुच्यते। सु शा।) प्राय यह अवस्था विशेष कष्टकर नही होती पर कइयो को बहुत तङ्ग करती है। कई बार जी मिचलाने के कारण खाना-पीना ठीक से न होने से रोगी की सी अवस्था हो जाती है और गर्भिणी बहुत निर्बल हो जाती है (क्षामता गरिमा कुक्षे- र्मूर्च्छाछर्दिररोचकम् (अष्टागहृदय।)।

(३) **स्तनो में परिवर्तन** (Changes in breasts)——स्तन बढने लगते है सख्त हो जाते है और चूचक के चारो ओर का मण्डल गहरे रग का श्यामता लिए हुए दीखने लगता है (स्तन मण्डलयो कार्ष्ण्यम्। चरक। स्तनयो कृष्णमुखता। सुश्रुत। स्तनौ पीनौ श्वेतान्तौ कृष्णचूचकौ। वाग्भट्ट।) गर्भावस्था के अन्तिम दिनो म स्तनो म दूध भी पैदा हो जाता है (स्तनयो स्तन्यम्।—चरक।) जिसे हम उन्ह दबा कर निकाल सकते है। स्तनो म गर्भस्थिति से उत्पन्न यह मण्डल (ariola) का कालापन कुछ-न-कुछ सारी आयु बना रहता है।

(४) **उदर में परिवर्तन** (Changes in abdomen)—३ मास के बाद से उदर स्पष्टत लगातार धीरे-धीरे बढने लगता है। चौथे मास से हम गर्भाशय को आसानी से उदर म अनुभव कर सकते है। पेट के बढने के अतिरिक्त पेट पर विशेष प्रकार की लकीरे पड जाती है जिन्हे कि क्विस (Striac gravidorum) कहते है। इसी प्रकार की लकीरे जाघो और स्तनो पर भी दिखाई देती है (उरुस्तनोदरे बलि विशेषा रेखा कारास्तत्काले प्रायो ये जायन्ते ते कि- क्किस सज्ञा। अरुणदत्त)। वास्तव मे ये पेट के अत्यधिक बढने के कारण त्वचा के तनने और ऊपरी त्वचा के नीचे के

लचकीले तन्तुओं के फटने से उत्पन्न होती है और गर्भावस्था के बाद भी हमेशा के लिए बनी रहती है।

(५) **गर्भस्पन्दन** (Quickening)—यह बच्चे के हिलने-डुलने से उत्पन्न होती है और माता को ऐसा लगता है जैसे पेट मे कोई फडफडा रहा हो। यह साधारणत ४½ मास बाद अनुभव होता है। (तस्मत्तदा प्रभृति गर्भ स्पन्दते। चरक–शा०)। इस समय तक क्योकि गर्भाशय काफी बडा हो जाता है और उदर की सामने की दीवार से आ टिकता है, अत उसम होने वाली कोई भी गति उदर की दीवार द्वारा माता को अनुभव होती है।

(६) **मूत्राशय क्षोभ्यता** (Irritability of the bladder)—गर्भावस्था के प्रारम्भिक दिनो म गर्भाशय के आगे झुकने से और गर्भावस्था के अन्तिम दिनो मे गर्भस्थ शिशु के नीचे उतर आने से मूत्राशय पर दबाव पडने से इसकी उत्तेजना हो मूत्र बार बार आता है।

(७) **विशेष इच्छाएँ** (Various reflex nervous symptoms)—गर्भावस्था म विचित्र विचित्र इच्छाएँ होती है। साधारणत गर्भिणी अधिक खट्टा खाना पसन्द करती है पर कभी-कभी ऊटपटाग वस्तुओ की भी इच्छा करती है (अम्ल कामता च विशेषेण श्रद्धाप्रणयन चोच्चावचेषु भावेषु।—च शा)। ऐसा माना जाता है कि स्त्रियो की इन इच्छाओ को अवश्य पूरा करना चाहिए नही तो बच्चे पर बुरा प्रभाव पडता है। (इन्द्रियार्थास्तु यान यान् सा भोक्तुमिच्छति गर्भिणी। गर्भबाधाभयाततास्तान भिषगाहृत्य दापयेत। सु शा)। कहा जाता है कि मगध के महाराजा बिवसार की पत्नी (अजातशत्रु की माता) जब गर्भवती हुई तो अपने स्वामी का रक्त पीने की बडी तीव्र अभिलाषा उत्पन्न हुई। महाराजा ने इस इच्छा की पूर्ति के लिए उसे अपने कन्धे से रक्त निकाल कर पीने को दिया। इसी तरह से हम रघुवश मे दिलीप को गर्भवती सुदक्षिणा की दौर्हृद इच्छाओ को जानने के लिए प्रश्न करते देखते है (स्पृहावती वस्तुषु केषु मागधी। रघु० ३-५)। वास्तव मे ये इच्छाएँ विकृत मन स्थिति (psychoneurosis) से उत्पन्न होती है।

सन्देहपोषक चिह्न (Probable signs)

ये लक्षण वास्तव मे चिकित्सक के स्वय अनुभव करने के होते है और वह जितना ही अधिक अनुभवी होगा उतना ही इसके सम्बन्ध मे ठीक बता सकेगा। ये निम्न लिखित है—

(१) **गर्भाशय के आकार में परिवर्तन** (Changes in size of uterus)—गर्भस्थिति होने के बाद गर्भाशय का आकार नियमपूर्वक बढ़ता है। प्रारम्भिक सप्ताहो मे यह कुछ नरम और लचकीला रहता है किन्तु बाद म तन जाता है। छठे से दसवे सप्ताह के बीच मे यदि हम गर्भाशय को दोनो हाथो के बीच दबाकर (एक हाथ की अगुलियो को पेट पर रखकर और दूसरे हाथ की २ अगुलियो को योनि मार्ग के ऊपर के भाग म रखकर) अनुभव करने की कोशिश करे तो गर्भाशय और उसकी ग्रीवा (Cervix) के बीच का भाग नरम और आसानी से दब जाने वाला अनुभव होगा जिसे हेगर की पहिचान (Hegar's sign) कहते है। इसका कारण गर्भाशय के ऊपरी भाग म स्त्रीबीज (Ovum) की स्थिति है जिससे इसका निचलाभाग खाली होने से स्पञ्ज की तरह लचकीला अनुभव होता है।

(२) **रह-रह कर गर्भाशय में सकोच की लहरो का पैदा होना**—इसे हम चौथे मास से गर्भाशय के सामने पेट पर हाथ रखकर अनुभव कर सकते है। जैसे ही लहर आती है गर्भाशय सकुचित हो कर कडा पड जाता है। ये हर १०-१५ के मिनट बाद उठती है। कई बार रक्तार्बुद और मासार्बुद (Haematoma & myomata of uterus) म भी इन प्रकार की लहर उनके एक भाग म अनुभव की जा सकती है।

(३) **योनिधमन** (Vaginal pulsation)—यदि योनि म अगुली प्रविष्ट करके अनुभव करने की कोशिश करे तो बढी हुई गर्भाशय धमनियो के कारण अगुलियो को धमन की अनुभूति होगी। दूसरे या तीसरे मास से हम इसे अनुभव कर सकते है। कई बार समीपस्थ शोथ आदि के कारण भी यह अनुभव होती है। आयुर्वेद-ग्रन्थो मे आया, गर्भस्थिति के समय अनुभव होने वाला 'योनिस्फुरण" शब्द (स्फुरण च याने। सु शा०) वास्तव मे इसका द्योतक नही है क्योकि वह माता के स्वय अनुभव करने की वस्तु है।

(४) **योनि में परिवर्तन** (Changes in Vagina)—रक्ताधिक्य के कारण योनि की दीवारे नीली-सी दिखाई देती है इसके अतिरिक्त यह शिथिल और चौडी-सी अनुभव होती है (योन्याश्चाटलत्वम्। च शा)।

(५) कन्दुकवत अनुभूति (Bollottement)—इसे अनुभव करन की २ विधिया ह—एक अन्त और दूसरी बाह्य (Internal & external bollottement)।

अन्त म मल-मत्र आदि स निवृत्त होन के बाद स्त्री को पीठ क बल इस तरह लिटा दत ह जिससे कि उसका सिर और कधा तकिए के सहार तनिक-सा ऊपर उठ रह। इसक बाद दो अगलियो को योनि म प्रविष्ट कर गर्भाशय ग्रीवा (Ce vix) के ऊपर क भाग म सामन की तरफ रखत ह और दूसरा हाथ पट के ऊपर से गर्भाशय पर रखत है। तदनन्तर स्त्री को एक गहरा सास लकर उसे रोकन को कहत ह और अ दर प्रविष्ट की हुई अगली से जिस पर गभस्थ शिशु का सिर टिका मालम दता है सहसा गर्भाशय को ऊपर को झटका दते ह जिससे बच्चा गर्भाशय म ऊपर उठकर पट पर कस कर रख हाथ से टकराता अनभव होता है और कुछ दर बाद फिर निचली अगलियो पर आ टिकता है।

बाह्य विधि म रोगी का पाश्व के बल लिटा कर हाथो को गभाशय क दोनो ओर रखकर उसी प्रकार झटका दत ह जिससे गर्भाशयजल (L quor amn) म तरता हुआ बच्चा गद की तरह कद कर हाथ से टकराता अनभव होता है। य परीक्षण हम चौथ से ७ व मास तक ही कर सकत ह।

(६) गर्भाशय फत्कार (Uter ne Souffle)—गभस्थिति के चौथ मास से यदि हम गर्भाशय क निचल भाग म पाश्व पर स्टथोस्कोप रख कर सुन तो माता की नाडी के धमन क साथ-साथ फ कार की-सी आवाज सुनाई दगी। इसका कारण गर्भाशय की दीवार म स्थित धमनियो की अभिवृद्धि है जो कि गर्भावस्था के समय गर्भाशय क पोषण क लिए हो जाती है। अनगर्भाशयाधमनी (Uter ne artery) की शाखाओ से जो कि तग होती ह रक्त जब गर्भाशय की दीवार की बडी-बडी रक्तवाहिनियो म आता है तो यह विशष प्रकार का शब्द उत्पन्न होता है। गर्भाशय के बड अबुदो म भी इस प्रकार की आवाज सुनी जा सकती है।

(७) गभस्थिति सूचक परीक्षण (Pregnancy Test)—१९२८ म एशहिम और जोण्डक न प्रसूता वस्था की निश्चित सूचना दनवाली एक विशष परीक्षाविधि (Aschheim Zondek test) निकाली। इसक लिए प्रसूता के प्रात काल क मत्र को लकर उसम १ बूद Xylol या Toluol मिला द और ३ सप्ताह से कम आय की चूही म इस थोडा-सा चचा के नीच सूचिवध द्वारा द। ३ दिन तक य इजक्शन द इजक्शन दन के ५ व दिन यदि हम इस चूही क गर्भाशय और बीजकोष (Ovar es) को निकाल कर दख तो उनम हम पर्याप्त परिवतन मिलगा। गर्भाशय शृग (U e ne ho ns) खब मोट दिखाई दग और बीज कोषो म रक्तस्राव के निशान मिलग जो कि अपरिपक्व बाज पटो (G aafian foll cl s) के परिवक्व होकर फटन से उत्पन्न होत ह और बाजपुट किण (Corpus lu un) के बनन के सूचक ह एसा माना जाता है कि गभ स्थिति हान पर भ्रूण के आवरण की कोपलो (Cl o on c l) से एक प्रकार का स्राव उत्पन्न होता है जो कि स्त्री के उत्पादक अगो का वद्धिकारक है और मत्र द्वारा बराबर बाहर निकलता रहता है यदि इस प्रकार मत्र का इजक्शन दन से चूही क उत्पादक अगो म कोई परिवतन न हो तो परीक्षा नकारात्मक (N ga e) समझी जाता है गभस्थिति क १५ व दिन यह परीक्षा की जा सकती है यदि पराक्षा जल्दी अभिप्रत है तो चूही क स्थान पर मादा खरगोश ली जाती है और उसक कान के किनारो क समाप इजक्शन दिया जाता है जिसे हम फ्रीडमन (F edn an) परीक्षा विधि (Test) कहत ह इसम ४८ घण्ट म ही उपयक्त परिवतन इस प्राणी के उत्पादक अगा म दख जा सकत ह इन प्राणिया क स्थान पर यदि हम एक विशष प्रकार क मढक (Xenopus Toad) म प्रसूता क मत्र का चचा क नीच इजक्शन द तो आठ घण्ट बाद ही इसका परीक्षण दृष्टिगोचर होन लगगा यदि स्त्री गभवती है तो प्राणी अण्ड उत्पन्न करन लगगा उपयक्त परीक्षा विधिया ६८।। प्रति शत ठीक परिणाम दती ह

सुनिश्चित चिह्न (Positive signs)

य चिह्न ४ ह—(१) बच्च के हृदय के शब्द का सुनाई दना (२) शिशु की गति का अनभव होना (३) शिशु के अगो का छकर अनभव करना और (४) शिशु का एक्सर म आना।

(१) बच्च क हृदय क शब्द का सुनाई दना—गभ स्थिति की यह सब से महत्त्वपूण निश्चयात्मक परीक्षा है

जो न केवल गर्भस्थिति को अपितु बच्चे की दशा को भी सूचित करती है। इसे हम गर्भस्थिति के ५ वे मास से सुन सकते है जो कि तकिए के नीचे रक्खी हुई घडी की टिक-टिक की तरह सुनाई देता है। यह शब्द १ मिनट मे १२० से १४० बार तक होता है। लडको मे साधारणत १३० से नीचे और गर्भस्थ शिशु के लडकी होने पर इससे अधिक। यदि यह शब्द १०० से नीचे और १६० से ऊपर हो तो बच्चे का जीवन खतरे म समझना चाहिए। ७ मास से ऊपर यह हर अवस्था म सुनाई पडना चाहिए किन्तु ऐसी भी घटनाएँ ज्ञात है जिनमे गर्भावस्था के साथ जलोदर होने के कारण इसे सुना नही जा सका।

शब्द सुनने के लिये प्रारम्भ म सब से अच्छा स्थान भग सन्धि ऊपर मध्य रेखा का है परन्तु बाद म गर्भस्थिति के अनुसार यह स्थान बदल जाता है। यदि हम माता के उदर के उन्नत भाग को एक खडी और एक पडी रेखा द्वारा समान ४ भागो म बाट द तो चारो भागो म से किसी एक के मध्य मे हम इस शब्द को सुन सकते है। साधारणत नाभी को ऊर्ध्वतन पुर कूट (Anterior superior iliac spine) से मिलाने वाली रेखा के बीच म इसे सुनना चाहिए चाहे दाई ओर और चाहे बाई ओर।

शब्द सुनते समय कई बार माता के हृदय के शब्द से इसका भ्रम हो जाता है, पर माता के हृदय का शब्द प्रति-मिनट ७२ के लगभग होगा जब कि बच्चे का १२० के लगभग। कई बार बच्चे के हृदय के शब्द के साथ हलकी फूत्कार की-सी आवाज (Funic souffle) आती है जो कि नाभिनाल के दब जाने या मुडने से, तङ्ग रास्ते म से रक्त के प्रवाहित होने के कारण उत्पन्न होती है। इसका होना बच्चे के लिए शुभ नही।

(२) **गर्भस्थ शिशु के अङ्गो की अनुभूति**—हाथ को हलका-सा गरम करके, बिना हडबडी के, सहज भाव से बच्चे को दोनो हाथो से अनुभव करने की कोशिश करे। ठण्डा हाथ लगने से माता के पेट की मासपेशियाँ सहसा सकुचित हो कर कडी हो जाती हैं जिससे बच्चे को अनुभव करना कठिन हो जाता है। पेट पर सहसा हाथ लगाने से भी ऐसा हो सकता है। अत रोगी की पूर्ण सहमति और जानकारी मे ऐसा करे। कई बार गर्भाशय अर्बुद भी बच्चे के अङ्गो का भ्रम पैदा कर सकता है।

(३) **गर्भस्थ शिशु की गति**—प्रारम्भ मे ये केवल माता को ही अनुभव होती है पर बाद मे पेट पर हाथ रखकर श्रवणयन्त्र (Stethescope) की सहायता से अनुभव की जा सकती है।

(४) **एक्सरे द्वारा निदान**—१५ वे १६ वे सप्ताह से एक्सरे द्वारा बच्चे की हड्डियो की छाया आने लगती है पर अधिक चर्बी वाली स्त्रियो म २० सप्ताह से पूर्व इसका आना कठिन है। २४ व सप्ताह या ६ ठे महीने से हम इसका फोटो खूब अच्छी तरह ले सकते है।

गर्भ-स्थितिभ्रामक अवस्थाएँ

निम्न अवस्थाएँ यह भ्रम उत्पन्न कर सकती है —

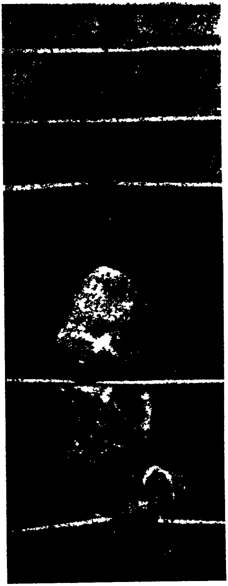
(१) झूठी गर्भस्थिति (Spurious pregnancy)
(२) नष्टार्तव (Amenorrhoea)
(३) वृद्धावस्थाजन्य नष्टार्तव (Menopause)
(४) गर्भाशय मासार्बुद (Myomata)
(५) बीज कोशजन्य जलार्बुद (Ovarian cyst)
(६) रक्तार्बुद (Haematometra or haemato colpos)
(७) जलोदर (Ascites)
(८) अधिक वसायुक्त उदर (Obese abdomen)
(९) जलग्रन्थि समूह (Hydatidiform mole)

(१) **झूठी गर्भस्थिति** (Spurious pregnancy or pseudo cyesis)—यह अवस्था तब उत्पन्न होती है जब बच्चे की अत्यधिक चाह हो पर बच्चा अभी तक कोई न हुआ हो। प्राय बडी आयु की स्त्रियो म बहुत दिनो तक बच्चा न होने पर और आर्तव बन्द होने की आयु समीप आते जान कर कई बार अचानक यह भ्रम होने लगता है कि पेट मे बच्चा आ गया। ऐसे समय मासिकधर्म सहसा रुक जाता है। प्रात काल जी मिचलाता मालूम होता है, पेट बढता-सा लगता है और स्तन बडे और सख्त होने लगते है। बहुत-से चिह्न जिन्हे स्त्री गर्भवती के लक्षण समझ कर ध्यान मे बैठाए रहती है, अनुभव होने लगते है। आतो में वायु से उत्पन्न होनेवाली गति को वह बच्चे का हाथ-पैर मारना (Quickening) समझने लगती है।

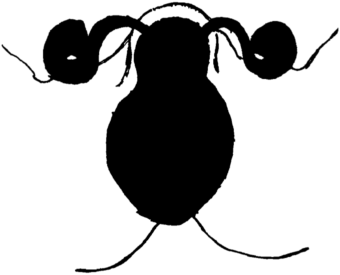
पेट मे बच्चा है कि नही यह जानने के लिए साधारणत' जो स्त्रिया ऐक्सरे के लिए आती हैं उनमे से अधिकाश इसी भ्रम से पीडित होती है। बहुत से केस जो कि इस श्रेणी म



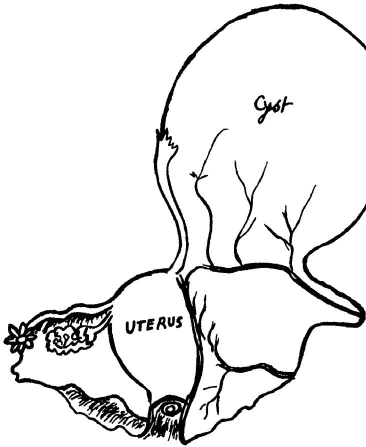
झूठी गर्भ स्थिति (Spurious pregnancy) वाली स्त्री की श्रोणि गुहा का चित्र। गुहा (Pelvic Cavity) में किसी प्रकार की गर्भ की छाया नहीं आई।



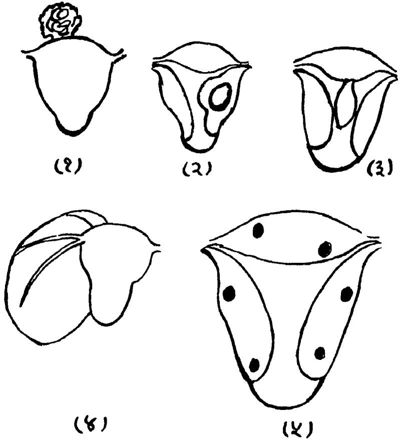
२, ३ तथा ५ मास के भ्रूण।



योनिद्वार के बन्द होने (Atresia) से उत्पन्न रक्तार्बुद। योनि गर्भाशय तथा बीजवाहिनियां रक्त से भरे हुए दिखाई दे रहे हैं।



बाँई ओर के बीजकोष (ovary) से उत्पन्न हुआ एक बड़ा बीजकोष जलार्बुद (Ovarian Cyst)। दाईं ओर का बीजकोष और बीजवाहिनी (Fallopian Tube) स्वाभाविक अवस्था में दिखाई देते हैं।



गर्भाशय मांसार्बुद (Myomata) के विभिन्न रूप।

(१) कलाध स्थित (Sub serous)

(२) सीमित (Intra mural)

(३) श्लैष्मिक कलाध स्थित (Sub mucous)

(४) पक्षबन्धिनी मांसार्बुद (Broad Ligament myoma)

(५) गर्भाशय की मांसपेशी में अर्बुद उत्पन्न होने के विभिन्न स्थान।

नही आते, ऐसे भी मिलेगे जिन्हे स्वय पता होता है कि वे गर्भवती नही है पर बहुत दिनो तक सन्तान न होने के कारण जब पति की विमुखता देखती है तो झूठमूठ कहने लगती है कि उन्हे गर्भस्थिति है। बहुत दिनो तक प्रतीक्षा करते करते जब पति तङ्ग हो जाता है तो परीक्षा के लिए उन्ह एक्सरे के निमित्त ले आता है। कुछ स्त्रिया ऐसी भी मिलती है जो कि व्यभिचार के कारण गर्भस्थिति से डरती है और अत्यधिक डर के कारण कई बार उन्हे ऐसा लगता है कि गर्भस्थिति हो गई है और सब चिन्ह गर्भावस्था के अनुभव होने लगते है जैसे मासिकधर्म बन्द होना, पेट बढना तथा स्तनो मे भारीपन तथा जी मिचलाना। उपर्युक्त स्त्रियो की यदि ठीक तरह परीक्षा की जाए तो निदान कठिन नही। ऐसे समय क्लोरोफार्म सुघाकर बेहोश कर ले और फिर परीक्षा कर। इससे गैस आदि से तना हुआ पेट पिचक जाता है और वास्तविक स्थिति स्पष्ट हो जाती है।

(२) **नष्टार्तव** (Amenorrhoea)—रक्ताल्पता (Anaemia) म कमजोरी के कारण मासिकधर्म बन्द हो जाता है। इसी प्रकार भय या अत्यधिक सन्तान की इच्छा से भी यह बद हो सकता है। ऐसी अवस्था मे गर्भाशय के आकार म वृद्धि आदि लक्षण नही होगे तथा हैगर का चिह्न (Hegar's sign) लुप्त होगा।

(३) **वृद्धावस्थाजन्य नष्टार्तव** (Menopause)—वृद्धावस्था समीप आने पर ४५ से ५० वर्ष की आयु मे कई बार सहसा रक्तस्राव बन्द हो जाता है तथा पेट पर चर्बी अधिक बढ जाने से जो कि इस आयु म कइयो मे स्वभावत बढ जाती है, गर्भस्थिति का भ्रम होने लगता है। परीक्षा करने पर गर्भाशय की वृद्धि नही मिलेगी।

(४) **गर्भाशय मासार्बुद** (Myomata)—यह प्राय ४० से ५० वर्ष की आयु मे पाया जाता है और २० वर्ष से कम आयु मे बहुत कम होता है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि ३५ वर्ष से ऊपर की आयु मे लगभग १५ प्रतिशत स्त्रियो को यह अर्बुद हो जाता है।

ये अर्बुद छोटी-छोटी गोलियो से लेकर ७० सेर तक के पाए गए है। ये गोलाकृति होते है और योजकधातु (Connective Tissue) के आवरण मे लिपटे रहते है जिससे कि आपरेशन के समय इन्हे निकालने मे आसानी रहती है। कई बार ये ४०-५० की सख्या मे पाए जाते है। सारे अर्बुद गर्भाशय की मासपेशी मे उत्पन्न होते है। यदि यह इसी मे रहता हुआ चारो ओर फैले तो सीमित (Intramural), उदर्यामिहाकला कोष (Paritoneal Cavity) की तरफ बढे तो कलाध स्थित (Sub serous or Sub peritoneal), पक्ष बन्धिनी की ओर जाए तो पक्ष बन्धिनी मासार्बुद (Broad ligament-myoma) और यदि यह गर्भाशय गुहा की ओर बढे और गर्भाशय की आन्तरिक कला (Endometriam) के नीचे स्थित हो तो श्लैष्मिक कलाध स्थित (Submucous) कहलाएगा। इन मे से सीमित ७३%, श्लैष्मिक कलाध स्थित १६.६% और औदर्याकलाध स्थित १०.४% होते है।

यह प्राय बाझ स्त्रियो को या जिन्हे १-२ बच्चो से अधिक बच्चे न हो उन्हे होता है। प्रोजेस्टरोन या टैस्टोस्टीरोन, (Progesterone and Testosterone) जो कि उत्पादक अगो से सम्बन्धित रस है, का इजेक्शन देने से इनकी वृद्धि रुक जाती है। इससे पता चलता है कि ये स्त्री के उत्पादक अगो से सम्बन्धित रसो के स्राव मे गडबडी होने से उत्पन्न होती है।

नया अर्बुद तो कुछ लचकीला होता है पर कडा होने पर यह काचवत् क्षीणता (Hyaline degeneration) के कारण कडा पड जाता है। पुराना होने पर इनके बीच के भाग मे विशेष प्रकार के परिवर्तन होने लगते है और कई बार तो स्वच्छ द्रव सा वहाँ पैदा हो जाता है (Cystic degeneration)। बडी आयु के अर्बुद मे उसके बाहर के भाग मे खट लवणो का प्रक्षेप होने से एक विशेष कडापन वहा उत्पन्न हो जाता है (Calcareous degeneration) जिसे हम एक्सरे मे देख सकते है। अर्बुद के रहते हुए ही यदि गर्भ-स्थिति हो जाय तो अर्बुद के भीतरी भाग मे विचित्र प्रकार का परिवर्तन हो जाता है जिसे हम आरक्तक्षीणता (Red degeneration) कहते है। यह इसकी शिराओ मे अवरोध (Thrombosis) के कारण उत्पन्न होता है। कई बार इसमे घातक अर्बुद जैसे परिवर्तन होने लगते है (Sarcomatous degeneration) जिससे अर्बुद शीघ्रता से बढेगा, रक्तस्राव के लक्षण होगे और रोगी शीघ्र ही क्षीण हो जाएगा। कभी-कभी अर्बुद का निचला भाग बल खा जाता है जिससे रुकावट होने से इसकी शिराए रक्त से भर जाती है और सहसा तीव्र पेट दर्द होता है। इसके लिए तत्काल आपरेशन करना चाहिए। कई बार अर्बुद के

ऊपर का आवरण फट जाने से यह औदर्य्याकला गुहा (Paritoneal Cavity) में आ गिरता है या पक्ष बन्धिनी (Broad ligament) में स्थित होता है। कभी-कभी इसके आवरण की शिराओ के सहसा फट जाने से आन्तरिक रक्तस्राव के लक्षण होने लगते है।

लक्षण—अर्बुद के लक्षण उसके स्थान के अनुसार हुआ करते है। सामान्यत ये निम्न प्रकार है—

(१) मासिक रक्तस्राव का समय तथा मात्रा दोनो बढ जाते हैं। प्राय यह दस-दस दिन तक होता रहता है। यह अवस्था मुख्यत श्लैष्मिक कलाघ स्थि (Submucous) अर्बुदो में होती है। इससे धीरे-धीरे पाण्डु (Anaemia) की अवस्था उत्पन्न हो जाती है।

(२) अर्बुद के कारण समीपस्थ रचनाओ पर दबाव (pressure) के लक्षण होते है। मूत्राशय पर दबाव पड़ने से मूत्र बार-बार आता है। गुदा पर दबाव पड़ने से मलबन्ध हो जाता है। अर्बुद के बहुत बढने पर मूत्र की रुकावट होने लगती है और तब शल्य क्रिया का सहारा लेना ही पडता है। ये लक्षण प्राय औदर्य्यकलाघ स्थित (Sub Serous) अर्बुदो के कारण होते हैं।

(३) दर्द की अनुभूति होती रहती है, विशेषत गर्भावस्था में अर्बुद में आरक्त क्षीणता (Red degeneration) होने पर।

(४) सक्रमण होने पर बदबूदार स्राव भी होता है।

(५) बाझपन हो जाता है क्योकि गर्भाशय गर्भस्थिति के योग्य नही रहता।

(६) उदर-वृद्धि के लक्षण दीखने लगते है। शनै-शनै पेट बढने से स्वभावत इस ओर ध्यान आकर्षित हो जाता है और गर्भस्थिति का भ्रम होने लगता है। छूने पर कोई गोल कडी वस्तु गर्भाशय के स्थान पर अनुभव होती है।

मांसार्बुद तथा गर्भस्थिति के सामान्य लक्षण—(१) दोनो ही धीरे-धीरे बढते है जिससे पेट के फूलने से आसानी से एक दूसरे में भेद करना कठिन हो जाता है।

(२) दोनो का स्थान एक ही होने से अनुभव (Palpation) द्वारा भी भेद करना कठिन हो जाता है।

(३) एक बडी आकृति के गर्भाशय अर्बुद मे गर्भयुक्त गर्भाशय की तरह फूत्कारध्वनि (Uterine Souffle) सुनी जा सकती है।

(४) अर्बुद के दबाव से शिराओ में रुकावट होने से गर्भावस्था की तरह ही योनि की दीवार का रग नीला-सा हो जाता है।

(५) कई बार अर्बुद के कारण स्तनो मे भी वैसे परिवर्तन होने लगते है जैसे परिवर्तन हम गर्भस्थिति के समय देखते है। वे बडे हो जाते है और यहाँ तक कि दबाकर उनसे स्राव भी निकाला जा सकता है।

गर्भस्थिति तथा मासार्बुद के भेदक लक्षण—(१) गर्भस्थिति में मासिक धर्म रुक जाता है, जब कि साधारणत इनमे मासिक स्राव होता रहता है और कई बार तो बहुत अधिक और काफी दिन तक।

(२) बडा मासार्बुद अनियमित आकृति का होता है जब कि गर्भयुक्त गर्भाशय गोल, एक जैसा अनुभव होता है।

(३) यदि एक हाथ पेट पर रखकर और दूसरे हाथ की २ अगुलिया योनि मे प्रविष्ट कर गर्भाशय को अनुभव करने की कोशिश करे तो मासार्बुद होने पर गर्भाशय और उसकी ग्रीवा के बीच का भाग स्पञ्ज जैसा अनुभव नही होगा (Hegar's sign negative) तथा अर्बुद गर्भाशय से अलग अनुभव होगा।

(४) भ्रूण (Foetus) के हृदय के शब्द मासार्बुद मे नही सुने जा सकते।

(५) गर्भद्योतक परीक्षा (Pregnancy test) नकारात्मक होगी।

(६) मासार्बुद मे स्तनो के बढने पर भी स्तनमण्डल (areola) नही बढेगा और काला भी नही पडेगा, जैसा कि गर्भस्थिति के समय होता है। स्तन मीचने पर यद्यपि मासार्बुद मे भी हम थोडा-सा स्राव इनसे निकाल सकते है पर वास्तविक दुग्धोत्पत्ति इनमे नही मिलेगी।

(५) बीजकोष जलार्बुद (Ovarian cyst)

बीज कोष (Ovary) से सम्बन्धित कई प्रकार के अर्बुद पाए जाते है जोकि सामान्य अर्बुद से लेकर घातक अर्बुद तक होते है। यहाँ हम इसके केवल एक ही अर्बुद का वर्णन करेगे जिससे गर्भस्थिति का भ्रम हो सकता है, इसे हम कृत्रिम श्लेष्मोत्पादक ग्रन्थि जलार्बुद (Cyst adenoma pseudo mucinogen) कहते है। बीज कोष से सम्बन्धित अर्बुदो मे में सब से अधिक यही पाया जाता है। इसके अन्दर एक पतला स्राव भरा रहता है जो कि साधारण

श्लेष्मा (Mucous) से मिलता-जुलता होता है और वास्तव मे उस का ही परिवर्तित रूप है। साधारणत जो अर्बुद आपरेशन से निकाले जाते है वे १२ इञ्च व्यास के होते है, वैसे २०० पौण्ड तक के जलार्बुद निकाले जा चुके है।

यह ३० से ६० वर्ष की आयु मे अधिक मिलता है और बाझ स्त्रियो मे अधिक होता है। शनै-शनै पेट बढने और हलकी खिचावट भरा दर्द के अतिरिक्त कोई विशेष लक्षण नही होते। मुख्य उपद्रव इसका मुड जाना है (Torsion or axialrotation) जिसमे अचानक ही तीव्र दर्द होकर रोगी को ठण्डे पसीने आने लगते हैं और दिल घुटने लगता है। जी मिचलाता है और वमन होता है। बाद मे तापमान बढ जाता और पेट तन जाता है।

गर्भोत्पत्ति से मिलते-जुलते लक्षण—(१) पेट ठीक उसी तरह बढा हुआ दीखता है जैसे गर्भवती का होता है।

(२) इसके दबाव के कारण मूत्राशय के उत्तेजित होने से बार-बार मूत्र आने और बाद मे मूत्रत्याग मे कठिनता के लक्षण उसी प्रकार के होते हैं जैसे गर्भावस्था के प्रारम्भिक-दिनो और बाद के दिनो मे होते है।

(३) पैरो मे कई बार थोडी बहुत शोथ (श्वयथु पादयो च शा) और रक्ताल्पता भी वैसी ही हो जाती है जैसी गर्भिणी को होती है।

(४) पेट मे क्रमश बृद्धि के लक्षण गर्भस्थिति के तुल्य ही होते है।

भेदक चिह्न—(१) गहरा साँस लेने पर प्राय उदर की त्वचा अर्बुद पर फिसलती-सी मालूम देती है। गर्भवती मे ऐसा नही होता।

(२) जलार्बुद मे मासिकधर्म सहसा बन्द नही होता।

(३) ठीक तरह से परीक्षा करने पर जलार्बुद के उदर मे एक ओर से उठने का इतिवृत्त होगा जब कि गर्भ-स्थिति मे यह बीचो-बीच उठता है।

(४) टकोरने से (Percussion) से अर्बुद मे द्रव की लहर उत्पन्न की जा सकती है।

(५) स्टैथस्कोप से सुनने पर गर्भस्थ शिशु के हृदय की आवाज जलार्बुद मे सुनाई नही देती।

(६) अर्बुद मे गर्भद्योतक परीक्षा (Pregnancy Test) नकारात्मक होगी।

(७) ऐक्सरे से परीक्षा करने पर जलार्बुद मे शिशु के चिह्न नही मिलेंगे। इस प्रकरण में यह स्मरण रखना चाहिए कि कई बार मासार्बुद और जलार्बुद के साथ ही साथ गर्भ-स्थिति होने से बडी परेशानी हो जाती है और जब तक इसके लिए बडे ध्यान से परीक्षा न की जाए इस अवस्था का पता चलना कठिन हो जाता है। रोग का इतिहास विशेष सहायक होगा।

(६) रक्तार्बुद (Haematometra of Haematocolpos)

गर्भाशय या योनि के रक्तार्बुद स्त्री उत्पादक अङ्गो के अपूर्ण निर्माण के परिणामस्वरूप उत्पन्न होते है। गर्भ के निर्माण के समय जिन मुल्लेरिअन प्रणालियो (Mullerian ducts) से गर्भाशय, गर्भाशय-ग्रीवा तथा योनि का निर्माण होता है, वे इसमे न्यूनाधिक छिद्रित होने से रह जाती हैं (Atresia)। योनि रक्तार्बुद में (Haematocolpos) मे अपत्य मार्ग यद्यपि ठीक होता है पर सतीच्छद मे स्वाभाविक छिद्र न होने से जब लडकी को मासिकधर्म होने लगता है तो उसे बाहर निकलने का रास्ता नही मिलता। परिणामत रक्त धीरे-धीरे योनि मे इकट्ठा होने लगता है और एक अर्बुद का-सा रूप धारण कर लेता है। लडकी को देर तक मासिक स्राव न होने तथा इस अर्बुद के कारण मूत्रत्याग मे कठिनता होने से इस ओर ध्यान जाता है। कई बार बडी आयु मे योनिव्रणो के ठीक हो जाने पर सौत्रिक तन्तुओ (Fibrous tissue) के निर्माण के कारण भी अपत्य-पथ बन्द हो जाता है और मासिकस्राव न होने से गर्भवती के-से लक्षण होने लगते है (न स्पन्दते नोदर मेति बृद्धि, भवन्ति लिङ्गानि च गर्भिणीनाम्। सु ३।) परन्तु इस में स्पन्दन आदि के लक्षण नही होते और न पेट ही वैसा बढता है। प्रसूतिकाल (Period of lactation) बीतने पर, जिससे किसी तरह का सन्देह न रह जाए (इस अवस्था में साधारणत वैसे भी मासिकधर्म नही होता) इसकी चिकित्सा करे। (त गर्भ कालातिगमे चिकित्स्य यसृग्भव गुल्म मुशन्ति तज्ज्ञा। सु ३।)

योनि रक्तार्बुद का निर्णायक रोग का इतिवृत्त है। यदि बचपन से सतीच्छद पूर्ण होने से मासिकधर्म के समय आनेवाला रक्त बाहर नही निकलता तो आयु बडी हो जाने पर भी मासिकधर्म न आने का इतिवृत्त होगा। योनि आगे को उभरी हुई और सतीच्छद नीला और तना हुआ दिखाई देगा। मूत्रत्याग मे कठिनता होगी। यदि इस रक्त के निकालने का समुचित प्रबन्ध न हो सके तो रक्त

गर्भाशय की ग्रीवा से होता हुआ गर्भाशय को भी फुला देता है जिसे हम गर्भाशय रक्तार्बुद (Haematometra) कहते हैं और यदि यह रक्त गर्भाशय से होता हुआ बीज-वाहिनियो (Uterine Tubes) को भी फुला दे तो बीज कोषो का रक्तार्बुद (Haemato solpinx) बन जाता है। कई बार गर्भाशय रक्तार्बुद स्वतन्त्र रूप से भी उत्पन्न हो सकता है यदि अपत्यमार्ग जन्म से या बाद मे किसी कारण से गर्भाशय के नीचे से बन्द हो।

गर्भस्थिति से इसका निदान आसान है। जन्म से ही योनिमार्ग या अपत्यमार्ग (Vaginal canal) बन्द होने पर मासिकधर्म के कभी भी न आने का इतिहास होगा। इसके साथ ही साथ प्रत्येक मास मे जब मासिकधर्म होता है पेट मे तेज दर्द उठने की बात लडकी बताएगी। गर्भस्थिति होने पर भी यद्यपि प्रारम्भ म मूत्राशय पर दबाव पडने के लक्षण इस मे मिलते है पर योनि रक्तार्बुद मे यह दबाव निरन्तर बढता जाता है और अन्त मे मूत्रत्याग करना अत्यधिक कठिन हो जाता है। परीक्षा करने पर सतीच्छद (Hymen) छिद्ररहित मिलेगा तथा अत्यधिक तना हुआ और बाहर को उभरा दीखेगा।

(७) जलोदर (Ascites)

इसमे सिवाय इसके कि पेट गर्भावस्था की तरह फूला होता है और कई बार कमजोरी के कारण मासिकधर्म बन्द होने के लक्षण भी मिल जाते है, और कोई बात गर्भिणी की नही होती। पेट को भी यदि हम ध्यान से देख तो जलोदर मे बह पार्श्वों की तरफ अधिक फूला होगा और बीच म कुछ दबा होगा जब कि गर्भस्थिति मे वह एक जैसा फूला दिखाई देगा। जलोदर मे यदि हम रोगी को करवट के बल लिटा दे तो जो भाग नीचे की तरफ रहेगा पानी उस ओर चला जाएगा और पेट के ऊपर की ओर का भाग हलका पड जाएगा जिसे हम टकोर करके देख सकते है, गर्भस्थिति म ऐसा नही होता। जलोदर मे टकोरने (percussion) से पानी की लहरे उठती मालूम देगी, (यथा दृति क्षुभ्यति कम्पते च शब्दायते चापि टकोदर तत्। माधवनिदान।) जब कि गर्भावस्था मे ऐसी कोई लहरे पैदा नही होगी। कभी-कभी जलोदर और गर्भावस्था दोनो ही साथ-साथ होते है, ऐसे समय मे भ्रम हो जाना स्वाभाविक है। पानी की छलक अनुभव होने पर भी एक्सरे द्वारा गर्भस्थ शिशु की छाया आने पर दोनो अवस्थाओ का होना समझना चाहिए।

(८) श्लेष्मोदर (Obese abdomen)

मासिकधर्म बन्द होने की आयु (Menopause) आने पर कई बार पेट म बहुत चर्बी इकट्ठी हो जाने से पेट गर्भावस्था की तरह भारी और आगे को बढा हुआ दीखता है (श्लेष्मोदरे उदर स्तिमित स्निग्ध शुक्लराजी तत महत्। माधवकार) और कई बार इसी समय मासिकधर्म बन्द हो जाने से तो और भी सन्देह बढ जाता है। यहाँ तक कि स्त्री स्वय भी भ्रम म पड सकती है। ध्यान से परीक्षा करने पर निदान आसान है। श्लेष्मोदर मे गर्भस्थ शिशु के हृदय के शब्द सुनाई नही दगे तथा एक्सरे म बच्चे के निशान नही आएगे।

जलग्रन्थि समूह (Hydatidiform mole)

यह अवस्था प्राय गर्भावस्था के ४ थे या ६ठे मास मे मिलती है जिसम गर्भपोषक आवरण के उभार क्षीण होकर धीरे-धीरे अगूरो जैसे उभारो मे परिवर्तित हो जाते है, जिन म द्रव भरा होता है। यदि यह परिवर्तन अपरा बनने से पूर्व हो तो प्राय सम्पूर्ण उभार (Chorionic villi) इस अवस्था से आक्रान्त हो जाते है और भ्रूण (Embryo) मर जाता है। अपरा (Placenta) बनने के बाद यह रोग होने पर प्राय इसका प्रभाव कुछ उभारो तक ही सीमित रहता है और भ्रूण को हानि नही पहुँचती।

भ्रूण के मर जाने की अवस्था म भ्रूण और नाभि-नाल धीरे-धीरे लुप्त हो जाते है और सारा गर्भाशय इन छोटे छोटे अगूर जैसे उभारो से भर जाता है जिससे छूने से गुदे हुए आटे की तरह सारा पेट मुलायम और उभरा हुआ मालूम देता है।

गर्भावस्था से भेदक लक्षण—(१) जलग्रन्थि समूह बनने पर गर्भाशय प्रसूता अवस्था की अपेक्षा अधिक तेजी से बढता है।

(२) गर्भावस्था मे मासिक स्राव नही होता जब कि इसमे अनियमित रक्तस्राव होता रहता है।

(३) इनमे गर्भाशय गुदे हुए आटे की तरह (Doughy) मालूम देता है जब कि गर्भ होने पर यह कडा अनुभव होगा।

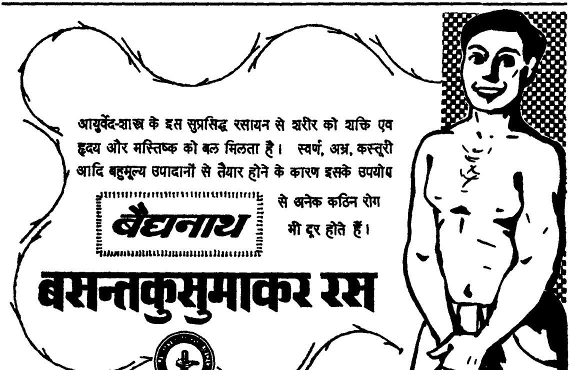
(४) इस म भ्रूण के हृदय के शब्द (foetal heart sounds) सुनाई नही देते।

(५) मूत्र की गर्भसूचक परीक्षा (Pregnancy Test) करने पर जलग्रन्थि अर्बुद की स्थिति मे, मूत्र अत्यधिक स्वीकारात्मक (Positive) सूचना देगा जबकि गर्भस्थिति होने पर वह साधारण रूप से ही स्वीकारात्मक होगा। इस अर्बुद के होने पर पोषक आवरण के उभार (Chorionic villi) इतना अधिक उत्पादक अग वृद्धिकारक पदार्थ पैदा करते है कि मूत्र को ५०० गुना जल म हलका करने पर परीक्षा स्वीकारात्मक आती है।

(६) इस रोग म योनि से आनेवाले स्राव मे यदि अगूर जैसी कोई वस्तु आए तो इसका पूर्ण निश्चय हो जाता है क्योकि यह वस्तु भ्रूण-पोषक आवरण के उभार का ही परिवर्तित (Hydatidiform) रूप है जो कि पानी से भर जाने के कारण अगूर जैसा दीखता है। गर्भावस्था मे ऐसा कभी नही होता।

(७) इस रोग मे शरीर मे विष सचार (Toxaemia) के लक्षण मिलेंगे।

(८) ऐक्सरे से फोटो लेने पर इस रोग मे भ्रूण की छाया नही आएगी (यदि वह मर कर लुप्त (Absorb) हो गया है)। अन्त मे इस सम्बन्ध मे यह लिख देना उचित होगा कि कई बार जल्दी मे निर्णय करने पर कुशल से कुशल चिकित्सक धोखा खा सकता है, अत इस सम्बन्ध मे निर्णय देते हुए कभी शीघ्रता से काम न ल। गर्भस्थिति है या नही इसे जानने के लिए यदि २-४ मास प्रतीक्षा भी करनी पडे तो कोई हानि नही। इसीलिए रक्तगुल्म की चिकित्सा के विषय म लिखते हुए माधवकार ने १० मास तक (जब तक कि गर्भोत्पत्ति की सभावना है) प्रतीक्षा करने के लिए कहा है। (मासे व्यतीते दशमे चिकित्स्य)। प्रतीक्षा के अतिरिक्त हरेक रोग निदानकारक उपाय जैसे एक्सरे, गर्भसूचक परीक्षा (Pregnancy test) आदि का सहारा ले और अन्त मे पूर्ण निश्चय होने पर ही कोई सम्मति दे।



भारत में चिकित्सा-व्यवसाय के नैतिक-पतन पर कुछ मननीय विचार-२

मूल लेखक—डॉक्टर सुमन्त मेहता

अनुवादक—श्री शंकरदेव विद्यालंकार

अब लीजिए दूसरी बात। बड़े-बड़े शहरो के विशेषज्ञ डाक्टर अपनी एक मण्डली बना कर एक ही मकान म अपने कार्यालय—चिकित्सागृह—स्थापित करते है। इस मडली म एक चिकित्सक डाक्टर होता है, एक सर्जन होता है, एक एक्स-रे विशेषज्ञ होता है और कभी-कभी दन्त विशेषज्ञ, नासिका विशेषज्ञ और कण्ठरोग विशेषज्ञ भी होता है। माथा खूब दुख रहा हो और रोगी चिकित्सक के पास जाय और चिकित्सक को ऐसा प्रतीत हो कि आँत के रोग के कारण माथा दुखता है तो वहाँ पर शीघ्र आंत के विशेषज्ञ को बताया जा सकता है और रोगी को भी सुविधा प्रतीत होती है। इस प्रकार ये विशेषज्ञ डाक्टर मण्डली बनाकर एक दूसरे को काम दिलवाते है। इन लोगो की फीस भी विशेष होती है। डाक्टर नारायणराव जैसे सहृदय व्यक्ति ने भी इन लोगो के लिए "लुटेरो की टोली" शब्द प्रयुक्त किया है। पेशाब की परीक्षा के लिए ८०) रुपये लिये जाय तो समझ लेना चाहिए कि रोगी उलटे उस्तरे से ही मूड लिया गया है। इसी प्रकार रक्त की परीक्षा या पेट के रस की परीक्षा के लिए बहुत ऊँची फीस ली जाती है। मेरे जानने म आया है कि छाती के रोग से पीडित एक रोगी को अनेक विशेषज्ञो से अपनी परीक्षा करवाने के लिए ८००) आठ सौ रुपये देने पडे थे। मुझे स्वय तो अमुक एक ही रोग के विशेषज्ञो पर विशेष श्रद्धा नही है। ऐसे विशेषज्ञ उस रोग की दृष्टि से ही जहाँ-तहाँ परीक्षा करते है। ठीक निदान के लिए यह रीति उचित नही।

× × × ×

तीसरा प्रश्न प्रमाणित औषधियाँ देने के स्थान पर इजेक्शन देने का तथा चौथा प्रश्न विदेशी तथा स्वदेशी (बहुत कम) अतिशय मेंहगी दवाइयाँ देने का है। इन दोनो प्रश्नो पर साथ-साथ ही विचार करना ठीक होगा।

ऊपर बताया जा चुका है कि देश की चिकित्स-ा परिषदे (मेडिकल कौन्सिल) एक प्रमाणभूत फार्माकोपिया तैयार कराती है। समयानुसार उसमे सशोधन-परिवर्धन, होते रहते है। ग्रेट ब्रिटेन और भारतवर्ष मे ब्रिटिश फार्माकोपिया प्रामाणिक माना जाता है। इस विशाल पोथी म पूरे विवरण के साथ यह बताया गया है कि डाक्टरो को सामान्यतया किन-किन दवाओ के कौन-कौन से निर्माण (Preparation) तैयार करने चाहिएँ। उसमे यह भी बताया हुआ है कि किस दवा को किस मात्रा मे देना सुखावह और गुणकारक होगा।

आजकल तो पेटेन्ट दवाओ की एक आँधी-सी आ गई है। यह आधी व्यापारिक दृष्टि का ही परिणाम है। इन पेटट दवाओ से पहले सभी रोगो को अनेक प्रकार के मिश्रणो, गोलियो, चूर्णो, मुरब्बो और मरहम आदि से ही ठीक करने का प्रयत्न किया जाता था। रोग को दूर करने के लिए पेटेन्ट दवाइयाँ फार्माकोपिया की दवाओ से अधिक लाभकारक तो है ही नही। हाँ, इतना जरूर है कि उन्हे घर मे सरलता से रक्खा जा सकता है या उन्हे आसानी से निगला जा सकता है। विरेचन के लिए हम एरण्ड तैल या स्वर्णमुखी के माध्यम से जो दवा या गोलियाँ तैयार करते है उसके लिए तीन चार आने का खर्च होता है। उनके स्थान पर पेटेन्ट दवा का खर्च चार-पाँच गुना अधिक होता है। हृदयरोग के लिए हजार—दो हजार वर्ष से सर्पगन्धा का प्रयोग होता आया है। उसकी कीमत दो-तीन आना होगी। अब उस की गोलियाँ (भगवान् ही जाने वह कितनी सफल होती है) रुपयो की कीमत मे बिकती है। ऊँझा (उत्तर गुजरात) मे मैने ईसबगोल के ढेर के ढेर देखे है। उसकी कीमत बहुत कम होती है। इसी औषधि को अमेरिकन और यूरोपियन कपनियाँ बहुत ऊँची कीमत से बेचती है। इस प्रकार के सैकडो दृष्टान्त दिये जा सकते हैं।

× × × ×

इस लख द्वारा मै दो बातो की ओर पाठको का ध्यान आकृष्ट किया चाहता हूँ।

(१) सामान्य रोग (अस्वस्थता अगरजी भाषा म Disease—आराम का अभाव) के लिए औषधि की आवश्यकता ही नही होती। इस प्रकार क रोग व्यायाम उपवास और अल्पाहार स अच्छ हो जात है। जुकाम की कोई दवा नही होती। दवा पीन या सघन से कोई लाभ नही होता। दो दिन आराम करन थोडा खान या उपवास से जुकाम जल्दी अच्छा हो जाता है। अनक स्पर्शजन्य रोग भी ओषधि स नही मिटत। हा जिन रोगो म ओषधि की आवश्यकता होती है उन के प्रति दुलक्ष नही करना चाहिए।

(२) दूसरी बात यह है कि हमलोग सामान्य रोगो के लिए उपयोग म आनवाली घरगथ्थ दवाइयो का ज्ञान सवथा भूल गय है। म यरोप म शिक्षित हुआ था और बड-बड चिकित्सालयो का डाक्टर रहा हूँ तथापि सामान्य बीमार होन पर दवा नही लता था। मरी बआ जी अपन घरेलू नुस्खो द्वारा मरी व्यथा दूर कर दती थी। आज आप किसी भी शिक्षित परिवार म जाइए वहा पर आपको एक छोटा-सा दवाखाना दिखाई पडगा। अधिक नही तो ३० ४० शीशिया घर म अवश्य होगी। उनम भी अधिकतर ओषधिया विदशी और व भी महगी। इस विषय का विशष विवचन करन की आवश्यकता नही है।

आज स करीब साठ वष पहल मर एक अध्यापक न मझ से एक वाक्य कहा था—उस मै कदापि भूल नही सकगा। उन्होन कहा था— ध्यान रखना प्रत्यक ओषधि चाह वह कितनी भी निर्दोष क्यो न हो जहर समान है। आग जाकर उन्होन कहा पट म डाली हुई प्रत्यक वस्तु जहरीली बन सकती है। इस पर एक विनोदशील छात्र न प्रश्न किया— हमार प्रतिदिन के आहार क लिए भी क्या यह बात लागू होती है? उन्होन कहा मै पहल ही सोच रहा था कि तुम यह प्रश्न करोग। आहार भी जहर बन सकता है। मनुष्यजाति के अधिकतर रोग पट और आतो क विकार से पैदा होत है। और वे भी अधिक आहार या अयोग्य आहार से ही उत्पन्न होत है। यह सूत्र जीवन भर मुझ बडा उपयोगी सिद्ध हुआ है।

गाधी जी न आरोग्य क विषय म पर्याप्त लिखा है। आरोग्य पर एक-दो पुस्तिकाएँ भी उन्होन लिखी है। व प्रत्यक भारतीय को पढनी चाहिएँ। उन्होन एक बात पर विशष बल देत हुए कहा है कि सामान्य रोगो को दवाओ से ठीक करक डाक्टरो न समाज का अहित किया है। दखिए एक मनष्य अधिक भोजन करक अथवा दुष्पच आहार लकर अस्वस्थ हो जाता है। डाक्टर ओषधि दकर उसका कष्ट दूर करता है। ठीक पद्धति तो यह है कि उसको उपवास करना चाहिए या भविष्य म उस प्रकार की वस्तुओ का सवन नही करना चाहिए। यह सीधीसादी बात उसकी समझ म नही आती। इस प्रकार के अविचारी व्यवहार क अनक अदभत उदाहरण मन स्वय दख है। एक घटना सुनिए। एक मधमह का रोगी था। उसको चावल और चीनी खान का निषध किया गया था। एक दिन उसन खूब दूधपाक (खीर) उडाया। मन पूछा—एसा क्यो किया? वह कहन लगा—घर पर जान पर डाक्टर मुझ इन्स्यलीन का इजक्शन दगा। ओषधियो क दुरूपयोग का इसस खराब और क्या उदाहरण हो सकता है।

बहुत-सी दवाए लिख कर दन का पागलपन भी आजकल बहुत चलता है। अपन कुटम्ब का ही एक बढिया दष्टान्त दता हू। एक व्यक्ति को घटनो म सधिवात का कष्ट था। घटन मोडत हुए उसे बहुत कष्ट होता था। वह एक विशषज्ञ डाक्टर क पास गया। अच्छी तरह परीक्षा करक डाक्टर न उसको निम्नलिखित दवाए सेवन करन का पुर्जा लिख दिया—दिन म तीन बार सेवन करन के लिए एक तरल (प्रवाही) दवा बड सबर खान की एक गोली रात को खान का एक चण तथा दूध क इजक्शन। यह नस्खा लकर रोगी महाशय मर पास आए। मुझ यह सब कुछ अटपटपना-सा प्रतीत हुआ। परन्तु मै यह नही चाहता था कि रोगी क मन म अश्रद्धा पैदा हो जाय। मैन रोगी से कहा— ठीक है इन औषधियो को तो लत ही रहना पर साथ ही तीन दिन अमुक क्षार प्रात काल गरम पानी क साथ लन का प्रयोग भी करो तो ठीक रहगा। रोगी महाशय न मरी सलाह का पालन किया और व अच्छ हो गए। यह उस क्षार का ही प्रभाव था। यदि य भाई मरी सलाह न मानत तो कठिनाई म आ पडत। खर्चा भी खूब करना पडता।

एक महिला ने बबई के एक बहुत विख्यात डाक्टर का नुस्खा मुझे दिखाया। उसे देख कर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। प्रतिदिन दवा परिवर्तित की गयी हो, ऐसा प्रतीत हुआ। नुस्खे मे एक-दो से लेकर नौ तक आकडे लिखे हुए थे। मैंने पूछा डाक्टर ने दवा प्रति-दिन के लिए क्यो बदल कर लिखी है। महिला ने कहा, ये नौ की नौ वस्तुएँ मुझे प्रतिदिन सेवन करनी है। यह सुन कर मेरे आश्चर्य का ठिकाना नही रहा। मैंने पूछा, इस एक दिन की दवा के लिए आपको क्या कीमत देनी पडी है? महिला ने जवाब दिया—एक सौ पैंतीस रुपये। यह घटना अक्षरश सत्य है।

अगली बात यह है कि हम डाक्टर लोग पेटेन्ट दवाएँ बनाने वाली कपनियो के दलाल बन गए है। परदेशी फार्मेसियाँ आकर्षक दवाएँ बनाती है और उनके लिए डाक्टरो के प्रमाणपत्र भी प्राप्त कर लेती है। रसायनशालाओ मे परीक्षण भी करवाती है। कुछ सफल परीक्षणो के परिणामो को चिकित्साशास्त्र के सामयिक पत्रो मे छपवाती भी है। तथापि इन विज्ञापित दवाओ के अवगुण क्या है? वे किस प्रकृति के मनुष्यो को अनुकूल पडती है या प्रतिकूल? रोग एक के स्थान पर अनेक हो तो किन परि-स्थितियो मे कौन दवा नही खानी चाहिए,—इत्यादि बातो की ठीक-ठीक खोज किये बिना दवाएँ प्रयोग मे लाई जाती है।

फार्मेसियाँ डाक्टरो को मूल्यवान् उपहार भेजती है। अपनी कम्पनी के नामवाले नुस्खा-पैड, डायरियाँ और मुफ्त मे दवाएँ भी भेजती है।

मेरे एक आत्मीय जन को बहुत दिनो से ज्वर आ रहा था। अच्छे अच्छे डाक्टरो ने उन की परीक्षा करके कहा—मलेरिया नही है टाइफाईड नही है, क्षय नही है, अन्य कुछ भी नही है, परन्तु क्या है यह वे नही बता पाये। अन्त मे डाक्टर ने उक्त रोगी को रिलेप्सिग फीवर (चूहे काटने से होने वाला ज्वर) के लिए, माल्टा फीवर के लिए, दो प्रकार के टाइफस् के लिए तथा अन्य अनेक प्रकार की शिकायतो के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार की मँहगी-मँहगी और जहरीली दवाइयाँ देना प्रारम्भ किया। उन दिनो भारतवर्ष मे पेनिसिलीन की एक बूंद तक नही थी, किसी डाक्टर को उसका अनुभव तक नही था—ऐसे समय मे तार द्वारा पेनिसिलीन मँगाने की सलाह दी। कहने की आवश्यकता नही कि मुझे उस डाक्टर को बदल देना पडा। पेनिसिलीन के अत्य-धिक प्रयोग के विषय मे प्रमाणभूत चिकित्सा विषयक पत्र-पत्रिकाओ ने लोगो को सावधान किया है।

किसी मनुष्य का शरीर किसी मामूली बीमारी से बिगड गया हो और उसके कारण ज्वर आया हो तो मामूली दाम पर क्विनाईन दी जाती थी। वह अनावश्यक और हानिकारक थी। अब तो इजेक्शन का फैशन बढ गया है। अत डाक्टर लोग इजेक्शन देकर अच्छी कमाई करने लगे है। आजकल थोडी-थोडी बात के लिए अकारण ही पेनिसिलीन का प्रयोग किया जा रहा है। इन दिनो क्षय-रोग की रोकथाम के लिए लाखो की सख्या मे बी० सी० जी० का व्यवहार किया जा रहा है। इस चर्चास्पद विषय पर बहुत कुछ लिखा जा सकता है।

डाक्टर लोग पेटेन्ट औषध-निर्माताओ के दलाल बन गए है या नही, इस बात का उत्तर जानना सरल है। फार्मा-कोपिया द्वारा प्रमाणित औषधियो के अतिरिक्त पेटेन्ट दवाएँ किस अधिक प्रमाण मे व्यवहार मे आ रही है, इस के द्वारा ही यह स्पष्ट हो जायगा।

फार्मेसीवाले अपनी पेटेन्ट दवाओ का रामबाण कहकर बखान करते है। किन्तु उनकी सचाई पर लोगो को सदेह रहता है। विज्ञापन के अनुसार उन दवाओ का प्रभाव होता है या नही यह भी शकास्पद है। ये दवाइयाँ अति-शय मँहगी होती है। कुछ मनुष्यो को हानि पहुँचाने के बाद ही इन दवाइयो के अवगुण प्रकाश मे आते है।

अन्तिम बात यह है कि डाक्टर अतिशय लोभी हो गये है। इस विषय मे एक अदभुत और सच्चा उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ।

मेरे एक युवक मित्र अनेक वर्षों तक सरकारी तथा गैरसरकारी पदो पर कार्य कर चुके है। उनको छोटी रसौली निकल आई थी। वह बहुत कोमल और निर्दोष थी। इस बात की कोई सभावना नही थी कि उससे कैंसर हो सकता है। मैंने उनको परामर्श दिया कि अनुकूलता-नुसार इसे कटवा देना। क्योकि यह सामान्य ऑपरेशन से ठीक हो जायगी। घाव भी थोडे समय मे भर जायगा। प्रसगवशात् उन्हे बबई जाना पडा। उनके एक मित्र उनको एक प्रसिद्ध सर्जन के पास ले गये। मेरे मित्र की आर्थिक स्थिति सामान्य मध्यम श्रेणी के लोगो जैसी थी। अच्छी नौकरी प्राप्त होने पर भी देशसेवा के लिए उन्होने सब कुछ छोड दिया था। डाक्टर ने मेरे मित्र को खूब डराया

कि इस गाँठ से केसर हो जायगा, अत उसे शीघ्र ही कटवा लो। रोगी महाशय ने कहा—"मैने तो ऑपरेशन की बात किसी से कही भी नही है।" डाक्टर ने कहा—"दूसरो को कहने की आवश्यकता भी क्या है?" मेरे मित्र को डाक्टर का आग्रह कुछ विचित्र अनुभव हुआ। अत उन्होने कहा—जिनके साथ मैं काम करता हूँ उनकी सलाह लेना आवश्यक है। इस पर डाक्टर ने उनका नाम पूछ कर कहा—ओहो, उनको तो मै पहचानता हूँ। उनको अभी फोन करके सूचित कर देता हूँ कि आपको शीघ्र ही ऑपरेशन कराना पडेगा। परन्तु मेरे मित्र ने इन्कार किया और वहाँ से छटक आये। जिस छोटे से ऑपरेशन के लिए चालीस रुपये देने होते है, उसके लिए डाक्टर मेरे मित्र से २००-३०० रुपये एठना चाहता था। यह भी सच्ची घटना है।

मेरे एक डाक्टर मित्र ने एक्स-रे का यत्र खरीदा। उनके पास एक बीमार आया। डाक्टर ने कहा—आपका एक्स-रे फोटो लेना पडेगा। रोगी अच्छा पढा-लिखा था। उसने कहा—डॉक्टर महाशय, इस रोग के लिए एक्स-रे फोटो की क्या आवश्यकता है? इस पर डॉक्टर महाशय बोले—"आपको यदि मुझ मे श्रद्धा न हो तो आप दूसरे डाक्टर के पास चले जाँय।" रोगी ने कहा—"अपने रोग के विषय मे मुझे आपके परामर्श की आवश्यकता है।" डाक्टर महाशय अपने आग्रह पर कायम रहे और एक्स-रे फोटो लिया गया। बात पता लगने पर मुझे प्रतीत हुआ कि फोटो लेने की सर्वथा आवश्यकता नही थी।

मेरे एक अन्य डाक्टर मित्र कहने लगे—यदि हम फोटो न उतारे तो हमारा प्रभाव नही पडता। इसके सिवाय एक्स-रे यत्र खरीदने का दाम तो हम वसूल करना ही चाहिए न? एक दूसरे डाक्टर मित्र ने अपनी फीस बहुत अधिक रखी थी। मैंने कहा—आप इतनी अधिक फीस रखते है, यह ठीक नही। वे कहने लगे—मैने ऋण लेकर विद्याभ्यास किया है, उसका क्या होगा? मैने कहा—महाशय, आपने डेढ लाख रुपये का तो मकान बना लिया है, आपके ऋण के रुपये तो कभी के वसूल हो चुके होगे। इस पर बात समाप्त हो गई।

प्रसूति की विकृति के समय अनेक डॉक्टर बहुत बडी फीस माँगते है। यह बात अनेक बार देखी गई है। बीमा विषयक एक बात मै ऊपर लिख चुका हूँ। यदि डाक्टर लोग बीमा-एजेन्ट की इच्छानुसार न लिखे तो उनको केस नही मिल पाते। एक बार मुझे एक केस दूसरे गाँव म जाकर देखना पडा। दुर्भाग्य से मै बीमा लेने वाले को जानता था। यह स्वय डाक्टर था। मुझे यह बात ज्ञात थी कि उनकी माता, एक भाई और एक बहन युवावस्था मे क्षयरोग से मर चुके थे। मैंने डाक्टर और बीमा-एजेन्ट को स्पष्ट कह दिया—इस केस को मै कैसे पास करूँ? मैने इन्कार कर दिया। वह दूसरी कपनी मे, दूसरे डाक्टर के पास जाकर बीमा करवा लाया। कहने की आवश्यकता नही है कि वह सात महीने मे ही मर गया। डाक्टरो की नैतिक अधोगति के ये स्पष्ट प्रमाण है।

इस प्रकार सैकडो उदाहरण प्रस्तुत किये जा सकते है। यह बात तो सर्वविदित है कि रोगी होने पर छुट्टी के प्रमाण-पत्र हजारो की सख्या मे दिये जाते है। बहुत-से डाक्टर अपने रोगियो को खुश करने के लिए रोग-परीक्षा (निदान) की बाते भी रोगियो को बता देते है। ऐसी चर्चा करना डाक्टरो के लिए उचित नही है। इसके सिवाय आजकल के डाक्टर रोगी को यह भी बता देते है कि वे कौन सी दवा दे रहे है और वह कैसी है। पहले ऐसा कभी नही होता था। रोगी को आश्वासन अवश्य देना चाहिए, परन्तु उनके साथ निदान और चिकित्सा की चर्चा नही करनी चाहिए। इसका दुष्परिणाम यह हुआ है कि रोगीजन वहमी बन गए है। इसीलिए डॉक्टर नारायणराव ने कहा है कि हम डाक्टर लोगो ने रोगियो को डरपोक (हाइपोकोड्रियाक) बना दिया है। इस अधीरता के कारण अब तो दशा यहाँ तक आ गई है कि रोगी लोग स्वमेव इजेक्शन मागते है और न देने पर अप्रसन्न हो जाते है।

पिछले दिनो अखबार मे छपा था कि अमेरिका मे करोडो मनुष्य करोडो रुपयो की ऐसी दवाएँ (गोलियाँ) व्यवहार मे लाते है जो मस्तिष्क के ज्ञानतन्तुओ को प्रसुप्त (सज्ञाशून्य) कर देती है। दवाओ के कारखाने चलाने-वालो के विज्ञापनो का ही यह प्रभाव है।

साधारणतया डाक्टरो को प्रगतिशील और अन्वेषण-परायण होना चाहिए। पर क्या डाक्टर लोग प्रगतिशील है? प्रत्येक डाक्टर स्वीकार करेगा कि बाष्पस्नान से रक्तवाहिनियाँ फूलती है। पसीने से शरीर का आतरिक और बाहर का मैल निकल जाता है तथापि इस उपाय

की डाक्टर लोग व्यवहार म नही लाते। इससे स्पष्ट हो जाता है कि चिकित्सकवर्ग अनुदार मानसवाला है।

पचास वर्ष पूर्व मैंने वाष्पस्नान की एक कीमती पेटी बड़ोदा के चिकित्सालय को भेट म दी थी। वह या तो टूट-फूट गई होगी या कूडे-कचरे म बिक गई होगी। इसी प्रकार डाक्टर लोग मालिश का भी कम प्रयोग करते है। छोटे बच्चो को रोगो म डाक्टरी दवाएँ ठीक प्रकार कारगर नही होती। मनुष्य के मानसिक रोगो के विषय म डॉक्टरो का ज्ञान अभी प्राथमिक दशा म है। पथ्यापथ्य और आहार के सपूर्ण विषय म डॉक्टरो का ज्ञान कम होता है। जितना ज्ञान होता है उसका भी उचित उपयोग वे नही करते।

गुजरात म गरम पानी के अनेक प्राकृतिक झरने विद्यमान है। छत्तीस करोड की जनसख्या म से छ डाक्टरो ने भी इन झरनो के पानी द्वारा चिकित्सा का अध्ययन नही किया होगा। उन का ज्ञान और मानस इतना दरिद्र है। प्रकृति से ही अमुक मनुष्य का शरीर शीतल या गरम होता है—इस बात को पाश्चात्य पद्धति के डाक्टर नही जानते। कदाचित वे लोग यह समझते होगे कि प्रकृति विषयक वह बात ही ठीक नही। तथापि वह बात वस्तुत सत्य है।

अन्त म मुझे स्पष्टतया कहना चाहिए कि मेरी यह मान्यता नही है कि भारतीय डाक्टर अन्य भारतीयो की अपेक्षा या अन्य व्यवसायियो की अपेक्षा अधिक खराब हैं या उनकी नैतिक भावना हीन कक्षा की है। डाक्टर अच्छे होते हैं कुछ बहुत अच्छे होते है वे दयालु और सेवाभावी भी होते हैं समाज के लिए उपयोगी होने की भावना भी उनम होती है। दूसरी ओर लोभी और दुष्ट डाक्टर भी पाये जाते है। हम साथ ही यह भी देखना चाहिए कि इम युग के वकील कैसे हैं? व्यापारी कैसे है? इञ्जीनियर और ठेकेदार कैसे हैं? दालचीनी, लवग और इलायची का सार निकाल लेने वाले व्यापारी कैसे होते है? दूधवाले, अनाज वाले, घी वाले, अध्यापक और प्राइवेट स्कूल चलानेवाले, व्यापारी, मिलवाले, छोटे-मोटे अमलदार ये सभी भारत-पु कैसे होते है? अच्छे बहुत कम और अप्रामाणिक अधिक! यदि ऐसा है तो फिर अकेले डॉक्टरो का ही दोष क्यो निकाला जाय? यह सब कुछ होते हुए भी मेरे मन म एक भावना अवश्य है। यदि कोई परिचारिका (नर्स) सचाई से परिचर्या न करे, या कोई डॉक्टर धनवानो के प्रति अधिक ध्यान दे और गरीबो के प्रति दुर्लक्ष करे तो मेरी सम्मति मे वह राक्षस है।

यदि कोई धधा सबसे खराब है तो वह है खोटी दवाइयाँ बेचने का। क्विनाइन जैसी औषधि के बदले यदि कोई सारहीन और प्रभावशून्य बनावटी दवा बेचता है तो वह कठोर से कठोर दण्ड का पात्र माना जाना चाहिए। चिकित्सालयो म सामान्य वार्ड (नि शुल्क विभाग) मे रखे जाने वाले रोगियो के प्रति उचित ध्यान न देना महान् अपराध है। तथापि इस अपराध की बात चहुँओर खूब सुनाई देती है।

यदि चिकित्सा विषयक सभी सस्थाएँ इन प्रश्नो के सत्यासत्य पर चर्चा करगी तो समाज पर तथा डॉक्टरो पर उसका प्रभाव अवश्य पडेगा।

यही वह मौसम है....

जब

अग्निमाद्य, अपच, आफरा एव पेटदर्द आदि की बीमारी फैलती है, और हम—विशेषकर हमारे बच्चे, इनसे बहुत तकलीफ पाते हैं। तब

वैद्यनाथ अर्क पुदीना

अमृत के समान फायदा दिखलाता है। पुदीने की ताजी-हरी पत्तियो के इस अर्क से बदहजमी और बालरोग फौरन दूर होते हैं।

श्री वैद्यनाथ कलकत्ता : पटना :
आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० झाँसी : नागपुर।

चिकित्सा का राष्ट्रीयकरण

आयुर्वेदपञ्चानन पं० जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल, साहित्यवाचस्पति

आयुर्वेद क्षेत्र मे इस समय आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा विज्ञान स्वीकार कराने की चर्चा चल रही है और आयुर्वेदिक क्षेत्र की आकाक्षा है कि सरकार इस उद्देश्य की घोषणा कर दे कि भारत देश का चिकित्सा विज्ञान आयुर्वेद होगा। आवश्यकतानुसार यदि कुछ दिनो तक एलोपेथी का सहारा अपेक्षित हो तो ऐसा किया जा सकता है किन्तु इस घोषणा के पश्चात सरकार का यह कर्तव्य होगा कि आयुर्वेद का शिक्षणक्रम इस प्रकार रखे कि शिक्षित आयुर्वेदज्ञ देशके स्वास्थ्य विभाग और चिकित्साविभाग के समस्त उत्तरदायित्वपूर्ण पदो को सँभालने के योग्य हो जायें। आयुर्वेद का शिक्षण षोडशाग आयुर्वेद के अनुसार उन सभी विषयो मे हो जिनका सम्बन्ध जीवन के किसी भी अग से हो। कालेज के द्वारा आयुर्वेदशास्त्र की पूर्ण पढाई तो होवे ही, किन्तु स्नातकोत्तर ट्रेनिंग के द्वारा विश्वविद्यालय के स्तर पर ऐसी शिक्षा भी दी जाय जिससे हमारे चिकित्सक विश्व के सभी महत्वपूर्ण उन विषयो की जानकारी रखे जिनका सम्बन्ध आधुनिक जनता के स्वास्थ्य सरक्षण और चिकित्सा से सम्बन्ध रखता है। यदि अपने गुण विशेष से कोई अन्य चिकित्सा पद्धति के ज्ञाता कार्य करना चाहते है तो हम यह नही चाहते कि उनके कार्य में रुकावट डाली जाय, किन्तु सरकारी तौर पर राष्ट्र सचालन मे स्वास्थ्य और चिकित्सा सम्बन्धी कार्यों का सम्पादन आयुर्वेद के आधार पर हो और सैनिक व्यवस्था मे भी आयुर्वेद का ही अवलम्बन रहे। हम चाहते है कि हमारे चिकित्सक सम्पूर्ण विकसित और अनुसन्धानित विषयो के ज्ञाता हो। व्याख्या, बृहण, पुष्टीकरण आदि द्वारा आयुर्वेद के विषय अपने आधारभूत सिद्धान्तो के आधार पर आधुनिकतम स्वरूप के प्रभावपूर्ण रूप में आ जायें। हम स्वार्थसाधन के लिये इतने स्वार्थी नही बनना चाहते कि विज्ञान के किसी विभाग के विकास मे हम बाधक हो किन्तु यह भी नही चाहते कि हमारे देश मे एक वैज्ञानिक स्वास्थ्य और चिकित्सा विज्ञान के रहते विदेशी चिकित्सापद्धति का बोलबाला हो और राष्ट्रीय चिकित्सा विज्ञान दूध की मक्खी की तरह बाहर निकाल कर फक दिया जाय और झूठे दम-दिलासा और पुचकार मे ही उसका समय व्यतीत हो। हम यथार्थ रूप मे आयुर्वेद की उन्नति, शिक्षण का विकास और विस्तार चाहते है।

हमारे इस उद्देश्य, ध्येय और आकाक्षा का आभास पाकर 'मेंडकी को भी जुखाम' होने लगा है। एलोपैथी जमात को भी यह हौसला होने लगा है कि वे भी यह कहे कि हमारी चिकित्सा पद्धति का राष्ट्रीयकरण हो। डाक्टरो का एक "अखिल भारतीय सघ" है। लोगो के दिमाग को भ्रम मे डालने और आँखो पर पर्दा डालने के लिए वे अब डाक्टर का अनुवाद "चिकित्सक" शब्द से करने लगे है और अपनी सस्था को कानफरेन्स न कहकर 'भारतीय चिकित्सा सघ" कहने लगे है। इस भारतीय चिकित्सा सघ के मद्रास राज्य के डाक्टरो की सस्था का कुछ दिन पहले एक अधिवेशन कोयम्बतूर मे हुआ था। वहाँ उसके अध्यक्ष डाक्टर मत्तूराय सन्तोषम ने ऐसी राय जाहिर की कि 'चिकित्सको के पेशे का राष्ट्रीयकरण' होना चाहिए। उनका उद्देश्य यह था कि एलोपैथी की सरकारी मान्यता ऐसी पुष्ट की जाय कि सरकार के द्वारा उसीका प्रचलन हो। स्वास्थ्य और चिकित्सा सम्बन्धी सभी कार्य सरकार द्वारा इन्ही डाक्टरो द्वारा सम्पन्न हो और अन्य पद्धति या चिकित्सको का प्रचलन जारी रहना अनावश्यक हो जाय। इस कानफरेंस का उद्घाटन अन्नामलयम् विश्वविद्यालय के उपकुलपति (वाइस-चासलर) ने किया था। उन्होने डाक्टर सन्तोषम् के विचारो से सहमत न हो विरोध किया था। अवश्य ही यह विरोध या समर्थन स्वार्थ को लक्ष्य मे रख आर्थिक कारणो से हुआ था। इससे किसी ऊचे आदर्श या लक्ष्य का सम्बन्ध नही है। जो चिकित्सक डाक्टर स्वतन्त्र रूप से पर्याप्त अर्थोपार्जन नही कर पाते, उन्हे सरकारी नौकरी वरदान स्वरूप मालूम पडती है। राष्ट्रीयकरण हो जाने पर प्राइवेट डाक्टरो की आवश्यकता न रह जायगी, सरकारी डाक्टर ही सरकारी और जनता की आवश्यकताओ की पूर्ति करने लगेगे। जो डाक्टर प्राइवेट प्रैक्टिस के द्वारा पर्याप्त

धन कमा लेते है, वे सरकारी नौकरी की ओर आकर्षित होना लाभप्रद नही समझते। प्राइवेट प्रैक्टिस बन्द होने पर यदि उन्हे सरकारी नौकरी करनी पडी तो वे घाटे मे रहेगे। ऐसे लोगो द्वारा राष्ट्रीयकरण का विरोध हो रहा है। डाक्टरो का लक्ष्य व्यक्तिगत लाभ है। वे सोचते होगे कि हमारी पढाई-लिखाई मे माता-पिता ने जो हजारो पये खर्च किये है, वह हमे वसूल करना है। हमारी विद्यार्थी दशा की उमगे, आमोद-प्रमोद, विलास की कल्पना कैसे पूरी होगी। बढिया बँगला, मोटरगाडी और ऐश-आराम की जिन्दगी तथा शान-शौकत किस तरह पूरी होगी। सरकारी नौकरी मे नुसखो का बिल कैसे वसूल होगा। लम्बी फीस कैसे मिलेगी। मुँह-माँगा रुपया कैसे मिलेगा। राष्ट्रीयकरण होने पर तो चिकित्सा सम्बन्धी उत्पादन और वितरण सरकार के द्वारा होगा, हमारे हाथ तो वही सूखा वेतन ल`गा। स्वेच्छा से चाहे जहाँ प्रैक्टिस की सुविधा नही रहेगी, जहाँ जिस पद पर सरकार भेजेगी, वहाँ उसी पद पर जाना होगा।

इसके विपरीत आयुर्वेदज्ञो का लक्ष्य पवित्र है, ऊँचा है, राष्ट्रीय भावना और जनहित की प्रेरणा से ओत-प्रोत है। जन समाज मे आयुर्वेद के प्रचार की आवश्यकता समक्ष जब ऋषि लोग हिमालय की तराई मे परामर्श करने के लिये एकत्र हुए थे तब उनके ध्यान मे, लक्ष्य मे यही था कि ये नाना प्रकार के रोग तपश्चर्या, उपवास, अध्ययन, ब्रह्मच॰ आदि मे विघ्न पैदा करते है, अतएव इनसे बचने के लिये स्वास्थ्यरक्षक, जीवनवर्धक और धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष साधक साधनो की सिद्धि मे सहायक आयुर्वेद की शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए।

विघ्नभूता यदा रोगा प्रादुर्भूता शरीरिणाम्।
तपोपवासाध्ययनब्रह्मचर्यव्रतायुषाम्।।
तदाभूतेष्वनुक्रोश पुरस्कृत्य महर्षय ।
समेता पुण्यकर्माण पार्श्वे हिमवत शुभे।।

वहाँ एकत्र महर्षि स्वार्थसाधन के लिये नही, कोठी, आश्रम या आत्मसुख के साधन एकत्र करने की लालसा वाले नही थे, वे ब्रह्मज्ञान, दम तथा नियम के अखण्डकोष थे। उन्होने एकत्र होकर जो चर्चा की वह यही कि धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष जो चतुर्विध पुरुषार्थ हैं उनके साधन सिद्धि के लिये जनता का आरोग्य रहना आवश्यक है। अस्वास्थ्य और रोग स्वास्थ्य को, सुख को, चतुर्विध पुरुषार्थों को, यहाँ तक कि जीवन को भी हरनेवाले है। इन्हे दूर करने के लिये आयुर्वेद का सीखना आवश्यक है—

सुखोपविष्टा ते तत्र पुण्या चक्र कथामिमाम्।
धर्मार्थ काम मोक्षाणा आरोग्य मूलमुत्तमम्।।
रोगातस्यापहर्तार श्रेयसो जीवितस्य च।
प्रादुर्भूतो मनुष्याणामन्तरायो महानयम्।।
क स्यात्तेषा शमोपाय इत्युक्त्वा ध्यानमास्थिता।

जब महर्षि भरद्वाज इन्द्र से आयुर्वेद सीखकर आये तब उन्होने अन्य ऋषियो को विधिवत उसका अध्ययन कराया। उस अध्ययन के फलस्वरूप उन्होने अपथ्य-त्याग, पथ्यग्रहण और स्वास्थ्यकर नियमो का पालन कर परम सुख और अविनाशी जीवन को प्राप्त किया। यही नही "सर्वभूतानुकम्पया" सम्पूर्ण जीवधारियो पर अनुकम्पा करने की इच्छा से शिष्यो को अध्ययन कराने की प्रथा प्रचलित की। आयुर्वेद की शिक्षा प्राप्त कर चिकित्सक सब रोग के भेदो को जान कर कहाँ क्या करना चाहिये इसका ज्ञाता होता है। सब औषधि और चिकित्सा का तत्वज्ञ होता है और वह राजा और राज्य के निवासियो के प्राणो का रक्षक 'प्राणपति' होता है।

सर्वरोग विशेषज्ञ सर्वकार्य विशेषवित्।
सर्वभेषज तत्वज्ञो राज्ञ प्राणपतिर्भवेत्।।

विद्या सीखने के बाद दीक्षान्त के समय स्नातक चिकित्सक को जो उपदेश दिया जाता था उसम कहा जाता था कि तुम ब्रह्मचर्य का पालन करो, सत्यवादी होओ, भोजनके लालची न हो, ईर्षा द्वेष-मत्सर से रहित रहो। मेरे कहने पर तुम सब कुछ कर सकते हो, किन्तु राज्य और राष्ट्रके विरुद्ध कार्य मेरे कहने पर भी न करो। प्राणनाशक-अधर्म और अनर्थ के काम तुम भूलकर भी न करो। सावधान एकाग्र मन से विनयसम्पन्न होकर विचारपूर्वक काम करो। दूसरे के गुणो पर दोषारोप न करो। विना कारण इधर-उधर न घूमो। कर्म की सिद्धि, अर्थसिद्धि, यश की प्राप्ति, स्वर्ग की इच्छा, गो-ब्राह्मण-प्राणियो के सुख और आरोग्य की कामना करते रहो। प्रतिदिन उठते-बैठते और सब अवस्थाओ मे रोगियो को आरोग्य करनेवाले विचारो को सोचते रहो। अपने जीवन और प्राण के लिये भी कभी रोगियो से द्रोह न करो, उनका अनिष्ट न चेतो। मनसे भी परस्त्री की चिन्तना न करो। परधन और परायी

सम्पत्ति के हरण का विचार मनमें कभी न लाओ, विनयी रहो, मद्यपान आदि नशे से दूर रहो। पापसे बचो, पापी का सग न करो। आरोग्य के साधनो की सिद्धि के लिये सदा प्रयत्नवान रहो। देश-काल के विचार को याद रखो। राष्ट्रद्रोही और सत्पुरुषो से द्वेष रखनेवाले का साथ न करो। रोगी के यहाँ जाकर मन, बुद्धि और इन्द्रियो को रोगी के हित और प्रयोजन के अतिरिक्त अन्य भाव मे न लगाओ। रोगी के घर की बातो को बाहर प्रकट न करो। रोगी की मृत्यु का निश्चय होने पर भी ऐसी जगह और ऐसे अवसर पर न कहो जहाँ रोगी या अन्य किसी की मृत्यु का कारण हो। आत्मश्लाघा न करो।

शल्य-शास्त्र की शिक्षा के लिये जब सुश्रुत आदि शिष्य काशिराज दिवोदास धन्वन्तरि के पास गये तब उन्होने भी यही निवेदन किया था कि जनता शारीरिक, मानसिक और आगन्तुक रोगो से पीडित हो कर दुखी होती है। मित्र-भृत्य-धन आदि साधन होते हुए भी, सनाथ होते हुए भी अनाथ की तरह तडपती है, विलाप करती है। यह हमसे नही देखा जाता, उससे हमारे मनको पीडा होती है। इसलिये सुख की इच्छा रखनेवाले ऐसे लोगो के रोगादि दूर कर प्राणरक्षा के लिये और सर्वसाधारण की हितकामना के लिये हमे आयुर्वेद शास्त्र की शिक्षा दीजिये। सर्वसाधारण की प्राणरक्षा होते हुए भी जीवन निर्वाह हो यही हम चाहते है। "तेषा सुखैरिणा रोगाय रोगोपशमनार्थमात्मनश्च प्राणयात्रार्थं प्रजाहितहेतो आयुर्वेद श्रोतुमिच्छाम इहोपदिश्य माम्।

आयुर्वेद वालो का लक्ष्य किसी वर्गविशेष के लिये जीविका का साधन जुटाना नही, बल्कि सर्वसाधारण जनता को रोगो-बीमारियो से मुक्त कर स्वास्थ्य और सुख प्रदान करना है। उसे आधुनिक चिकित्सक जीविका का साधन समझ ऐश्वर्य बढाने के लिये प्रयत्नशील होते है उन्हे हम पवित्र लक्ष्य से नीचे जाता हुआ समझते है। फीस और दवा के दाम जो वाजिब है वह तो देने मे समर्थ लोग देवेगे ही। उसे अपना चरम लक्ष्य बनाना चिकित्सक के लिये उचित नही है। आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा विज्ञान स्वीकार करना अपने स्वदेशी विज्ञान के प्रति आस्था और आदर प्रकट करना है। उसके नैसर्गिक अधिकार को स्वीकार करना है। यही नही, अपना पवित्र कर्तव्य पालन करना है। अन्य कला और विज्ञानो के समान आयुर्वेद को उसके असली स्वरूप के अनुरूप आधुनिक काल के लिये उपयोगी, समर्थ और सुदृढ बनाना देशवासियो का कर्तव्य है, सरकार का कर्तव्य है। लोगो का कटु अनुभव है कि जिन क्षेत्रो में राष्ट्रीयकरण हुआ है, उनमे प्रगति नही हुई। हम चाहते है कि आयुर्वेद क्षेत्र मे ऐसी जिम्मेदारी और योग्यता से कार्य हो कि विरोधी शक्तियाँ उसकी प्रगति मे बाधक न हो पावे। इसलिये हम चाहते है कि आयुर्वेद का राष्ट्रीयकरण होने के साथ ही प्रान्तो मे और केन्द्र मे भी आयुर्वेद का पृथक् विभाग बनाया जाय और उसके सचालन के लिये प्रान्तो मे डाइरेक्टर आदि और केन्द्रो मे डाइरेक्टर जनरल आदि के पदो की प्रतिष्ठा हो। यही नही, इस विभाग की नीति निर्धारण और कार्य सचालन की दिशा निश्चय करने के लिये आयुर्वेद की मिनिस्ट्री भी अलग और स्वतन्त्र हो। इस ध्येय के अनुकूल वैद्यो को कर्तव्य-परायण होना चाहिए और वैद्यक सस्थाओ को दृढतापूर्वक सगठन कर देश मे अनुकूल सहानुभूति और सहयोग का भाव उत्पन्न करना चाहिए।

सचित्र आयुर्वेद के अबतक प्रकाशित सभी विशेषांकों से महत्वपूर्ण

आयुर्वेद-यूनानी समन्वयांक

अतिशीघ्र प्रकाशित होने जा रहा है

लेखकगण शीघ्र लेख भेजने की कृपा करें।

रोगोत्पादन में आम का सम्बन्ध

आयुर्वेद विद्वान् एम० महादेव शास्त्री

आयुर्वेद ग्रन्थो मे रोग से आम का सबन्ध बहुत सा रखा गया है। आर्ष ग्रन्थो मे उसका उल्लेख कही-कही मिलता है। आगे आचार्य वाग्भट ने आम की निरुक्ति तथा इसका लक्षण अच्छी तरह विवरण किया है और आम को उन्होने घोर विष माना है। सुश्रुत ने कहा है कि "यत्रस्थमामविरुजेत् तमेवदेश विशेषेण विकारजातं" इत्यादि। अर्थात् जहाँ-जहाँ आम ठहरता है वहाँ-वहाँ स्थानविशेष के अनुसार भिन्न-भिन्न रोग उत्पन्न होते हैं। अब हम इन बातो को ध्यान मे रख कर रोगो से आम का सम्बन्ध देखेंगे।

आम का अर्थ कई प्रकार से दिया है। पर इन सबसे जो वाग्भटाचार्य का विवरण है वह तो हमे सुन्दर दिखता है। उसने आम-सभव का दो प्रकार से विवरण दिया है कि एक मे जठराग्नि की मन्दता से आद्य धातु-रस का ठीक नही बनना, दूसरे मे दोषो की अन्योन्य समूर्च्छना से रस का आम होना। पहिली की निरुक्ति ऐसी दी गई है कि—

ऊष्मणोल्प बलत्वेन धातुमाद्यमपाचितम्।
दुष्टमामाशयगत रसमाम प्रचक्षते ।। अ हृ सू १३-२५

अग्निबल जब कम हो तब आहार सेवन करने से इसका सम्यक् पाचन नही होता है। इस बात मे कोई शका नही कि हमारे नित्य जीवन मे सब जानते है कि चुल्ही मे अग्नि घटे तो बरतन मे रहे हुए चावल या अन्य पदार्थ योग्य रूप से नही पकते जिसको हम नही खा सकते हैं। इसी प्रकार दुर्बल जठराग्नि के सयोग से कोष्ठगत आहार ठीक नही पकता जिससे बना हुआ रस शरीर के लिए हितकर नही होता है। यह रस अपक्व होने से इसको आम रस माना गया है। आमरस कोष्ठ मे शोषित होकर जब अन्दर पहुँचता है तब यह दोषो से, धातुओ से या धातुमलो से मिलता है। ऐसे मिले हुए दोष आदि 'साम' माने जाते है। साम का लक्षण वाग्भटाचार्य ने वर्णन किया है कि—

स्रोतोरोध बल भ्रश गौरवानिल मूढता ।
आलस्यापक्ति निष्ठीवमलसङ्गारुचिक्लमा ।।
लिंग मलाना सामाना निरामाना विपर्यय ।
अ हृ सू १३-२३-२४

स्रोतोरोध, दौर्बल्य, शरीर का भारीपन, अनिलमूढता अर्थात् वायुका गमन मन्द या बन्द होना, आलस्य या अपक्ति, बराबर थूकना, मलबन्ध, अरुचि और क्लम ये सब साम लक्षण हैं। जब आम पाचन होकर निराम होता है तब इन लक्षणो से विपरीत लक्षण होते है जैसे स्रोत शुद्धि, बलोदय होना, लघुता आदि।

आम की दूसरी निरुक्ति ऐसी दी गई है कि—

अन्ये दोषेभ्य एवाति दुष्टेभ्योऽन्योन्यमूर्च्छनात्।
कोद्रवेभ्यो विषस्येव वदन्त्यामस्य सभवम् ।।
अ हृ सू १३-२६

शरीर मे दुष्ट दोषो की अन्योन्य समूर्च्छना होने से आमोत्पत्ति होती है। जैसा कोद्रव सडने से उसमे विष निर्माण होता है। शरीर मे दोषो की कैसी दुष्टि होती है, समूर्च्छना क्या है और इससे रोग की कैसे उत्पत्ति होती है इन विषयो को समझना चाहिए।

हम ग्रन्थावलोकन से समझते है कि सभी रोगो के लगभग एक ही तरह के दोषो के प्रकोपक कारण होते है। क्या इन के सेवन से सब को एक ही काल मे रोगोत्पन्न होता है? नही, किन्तु कुछ लोगो को होता है और कुछ को नही। फिर दोष, आम, रोग आदि शब्द प्रयोग का क्या मतलब है?

स्रोतस्

शरीर मे असख्यात स्थूल और सूक्ष्म स्रोतो के द्वारा सब धातुओ को रसरूप मे सदा आहार मिलता रहता है और प्रत्येक धातु अपने पोषकाश को ले कर अपनी विशिष्ट अग्नि के द्वारा आहार पाक करके पुष्टि पाती है और अपने मलाश को छोडती है। धातु से मिलनेवाला स्रोतो-भाग स्रोतोमुख कहलाता है। पोषकाश या मलाश इस मुख से ही जाता-आता है। धातु का अपनी अग्नि से सदा पुष्टि या ह्रास होना परिणाम शब्द से व्यवहृत है। सदा धातुपरिणाम होते रहने से जैसे-जैसे धातु-नाश होता है वैसे-वैसे पुष्टि होनी भी आवश्यक है। नही तो शरीर

घटता है। पुष्टिकर आहारादि (ऋतुओ के अनुसार आहार, विहार, शोधनादि चर्या) सेवन न करके विरुद्धाहारादि सेवन करे तो रस बहानेवाले स्रोत वैगुण्य पाते हैं। मतलब यह है कि अहित या असात्म्य रस बनने से स्रोत बिगडते है जैसे गन्दे पानी से नल।

कुपिताना हि दोषाणा शरीरे परिधावताम्।
यत्रसग खवैगुण्यात् व्याधिस्तत्रोपजायते ॥
सु सू २४-१०

क्षिप्यमाण खवैगुण्याद्रसस्सज्जति यत्रस।
करोति विगुण तत्र खे वर्षमिव तोयद ॥
च चि १५-३७।

असात्म्येन्द्रियार्थं सयोग, प्रज्ञापराध और परिणाम इन से दोषो का प्रकोपण होता है। प्रकुपित दोषो का गमन विगुण स्रोतो मे अवरुद्ध होता है। अर्थात् दोष बहानेवाला रस विगुण स्रोत मे रुक जाता है। इस दशा में प्रकुपित दोष और धातु का दोष परस्पर अप्राकृतिक रूप से मिलते है जिससे धातु परिणाम विषम होकर आम बनता है। इस दूसरी निरुक्ति के अनुसार सगति ठीक बैठती है।

पहिली निरुक्ति के अनुसार आम कोष्ठाग्निबलाल्पता से ही उत्पन्न होता है। यह प्रकुपित दोष से मिलकर स्रोतो मे फैलते फैलते विगुण स्रोत तक भी पहुँचता है जिसके बाद प्रकुपित या आगन्तुक दोष धातुस्थ दोष या स्थानिक दोष मिलकर धातु का कार्य और धातु के भागो का नाश करते हैं। इन दोष और द्रव्यो के अप्राकृतिक रूप से परस्पर मिलने को समूर्च्छना कहते है।

इन दोनो प्रकार म इतना ही भेद है कि जठराग्निमान्द्य से बने हुए आम का पहिले ही प्रकुपित दोष से मिलकर विगुण स्रोतो तक पहुँचना या प्रकुपित दोषो के विगुण स्रोतो मे पहुँचने के बाद आमरस बनना।

रोग

आमदोष विगुण स्रोत मे मिलने से उसको बिगाडता है। स्रोतदुष्टि के लक्षण चरकाचार्य ने निम्नप्रकार दिये है—

अतिप्रवृत्ति सगोवा सिराणा ग्रन्थयोपिवा।
विमार्ग गमन चा (वापि) स्रोतसा दुष्टि लक्षणम् ॥
च वि ५

स्रोत मे द्रव्य प्रमाण से अधिक बहना या नही बनना, सिराओ का ग्रन्थित होना और (या) स्रोत का द्रव्य या अवयव विमार्ग में रहना ये सब स्रोतोदुष्टि के लक्षण है। इस को एक-दो उदाहरण से स्पष्ट करेगे। मल विसर्जन अधिक मात्रा में या अनेक वार होना अतिप्रवृत्ति सूचक है, जिससे पुरीषवह स्रोतोदुष्टि मानी जाती है। कब्जीयत या मलबन्ध पुरीषवह का सग है। पाद या हस्त मे व्रण हुए तो वक्षण या कक्षा मे ग्रन्थि होती है। यह ग्रन्थिसूचक है। वमन या उल्टी अन्नवह स्रोत मे विमार्गगमन बतलाती है। श्वास प्रवृद्धि प्राणवह की अति प्रवृत्ति और हृदय का स्थानापकर्ष विमार्गगमन आदि स्रोतोदुष्टि के उदाहरण हैं।

आम जठराग्नि से पैदा हो या धात्वग्नि से पैदा हो, वह रस विक्षेपण म एक स्थान से दूसरे स्थान पर फैलता है। प्रकोपण कारण से दोष का बल अधिक रहे तो स्रोतोवैगुण्य के स्थान मे क्रियाकालो की सब अवस्थाएँ होती हैं और रोग उत्पन्न होता है। दूसरे स्थानो मे स्रोतोवैगुण्य अल्प होने से पहिली की अपेक्षा वहाँ दोष की समूर्च्छना अल्प होती है और केवल लक्षणमात्रा म रोग की अवस्था रहती है।

आमदोष कोष्ठभार्ग मे अर्थात् आमाशय, पक्वाशय आदि स्थानो मे रहे तो उसके अनुसार छर्दि, अतिसार, अलसकादि रोग उत्पन्न करता है। अगर धातुओ मे हो तो ज्वर, प्रमेह शोथ राजयक्ष्मादि रोगो की उत्पत्ति करता है। वास्तव मे रोग स्पष्ट होने के पहिले दोष की सचय, प्रकोप, प्रसर ये तीन अवस्थाएँ होती है। कई बार रोगी या वैद्य इन अवस्थाओ को नही पहिचानता है क्योकि वे अवस्थाएँ बहुत सूक्ष्म रूप म रहती है। स्थानासश्रयावस्था रोग का पूवरूप बनती है। व्यक्ति और भेद रोग के स्पष्ट रूप होते हैं।

निज रोग उत्पादन होने के लिए सग्रह मे ऐसा देखा जाता है कि (१) अग्निमान्द्य, (२) आमोत्पत्ति (३) स्रोतोरोध (४) दोषदूष्य समूर्च्छना और (५) रोग। आगन्तु रोग म इससे थोडा विपरीत क्रम रहता है।

दोषदूष्य समूर्च्छना के परिणाम से कुछ धातुनाश होता है। यह नष्ट भाग मल बनता है। यह मल और धातु से विसर्जित मल दोनो आमदोष से मिलकर साम बनाते है। जबतक यह साम धातुओ के साथ रहता है तब तक कुछ न कुछ क्रिया या रचनात्मक विकार रहते है और ये विकार लक्षण रूप से देखे जाते है।

यह दोषदूष्यसमूछना जनित विकृति परम्परा विशेष रोगसज्ञक है।

मनुष्य की स्वाभाविक आयु

डॉ० एफ० ई० बिल्स (जर्मनी)

स्वस्थ माता पिता से जन्म लेकर, प्रकृति द्वारा दी हुई जीवनीशक्ति की पूँजी को स्वस्थ बनाये रखते हुए, सावधानी से, सयम से मनुष्य सौ वर्ष से भी अधिक जी सकता है। प्रकृति का यह साधारण नियम देखा गया है कि कोई प्राणी शरीर की प्रौढता जितने समय मे प्राप्त करता है उसके पाँचगुना जीता है। यथा घोडा पाँच वर्ष मे पूरी ऊँचाई को पहुँचता है अन वह २५ या ३० साल तक जीता है। ऊँट ८ वर्ष म युवा होकर ४० साल, कुत्ता २ वर्ष मे विकसित होकर १० वर्ष, हाथी ४० वर्ष मे पूर्ण विकसित होकर २०० वर्ष जीता है। यह नियम प्राय देखा गया है। कई घोडे तो ५० वर्ष से अधिक जिये है। मैंचेस्टर के अजायबघर म एक घोडे की खोपडी रखी है जो ६० वर्ष से अधिक जिया था। सिकन्दर महान् ने युद्धो मे विजय का श्रेय अपने हाथी को देने के लिए उसे सूर्य भगवान् को अर्पित कर मुक्त कर दिया था। यह हाथी ३५० वर्ष तक जिन्दा पाया गया था।

प्रसिद्ध प्रकृतिवादी डेमोक्रिटस आजीवन निरोगी, स्वस्थ रहकर १०९ वर्ष की उम्र मे मरा था। रोम की दो नर्तकियाँ १०४ और ११२ वर्ष की होकर मरी। फ्रास की एक अभिनेत्री १८६७ मे मरी। उस समय उसकी आयु १११ वर्ष थी। स्वीडन का एक फौजी ६७ वर्ष तक फौज म रहकर १७ लडाइयाँ लडा था, ११२ वर्ष की उम्र मे मरा। ११० वर्ष की उम्र मे उसने तीसरी शादी की थी और मरने के पहले दो घण्टे पैदल चला था। अग्रेज ईफिगम एक मजदूर था, मेहनत से रोजी कमाता था, कभी बीमार नही पडा था, १४४ वर्ष मे मरा। इग्लैण्ड के थॉमस पार साहब १५२ वर्ष तक जीवित रहे। वे सदा साधारण भोजन से स्वस्थ रहे। एक बार बादशाह चार्ल्स प्रथम ने मुलाकात के लिए इन्हे बुलाया और इज्जत करने के लिए बढिया भोजन दिया। इससे वह मर गये। उनके शव की चीर-फाड कर जाँच करने से पता चला कि गरिष्ट पदार्थ खाने से उनका पाचन बिगड गया, इससे वे मर गये। नारवे का एक व्यक्ति ड्रेकनबर्ग १४६ वर्ष जीवित रहा। १३० वर्ष की स्वस्थ उम्र में उन्होने एक किसान की कन्या से शादी की थी। जोसफ सूरिंगटन १६० वर्ष जिया। उसका सबसे छोटा बच्चा ९ वर्ष का था, सबसे बडा १०८ वर्ष का। हगरी का बोविन १७५० मे १७२ वर्ष की आयु मे मरा। उस समय उसकी विधवा की आयु १६४ वर्ष थी, बेटा ११५ वर्ष का था। रूस का एक व्यक्ति जो १६२३ मे जन्मा था १८२५ तक, अर्थात २०२ वर्ष तक जीवित रहा।

ये लोग स्वस्थ रहते हुए इतना क्यो जिये? प्रकृति द्वारा दी हुई जीवनीशक्ति की पूँजी को सयम से आमद-खर्च करते रहे, यही एक उत्तर है। मनुष्य को कितने वर्ष तक जीना चाहिए? लोगो का मत है सौ वर्ष, परन्तु अनुभव तो इस कैद को पार कर जाता है।

इगलैण्ड मे १५वी शताब्दी मे जन्मा एक किसान १७वी शताब्दी मे, १७० वर्ष की आयु तक जीवित रहा। १२० वर्ष की उम्र मे वह कठिन परिश्रम करता था। उसका भोजन सदैव सादा था, किन्तु एक भोज म माल-टाल खाने से वह मरा। वेस्टमिन्स्टर एबे मे उसकी समाधि बनी है। डेन्मार्क मे एक व्यक्ति का जन्म १६२४ में हुआ था, मृत्यु १७७० मे हुई। वह बडा सयमी था। उसकी पत्नी ६० वर्ष की उम्र मे मर गई तब उसने १८ वर्ष की एक कन्या से शादी करनी चाही। ऐसे बहुत से लोग हुए है जिनने अधिक उम्र मे एव कई शादियाँ की। स्कॉटलैण्ड के एक व्यक्ति ने ९ बार, और एक फ्रेञ्च ने १० बार शादी की। हगरी के लोगो मे भी दीर्घायु के उदाहरण है। १७२४ मे टेमेस्वर में एक व्यक्ति १८५ वर्ष की आयु मे मरा था। कितने ही लोग मरते समय तक स्वस्थ रहे। अजीब बात मालूम होती है कि इन लोगो के दाँत और बाल पुन ऊग आये थे और चेहरे की झुर्रियाँ गायब हो गई थी।

डॉ० हूफलेण्ड ने दो ऐसे व्यक्तियो के प्राकृतिक कायाकल्प का हाल लिखा है। हम लोगो के जमाने में तो लोग बहुत असमय मे मर जाते है। मुलर द्वारा लिखित

विश्व इतिहास म ईस्वी सन के प्रारंभिक काल म रोम के बादशाह वस्पासियन के जमान म एक क्षत्र म दीर्घायुषो की जनगणना के हिसाब म बताया गया है कि एक गाव म ५४ व्यक्ति एक सौ वष से अधिक वाल थ ४० व्यक्ति ११० वष की आयु से १४० तक दो व्यक्ति तो १५० वष के थ। अरब के लोगो म जो दूध म और जल पीते ह बहुत से लोग दीर्घायु होते है। लन्दन के सन्त लियोनार्ड गिरजाघर मे जन्म-मृत्यु तिथि रजिस्टर म एक व्यक्ति थामस कान का जन्म २८ जनवरी १५८८ मृयु १७९५ लिखी है। २०७ वष के जीवन म इग्लैण्ड की राजगद्दी पर उसन बारह राजाओ को देखा।

आजकल बहुधा लोग पुरानी बीमारियो के शिकार होकर ५०-७० अथवा इससे भी पहल मर जाते है। वह बीमार रहते जीना भी कोई जिन्दगी है? पुरानी बीमारी से ग्रस्त होकर धीरे धीरे ५० या ७० वष तक मरते रहन की क्रिया क्या जिन्दगी है? वह भी जहरीली दवाइयाँ पीते हुए शरीर म सुई चुभाते चीरफाड की नारकीय यातनाएँ सहते हुए—बीमारी और वज्ञानिक इलाज के नाम पर रुपय खच कर जहरी दवाइया पीते हुए! मरन की यह क्रिया जन्म से ही आरभ हो जाती है। ज्यो ज्यो इन दवाइयो—जहरो द्वारा रोगनाश और स्वास्थ्य प्राप्ति का वैज्ञानिक (?) जमाना उन्नति कर रहा है त्यो त्यो मनुष्य की दुदशा होती जा रही है। रूस के सेण्ट पीटसबग के अक्टूबर १८९५ के अखबार लिस्तोक म एक किसान का समाचार लिखा है कि १३० वष की आयु वाल किसान ईवान कुस्मिन का प्रवश इस शहर के ओबुको अस्पताल म हुआ। सरकार न उसको देश भर के सब शहरो की यात्रा करन की आज्ञा (पासपोट) दी है। उसकी उम्र अधिक नही मालूम होती वह स्वस्थ एव बुद्धिमान है। वह १७५७ म जन्मा था। अपन पिता के साथ वह मालिक जागीरदार का आजीवन गुलाम नौकर था। ८५ वष की उम्र म उसे साइबरिया भज दिया गया था। उसन जागीरदार की नौकरी करन से इन्कार किया तो उसे १० वष साइबरिया म रहन को देश निकाला दिया गया था। उस कठोर प्रदेश म वह ५३ वष रहा। गुलामी प्रथा का अत होन पर वह मुक्त होकर सोन की खदान म काम करन लगा। वहा उसके पाव का एक अँगूठा कट गया। १८९४ म उसे घर की याद सतान लगी तब सरदार न उसे यूरुपी रूस जान की आज्ञा और रेलव का फ्री पास दिया। मास्को आकर उसने अपन रिश्तेदारो और घर को ढढा परन्तु दो दिन तक बहुत ढूढन पर कोई न मिला तो सेण्ट पीटसबग लौटकर एक कमरा किराए पर लकर रहन लगा। वह आजीवन कुआरा था। उसकी स्मति तीव्र थी। इस समय वह पुगात्सू द्रोह क्रीमिया सम्मिलन और नपोलियन के रूस पर आक्रमण आदि का हाल अच्छी तरह बतलाता था।

पेटर माफन्स न भारत के इतिहास म एक व्यक्ति नूमिस्दे को गुआ के विषय म लिखा है कि वह १५६६ में ३७० वष की उम्र म मरा। उसके दात दाढी और बालो का चार बार कायाकल्प हुआ था। बलोर मकरेन एक मकान म १९० वष तक जीवित रहा।

जमनी के दूसरे विख्यात प्राकृतिक चिकित्सक डॉ० एम० प्लटन न मनुष्य की आयु के विषय म लिखा है कि मनष्य की स्वाभाविक आय की कोई अवधि नही है। अपनी योग्यतानुसार वह चाह जितना जिए। परन्तु इस जमान म मनुष्य की औसत आयु ३५ वष रह गई है। लोग जन्म से ही पैतक रोग लकर ससार म आते है अथवा जो स्वस्थ पदा होते ह व आग चलकर सामाजिक चलन के असयम खान पान और सभ्यता के रहन सहन एव आचार विचार से स्वय रोग पदा कर लते ह। ससार म सब प्राणियो की आयु का प्राकृतिक नियम मनुष्य के लिए भी है। एशिया माइनर के हहृय नामक नगर म हुदशी सोलिमन साबा नाम का एक तुक १३२ वष तक जीवित रहा। वियना के राष्टीय अखबार वियनर वाटरलण्ड म उसके विषय म मृत्यु पश्चात समाचार छपा था कि हुदशी के सात स्त्रियाँ थी जो उससे पहल मर चुकी थी। उनसे उसके ६० बट और ६ बटिया उत्पन्न हुई थी जो सब मर चकी है। उसन ९८ वष की आयु म सातवी शादी की थी जिससे तीन बट पदा हुए थ। उसकी और भी शादी करन की इच्छा थी किन्तु पैसा नही था। वह किसान था और दाल रोटी खाता था जीवन म केवल दो बार मास खाया था। वह जीवन भर कभी बीमार नही पडा। मरन के पूव केवल चार दिन बीमार पडा।

जनसाधारण की परम्परागत धारणा और आदत है कि गरिष्ट और खूब खान पीन से मोट होन से तन्दुरुस्ती

(शवाश ६५७ पृष्ठ पर)

आयुर्वेद के पुनरुत्थान में आयुर्वेदस्नातकों का स्थान

कविराज सतीन्द्रनाथ बसु, एम० ए० एम० एस०, मिवप्रल

आयुर्वेद जगत मे आजकल आधुनिक आयुर्वेद स्नातक एक समस्या का विषय बन गये है। उनका स्थान न वैद्यो मे गिना जाता है—न उन्हे डाक्टरो की मर्यादा ही दी जाती है। इतना ही नही—बडी-बडी सभा-समितियो मे, मासिक पत्रिकाओ मे उन्हे कभी "Half Vaids & Half Doctors" और कभी "धोबी का कुत्ता, न घर का न घाट का"—यह उपाधि दी जाती है। परन्तु अफसोस तो यही है कि यह उपाधि उनलोगो ने ही दी है जिन लोगो ने आयुर्वेद-स्नातको को इस प्रकार बनाया है। उन्हे यह कहने का साहस नही है कि उन व्यक्तियो के कसूर से ही—उन व्यक्तियो की दूर-दर्शिता के अभाव से, उन्ही लोगो की भूल से आज आयुर्वेद स्नातको मे खराबियाँ आई है। ऐसे विवेकहीन सज्जनो से वाद-प्रतिवाद करना भी व्यर्थ है। सैकडो लेखो मे उन्हे चेलेज दिया गया परन्तु आज तक केवल आयुर्वेद स्नातको को गाली देना, उन्हे अपमानित करना, उनकी निन्दा करना—इसके अतिरिक्त चेलेज के प्रत्युत्तर मे एक शब्द कहने का साहस आज तक किसी को हुआ नही और न होने की उम्मीद ही है। इस तरह व्यक्तिगत रूप से उन महारथियो मे विवेक की जागृति असम्भव देखकर समवेत रूप से उनका मुकाबला करने के लिए अखिल भारतीय नेशनल मेडिकल एसोसियेशन की स्थापना हो चुकी है और वह धीरे-धीरे प्रगति के मार्ग पर अग्रसर हो रही है। मै उस सस्था का एक सदस्य होते हुए भी व्यक्तिगत रूप से इस प्रकार के द्वन्द्व का विरोधी हूँ। यह आयुर्वेद के पुनरुत्थान मे घातक तो नही है, परन्तु बाधक अवश्य है। विवश होने पर ही इस सस्था की सृष्टि हुई है और मुझे विश्वास है कि जिस दिन उस परिस्थिति का अवसान होगा, जिस परिस्थिति ने आयुर्वेद स्नातको को एक पृथक ध्वज के नीचे सगठित होने को मजबूर किया उसी दिन यह सस्था विघटित होगी। आज जब आयुर्वेद अपने जीवन-मरण के सन्धिक्षण से गुजर रहा है, इस समय सभी आयुर्वेदसेवियो को कन्धे से कन्धा मिलाकर इस लडाई मे सम्मिलित होना चाहिये था। यह समय आत्म कलह का नही है, यह समय परनिन्दा या परचर्चा का नही है। आज का समय सभी को भेदभाव भूलकर एक स्वर से आयुर्वेद-विरोधियो से टक्कर लेने का है—और वह स्वर जितना गम्भीर तथा उच्च हो उतना ही महत्व का होगा। इस बात को हम भूल गये है, व्यक्तिगत स्वार्थ व प्रतिष्ठालोलुपता के शिकार बन कर आपसी मतभेद व पारस्परिक निन्दा के सहारे हम अपने विरोधियो का हाथ मजबूत बना रहे हैं। इससे न हमारा ही भला होगा न आयुर्वेद का। यह परिस्थिति जितना ही शीघ्र हमारी समझ मे आ जाय, उतना ही हमारे लिये मगल है।

यह कहा जाता है कि आयुर्वेद स्नातको मे न आयुर्वेद का ज्ञान उतनी उच्चकोटि का मिलता है जिससे वे पूर्ण आयुर्वेदज्ञ कहलाने योग्य होते है और न उन्हे इतनी डाक्टरी की शिक्षा दी जाती है जिससे वे डाक्टरो के साथ मुकाबला कर सकते है। जहाँ तक पैसा कमाने का सवाल है, यह कहा जा सकता कि वे सफल वैद्य व सफल कायचिकित्सक डाक्टरो से बराबर टक्कर लेते हैं। परन्तु जहा तक विद्या का प्रश्न है—यह कहना असत्य होगा कि वे प्राचीन आयुर्वेद विद्वानो से—अवश्य मै वास्तविकत जिन्हे "आयुर्वेद-विद्वान" कहा जा सकता है उनकी बात ही कह रहा हूँ—निम्नस्तर के नही है। वैसे ही वे विशिष्ट एलोपैथी के विद्वानो के भी समकक्ष नही कहे जा सकते है। इसका कारण आयुर्वेद स्नातको मे बुद्धि का अभाव नही है और न उनमे शिक्षा ग्रहण करने की प्रवृत्ति का अभाव है। उन कारणो को मैंने कई बार अपने लेखो द्वारा चिन्ताशील वैद्यजगत के समक्ष रखने का प्रयास किया—परन्तु शायद ही उनका ध्यान आकृष्ट कर पाया। इसका कारण मैं लेखो की असारता नही समझता हूँ, क्यो कि अगर ऐसा होता तो वे मुझे समझा सकते थे। प्रत्युत्तर मे मेरा मत खण्डन करने का प्रयास कर सकते थे। परन्तु इसके अभाव मे मुझे यही समझना पडा कि वे आत्मनिरीक्षण के लिए प्रस्तुत नही है या निज दोष स्वीकार करने को तैयार नही है। आज जब मैं देख रहा हूँ कि हमारे स्नातको मे अवसर मिलने पर बडी-बडी वैदेशिक उपाधियाँ हासिल करने की शक्ति है,

प्रत्यक्ष कर्माभ्यास म व किसी से पीछ नही हटते है तो म कैसे यह मान लू कि उनम शक्ति अध्यवसाय तथा बुद्धि की कमी है। परन्तु आयुर्वेद स्नातको को चारो तरफ से दबाव म रखकर उनकी प्रगति म वाघा डालन से उनकी दीप्ति का प्रकाश कैस हो सकता है—यह मरी समझ क बाहर है।

आज आयुर्वेद स्नातक जिन कारणो से ही क्यो न हो—जिस परिस्थिति म है उस परिस्थिति म रहकर भी व आयुर्वेद क पुनरुत्थान म बहुत ही महत्व क आधार बन सकत है। प्रयोजन है केवल उस महत्वको समझकर—उसे ससम्मान स्वीकार कर उसका सदुपयोग करन का ही। आज मै उस सम्बन्ध म आयुर्वेद जगत का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ।

आयुर्वेद एक अगाध ज्ञान का भण्डार है—इसम सन्देह नही। ३-४००० वष पुराना होन पर भी—पाश्चात्य जगत म विज्ञान की परमोन्नति को दखते हुए भी आज कम से कम भारतवष म आयर्वेद की विशष उपयोगिता है—इसम सन्देह नही है। विश्व म अभी भी आयुर्वेद की दन काफी महत्वपूण प्रतीत होगी। आज आयर्वेद सुप्त है—परन्तु लप्त नही है और यह भी सत्य है कि आयुर्वेद फिर स विश्व म अपना मस्तक ऊँचा ही करगा। परन्तु हम इसक लिए प्रयत्नशील होना पडगा। जनता आयर्वेदसेवी हमार दशवासी आधनिक चिकित्सक तथा हमारा जनप्रिय शासन—इन सभी को समवत रूप से इस लिय प्रचष्टा करनी पडगी। दश की सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थिति को देखते हुए यह कहना ही पडगा कि आयर्वेद के पुनरुत्थान म प्रोत्साहन दना आज भी परमावश्यक है। इससे न कवल दश की सामाजिक व आर्थिक परिस्थिति म सुधार की आशा की जाती है इसस दश की राष्ट्रीय मर्यादा म भी काफी वद्धि होगी। आज आयर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति घोषित कर हमारा शासन दश की उन सभी परिस्थितियो म सुधार की आशा कर सकता है। मुझ पूण विश्वास है कि हिन्दी को राष्ट्रीय भाषा क आसन पर सुप्रतिष्ठित करन क लिय शासन क समक्ष जितनी कठिनाइयाँ आ रही है—जितनी प्रचष्टा उन्ह करनी पड रही है—आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के आसन पर स्थापित करन क लिए शासन को उतनी कठिनाइयो का सामना नही करना पड़ेगा, हाँ प्रचेष्टा तो करनी ही पडगी। आज हिन्दी क लिए १५ वष का जो समय दिया गया है—मुझ शका है कि उस समय तक सभी कठिनाइयाँ समाप्त हो जायगी। उसक बराबर आयुर्वेद को २५ वष का समय दकर इस दिशा म भरसक प्रयत्न किया जाय तो आयुर्वेद भी राष्ट्रीय गौरव का विषय बन जावगा विश्व म अपना स्थान लकर भारत का मखोज्ज्वल करगा—अपना दश फिरस सुख सम्पत्ति का घर बन जावगा—इसम जरा भी सन्देह नही है।

यह बात सत्य है कि आयुर्वेद क अतल वारिधितल म असख्य रत्न अनादत रूप स अभी भी पड है जिसका ज्ञान हम नही है। मै कई बार कह चका हूँ कि आज तक आयुर्वेद जीवित है—कवल अपन निर्दोष व वीयवान औषधियो के वल पर और आज आयुर्वेद इतनी हीन परिस्थिति म आया है—मुख्यत आयुर्वेदसवियो की विविध खामियो के कारण। परन्तु जो कुछ हुआ है वह तो हो चुका है अब अरण्यरोदन स लाभ ही क्या है। जो कुछ हाथ लग रहा है उसका सदुपयोग कैस हो सकता है—यही प्रधानत विचारणीय है। आयुर्वेद आज कम से कम १ हजार वर्षो स विविध कारणो से आग बढ नही पाया। कवल इतना ही नही उसके मौलिक ग्रन्थादि नष्ट हो गय है उसक सिद्धान्तो का अपवाद छा गया है हम औषधि पहचानन म गलती करत है औषधि निर्माण म विभिन्न माग को अपनात ह हर तरह स हमारी अवनति हो चकी है—और हो रही है। सिफ हमारा आश्रय है बडी-बडी वात कहना शास्त्र की दुहाई दना अपन अतीत इतिहास पर बढावा का ढाक पीटना। आज हम कहत है—हवाई जहाज पाश्चात्य दशो का आविष्कार नही है हमार दशम प्रागतिहासिक यग म पुष्पक रथ था हमार दश म एटम बम बनता था हमार शल्य चिकित्सक मस्तिष्क म शस्त्रोपचार किया करत थ प्लाष्टिक सर्जरी भारतवष स ही पाश्चात्य दश न सीखी है परन्तु य सब सही होत हुए भी अवास्तव है। हमार पूवपुरुष बहुत बड आदमी थ—इस वल पर हम भी वही इज्जत मिलनी चाहिय—यह तो बिल्कुल असम्भव है। आज आयुर्वेद क पुनरुत्थान म इसलिय परकीय सहायता की आवश्यकता है। हमार दश की पचवर्षीय योजना को पूरा करन के लिय विदश स ऋण मागन की आवश्यकता पड रही है। हमार दश म अन्नाभाव मिटान क लिए विदश से अन्न खरीदा जाता है। हमार दश की स्वास्थ्य रक्षा क लिय विदश स औषधियाँ तथा अन्य सामग्री मगाई जा रही है तो आज लुप्ताग आयु

र्वेद की परिपूर्ति के लिय पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान की सहायता लन म हम क्यो शम मालूम होती है यह मरी समझ क बाहर है। मरी समझ म नही आता है कि क्यो हमार नता आयुर्वेद की सच्ची परिस्थिति से जनता व शासन को अन्धकार म रखना चाहत है। जब कि अपन घर म कोई बीमार होन पर उन्ह डाक्टर बुलान म डाक्टरी दवाई खरीदन म शम नही आती तो आयुर्वेद की परिपूर्ति के लिये पाश्चात्य विज्ञान की सहायता लना परमावश्यक है—इस मल सत्य को स्वीकार करन और जनता व शासन क समक्ष आत्मविश्वास क साथ कहन म उन्ह शम क्यो आती है? इसस व आयर्वेद का भला नही कर रह है—यह ध्रव सत्य है। इसस आयर्वेद का उत्थान नही होगा पतन ही होगा—इनम सन्दह नही है। परन्तु साथ ही साथ मै यह भी कह दना चाहता हूँ कि मै पाश्चात्य विज्ञान क सहार आयुर्वेद को परिपूण रूप स विकसित करना चाहता हूँ आयुर्वेद का स्वरूप पूणतया खोकर नही। विवत्तन व विकाश क समय इसके स्वरूप म मामूली परिवत्तन आ सकता है—परन्तु एसे परिवतन का मै कट्टर विरोधी हूँ जिससे आयुर्वेद का स्वरूप इस तरह स परिवर्त्तित हो जाय कि उसे पहिचानना ही असम्भव हो जाय। इस दिशा म पहला कदम तो यह है कि आयुर्वेद म उपलब्ध विषयो का विषयानसार दोहन हो और उस पूणतया आज क युगोपयोगी बनान क लिए कितन परिमाण म बाहरी सहायता की आवश्यकता है इस का सही-सही निर्धारण हो। इसक बिना हमारा आग बढना असम्भव है। बहुत स नताओ का कहना है कि आयर्वेद क शुद्ध स्वरूप की रक्षा करनी चाहिय और आयुर्वेद को आज क युगोपयोगी बनान क लिय निजी अनुसधान द्वारा प्रचष्टा की जानी चाहिय। मुझ खद क साथ कहना ही पडगा कि प्रथम मत अशत तथा द्वितीय मत सम्पूणरूपण भ्रमात्मक है। आज क यग म जहाँ पाश्चात्य जगत अपनी प्रचष्टाओ क द्वारा इतना आग बढ चुका है और हमार दश म भी उसका प्रभाव पर्याप्त रूप स डाल दिया है—जहा हमारा दैनदिन रहन-सहन चिन्तन तक उससे प्रभावित हो चुका है वहाँ आयुर्वेद के शुद्ध स्वरूप की रक्षा पूणतया नही की जा सकती है। उसम समयानुकूल परिवत्तन परमावश्यक है नही तो पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित हमारी जनता उसे सादर ग्रहण नही करगी—बल्कि उसके बहिष्कार की ही प्रचष्टा होगी और निजी अनुसधान द्वारा उसको युगोपयोगी बनाने का स्वप्न तो स्वप्न ही रह जायगा। आज आयुर्वेद की जो परिस्थिति है उस दखत हुए इसको असम्भाव्य रूप से असम्भव कहा जा सकता है। इसको युगोपयोगी बनान तथा पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञानो से टक्कर लन म समथ बनान म जो समय लग जायगा उसक बाद यह दिखाई पडगा कि पाश्चात्य विज्ञान की वत्तमान उन्नति व आयुर्वेद की वत्तमान परिस्थिति म जो अन्तर अभी वत्तमान है उस अन्तर का परिमाण काफी बढ गया है—शायद दसगुना स भी ज्यादा हो गया है। अब तो सरल उपाय यह है कि पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान से आवश्यक सहायता लकर आयुर्वेद को यथाशीघ्र समानातर पर लाया जाय एव युगोपयोगी बनाकर दश की राष्ट्रीय स्वास्थ्य रक्षा का भार लिया जाय। फिर हम निजी अनसधान का प्रचुर अवसर मिलगा और तब हम पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान क मुकाबल म उन्नति क लिय अग्रसर हो सकग। यही है आयुर्वेद क पुनरुत्थान क लिय सरलतम उपाय। इस उपाय को सर्वान्त करण से स्वीकार कर इस ओर प्रगति करना ही सच्च आयुर्वेद सेवियो का कत्तव्य है—धम है।

इस माग को अपनान क लिय आयुर्वेद-स्नातको का महत्वपूण प्रयोजन है। आज आयुर्वेद को यगोपयोगी व राष्टीय स्वास्थ्य रक्षा का भार वहन करन म समथ बनान के लिए आयुर्वेद और पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान के गम्भीर ज्ञान व अनुभव की परमावश्यकता है। मुझ यह कहन म जरा सी भी द्विधा नही हो रही है कि आज क आयुर्वेद-स्नातक इसक अधिकारी नही है—इस क लिय सम्पूण उपयुक्त नही है। इसका कारण मै पहिल कई लखो म बता चुका हूँ। इसक लिय उनकी स्वल्पपरिसर भित्ति साधनो की कमी शिक्षको का अभाव आदि कई कारण है—परन्तु यह सब दखत हुए भी मै आयर्वेद-स्नातको का स्थान अपरिहाय एव विशष महत्वपूण मानता हूँ। आज आयुर्वेद के प्राचीन विद्वान क समक्ष पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान के प्रकाण्ड विद्वान एक कुहलिका क बराबर है वैस ही पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान के पण्डित के पास आयुर्वेद क प्रचण्ड विद्वान एक प्रहलिका क बराबर है। दोनो शास्त्रज्ञो की बात परस्पर म अर्थहीन प्रतीत होती है। व एक दूसर को समझ नही पात। फल यही होता है कि दोनो का सान्निध्य व पारस्परिक चर्चा

विफल हो जाती है। प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे को सन्देह की दृष्टि से देखते है, एक दूसरे को हीन समझते है। पारस्परिक भाव के आदान-प्रदान की सम्भावना ही नही रहती है। ऐसी परिस्थिति मे आयुर्वेद को युगोपयोगी बनाने के लिये पाश्चात्य विज्ञान से सहायता कैसे मिल सकती है—यह विवेच्य है।

दोनो शास्त्रो की विचारधाराओ के आदान-प्रदान मे आयुर्वेद स्नातको का माध्यम ही सर्वश्रेष्ठ उपाय है और इसी मे आयुर्वेद स्नातको का महत्वपूर्ण स्थान है। हम मानते है कि इनमे शास्त्र व व्यावहारिक ज्ञान की न्यूनता है फिर भी आज के युग मे उनका महत्व दोनो शास्त्रो के परम विद्वानो से किसी तरह कम नही है। यह बात अविसवादित रूप से सत्य है कि भूमध्यसागर व लोहित सागर की गम्भीरता स्वेज प्रणाली मे नही है, दोनो की महानता स्वेज प्रणाली से अधिकतर विराट है। दोनो समुद्रो के वर्तमान रहते हुए भी प्राच्य-पाश्चात्य देशो का आवागमन उत्तमाशा अन्तरीप के रास्ते से हुआ करता था—जिसमे काफी समय व धन का अपव्यय होता था। इस असुविधा को दूर करने के लिये स्वेज नहर प्रणाली की खुदाई की गयी थी। अभी-अभी मिस्र देश ने स्वेज नहर को जब बन्द कर दिया तभी उस सयोजक सकीर्ण नहर का महत्व सारे विश्व मे प्रतिभात हुआ था। आज स्वेज नहर का जो महत्व प्राच्य-पाश्चात्य देशो के जीवन सग्राम मे है—वही महत्व आयुर्वेद-एलोपैथी के समन्वय मे, आयुर्वेद को युगोपयोगी बनाने मे, आयुर्वेद को हमारे देश की स्वास्थ्य रक्षा का भार सम्हालने के योग्य बनाने मे, आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति का गौरवमय आसन दिलाने मे और भारतीय चिकित्सा पद्धति को विश्व के लिये आदर्श चिकित्सा पद्धति बनाने मे आधुनिक आयुर्वेद-स्नातको का है। यह सत्य हमारा जनप्रिय शासन, आयुर्वेदप्रेमी जनता व आयुर्वेदसेवी प्राचीन वैद्य सम्प्रदाय जितनी ही जल्दी समझ सकें—जितनी जल्दी वे इस नीति को अपनाने मे दृढसकल्प हो, उतना ही उनका मगल नजदीक आ जावेगा—इसमे सन्देह नही है।

आज आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति घोषित कर उसकी उन्नति मे जुट जाना, केवल भावुकता के दृष्टिकोण से ही नही, राष्ट्रीय, सामाजिक व आर्थिक दृष्टिकोण से भी परमावश्यक है। इस दिशा मे गम्भीर मनन व चिन्तन की आवश्यकता है और इस ओर मै जनता व जननेताओ का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ। भगवान हमे सद्बुद्धि दे—दिव्य आलोक से हमारा पथ उद्भासित करे, हमारा गन्तव्य स्थान सुगम बना दे—यही हमारी प्रार्थना है।

शेषाश] मनुष्य की स्वाभाविक आयु [६५३ पृष्ठ का

अच्छी रहती है अर्थात् मोटा होना ही तन्दुरुस्ती है और खूब खाने-पीने की ही जिन्दगी है, और खा-पीकर ही खूब जिया जा सकता है। परतु अनुभव से और वैज्ञानिक शोध से ये बाते तथ्यहीन सिद्ध हुई है। इन्ही धारणाओ और आदतो के फलस्वरूप ही दुनिया रोगी है और वैज्ञानिक इलाज की सहायता से रोग दूर होने के बदले बढ रहे है। यही कारण है कि अस्पताल और डॉक्टर तथा दवा का धधा खूब बढ रहा है।

कोई भी मशीन जितना अधिक चलेगी उतनी जल्दी उसकी आयु पूरी होगी। मनुष्य शरीर के अगो का भी यही हाल है। ।जितना अधिक भार इन पर दोगे, ये थक कर बैठ जायेंगे। नतीजा होता है रोग, तथा कडवी जहरीली दवाओ से और भी बिगडकर पुराना रोग, आजीवन रोग और मृत्यु। रोग दूर करने या ताकत बढाने मे दवा का न सम्बन्ध है, न जरूरत।

अपनी प्रकृति अनुसार पुन सयम और सुधार करने से, शरीर के अगो की शुद्धि करने और उन्हे आराम देने तथा अनेक प्रकार की साधना करने से शक्ति जाग्रत होकर उम्र बढ जाती है। जब भूख नही लगती, और खाने से ताकत नही आती, तो उपवास और शुद्धि के साधनो से ताकत आयेगी। यदि आप के जीवन मे रस न हो, दवाओ से निराश हो चुके हो तो दवाओ का त्याग कर बिना इलाज की पद्धति को आजमाइए और नवजीवन प्राप्त कर उम्र बढ़ाइए।

Vitamins at our Door

Dr A Lakshmipathi, B A., M B & C M, Bhishagratna

For the last one or two generations there has been wide propaganda regarding the existence of Vitamins in the foodstuffs of man and animals and the diseases caused by the deficiency of these factors For want of a better name these substances are called Vitamin A Vitamin—B C D E F G H K L M P and so on and vitamin B is further subdivided as Vitamin B^1 B^2 B^3 B^4 B^5 and so on

We may translate the word Vitamin as Satwam or Sathu in Malayalam (Compare Guddoochi Satwam Abhraka Satwam etc which in Ayurveda mean the essence of a substance)

Vitamins are defined as Non amino acid organic compounds derived from exog nous sources supplying Hormones Enzymes and other substances controlling the activities of the several organs and tissues in the body Deprivation of certain Vitamins to animals or human beings produces certain diseases such as Scurvy Ricketes Beri Beri Pellagra and Sterility These are called deficiency diseases Vitamin deficiency may be caused by

1 deficiency of the vitamins in food

2 failure to absorb vitamins from food by the body and

3 conditions in which the vitamin needs are increased by diseases or unhealthy habits and surroundings

For want of time I cannot go into these details here

This is a subject which is now taught even to children of elementary schools but the fact is that they are not told that these vitamins are at our door and that they are easily available to the villager if not to the people living in urban areas under modern civilised conditions A plot of land measuring only 5 cents or 50 ft ×50ft is enough to produce fresh green vegetables which provide almost all the vitamins in a fresh state This is really the most suitable remedy for prevention of the deficiency diseases In America I am told that tomatoes are cultivated in the open terraces on the house tops in flower pots and basins

In Ayurveda detailed instructions are given under the head of Pathyam which means diet in Health and Disease of Man Woman and Child The traditional knowledge is still preserved in the homes through the women members of the family This is well worth our careful study and research in Vitamins now propounded by the modern scientists

The best sources of all the Vitamins in a well balanced diet—

Constituents of well-balanced Diet

Shastikaan saali mudgaancha
Saindhavaamalake Yavaan
Aantariesham payah sarpih Jaangalam
Madhucha abhyaseth

(Charaka Sootra Ch v)

The above four lines of Charaka contain in a nut shell all the constituents of a well balanced diet as determined by modern experts

(Meaning Shastika a 60 day s crop of rice growing in dry lands) and Saali (Red Rice) Green Gram Rock Salt Goose Berry (Aamalaka) Yavaa (Barley) Rain water Milk Cow s Ghee Flesh of animals living in forests and Honey should by habit be adapted in general diet

1 Rice Sashtika and Saali varieties of paddy are examples of the carbohydrate food Raktasaali (Red Rice) which is now classed as glutinous rice is specially recommended The red covering of the rice was known to possess special nutrient properties even in the days of Charaka and Susruta

2 Mudga (Greengram) which represents the protein content of food is considered the best of all pulses Maasha (Black Gram) which was known to be more nutritious was not preferred because it was comparatively too hard to digest—Guru Though both are rich in protein Laghu or easily digestible proteid Greeng am has been preferred to a heavy one as being more easily digestible

3 Saindhava Rock salt represents the mineral content of our food Of all salts Saindhava is preferred because it possesses cooling qualities as compared to others Chemically analysed it is now known to possess peculiar oxidising properties which the sea salt does not possess Even in cases where common salt is prohibited certain amount of Saindhavalavanam is permitted according to Ayurveda

4 Aamala Emblic Myrobalan or Embl ca Officinalis (Indian Gooseberry Nellikkai) represents the vitamin content of a balanced diet in addition to milk and vegetables Ayurveda considers Aamalaka as the best of fruits Recent researches show that Aamalakaas is rich in Vitamin C and that one Aamalakaa is equal to 3 Oranges I shall speak about it again

5 Yava (Barley) again represents the carbohydrates It is preferred to wheat particularly an invalid diet It is easily digested and is a diuretic Wheat is however proportionately more nutritive and considered to be more Saatwika

6 Aantharikshama Rain (Water One)—can not think of any water better than rain water as the safest and best drink Although Ayurveda describes eighty kinds of wines made of fruits and flowers etc they are not recommended in the list of articles for diet

7 Payah (Cow s Milk) represents an all round food containing proteids carbohydrates fats minerals and vitamins and all that is requird for man from infancy to old age Milk is predominently a Saatwika Food

8 Sarpi (Cow s)Ghee represents not merely the fat content but also the intellect building principle The superiority of Cow s Ghee over other fats both vegetarian and animal is very beautifully described in Charaka Sootra Chap 27 222 29 Smrithi Buddhi Agni Sukra Ojas Kapha Medo Vardhanam Ghee increases memory intellect digestive power Sperm Ojas (Lustre) Kapha (here strength) etc Ghee improves the intellectual power in addition to physical strength

Oil is classed as Thaamasa—intellect dulle ning food whereas Cow s Ghee is classed as Saatwika i e intellect promoting food

9 Jaangala is flesh of animals living in dry jungles This represents the animal proteid Here again flesh of animals living in dry jungles is considered as light and easily digested compared with that of other animals

10 Madhu or Honey is glucose in a liquid form In addition to ts carbohydrate and vitamin content honey is recommended as kaphahara and because it is collected from numerous plants it is said to possess certain essences of those plants

In one Sloka of four lines so much information is condensed The most important point is that the food should not only be nutritive from the physical standpoint but it should be such as would develop the intellectual and spiritual faculties as well

If a careful research is made many new points may be made out which will be of immese value to the modern scientists For example articles of diet are said to change their properties by (1) the natural constitution (Prakriti)—Greengram and Blackgram are different by nature though both are pulses (2) Karana changing qualities of a substance as by a chemical process e g milk and curd (3) Samyoga (Combination) (4) Raasi (Quantity) (5) Desa (Place) (6) Kaala (Time) (7) Upayoga means rules regarding the use of food depending upon the indications of digestion etc (8) Upayogta-person taking the

food according to the individual susceptibility of temperament

Food that has all the Six Rasaas (Tastes) in it, is the best Food that has only one or two tastes like sweet or sour is condemned

"*Tatra sarwarasam pravaram*
Avaramekarasam" (Charaka vimaana)

Betel-leaf juice which is used by the Vaid yaas an Anupaanam or Vehicle for administering medicines, is now known to be a rich source of Vitamins

A person in good health does not need any vitamin supplements Crude sources of vita mins such as Bran, green Vegetables, Fresh Milk, Butter, Tomatoes, Citron, Oranges Yeast, etc , are often more efficacious than the pure or synthetic tablets and mixtures now introduced into the market Even Tamarind and Chillis which enter largely into our dishes are now reported to contain certain vitamins Almonds, Apples, Beans, Brinjals Bran Bannanas Cabbage, Cawli flower, Chillies, Citron Carrot, Cocoanut, Cotton seeds, Cucumber Drumstick, Embryo of seeds, Garlic, Grapes Guava, Gourds, Grams Green leaves Jack fruit, Lady's finger, Lettuce, Lemons, Mangoes Onions, Oranges, Pepper (Raw), Pine Apple, Plantains, Potatoes, Pumpkin Reddish Spi nach (Vasela keerai), Sweet potatoes Tama rind, Tomatoes Tapioca, Water Melons Yams, Yeast etc are all sources of Vitamin that are easily available for us in India

The quantity of the Vitamins that is essential is so small that is measured in units, which are one millionth of a gram

After all, in a tropical country like India where we have abundance of sunlight, we need not go in search of any of these vitamins, if only we realise that we have these vitamins at our door

Aarogyam Bhaaskaraat Itchchet

"The sunlight is the storehouse of Vitamins."

Robert Hutchinson, an expert in Children's Diseases, says (British Medical Journal, 1934) that the importance of vitamins is over-estimated by the public This is due to the luring advertisements of huge vested interests who trade in the name of Science and flood the market with artificial preparations and exploit the public with their extravagant claims If the food contains a reasonable quantity of milk, ghee (animal fat), and green vegetables, the vitamins may be left to look after themselves The glamour of the Western Institutions is making us blind to the rich treasures of Vitamins that we have, in the luxuriant vegetation that grows abundantly around us

Our patients are often frightened by the modern doctors, whose ignorance of our Sciences is colossal but who pretend to know everything like the proverbial mother who threatens her child by telling her stories of an invisible Raakshasa or Beggar woman I shall give a few examples of the Vitamins at our door

The Indian Gooseberry—Emblica Offici nalis—Emblica Myrobalan—Aamalaki—Nellikkai—is perhaps the richest natural source of Vitamins C Its fresh juice contains nearly 20 times as much vitamin as organge juice and a single fruit is equivalent in Vitamin C content to one or two orange Though heating and drying of fresh fruits or vegetables usually tends to the destruction of most or all of the Vitamin C originally present, Aamalaka or Nellikkai is an exeption among fruits because of its high vital Vitamin-C content and because it contians substances, which practically protect the Vitamin from destruction by heating or drying Its juice is strongly acid, and the acidity has a protective action on Vitamin-C Hence, it is possible to preserve Amla without losing much of the Vitamin-C Fresh Aamala was found to be most effective in curing Scurvy, when an outbreak of the disease occured in 1940 in the Hissar Famine Area Tablets made from Aamalaka powder contain Vitamin-C in concentrated form, which is a convenient method of preserving the fruit for future use As a matter of fact, such tablets

were freely supplied to the soldiers during the last war Nadkarni-Vol II—467

A few years ago, I saw a girl aged 7 or 8 years with dark teeth decaying upto the roots She was the daughter of a Senior Nurse of the Governor's Staff Hospital at Madras The cause of the rotting of the teeth was eating of chocolates and sweets without having anything to chew well I prescribed for the girl, bits of sugarcane to chew daily for 2 or 3 months The mother strictly followed the advice and at the end of 2 months I was glad to find the girl with pearl white teeth coming out from the bases of the teeth Even in ancient days, Ayurveda found out the difference between chewing the sugarcane and eating Sugar

What is now required is not want of know ledge of Vitamins but the proper application of our resources actually in the dietary of our people

3 Even Green grass which gets its store of Vitamin from Sun light has a lesson to teach us There is a village called Garikipaadu (literally Grass Village) in Andhra Pradesh This village derived its name from a delicious Chutney that an old women prepared and made a feast of it to a Maharajah who visited the place once upon a time, and granted the village as an Inaam (Gift) to her

4 "*Takram Sarascha Durlabham*"

Ayurveda says that Takram or Butter milk is the Amrita of Man It is said to prolong Human Life Nectar (Amritam) is avai lable to Devas, but Takram is difficult for celestial beings even like Indra to procure It is a poetical way of praising the qualities of Butter-milk Butter milk properly prepared contains a store of all Vitamins that are needed for men Personally I use daily about 1½ seers or 48 ozs of Milk made into curd and churned to Butter-milk with addition of one fourth of water I take this 5 or 6 times during day and night along with my meals and separately I believe that this is partly responsible for the robust health that I enjoy at the age of 76 In Addition to this, I take long walks and have some physical exercises and massage to the whole body regularly I use fresh vegetables and green leaves cultivated by myself in the small kitchen garden in the compound of my residence I work in the field daily for about half an hour and water the plants myself All this is necessary in order to make use of the Vitamins available to us in our food

On the advice of an expert committee on Ayurveda of which I was the Chairman, the Government of Andhra Pradesh ordered that topics relating to Ayurveda and domestic medicines should be included in the syllabus for Girls in Secondary Schools in the State (Vide R C No 1367 E 1/66 dated 17 12 56) The Director of Public Instruction has been instructed to implement the recommendations as early as possible

I shall be glad if the Governments of all the other States, including the Kerala State would take similar action in the matter of introducing suitable instructions of the subject of Vitamins and their availability at Our Door, instead of merely repeating parrot-like, that the foreign advertisers supply us with attractive advertisements

We in India have been brought up to look for inspiration from the West We have past glories of our own and I do not think for a moment, we will ever rise to the full height of Nation hood until we stop looking for inspiration from the West and unless we start seeking inspiration in the history of our own land and in its glories of the past

द्रविड-सिद्धसम्प्रदाय

आचार्य सोमदेव शर्मा सारस्वत, साहित्यायुर्वेदाचार्य, बी० ए०, ए० एम० एस०

उत्तर भारत के आर्य-रससिद्धो की भाँति, दक्षिण भारत के द्रविडो मे भी रससिद्ध हुए हैं जो सिद्ध कहलाते हैं और इनका सम्प्रदाय द्रविड-सिद्धसम्प्रदाय कहलाता है। इनका साहित्य द्रविड भाषा के ग्रन्थो मे है। इनके रस-चिकित्सा के प्रयोग भी बहुत चमत्कारी है। द्रविडदेश मे प्राप्त दिव्यौषधियो के द्वारा ही यह पारद के स्वेदनादिवेधन-कर्मसस्कार करते हैं।

द्रविडसिद्धसम्प्रदाय की गुरुशिष्य परम्परा

१ **प्रथम मत**—इस मे दो मत प्रचलित है—जिस प्रकार भारत के शैव रससिद्ध और नाथ रसविद्या (रसतन्त्र) का प्रवर्तक 'शिव'[१] को मानते हैं उसी प्रकार द्रविड-रससिद्ध भी 'शिव' को ही रस-विद्या का प्रवर्तक मानते हैं। इस मत मे शिव से पार्वती ने सिद्धसम्प्रदाय की शिक्षा प्राप्त की। पार्वती से नन्दी ने, नन्दी से अश्विनी ने, अश्विनी से विश्विनी ने, विश्विनी से धन्वन्तरि ने, धन्वन्तरि से अगस्त्य ने, अगस्त्य से पुलस्त्य ने, पुलस्त्य से तेरयर् ने, तेरयर् से यूहिमुनि ने सिद्ध-सम्प्रदाय की शिक्षा प्राप्त की। रससिद्धो की इस गुरुशिष्य परम्परा का उल्लेख यूहिमुनि ने अपने 'वादसाहस्नी' ग्रन्थ में किया है।

२ **दूसरा मत**—ऐसा भी प्रसिद्ध है कि रससिद्ध नन्दी से श्री मूलनाथ (आदिम, तिरुमूलि) ने सिद्ध-सम्प्रदाय की शिक्षा प्राप्त की थी और इस सिद्धसम्प्रदाय मे १८ सिद्ध प्रसिद्ध हुए हैं। उनकी गुरुशिष्य परम्परा आगे लिखे अनुसार है।

(१) नन्दी, (२) श्री मूलनाथ (आदिम, तिरुमूलि), (३) कालाङ्गनाथ, (४) भोग, (५) कङ्कण, (६) अगस्त्य, (७) पुलस्त्य, (८) भुशुण्ड, (६) रोममुनि, (१०) धन्वन्तरि, (११) शैट्टमुनि (घोडाचूलि), (१२) मत्स्य-मुनि, (१३) कण्व, (१४) पिङ्गिनाक्कीश, (१५) गोरक्ष, (१६) तेरयर्, (१७) यूहिमुनि, (१८) इडेक्काडर।

१—रसविद्या शिवेनोक्ता दातव्या साधकाय वै ॥
(रसरत्नसमुच्चय, अ ३।२७)

द्रविडसिद्ध सम्प्रदाय का सिद्धान्त

दक्षिण देश के द्रविड सिद्धसम्प्रदाय के रससिद्धो के मत मे यह सम्पूर्ण ससार ३ भागो मे विभक्त है। यथा—(१) धातुवर्ग, (२) मूलवर्ग, (३) जीववर्ग।

१—**धातुवर्ग**—धातु २१२ है और वह निम्नलिखित ६ वर्गो मे विभक्त है। (१) लवणवर्ग–२५, (२) पाषाण-वर्ग–६४, (३) उपरस–११२, (४) लोह–६, (५) रस–१, (६) गन्धक–१, सर्वयोग–२१२।

धातुवर्ग के ६ वर्गो का परिचय

(१) **लवण**—जो पदार्थ जल में डालने से विलीन हो जाते है, अग्नि पर डाले जाने से चटक कर ऊपर को उछलते है फट जाते है—धुआँ देते है और जलते है, वह लवण कहलाते है। इनकी सख्या मे २५ है।

(२) **पाषाण**—जो पदार्थ अग्नि पर डालने से धुआँ देते है और पानी मे विलीन नही होते हैं, वह 'पाषाण' कहलाते है। इनकी सख्या मे ६४ है।

(३) **उपरस**—जो पदार्थ जल मे विलीन नही होते और अग्नि पर डालने से जलते भी नही है, न धुआँ देते है और न चटक कर ऊपर को उछलते हैं, वह 'उपरस' कहलाते है। इनकी सख्या ११२ है।

(४) **लोह**—जो पदार्थ अग्नि पर रखने से पिघल जाते हैं, स्थिर रहते है और जल मे विलीन नही होते है वह लोह' कहलाते है। इनकी सख्या ६ है।

(५) **रस**—मृदु अग्नि पर रखने पर भी उडनेवाला, अणु आकार रूप मे विभक्त होनेवाला, सात कचुक दोषो से आवृत और पौरुष सत्व से युक्त पदार्थ 'रस' कहलाता है। इसकी सख्या १ है।

(६) **गन्धक**—जो पदार्थ अग्नि पर डाले जाने पर धुआँ देता है, जलता है और भाप बन कर उडता है तथा जल मे विलीन नही होता है एवं स्त्रीसत्व संयुक्त होता है वह 'गन्धक' कहलाता है। इसकी सख्या १ है।

२—मूलवर्ग—इसका दूसरा नाम 'ओषधिवर्ग' भी है। यह मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त, कषाय रस के आधार भेद से ६ प्रकार का होता हुआ भी फिर निम्नलिखित रूप से ६ प्रकार का होता है—(१) वृक्ष, (२) गुल्म, (३) लता, (४) रस, (५) नीरस, (६) सक्षीर।

उत्पत्ति की विचित्रता से इस मूलवर्ग (ओषधिवर्ग) ओषधियो की सख्या ३३०० हैं।

३—जीववर्ग—यह चार प्रकार की योनियो मे छ विशेष बीजो से उत्पन्न हो कर चौरासी लाख प्रकार का होता है।

रसशास्त्र में धातुवर्ग की उपयोगिता

रसशास्त्र मे इन वर्गो मे से धातुवर्ग का ही अधिकता से उपयोग होता है। इस धातुवर्ग के भेद स्वरूप लवण वर्ग आदि प्रत्येक वर्ग का पृथक्-पृथक् स्वभाव और विशेष गुण निश्चित होता है। द्रविड-सिद्धसम्प्रदाय के रससिद्ध इनको शरीर के लिये उपयोगी बनाने के लिये, इनके स्वभाव और गुण के परिवर्तन के लिये प्रयत्न करते है। जैसे लवणवर्ग, जल मे विलीन होनेवाला और अग्नि पर डालने पर चटक कर ऊपर को उछलनेवाला होता है। रससिद्ध अपने प्रयत्न से इस वर्ग की इन दोनो विशेषताओ मे परिवर्त्तन करते हैं अर्थात् उसको जल मे अविलेय एव अग्नि पर रखने से पिघला कर जल के समान तरल बनाते है। पाषाण वर्ग, जो कि अग्नि पर रखने पर धुआँ दे कर जल कर नष्ट होता है और जल मे विलीन नही होता है, उसको अग्नि सहन करनेवाला एव जल मे विलीन होने वाला बनाते है। इसी प्रकार अग्नि पर रखने से क्षीण न होनेवाले एव जल म विलीन न होनेवाले उपरसो को उनके विपरीत गुणवाले लवणवर्ग के स्वरूप मे परिवर्तित करते है और धातुओ का मारण और क्षारीकरण द्वारा स्वरूप बदलते है। धातुओ के मारण मे ओषधियो का उपयोग होता ही है और इन ओषधियो में भी चन्द्र आदि ग्रहो एव पुष्य आदि नक्षत्रो के सम्पर्क द्वारा उत्तम एव विशिष्ट गुणो का उत्पन्न होना पाया जाता है।

इस प्रकार रससिद्ध पुरुष धातुओ के स्वभाव एव गुणो के परिवर्त्तन के द्वारा अधम धातुओ को उत्तम धातु बनाते है और उनके आभ्यन्तर प्रयोग द्वारा नित्य क्षीण होने वाले शरीर को चिरस्थायी एव दृढ बनाते है। धातुओ के स्वभाव एव गुण मे परिवर्त्तन हो जाने से उनका सरलता से शरीर मे क्रामण हो जाता है। इस विनाशशील शरीर को चिरस्थायी एव नीरोग बनाने की कामना करनेवाले सिद्ध पुरुषगण पारद को, स्वेदनादि-वेधसस्कार पर्यन्त १८ सस्कारो से सस्कृत होने पर, इस कार्य के लिये उपयोगी जान कर, उसका शरीर पर प्रयोग करने से पहिले उसकी धातुवेध द्वारा परीक्षा करने मे प्रवृत्त हुए। इस कार्य को करने मे उनका मुख्य उद्देश्य यह था कि यदि यह १८ सस्कारो से सस्कृत पारद ताम्र-वग आदि धातु को वेध कर स्वर्ण और चाँदी के रूप मे परिवर्तित कर देगा तो फिर यह शरीर पर प्रयोग किये जाने पर इस विनाशशील शरीर को भी चिरस्थायी बना देगा। धातुवेध द्वारा स्वर्ण और चाँदी निर्माण-कार्य तो गौण था, क्योकि वे इसको शरीर-धारण एव जीवनोपयोगी आहार और वस्त्रादि के सरलता से प्राप्त करने मे सहायकमात्र ही समझते थे। उन सिद्ध पुरुषो ने अभ्रक, हरिताल, मन शिला, स्वर्णमाक्षिक आदि के उपयोग से पारद मे धातुवेध शक्ति उत्पन्न की और फिर उस पारद से अनेक प्रकार की गुटिका बना और उनको मुख आदि मे धारण कर सब प्रकार की सिद्धियाँ भी प्राप्त की थी। धातुओ की खानो के अन्वेषण करने के लिये पर्यटन करते हुए इन सिद्ध पुरुषो ने, किसी-किसी स्थान के विशिष्ट जल और विशिष्ट ओषधियो का धातुओ पर प्रयोग कर और धातुवेध करने मे उनकी उपयोगिता को देख कर कृत्रिम धातु-निर्माण का भी प्रयत्न किया था और इस कार्य मे उन्होने सफलता भी प्राप्त की थी। कभी-कभी धातुओ मे कुछ पदार्थों के सयोग और विश्लेषण द्वारा होनेवाले परिवर्त्तनो का ध्यानपूर्वक सतत निरीक्षण कर बनाई हुई कृत्रिम धातु ही रसायन कार्य मे उनको अधिक उपयोगी प्रमाणित हुई और कभी कृत्रिम धातु से स्वाभाविक धातु अधिक श्रेष्ठ ज्ञात हुई तो फिर उस धातु की खान को ढूँढने का भी उन्होने प्रयत्न किया था।

यह सिद्ध पुरुष तान्त्रिक भी होते थे। इसलिये उन्होने अपने ग्रन्थो मे तान्त्रिक परिभाषाओ का भी उपयोग किया है जिससे वे ग्रन्थ जटिल एव दुरूह हो गये है। इसके अतिरिक्त आजकल उनकी गुरु-शिष्य परम्परा भी छिन्न-भिन्न हो गई है। इस कारण उनके ग्रन्थो का प्रचार भी अब नही रहा है, तथापि दक्षिण भारत मे उन ग्रन्थो के ज्ञाता द्रविड सिद्ध-सम्प्रदाय के कुछ वैद्य अब भी विद्यमान हैं। यदि इनकी सहायता से शैव एव नाथ सम्प्रदाय के रसशास्त्रज्ञ, 'रसशास्त्र' का प्रतिसस्कार करे तो भारतीय रसशास्त्र अत्यन्त समुन्नत हो सकता है।

ओज—एक आयुर्वेदीय विवेचन

वैद्य डाह्याभाई केशवलाल पाठक

'सचित्र आयुर्वेद' मे "ओज" विषय पर कई विद्वानो ने महत्त्वपूर्ण विवेचन किए हैं, जिनमे पूर्वपक्ष की स्थापना की गयी है। यहा पर मै सिद्धान्त पक्ष मे रहकर पर और अपर भेद की व्याख्या करता हूँ। पहले तो चरक, सुश्रुत, और वाग्भटाचार्य ने पर-अपर के भेद बताए बिना जहाँ-तहाँ ओज शब्द की और रस शब्द की व्याख्या की है। लेकिन यदि रसको ओज मानते है तो फिर तीनो आचार्यो ने ओज शब्द क्यो रखा ?

चक्रपाणि और डल्हण ने पर-अपर जो भेद बताए है यह मेरी बुद्धि मे गलत नही है। यदि दोनो आचार्य ग्रथो का दोहन कर दो भेद न बताते तो सभी आयुर्वेद पढनेवाले निराश याने सशयदोलारूढ हो जाते। मै तो दोनो आचार्यों का उपकार मानता हूँ कि उन्होने आयुर्वेद मे ओज को समझाने के के लिये सरलता कर दी है।

'तिन्दव बिन्दव' तो सिर्फ टीका की बात है। लेकिन विवेचक अपर ओज तो अन्नका "पोषक रस" है। और यह रसका प्रमाण लिखा है कि "नवाञ्जलय पूर्वस्याहारपरिणाम धातो य रस इति आचक्षते" च शा ७-१५। लेकिन वे तो 'तिन्दव बिन्दव' कहकर सिद्धान्तपक्ष के 'अर्धाञ्जलि' श्लैष्मिकस्यौजस' च. शा. ७-१५ नामके पर ओजमे पड गये। क्योकि "श्लेष्मिकस्यौजस' सिद्धान्तपक्ष का पर ओज है।

अब मैं दो प्रकार के ओज दिखाने की कोशिश करता हूँ। "पुष्यन्ति त्वाहाररसाद्रसरुधिर मासमेदोऽस्थिमज्जा-शुक्रौजासि" च सू २८,४। यहा "रसाद्रस" दो रस शब्द है। लेकिन लेखक ने "आहार-रस-रुधिर" लिखा है। तो क्या उन्होने अपना पूर्वपक्ष का समर्थन करने के लिये लिखा है ?

"पुष्यन्तित्वाहार रसाद्रस" यह सिद्धान्त पक्षका रसा-द्रस अपर ओज है और "मज्जाशुक्रौजासि" यह भी सिद्धान्त पक्षका पर ओज है। यहाँ दो भेद साफ-साफ दिखाई देता है। यदि ऐसा न होता तो "यत्सारमादौ गर्भस्य यत्तद्गर्भरसाद्रस सवर्तमान हृदय समाविशति यत्पुरा' च सू ३० ऐसा क्यो लिखता। यह भी पर ओजके पक्ष मे समर्थनरूप है, जो शुक्र के साथ प्रथम गर्भाशय में जाता है। रस ओज कैसे हो सकता है, यह यदि साबित भी कर लें कि एक ही ओज है जो शुक्र के साथ मे है तो "अष्टमे मासि रसहारिणीभि सवाहिनीभि मुहुर्मुहुरोज परस्परत आददत्ते गर्भस्यासपूर्णत्वात्" च शा-४-२४। यह उनका दूसरा अपर ओज और सिद्धान्त पक्षका अपर ओज है। यदि दो ओज न होता तब गर्भ के प्रारम्भ मे और गर्भ के अष्टम मास मे आचार्यगण ओज की व्याख्या न करते। वैसे मुझे तो क्या , लेकिन आम जनता को भी पर और अपर दो भेद दिखाई देता है। प्रथम शुक्र के साथ "पर ओज" और गर्भावस्था म अष्टमे मासे "अपर ओज"।

अब यदि रस को ही ओज मानते है तब रसक्षय के और ओजक्षय के लक्षण अलग-अलग क्यो बताये गये। जैसे "घट्टने सहते शब्द" "बिभेतिदुर्बलोऽभीक्ष्ण" आदि च सू १७।

ओज की तीन विकृतियाँ व्यापत्, विस्रसन और क्षय एक ही प्रकार के ओज मे कैसे समन्वित हो सकती हैं ? मेरे खयाल म विस्रस अपर ओज मे , व्यापत् पर ओज में और क्षय दोनो प्रकार के ओज मे सभावित है। क्योकि परिभ्रमण करनेवाले अपर ओज का स्राव हो सकता है और उस ओज मे व्यापत्-विकृति असभावित है, क्योकि अपर ओज परिभ्रमणशील है। जब पर ओज स्थायी है, तो उसम व्यापत्-विकृति हो सकती है। जब कि क्षय, विकृति दोनो प्रकार के ओज मे हो सकती है।

ऐसा बताया गया है कि अन्न का रस प्राणवायुयुक्त होकर सारे शरीर मे घूमता है और पोषण करता है। इसका कुछ बचता ही नही। क्या उससे आगे रस का कुछ नही होता ? इतना ही रस तैयार होता है कि कुछ बचता ही नही ?

लेकिन मेरे खयाल मे अन्न का रस प्राणवायुयुक्त होकर सारे शरीर मे घूमता और पोषण करता है। तब वह रस अपर ओज माना जाता है, और जब पोषण करते-करते गाढा बन जाता है, तब पर ओज की सज्ञाको प्राप्त

करता है। इसी से ओज के लक्षणो मे कहा है कि "ओज सोमात्मक स्निग्ध शुक्ल स्थिर सरम् विवक्त मृदु मत्स्न च प्राणायतनमुत्तमम्।" इस तरह से ओज को स्थिर भी कहा है और सरम् भी कहा और इन दोनो प्रकारके ओज को "हृदयस्थमपि देहस्थिति निबन्धनम्" "देह सावयवस्तेन व्याप्तो भवति देहिनाम्" कहा है। इससे यह पता चलता है कि ओज हृदय मे और सारे शरीर मे भी है।

प्रमेह के दूष्यो मे भी "मज्जारसौज" बतलाया है न कि सिर्फ ओज। ओज और रस, अपर ओज और पर ओज दोनो दूष्य है।

"तत्र रसादीना शुक्रान्ताना धातूना यत्पर तेजस्तत्खलु ओज तदेव बलमित्युच्यते" 'देह सावयवस्तेन व्याप्तो भवति देहिनाम्"

यहाँ साफ-साफ बताया गया है कि 'शुक्रान्ताना परधातु' "पर ओज" और लिखा है कि "हृदयस्थम् पर ओज" और व्यापी अपर ओज हृदय मे रहनेवाला पर ओज जिसको मै Pericardial Fluid कहता हूँ। और अपर ओज को मै Serum Albumin मानता हूँ।

यह Serum Albumin और Pericardial fluid दोनो अपने पर-अपर ओज के बराबर मिलते है।

अपर ओज का प्रमाण साफ-साफ लिखा है "नवाञ्जलय" और लेखक ने तो बिन्दव की जगह तिन्दव रखने को कहा है। वह तो हमारे पर ओज "श्लेष्मिकस्यौजस अर्धाञ्जलि" च० शा० ७-१५ उसका हुआ तो उन्होने ऐसा क्यो लिखा ?

'ओज' पाश्चात्य मतवाले नही मानते, लेकिन जो दो भेद से ओज की कल्पना मिलती है वैसी ही कल्पना पाश्चात्य फिजीयोलोजी मे है। जैसे सीरम आल्ब्युमीन रक्त म बताया है। जैसे—

Three proteins are usually discribed as existing in the plasma of circulating blood, namely, fibrinogan, serum globulin and serum Albumin.

अब यह पता चलेगा कि आहाररस का रस—अपर ओज रक्त मे भ्रमण करता है। लेकिन पहले अपर ओज को याने आहार ओज को Nutrient element कहा जाता है और बाद मे गाढ़ा होने पर serum Albumin कहा जाता है। जो रक्त मे घूमता है—"व्यापि" और हृदय मे भी कायम रहता है—"हृदयस्थम्"। देखिये—

Serum Albumin occurs in blood plasma and blood serum, in lymph, and in the different normal pathological exubations found in the body Such as pericardial liquid, hydrocele fluid

यह सिरम अल्ब्युमिन रक्त मे भी है और पेरिकार्डिया मे भी है। पेरिकार्डिया हृदय के रक्षण के लिए उसके चारो ओर होती है जिसमे पेरिकार्डियल लिक्विड कायम रहता है। इस को पर ओज मान लेने मे कोई हर्ज नही है।

इस तरह मै दो ओज मानता हूँ। आयुर्वेद में ओज को किसीने भी प्रत्यक्ष नही किया। लेकिन दोनो ओज के क्षय लक्षण मिलाने से मिल सकते है। जैसे Serum Albumin रक्त मे है और Pericardial रक्त का Serum Albumin भ्रमण करता है और Pericardium हृदय मे कायम रहता है, याने Pericardium में रहता है।

यदि चरकादि आचार्यों ने पेरिकर्डियम् का डिसेक्शन किया होता तो वे जरूर कहते कि पर ओज पेरिकार्डिया मे रहता है। लेकिन चरकादि ऋषिगण आप्त और अनुमानको मानते थे और उनका अनुमान सच्चा भी है कि हृदय पेरिकार्डियम् ही है। दोनो मे कोई फर्क नही है।

इस ओज को प्रत्यक्ष साधनोवाले भी इन्कार नही कर सकते। हमारे ऋषियो का पर-अपर ओज ही हृदय की गतिकारक माना जायगा, वह दिन अब दूर नही है। आपको दो प्रकार का ओज स्पष्ट दिखाई देगा। इस पेरिकार्डियल लिक्विड का प्रमाण भी "अर्धाञ्जलि" याने १ से २ औस बताया है।

आज का पश्चात्य सिद्धान्त भी यह कहने मे असमर्थ है कि हृदय क्यो चलता है। लेकिन अपने आचार्यों ने साफ-साफ बाताया है कि 'यन्नाशे नियत नाशो यस्मितिष्ठति तिष्ठति' निष्पद्यन्ते यतो भावा विविधा देहसश्रया"। इस से साफ-साफ पता चलता है कि दोनो प्रकार के ओज से शरीर की हृदयादि गति चालू रहती है। ओज को बल ही कहा है याने ओज बल नही लेकिन ओज की शक्ति ही बल है। ओज को प्राणायतन भी कहा है। मैने पर ओज मे व्यापत-विकृति और क्षय-विकृति बताई है। इस तरह पाश्चात्य सिद्धान्त में व्यापत-क्षय, जैसी दो विकृतियाँ

बताई है। इसके लक्षण भी अपने क्षय, व्यापन्न-विकृति जैसे ही हैं। जैसे (१) Pericarditis Acute, (२) Pericarditis latent और तीसरी विकृति विस्रस भी अतिस्रावजनक रोग मे बताई है जिसमे Serum Albumin बह जाता है।

शरीर का रक्षण-पोषण और जीवित रखने का कार्य हृदय से ही होता है। उस हृदय के रक्षण के लिए पेरिकार्डियल लिक्विड रखा गया है, जिसको मै पर ओज मानता हूँ।

"हृदि तिष्ठति यच्छुद्ध रक्तमीषत् सपीतकम्' च सू १७ —याने हृदय के ऊपर रहनेवाला (Pericradial) और "प्रथम जायते ह्योज शरीरेऽस्मिन् शरीरिणाम् सर्पिवर्णं मधुरस लाजगन्धि प्रजायते" च सू १७। यह है आपका अपर ओज और सिद्धान्तपक्ष का भी अपर ओज। जिस तरह अन्नका रस (oxygenated) होकर "सर्पिवर्णम् मधुरसम्" हो जाता है। बाद मे जब शरीर का पोषण करते - करते बचता है तब ओज का वर्ण "रक्तमीषत् सपीतकम्" हो जाता है। तब इसे पर ओज की सज्ञा प्राप्त होती है।

अन्न का रस और रक्त ओज है, यह बात बिलकुल गलत है। लेकिन अन्न का रस (oxygenated) होने के बाद जो स्थिति प्राप्त करता है, वह अपर ओज है न कि अन्न का रस। और वह अपर ओज रक्त आदि धातुओ का पोषण करता है। फिर उस रक्तको ओज 'प्राणायतनमुत्तमम्" कैसे माना जाय क्योकि खुद रक्त अपर ओज से पोषण प्राप्त करता है।

मैने भी एक ही प्रकार का ओज मानने की कोशिश की थी लेकिन जब ओज के 'स्थिर' और "सर" दो प्रकार के भेद देखे तब मै श्री डल्हण और चक्रपाणि जी के मत मे चला गया। अगर न चला जाता तो चरक, सुश्रुत और अष्टाङ्गहृदय आदि पुस्तको मे से "शुक्रान्ताना धातूनाम् यत् परम् तेजस्तत् ओज" और "आहार रसाद्रस" इन दोनो वाक्यो को हटा देना पडता। अब यह प्रश्न उठ सकता है कि जब मैने पर ओज (Pericardial Liquid)) को हृदय मे स्थापित किया है और "यत्सारमादौ" को भी पर ओज कहा है तो यह किस तरह से शक्य हो सकता है। इस का उत्तर यह है कि पेरिकर्डियल लिक्विड जैसा ही एक लिक्विड अडकोष मे रहता है और शुक्रके साथ गर्भाशय मे जाता है जिससे "यत्सारमादौ" और "गर्भाद्रसाद्रस" शक्य होता है और पाश्चात्यो से भी अनुमोदन मिलता है। जैसे—

In the semen that is ejaculated during coitus the spermatogo are mixed with the secretions of the accessory reproductive glands such as the seminal vesicles

आयुर्वेद मे जो कुछ है उसको समझकर और प्रत्यक्ष कर यदि हम विस्तृत करते तो आयुर्वेद का यह हाल न होता, लेकिन हम तो टीका और टीका की टीका करने लगे।

सिद्धान्त पक्षका पर और अपर स्थापित करने के लिये सैकडो-हजारो प्रमाणो की कोई जरूरत नही, सिर्फ शास्त्रो की रचना ही काफी है।

अपर ओजका प्रमाण 'नवाञ्जलय' है। यह श्लेष्मात्मक नही है। पर ओज का प्रमाण अर्धाञ्जलि परिमित और श्लेष्मात्मक है। यह हृदय मे कायम रहता है।

दो प्रकार के ओज मानने मे कोई कठिनाई दृष्टिगोचर नही होती। ओज विषयक जो वचन आर्ष ग्रन्थो मे मिलते है, उनसे भी दो प्रकार के ओज का समर्थन होता है। परम्परा से सिद्धान्त पक्ष के ही मत प्रतिपादन होने की बात तो स्वीकार की ही जा चुकी है। किसी विद्वान की योग्यता मे सन्देह करने की धृष्टता मुझ जैसा अल्पज्ञ कदापि नही कर सकता। फिर भी आयुर्वेद जैसे गभीर और विशाल शास्त्र मे सम्बन्धित विषयो के निरूपण मे सशोधन आवश्यक है न कि सद्ययावृत्त हो जाने की।

यदि अपर ओज सतत गतिशील है तो किस प्रकार "श्लेष्मलस्यौजस" सौम्य तो ठीक है लेकिन स्निग्धादि कफगुण भूयिष्ठ होने से इसी पोषक रस को श्लेष्मल ओज कहा जाय। क्या यह श्लेष्मल ओज रस-ओज से पृथक् है? पोषक रस सतत गतिशील है, ऐसा कई विद्वान् कहते है तो फिर श्लेष्मल ओज का अपने पक्ष मे पर नाम का दूसरा ओज मानकर क्यो पर ोज साबित किया है।

स्वामी हरिशरणानन्दजी से मेरा निवेदन है कि आप होर्मोन्स को ओज मानते है यह ठीक है। लेकिन पाश्चात्य मतवाले होर्मोन्स को छोडकर क्या कहते है यह भी देखिये—

"It is evident that some stimulating agent is present in the cardiac cells themselves and attention has recently been given to the possibility that this stimulus is a chemical one, as in the heart hormone" —Haerlandet 1941.

यह पाश्चात्यो की कल्पना को पकडकर लिखा है। यह पुरानी बात हो चुकी, क्योकि होरमोन्स माननेवाले आज क्या कहते है यह भी आपको देखने की जरूरत है। जैसे—

The second outstanding characteristic of the heart is the unique origin of the heartbeat which sets the rate of the cardiac rhythm The sino-atrial node has been established as the cardiac pacemaker in the mammalian heart But the explanation, or even a well-delineated discription of its action has eluded investigators to the present date 1953

श्री हरिशरणानन्दजी ने जिस सिद्धान्त का आश्रय लिया है उस सिद्धान्त ने कल क्या कहा था, आज क्या कहा है और कल क्या कहेगा, यह निश्चित नही है। अतएव उस सिद्धान्त का आश्रय लेना ही उचित नही है। लेकिन हमारे चरक, सुश्रुत, वाग्भट के जो आप्त और अनुमान है वह शाश्वत रहेगे। आप उपर्युक्त पाश्चात्यो के मत की भिन्नता देख सकते है और योग्य विचार कर सकते है।

वैद्य वासुदेव लाटा का 'ओज एक विवेचन' भी मैने देखा है। वैद्यराज ने पूर्वपक्ष और सिद्धान्तपक्ष को छोडकर सिर्फ अपने विचार बतलाए है और चरक, सुश्रुत, वाग्भट सारे ओज के प्रकरण देखे है, एसा प्रतीत होता है। वैद्य नागरदास सिर्फ अपर ओज को मानते है जब कि आप पर ओज को भी मानते हैं। आप दोनो आचार्य ने मुझ जैसे सिद्धान्त पक्षवाले का समर्थन किया है। आपका पर सच्चा, और अपर भी सच्चा, और मेरे सिद्धान्त पक्ष का दोनो पहलुओ के लिए पुष्टिरूप है।

आप दोनो आचार्यो से मेरी नम्र प्रार्थना है कि चक्रपाणि ने टीका मे जो पर-अपर भेद बताए है वह सही है। आप मेरा विवेचन देखेगे तब पता चलेगा कि कहा और कसे दो भेद दिखाई देते हैं।

स्वामी हरिशरणानन्द से मेरी प्रार्थना है कि आप भी मेरे वक्तव्य को देख। आपने तो पाश्चात्य सिद्धान्त देखा है। यदि आप होर्मन्सको ओज मानते है तो होर्मन्स क्या है यह शायद अबतक किसी को ठीक ज्ञात नही हो सका है। आज तो अपना पर-अपर ओज ही शरीर का कर्ता-धर्ता माना जाता है।

आप तीनो आचार्यो का मत देखगे तो पता चलेगा कि जो आप्त और अनुमान के आधार पर बताया है वह सुसगत और योग्य है। क्योकि अनुमान और आप्त वचन आज के सूक्ष्म साधनो से बताया है। यदि आप आयुर्वेद को आयुर्वेद की दृष्टि से देखगे तभी यह प्रत्यक्ष हो सकेगा।

ओजः

वैद्य पुष्करदत्त शर्मा, आयुर्वेदाचार्य

ओजस्तु धातूना सार , सप्ताना च रसादिनाम् ।
प्रणेता च रसाद् रक्त, रक्तान्मास करोत्यद ।।१।।
मासान्मेद प्रकुर्वत्, मेदसा मज्ज एव हि ।
मज्जयाऽस्थि तत शुक्र, एवमोज प्रवर्तकम् ।।२।।
साकुरेण हि बीजेन , यथोत्पन्नो वनस्पति ।
तथैवोजसा धातु र्धात्वन्तर प्रपद्यते ।।३।।
बिन्दुभि केन्द्रबोध स्यात्, धात्वाशय इतीरित
बिन्दव सप्तधातूना, सप्तानामेव सख्यया ।।४।।
अष्टमो बिन्दुहृदये, रसवाहीनाडधा चरन् ।
पोषयत्यखिलदेह, बल-वर्ण करोत्यसौ ।।५।।
यथोजो रहित वीर्य, नोत्पादयति सततिम् ।
तथा निरकुर बीज नहि वृक्षमुत्पादयेत् ।।६।।
मातृकुक्षौ यदा बाल , ओजसा रहितोऽष्टमे ।
मासे जातो मृतिप्राप्त , जीवन त्वोज एव हि ।।७।।
ओजो देह विद्युत्सम, व्याप्तिमच्च क्षणात्क्षणम् ।
अजनोत्पादिता विद्युत, बल्बस्थाने प्रकाशते ।।८।।
तथैव हृदयाच्चौज , धातुस्थान चकासते ।
धातुसार हि यत्तेज प्रणालि-विहीन ग्रथिषु ।।९।।
गत्वा बल विधत्ते च, दिप्तदीपमिवालयम् ।
एकस्थाने स्थितो दीप , सर्वगेह प्रकाशते ।।१०।।
तथैवोजसा हृदये, सर्वदेहश्च कान्तिमान् ।
धातुसारोऽष्टधाचौजो, बिन्दुर्धजलिमात्रकम् ।।११।।
अष्टधा बिन्दुमात्रेण चरकोक्तमर्धांजलि ।
बिन्द्वाख्य धातु केन्द्रेषु, अर्धांजलि हृदिस्थितम् ।।१२।।
भेदद्वय समाख्यातम्, ओजस स्थान कारणात् ।
चारक सौश्रुत मानम्, विज्ञैश्चात्र विचार्यताम् ।।१३।।

स्वास्थ्य और सुख की प्राप्ति का श्रेष्ठ साधन

आरोग्य-प्रकाश

—प्रत्येक परिवार में रहना अत्यन्त आवश्यक है !

भारत-प्रसिद्ध श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लिमिटेड के मैनेजिग डायरेक्टर वैद्यराज पण्डित रामनारायण शर्मा ने अनेक वर्षों के परिश्रम से इस महान ग्रन्थ—**आरोग्य-प्रकाश**—को स्वय लिखा है। इस ग्रन्थ का एक-एक वाक्य हजारो रुपयो का काम देता है। इसके पूर्वार्द्ध के व्यायाम, ब्रह्मचर्य, भोजन, दिन-रात्रि-ऋतुचर्या, सदाचार, उत्तम विचार आदि विषयो को पढकर और तदनुकूल आचरण कर सदा बीमार रहनेवाला व्यक्ति भी बिना दवा के ही नीरोग और तन्दुरुस्त हो जाता है।

इस ग्रन्थ के उत्तरार्द्ध मे शरीर मे पैदा होनेवाले सभी रोगो के कारण, निदान, रोग-लक्षण, चिकित्सा, पथ्यापथ्य, आदि पर बडी ही सरल भाषा मे सुन्दर ढग से विवेचन किया गया है, जिनको पढकर विद्वान से लेकर साधारण पढे-लिखे व्यक्ति तक समान भाव से लाभ उठा सकते हैं। इसमे दवाओ के जो नुस्खे लिखे हैं, वे बहुत वर्षो के परीक्षित, कभी विफल नही होनेवाले और शास्त्रानुमोदित है। शहर हो या देहात, सब जगह इस पुस्तक के घर मे रहने से रोगी को तत्काल लाभ पहुँचाया जा सकता है। औषध तैयार करने का विधान तो इस पुस्तक मे बहुत ही श्रेष्ठ है, क्योकि लेखक इस विषय के निर्णयात्मक ज्ञाता हैं। इसके ११ सस्करणो मे १,०८,००० प्रतियाँ छपकर बिक चुकी है और बारहवे सस्करण मे २० हजार प्रतियाँ फिर छापी गयी है। इसीसे इस ग्रन्थ की लोकप्रियता और उपयोगिता का स्पष्ट प्रमाण मिलता है। हिन्दी में ऐसी पुस्तक दूसरी नही है, यदि यह कहा जाय तो अनुचित न होगा। प्रचार की दृष्टि से इस पुस्तक का मूल्य भी बहुत कम रखा गया है। ४६० पृष्ठो की विशाल पुस्तक का मूल्य मात्र २·२५ रु० डाक खर्च ०·८८

नोट :—हमारे ४ निर्माणकेन्द्रो, २५० बिक्रीकेन्द्रो तथा २५ हजार एजेन्सियो मे से कही भी यह पुस्तक खरीदी जा सकती है। इससे डाक खर्च की बचत होगी।

प्रकाशक

श्री **बैद्यनाथ** आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

१, गुप्ता लेन, कलकत्ता—६

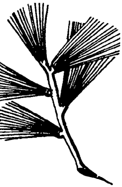
विविध उपयोगी वनस्पतियाँ

वैद्य सत्यप्रसाद 'निर्भीक' शास्त्री

देवदारु (Cedrus Deodara)

संस्कृत नाम—देवदारु, दारु, भद्रदारु, इन्द्रदारु, मस्तदारु, द्रुकिलिम, किलिम, सुरभूरुह्।

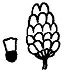
परिचय—देवदार के पेड़ बहुत बड़े तथा ऊँचे होते है। इसके काण्ड १६-१७ हाथ ऊँचे और व्यास २ गज तक मोटे पाये जाते हैं। काण्ड सीधे और जड़ मे मोटे तथा क्रमश पतले पुच्छाकार होते जाते है। इसकी शाखाएँ पृथ्वी की ओर झुकी और गोल पुच्छाकार सुन्दर होती है। इसके पेड़ बहुत ही सुन्दर मन-भावने लगते है, जिसकी छाया घनी होती है।



देवदारु पत्र और टहनी

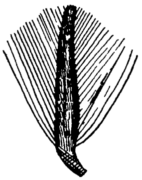
पत्र—लम्बे केवल आधा इंच, गोलाईमे त्रिकोणाकार होते है जो एक ही स्थान से बहुत निकले होते है। इस प्रकार एक ही टहनी पर कई स्थानो से निकले होते है, जो स्वाद म कुछ अम्ल-कषाय लिये होते हैं।

पुष्प—गुच्छो में आते है। पुष्प के बाद फल आते हैं। फल सारीवा फल से मिलता-जुलता होता है। इसके फल को गढवाल में छ्यता के नाम से पुकारा जाता है। फल पकने पर प्रत्येक कोष्ठ से बीज निकलता है जिस पर एक ओर से पतला पक्ष-सा निकला रहता है। बीज का आकार आधे चिलगोजे से मिलता-जुलता होता है। इसके फल मई-जून में लगने प्रारम्भ होते हैं। इसके बीज मँहगे बिकते हैं।



देवदारु बीज फल

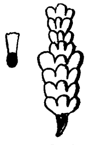
इसकी लकड़ी से तख्ते, किवाड़ तथा अन्य वस्तुएँ बनती है। जिस मकान मे इसकी लकड़ी लगती है तथा उपकरण रहते है, वहा एक प्रकार की मन-मोहक सुगन्ध प्रसारित होती रहती है। इसके बुरादे को धूप मे डालते है तथा हवन सामग्री मे भी मिलाते हैं। इसके दो भेद—स्निग्ध और काष्ठ है। स्निग्ध देवदारु चिकना, सुगन्धित होता है और काष्ठ देवदारु के पत्तो से उत्सवो में बन्दनवार बाधते है। बाजार मे जो चिकनी तैलयुक्त लकड़ी प्राप्त होती है तथा जो धूपक नाम से प्रसिद्ध है, वही स्निग्ध देवदारु है। इसके बन बहुत बड़े होते है जो पर्वतीय प्रान्तो में यत्र-तत्र कम से कम ७हजार की ऊँचाई पर मिलते है।



चीड़ (कैल) पत्र

प्रयोग—काष्ठ और तैल।
मात्रा-चूर्ण १ से ४आने तक, तैल २० से ३० बूँद तक।

गुण-धर्म—देवदारु काष्ठ वायुनाशक, धर्मकारक व मूत्रल है। यह ज्वर, उदराध्मान, शोथ, अश्मरी आदि मूत्र मार्ग सम्बन्धी पीडाओ मे सेव्य है। द्रव्यान्तर के साथ उदर रोगो मे दिया जाता है। देवदारु-क्वाथ सुजाक (पूयमेह), फिरग, वात एव आमवात मे रसायन के लिये सेव्य है। हल्दी व गुग्गुलु के साथ इसका प्रलेप वेदनाहीन शोथयुक्त प्रदेशो मे सेव्य है। इसका तैल रसायन है। यह पुराने चर्मरोगो में तथा कुष्ठ में प्रयुक्त होता है। क्षत में भी इसका प्रलेप करते है। आयुर्वेद मे इसका गुण—हल्का, स्निग्ध, कड़ुवा, गरम, पाक मे चरपरा और विबन्ध, अफारा, शोथ, आम, तन्द्रा, हिचकी, ज्वर, रक्तविकार, प्रमेह, पीनस, कफ, कास, कण्डु तथा वातघ्न है। गढवाल मे चर्म तथा रक्तविकार मे इसके तैल को प्रचुर मात्रा में प्रयुक्त किया जाता है। कई लोग पीते भी है।

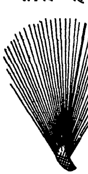


कैल का फल और बीज

देवदार के ही समकक्ष वाले दो-तीन और भेद है-जिन्हें चीड़, कैल, शैल नामो से पुकारा जाता है।

(२) चीड़—स० सरल, हिन्दी-धूपरसाल, गढवाली-कुलो, गु० पीलो बेरजा, इ० लोगलिव्ह, ले० पाइनस लौग-फोलिया।

परिचय—यह पर्वतीय प्रान्तो मे होनेवाला बहुशाखी वृक्ष है, जिसकी ऊँचाई कम से कम ४०-५०फीट तक होती है पेड की शिखा गोल पुच्छाकार नाचते हुए मोर की भाँति पूर्ण गोल, गेद की तरह होती है। उगने का स्थान ४–५ हजार फीट की ऊँचाई वाला पर्वतीय प्रदेश है, जैसे—गढवाल, अलमोडा, नेपाल तथा काश्मीर–जम्मू प्रदेश।



चीड़ पत्र-टहनी

पुष्प-पत्र—बिल्कुल देवदार से मिलते जुलते होते है। भेद केवल पत्रो मे इस प्रकार है कि देवदार के पत्र छोटे और चीड आदि के लम्बे (तिगुने) होते है, जो कि शल्य के कार्य आनेवाली सूई से मिलते रहते है। इसके पुष्प गुच्छो के रूप में निकलते है। पुष्प के बाद फल लगते है जो कि देवदार फल की तरह, परन्तु आकार मे बडे, ६-७ इच लम्बे और ८-९ इच गोलाई मे होते हैं। इसके प्रत्येक अगुली की तरह कोठो से २-२ तथा कही एक ही बीज पाया जाता है, जो देवदार बीज से लम्बा, चिलगोजे की तरह परन्तु अण्डाकार चपटा होता है। बीज के अगले प्रदेश पर तितली के पख की तरह एक पत्ता-सा होता है। इसके फल को गढवाल मे छ्यूता के नाम से पुकारा जाता है। काष्ठ की छाल खुरदरी और पर्त्त निकलने वाली होती है, जिसका रग कत्थई लिये होता है।

इसकी लकडी से गोद निकाला जाता है जो अलकतरे की तरह होता है। यह वायुघ्न, घर्मकारक और मूत्रल होता है। गन्धविरोजा और तारपीन तैल भी इसी से बनाया जाता है। इसको निकालने के लिये तने मे जड से दो फीट ऊपर कटारी से गड्ढा-सा बनाया जाता है, जहाँ पर बर्तन लगा देते हैं। चीड का निर्यास १-२ दिन मे उस स्थान से निकल कर बर्तन को भर देता है। इसी से निम्न वस्तुएँ बनाई जाती है।

(क) ऑयल ऑफ पाइन (Oil of Pyne)—यह "ऐबीज सिबीरिका" नामक चीड के वृक्ष की पत्तियो को निचोडकर डिस्टीलेशन क्रिया द्वारा बनाया जाता है। निर्मल, पीला, तीव्र गन्ध-स्वाद, झालदार द्रव तैलरूप होता है। इसके मूल तत्व (ऐल्केलाइड) (१) बेरीबल टैरपीन और (२) बीरनिल एसिटेट है।

(ख) ऑयल टर्पेन्टाइन (Oil Turpentine)—यह साधारण तारपीन के ओलियो रेजिन भाग में से "डिस्टीलेशन" क्रिया द्वारा तैल रूप मे खीचकर स्वच्छ (रेक्टीफाइड) किया जाता है। यह निर्मल, तीव्र गन्ध, तीक्ष्ण स्वाद का द्रवतैल है। इसमेसे मूलतत्व (ऐलकेलाइड,) (१) आइसोमरिक हाइड्रो कार्बन, (२) सैक्विटैरपीन, (३) बौरनील एसीटेट आदि निकाले जाते है। मात्रा—२-१० मिनिम है। इससे लिनिमेण्ट टरपेन्टाइन, लिनीमेण्ट टरबेन्थीबी एसिटिकम नामक औषधियाँ बनाते है।



चीड़ फल

चिकित्सा मे बाह्य उपयोग तीन प्रकार से होता है—(१) स्वेद (२) मालिश और (३) पिचकारी द्वारा।

(१) स्वेद चिकित्सार्थ एक फलालेन के टुकडे को अत्युष्ण जल मे डुबाकर निचोड ले। फिर जहा दर्द हो, तैल की मलिश करके उसके ऊपर इस निचुडे फलालेन के टुकडे को रखकर दबाएँ। ऐसा कई बार करे। इससे वातिक शूल शीघ्र जाता रहेगा।

(२) तारपीन तैल ४० तोला, कपूर पाँच तोला, साबुन २॥ तोला सब मिलाकर मालिश करें। जीर्ण वात, कटि रोग, ऊरुस्तम्भ, गृध्रसी के दर्द इससे दूर होते हैं।

(३) पिचकारी—तारपीन तैल पाँच तोला, काजी या सिर्का ४० तोला पिचकारी से देने से मूर्च्छा, अपस्मार, शूल, अज्ञानता, प्रसवान्तर के दौरे दूर हो जाते है।

इसके 'इरीटेन्ट" तथा "काउण्टर इरीटेन्ट" गुण के लिये पुरानी सूजन, ऑस्टियो आरथ्राइटिस (Osteo Arthritis) अस्थिसन्धि शोथ (Bronchitis) ब्राकायटिस, कास, प्लुरिसी (Pleurisy) कास, फुफ्फुसावरण शोथ आदि मे लिनिमेण्ट की मालिश करे। इससे दर्द दूर होता है। इसलिये न्यूरेल्जिया, नाडीशूल, वातरक्त (Gout) लम्बोगो

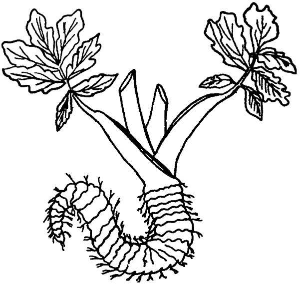
(Lumbago) कटिशूल आदि मे इसका लेप करते है। यह दाद के कृमियो को नष्ट करता है।

आन्तरिक प्रयोग—गुदमार्ग से इसकी पिचकारी लगाना पेट के फूलने में उपकारक है। इससे आतो की वायु बाहर निकल जाती है। यदि पेट तथा आँतो से रक्त-स्राव हो रहा हो तो इसके व्यवहार से स्राव शीघ्र बन्द हो जाता है। इस गुण-विशेष के लिये इसको पेट के घाव (अल्सर आव स्टमक) तथा टायफाइड (आन्त्रिक ज्वर) मे बडे लाभ के साथ व्यवहार करते है। इन रोगो मे इसको गोद के साथ मिलाकर तथा १-२ घण्टे के अन्तर से कई बार व्यवहार करते है। इन भागो के रक्तस्राव को रोकने मे यह अमोघ है। ब्राकाइटिस में इसको "ऐक्सपैक्टोरेन्ट" गुण के लिए व्यवहार करते हैं। गुर्दे की रोगावस्था मे इसे भूलकर भी न बरतें, क्योकि इससे गुर्दों मे शोथ बढ जाता है। आतो मे टेप वर्म (Tape worm) स्फीत कृमि तथा थ्रेड वर्म (Thread worm) कृमियो के पड जाने पर इसका ऐनिमा लगाने से बडा लाभ होता है।

(ग) पिक्स लिक्विड (वुडतार)—यह इसी जाति की वृक्ष की लकडी का निचोड द्रव है। यह भूरा, काला, द्रव, अधगाढा कीचड की तरह का झालदार, तीव्र गन्ध, जल मे मिलाने से पीला, श्वेत, भूरा हो जाता है। इसमे से मूलतत्त्व रूप में ये औषधिया उत्पन्न होती है—(१) टर्पेन्टाइन, (२) क्रियाजोट, (३) फिनौल, (४) पाइरोकैटैचिन, (५) एसिड सेसिटिक, (६) एसिटोन, (७) जाइलोल, (८) टोलू औल, (९) मैथिलिक अलकोहल (१०) रेजिन्स। मात्रा—१०-३० मिनम। इसकी बी० पी० औषधि यह है—अम्यूएण्टम पिसिज लिक्विड।

बरमोलो

यह एक क्षुप जातीय वनस्पति है, जो ८-९ हजार फीट की ऊँचाई पर प्राप्त की जा सकती है। बर्फ पिघलने के बाद उगती और वर्षारम्भ में जड परिपक्वावस्था को प्राप्त होती है। जड कनखजूर नामक कीडे के समान होती है जिस पर छल्ले-से होते हैं और प्रत्येक छल्ले पर जोड होती है। जड के ऊपर डण्ठल निकलती है जो २-३ इच तक छोटी नहर की तरह आलबाल ऊँचे उठे हुए होते हैं। यह अन्त में बारीक होती है जिस पर इतस्ततः पत्र नीम की पत्तियो के सदृश निकलते हैं। पुष्प श्वेत आते है। यह स्वाद मे बिल्कुल खीरा की भाति लगता है। यहा के लोग उष्ण प्रदेश से आने पर इसे पीते हैं।



बरमोलो—जड-वृन्त-पत्र

गुण—शीत वीर्य, योगवाही, मूत्रल भी खूब है। स्वाद मे राई और खीरे की तरह ही है। स्वाद से ज्ञात होता है कि खाने मे यह उष्ण भी होगा। यथासम्भव राई के गुणो से युक्त है। वाह्य लेप पर शीत तथा योगवाही होने से उष्ण वस्तुओ के साथ उष्ण और शीत वस्तुओ के साथ शीत है।

विशेष गुण—इसका लेप सिर शूलनाशक है।

खदिर

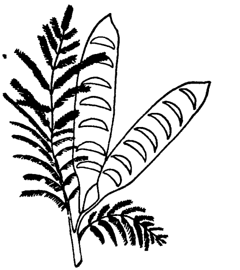
नाम—स० बालपत्र, हि० व गढवाली खैर, ब० खयेरगाछ, खदिर वृक्ष, म० खैर, गु० खेर, क० कॅगिन खैर, तै० चण्डचेट्टू, लै० एकेशिया केटेच्यू।

परिचय—खैर के वृक्ष जाग्ल प्रदेश मे अधिक पाये जाते है। इनकी ऊँचाई अनुमानत १०-११ फीट होती है। पत्र बारीक दीर्घ वृन्त मे कई जोडे पत्तो से युक्त रहते है। स्थूलकाड, शाखाकाण्डे-कॉटेदार, कॉटे छोटे, नोक मुडी होती है। पुष्पकाल—ग्रीष्मान्त और वर्षारम्भ है। फली चपटी, लम्बी ६-७ बीजयुक्त होती है।

आयुर्वेदीय गुण—शीतल, दाँतो को हितकारी, कडुवा, कसैला और खुजली, खासी, अरुचि, मेद, कृमि, प्रमेह,

ज्वर, व्रण, श्वेतकुष्ठ, शोष, आम, पित्त, रक्तविकार, पाण्डु, कोढ़ तथा कफ का नाशक है।

पाश्चात्य मत—कैटेच्यु (पीला कत्था) अनकेरिया



खदिर—पत्र और फल

गेम्बीयर वृक्ष की पत्तियो का रस निचोडकर निकाला जाता है। पूर्वीय देशो, सिंगापुर आदि में होता है। यह डली-दार चौकौर, गन्धरहित, स्वाद में कडुवा, मीठा-सा होता है।

कैटेच्यू निग्रा—काला कत्था। यह कैटेच्यूट एकेशिया वृक्ष की लकडी में से निचोडकर निकाला जाता है। यह टेढा, कडवा, काला, गन्दला, चमकीला डलियो वाला और छेददार होता है।

यह उत्तम शोषक है। गले तथा मसूडो आदि की सूजन पर इसका प्रयोग होता है। आतो के पतले दस्त को गाढा करके रोकता है।

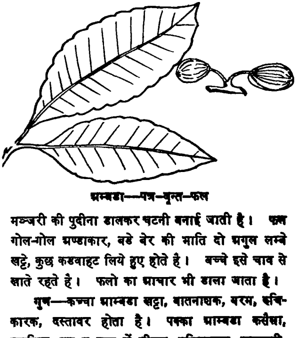
खैर—बलप्रद और रसायन है। टैनिक एसिड के कारण तीव्र प्रभाव वाला, ज्वरघ्न तथा पाचक है। यह श्लैष्मिक-धराकलाओ का धारक, सकोचक, शक्तिदाता है। पाक-स्थली मे वेदनायुक्त ग्रहणी व जलवत् मलस्राव म सेव्य है। आमातिसार, रक्तस्राव तथा विषमज्वर, स्नायुदौर्बल्य में उत्तम है। लालास्राव व प्रदर दोनो मे हितकर है। वाड साहब कहते है कि अतिसार मे खैर का चूर्ण १-२ आने भर और आमातिसार में ५ आने भर लें। प्रदर मे दूस और व्रण, शीघ्र-व्रण मे चर्बी के साथ मिलाकर लगाने से बहुत लाभदायक है। यदि तूतिया भी डाला जाय तो अधिक उपकारक होगा। कुछ लोगो का मत है कि खैर गर्म भी है और अति सेवन से नपुंसकत्व भी लाता है। दात व मसूडो के दर्द, रक्तस्राव मे महोपकारी है।

श्वेत खदिर (पथरिया कत्था)—इसके काण्ड सफेद और कत्था भी सफेद पथरीदार होता है।

अम्बड़ा

नाम—स० पीतन, हि० अम्बडा, गढवाली-आमडा, बं० आमडा, म० आवडा, गु० जगली आम्बो, क० आवोडेकामि, तै० आमाट, इ० स्पोडियस मिनट।

परिचय—अम्बडे क पेड १५ फीट तक ऊँचे होते हैं और जागल प्रदेश मे ही पाये जाते है। काण्ड स्थूल, त्वचा चिकनी-श्वेत होती हैं। पत्र पीले, लम्बे, दीर्घ वृन्त पर आमने-सामने जोडे-जोडे में लगे होते हैं। वसन्त में आम की ही तरह इसकी भी स्वर्णवर्ण की मञ्जरी निकलती है, जो स्वाद मे कषाय और अम्ल होती है। इसकी



अम्बडा—पत्र-वृन्त-फल

मञ्जरी की पुदीना डालकर चटनी बनाई जाती है। फल गोल-गोल अण्डाकार, बडे बेर की भाति दो अगुल लम्बे खट्टे, कुछ कडवाहट लिये हुए होते हैं। बच्चे इसे चाव से खाते रहते है। फलो का अचार भी डाला जाता है।

गुण—कच्चा आम्बडा खट्टा, वातनाशक, गरम, रुचि-कारक, दस्तावर होता है। पक्का आम्बडा कसैला, स्वादिष्ट, रस व पाक में शीतल, तृप्तिकारक, कफकारी, स्निग्ध, वीर्यवर्द्धक, ग्राही, पुष्टिकारक, भारी, बलकारक वात, पित्त, क्षत, दाह, क्षय तथा रक्तविकार नाशक होता है।

गर्मी में स्वास्थ्य-रक्षा

श्री दीनानाथ आयुर्वेदालंकार

गर्मी के दिन आ गये। हमें अब अपने स्वास्थ्य की रक्षा करने के लिए बडी सावधानी से काम लेना होगा।

इस ऋतु मे सूर्य की प्रखर रश्मियो द्वारा पृथ्वी का जलीय अश शोषित हो जाता है। इसी कारण ग्रीष्मऋतु को सन्ताप का काल माना गया है। इन दिनो शीतकालीन प्रफुल्लता ग्रीष्मऋतु की लू-लपटो मे ध्वस्त हो जाती है। शरीर का आरोग्य तथा मन की प्रसन्नता नष्ट हो जाती है। भौगोलिक स्थिति के कारण भारतवर्ष सहस्ररश्मि सूर्य की किरणो का सीधा लक्ष्य रहता है। अत इस देश के नर-नारियो के जीवन में ही नही, नद-नदियो, जीव-जन्तुओ तथा वनस्पतियो तक के जीवन मे ऐसा परिवर्तन होता है, जो न स्वास्थ्यप्रद होता है और न प्रिय ही। गर्मी का प्रचण्ड ताप और झुलसानेवाली हवा के झोके मन की मस्ती और शरीर की शक्ति को क्षीण कर देते है।

ग्रीष्मऋतु में सूर्य उत्तरायण होता है। इस उत्तरायण को आदान काल कहा गया है। चूँकि इन दिनो पृथ्वी का जलीय तत्त्व सूर्य की किरणो द्वारा शोषित होता रहता है, इसलिए वनोषधियो का रस क्षीण हो जाता है, जलाशय सूख जाते है तथा शरीर का स्निग्ध और पोषक तत्त्व कफ क्षीण हो जाता है। कफ के क्षीण हो जाने के कारण प्रत्येक व्यक्ति मे स्वाभाविक निर्बलता आ जाती है।

वैशाख-ज्येष्ठ (मई-जून) के दो महीनो को ही ग्रीष्म-ऋतु कहना वास्तविक तथ्य के विपरीत है, क्योकि वैशाख से आश्विन तक गर्मी की भीषणता और उपद्रव बने ही रहते है। वर्षा के दिन सारे देश म एक साथ नही आते और वर्षा भी सब जगह समान रूप से नही होती और कही-कही तो नाममात्र को ही होती है। शीतकाल के चार महीनो को छोडकर अन्य दिनो मे ग्रीष्मकालीन स्थिति ही बनी रहती है। अत ग्रीष्मऋतु के आहार-विहार का ज्ञान सबको अवश्य रखना चाहिए।

ग्रीष्मऋतु के कारण हमारे शरीर मे ही नही, प्रकृति मे भी कई स्वाभाविक परिवर्तन होते हैं। रूक्षता एव उष्णता के कारण इन दिनो शरीर में वायु का सचय होता रहता है, शरीर की स्निग्धता क्षीण होने लगती है एव कफ की क्षीणता के कारण दुर्बलता उत्पन्न हो जाती है। गर्मी की प्रचण्डता के कारण इस मौसम मे वायु के जीवनीय तत्त्व (प्राणवायु) की कमी हो जाती है जिससे फेफडो को शुद्ध भोजन नही मिलता और रक्त-शुद्धि की क्रिया म शिथिलता आ जाती है। स्वेद अत्यधिक होने के कारण मूत्र का परिमाण कम हो जाता है। पाचन-सस्थान मे गडबडी होने से भूख की कमी, निर्बलता, प्यास की अधिकता आदि अवाछनीय विकार उत्पन्न हो जाते हैं। मस्तिष्क की कार्यशक्ति मे अन्तर आ जाता है, सुषुम्ना के ताप-केन्द्र मे अव्यवस्था की सम्भावना होने लगती है तथा चेहरे की कान्ति एव त्वचा (चमडी) की चमक गायब हो जाती है। स्वेद निर्हरणवश क्षीण हुए जलाश की पूर्ति के लिए घडो पानी पीने पर भी तृप्ति नही होती। खाने-पीने और राग-रङ्ग के बजाय ठण्डी जगह मे पडे रहने की एकमात्र इच्छा होती है।

ग्रीष्म का गुण-धर्म रूक्ष, वायु-सञ्चयकारक, कटु और कफनाशक होने के कारण जीव-जन्तुओ और खाद्य-पदार्थों की स्वाभाविक स्निग्धता नष्ट हो जाती है। पित्त-प्रकोप-जन्य प्रदाह, रक्तपित्त, शिरोभ्रम, अग्निमाद्य, अतिसार आदि विकारो की पृष्ठभूमि तैयार हो जाती है।

ग्रीष्मकाल में स्वस्थ एव प्रसन्न रहने का एकमात्र साधन है—आयुर्वेदोक्त ग्रीष्मकालीन दिनचर्या। शरीर और वायु विज्ञान के वेत्ता हमारे त्रिकालज्ञ महर्षि ग्रीष्म के इन विकारो से बचने और स्वस्थ-प्रसन्न रहने का सरल साधन हजारो वर्ष पहले बता चुके हैं। अत आयुर्वेद मे बताई गई दिनचर्या, खान-पान और रहन-सहन के सही तरीको का पालन ही स्वास्थ्य का सरल साधन है।

ग्रीष्मचर्या के सम्बन्ध मे महर्षि चरक का मत सदैव स्मरणीय है—

"ग्रीष्मऋतु मे सूर्य अपनी किरणो से ससार का सार तत्त्व पीता रहता है। अत इन दिनो स्वादिष्ट, शीतल, मीठा और स्निग्ध खान-पान हितकर होता है। चीनी मिला सत्तू, जगली जीवो का मास, दूध, मक्खन और

चावल का भोजन मनुष्य को गर्मी के विकृत प्रभावो से बचाता है। शराब नही पीनी चाहिए, और यदि बिना पीए रहा ही नही जाए, तो काफी पानी मिला कर पीयें। नमकीन, खट्टे, कड़वे और गर्म पदार्थ तथा व्यायाम निषिद्ध है। दिन के समय ठडे मकानो मे और रात के वक्त चन्द्रमा की किरणो मे खुली छत पर सोये। सोने से पूर्व शरीर पर चन्दन का लेप कर ले। चन्दन और जल से भिगोये गये पखो से हवा करे। मोती और मणियो से मडित रहें। ठडे बागबगीचो, जलाशय के नजदीक के ठडे स्थानो और फूलो का उपयोग करे। मैथुन से बचे।"

उपर्युक्त कथन को विशेष स्पष्ट करने के लिए नीचे सब बातो की अलग-अलग व्याख्या की जाती है —

गर्मी के दिनो मे सूर्योदय जल्दी होता है। अत ४ बजे उठ जाना चाहिए। वयस्क व्यक्ति के लिए ६ घटे की नीद पर्याप्त होती है। अत सुबह उठने मे देर करना ठीक नही। उठते ही एक गिलास ठण्डा जल पिय और ५-७ मिनट तक ईश्वर से प्रार्थना करे कि वह आपके मन को निर्मल रखे और आपकी दिनचर्या को सानन्द सम्पन्न करे। प्रात काल की प्रार्थना दिन-भर मन को प्रसन्न रखती है। इसके बाद शौच से निबट कर हाथ-मुँह धो ले। फिर दतमजन, दातुन आदि से मुख-शुद्धि का कार्य अवश्य कर लेना चाहिए।

गर्मी का व्यायाम

शरीर को गतिशील और स्वस्थ बनाए रखने के लिए व्यायाम की आवश्यकता है, किन्तु गर्मी के दिनो मे व्यायाम का निषेध है। क्योकि उष्णता और रूक्षता के कारण इन दिनो खून मे अनावश्यक गर्मी पहले से ही विद्यमान रहती है। इस मौसम की हल्की कसरत है—सुबह-शाम का भ्रमण और तैरना। प्रात सूर्योदय से पहले और शाम को सूर्यास्त के समय डेढ-दो मील के भ्रमण से व्यायाम हो जाता है। ठडे जल मे तैरने का व्यायाम तो बहुत ही मुफीद होता है।

हमारे इस गर्म देश के निवासियो के लिए स्नान सदा ही उपयोगी और स्वास्थ्य-रक्षक है, किन्तु गर्मी के दिनो मे इसकी आवश्यकता एव उपयोगिता और भी अधिक बढ जाती है। गर्मी की वजह से रक्त-सचार मे उत्पन्न मन्द-गतिकता स्नान से दूर होती है। अत स्नान का एक तात्कालिक फल यह होता है कि खून के प्रवाह मे स्वाभाविक गति आने से सारा आलस्य दूर हो जाता है और मन प्रसन्न हो जाता है। शरीर की त्वचा पर जमी हुई पसीने की पपडी स्नान से दूर होती है, जिससे रोम-छिद्रो के द्वार खुल जाते हैं और जल की शीतलता से तन-मन प्रफुल्लित होता है।

तैरना

तैरने का आनन्द वस्तुत ग्रीष्मकाल मे ही मिलता है। अत जिनको तैरना आता हो, उन्हे सब काम छोड़कर तैरना चाहिए। तैरना एक अच्छा व्यायाम है। अत इसमे स्नान के साथ-साथ व्यायाम भी हो जाता है। बहते हुए पानी मे डुबकी लगाकर तैरने से शरीर की बढी हुई गर्मी शान्त होकर अग-प्रत्यङ्ग मे शीतलता का सचार होता है और बदहजमी, सिर का भारीपन आदि गर्मी के उपद्रव शान्त हो जाते है। गन्दे जलाशयो मे स्नान करना या तैरना तो घर बैठे रोगो को निमन्त्रण देना है।

खान-पान

सर्दी के दिनो मे जहाँ स्वय प्रकृति ही भूख को जागृत कर देती है और नाना प्रकार के पौष्टिक खाद्य पदार्थों का उपहार तैयार कर देती है, वहाँ गर्मी के मौसम में स्वय प्रकृति ही भूख को कम कर देती है। इसलिये इस मौसम मे विवेकशील मानव को बहुत सोच-समझ कर अपने खान-पान की चीजो का चुनाव करना चाहिए।

आयुर्वेदशास्त्र ने सारी वस्तुस्थिति पर गभीर विचार करने के बाद गर्मी के दिनो के खान-पान के सम्बन्ध मे यह निर्देश दिया है कि मधुर, स्निग्ध, शीतल, लघु एव द्रव आहार ही इन दिनो मे हितकर होता है। जलीय अश की पूर्ति के लिये द्रव या तरल पदार्थों की आवश्यकता है, तो कफवर्द्धन के लिये मधुर चीजें चाहिए। पित्त को स्वस्थ रखने के लिये शीतल आहार की अपेक्षा है, तो पेट को भारी न होने देने के लिये लघु यानी हल्का, सुपाच्य खाद्य चाहिए। इस तरह वैज्ञानिक आधार पर निर्धारित यह खान-पान शरीर को स्वस्थ और मस्तिष्क को शान्त रखने के साथ ही गर्मी की प्रचण्डता के कारण होनेवाले विकारो—बदहजमी, पेचिश, सिर-दर्द, अनिद्रा, नक्सीर, अशुघात आदि—से भी मनुष्य की पूरी रक्षा करता है।

चावल, जौ-गेहूँ की रोटी, दलिया, अरहर और मूँग की दाल, ककडी, खीरा, तोरई, परवल और बथुए का शाक तथा दूध-दही एव मट्ठे का आहार गर्मी के दिनो का उपयुक्त भोजन समझना चाहिए। दही का मीठा रायता लेना चाहिए। मट्ठा मीठा भी लिया जा सकता है और नमकीन भी। नारियल का पानी पीना बहुत अच्छा है। आँवले या सेव का मुरब्बा जरूर खाना चाहिए। मिठाइयो में पेठे की मिठाई ही ठीक रहती है। इन दिनो का प्राचीन खाद्य सत्तू बहुत ठीक रहता है।

लू, दस्त, बदहजमी आदि से बचने के लिये स्वय प्रकृति ने गरीबो के उपभोग की इन सस्ती वस्तुओ का उत्पादन किया है। नियमित रूप से प्याज और पोदीना खानेवाले किसानो को लू लगने या दस्त-कै होने की शिकायत बहुत कम हो पाती है। अत परिवार के प्रत्येक सदस्य को पोदीने की चटनी और रायता अवश्य खाना चाहिए। प्याज वैसे भी खाया जा सकता है और चटनी के रूप मे भी।

ठंडा जल

गर्मी से ठडे पानी की चाह सब किसी को रहती है और सच तो यह है कि पानी को ठंडा करने के लिये ही आजकल बर्फ का इतना ज्यादा प्रयोग होने लगा है। किन्तु थोडी सावधानी से प्रत्येक व्यक्ति अपने घर मे ही शीतल एव सुस्वादु पानी रख सकता है। जाडे के दिनो मे बने हुए घडे स्वभावत ठण्डे होते है। अत जाडो मे ही ५-७ घडे तैयार करवा लेना चाहिए। जहाँ घडा रखना हो, वहाँ ३-४ परत बालू मिट्टी को गीला करके बिछा दे और घडे में पानी भर कर रख द। सुगन्ध के लिये गुलाब या केवडे का शुद्ध अर्क डाल दे। इतनी सावधानी जरूर रखी जाए कि घडो की जगह न रोशनी जाने पाये और न गर्म हवा।

वैद्यनाथ बंग भस्म

असंयम से पैदा होनेवाले रोगो तथा दुर्बलता को दूर कर शरीर को ताकत देती है। विशेष जानकारी के लिए वैद्य से सलाह लें।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लिमिटेड

कलकत्ता ★ पटना ★ झाँसी ★ नागपुर

ग्रीष्मकाल के प्रधान रोग—

हैजा और चेचक

वैद्य प्रभाकान्त झा शास्त्री

हैजा

आयुर्वेद मे हैजे का नाम "विशूचिका" दिया गया है और अंग्रेज लोग इसे कॉलरा कहते हैं। इस रोग की उत्पत्ति प्राय अजीर्ण से होती है, और सच पूछा जाय तो हैजा अजीर्ण का ही भयकर रूप है। इस रोग की उत्पत्ति तथा प्रसार प्राय गर्मी के मौसम मे ही होता है। गर्मी के मौसम मे खाया हुआ अन्न उतनी सरलता से हजम नही हो पाता। फिर अधिक मात्रा मे यदि भोजन कर लिया जाय तो मौत को निमत्रण देना ही समझें। इसमे शक नही कि इस बीमारी की शुरुआत अजीर्ण से ही होती है। यह बीमारी इतनी सक्रामक होती है कि एक कुटुम्ब के किसी सदस्य पर इसके आक्रमण होते-होते पूरा कुटुम्ब ही इसकी चपेट मे आ जाता है। फिर पास-पडोस के लिए भी अछूता रह सकना मुश्किल है। पूरा गाँव-कसबा सभी इस महामारी के चगुल मे आ जाते है। मौत और सहार की जो दानवी लीला यह महामारी दिखाती है, उसकी कल्पना भी भयावह है। इस महामारी से अच्छे-अच्छे रौनकदार गुलजार शहर, गाँव सभी जन-शून्य और बीरान होते देखे गए है।

आधुनिक वैज्ञानिको ने यह सिद्ध किया है कि खास जाति के एक कीडे से यह बीमारी उत्पन्न होती है और ये कीडे बडी शीघ्रता से बढते तथा रोग-प्रसार का कारण बनते हैं। कीटाणुजनित हैजे का प्रकोप बडा भीषण होता है और प्रकोप होने के ८-१० घटे के अन्दर ही रोगी का प्राणान्त हो जाता है।

लक्षण—हैजे का साधारण लक्षण दस्त और वमन ही है। दस्त और वमन के शुरू होते ही लोग समझ लेते है कि हैजा हुआ। किन्तु मात्र दस्त और वमन ही हैजे का पर्याप्त लक्षण नही समझना चाहिए। हैजे की खास पहचान पेशाब का रुक जाना तथा दस्त का पानी की तरह अथवा चावल के माँड की तरह और वमन का पानी की तरह होना है। प्यास भी रोगी को बहुत लगती है। इसके अतिरिक्त शूल, भ्रम, जाँघो में पीडा, जँभाई, दाह, शरीर का रग विवर्ण हो जाना, शरीर मे कँपकँपी, छाती मे दर्द, मूर्च्छा आदि लक्षण भी होते है।

इस रोग के साथ अनेक उपद्रव भी होते हैं—जैसे, नीद न आना, बेकली, कपकपी और बेहोशी। इस रोग का आक्रमण बहुधा पिछली रात को होता है।

कारण—निम्न कारणो से प्राय यह रोग उत्पन्न होता है—(१) घर स्वच्छ नही रखना, (२) मनुष्यो की भीड मे बैठना, (३) गरिष्ठ या भारी तथा बासी पदार्थ खाना, (४) बासी दूध, बासी रबडी, बासी खोआ, खट्टा दही, बासी मास, बदबूदार घी खाना, (५) कच्चे और सडे फल खाना, (६) ककडी, खरबूजा, आडू, कुम्हडा आदि खाना।

कुछ खास हिदायतें—(१) हैजे की औषधियाँ तैयार रक्खी जाँय, क्योकि यह रोग प्रतिक्षण बढता है। इसलिए जितनी ही देर होगी, उतनी ही कठिनाई बढेगी।

(२) रोग के आरभ होते ही, रोगी को दस्त रोकने-वाली तेज दवा देना खतरे से खाली नही। इससे पेट फूल जाने की आशका है। इसलिए अल्प मात्रा मे दस्त रोकने वाली दवा देनी चाहिए।

(३) मिथ्या आहार-विहार अथवा कर्म, अर्थ और काल के मिथ्या, हीन और अतियोग से बचना चाहिए।

(४) रोगी को रोग शमनार्थ औषधि तो दे ही, परन्तु उसकी प्यास, वमन को रोकने और पेशाब कराने का प्रयत्न भी होते रहना चाहिए।

(५) नाडी के एकदम मद होने तथा हाथ-पैर के ठढा हो जाने की स्थिति मे 'विषगर्भ तेल" में "तारपीन का तेल" मिलाकर मालिश करे—वमन-नाश के लिए पेट पर राई प्रभृति लगाने, प्यास के लिए सौंफ तथा पोदीने आदि का जल पिलाने तथा पेडू पर मूत्रल दवा की लेप लगाकर पेशाब कराने की चेष्टा होनी चाहिए।

(६) रोगी की चिकित्सा तथा सेवा-सुश्रुषा जहाँ आवश्यक है, वहाँ रोगी के विस्तरे, कमरे आदि की स्वच्छता भी परम जरूरी है। घर मे वायुशोधक द्रव्यो की धूनी जलाना तथा रोगी के कपडे, विस्तरे आदि को स्वच्छ रखना भी आवश्यक है। पानी को सदा उबाल कर ही पीएँ।

(७) रोगी को ठड न लग सके, इसका ध्यान रहे। बोतलो मे गरम पानी भरकर उन्हे रोगी के दोनो पैरो के बीच रखने से रोगी का शरीर गर्म रहेगा।

(८) हैजे के रोगी को प्यास बहुत लगती है और वह एक साथ घडो पानी पी जाना चाहता है। इसलिए रोगी को घूँट-घूँट जल पिलाना ठीक है। प्यास को दूर करने के लिए 'अर्क कपूर' का उपयोग लाभप्रद होता है। 'अर्क कपूर' हैजे की उत्तम औषधि है। किन्तु जिसको अर्क कपूर दिया जाय, उसको एक घटे तक जल पीने के लिए नही देना चाहिए।

(९) जब हैजा फैला हो, कर्पूर को सदा साथ रखना तथा समय-समय पर सूघना अत्युत्तम होता है। हीग, पोदीना, काली मिर्च या पिपरमिट का दैनिक सेवन लाभकर है। भोजन के बाद दो-चार बूंद "बैद्यनाथ अर्क सुधा" लेना चाहिए। जब तक महामारी का प्रकोप एकदम शात न हो जाय तबतक सदैव उबाल कर ही जल का सेवन करे।

पथ्यापथ्य—जहाँ तक विशूचिका के रोगी का प्रश्न है, खूब सतर्कता और सावधानी के साथ उसके पथ्यापथ्य की व्यवस्था करनी चाहिए। एक तो पथ्य तभी दिया जाना चाहिए, जबकि रोग पूर्णतया शात हो चुका हो। रोगाक्रात दशा मे जल के अलावा कुछ भी देना खतरे को निमत्रण देना है। रोग के पूर्णतया शमित हो जाने पर भी नीबू और मिश्री का शर्बत, फलो का रस, दूध अथवा दही की बर्फ मिली हुई लस्सी, मठा, बार्ली का पानी, साबूदाना, अरारोट आदि पेय प्रधान भोजन देना चाहिए। भात, रोटी आदि गरिष्ठ भोजन तो रोग-शाति के ४–५ दिन बाद दे।

चेचक

चेचक या शीतला सक्रामक रोग है। रोगी के स्पर्श से अथवा वस्त्रादि से इस रोग का सक्रमण बडी शीघ्रता से अन्य व्यक्तियो मे हो जाता है। इसलिए चेचक होने पर छूआछूत से परहेज रखना परम जरुरी है।

साधारणतया चेचक निकलने के पूर्व रोगी को ज्वर आता है, देह मे खुजली होती है तथा भूख नही लगती। शरीर के रग मे परिवर्त्तन हो जाता है और आँखे लाल हो जाती है। चेचक बच्चो को अधिक तथा बूढो अथवा प्रौढो को बहुत कम होती है। इस रोग का प्रसार अधिकतर फरवरी-मार्च के महीने मे होता है।

लक्षण—रोगी को जाडा देकर ज्वर आता है। ज्वर के साथ सिरदर्द, बेचैनी, वमन की इच्छा, आदि लक्षण होते है। तीन-चार दिनो के भीतर रोगी के शरीर पर लाल-लाल दाने उभर आते है। इन दानो मे बडी खुजलाहट होती है। यदि रोग का आक्रमण साधारण रहा तो दाने कम निकलते है और शरीर पर जहाँ-तहाँ दिखायी देते है। किन्तु आक्रमण का रूप उग्र होने पर दाने बेशुमार निकलते है—यहाँ तक कि शरीर पर तिल रखने की जगह भी नही रहती। रोगी के मुंह, नाक, कान, छाती, गर्दन अर्थात् शरीर का कोई ऐसा भाग नही बचता जहाँ दाने न होते हो। ४८ घटे के भीतर इन दानो मे पीब आ जाती है और दानो की शकल उभरे हुए छालो जैसी हो जाती है। रोग जब बढने पर होता है तो ज्वर का तापमान भी बहुत बढ जाता है और रोगी प्रलाप करने लगता है—ऐसी दशा दो-चार दिन बनी रहे तो निश्चय ही रोगी का प्राणान्त समझना चाहिए। आराम होने, पर भी रोग अपना भीषण प्रभाव सदा के लिए रोगी के चेहरे पर छोड जाता है। कभी-कभी रोगी अधा, काना हो जाता है। रोगी बहरा होता भी देखा गया है। चेचक के निशान तो चेहरे पर सदैव बने ही रहते है।

चेचक (शीतला) के कई प्रकार होते है—बडी माता, कोद्रवामाता, पाणिसहा, खसरा आदि जिनमे बडी माता का आक्रमण सबसे भीषण होता है। बडी शीतला (माता) मे सारे शरीर मे आग से जले हुए फफोले की तरह बहुत-से फफोले होते है।

चिकित्सा और निरोध—शीतला के सम्बन्ध मे एक विचित्र अन्धश्रद्धा लोगो मे व्याप्त है। हिन्दू मात्र इस रोग को शीतला देवी का प्रकोप समझते है। इसलिए, किसी प्रकार की चिकित्सा कराने की अपेक्षा देवी को प्रसन्न करने का प्रयत्न किया जाता है। अक्सर दुर्गा सप्तशती का पारायण, पूजन तथा झाड-फूंक आदि चलता है। किन्तु ये बाते आधुनिकता के सम्पर्क मे आए व्यक्तियो

के लिए हास्यास्पद के सिवा और कुछ नही हो सकती। दरअसल, चेचक एक भीषण सक्रामक रोग है और इसमे परहेज की बडी जरूरत है।

चेचक की प्राय तीन अवस्थाएँ होती है—(१) निकलने की, (२) भरने की, (३) ढलने की। कभी-कभी चेचक तीन दिन मे निकल आती है, तीन दिनो मे भर जाती है और तीन ही दिन मे ढल जाती है। कभी ये तीनो काम पाँच-पाँच या सात-सात दिनो मे होते है, पर प्राय २१ दिनो से अधिक नही लगते।

रोग फैलने के पूर्व ही चैत के महीने मे दूध पीने वाले बच्चो की माताओ को, और दाँत वाले बालको को रक्त-शुद्ध करनेवाली औषधियाँ पिलानी चाहिए, पहले से ही इन औषधियो का सेवन किए रहने से चेचक का प्रकोप भीषण नही होता। चैत मास मे नीम की कोमल कोपलो को पानी मे घोट-छानकर पीने से रक्तविकार तथा वात, पित्त और कफ के रोग नष्ट होते है। इसी प्रकार नीम के बीज, बहेडे के बीज और हल्दी को बराबर-बराबर लेकर शीतल जल मे पीस-छानकर, कुछ दिन पीनेवाले को शीतला का भय नही रहता। रोटी खाने वाले बालको को इस नुसखे को हर मौसम मे महीने-दो-महीने या जितने दिन हो सके अवश्य पिलाना चाहिए—बहुत ही उत्तम नुसखा है। इसके पीने से यो चेचक होती नही, होती भी है तो साधारण रूप मे।

चेचक निकलने पर अत्यधिक स्वच्छता बरती जानी चाहिए और ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि इस रोग का सक्रमण दूसरो तक न हो सके। रोगी जहाँ पर हो उस स्थान की खूब सफाई होती रहे—बिस्तरे की चादरे रोज बदली जायँ तथा धूप-गुग्गुल आदि सुगन्धित द्रव्यो को जलाकर वातावरण को खूब सुगन्धित बनाए रखे।

रोगी को यदि अधिक प्यास मालूम पडे तो "षडग पानी" पीने को दे। चेचक के दानो मे यदि प्रदाह हो तो सूखे गोबर की राख हितकारी है—'भाव प्रकाश' मे इसका उल्लेख है कि गोबर की राख से दाने शीघ्र सूखने लग जाते है और पकते नही।

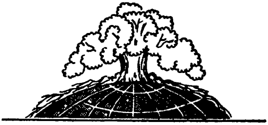
यदि दानो से स्राव होता हो तो उस पर पच वल्कल (छाल) का चूर्ण यानी बड, गूलर, पीपल, पाकड और मौलसिरी की छाल को चूर्ण कर घावो पर बुरक देना चाहिए।

पैरो के तलवो मे प्रदाह होने पर चावलो का पानी बनाकर उन पर सीचे। पानी तैयार करने की विधि यह है कि आधा पाव चावल को पानी मे भिगो दे। सबेरे उस जल को छानकर काम मे लावे। १-२ घटे चावल भीगने से भी चावलो का जल तैयार हो जाता है।

चेचक के दानो मे जो स्राव होता है, उसको धोने के लिए नीम, बबूल, अशोक और बेत की छाल— इनका समान भाग लेकर काढा बना और शीतल करके, जख्म और लेप आदि को धोना चाहिए।

पथ्य—चेचक के रोगी को यदि अरुचि हो, तो अनार और अम्ल रस से युक्त यूष बनाकर देना चाहिए। आज-कल दूध अथवा पानी के साथ साबूदाना, दूध या बारली, चावल तथा कुटू की खीले भी दी जाती है। बेदाना, अनार, किशमिश, परवल की तरकारी भी पथ्य मे दी जाती है। रोगी को शीतल जल ही पीने के लिए देना चाहिए। यदि खैर और विजयसार के साथ औटाया हुआ जल शीतल करके देना सभव हो तो और भी अच्छा।

रोग की उग्रता शात हो जाने पर भी रोगी के खान-पान अथवा पथ्यापथ्य के बारे म अधिक सतर्कता रखने की जरूरत है। ज्वर शात हुए बिना स्नान नही करना चाहिए। रोग के पूर्णतया शमित होने की स्थिति मे आमाहल्दी, सरकण्डे की जड और जलाई हुई कौडी—इन सबको कूट-छान, भैस के दूध मे मिला चेहरे पर लगाकर रात मे सो जाना चाहिए—इससे चेहरे के दाग मिट जाते है।



आयुर्वेद-जगत

आयुर्वेदोन्नति के लिए सरकारी व्यय

केन्द्रीय स्वास्थ्य मत्री श्री करमरकर न एक प्रश्न के उत्तर म बताया कि द्वितीय पचवर्षीय योजना म देशी चिकित्सा प्रणालियो की उन्नति के लिए १ करोड रु० रख गए है। उन्होन अपन वक्तव्य म आयर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली की उन्नति के बारे म निर्धारित कायक्रम का एक विवरण प्रस्तुत किया। विवरण म कहा गया कि १९५६ ५७ म बम्बई सरकार न ६ लाख ५३ हजार ७४ रु० और केरल की सरकार न १६ ६६६ रु० इस काय पर व्यय किए। १९५७–५८ म १९५७ के अत तक बम्बई न ६ २४ ३०० रु० उत्तर प्रदेश न ११ ००० रु० आन्ध्र प्रदेश न ६० ००० रु० मद्रास न ७ २०० रु० राजस्थान न ४० ००० रु० और केरल न ३० ००० रु० आयुर्वेदिक चिकिसा की उन्नति के लिए व्यय किए।

प्रथम पचवर्षीय योजना म स्वास्थ्य मत्रालय न देशी चिकित्सा प्रणालियो के सम्बध म अनसधान करन के लिए ३७ लाख ५० हजार रु० रख थ। इसम से पहल पच वर्षीय आयोजन की अवधि म २१ लाख रु० दिए गए। चूकि यह योजना पचवर्षीय आयोजन के उत्तराद्ध म शरु की गयी थी और चकि राज्यो न अधिक रुचि नही प्रकट की तथा अनसधान सस्थाओ न भी नियमित रूप से अनु सधान योजनाए प्रस्तुत नही की इसलिए जितन रुपए पचवर्षीय आयोजन म रख गए थ व सारे प्रयोग नही किय गय। देशी चिकित्सा प्रणाली के सम्बध म भारत सरकार को सलाह देन के लिए केन्द्रीय स्वास्थ्य मत्रालय न एक सलाहकार समिति नियुक्त की है। इसके अति रिक्त आयुर्वेद यूनानी और होम्योपैथी चिकित्सा प्रणालियो के सम्बन्ध म अनुसधान की जो योजनाएँ प्राप्त होगी उनकी छानबीन की जायगी।

देशी औषध-निर्माता सघ की सरकार से अपील

अखिल भारतीय देशी औषध निर्माता सघ की ओर से एक शिष्टमडल गत २३ माच को भारत सरकार के भारी उद्योगो के मत्री श्री मनुभाई शाह से मिला। इस शिष्टमडल म सव श्री बनवारी लाल शर्मा (डायरेक्टर श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवट लि० कलकत्ता) श्री अशोक बमन (कलकत्ता) देशी औषध निर्माता सघ के मत्री श्री कविराज प्राणनाथ पुष्करणा श्री क्राति प्रसाद जैन श्री कैलाश चद्र अग्रवाल तथा सघ के कार्यालय मत्री श्री गौरीशकर चौमाल सम्मिलित थ। मडल न सरकार द्वारा आसव अरिष्टो पर लागू किए गए नियमो से उत्पन्न कठिनाइयो से मत्री महोदय को पूण अवगत कराया। इसके अतिरिक्त शिष्टमडल न इस आशय की माग रखी कि विदेशो से आयात होन वाल कच्चे मूल द्रव्यो म कमी करन के साथ ही द्वितीय पचवर्षीय योजना म देशी चिकित्सा पद्धति के लिए अधिक धनराशि नियत की जानी चाहिए।

श्री शाह न शिष्टमडल की बातो को ध्यानपूवक सुना और शिष्टमडल के सदस्यो को यह आश्वासन दिया कि उपयुक्त कठिनाइयो के निराकरण के लिए वह आवश्यक कारवाई करग और इसके लिए सम्बधित सरकारी विभागो से सम्बध स्थापित करग।

आयुर्वेद को प्रोत्साहन देन की माग

गत २४ माच को लोकसभा म स्वास्थ्य मत्रालय सम्बधी मागो पर विचार करते समय ससद सदस्यो द्वारा केन्द्रीय सरकार की स्वास्थ्य-नीति विषयक जो आलोचना प्रस्तुत की गयी वह कई दष्टियो से विचारणीय है। लोक सभा म इस बात पर बडा जोर दिया गया कि सरकार को केवल एलोपथी की चिन्ता रहती है और जरूरत से भी अधिक सरकार की ओर से उसे प्रोत्साहन दिया जाता है। पण्डित ठाकुरदास भागव न तो यहा तक कहा कि देशी चिकित्सा पद्धतियो तथा होम्योपैथी के साथ विमाता-का-सा व्यवहार किया जा रहा है। उत्तर प्रदेश के काग्रसी सदस्य श्री नरदेव स्नातक न देशी चिकित्सा-पद्धति के प्रति सरकारी उपेक्षा की चर्चा करते हुए कहा कि सरकार अब आयर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली के प्रति अपनी उपेक्षा नीति का परित्याग कर अधिकाधिक प्रोत्साहन देन की दिशा म प्रयत्नशील हो। आपन कहा कि अग्रजी चिकित्सा प्रणाली म तो

सरकार करोडो रुपय व्यय करती है किन्तु आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली म लाखो रुपय तक नही लगाती। आपन आग कहा कि उचित तो यह था कि देशी चिकित्सा प्रणाली पर अधिक रकम खच की जाती किन्तु यदि यह सम्भव न हो तो दोनो प्रणालियो म बराबर बराबर पैसे व्यय होन चाहिए। आपन आकडा प्रस्तुत करते हुए कहा कि देश की दो प्रतिशत जनता अग्रजी चिकित्सा प्रणाली से लाभान्वित होती है जब कि आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली से लगभग ८० प्रतिशत और शष जनता यूनानी व होम्योपैथी प्रणाली का उपयोग करती है। आपन जोर देकर कहा कि सरकार की लापरवाही के कारण देशी चिकित्सा प्रणाली का अधिक विकास नही हो रहा है। श्री स्नातक न आसव अरिष्टो पर से उत्पादन कर हटा देन की माग करते हुए कहा कि वशलोचन शिलाजीत जैसी महत्त्वपूण चीजो पर सरकार को चाहिए कि वह नियत्रण रख। अन्य ससद सदस्यो न भी देशी चिकित्सा प्रणाली को अधिकाधिक प्रोत्साहन देन के पक्ष म ही अपनी राय प्रकट की।

स्वास्थ्य मत्री श्री श्री डी० पी० करमरकर न ससद सदस्यो द्वारा सरकार की देशी चिकित्सा प्रणाली विषयक उपेक्षा नीति की आलोचना के सिलसिल म लगाए गए आरोपो का उत्तर देते हुए कहा कि सरकार सभी चिकित्सा प्रणालियो को सहायता पहुचान के लिए तैयार है। अनुसधान के बाद आयुर्वेद की जिन औषधियो को अच्छा और उत्कृष्ट पाया जायगा सरकार उनका व्यापक रूप से उपयोग करेगी किन्तु इस मामल म सरकार बिल्कुल तटस्थ भाव से आग बढना चाहती है और वह किसी स्वदेशी भावना को कदापि स्वीकार नही करेगी। श्री करमरकर न पुन बताया कि सरकार इस बात के लिए बहुत उत्सुक है कि औषधियो के मामल म भारत स्वावलम्बी बन।

लोकसभा म ससद सदस्यो द्वारा किय गए वाद विवाद की मूल भावना यह था कि सरकार को अपनी स्वास्थ्य विषयक नीति म स्वदेशी मनोवत्ति का परिचय देना चाहिए क्योकि इस विशाल देश की ८० प्रतिशत जनता आयुर्वेद तथा अन्य देशी चिकित्सा पद्धति द्वारा ही लाभान्वित होती है। जैसा कि श्री राधलाल व्यास (काग्रस) न आसवो और अरिष्टो पर से वत्तमान उत्पादन कर को हटान की माँग करते हुए सरकार पर यह जोर डाला कि वह आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली को अधिकाधिक व्यापक बनान का प्रयत्न करे इसके लिए यह जरूरी है कि सरकार की सक्रिय दिलचस्पी उधर होनी चाहिए।

स्वास्थ्य मत्री से प्रश्न पूछ जाते समय प्रधान मत्री नहरू न सदस्यो की आलोचना के प्रत्युत्तर म कहा कि विज्ञान के क्षत्र म किसी तरह का पक्षपात अभीष्ट नही। साथ ही स्वास्थ्य और चिकित्सा के प्रति आज के युग म दकियानूसी विचार रखना ठीक नही। औषधिया चाह आयुर्वेद की हो अथवा किसी अन्य चिकित्सा पद्धति की सबसे आवश्यक बात उसकी उपयोगिता तथा गुण धम है। इस कसौटी पर ही किसी पद्धति के गुण-दोष का विवचन होना चाहिए।

प्रधान मत्री न आग कहा कि चिकित्सा एक ही विषय है और मुझ इस बात पर कोई आपत्ति नही कि वैद्य या डाक्टर मरीज का किस चिकित्सा प्रणाली से इलाज करता है लकिन हम एसा अनुभव करते है कि चिकित्सा करनवाल प्रत्यक व्यक्ति को वैज्ञानिक शिक्षा अवश्य मिली हुई हो। आपन कहा—एक वैसे व्यक्ति से जो शरीर के भीतरी रहस्यो को ठीक-ठीक नही जानता अथवा कई एसी बातो की जानकारी नही रखता जो आधुनिक विज्ञान न अनसधान के बल पर प्रस्तुत किया है यह कदापि आशा नही की जा सकती कि वह अच्छा चिकित्सक बन सकेगा। प्रधान मत्री न बडा जोर देकर कहा कि आधनिक विज्ञान (माडन सायस) की जानकारी जिन व्यक्तियो को नही है व भला कुशल चिकित्सक किस प्रकार हो सकते है।

आयुर्वेदीय सस्थाओ को सरकारी अनुदान

पश्चिम बगाल सरकार के स्वास्थ्य विभाग से प्रकाशित एक विज्ञप्ति के अनुसार चालू आर्थिक वष म निम्नलिखित आयुर्वेदीय सस्थाओ को निम्नानुसार अनुदान स्वीकृत किय गय है—

विश्वनाथ आयुर्वेद महाविद्यालय को ७०००) रु० आयुर्वेद सेवक सघ और वैद्यक शाला कोन्नई मिदनापुर जिला को ५००) रु० यामिनीभूषण अष्टाग आयुर्वेद विद्यालय और आयुर्वेद आरोग्यशाला को ३००००) रु० का एडहाक अनुदान (१०) डा० एम० एन० चटर्जी मेमोरियल आई हास्पिटल कलकत्ता को २०००) रु० (११) गगाधर चैरीटेबुल आयुर्वेदिक डिस्पेन्सरी सैदाबाद जिला मुर्शिदाबाद को ५००) रु० (१२) तुलसीराम लक्ष्मीदेवी जायसवाल हास्पिटल लिलुवा हबडा को कुष्ठ

आश्रम के लिए २०००) रु० (१३) श्यामादास वैद्य शास्त्र पीठ परिषद कलकत्ता को ८०००)।

दिल्ली में अखिल भारतीय आयुर्वेद कांग्रेस

राजधानी दिल्ली म अ० भा० आयर्वेद महासम्मेलन के ४३ व वहत अधिवशन की तैयारियाँ उत्साहपूवक की जा रही है। उत्कन निवासी वैद्यराज श्री अनन्त त्रिपाठी शर्मा एम० ए० पी० ओ० एल० आयुर्वेदाचाय निर्विरोध महासम्मेलन के अध्यक्ष निर्वाचित किय गए है। पहल इस अधिवशन के लिए ६–७–८ अप्रैल की तिथियाँ निश्चित की गयी थी कि तु अब निकट भविष्य की किसी अनिश्चित तिथि को दिल्ली म अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का अधिवशन सम्पन्न करन का सवसम्मत निणय किया है। अधिवशन के समय दिल्ली म देश भर के उच्च कोटि के विद्वान वैद्यो का समागम होगा। इस अवसर पर विभिन्न सम्भाषा परिषदो के अतिरिक्त एक अ० भा० आयर्वेद स्नातक सम्मेलन का भी आयोजन किया जा रहा है। बड पमान पर आयर्वेद विज्ञान प्रदशनी का सयोजन भी हो रहा है जो अपन प्रकार की अद्वितीय होगी। स्वागत सामति की ओर से देश भर के औषध निर्माता प्रतिष्ठानो और आयर्वेद के उच्चकोटि के विद्वानो से प्रदशनी एव अन्य परिषदो की सफलता के हतु सक्रिय सहयोग की अभ्यथना की गयी है।

अधिवशन एव उसके विभिन्न विभागो के उदघाटन के हतु माननीय राष्टपति तथा अ य केन्द्रीय मत्रियो से प्राथना की जा रही है। स्वागत समिति के कायकर्त्ताओ के उत्साह और परिश्रम को देख कर यह कहा जा सकता है कि दिल्ली म आयुर्वेद क्षत्र का यह आयोजन अत्यन्त सफल एव एतिहासिक होगा।

दिल्ली म होनवाल अधिवशन के अवसर पर एक विशाल आयुर्वेदिक प्रदशनी भी की जायगी। आयुर्वेदीय चिकित्सा-पद्धति को अवैज्ञानिक तथा अपूण कह कर जनता एव राज्याधिकारियो के सम्मुख फैलाय गय भ्रम का निवारण करन के लिए समय-समय पर आयुर्वेदिक प्रदशनियो का आयोजन बहुत ही आवश्यक है और इसी ध्यय को मुख्य रूप से ध्यान म रखते हुए इस बार प्रदशनी विशाल रूप म आयोजित की जा रही है। विशाल वैज्ञानिक ढग पर सयोजित की गई आयुर्वेदिक प्रदशनी द्वारा ही हम राज्याधिकारियो को प्रभावित कर सकग कि वास्तव म आयुर्वेद पूण विज्ञान है—किसी समय यह समुन्नत चिकित्सा-पद्धति थी और उचित सहायता से पुन उसी स्थान पर आरूढ हो सकती है।

राष्टोत्थान के लिय चल रही अ य विकास योजनाओ के समान ही आयुर्वेद को भी उचित सहायता मिलनी चाहिए। यदि वत्तमान विकास योजनाओ म आयर्वेद को समुचित स्थान नही मिल सका तो यह विज्ञान बहुत पिछडा हुआ रह जायगा। अत प्रयक आयर्वेद हितैषी भारतीय नागरिक का कत्तव्य है कि वह इस चिकित्सा विज्ञान को इसका उचित स्थान प्राप्त करान म पूण सहयोग दे। विशाल वैज्ञानिक आयवदिक प्रदशन के लिय सभी महानुभावो का सहयोग नितान्त आवश्यक है। अत वैद्यो से नम्र निवदन है कि आयर्वेद से सम्बन्धित प्रदशन योग्य जो भी सामग्री उनके पास उपलब्ध हो उनका प्रदशन इस अवसर पर अवश्य कर।

व महानुभाव जो इस प्रदशनी म आयुर्वेद सम्बधी सामग्री प्रदर्शित करना चाह उसकी सूची हम शीघ्र ही निम्न पते पर भजन की कृपा कर। साथ ही माग व्यय एव अ य खच सम्बन्धी सब बात भी हमारे साथ पत्र व्यवहार द्वारा निश्चित कर लव। समयाभाव होन के कारण जो महानभाव इस अवसर पर स्वय न आ सक व अपनी सामग्री हम निम्न पते पर भज सकते है। प्रदशन के बाद उनकी चीज सुरक्षित रूप से उनके पास लौटा दी जावगी। समय कम रह गया है और प्रत्यक वस्तु के प्रदशन के लिय उचित स्थान निश्चित करना है। अत हम शीघ्रातिशीघ्र यह सूचना भजन की कृपा कर कि हम क्या क्या वस्तुए भज सकग। आशा है सभी महानुभाव आयुर्वेदोत्थान के इस काय म पूरा-पूरा हाथ बँटायग। पता —कविराज शातिप्रसाद जैन द्वारा राजवैद्य शीतलप्रसाद एण्ड सन्स चाँदनी चौक दिल्ली।

भागलपुर जिला वैद्य-सम्मेलन

भागलपुर जिला वैद्य-सम्मेलन का चतुथ अधिवशन कविराज विद्यानारायण शास्त्री के सभापतित्व म सम्पन्न हुआ। अधिवशन का उदघाटन भागलपुर जिल के सुप्रसिद्ध कांग्रसी नता श्री राघवन्द्र नारायण सिह एम० एल० ए० ने किया। उद्घाटन करते हुए उन्होन कहा कि

आयुर्वेद के द्वारा भारत की लाखो जनता प्रति दिन स्वास्थ्य-लाभ करती है। कई पीढियो से उपेक्षित रहने के बाद भी आज आयुर्वेद जीवित है। यही इसकी वैज्ञानिकता की महान् कसौटी है। आज के युग मे आयुर्वेद को अन्य चिकित्सा-पद्धति के साथ मुकाबला करना है।

आज वैद्यो को सोचने की जरूरत है कि हम आयुर्वेद को किस प्रकार लोकप्रिय बना सकें। प्रजातन्त्र के युग मे जनता का समर्थन जिसे अधिक मिलता है, उसकी ओर सरकार को चलना पडता है। इसलिये आप वैद्यो को अधिकाश जनता का समर्थन प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। यह सत्य है कि सरकार से जितना प्रोत्साहन एव सुविधा आयुर्वेद को देने की आवश्यकता थी, सरकार उतना नही दे रही है। स्थानीय आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थिति की चर्चा करते हुए उन्होने कहा कि मै अन्य लोगो के विचार के अनुसार महाविद्यालय के सुधार का प्रयास करूँगा।

अधिवेशन के प्रारभ के पूर्व स्वागताध्यक्ष कविराज राधेश्याम मिश्र ने स्वागत-भाषण किया। सभापति के भाषण के पूर्व प्रधान मन्त्री के द्वारा कार्य-विवरण पढा गया। अधिवेशन मे कविराज मन्मथनाथ बन्दोपाध्याय, पण्डित श्री त्रिपाठी कमला प्र० मणि, कवि० श्री सुखराम प्रसाद एव प० दुर्गाप्रसाद शर्मा, श्री सत्यनारायण अग्रवाल जी का सहयोग एव सहानुभूतिसूचक महत्त्वपूर्ण कामनाओ के सदेश प्राप्त हुए। अधिवेशन मे जिले के विभिन्न थानो से आये हुए प्रतिनिधि १३६ की सख्या म उपस्थित थे। आयुर्वेद उत्थान सम्बन्धी कई प्रस्ताव स्वीकृत हुए।

भागलपुर जिला आयुर्वेद-विज्ञान सम्मेलन का प्रथम अधिवेशन भी कविराज श्री सत्यनारायण राय जी के सभापतित्व म इसी अवसर पर सम्पन्न हुआ।

श्री प्रेमशकरजी का स्वागत

राजस्थान आयुर्वेद विभाग के सचालक श्री प्रेमशकरजी भिषगाचार्य का श्रीगगानगर मे स्थानीय वैद्यो द्वारा सुन्दर स्वागत हुआ। आप आयुर्वेदीय औषधालयो का निरीक्षण करने पधारे थे। आपने अपने भाषण मे आयुर्वेदोत्थान के लिये विशेष प्रयत्नशील रहने की अपील की। आपने इस प्रान्त मे आयुर्वेद की सर्वप्रियता देख कर हर्ष प्रकट किया और कहा कि यह वैद्यो का ही साहस था कि सदियो तक परतन्त्र राष्ट्र मे राज्याश्रय-विहीन दूसरी चिकित्सा-पद्धतियो से टक्कर ले कर भी आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति जीवित रही। अब हमारी सरकार आयुर्वेद को प्रोत्साहन दे रही है। इसलिये वैद्यो को और भी सजग तथा सचेष्ट रहने की आवश्यकता है। आपने इस बात का दु ख प्रकट किया कि आयुर्वेद के कुछ अमूल्य योग वैद्यो की अनुदारता के कारण लुप्त हो गये हैं। अब जिन वैद्य महानुभावो के पास अमूल्य योग हैं उनको जन-हितार्थ प्रकट कर देना चाहिए, ताकि आयुर्वेद सही अर्थों मे जनता का हित कर सके। राष्ट्र मे आयुर्वेद चिकित्सा-पद्धति की नितान्त आवश्यकता है। चूँकि वह वास्तविक आरोग्यता प्रदान करती है एव सस्ती तथा सुलभ भी है। आपका बाल पक्षाघात और स्नायुविक रोग के बारे मे भी वैद्यो से विचारो का आदान-प्रदान हुआ। आपने यह भी बतलाया कि इन दोनो मे एक महत्त्वपूर्ण अनुसधान चल रहा है। आशा है हम उसमे पूर्ण सफल होगे।

श्री बैद्यनाथ धर्मार्थ औषधालय पटना

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० द्वारा सचालित बैद्यनाथ धर्मार्थ औषधालय पटना मे फरवरी मे कुल ७१२ रोगियो की मुफ्त चिकित्सा की गई। इसम २९८ नये और ४१४ पुराने रोगी थे। इसमे पुरुष रोगियो की सख्या १८५, स्त्री रोगियो की सख्या ५४ और बाल रोगियो की सख्या ५९ थी। इस मास की दैनिक उपस्थिति का औसत २५.४ रहा। नये रोगियो की सख्या रोगानुसार नीचे लिखे मुताबिक है —

ज्वर २५, विषमज्वर २, उत्फुल्लिका, श्वसनकज्वर ७, मथरज्वर २, उदर ४०, आमातिसार १४, कृमि ३, कास ५९, श्वास ३, वातव्याधि २३, आमवात १, वातरक्त १, श्लीपद २, कुष्ठ १, क्षुद्रकुष्ठ १५, रजोदोष २, वृद्धिरोग ४, अर्श १, प्रमेह ७, शिरोरोग १, नेत्ररोग ८, प्रतिश्याय २०, कर्ण ७, मुखरोग १०, व्रण १०, प्लुष्ट १, अम्लपित्त ६, मूत्रकृच्छ्र ३, मक्कलशूल २, गर्भवतीज्वर १, मसूरिका १, वातगुल्म २, विसर्प ३, रक्तपित्त २, व्रण २, परिणामशूल २, विविध ४।

एम० पी० क्लब आयुर्वेद औषधालय

ससदीय क्लब भवन मे एक शानदार होलिकोत्सव का आयोजन श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० की देहलीशाखा के द्वारा सम्पन्न किया गया। ससद सदस्यो की

उपस्थिति पर्याप्त रही। राष्ट्रपति भवन के कमचारी भी शामिल हुए। कविराज उपेन्द्रनाथ दास श्री विद्यारत्न आयुर्वेदालकार राजवैद्य सुधन्वा अध्यक्ष एम० पी० क्लब आयुर्वेदीय औषधालय नाथ एवन्यू नई देहली के अतिरिक्त ससद सदस्यो के भी सामयिक भाषण हुए। सभी वक्ताओ ने सरकार द्वारा देशी चिकित्सा विज्ञान की मान्यता ससद म एतदथ प्रयत्न करन की आवश्यकता पर जोर देते हुए बताया कि देशी इलाज इस देश की पुरानी सस्कृति है। जिस प्रकार अपनी सरकार सगीत ललित कलाओ के उत्थान के लिए अकादमी खोल कर भरपूर धनराशि का एतदथ व्यय कर रही है उसी प्रकार भारत की पुरानी चिकित्सा पद्धति के उत्थान के लिए भी सरकार को प्रयत्न कर शीघ्र ही देहली म एक पृथक डाइरेक्टरेट की स्थापना चोपडा कमेटी और दव कमेटी द्वारा अनुमोदित विचार धारानुकूल देश म इस विज्ञान की शिक्षा की समता वैद्यमात्र के लिए चिकित्सा की स्वतन्त्रता एव केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्य-मान्यता तथा आयुर्वेदीय अनुसधान काय पर प्रचुर धनराशि के व्यय की सुगमता का सक्रिय प्रबन्ध करना चाहिए। अब देश स्वतन्त्र हो चुका है। देशी इलाज देश की अपनी सस्कृति है। इसे सरकार को अपनाना चाहिए। इसके चिकित्सको की राष्ट्र के चिकित्सा क्षत्र म सर्वाधिक सख्या म काय-तत्परता प्रमाणित कर रही है कि इसे जनता का सर्वाधिक समथन प्राप्त है। सरकारी उपेक्षा अवाछनीय है। बगलौर अधिवशन म दव कमेटी के प्रस्तावो पर केन्द्रीय स्वास्थ्य मत्रालय न न्यायोचित प्रस्ताव पास न करके अपनी जिम्मेवारी को प्रान्तीय सरकारो पर ही लादा है जो उचित नही। सरकार को अपना रुख आयुर्वेद विज्ञान के प्रति अधिक अनुकूल बनाना पडगा। देश का जनमत यह सहन नही कर सकता कि सरकार दो प्रतिशत जनता की सेवारत एलोपैथिक विज्ञान के लिए तो करोडो रुपयो की धनराशि खच करे और ९८ प्रतिशत जनता की सेवा करनेवाली देशी चिकित्सा पर मामूली धनराशि अनमने मन से व्यय कर जनता का मुँह बन्द करे। ससद सदस्यो से अनुरोधपूवक प्राथना है कि वे लोक और राज्य सभाओ म इस अन्याय को रोक और सरकार की नीति को बदल कर उसे राष्ट्रीय हितो की समर्थक बनाव। अन्त म उपस्थित सज्जनो का वैद्यनाथ भवन द्वारा सत्काराथ मिष्टान्न वितरण एव जल-पान-ताम्बूल द्वारा स्वागत किया गया और इस प्रकार ससदीय आयुर्वेदीय औषधालय नाथ एवन्यू नई देहली भवन म इस रोचक आयोजन की सफल समाप्ति हुई। उपस्थित ससद सदस्यो न नाथ एवन्यू ससद क्लब की ओर से इस आयोजन एव आयुर्वेद हितसाधक गोष्ठी द्वारा प्राप्त परिचय के लिए प्रबन्ध-कर्त्ताओ का आभार प्रदशन करते हुए श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवट लि० द्वारा सचालित इस आयुर्वेदीय औषधालय के काय की प्रशसा की और विश्वास दिलाया कि व इस दिशा म विशष रुचि रखते हुए आयुर्वेद हितसाधन म जागरुक रहग।

उत्तर प्रदेश में आयुर्वेद की प्रगति

राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय का शिलान्यास

राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय मौना का शिलान्यास जिल के गणमान्य व्यक्तियो की उपस्थिति म आयुर्वेदाचाय श्री दत्तात्रय अनन्त कुलकर्णी एम० एस० सी० उप-सचालक चिकित्सा एव स्वास्थ्य विभाग (आयुर्वेद) उत्तर प्रदेश के कर कमलो द्वारा दिनाक २० जनवरी १९५८ वृत्समारोह के साथ सज-सजाय पण्डाल के मध्य यथाविधि सम्पन्न हुआ। ग्राम मौना जिला देवरिया से लगभग २५ मील दक्षिण सरयू सरिता के उत्तरीय तट पर स्थित है। इस चिकित्सालय के निमित्त समुचित भवन व्यवस्था न होन के कारण श्री रामनगीना उपाध्याय के विशष परिश्रम तथा विभिन्न लोगो के सहयोग से लगभग डढ सहस्त्र रुपय एकत्रित हो चुके है तथा डढ एकड भूमि भी प्राप्त हो गई है और अब पक्के भवन का निर्माण भी प्रारम्भ कर दिया गया है। शिलान्यास समारोह के अवसर पर भी दानी पुरुषो ने २०१ १५१ १०१ और ५१ रुपयो का दान दे कर चिकित्सालय भवन निर्माण के पुण्य काय को पूण करने म सहयोग प्रदान किया।

भारतीय चिकित्सा परिषद उत्तर प्रदेश के अध्यक्ष का निर्देशन

यू० पी० इण्डियन मेडिसिन एक्ट ९३९ (यू० पी० एक्ट सख्या १० १९३९) की धारा ५ की उपधारा (१) के पहले खण्ड के प्रतिबन्धक द्वारा प्राप्त अधिकारो का प्रयोग करके उत्तर प्रदेश के राज्यपाल बरेली के श्री दरबारी लाल शर्मा (रजिस्ट्रेशन सख्या ६९७) को उत्तर प्रदेश, भारतीय चिकित्सा परिषद का अध्यक्ष निर्देशित करते है।

भार० चिकित्सा परिषद उत्तर प्रदेश के सदस्यों का निर्देशन

यू० पी० इण्डियन मेडीसन एक्ट १९३९ (यू० पी० एक्ट सख्या १०, १९३९) की धारा ५ की उपधारा (१) के दूसरे खण्ड द्वारा प्राप्त अधिकारो का प्रयोग करके उत्तर प्रदेश के राज्यपाल निम्नलिखित व्यक्तियो को भारतीय चिकित्सा परिषद उत्तर प्रदेश, का सदस्य निर्देशित करते है —

(१) श्री ज्ञानेन्द्रदत्त त्रिपाठी (श्री दुर्गादत्त त्रिपाठी के पुत्र) वैद्य लखनऊ (रजिस्ट्रेशन सख्या ११७ ए क्लास)

(२) हकीम हाजिक खॉ इटावा (रजिस्ट्रेशन सख्या २८७ ए क्लास)

(३) श्री रामगोपाल शास्त्री निजी समाभ्यासी प्राइवेट प्रेक्टिशनर (झाँसी) (रजिस्ट्रेशन सख्या २० ए० सी०)

(४) श्री रामशकर वैद्य प्राइवेट प्रेक्टिशनर, वाराणसी (रजिस्ट्रेशन सख्या ए १६१६७)

(५) श्री दत्तात्रेय अनन्त कुलकर्णी एम० एस० सी० आयुर्वेदाचार्य उप-सचालक चिकित्सा तथा स्वास्थ्य सेवाएँ उत्तर प्रदेश (आयुर्वेद) (रजिस्ट्रेशन सख्या १०१२ ए क्लास)

ड्रग एक्ट के अधीन वैद्य-हकीमो को सुविधाए

वैद्य और हकीमो को अपने निजी रोगियो की चिकित्सा के लिये सल्फा ड्रग, स्ट्रेप्टोमाईसिन और अन्य एलोपथिक औषधियो को प्रयोग करने मे आपत्ति नही है। यहाँ तक ड्रग एक्ट के अन्तर्गत उन्हे लाइसेन्स लेने की आवश्यकता नही है, किन्तु यदि वे जन-साधारण मे औषधियाँ बचेगे तो उन्हे ड्रग एक्ट के अन्तर्गत लाइसेन्स प्राप्त करना आवश्यक है। जब वे यह लाइसेन्स प्राप्त करे तो उन्हे सशोधित ड्रग एक्ट के अन्तर्गत निर्दिष्ट सभी वाछनीय शर्तों को पूरा करना होगा। यदि वे निर्माणशाला चलाने के लिये लाइसेन्स प्राप्त करे तो उन्हे एक रजिस्टर्ड फार्मेसिस्ट जो कि नुसखो के अनुसार औषधियाँ तयार कर सके, की नियुक्ति करनी होगी।

राजकीय आयुर्वेदिक एव यूनानी कम्पाउण्डर सघ को मान्यता

राज्य सरकार ने राजकीय आयुर्वेदिक एव यूनानी कम्पाउण्डर सघ को शासकीय आदेश सख्या ३४९८ की आई (५-१५५६) ५५ दिनाक जनवरी २१, १९५८ ई० द्वारा निम्नलिखित शर्तों के अनुसार मान्यता प्रदान कर दी है —

(१) सघ शासन को नियमित रूप से सघ के नियमो और उनके सशोधनो की प्रतियाँ प्रेषित करें।

(२) सघ उप-सचालक चिकित्सा एव स्वास्थ्य सेवाएँ (आयुर्वेद) उत्तर प्रदेश को सघ के पदाधिकारियो को सूची प्रेषित करे।

(३) सघ अपने सभी अभ्यावेदन उप-सचालक चिकित्सा एव स्वास्थ्य विभाग (आयुर्वेद) के द्वारा शासन को प्रेषित करे।

(४) मान्यता प्राप्त सघ को शासन द्वारा समय-समय पर प्रसारित आदेशो को आशिक रूप से अथवा पूर्ण रूप से परिवर्तित करने अथवा उसके विरुद्ध करने के लिये सम्मति प्रदान न कर।

शासन ने सघ का विधान आशिक परिवर्तन के साथ कि सघ के पदाधिकारी सघ के साधारण सदस्यो म से ही हो, स्वीकार कर लिया।

राजकीय आयुर्वेदिक एव यूनानी कम्पाउण्डर सघ

राजकीय आयुर्वेदिक एव यूनानी कम्पाउण्डर सघ का वार्षिक सम्मेलन दिनाक २८-२९ अप्रैल १९५८ ई० को लखनऊ मे होना निश्चित हुआ है। इस सम्मेलन मे सम्मिलित होने के लिये दिनाक २७ अप्रैल १९५८ ई० से ३० अप्रैल १९५८ ई० तक प्रदेश के समस्त राजकीय आयुर्वेदिक एव यूनानी औषधालयो के वितरको को विशेष आकस्मिक अवकाश प्रदान किया गया है।

क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी

क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी, आगरा डिवीजन के पते मे परिवर्तन हो गया है जो कि निम्न प्रकार है— श्री शिवनाथ शास्त्री, क्षेत्रीय आयुर्वेदिक अधिकारी, कार्यालय आलमगज (कारवा) आगरा।

समन्वय का आदर्श !!!

आयुर्वेद, एलोपेथी, यूनानी, होमियोपेथी आदि चिकित्सा-पद्धतियों के समन्वय का आज बोलबाला है। परन्तु इस दिशा मे प्रयत्न चाहिए उतना हुआ नही है। वस्तुत,

भावी पीढी के मार्गदर्शनार्थ—

समन्वयात्मक पद्धति से ग्रन्थों का लेखन तथा प्रकाशन सर्वोपरि आवश्यक है।

वैद्यनाथ-प्रकाशन

आयुर्वेदीय क्रियाशारीर

समन्वय-प्रधान दृष्टि से लिखे गए ग्रन्थों में मूर्धन्य कहा जा सकता है।

ग्रन्थ के लेखक है सचित्र-आयुर्वेद परिवार के सुविदित सदस्य, सूरत के आयुर्वेद महाविद्यालय के उपाचार्य तथा मुबई राज्य सरकार के आयुर्वेदिक रिसर्च बोर्ड के सभ्य

वैद्य रणजितराय देसाई आयुर्वेदालकार, आयुर्वेदाचार्य

सपूर्ण प्राचीन वाङ्मय से दोषों, धातुओं, उपधातुओं तथा मलों की क्रिया के रूप मे शरीर-क्रिया-विज्ञान के सिद्धान्तों का दोहन और सदोहन कर व्याख्या के व्याज से नव्य मत भी प्रायः सपूर्ण इस ग्रन्थ मे सकलित किया गया है। विषय का निरूपण इस दृष्टि से किया गया है कि विद्यार्थी रोगो के निदान और चिकित्सा में क्रियाशारीर की उपयोगिता तथा उपादेयता को भी समझते जाएँ!!!

रायल अठपेजी साइज के ११०० पृष्ठों के अनेक चित्रों से युक्त ग्रन्थ का मूल्य केवल ११) रखा गया है। आज ही अपनी प्रति मँगाइए। अन्यथा चतुर्थ सस्करण की प्रतीक्षा करनी होगी।

प्रकाशक

श्री **बैद्यनाथ** आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०

१, गुप्ता लेन, कलकत्ता—६

वैद्यनाथ आसव-अरिष्ट

आयुर्वेदीय चिकित्सा मे क्वाथ या काढ़ा के अनन्त गुण वर्णित है। किन्तु क्वाथ की मात्रा अधिक होती है और उसे रोज तैयार करना पडता है। पसारियो के यहाँ से क्वाथ के लिए आवश्यक शुद्ध द्रव्य प्राप्त करने मे भी कठिनाई होती है। लोगो को इसी झझट से बचाने के लिए शास्त्रो में आसव-अरिष्टो के निर्माण और उपयोग की विधि बतलाई गई है। क्वाथ की अपेक्षा इसकी मात्रा भी कम होती है और यह लाभ भी अधिक करता है। औषधियो को पकाकर या जल आदि तरल पदार्थों मे मिलाकर निचोड लेते है। फिर क्वाथ मे गुड, शहद या चीनी आदि मीठे पदार्थ डालकर कुछ दिनो के लिए सुरक्षित रख देते है। ऐसा करने से इस सुरक्षित द्रव्य मे वैज्ञानिक परिवर्तन होता है, जिसे आयुर्वेद-शास्त्र मे 'सन्धान' नाम दिया गया है। औषधियो के इस सन्धानित स्वरूप को ही आसव-अरिष्ट कहा जाता है। आसव-अरिष्ट जितने पुराने होते हैं, वे उतना ही अधिक लाभ पहुँचाते है। विशुद्ध रीति और उत्तम जडी-बूटियो के योग से तैयार पुराने आसव-अरिष्ट का प्रभाव रोगो पर तत्काल और निश्चित होता है। उत्तम आसव-अरिष्ट केवल पारदर्शी ही नही होते, बल्कि क्वाथ के प्रतिनिधि होते है। श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि० इस कार्य के लिए देश मे सुप्रसिद्ध है। हमारी चार निर्माणशालाओ मे हजारो मन आसव-अरिष्ट हमेशा तैयार रहते है और वे पुराने होने पर ही बिक्री के लिये भेजे जाते है।

वैद्यनाथ अशोकारिष्ट—बगाल और आसाम के असली अशोक छाल तथा अन्य अनेक उत्तमोत्तम जडी-बूटियो के योग से तैयार किया जाता है। यह पूर्ण गुण-युक्त होने के कारण सचमुच 'अशोक' अर्थात् स्त्रियो का दु ख दूर करनेवाला है। वैद्यनाथ अशोकारिष्ट के सेवन से स्त्रियो के हाथ-पाँव के तलुवो की जलन, पेडू-पेट तथा सिर के दर्द, पित्त-दाह और उदर-शूल आदि दूर होते है। इससे उनके शरीर की शक्ति और मुख की कान्ति बढती है। यह वय स्थापक है अर्थात् बुढापे को रोकता है। कीमत—२४ औंस ३ ५०, १ पौंड २ ५६, ८ औंस १ ४१

अर्जुनारिष्ट—शरीर में वायु अधिक हो जाने के कारण हृदय की धडकन बढ जाती है, पसीना आने लगता है, मुँह सूख जाता है, नीद कम हो जाती है, शरीर में रक्त-सचार ठीक से नही होता, मन घबडाता और रोगी को मृत्यु-भय सताने लगता है। ऐसी स्थिति मे वैद्यनाथ अर्जुनारिष्ट बहुत ही लाभदायक सिद्ध होता है। कीमत—२४ औंस ३ २५, १ पौंड २ ४४, ८ औंस १ ३४

अभयारिष्ट—सभी तरह के बवासीर की प्रसिद्ध दवा है। कब्जियत, मन्दाग्नि आदि उदर-रोगो को समूल नष्ट कर अग्नि को बढाता है। कीमत—२४ औंस ३ २५, १ पौंड २ ४४, ८ औंस १ ३४

अमृतारिष्ट—बार-बार आनेवाले विषमज्वर, पित्त-ज्वर और जीर्णज्वर मे विशेष लाभ करता है। कीमत—२४ औंस ३ ००, १ पौंड २ ३१, ८ औंस १ २८

अरविन्दासव (केशर-युक्त)—बालको के सूखा (सुखण्डी) रोग, अतिसार, अपच, ग्रह-दोष आदि रोगो को दूरकर उन्हे हृष्ट-पुष्ट, बलवान और दीर्घायु बनाने मे उपयोगी है। कीमत—८ औंस १ ८७, ४ औंस १ ०६

अश्वगन्धारिष्ट—दिमागी ताकत बढाने और शरीर को पुष्ट करने के लिए आयुर्वेद-शास्त्र मे 'अश्वगन्धा' का बडा महत्त्व है। इसे ताजी, असली अश्वगन्धा से शक्ति-वर्धक तथा दिमाग को पुष्ट करनेवाली अनेक अन्य गुण-दायक जडी-बूटियो द्वारा शास्त्रीय विधि से तैयार किया गया है। विदेशी टॉनिको की अपेक्षा गुण मे यह कई गुना श्रेष्ठ है। इसके सेवन से अकारण भय, चित्त की घबडाहट, चित्तभ्रम, अनिद्रा, याददाश्त की कमी, मन्दाग्नि, बवासीर, कब्जियत, सिर-दर्द, काम मे चित्त न लगना आदि रोग दूर होकर बल, पौरुष, कान्ति और बुद्धि की वृद्धि होती है। जेनरल टॉनिक के रूप मे "वैद्यनाथ अश्वगन्धारिष्ट" का सेवन अतिशय लाभदायक है। कीमत—२४ औंस ३ ६२, १ पौंड २ ६६, ८ औंस १ ४७

उसीरासव—सम्पूर्ण पित्त-विकारो में लाभदायक है। कीमत—२४ औंस ३ ००, १ पौंड २ ३१, ८ औंस १ २८

कनकासव—नये व पुराने दमा—विशेषकर वायु के कारण होनेवाले दमा मे यह विशेष उपयोगी है। कीमत—२४ ग्रौंस ३ ००, १ पौंड २ ३१, ८ ग्रौंस १ २८

कालमेघासव—जीर्णज्वर, तिल्ली एव जिगर के दोष, कालाज्वर, पाण्डु प्रभृति रोगो की श्रेष्ठ दवा है। कीमत—१ पौंड २ ३१, ८ ग्रौंस १ २८

कुटजारिष्ट—खून के दस्त, सग्रहणी, खूनी बवासीर, ग्रामाश, जीर्णज्वर ग्रादि की उत्तम महौषधि है। इससे रक्त का गिरना भी बन्द होता है। कीमत—२४ ग्रौस ३ २५, १ पौंड २ ४४, ८ ग्रौंस १ ३४

कुमारी आसव—इसके सेवन से ग्राठ तरह के उदर-रोग (तिल्ली, जिगर, जलन्धर ग्रादि), पक्तिशूल (भोजन के बाद का पेट-दर्द), कब्जियत, गुल्म (वायुगोला) ग्रादि उदर-रोग नष्ट होते है। शरीर पुष्ट होता है, भोजन मे रुचि बढती है ग्रौर खाया हुग्रा पदार्थ ग्रच्छी तरह पच जाता है। यह कृमि-विकार, पाण्डु, कामला ग्रौर शोथ मे भी गुणकारी है। कीमत—२४ ग्रौंस ३ ५,० १ पौंड २ ५६, ८ ग्रौंस १ ४१

कुमारी आसव न० ३—यह बालको के लीवर (Liver) के रोग, कब्जियत, बदहजमी ग्रादि मे विशेष लाभदायक है। कीमत–८ ग्रौंस १ ६२, ४ ग्रौंस ० ६४

खदिरारिष्ट—सब प्रकार के चर्म-रोग एव रक्त-विकारो मे इसके सेवन से ग्राशातीत लाभ होता है। कीमत—२४ ग्रौस ३ ००, १ पौंड २ ३१, ८ ग्रौंस १ २८

चन्दनासव—पेशाब की जलन, कडक, पथरी ग्रादि मे गुणकारी है। यह पित्त-शामक ग्रौर पुष्टिकारक है। कीमत—२४ ग्रौंस ३ ००, १ पौंड २ ३१, ८ ग्रौस १ २८

चव्यकारिष्ट—जुकाम, खाँसी, उदर-विकार ग्रौर ग्रन्त्र-वृद्धि-रोग को दूर करता है। यह ग्रजीर्ण के रोगियो के लिए विशेष लाभदायक है। कीमत—१ पौंड ३ ७५, ८ ग्रौंस २ ००, ४ ग्रौंस १·१३

जीरकाद्यरिष्ट—हाथ-पाँव की जलन, ग्रतिसार एव संग्रहणी-रोग-नाशक है। कीमत—१ पौंड ३ ००, ८ ग्रौंस १ ६२

दशमूलारिष्ट (कस्तूरी-युक्त)—सग्रहणी, मन्दाग्नि, ग्ररुचि, उदर-रोग, खाँसी, दमा, कमजोरी ग्रादि रोगो की शास्त्रोक्त दवा है। इसके सेवन से बल ग्रौर कान्ति बढ़ती है तथा शरीर पुष्ट होता है। इस देश में प्रसव के बाद इसके सेवन का प्रचलन है। कीमत—१ पौंड ३ ७५, ८ ग्रौस २ ००, ४ ग्रौंस १ १३

द्राक्षासव—ताकत ग्रौर ताजगी से भरा हुग्रा सुमधुर टॉनिक है। यह बढिया ग्रगूरी दाखो से तैयार किया जाता है। बहुत-से धनी बारहो मास इसका सेवन करते है। वैद्यनाथ-द्राक्षासव पीने मे ग्रत्यन्त जायकेदार है। यह भूख बढाता, दस्त साफ लाता, कब्जियत मिटाता, ताकत पैदा करता, नीद लाता, थकावट दूर करता ग्रौर दिल तथा दिमाग में ताजगी पैदा करता है। इससे शरीर के हर भाग को ताकत मिलती है। यह कफ, खाँसी, सर्दी, जुकाम, हरारत, कमजोरी ग्रादि मे बहुत फायदा पहुँचाता है। जिनके फेफडे कमजोर हो, कफ, खाँसी हमेशा ही रहती हो, वे लोग इसका सेवन जरूर करे। द्राक्षासव पीने की जरूरत होने पर ग्राप वैद्यनाथ-द्राक्षासव ही पीजिए। इससे ग्रापको पूरा लाभ होगा। कीमत—२४ ग्रौस ३ २५, १ पौंड २ ४४, ८ ग्रौस १ ३४

द्राक्षारिष्ट—इसके गुण भी द्राक्षासव के समान ही है। कफ, खाँसी, शारीरिक क्षीणता ग्रौर कब्जियत मे इसका विशेष रूप से व्यवहार होता है। कीमत—२४ ग्रौस ३ १६, १ पौंड २ ३७, ८ ग्रौंस १ ३१

पत्रागासव (केशर-युक्त)—स्त्रियो के विभिन्न कष्ट, ज्वर, पाण्डु, सूजन, ग्रग्निमान्द्य, कमजोरी ग्रादि को दूर करता है। कीमत—१ पौंड ३ २५, ८ ग्रौस १ ७५, ४ ग्रौंस १ ००

पिप्पल्यासव—इसके सेवन से मन्दाग्नि, कफ-खाँसी, शारीरिक क्षीणता, गुल्म, ग्रर्श, सग्रहणी ग्रादि रोग नष्ट होते है। कीमत—१ पौंड २ ३७, ८ ग्रौंस १ ३१

पुनर्नवारिष्ट—यह शोथ, उदर-रोग, प्लीहा-वृद्धि, ग्रम्लपित्त, बढे हुए लीवर, गुल्म ग्रादि रोगो को नष्ट करता है। इसका प्रभाव हृदय ग्रौर यकृत् पर विशेष रूप से होता है। कीमत—२४ ग्रौस ३ ००, १ पौड २ ३१, ८ ग्रौंस १ २८

बब्बूलारिष्ट—इसके सेवन से ग्रतिसार, कफ-खाँसी, शारीरिक क्षीणता, उर क्षत, रक्तपित्त तथा रक्तरोग ग्रादि नष्ट होते है। यह श्वास-नलिका को साफ कर खाँसी के साथ ग्रानेवाले खून को रोकता है। कीमत—१ पौंड २ ५०, ८ ग्रौंस १ ३७

बलारिष्ट—वातरोग-नाशक एव शरीर को ताकत देनेवाला है। कीमत—१ पौंड २ ५०, ८ औंस १ ३७

वासारिष्ट—ज्वर-युक्त पुरानी खाँसी, खाँसने के साथ-साथ कफ और खून का निकलना, श्वास, सूखी खाँसी तथा रक्तपित्त के लिए अत्युत्तम है। कीमत—२४ औंस ३ २५, १ पौंड २ ४४, ८ औंस १ ३४

विडङ्गासव—पेट मे होनेवाले सभी प्रकार के कृमिरोगों मे इसका उपयोग होता है। इसके अतिरिक्त यह गुल्म, विद्रधि, कफ, खाँसी, भगन्दर आदि रोगो मे भी लाभदायक है। कीमत—१ पौंड २ ५०, ८ औंस १ ३७

महामञ्जिष्ठाद्यरिष्ट—सब प्रकार के रक्तदोष, खाज-खुजली और श्लीपद रोगो मे अकेला या गन्धक अथवा रसमाणिक्य के साथ इसके प्रयोग से अच्छा लाभ होता है। कीमत—२४ औंस ३ ००, १ पौंड २ ३१, ८ औंस १ २८

मुस्तकारिष्ट—इसके सेवन से अतिसार, अजीर्ण, अग्निमान्द्य, सग्रहणी, हैजा आदि अच्छे होते हे। यह पतले दस्त को गाढा करता है तथा कुपित वात को शान्त कर जठराग्नि को प्रदीप्त करता है। कीमत—१ पौंड २ ५०, ८ औंस १ ३७

रोहितकारिष्ट—यह तिल्ली, लीवर, वायुगोला, अग्निमान्द्य, पाण्डु, सग्रहणी आदि रोगो को नष्ट करता है। लीवर और तिल्ली के बढ जाने पर इसके उपयोग से विशष लाभ होता है। कीमत—१ पौंड २ ३१, ८ औस १ २८

लोध्रासव—पेशाब की जलन आदि बीमारियो मे इसका उपयोग होता है। यह स्त्रियो के लिए विशेष उपयोगी है। कीमत—१ पौंड २ ३१, ८ औस १ २८

लोहासव—खून बढाने की सुप्रसिद्ध औषधि है। रक्ताल्पता (Anaemia), जीर्णज्वर, ज्वरान्तदौर्बल्य एवं बढे हुए जिगर और तिल्ली में विशेष लाभदायक है। कीमत—२४ औंस ३ ००, १ पौंड २ ३१, ८ औंस १ २८

सारस्वतारिष्ट—ब्राह्मी का यह अपूर्व कल्प दिमागी ताकत, स्मरण-शक्ति, कान्ति एव बुद्धि बढाने में अति श्रेष्ठ है। मानसिक एव शारीरिक दुर्बलता, नीद न आना, स्वरभग, रुक-रुककर बोलना (तोतलापन), कानो में तरह-तरह की आवाज का होना, कम सुनाई देना आदि में भी इससे अच्छा लाभ होता है। दिमागी काम करनेवालो के लिए उत्तम ब्रेन टॉनिक तथा स्मृति और बुद्धि बढानेवाला एक उत्तम रसायन है। कीमत—१ पौंड ४ ००, ८ औंस २ १३, ४ औस १ १६

सारिवाद्यरिष्ट—रक्त शुद्धि की मशहूर दवा है। यह खून और पित्त की खराबी को मिटाता है। खून के जहर को जड से नाश करता है। यह जिगर (लीवर) के दोष और अम्लपित्त मे भी फायदेमन्द है। यह फोडा, फुन्सी, खाज, खुजली, चकत्ते आदि रक्त-विकार , भगन्दर, हाथ, पैर, आँख, छाती की जलन, आमवात, वातव्याधि सभी प्रकार के रक्त-दोष के उपद्रव , अशुद्ध पारे के विकार, कुनाइन से पैदा हुआ उपद्रव, कमजोरी, खून की कमी, बदहजमी, कब्जियत आदि की उत्तम शास्त्रोक्त दवा है। यह पित्तशामक और रक्तशोधक औषधियो में प्रधान है। कीमत—२४ औंस ३ ३१, १ पौड २ ४४, ८ औंस १ ३४

सारिवाद्यासव—गुण-धर्म उपर्युक्त सारिवाद्यरिष्ट के समान है। कीमत—२४ औंस ३ ३१, १ पौंड २ ४४, ८ औंस १ ३४

श्री बैद्यनाथ
आयुर्वेद भवन प्राइवेट लि०